



प्रेमचंद  
इलम का सिपाहा



## लेखक की कुछ और रचनाएँ

उपन्यास

बीज

नागफली का देश

हाथी के दाँत

कहानी सप्रह

इतिहास

कस्बे का एक दिन

मोर से पहले

कठपुतले

गीली मिट्टी

अनुवाद

अग्निवीला

आदिबिग्रोही

रवीन्द्रनिबन्धमाला

ध्यासोत्सव

नयी समीक्षा

यात्रा

सुबह के रंग

प्रमचंद

कलम

का

लिपाही

अमृतलय

इस प्रकाशन

इलाहाबाद

© अमृतदास १९६२



मूल्य—बीस रुपये

प्रकाशक—	हंस	प्रकाशन	इलाहाबाद
मुद्रक—	सम्मेलन	मुद्रणालय	इलाहाबाद
लाभारथ मज्जा—	वृष्ण	चंद्र	बीरानगर
प्रथम छस्करण—	प्रमचंद्र	स्मृति	दिवस १९६२

देश की जवान पीढ़ी को



## चित्र - सूची

- |   |                    |
|---|--------------------|
| १ समझी की वह कोठरी जिसमें जन्म हुआ                        | पृष्ठ १२ के सामने  |
| २ समझी का एक वृक्ष  | पृष्ठ १३ के सामने  |
| ३ समझी में प्रेमचंद का बनवाया मकान                        | पृष्ठ १३ के सामने  |
| ४ मुँगी बपानरायन निगम                                     | पृष्ठ १८ के सामने  |
| ५ उर्दू हस्तलिपि  | पृष्ठ १९ के सामने  |
| ६ प्रेमचंद १९७  | पृष्ठ १६ के सामने  |
| ७ प्रेमचंद १९२१   | पृष्ठ १६ के सामने  |
| ८ हिन्दी हस्तलिपि   | पृष्ठ १७ के सामने  |
| ९ छोटे भाई महुआब बोनो ठकुरके<br>श्रीपत अमृत मीर बेटी कमला | पृष्ठ १७ के सामने  |
| १ अंग्रेजी हस्तलिपि                                       | पृष्ठ १५८ के सामने |
| ११ पिबरागी देवी १९६२                                      | पृष्ठ १५९ के सामने |
| १२ प्रेमचंद १९२४  | पृष्ठ २३२ के सामने |
|   | पृष्ठ ३३ के सामने  |



वाठ

१३	प्रेमचंद १९२५	पृष्ठ ३६८ के सामने
१४	प्रेमचंद सपरनीक	पृष्ठ ४३२ के सामने
१५	प्रेमचंद परिवार-सहित	पृष्ठ ४३३ के सामने
१६	प्रेमचंद बीनेन्द्रकुमार, आपमचरण पौन	पृष्ठ ४७८ के सामने
१७	अर्जुन मिनेटोन के साथ अनुबंध पर हस्ताक्षर करत हुए	पृष्ठ ५७ के सामने
१८	शुभलक्ष्मी सवासन की सुमन	पृष्ठ ५७१ के सामने
१९	अंतिम बीमारी	पृष्ठ ६४४ के सामने

## मूमिका

पाँच साल के अपने परिश्रम का यह फल आपके हाथों में  
बेत हुए मुझे बड़ी खुशी हो रही है।

यह काम अब स बहुत पहले होना चाहिए था (जबकि  
उनका आँखों-देखा हास कहनेवाले कुछ और लोग मिल जाते)  
और अच्छा होता अगर दूसरे किसी ने किया होता। लेकिन  
पता नहीं क्यों जीवनी लिखने से हमारे लोग कतराते हैं। सभी  
उम्रत देवों में यह बिधा बहुत आगे बढ़ी हुई है पर हमारी  
भाषा इसमें बिस्तुस कयास है। या तो हम जानते ही नहीं  
कि अच्छी जीवनी होती क्या है या कुछ हम तरह की गीठ  
हमारे लिखनवालों के मन में पड़ी हुई है कि जीवनी साहित्य  
की कोई सुव्यवस्था बिधा नहीं है—या फिर भय और भय  
पय की दुर्गमता का। या भी बात ही यह एक मटक सम्पाई  
है कि हमारे यहाँ जीवनीयों का एक सिरे से अकार है, जबकि

योरप की खानों में यह बीब मासमान पर पहुँची हुई है। कोई बड़ा साहित्यकार नहीं है, कलाकार नहीं है वैज्ञानिक नहीं है जननायक नहीं है जिसकी कई-कई जीवनियाँ एक से एक अच्छी न हों। स्टिफन ब्राइय बिटना अपनी कहानियों के बस पर बिन्दा रहेगा उतना ही बास्बाक की अपनी बीबनी के बस पर बिन्दा रहेगा। जात्रे मोस्बा की सिखी हुई धमी की बीबनी 'एरिपठ' किसने नहीं पढ़ी? अविग स्टोग की सिखी हुई बैन मो की बीबनी 'कस्ट फ़ौर साइज़' किसने नहीं पढ़ी? एमिस बुडबिस का नाम किसने नहीं सुना जो सिर्फ़ अपनी जीवनियों के बस पर योरप के साहित्य में अपनी एक जास बगह बनाये हुए है? हर सास सैकड़ों हज़ारों की टाबाब में जीवनियाँ निकलती आती हैं। एक ही आदमी की पञ्चीसों जीवनियाँ मिल सकती हैं। अच्छी से अच्छी प्रतिभाएँ उनको मिलती हैं पढ़नेवाले उपग्यासों से भी पयादा बाब से उनको पढ़ते हैं। लेकिन हमारा तो डंव ही निराका है। हमारे यहाँ तो अभी सपारी बीबनी अफ़ूत की तरह बयोड़ी क उस पार सड़ी है—अन्वर माने की मनाही है।

इन पाँच बरसों में मेरे कितने ही सुमधितकों ने मुझे पूछा होगा—अफ़ूत जो आप अपनी कोई बीब नहीं सिखा रहे हैं?

जबो तो मुझे कुछ नुंशलाहट भी महसूस हुई, लेकिन अन्वार में गुस्कराकर रह गया। मैं कहना चाहता था कि यह मेरी ही बीब है जो मैं सिखा रहा हूँ कि यह भी एक उपग्यास ही है जिसका नायक प्रेमचंद नाम का एक आदमी है, फ़र्क बस इतना ही है कि यह आदमी मेरे बिभाष की उपज नहीं है हाइ मांग का एक पुतला है जो इस धरती पर डोल चुका है और समय की पगडंडी पर अपने पैरों के कुछ निशान छोड़ गया है उनको मानने-बिमाने की वीछे बन चाहे तोड़ने-मरोड़ने की आबारी मुझे नहीं है घटना प्रतियों का आविष्कार करने की घूट मुझे नहीं है कितने ही मोटे-जोड़े रस्सों से मैं अच्छी तरह (या बुरी तरह) गूटे से बंधा हुआ हूँ। लेकिन मुझे उसकी तिकाव नही है क्योंकि मैं जानता हूँ कि पूर्ण स्वच्छता

उपप्यास की बहानी कहते समय भी नहीं रहती वहाँ भी कहाणी कहनेवाला जीवन के कूट से प्रतीति के लुटे सँभपा ही रहता है। एक न एक समय-अनुपासन हर सृजन के साथ लगा हुआ है। केवल सृजन के मुख में उससे कोई बाधा नहीं उपस्थित होती क्योंकि जहाँ एक में समझ पाया हूँ सृजन का असक्त मुख इसमें नहीं है कि कपाकार अपने कल्पना-पोक में अबाध विचारण कर सके बल्कि इसमें कि वह बड़ वास्तविकता को अपनी कल्पना से स्फूर्त और स्पष्टित कर सके मुक-अधिर तप्यों को बापी वे सने जीवन के सन्दर्भ में अपने चरित्रों का ब्रेख सके, पहचान सके सोस सक। वह मुक्त मुझे यहाँ भी मिखा और भरपूर मिखा।

सब तो यह है कि यह काम हाथ में लेने ही यही चीज मेरे लिए पहली चुनौती बनी। वह चीज बना है उसका पता लपाया, जिससे यह अति-सामान्य जीवन एक विशेष व्यक्ति का जीवन बनता है। कोई अमक-अमक यहाँ नहीं है न कोई नाटकीय तत्व न कोई रोपक जीवन-अमय न प्रेम और साहम के बीस कोई अकल्प—नितान्त सँभपा-टका जीवन एक शरीर स्कम मास्टर का या बीसेही शरीर लेनक-अपारक का। छिर भी कुछ तो है जो विशेष है। वह क्या है? उसी को जीवन क सन्दर्भ में ब्रेख सकन और रिखा सकन में मुझको रचनाकार का सन्धा मुन मिखा है।

छिटाव लिखनी जब शुरू हुई तब छिउनी ही बार मेरे हाथ पैर फूल गये। मैं समझ ही न पाता था कि मैं हममें निर्भूया क्या छिटाव जाये बड़े तो बीस बड़े। लेकिन जब इसी पीड़ा और उद्रेय में से अचानक यह पुर मेरे हाथ लगा कि इस व्यक्ति के जीवन को उसके वेग और समाज क जीवन से जोड़कर ता बेना तब जैसे सारे बंद दरवाजे यकबयक खुल गये और इस अति-सामान्य जीवन का एक नया आगम एक नयी अयबता मिळ मयी। उमी का दिखान का धल मैंने किया है। सकलता मुझे मिनी या नहीं मिनी या छिउनी मिनी इसका नियत तो थाप बरेमे। हूँ यह मैं अरु बहना चाहता हूँ कि इस काम को हमनी बेर से शुरू करने क पीछ जहाँ मरी अदनी मजबूरियाँ

रही हैं वहाँ यह भी एक बड़ा कारण रहा है कि मैं तभी इस काम को उठाना चाहता था जब मुझे अपने तर्क यह विश्वास हो कि मैं बलग हटकर, थोड़ा निरपेक्ष होकर इस व्यक्ति का देख सकता हूँ।

बहुत बार सेतक की अपनी डायरियों और वर्नलों से जीवनीकार को बहुत मदद मिल आया करती है। प्रेमचंद को डायरी या वर्नल लिखने की आवश्यकता नहीं थी। इस तरह जीवनी की सामग्री का एक बड़ा कोप एक सिरे से खत्म हो गया।

दूसरा एक कोप पत्रों का होता है। वह भी बहुत कुछ नष्ट हो गया क्योंकि पत्रों को सँभालकर रखने की आवश्यकता न इधर मुंशीजी को थी न उधर दूसरों को। तो भी जो कुछ चिट्ठियाँ भाग्यवश बची रह गयीं जिनमें सबसे बड़ा खजाना 'जमाना' के सम्पादक मुंशी अयानरायन त्रिपाठी की लिखी हुई चिट्ठियों का है (जिसके मिलने की विषयस्य कहानी मैंने यथास्थान लिखी है) उनका मैंने पूरा-पूरा हस्तेमात्र किया है।

चिट्ठियों के अलावा मुझे सबसे ज्यादा मदद लोगों के संस्मरणों से मिली है—संस्मरण जो पुस्तक रूप में प्रकाशित हैं या पत्र-पत्रिकाओं में बिखरे हुए हैं या आकाशवाणी से अब-तब प्रसारित किये गये। उन सब बंधुओं के प्रति मैं अपना आभार प्रकट करता हूँ। और आभार प्रकट करता हूँ भाई कौलाग्रनाथ श्रीवास्तव के प्रति जिनकी निष्ठा और समय से ही मुंशीजी की लोभी हुई सचिब बुक मिली जिससे मुझे अपने काम में बहुत मदद मिली। इतना ही नहीं आंगणपुर के जूनिवर ट्रेनिंग कालेज (प्रेमचंद के समय के नार्मल स्कूल) के प्रधान आचार्य की हैसियत से कौलाग्रनाथ जी ने प्रेमचंद की स्मृति को जीवित रखने के लिए बहुत कुछ किया जो सबके लिए निरालम सहाय और समय का एक आदर्श प्रस्तुत करता है। उन्हीं दिनों सचिब पर पुराने रजिस्ट्रों की मदद से प्रेमचंद के छात्रों को प्रश्न-सामग्री भिजकर उनके बयान मँगवाये। उनमें से बहुतसे अब हम बुनिया में मढ़ी हैं सचिब जी हैं उन्होंने बड़ी मुन्दीरी से अपने बयान भिजे जिनसे मुंशीजी के आंगणपुर-वर्नाल

## तेरह

जीवन के संबंध में कुछ बड़े उपवर्गी और प्रामाणिक तथ्य मिले। मैं उन सबके प्रति अपना आभार प्रकट करता हूँ।

श्री मुरारीलाल श्री केरिया के प्रति भी मैं अपना आभार प्रकट करता हूँ जिनके निजी संग्रह रामरत्न पुस्तकालय में मुझे प्रेमचंद की कुछ पाण्डुलिपियाँ और इन्टर-बी० ए० आदि परीक्षाओं के सर्टिफिकेट देखने को मिले।

सर्वपत्रिकाओं में लोपी हुई मुष्ठीयों की कहानियों और भेस्तों के संकलन में मुझे प्रोफ़ेसर एहतेसाम हुसेन और डॉक्टर कमर रईस से जो मदद मिली उसने लिए मैं उनके प्रति भी अपना आभार प्रकट करता हूँ।

कहना न होया कि मुझे अपने काम में सबसे ज्यादा मदद माता शिबरानी देवी से मिली है उसकी पुस्तक से और उनकी सदेह उपस्थिति से लेकिन इसके लिए मैं उनका आभार मारु ऐसी बूझता मुझसे न हीपी। सब कुछ तो उहीं का है।

हाँ अपने पुरखेब प्रोफ़ेसर सठीचर्चर ईब और माई महारेब साहा का आभार मुझे बरकर मानना चाहिए। उनका अक्षुण्य न होता तो इस काम में जमी और भी पापद कुछ देर छपती। उनकी बिदिष्मा और बार्से मुझे बराबर बहुत बल देती रही है।

और भी कितने ही बंधुओं ने कितने ही रूपों में मुझको उपकृत किया है। मैं उन सबका हृदय से आभारी हूँ।

— अमृतगण



क़लम का सिपाही





इसिन के एक हिन्दी-प्रेमी अग्रहासन प्रेमचंद से मिलने कागी माये। पता लगाकर शाम के बहुत उनके मकान पर पहुँचे। बाहर थोड़ी देर ठहरकर खी-खू करने पर भी कोई नजर न आया तो दरवाजे पर माये और झाँककर भीतर कमरे में देखा। एक आदमी जिसका चेहरा बड़ी-बड़ी मूँठों में छोपा हुमा-सा पा, छत पर बैठकर तन्मय भाव से कुछ लिख रहा था। आर्पंतुक ने सोचा प्रेमचंदजी शायद इसी आदमी को बोलकर लिखाते होंगे। माये बढ़कर कहा — मैं प्रेमचंदजी से मिलना चाहता हूँ। उस आदमी ने शट नजर उठाकर तान्त्रिक से आर्पंतुक की ओर देखा, झलम रहा ही और ठहाका लगाकर हँसते हुए कहा — बड़े-बड़े मुलाकात करोगे क्या! बैठिए और मुलाकात कीजिए

बस्ती के ताराचंठर नाशाद मूँठीजी से मिलने लक्ष्मण पहुँचे। उन दिनों वह अमीनूद्दीना पाल के सामने एक मकान में रहते थे। मकान के नीचे ही माघाद साहब को एक आदमी मिला बोली-बलिपान पहने। नाशाद ने उससे पूछा — मूँठी प्रेमचंद कहाँ रहते हैं आप बतला सकते हैं? उस आदमी ने कहा — बलिप मैं आपको उनसे मिला हूँ।

वह आदमी आगे-आगे चला नाशाद पीछे-पीछे। ऊपर पहुँचकर उस आदमी ने नाशाद को बँठने के लिए कहा और अंदर चला गया। बारा देर बाद दुर्गा पहुँचकर निकला और बोला — अब आप प्रेमचंद से बात कर रहे हैं

पठने में एक साहित्यिक मोष्ठी है। मूँठीजी को उसका समाप्ति बनाया गया है। आज वह पटना जानेवाले हैं। बहुत-से लोग उनके स्वागत की स्वेच्छन पर पहुँचे हुए हैं लेकिन मछे की बात यह है कि उनमें से किसी ने उनको पहलें देखा नहीं है बस एक तसबीर बैची है उसी का सहारा है।

एकसमैत आयी। बैल लिया। कहीं नहीं।

पंजाब मैल मापी। बेस लिया। कहीं नहीं।

इतवार की शाम को बैठक भी बीर सबेरे छः बजे के करीब एक बीर एक्सप्रेस जाती थी। अब बस यही आखिरी आसरा था।

ट्रेन मापी लगी और खली गयी। संकड़ों आदमी छतरे और बड़े पर प्रेमबंद नहीं माये नहीं माये। पीछीबालों के प्राण नहीं में समा गये — अब कहीं जायेंगे कैसे लोगों को मुंह दिखायेंगे।

उदास शून्य मुस्ताफिरखाने की तरछ बड़े। बैचा सीढ़ी के पास एक नबेड़ सज्जन जिनके बास कुछ सख्खे ही बसे थे और जो सख्खर की बकावट से कुछ क्षिप्त-से हो रहे थे गुमगुम बड़े हैं और कुली जनका बूँक सर पर और बिस्तर हाथ में लिये पूछ रहा है — बाबू कहीं चले ?

इस मुस्ताफिर की जम लोगों ने कल रात ही को पंजाब मैल से उतरते बैचा था मगर पहचानते कैसे

कोई विशेषता जो नहीं है उसमें।

अपने आस-पास ऐसा एक भी बिम्ह बहू नहीं रखना चाहता जिससे पता चले कि वह दूसरे साधारण बनों से बरा भी असंग है। कोई सिलक-त्रिपुण्ड से अपने विशेषत्व की घोषणा करता है कोई रेशम के कुर्ते और छतरीय के बीच से झाँकनेवासे अपने एडवर्से से कोई अपनी लाल-सज्जा के अनोखेपन से कोई अपनी किसी खास अदा या ठब से यहाँ तक कि एक पल-साबित, सतर्क सरकता भी होनी है जो स्वयं एक प्रदर्शन या आडम्बर बन जाती है शायद सबसे अधिक बिरस्तिकर — बैची इतना बड़ा इतना नामी आदमी होकर में किसी साबणी से रहता हूँ। प्रेमबंद की सरकता सहज है। उसमें कुछ तो इत बैरा की पुरानी मिट्टी का संस्कार है, कुछ उसका नैतगिक शील है, संकोच है कुछ उसकी गहरी बीबनदृष्टि है और कुछ उसका लज्जा आरमपीरब है जो किसी तरह के आरम-अर्वाज या बित्तापन को उसका नबरीक घटिया बना देता है। नहीं वह कस्मूरी भुग नहीं है जिसे अपने भोत्रर की करतूरी का पता न हो। उसे पता है कि उसके भीतर ऐसा भी कुछ है जो मूखबान् है, उसका अपना है नितागत अपना मौलिक विशेष। नहीं उसका मोनी है मानिक है। कोई इत

मोती-मार्गिक को उसके उपयुक्त रत्न-वर्धित-बहुधा में रक्षता है यह भावही उसे हीन के बक्षस में रक्षता है — इसलिये नहीं कि वह उसकी इतर कम करता है बल्कि इसलिये कि बहुत बचाव करता है। हीन के बक्षस में वह मोती बचाव सुरक्षित है। वहाँ से हीन उसे बुरा समझता है जिसका ध्यान आवेया उस पर। इनीलिये तो जटपो बोटी और मंती-सी एक फनुही पहले, तीसरे ब्रह्म के मुसाफिरखाने में बैठा हुआ-ता, हीन के बक्षस में अपना वह मोती अतन से छिपाये वह इतनी बेठिथी से भागे-पीछ, बायें-बायें सबका नाम-गाम पूछता है उनके सुक-बुज हारी-बेगारी, गूँसे-बूँडे, रोमी-रोजगार की बातें करता है और कोई होसी की बात हो तो इतने खोर से ठहाका लगाता है कि आम-पास बैठे हुए लोग भीक पड़ते हैं और बीभारें हिल जाती हैं। घामब उसकी इस बेकौस हसी में कहीं एक हल्की-सी चुहल भी छिपी हुई है — देखा, जैता बुद्ध बनाया इन सबों को! कोई भाप भी नहीं सदा कि मेरे पास इस हीन के बक्षस में एसा एक मोती भी था जिससे बुनिया खरोबी जा सकती थी।

उसके खमीर में बच्चों बसी धारात का भी छात्ता एक घूट है जो अक्कर उसके लिचने में उभर आता है इसलिये कभी-कभी समझता है कि अपनी इस सादगी में सायब उसे लुका-छिपी के खेल का भी कुछ मजा मिलता है।

जित मिथ्यात साधारण, बची-टकी दिनचर्या से उसकी जिन्दगी का सँबा बना या उसकी रैकते हुए सायब उस मोती के पानी को, उसकी बजक को बराबर बनाये रखने का दूसरा कोई उपय भी न था। यह गहुरा निरछत सादगी सायब एक कबच थी जो अहृति में स्वयं उसको बजाकर दिया था ताकि उस मोती की बमक कभी मन्ब न हो — जैसे ही जैसे बादाव की मीठी गिरी को बनाये रखने के लिये उस पर एक लड़ा खोल चढ़ाना पड़ा।

बरा बेसिये यह अँदाज जिसमें बुँधी भी अपने एक बोस्त को अपने हातातूँ-मोड कर रहे हैं —

तारीख बैराइय संवत् १९६७ । बाप का नाममुर्गी अजायब-तात । मुकुन्त मीजा मड़नी, तमही मुसलिक पांडेपुर, बनारस । इस्लाम्मू अड तात तरु काली पड़ी, फिर अँधि की चुक की ।

पंजाब में लामायी । देख लिया । कहीं नहीं ।

इतबार की शाम को बैठक की और लबरे छ-बने के करीब एक और एकसमेत अस्ती थी । अब बस यही आखिरी मासुरा था ।

दुःख लामायी लगी और लगी लगी । सफ़्तों लामायी उतरे और लगे पर प्रेमबंद नहीं लामाये नहीं लामाये । लोलीलामायों के प्राम नहीं में लामाये — अब कहीं लामाये लोले लोनों को मुंह लिलामाये ।

उलाम लुम्ब मुसलिलरलामे की तरल लगे । लेला लीली के पास एक ललेल सललम लिलके लाल लुल ललेल हो लले ले लीर लो ललर की लललल से लुल लिल-ले हो लले ले लुमलुम लगे हैं लीर लुली लललल लुल लर पर लीर लिललर ललम में लिले लुल लल है — लल लुली लले ?

इस मुसलिलर को लम लोनों ने लल लल ली को पंजलम लेल से ललरले लेला लल लपर ललललले लले

कोई लिलेपल ली नहीं है ललमें ।

लपने ललल-ललल ऐलल एक ली लिलल लल नहीं ललल लललल लिललसे पलल लले लिल लुलले लललरलम लनों से ललर ली ललल है । कोई लिलल-लिललुल से लपने लिलेपलल की लिलल करलल है । कोई लेलम के लुल्ले लीर ललरलीय के लील से लीलनेलले लपने ऐललल से लील लपनी ललल-ललल के ललोऐपल से लील लपनी लिली ललल ललल लल लल से लुली लल लिल ललल-लललल ललल लललल ली लीली है ली ललल एक ललललल लल लललल लल ललल है ललल ललले लललल लिललललर — लेलो इलल लल इलल ललली लललली लीलर में लिलली ललरली से ललल लुं । प्रेमलल की लललल ललल है । ललमें लुल ली इल लेला ली लुरली लिलुी लल संललर है लुल ललल लललल लील है संलील है लुल ललली ललरी लीलललुलल है लीर लुल ललल ललल ललललील है लो लिली ललल के ललल-ललललल लल लिललल को ललले लललील लललल लल लेला है । लली लल ललली लुम नहीं है लिले लपने लीलर की ललली लल लल ल लो । लसे लल है लिल ललले लीलर ऐलल ली लुल है लो लुलललल है, ललल लपल है लिललल ललल लीलल, लिलेप । लली ललल लीली है लललल है । लील इल

मोती-भांगिक को उसके उपयुक्त रत्नजडित-मंजूषा में रखता है, यह आदमी उसे टीन के बक्स में रखता है — इसलिये नहीं कि वह उसकी ऊपर कम करता है बल्कि इसलिये कि बहुत बचाव करता है। टीन के बक्स में वह मोती बचाव सुरक्षित है। वहाँ से कौन उसे चुरा सकता है, जिसका ध्यान आवेया उस पर ! इतीलिये तो जर्दमी मोती और मंसी-सी एक चट्टणी पहने तीसरे बर्से के मुसाफिरखाने में बैठा हुमा-सा टीन के बक्स में अपना वह मोती खतम से छिपाये वह इतनी बैक्रीकी से भागे-पीछे भागें भागें, सबका नाम-गान पुछता है उनके सुख-दुख हारी-बेगारी सूखे-बूढ़े रोबी-रोबगार की बातें करता है और कोई हँसी की बात हो तो इतने जोर से ठहाका लगाता है कि भास-पास बैठे हुए लोग चौंक पड़ते हैं और बीघारें हिक जाती हैं। प्रायः उसको इस बेसीस हँसी में कहीं एक हन्की-सी चुहक भी छिपी हुई है — देखा कैसा बुद्ध बनाया इन सबों को ! कोई माँप भी नहीं सका कि मेरे पास इस टीन के बक्स में ऐसा एक मोती भी था जिससे बुनिया छरीबी जा सकती थी !

उसके जमीर में बच्चों जसी शरारत का भी ज्ञाता एक पुठ है जो अक्सर उसके छिपाने में उभर आता है इसलिये कमी-कमी रूपता है कि अपनी इस सादगी में प्रायः उसे कक-छिनी के खेल का भी कुछ मजा मिरुता है !

जिस नितान्त साधारण, बेबी-उकी बिलबप्यां से उसको छिन्दपी का साँचा बना या उसको बेसते हुए साम्य उस मोती के पानी को, उसकी अमक को बराबर बनाये रखने का हुसरा कोई उपाय भी न था। यह गहरी निश्छल सादगी प्रायः एक कवच थी जो प्रकृति ने स्वयं उसको बनाकर दिया था ताकि उस मोती की अमक कमी मन्व न हो — बैसे ही जैसे बादाम की मीठी पिरा को बनाये रखने के लिये उस पर एक कड़ा छोल बढ़ाना पड़ा।

जरा बैकिये यह मंदाब जितमें मुंसी भी अपने एक दोस्त को अपने हातातू लोट करा रहे। हैं —

‘तारीख पैदाइश संवत् १९३७। बाप का नाम मुंसी मजामक-नाक। सुफूनत मीबा मइबां समही मुसदिल पांडपुट, बनारस। इस्बामन् आठ साल तक छारसी पड़ी फिर मंरेबी सुक की।

बनारस के कॉलेजिएट स्कूल से एन्ट्रेंस पास किया। बालिव का इंतज़ार पन्द्रह साल की उम्र में हो गया बाकिरा सत्रबे साल मुबार खुली थी। फिर तामीर के लोभ में मुलाखिमत की। सन् १९०१ में लिटररी डिग्री शुरू की फिर छः सत्रों इसके बारे में कि कब कीन किताब लिखी किस्ता खतम पैसा हजम। और जब आत्मकथा लिखने पर भाये तो पहले सब को भावाह्व कर दिया—

मेरा जीवन सपाट समतल मैदान है जिसमें कहीं-कहीं गड्ढे तो हैं पर टीलों पर्वतों घने जंगलों गहरी घाटियों और खंडहरों का स्थान नहीं है। जो लज्जन गहाराई की संर के शीबीन हैं उन्हें तो यहाँ निराशा ही होयी।

पानी कि जिते आना ही सभ्रम बूसकर आये।

और सब तो यह है कि अगर ऐसी कुछ बात हीन जा पड़ती तो शायद उस व्यक्ति ने अपने बारे में इतना भी न लिखा होता। कोई पूछता तो शायद कह कह देता मेरी जिन्दगी में ऐसा है ही क्या भी मैं किसी को मुनाई। बिलकुल सपाट समतल जिन्दगी है बसी ही बंती देश के और करीबों लोप बीते हैं। एक सीमा-सावा बृहस्पति के पक्षों में फँता हुआ तंपवस्त मुबारिस जो सारी जिन्दगी कर्म घितता रहा इस उम्मीद में कि कुछ आसुवा हो सकेगा अगर न ही सका। उसमें क्या है जो मैं किसी को मुनाई। ये तो नबी किनारे खड़ा हुआ नरकुल हूँ हवा के बपेड़ों से भरे जम्बर भी भावाह्व पैदा हो जाती है। बस इतनी-सी बात है। मेरे पास अपना कुछ नहीं है जो कुछ है उन हवाओं का है जो मेरे भीतर बड़ी। मेरी कहानी तो बस उन हवाओं की कहानी है उन्हें जाकर बरुड़ी। मुझे क्यों तंग करती ही।

बनारस से आबन्गड़ जानेवाली सड़क पर, शहर से करीब चार मील दूर, एक छोटा-सा गाँव है उसही नीचा मड़वाँ। पगल-बीस पर कुमियों के, दो-एक कुन्हाड़, एकाम ठाढ़ुर तीन-चार मुसलमान (जिनमें पुरुषों में मयूरा और स्त्रियों में रमोई, मुनरा और कौसिकिया-जैसे नाम हैं।) और नी-बस चर कायस्थों के—यही इस गाँव को कुछ आबादी है।

यों तो इकका-बुकका कायस्थ भी अपने हाथ से हल चला लेते हैं लेकिन बस इकका-बुकका। खेती-किसानी कुमिया का काम है। कायस्थों को धान में इनसे बड़ा लगता है। वे यहाँ के अकेले पड़े सिखे लोग हैं और अपनी इसी आबन्गियत के बस पर अभी कुछ बरस पहले तक गाँव पर राज करते रहे हैं। मगर अब कुछ ती कुमियों में सिखा के साथ अपने अधिकारों को बेचना जायने के कारण और कुछ कायस्थों की आपसी फूट के कारण उनके राज्य की जूलें हिल गयी हैं और उनका पबबबा काफ़ी कम हो गया है। ताहम आज भी सबसे ब्यादा पढ़ा-लिखा बर्ष कायस्थों का ही है। उनमें बकीर हैं मुल्तार हैं पद्यकार और बहुलमाय हैं, मुहरिर हैं, स्टाम्पडरोस हैं, पटवारी हैं, स्कूल के मुखरिस हैं। कहना न हीया कि ज्हंमि या जमाने के साथ तख़्तों की हैं क्योंकि एक बज्ज या कि उनमें यहाँ-यहाँ बस एक-दो डारुमुची और रसावातर आकिये से।

मगर बहु पुरानी बात है।

मुनते हैं कि अब से कोई दो सी बरस पहले एक कोई लाला टीकाराम से। वह क्या से यहाँ से कहाँ जिय कहाँ मरे—यह सब कुछ भी ठीक नहीं मानूम। लेकिन संभव है कि वह लमही के पास ऐसे मानक गाँव के रहे हों क्योंकि इतना मानूम है कि उनको तीसरी पुरत में मुंशी पुरमहाय लाल पटवारी होकर ऐसे से लमही आये।

लाला टीकाराम के दो बेटे से लाला मनियार सिंह और लाला महाराज सिंह। मनियार सिंह शायद लाबल मर गये। महाराज सिंह के दो बेटे हुए (बेटियाँ कियी



हुई नहीं मालूम क्योंकि बेटियों के बारे में शहरा सामोस है। )—राम कास और मैकू कास। मैकू कास के छ बेटे हुए जिनमें से चौथे गुरसहाय कास थे। यही गुरसहाय कास पटवारी मुकरंर होकर समझी जावे। उनके साथ ही उनके मंत्रीवे हरनरायन कास जाये और फिर इन्हीं दो लोगों से यह धारे कायस्थ घराने पैदा हुए जो इस ब्राह्मण समझी में मौजूद हैं।

मुंशी गुरसहाय कास के चार बेटे हुए—कौसेखर कास महावीर कास अजायब कास और उदितनरायन कास।

मुंशी जो ठेठ कायस्थ और ठेठ पटवारी आसमी थे। पड़े सिधे उत्तम ही थे जितना कि पटवारी के लिए पकुरी का मपर जामबाजी में किसी से जो मर बटकर न थे। आने के साथ ही उन्होंने अपना मकान बनवाने के लिए गाँव के एक छोर पर जमीन हासिल की और एक बड़ा-सा कच्चा मकान बनवाया।

पटवारी में अगर अक्ल हुई तो उसे गाँव का राजा ही समझना चाहिए एक तरह से—जैसे चाहे स्वाह-सक्रेर करे, कोई उसका हाथ पकड़नेवाला नहीं। धीरे-धीरे मुंशी गुरसहाय कास के पास साठ बीघे की अपनी माराजी हो गयी जो उन्होंने अपने बूंसरे बेटे महावीर कास के नाम सिलवायी। यों भी पर में खाने-पीने की कमी न थी। पीने की बात कहना जरूरी है क्योंकि मुंशी गुरसहाय कास बहुत म्दी पीनेवाले थे। पैसा जरूरत भर भर में था ही गाँव में ही हीली थी दो आने की एक बोलस मिसवी थी और बही दो आने का सेर भर ककिया।

पैसा तो उन्होंने ठरें की उन बंठलों में सायब कुछ काम नहीं उड़ाया लेकिन हाँ मधे की हास्य में यह अपनी बीबी की कुटुम्बत आम्बर किया करते थे पैसा कि शराबी आम तीर पर करते हैं।

सड़कों को अपनी माँ के साथ बाप का यह कुछ बर्ताव बहुत गलत है किन्तु मीतर ही मीतर मुकयकर बूंस जाते। एक महावीर ही ऐसे थे जिनमें इतना दम-श्रम था कि चाहते तो एक बार पिस पडत। अपने नाम के अनुसार बही अपने सब भाइयों में सबसे हट्टे-बट्टे खि-तड़म हैसत जवान थे। उनके बारे में कहा जाता है कि जब गाँव में कोई बिल नापना हीना और कोई उगको बग में न कर पाता तो महावीर का आवाहन किया जाता। महावीर औरन पोर्ता का फेटा नमचर कमर में बांधते हुए मीके पर पहुँच जाते। पाँच-साठ-बन मिनट तक बिल में उनकी हुन्गी हींगी फिर वह बिल को जमीन पर गिराकर उसके ऊपर चढ़ बैठते और चढ़े बैठे रहते जब तक कि उनको नाबने की क्षिया पूरी न हो जाती मकाल की छि मिनट जाय।

यह भी कुछ उनका नाम का ही प्रभाव था कि महावीर अपनी माँ के अनन्य भक्त थे। अजायब कास भी अपनी माँ को प्यार करते ही हीन लेकिन यह पट्टीर में

भीर फलतः मन से भी दुर्बल थे। महर्षीर अल्पज्ञ विज्ञान थे परीर भीर मन बीनों से मजबूत। धामर इर्नालिए बाप ने अपनी कुल साठ बीये आराबी महर्षीर के ही नाम सिद्धवायी थी क्योंकि जोरु भीर जमीन के बारे में मगहूर है कि ये बीनों उनी भावनी क पास रखी हैं जिनका गरीर ताउतबर भीर साठी मजबूत होती है।

महर्षीर सास बनने बाप से कहते य सही लेकिन जब मुंजी गुरमहाय सास अपनी बीबी को पीट चलते भीर बहु बेघारी बेइबात गाय की तरह चुपचाप पिटी रखी तो महर्षीर से अपनी माँ की यह दुर्गवा बेबी न जाती भीर बहु मुस्से से काँते हुए जाकर बीनों हाथों से अनन बाप की परन बबोज लेते भीर दाँत पीसकर कहते—मन करता है

मगर सँर, बीसी कोई दुर्बलना नहीं हुई भीर मुंजी गुरमहाय सास जब भी मरे अपनी मीत मरे। लेकिन ही महर्षीर उनको पकड़कर बाहर मसीट बरुन ले जाते। भाव बिन यह नाटक घर में हुआ करता लेकिन मारपीट वन्द नहीं हुई भीर इसी तरह पटवारगिरी करते ठरँ पीते भीर बीबी को चुनकते हुए मुंजी गुरमहाय सास पचपल-साठ की उन्न तक बिय।

भीर जब यह मरे तो पट्टीदारों ने जासकर मुंजी हरमरायन सास न जो अपने चाचा के साथ ही ऐरे से लमही भाये थे भीर जिन्हें धामर मन ही मन इन बात का मन्नास था कि पटवारगिरी बुर उनको क्यों नहीं मिली (जिसके तुफैल में भाज यह साठ बीये आराबी महर्षीर सास के नाम लिखी हुई थी भीर जो गरीब की भाँसों में कटि की तरह पड़ रही थी) महर्षीर सास की पट्टी पढ़ाना शुरू किया कि मपरतुम अपनी जमीन से इस्तीफा दे गे तो भाज अपने बाप की जगह पटवारो बन सकते हो।

महर्षीर सास के बड़े माई कौलेस्वर सास तीस बरस के होकर पशुम ही इस दुनिया से विघार चुके थे भीर पटवारगिरी के सीस में उन दिनों एसा कुछ छापदा था कि बेटा मपर पटवारियाल पास हो तो बाप की मही पर पहला हज उगी का होना था। महर्षीर सास यों ही कुछ सटर पटर पड थे भीर पटवारियाल पास करना तो दूर रहा उसके पाम फुके तक नहीं थे। लेकिन पट्टीदारों ने जब पट्टी पढ़ानी थी महर्षीर सास को जिनकी अकन भी उतनी ही मोटी थी यह बात बँच गयी भीर फिर उग्होंने किसी न पूछा न जाँचा गये भीर अपनी साठ बीये जमीन से इस्तीफा दे भाये। मुंजी हरमरायन सास की भाँच का काँटा दूर हो गया। पटवारगिरी न मिलनी थी न मिली।

अब चारों भाइयों के बीच बम छ बीबा जमीन बची जो मुंजी गुरमहाय सास अपने पोते यानी महर्षीर के बेटे बलदेव सास के नाम अल्प से लिल गये थे।

बेटी-किसानी के नाम से पूरे ज्ञानदान में अब बस इतनी ही जमीन बच रही थी। सब सड़के बेटी से लग जायें यह सायब मुंशी पुरसहाय साहू का मंशा भी न था। सायब की बात नौकरी के लिए है। और फिर पैसा भी तो नौकरी में ही मिलता है, बेटी में तो बस मक्का हाथ जाता है। बेटी के सामान घरीर भी अयकाल में एक को ही बिना या महावीर को। तो फिर ठीक है एक बटा बेटी करेया बाकी तीनों नौकरी करेये। तीनों हाथ में कब्ज रहेगा। अनाज भी इकठ्ठा पैसा हीगा और पैसा भी इकठ्ठा मायगा।

महावीर बेटी में लग गये और बाकी तीनों यानी कौसेकर, अजायब और उदितनारायन न इतना पढ़ किया कि नौकरी कर सकें थोड़ी-सी उर्दू-फ़ारसी और थोड़ी-सी अंग्रेजी।

यह एक संयोग ही था कि भाइयों में सबसे बड़े कौसेकर साहू डाकमुंशी बने। फिर क्या कहना या कुछ रोज बाद उन्होंने अजायब साहू को भी डाकमुंशी बनवा दिया। फिर अजायब साहू न बड़ी मेकी अपने से छोटे उदितनारायन के साथ की और इस तरह तीनों माई देवते-देवते डाकमुंशी बन गये। कहना मुश्किल है कि क्यों सब भाइयों को एक के बाद एक डाकमुंसियाने का ही घूसा रोग लगा। कुछ तो सायब इसलिए कि इस काम में दूसरे किसी महकमे से कम पिसाई करनी पड़ती थी और कुछ सायब इसलिए कि यह काम साफ़-सुधरा था। ऊपरी आदमी की मुंदाइय तो नहीं के बराबर थी मगर दरबत काफ़ी थी। जालि-जाल भी समसिये डाकमुंशी गाँव का एक खास आदमी था। उसी की मार्केत मोबवास का सम्बन्ध बाहर की दुनिया से रहता था। कमाने के लिए लौक बाहर जाते ही रहते। कमी उनकी चिट्ठी आती और अब बहुत दिन न आती तो वहाँ से उनकी चिट्ठी नेकनी होती। कमी कुछ रुपया मनिशार्ड से आता। डाकमुंशी इन सब का हाकिम था और जहाँ अब से ली बरस पहले मारे गाँव में दो ही बार आदमी अपने बस्तान बना सकते रहे हों डाकमुंशी का काम लिफ़ाफ़ा-वीन्टकार्ड बाँटन से ही खरम न हो जाता था बहुत बार चिट्ठियाँ भी उनी को लिगनी पड़ती थी। बतमंशी का यही ठकाना था और इसके एवज में गाँव के लोग थोड़ी-बहुत नै-मंडा साब-मन्डी रघ-गुड़ भी पहुँचा दिया करते।

मुंशी अजायब साहू ने यों भी गरीबत नेर पायी थी। लौक पकड़कर अकनेवाले आदमी से सेबिन उम लौक पर अपर उनकी जाल से किमी का कुछ पैसा हीगा ही तो उनमें कमी पीछे न रहने। पर-बाहर सब जयहू बह आनी बिसाठ नर दूमरों की नदर करने। बीमे बिमान ही कितानी थी दन राय पर लौकर हुए से आनीम एक पहुँचने-पहुँचते रिटापर ही गये।

उनके बड़े भाई कौंसिलर साहब अबामी में ही मर गये थे। उनकी विधवा स्त्री अपने बच्चे को लेकर बहुत गिन बर पर ही रही। लेकिन फिर उनके साथ भी बड़ी हुआ जो साथ या झूठ हमारे समाज में प्रायः हर विधवा मुनती के साथ होता है। रिस्ते के एक भतीजे को लेकर उनकी अबनामी हुई, महावीर साहू की परी ने अनूठपूर्व मनोयोग से अपनी बैठानी के चारित्रिक स्वस्व का अनुसन्धान और प्रचार किया—यहाँ तक कि बेचारी गाँव छोड़कर चुनार चली गयी और वहाँ दो-एक सेठों की सभकियों की पढ़ाकर (घोड़ी-बहुत कैंपी बह आगती थी) अपनी जिम्गी के दिन काटने लगी।

उनके लड़के मोती साहू को भी अपने पिता की ही जामू मिला। वह भी अपनी स्त्री की गोद में एक साल का बेटा और तीन लड़कियाँ छोड़कर तीस बरस की ही उमर में इस दुनिया से उठ गये। मुंठी अबायब साहू ने अपनी उध छोटी कमाई में से बरसों अपनी इस भतीजे-बहू को पौष रपया महीना दिया। इसी तरह अपने चाचा ईश्वरदास की विधवा स्त्री को भी जिन्हें सब करियई चाची कहते थे उन्हेंने मार्जावन से रपया महीना दिया।

उनके छः भाई उदितनरायन साहू जिन्हें मुंठी अबायब साहू ने ही डाकमुंठी बनवाया था डाकखाने का रपया प्रबल करने के जुर्म में पकड़े गये। उनकी छुड़ाने के लिए बहुत कोशिश-मैरमी हुई मगर बेकार, और उन्हें साथ बरस की सजा ही गयी। सरकारी रकम एक हजार रपया बड़ी-बड़ी मुचकिलों से बरवाकों ने भरी। अब सबास उनके बाल-बच्चों की परवरिश का था। मुंठी अबायब साहू इसमें भी सबसे जाये-जाये रहे। उदितनरायन के घर में उनकी पत्नी थी एक लड़का था और दो लड़कियाँ। लड़का अपतनरायन सबसे बड़ा था और बिलकुल साबारा था। घर से माय गया और सवा के लिए सापठा ही गया। बड़ी लड़की की शादी उदितनरायन कर चुके थे वह अपने घर रहती थी। छोटी लड़की अभी छोटी थी। उदितनरायन सबा काटकर घर आये बरस के दिन धर्म के मारे उनकी मौत न उठती थी और फिर जो वह रायब हुए तो ऐसे कि दुबारा किसी ने उनका मुंह न देखा। उनके बाल-बच्चों की देख रेख मुंठी अबायब साहू ने जिन्दगी भर की छोटी लड़की का ध्याह भी उन्हींने किया।

उनके व्यक्तिगत में असाधारण कुछ भी न था बस इतना था कि जान्नी भसे से छक-कपट से दूर रहते थे। उनके माँ-बाप के बारे में जो कुछ पता चलता है उससे मान्य होता है कि उनकी प्रकृति में अपने पिता से अधिक अपनी माँ का अस था जो कि एक सास साखी स्त्री थी। उन्हेंने कभी अपनी पत्नी के साथ बैसा दुर्मबहार नहीं किया जैसा उनके पिता अपनी पत्नी के साथ आये दिन किया करते



उनके बड़े भाई कीसेरवर लाल जबानी में ही भर गये थे। उनकी विधवा स्त्री अपने बच्चे को लेकर बहुत दिन भर पर ही रहीं। लेकिन फिर उनके साथ भी बहू हुआ जो सब या झूठ हमारे समाज में प्रायः हर विधवा मुबती के साथ होता है। रिस्ते के एक महीने को लेकर उनकी बदनामी हुई, महाबीर सास की पत्नी ने अनूतपूर्व मनोवीर से अपनी बेठानी के चारित्रिक स्वसन का अनुसन्धान और प्रचार किया—यहाँ तक कि बेचारी माँ छोड़कर चुनार जसी पपी और बहू दो-एक सेडा की लड़कियों को पढ़ाकर (पोड़ी-बहुत कँपी वह जानती थी) अपनी जिन्दगी के दिन काटने लगी।

उनके लड़के मोती लाल को भी अपने पिता की ही मायु निर्मा। वह भी अपनी स्त्री की गोद में एक सास का बटा और तीन लड़कियाँ छोड़कर तीस बरस की ही उमर में इस दुनिया से उठ गये। मुंशी अजायब लाल ने अपनी उस छोटी बम्दाई में से बरसों अपनी इस मजीब-बहू को पाँच रुपया महीना लिया। इसी तरह अपने चाचा ईस्वरलाल की विधवा स्त्री को भी जिन्हें सब करियरि चाचा कहते थे उन्होंने आजीवन दो रुपया महीना दिया।

उनके छोटे भाई उदितनारायन लाल जिन्हें मुंशी अजायब लाल ने ही डाकमुर्गी बनवाया था डाकखाने का रुपया एहन करने में जुर्म में पकड़े गये। उनको कुड़ाने के लिए बहुत कोसिस-वीरवी हुई मगर बेकार, और उन्हें सात बरस की सजा ही मयी। सरकारी रिकम एक हजार रुपया बड़ी-बड़ी मुसकिलों से बरबालों में मयी। अब सवाल उनके बाल-बच्चों की परवरिश का था। मुंशी अजायब लाल इसमें भी सबसे जागे-जागे रहे। उदितनारायन के घर में उनकी पत्नी भी एक लड़का था और दो लड़कियाँ। लड़का जयनारायन सबसे बड़ा था और दिलफुल आचार था। घर से भाग गया और सदा के लिए सापता ही गया। बड़ी लड़की की धारी उदितनारायन घर चुके थे वह अपने घर रहती थी। छोटी लड़की अभी छोटी थी। उदितनारायन सदा काटकर घर आये बरकर लेकिन सर्म के मारे उनकी बीस म पठनी थी और फिर जो वह सायब हुए तो ऐसे कि दुबारा किसी ने उनका मुँह न देना। उनके बाल-बच्चों की देख रेख मुंशी अजायब लाल ने जिन्दगी भर की छोटी लड़की का ब्याह भी उन्हींने किया।

उनके व्यक्तित्व में असाधारण कुछ भी न था बस इतना था कि बादमी भसे वे छल-कपट से दूर रहते थे। उनके माँ-बाप के बारे में जो कुछ पता चलता है उमसे मालूम होता है कि उनकी प्रकृति में अपने पिता से अधिक अपनी माँ का भंघ था जो कि एक घास साधनी स्त्री थी। उन्हींने कभी अपनी पत्नी के साथ बीसा दुर्गबहार नहीं किया बीसा उनके पिता अपनी पत्नी के साथ आये दिन किया करते

ये। मामूली पढ़-लिखे आवामी थे। गीता और शास्त्र भी देखे थे। पर धार्मिक अनुष्ठानों में उन्हें क्या-बा विश्वास न था। कहते थे उनमें डोंग क्यादा है तरह कम। परम का मण्डल वह सबाधार समझते थे जिसे उन्होंने छक्ति मर अपने जीवन में बरता। कभी किसी से सगड़े नहीं हाँ छोटा-मोटा ममा यहुतों का किया। अपने नातेदारों में जगदम्बा के पिता बुजकिघोर साह और बिन्हेसरी के पिता रजपाल साह को अपनी कौशिल से बिट्ठीरसा बनवाया और चकरत पढ़ने पर लोपों को फाव-वैसे देने में भी अपनी बीकाल मर कंजूसी नहीं की। हुमेसा मरर नीची करके बसे। पाँच की बहू-बेटियों को अपनी बहू-बेटी समझा। कभी किसी सगड़े में अयर लोपों से उनको पंथ बनाया तो बिना इसका या उनका मुँह देखे मरनी बेगीम राय थी। और वैसे ही आबर भी उनको अपने समान में लिया।

संयोग से पत्नी भी उनको अपने अनुरूप ही मिली। बेजने में जितनी सुन्दर, स्वभाव की उत्तमी ही कोमल। सुन्दर इतनी कि घायब इतनी सुन्दर स्त्री परिवार में फिर कभी नहीं आयी—गुब मोरी भँसोसा कद मरा हुमा चरहरा शरीर, भाँसे बड़ी नहीं पर सुन्दर उठी हुई सुबील नाक लबे-लबे बाल मीठी आबाब। काशी विश्वविद्यालय के पास एक गाँव है कटीनी वहीं की लड़की थी। पिता घायब किसी जमीन्दार के कारिन्दा थे। सुन्दर, मोटे, सगड़े। लेकिन बस यह शरीर ही था उनके पास जो कारिन्दा बनने के योग्य था आरमा बिलकुल दूसरे ही साथ में इनी थी। जिस कारिन्दा की लबीयत में नेकी ही सचकन ही सच्चाई ही पुलाबट ही वह भी कोई कारिन्दा है। इतना ही नहीं उनके बार में यह भी मुता जाता है कि वह साहित्यिक लबि के आरमी थे और घायब कुछ कितारें भी उर्हाने सिगीं जिन्हें बुनिया की रीसानी देगना मधीब न हुमा। कहते हैं कि उनकी बेगी मानन्दी ने अपना कन-रंग-स्वभाव सब कुछ जन्ही से पाया था। उन्हें कभी किसी न सगडा करते नहीं देना गया और न वह हुमटी औरलों की तरह इयर की बाल उयर लयामे में या टीके-पड़ोसबालों की निम्दा में ही रम लेती थी। लीसपती परेक स्त्री थी अपने पति के समान ही सदा हर किसी की महायता के लिए तरार। मर भी मामूली ही पढ़ी-लिखी थी कम सोड़ी-मो कँपी पर उनी उन्होंने जगनी भनीर-बहू को भी लिया था।

पर के काम राज में बहु उकर यतता थी। गाला बहुत अण्डा पवानी थी और नीने पिरोने में भी बेजोड़ थी। उनके हाथ की बगिया में जो सगई थी बहु तो फिर देनी ही नहीं गयी।

लेकिन एक दुर उनका बडा था। उनके बच्चे नहीं उँले थे। दो सड़ियाँ

हुई और बोलों बाठी रहीं। तब लमही की औरतों ने शोर मचाया कि मामन्ही का अपने मीके जागा ठीक नहीं है बड़ा भूढ़ भगते हैं।

बस यह चाह भूढ़ की बात हो चाहे मात्र संयोग हीसरी लड़की जो भानन्ही को, लमही में पैदा हुई, जिसका नाम सुणी रखा गया वह जिन्हा रहीं और उनके छ-साठ बरस बाद लमही के उषी कच्चे पुस्तनी मकान में जो मुंशी गुरसहाय साल में बनवाया था सावन बरी १० संवत् १९३७ एतबार ३१ जुलाई सन् १८८ को उन लड़के का जन्म हुआ जिसे बाद की दुनिया ने प्रेमचंद के नाम से जाना। लड़का भूढ़ ही मोर-बिष्टा था। सब बहुत लुप था। पिता ने हुससकर उसका नाम रखा *कमल और ठाऊ के मकान*।

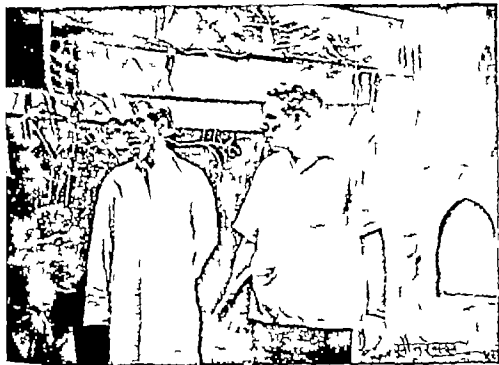
बस एक बात बटक रहीं थी लड़का तैतर या मानी तीन लड़कियों की पीठ पर हुआ था और ऐसी संतान के बारे में लोगों का विश्वास है कि वह माँ-बाप में से किसी एक को साये बिना नहीं रहती। मकान ने ऐसी श्रुति का उत्कास कोई परिचय न दिया किन्तु इसमें सन्देह नहीं कि यह भी प्रकृति का एक अन्धा धर्म था। जिस लड़के को भाये चलकर माजीवन समाज की मुर्दा रुढ़ियों से जूझना पडा, वह स्वयं एक मुर्दा रुढ़ि की छाया में पैदा हुआ।



बेचारी माँ को लड़कियाँ गँवा चुकी थी और अब बस यही दो बच्चे बच चुकी थीं और नबाब। सुगी नबाब से छ-साठ साठ बढ़ी थी। उसकी भी माँ कुछ कम प्यार नहीं करती थी लेकिन नबाब में तो जैसे उसके प्राण ही बसते थे। कुछ तो घायब इसलिए भी कि वह सबसे छोटा था और सड़का था। माँ को हरबम यही डर लगा रहता कि कोई उसके बेटे को मारकर लवा देना कुछ जाहू टोला कर देना। लड़का खंचल था भी जिसे 'टोमहा' कहते हैं हरबम साहू फूँक करवाती रहती राई-नौन से मारकर पत्तरवाती रहती — और बिठौना तो नबाब को पाँच-छ साठ की उम्र तक लगाया जाता रहा। माँ का बस चमत्ता तो वह कभी बेटे को अपने बाँचल से बल्ला न होने देती।

इस तरह बचपन के कुछ वर्ष माँ के प्यार की पीठल छाँह में बहुत ही मजुर बीते। माँ के साइसे ये और पारारत कहिए या बूहल उनकी बुट्टी में पड़ी थी। आये दिन कुछ-न-कुछ हुआ करता और घर पर उसाहना पहुँचता। एक रोज़ ऐसा हुआ कि लड़कें भाई-भाई खेल रहे थे। नबाब को पारारत सूती उसने ललाम के डी एक लड़के रामू की हजामत बनाते-बनाते बाँध की कमानों से उसका जान काट लिया। काम कटा तो छेद नहीं मगर गून खर्र मर्रमर मर्रमर बहने लगा। रामू रोना-पीटता अपनी माँ के पास पहुँचा। माँ ने बेटे के जान से गून बहते देगा तो बागबबुका हो गयी और एक हाथ से रामू को पकड़े घनघटी पटवती नबाब की माँ के पास उसाहना देने पहुँची। नबाब ने जैसे ही उनकी आवाज सुनी लिङ्की के पाम बुबल मया। माँ ने बुबलते हुए उनकी हल लिया और पकड़कर चार शापड़ रमीर किये। पूछा — रामू का जान तूने क्यों काटा? नबाब ने निहृयन भोलेगन से जबाब दिया — पता नहीं कैसे बट गया मैं तो उसकी हजामत बना रहा था।

अपन के दिनों में जिमी के गन में पुनकर अण तोड़ लाना मटर उगाइ लाना — यह तो रोज़ की बात थी। हमरे लिप् मेनबाला की बापी भी मारी पड़ी थी लकिन ललता है कि उन मालिपी से अण और मींगे मटर और बुलायम



जगहरी की कोठरी बिलमे बन्य हुआ  
हिन्दी कवि त्रिलोचन धीर नेक बिद्वान् स्मेकस सरे ह ।



समही का एक दृश्य



प्रमोद का अपना बनबाया मकान

हो जाती थी। कमही शूँक सदा से बहुत प्रीतन पाँव रहा है इसलिए कोई इस पाँव को बरगुजर भी न करता था और मक्खर इस बात का उल्लाहना आता। घर में डाँट-फटकार भी होती लेकिन एक-दो रोज के बाद फिर वही रंग-रंग।

डेला चलाने में मी नवाब बहुत मीर से टिकोरे पेड़ में आते मीर उनकी चाँमाटी धुक हो जाती। ऐसा ठाककर निघाना मारते कि दो-तीन डेलों में अब जमीन पर नजर आता। पेड़ का रसबासा चिल्लाता ही रह पाठा और नवाब की मण्डली आम दिन-बटोरकर चम्पत हो जाती। मीर सबसे ब्यादा मन्दा तो निघानेबाजी में तब आता जब आम पकना शुरू हो जाते। तेज आँसु सब आम के पेड़ों को ताके खुली और वही किसी डाल में कोई कोंपल दिखा नहीं कि डसेबाजी शुरू। मन्दास है कि दो-तीन चक्कों में बह नीचे न आ जाय। रसबासा चिल्लाता है तो चिल्लाने से गाली देता है बने से इमें आम से मठलब है कि उसकी गाली से। जब तक अपना छाठी-बण्डा लेकर बह आयेगा हम नहीं के कही होंगे। अपनी मण्डली में नवाब का निघाना मण्डूर था इस मामले में बह अपनी टोली के घारे सड़कों का सर्राज था। आज तक लोग उसका बसाम करते हैं — बीसे ही बीसे उनसे गुस्ती-बण्डे का। सुनते हैं उनका टोल अच्छी तरह बमकर बैठ जाता था तो मुस्ली डेड़ सी गज की खबर लेती थी। लेकिन वह बरा बाब की बात है अभी तो हाथ में इतना बम न था।

घर के सामने अहाँ अब मुशीबी का बनबाया हुआ अपना मकाम है एक बहुत ही पुराना बहुत ही बड़ा इमली का पेड़ था। उसके नीचे लाला (महावीर लाल) की मर्झया तो भी ही खेलने के लिए भी बूब जमइ थी साऊ-सुपटी। वहाँ इमली के चियों और महुए के कोरनों से खेल होता और कबड्डी को पाली जमती।

इसी तरह बचपन के मुहाने दिन बीत रहे थे कमी कमही में तो कमी पिता के साथ कहीं और। उस कहीं और में ही एक जगह कजाकी नाम का एक डाक हुरकार उसकी जिनगी में आया और इमेघा के लिए अपनी माँ और अपना दाण छोड़ गया —

●मेरी बास-स्मृतियों में कजाकी एक न मिटनेवाला व्यक्ति है। आज चालीस साल गुजर गये (कहानी सन् १९२९ में समही में बैठकर लिखी जा रही है जब कि मुदरिसी के तेरिस दुफ्तनी सालों की बेतहाशा भगमभाय के बाद सेबक उस जिनगी को अलजिदा कहकर फिर अपने बचपन के परिवेश में लौट आया है कुछ गुस्ता रहा है और पुरानी स्मृतियाँ भीमी भीमी बयार की तरह आकर उसको घुलता रही हैं) लेकिन कजाकी की मूर्ति अभी तक आँसु के सामने नाच रही है।

होती वो हम सब से बचने का कोई और ही उपाय सोचते। मौसबी माहब को चिट्ठियों का ढीङ्ग था। मकतब में क्याना बुलबुल, दहियल और चण्डूओं के पित्रे सटकते रहते थे। हमें सबक याद हो या न हो पर चिट्ठियों को याद ही जाते थे। हमारे माप ही वह भी पढ़ा करती थी। इन चिट्ठियों के लिए बसम पास में हम लोग जब दरसाह दिखाते थे। मौसबी साहब सब लडकों को पठिते पकड़ जान को ताकीद करते रहते थे। इन चिट्ठियों को पठितों से बियेप बधि थी। कमी-कमी हमारी बला पठितों ही के छिर चली जाती थी। उनका बलिदान करके हम मौसबी साहब के रीह रूप को प्रसन्न कर लिमा करते थे।

ममकान को प्रशास बढ़ाये बिना कब बरदान मिला है और गुरु की सेवा किय बिना कब किये बिद्या आयी है। पुराना कामना तो कम से कम यही था। और भी बहुत-सी निरममें खंजाम देनी होती होगी ममकान् बकरी के बास्ते हटी हटी पठितों को बला बाजार जाकर सौदा-मुमुक से आना — और हुक्का घर करने का तो जैसे बिक्र ही बेकार है उसके बिना कमी किसी को कुछ भी आया है।

पढ़ाई का तरीका वही पुराना रहा होगा जो कि बाद के तमाम नये प्रयोगों में बाबजुद शायद सबसे अच्छा था मानी रहता। गणित के मास्टर साहब पहाड़ा रटाते थे और बच्चों के कड़के सुन-सुनकर समझते पापन की तरह पहाड़े रटने से — सात के सात मात्र बुनी थीं सात निपाई इक्कीस संसूत के पठितन थी गच्छति गच्छत गच्छति राम रामी रामा रटाते थे और मौसबी साहब आमदनामा लेकर माजी और मजहूरक हाल और मुस्तदबिल अन्न और निरी के तमाम सौधों में सेकड़ों मजदूरों और मजदूरों की निरवान करवाते थे — आमद आमद आमदी आमदेद आमदम आमदेम। गीमर योगन्द योपी योमिद योयम योयेम। (क्या अरब कि यह चीज मौसबी साहब ने दहियली और चण्डूओं की खजान पर सड़कों से पहले चढ़ जाती थी।) जब आमदनामा पकटा हो जाता तब सारी के मुक्तिस्तों भोली और बरीना-मामुचीमा की बाधि जाती। कारनी पढ़ाने का यह कामना आज सेकड़ों साल से बुनिया में चल रहा है। तबक न भी हमी कामने के कामनी पढ़ी और बरतबाधिवां ती जो होनी थी होनी रही' ताहम ऐसा समता है कि मौसबी साहब ने तबक की कारनी की जब बाधि मजबुत कर दी। उर्दू के बारे में कहा जाता है कि उर्दू पढ़ायी नहीं जाती भला में आनी है पढ़ायी तो कारनी जाती है। जो भी बात हो हममें यह नहीं कि इन मौसबी साहब ने उनही कारनी की बुनियाद गुरु पक्की कर दी थी कि उन पर यह मान लया हो सका। प्रारंभ तोर पर जब इष्टर और बी ७० करते की नीरन आयी

उस बकस नवाब राय को यह तय करने में एक मिनट नहीं लगा कि एक विषय  
बहर कारणी हीना चाहिए।

इस तरह बोझ-बहुत पड़ते और सारे दिन मटरगली करते बोलते-दूरते  
मने में दिन बीत रहे थे।

और इन्हीं दिनों की बात है कि जहाँस और हसपर (बलमद) ने  
मिलकर घर से एक रजमा उड़ाना था। अब जरा उसकी दास्तात "न्हीं स  
मुनिए

● मूँह-हाथ धोकर हम दोनों घर भाग और डरते डरते अन्दर इदम  
रखा। अगल कहीं हम बकस तलाशी की नीकत भापी तो फिर जगबाम ही मात्तिक  
है। लेकिन सब काय अपना-अपना काम कर रहे थे। कोई हमसे न बोला।  
हदन नाशा भी न किया जबेना भी न किया किताब बगल में दरापी और  
मरते का रास्ता लिया।

बरमात के दिन थे। आकाश पर बादल छाए हुए थे। हम दोनों चुप-चुप  
मकठब बसे जा रहे थे हजाराँ मसूब बाँधते थे हजाराँ हवाई फिल बमात  
थे। यह अबसर बड़े भाग्य से मिला था। इसलिए रुपये का हम तरह खर्च करना  
चाहते थे कि रजादा न पनावा दिनों तक चल सक। उन दिनों पाँच आन मर  
बहुत अच्छी मिठाई मिलती थी और सायद भाग सर मिठाई न हम दोनों अछर  
जाते लेकिन यह जयास हुआ कि मिठाई खार्पये तो रजना आज ही सायब ही जायगा।  
कोई मसरी बीज खानी चाहिए जिसमें मजा भी आये पेट भी मरे और पैस भी  
कम खच हों। आखिर अमक्यों पर हमारी नजर गयी। हम दोनों राखी हो भय।  
दो पैस के अमक्य लिये। सस्ता समय था बड़े-बड़ बाखू अमक्य लिये, हम दोनों  
ने बुजों के शान्त मर गये। अब हलबल ने लटनित के हाथ में रपया रखा तो उसने  
सन्नेह स देखकर पूछा— बरया कहीं पापा साला? चुप तो नहीं आये?

जबाब हमारे पास तीपार था। रयादा नहीं तो दो-तीन किताबें पड़ ही चुक  
थे। बिद्या का कुछ-कुछ अमर ही जला था। मैंने मट से कहा— मीलवी माहब  
की छीम देनी है। घर में पीठे न ये तो जाया जी ने रपया दे दिया। ●

● हम जमी सबक पड़ ही रहे थे कि मात्तिक हुआ आज ठाकाब का मला है  
बोनहर मे छुट्टी ही जायगी। मौनवी माहब मने न बुलबुल उड़ाने जायेंगे। यह  
अगर मुलने ही हमारी चुनी का ठिजामा न रहा। बाखू आन तो बैक न जना ही  
कर चुके थे माऊ तीन आने में मेला देनत की टूटी। नुब बहार रहेगी। मज से  
देबिपयौ खार्पये गौत्तपप्ये उड़ायेंगे मूय पर चड़ये और पान को जर पहुँचये।

लेकिन मौसमी साहब ने एक कड़ी शर्त यह लगा ली थी कि सब लड़के छुट्टी के पहलू बनना-अपना सबक सुना दें। जो सबक न सुना सकेगा उसे छुट्टी न मिलेगी। गरीबा यह हुआ कि मुझे तो छुट्टी मिल गयी पर हलबंदर डैर कर लिये गये। और कई लड़कों ने भी सबक सुना दिये वे सब भी मेला बेखन बर पड़े। मैं भी उनके साथ ही लिया। जैसे भरे ही पास थे इसलिए मैंने हलबंदर को साथ लेने का इन्तजार न किया। तब ही मना था कि वह छुट्टी पाते हूँ मैंसे मैं मा जायें और बोला साथ साथ मला द्यो। मैंने बयान दिया था कि जब तक वह न मायों एक पैना भी खर्च न करेया लेकिन क्या मामूम था कि दुर्भाग्य कुछ और ही लाना रख रहा है। मुझे मछा पहुँचे एक घन्टे से ब्यादा मुबार गया पर हलबंदर का कहीं पता नहीं। क्या अभी तक मौसमी साहब ने छुट्टा नहीं बो या रास्ता मूल गये? भाँपे फाड़ फाड़कर सबक की भार देवता था। अकल मेला चलने में जो भी नहीं लगता था। यह संछय भी हो रहा था कि कहीं जोरी गुल ली नहीं गयी और बाबाजी हलबंदर को पकड़कर बर तो नहीं ल गये। बाकिर जब शाम हो गयी तो मैंने कुछ रेपिडिटी सापी और हलबंदर के हिस्स कर्पसे जब मैं लपकर चारे-पीरे पर बसा। रास्त म लनाह जाया मरुतब हीना बन्। सापर हलबंदर अभी नहीं हों मगर वहीं समाटा था। हाँ एक लड़का सल्ला हुआ मिला। उनम मूस बेगद ही और से कलहा मारा और बोला — क्या पर जाओ तो जैयी मार पड़ती है। तुम्हार क्या भाये थ। हलबंदर की मारते-मारते ल गये हैं। बर्जी ऐसा जानकर पूना मारा वि म्पि हलबंदर मुँह के बल गिर पड़े। यहाँ से घसीटते से गये हैं। तुमने मौसमी साहब की समझाइ दे ली थी वह भी ले ली। अभी कोई बहाना सीध ली नहीं तो बेजब की पड़ेगी।

भरी सिट्टी पिट्टी मूल गयी बदन का कट्टू मूख मया। बही हुआ त्रिगका मुझे एक ही रहा था। पैर मल मल भर क ही गये। बर की और एन एन क्रम बनना मुन्दिल हो गया। देरी इतनाओं के जितने माम मार थे सभी की मानता मानो — दिगी को लहू किमी की वेदे किमी की बाघ। पाँच क नाम पढ़ेवा ली पाँच क बोट का मुन्दिल मिया बराकि मगन हलबंदर मैं लू ही की लच्छा मने प्रपन हली है।

यह सब कुछ मिया कलिल गयीं गयीं निरट जाता दिल की बड़ान बड़ती जाती थी। पगले उमड़ा भाजा थी। मालम हीना या भाममान फलान विरत ही चारना है। बनता था — लीग जाने जान नाक को लै ली मने जा रहे हैं गार भी लूँ उर पर की मार उछल कने बर जाने । बड़िनी जान बीउने की और उजा बनी भागी थी सतिन मैं उवा म

गति से बना थाटा वा मानो पैरों में अस्ति नहीं। जी चाहता था जोर का बुझार बढ़ जाने या कहीं घाट लग जाय लेकिन कहने से भोली गये पर नहीं बढ़ता। बुझाने से मीठ नहीं जाती बीमारी का ठी कहना ही क्या। कुछ न हुआ और और धीरे चलने पर भी बग सामने का ही गया। अब क्या हो? हमारे द्वार पर हमली का एक बना बूझ वा मैं उसी की जाड़ में छिन गया कि धारा और बँबरा हो जाय ठी धुनके से बूझ बाळें और अस्माँ के कमरे में चारपाई के नीचे जा बैई। जब सब कोप भी जायँगी ठी अस्माँ से सारी क्या कह सुनाळेंगा। अस्माँ क्या नहीं मारती। धारा उनके सामने झूठ-मूठ रोळंगा ठी वह और भी विचल जायँगी। रात कट जाने पर फिर नीन पूछता है। मुवह तक सब का गुस्सा ठण्डा हो जायगा। अमर ये मसूबे पूरे हो जाते ठी इसमें सन्देह नहीं कि मैं बेदास बन जाता। लेकिन वहाँ ठी बिभाठा को कुछ और ही मजूर था। मुसे एक लड़के न देख लिया और मेरे नाम की पट लगाते हुए धीरे मेरे घर में भागर। अब मेरे लिए कोई आशा न रही। लाचार घर में बाबिल हुआ ठी लड़का मुँह से एक पीछ निकल गयी जैसे मार सामा हुआ कुता किसी को अपनी ओर जाता देखकर मय स चिस्ताने लगता है। बरोठे में पिता जी बैठे थे। पिता जी का आत्म्य इन दिनों कुछ सराब हो गया था। छुटी सेकर घर जाने हुए थे। यह ठी नहीं कह सकता कि उन्हें सिकावत क्या थी पर वह मूस की दास पाते थे और सन्ध्या समय सीसे के गिजास में एक बोलस में से कुछ उँडेक उँडेकर पीते थे। धायर यह किसी अनुबँदाग हकीम की बदायी हुई दवा थी। दवाएँ सब घसानेवाली और कड़वी होती हैं। यह दवा भी बुरी ही थी पर पिता जी न जाने क्यों इस दवा को जब मजा से-सेकर पीते थे। हम जो दवा पीते हैं तो बाँबें बन्द करके एक ही बूँट में गटक जाते हैं पर धायर इस दवा का असर धीरे-धीरे पीने में ही होता हो। पिता जी के पास नाँब के बो-नीन और कमी-कमी चार-पाँच और रोवी नी जमा हो जाते और ज्यों दवा पीते रहते थे। रोवियों की मच्छली जमा थी, मुसे देखते ही पिता ने लाल-भाङ्ग बाँबें बन्दे पूछा — कहाँ से अब तक?

मैंने दबी जवान से कहा — कहीं ठी नहीं।

अब जोरी की जादत सीप रहा है? बोस तुने स्वया बुराया कि नहीं?

मेरी जवान बन्द हो गयी। सामने मयी लसबार लाल रही थी। धरु भी निकलपट हुए बरछा था।

पिता जी ने जोर से डाँटकर पूछा — बोलता क्यों नहीं? तुने स्वया बुराया कि नहीं?



मैंने जान पर बैसकर कहा — मैंने कहाँ

मुँह से पूरी बात भी न निकल पायी थी कि पिता जी बिकराल रूप धारण किये बैठ पीछे झपटकर उठे और हाथ उठाये मेरी ओर बसे। मैं ओर से बिम्बाकर रोने लगा — ऐसा बिम्बाया कि पिताजी भी सहम पड़े। उनके हाथ उठा ही रहे यथा। चायब समझे कि जब अभी ये इसका यह हास है तब तमाचा पड़ जाने पर कहीं इसकी जान ही न निकल जाय। मैंने जो देखा कि मेरी हिरण्य काम कर गयी थी और भी गला फाड़-फाड़कर रोने लगा। इतने में मण्डली के दो-तीन आदमियों ने पिताजी को पकड़ लिया और मरी और हमारा किया कि भाग जा! बन्ध बहुरा एने मौक पर ओर भी मचल चाते हैं और स्पर्ष मार खा जाते हैं। मैंने बुद्धिमानी से काम लिया।

केवल अन्धर का बुद्धय इस कहीं भयंकर था। मेरा तो गून चर्र हीं यथा। हलधर के दोनों हाथ एक अम्मे से बँधे थे मारी यह पूर भूगरित ही रही थी और वह अभी तक सिसक रहे थे। चायब वह अगल जर में रँट थे। ऐसा फालूम हुआ कि सारा अगल उनके आँसुओं से भीष गया है। पापी हलधर को डट रही थीं और अम्मा बैठी ममासा पीत रही थीं। सबसे पहले ममासा बपी की निगाह पड़ी। बोनी — लो वह भी आ गया। क्यों रे, क्या तुने चुराया था कि इसने?

मैंने निरंकु होकर कहा — हलधर ने।

अम्मा बोनी — अगर तमी ने चुराया था तो तुने चर माकर चिनी ले कहा क्यों नहीं?

जब शूठ बोले बरीं बचता मुस्किरत था। मैं तो मयमता हूँ कि जब आपकी को जान का सतरा हो तो शूठ बोलना साम्य है। हलधर मार जाने के मारी प बी-चार बूनि और पड़ने से उनका कुछ न बिगड़ सकता था। मैंने मार कभी न गापी थी। मेरा तो दो ही चार रूमी में काम तमाम ही जाता। फिर हलधर ने भी तो अपने को बचाने के लिए मुसे फँसाने की चेष्टा की थी। नहीं तो बपी मुसब वह क्यों पूछनी — क्या तुने चुराया था हलधर ने? चिनी भी मिडाल से मेरा शूठ बोलना इस समय स्तुप नहीं तो साम्य बरर था। मैंने हटते ही कहा — हलधर कृत्य से चिनी से बचाया तो मार ही चारुया।

अम्मा — देना बही बात निबली न! मैं तो चरनी ही थी कि बचपा की ऐसी जादू नहीं पैसा ता वह हाथ से छूता ही नहीं केवल सब सांग मुती का उज्ज बनाने लगे।

हल — मैंने तुमने सब कहा था कि बचपाओगे तो मायेया?

मैं—वही तालाब के किनारे तो। ●

धोड़ी-सी पड़ाई थी डेरों उल्लसकर। बिबिलेपन की इच्छा नहीं। कमी बखर मामू का नाच है तो कमी आपस में ही बुझदौड़ ही रही है। रामु रमुनाब पिरपी पधारब बामुद, गोबर्द्धन और और भी न जाने कितने पूरी फौज थी। तीन महाने मृतबासिर जामों की बडेबाजी चलती। इतने कच्चे आम लामे बाठे कि ऊलर भर बोवी लन-लगाकर मुँह फरका रहता। आम में जाती पड़ जाती तो फिर पना भी बुझ ही जाता। किसी के यहाँ से नमक आठा किसी के यहाँ से बीरा किसी के यहाँ से हींग किसी के यहाँ से मपी हँडिया के लिए पैसा। फिर कोई हँडिया लाने चला जाता बाक्री लीप बांस की पत्ती बटोरने में लय आते। पास ही बैसवारी थी। फिर आम मुकगायी जाती आम मूने बाठे। पना बनाने का पूरा एक घास्र बा और इस घास्र के बोड़ी एक आचार्य बे। उतमं मबाब नहीं बे। पर हूँ हिस्सा लेने में सबसे लामे रहते थे। यह तो ममी का मफता बा। आड़े के दिनों में डेरों ऊब लाड़ लामे। उधो में यह भी बाबी लगी हुई है कि ऊब की लेप कीन सबसे पड़ी निकास सवता है। कमी कोस्रहारे में चले लामे बहाँ गुड़ बन रहा होना बहाँ पनूए रघ से (औ सोई को फिर से पानी में मिंगोरुन लैपार किमा आठा है) लमीमठ तर को पा कच्चा गुड़ लेकर दाँठ से उसके लड़ने का मजा देता। गुड़ सं मूधीबी को बेहू प्रेम है। गुड़ मिठाइयो का बावसाह है। लारी बिन्धी गुड़ का यह प्रेम इसी तरह बना रहा। लाने के साथ धोडा-सा गुड़ उकरी बा।

गुड़ की लोरी का एक निहायत दिलचस्प किस्सा। अपने बचपन का मूमीजी ने हीली को छुड़ी से सुनाया है—

अम्मा तीन महीने के लिए अपने मीके या मेरी निहास मयी ली और मीने रॉल महीने में एक मन गुड़ का सज़ावा कर दिया बा। मही गुड़ के दिन बे। पाना बीमार बे अम्मा को बुसा मेजा बा। मेरा इन्तिहान पास बा इसकिण में बनके साथ न जा सका। आठे बल उन्हीने एक मन गुड़ लेकर एक मटक में रपा और उसके मुँह पर एक सकोरा रखकर मिट्टी से बन्द कर दिया। मुझे चलन लाकार कर दो कि मटका न लोळना। मेरे लिए धोड़ा-सा गुड़ एक हाँडी में रख दिया बा। वह हाँडी मैन एक हपले में सफाभट कर दी। मुबह को बूब के साथ गुड़ पीरहर को रीटियों के साथ गुड़ लीसरे पहर बानों के साथ मुड़ राठ को फिर बूब के साथ गुड़। यहाँ तक जामब लच बा जिस पर अम्मा को भी कोई एनराब न हो सकता। मगर स्कल से बार-बार पानी पीने के बहाने भर में जाता और लो-एक पिण्डिया निकालकर ला केठा। उसकी बजट में बहाँ गुजाइरा थी। और

मुझे गुड़ का कुछ एका पत्का पड़ गया कि हर बप्प नहीं गया सवार रूँता । मेरा घर में जाना गुड़ के सिर घामत जाना था । एक रुपये में हाँडी ने जबाब दे दिया । मगर मटका सोलन की सकत मनाही थी और अम्मा के घर आने में अभी पीने तीन महीने बाकी थे । एक दिन तो मैंने बड़ी मुश्किल से बड़े-सिसे सब किया लेकिन दूसरे दिन एक बाह के साथ सब जाता रूँता और मरके की एक मीठी कितपन के साथ होना सञ्जत हो गया ।

फिर तो इस बी अंभुस की जाम ने क्या-क्या नाच नचाया है —

अपने को कोसता पिक्कारता — मुड़ तो सा रहे हो मगर बरमात में मारा शरीर सड़ जायगा गर्भव का मलहम उगाय बूमोने कोई तुम्हारे पास बैठना भी न पसन्द करेगा । कसमें साता बिधा की माँ की स्वर्गीय पिता की गऊ की ईस्वर की

कुछ भी काम न आया तो बड़े भक्तिभाव से ईस्वर से प्रार्थना की — ममबान् यह मेरा बचक कोभी मन मुझे परीछान कर रहा है मुझे धरिण की कि उसको बस में रख मरूँ । मुझे अष्टबात की स्याम बी जो उसके मुँह में डाल दूँ !

मगर सब बेसूद । काठरी में तासा उगाकर एक बार उसकी जामी बीघार की संकि में डाल दी जाती है और दूसरी बार कुएँ में फेंक दी जाती है, मगर तब भी रिझाई नहीं मिलती और बहु मन भर का मटका पेट में गमा जाता है !

इस तरह की दिक्कतियों की नबाब को कुछ कमी न थी । कमी दो बार लीग जाकर पौपरी से मछली मार लाये और नूनकर गा बने । और कमी इसभी के नाथ बटाबट पोनी की मोटे हाँडी बिये से ठार-जूस पित्त-मट होता जो कि तऊवीर के चित्र-मट रु रती भर पटक नहीं पा क्योंकि उगमें भी बाबाणा खाने वाले और हारे जाते कोई दखि हो जाता को मासामाक हो जाता — मरकभ यह कि दिक्कतियों के सामानों की कुछ कमी न थी और ही रात को राती से कहानी गुनी जाती और सयफा होता कि बतानी करने समय राती का मुँह भीया (बलमत्र) की तरफ क्यों ही जाता है ।

इन तरह माँ और दादी के लाइ-प्यार में लिपटे हुए दिन बड़ी मन्नी में पीत रहे थे जब कि आममान के इस बप्प का इनका मुन न देगा गया और उगी नाक माँ ने बिस्तर पट्ट लिया । मुँगी अत्रायब लाक की ही तरह बहू भी मपन्नी की पुरानी मटीब थीं । इन बार का इतना जाननेवा नाबिन हुआ । मुँगी अत्रायब सास उन दिनों दवाफाबार में थे और बड़ी मबाब की माँ बीघार नहीं । उ दर्शने बीमार रहीं । मबाब तब जानें मास में चल रहा था और उसकी बहन गुम्पी बीहू-बहू की थी । उगी नाक उमका ध्यात् मिर्जापुर के नाम लड़ीकी नाम के

माँ में हुआ था। पीना भी हो गया था। माँ के मरने के आठ-दस रोज पढ़ने  
मापीं। दादी भी मापीं जो कि छमही में रहती थीं। नवाब माँ के छिरहाने बैठा  
पंखा झलता रहता और उसके चबेरे बड़े माई बछड़ेस लाम जो बीस बरस के  
नौबवान के और एक अंग्रेज के यहाँ टेनिस की गोली उठान पर मीकर ये दबा  
दाक के इंतजाम में रहते। काफ़ी इलाज हुआ लेकिन ब्यर्थ।

नवाब के आठवें साल में वह बस बर्षों और उसी दिन वह नवाब जिसे माँ  
पान के पत्ते की तरह फेंकी थी बिठौला समाकर घर से निकलने देती थी और  
माँबस में छिराये फिरती थी कमी सर्षी से कमी गर्मी व कमी सिहानेबालों की  
ईठ से क्षेत्र-देकते सयाना हो गया। अब उसके सर पर तपता हुआ तीला आकाश  
या नीचे जलती हुई भूरी धरती थी पैरों में जूते न थे बदन पर साबित कपड़े न  
थे इसलिए नहीं कि यकबनक पैसे का टोटा पड़ गया बल्कि इसलिए कि इन सब  
बातों की फिर रखनेवासी माँ की आँखें मूंद गयी थीं। बाप यों भी कम माँ की बपह  
न पाता है उस पर से वह काम के बीत से दवे रहते। उनके पैर में चक्कर ली  
बैठे था ही हर सास दो सास छ-महीने में उनका ठकारला होता रहता कमी  
बाग ली कमी दस्ती कमी योत्सपुर ली कमी कानपुर, कमी इलाहाबाद ली कमी  
सननऊ, कमी बीयतपुर ली कमी बड़हतगढ़ किसी एक जगह जमकर रहने  
न पाते ऊपर से काम का बीत सासी परेछान चिन्वणी थी। बेट को उनके साथ  
की उनकी दोस्ती की भी चकरत हो सकती है—इसके लिए न तो उनके पास  
समत थी और न समय। 'कबाकी' में केबक ने छायद अपनी ही बात बच्चे के  
मुँह से कहसबायी है—

बाबूजी बड़े मुस्केवर थे। उन्हें काम बहुत करना पड़ता था इसी से बात  
बात पर झुंझला पड़ते थे। मैं तो उनके सामने कभी आता ही न था वह भी मुझे  
कभी प्यार न करते थे। घर में वह केबस दो बार बच्चे पढ़ने के लिए भोजन  
करने आते थे बाकी सारे दिन दफ्तर में लिखा करते थे। उन्होंने बार-बार एक  
सहकारी के लिए अफसरों से बिनय की थी पर इसका कुछ असर न हुआ था।  
यहाँ तक कि तादील के दिन भी बाबूजी दफ्तर ही में रहते थे। बाबूजी मुझे  
प्यार ली कभी न करते थे पर पैसे लूब देते थे। सायद अपने काम में व्यस्त  
रहने के कारण मुझे निण्ड छड़ाने के लिए इमी मुस्ख को सबसे आसान समझते  
थे। प्यार, दोस्ती संग-साथ नवाब को जो कुछ मिलता अपनी माँ से मिलता  
मन पड़े का नाम मुनते ही उनकी स्पोरिया बरल जाती हों। तो माँ अब नहीं  
रही। माँ पैसा ही कुछ प्यार बड़ी बहुत से मिलता था वह अपने घर चली गयी।  
नवाब की दुनिया पर के माते मूनी हो गयी। पिताजी का ली बही हाथ था। पढ़े

मरिे शाम को घर लौटते और बौतल लेकर बैठ जाते। पीते अपनी भाभा भर ही वे मगर हर शाम पीते थे। एक छोटी-सी गिलसिया भी बही उनका अपना थी।

सूनी दुनिया में बराबर कान रह सकता है। चिन्वगी मुर उसे मरने का उपाय कर देती है, जैसे कि हर पाव बह भर देती है। बुद्ध स्मृतिवों की बीसाकी लेकर चलने लगते हैं और गुडरे बचनों के प्रत आकर उनकी दुनिया को भर देते हैं। नवाब तो अभी बच्चा का बहुत ही घरीर, बहुत ही गिरावट और घरीर चिन्वगी उसके सामने पड़ी थी।

पत्नी के मरने के कुछ ही दिन बाद मुंसो अनापब कास बीमार पड़े। ठीक होने भी न पाय वे कि फिर लबादले का हुक्म आया। नयी जगह सून घर में नवाब को से आना पामरुपन होता इसलिये नवाब को फिर समही में ही रखने की ठहरी। इलाहाबाद से चलने लग ता उन्होंने बरुदेव से भी साथ आने को कहा। पर बरुदेव साथ नहीं आये। कुछ ही बदन बाद उनका साइब की जो डाक-तार बिनाम का कोई बड़ा मफसर या इन्वीर की बरनी हु। वह बरुदेव कास को भी जो मुंशी अनापब कास के चले जाने के बाद उनी के यहाँ रूठे थे अपने साथ इन्वीर लेता गया और उन्हें तार का साइम्मीन बतवा दिया। वह पन्द्रह बरन इन्वीर में रहे आये और घर का मंह नहीं देना। बाद को अपने छोटे भाई बरुमद को भी उन्होंने अपने पास बुलाकर अपने ही समान साइम्मीन बनवा दिया पर बरुमद कच्ची उम्र में ही चल बसे।

नवाब की अब फिर अपनी बही पुरानी दुनिया थी — बही मौन्नी साइब और बही खेज-मैदान ऊप-मटर आम हमली शीड़ भाप गुन्नी-मोकी। फर्क बस इतना था कि घर पर अब और भी कोई न था माँ की कच्ची फिमी काम के लिए रोजती भी थी डाँटती भी थी। बाकी तो बस साइब कच्ची थी कुछ तो घामा इसलिए भी कि माँ अभी हाल में ही मरी थी उस वक को बच्चा बरुदेव रोस-रुद में भूक जाये

तिहाडा जैसे जैसे समय बीतता गया उम्र के साथ-साथ आचारारगर्दी भी बढ़ती चली। बी बरुमद बाद गिला में फिर प्याह कर लिया था कैरिम उनमें नवाब का अनेनापम न बरना या न पटा और वह अलग अपनी दुनिया में घूमना रण गिलता रण वाली से कहानी; मुन्ता रण। बिनी इन्टर वह एक प्रगती पीर की बाइ थी बिलकुल निर्बाय उम्मुक्त। इस उनका अफ्ठा पहलू वह मरते है। कैरिम कुछ कुछ पहलू भी था — बायू-लेख बरुम की उम्र तक पहुँचने-गहुँचउ अपने मिपरेट-बाँड़ी का चत्वा नक चुरा था और आने ही पारों में उन बाना का

मान हो गया था जो कि बच्चों के लिए बातक है। बिना माँ के बच्चे का ऐसा ही हाल होता है। न ही, तो मकरम की बात है। पता नहीं माँ का प्यार किस रहस्य पूर्व उन से बच्चे का परिष्कार किया करता है। दोनों में से किसी को पता नहीं चलता पर वह छाया अपना काम करती रहती है। वह प्यार छिन चाये घर पर से वह हाथ हट जाये तो एक ऐसी कमी महसूस होती है जो बच्चे को अन्तर से तोड़ देती है। और उसके साथ ही बहुत से सन्धि बहुत-सी मूर्तिवाँ टूट जाती हैं जिनको बनाने में बरसों लगे थे।

यह कमी कितनी सही कितनी तड़पानेवासी रही होगी जो सारी जिनगी यह जानती उससे उबर नहीं सका और वह टीस बराबर पहाड़ों से टकरानेवाली सारस की आवाज की तरह उसकी मनो में गूँबती रही। बार-बार उसने ऐसे पात्रों का सृष्टि की जिनकी माँ साठ-आठ साल की ही उम्र में जाती रही और फिर दुनिया सूनी हो गयी। 'कर्मभूमि में अमरकान्त रहता है

जिनगी की वह उम्र जब इंसान को मुहब्बत की सबसे सयावा चकुरत होती है बचपन है। उस बचप पीढ़े को छरी मिल जाय तो जिनगी भर के लिए उसकी जड़े मजबूत ही जाती है। उस बचप खुराक प पाकर उसकी जिनगी तुलक ही जाती है। मेरी माँ का उमी बनाने में बेहान्य हुआ और तब से मेरी रूह को खुराक नहीं मिली। वही भूख मेरी जिनगी है।

दूसरी माँ के आ जाने से बात कुछ नहीं बदली उसने उसका अकलापन और बढ़ गया क्योंकि अब वह दादी के साथ कमरू में नहीं बसिक अपनी नयी माँ के साथ गोरखपुर में रह रहा था और पिता को बेटे की और ध्यान देने का और भी कम समय मिल रहा था। दादा अपनी कुछ उसी मनोरपता को उन्होंने कर्मभूमि में यों व्यक्त किया है

समरकान्त ने मिर्चों के कहने-मुने से दूसरा विवाह कर लिया था। उस तबत सास के बालक न मनी माँ का बड़ प्रम से स्वागत किया लेकिन उसे अरुद मानम हो गया कि उसकी नयी माँ उसकी बिद और सपत्तियों को उस लामादृष्टि से नहीं देखती जैसे उसकी माँ देखती थी। वह अपनी माँ का शकला साइला था। बड़ा बिही बड़ा मरुतट। जो बात मुँह से निकक जाती उसे पूरा करके ही छोड़ता। नयी माताजो बात-बात पर डाँटती थी। यहाँ तक कि उन माता के छेप ही गया। जिस बात को वह मना करतीं उसे अरुदकर करता। पिता से भी डाँट ही मया। पिता और पुत्र में स्नह का बचन न रहा।

यह मन स्थिति ठीक वह थी जिनमें नबाब के बिलकुल बहक जाने का पूरा सामान था लेकिन प्रकृति जैम अपने और तमाम जंमनी फूल-पीरों को नष्ट होने

ध बघाती है जिनकी सेवा-टहल के लिए कोई भागी नहीं होता उसी तरह इन आबारा छोकरे को भी बचा रखी थी। उनको बचाने के लिए उलने बंध भी ऐसा ही व्यवहार किया जो उसकी प्रतिभा के अनुकूल था।

बस एक हल्का-सा मोड़ द दिया। आबारायची बस भी पल रही थी — मगर मोटी-मोटी किताबों के पन्ने में जिनका रस छन-छनकर उसमें भीतर के दिस्वापा को बुराक पहुँचा रहा था। जो मूख उसके भीतर न जाने कब से घायल जन्म से ही पल रही थी जिसे गरीबी की कहानियों में और उफसा दिया था अब मसाल गुद उसके लिए बुराक जुटा रहा था — और इस तरह फिर वह आबारायची भाषा । गर्वी न रह गयी मुल्की इण्ड और मदरगल्ली की जगह तस्लिम और ऐराठी की मोटी-मोटी किताबों ने से की ऐसी कि पूरी एम्पाइकनोपीडिया समस्त संजिए। एक जादमी तो अपने साठ वर्ष के जीवन में उनकी मज्जस भी करना चाहे तो नहीं कर सकता रचना तो बुर की बात है। यह मौलाना फ़खी के तस्लिम होमवर्क की टारीफ़ है जिनके पचीसों हजार पन्ने ठेरह साह के मसाल ने दो-तीन बरस के दौरान में पढ़े और और भी न थाने जितना कुछ पाठ डाला जैन रैनास की मिस्ट्रीज भाऊ व कौट भाऊ सण्डन की पचीसों किताबों के उर्दू उर्दुमें मौलाना मन्नाद हुसेन की हास्य-कृतियाँ उनराबजान अबा के मगक मिर्जा समवा और रतननाथ सरदार के डेरों विस्से। उनम्यास परम ही गये ती पुराणों की बारी बारी। मकमकिगोर प्रेम ने यहूत से पुराणों के चर्च अनुबाद छाये से उन पर दूट पड़।

कोई पूछे कि इतनी सब किताबें हम कइस की मिलती बर्दा थीं ?

एही पर एक बुजुर्ग बुद्धिमान नाम का रहता था। मैं उनकी बूझान पर जा रचना था और उनके स्टाक से उनम्यास क-सेजर पढ़ता था। मगर बुरात पर मारे दिन तो बैठ न सकता था इसलिए मैं उनकी बूझान में जंपबी पुस्तकी की बुझियाँ और मोहम ऐकर अपने स्वयं के सङ्कों के हाथ बेबा करता था और उनके मुभाबजे से बूझान से उनम्यास पर लाकर पढ़ता था। दो-तीन बरों में मैंने गैकड़ों ही उनम्यास पढ़ डाल दिये।

एतद कि बाद में बहुत बाद में कुछ दोस्तों ने उन्हें जिताबी कीड़ा का जा करव दिया था उमता यह पूर्वामाम था। इनमें एसा एक पूर्वामाम लौ अय मे तीन बरस पहले निजा अब जिता जी की शारी से मीक्रे पर मसाल ने मोर्दा की रिक्-सम्पनी के लिए था वी उबाची की प्रतिरोमिता व जो कि कामरवों की शारी में म तर कोई अनहोली पीर भी न अब है इतनी एबउं मुताजी थी कि परानी-बगानी सब बंध रज दये। अब बारा नवाब मिशन स्कूल में माग्नी जमान में पढ़ने व जी गीगार दर्दा बरमाना था। मैनिम मोरगापुर वह छापा उनके भी दो बरस पहले पढ़े

पय से और उनकी झंझड़ी पढ़ाई रात पाठशाला में शुरू हुई। उन दिनों उनकी मनी माँ के माई बिजयबहापुर भी नहीं रहते थे। उनसे नयाय की बहुत बगती थी उस मी समय एक ही थी। अस्सर यीनों वालमियाँ के मैदान में निकल जाते और पर्वतों के पंच देखते। मनी माँ का पहला बच्चा गुलाबराय तब बड़े गो-साल का था और मुमकिन है कि उसकी आमाव ने घर से मन्दाब का छगाम मीर कम कर दिया हा। यही समय वो बरस था उनको बूरे बच्चे मन्दाब का बन्ध हुआ।

वहाँ तक मन्दाब की बात है उसको घर से यों ही बहुत कम मन्दाब था और भय तो उनके पास हीय उड़ा देनेवाले तल्लिस्मों की असम अपनी एक दुनिया थी और हात्रिमलाई और चहार बरबेज जैसे घंगी-सापी से जिनके संग-संग बहु कमी तेम बदलकर भेरेरे तहल्लानों में चुनता था और अस्सर बंगलों व रेमिस्ताना में भटकता फिरता था।

पढ़ाई का यह हाल था तो जैसे मुमकिन था कि कुछ लिखने का भी ख्याल मन्दाब के दिम में न आता जब कि योंय पढ़स से ही मौजूद था। केकिन बड़े आश्चर्य की और काफ़ी गहरे आशय की बात है कि तेरह साल का मन्दाब जब लिखने बैठा तो उसने तल्लिस्म और ऐयारी की राह नहीं पकड़ी बाबजू उन सैकड़ों किताबों के बिन्ही बड़ बोलकर पी चुका था और जो लिखप ही उसके दिमाग पर छापी रही होंगी। कोई ताकत जो खुद उससे बड़ी थी उसका हाथ पकड़कर उसे सामाजिकता के उन रास्ते पर ले गयी जिसे भविष्य में उसका अपना खास रास्ता बनना था जिसे अपने पैरों से गँद-रीरकर उसने पक्का किया जिस पर उसके पैरों के सहरे निधान है जो अल मिटनेवाले नहीं हैं। शुरू की कुछ कहानियों में सामाजिकता के माब-माब कहानी के ढाँचे में यह तल्लिस्मी ऐयारी रंग मी घोड़ा-बहुत बीला मयर उसकी पहली रचना जो उसका परिषद-पत्र था इस बीब से झूठ पाक है।

बहु रचना उसकी पहली रचना जिसे छापर बिराण बली के सिपुर्द कर दिया गया अपने तरह की एक बेमोड बीब थी जिस पर छापर किसी अच्छे सनक को मी धर्म न अती। उसक रचे जाने की कहानी खुद मुनी जी ने बहुत रस से-केकर कही है—

● भरे एक नाते के मामू' कनी-कमी हमारे यहाँ आया करते थे। अपेक्ष ही पये के ककिन कमी तक बिम-भ्याह थे। पाम न पीड़ी-मी जमीन थी मन्दाब का सेकिन बरनी के बिना सब कुछ सूना था। इनीमिप पर पर जो न छगता था

१ नाम छिया गये हैं। मुमते हैं कि यह मुंशी खल्लाराम नाम के एक सज्जन थे बिजयबहापुर के फुकरे भाई।



गातेहारियों में घुमा करते थे और सबसब यही आशा रखते थे कि कोई उनका ब्याह करा दे। इसके लिए सी बों सी खर्च करने को भी तैयार थे। क्यों उनका विवाह नहीं हुआ यह आश्चर्य था। बच्चे खासे हूट-भुट मादमी के बड़ी-बड़ी मूर्छें खींचत कर, साबसा रंग। नाँवा पीते थे इससे नाँवें माल रहती थीं। अपन बंग के बर्मनिष्ठ भी थे। सिबड़ी को रोवाना जल चढ़ाते थे और माँस-मछली नहीं खाते थे।

आखिर एक बार उन्होंने भी बड़ी किया जो बिन-ब्याहे सोम बचकर किया करते हैं—एक अमारिन के मयत-बालों से घायल हुई गये। वह उनके यहाँ मोहर पावने बँलों को सानी-पानी देने और इसी तरह के दूसरे फुटकर कामों के लिए नौकर थी। अमान भी छरीली थी मामू साहब का वृषित हृदय मोठे पल्ल को धारा देलते हा फिखल पड़ा। बाती-बाती में उससे छेड़-छाड़ करने लगे। वह इनके मन का माव छाड़ गयी ऐसी अलहड़ न थी और मखरे करने लगी। केनों में ठेस भी पड़ने लगा चाहे सरसों का ही क्यों न हो। माँलों में काजल भी अमका ओगों पर मिससी भी आयी और काम में बिभाई भी गुरू हुई। कमी बीतहर को आयी और सलक दिराकर जली मयी कमी साँस को आयी और एक तीर अजाकर जली मयो। बीला की सानी-पानी मामू साहब पुर से देते गोबर दूमरे उठा ल जाते। मुबती से बिगड़ते क्योकर, वहाँ तो अब प्रम उदय हो गया था। हीभी म उमे प्रयानुसार एक साड़ी बी मगर अर को गजी की साड़ी न थी नुबगुरल-सी सबा दो दरये की चुंदरी थी। हीभी की ल्योहारी भी मामूक से चौगुनी कर बी और यह सिलसिला यहाँ तक बढ़ा कि बहु अमागिन ही पर की मालकिन हो गयी।

एक दिन संघ्या समय अमारों के आयम में वंचायत थी। बहु जादमी है ती हुआ करे, क्या किसी की इरबल लेंगे? एक इन लाला के बाप थे कि कमी किमी मेहरिया को और अंग उठाकर न देना (हालांकि यह मरामर गल्ल था) और एक यह है कि नीच जात की बहु-बेटियों पर भी डारे बालत है। समझाने-बुझान का मौका न था। समझाने य लाला मारेंगे तो नहीं उलटे और कोई बामना गजा कर देंगे। इनके अलम सुमान की तो दर है। इसलिए निरुधय हुआ कि लाला गाहब को ऐसा मबरक देना चाहिए कि हमेसा के लिए याद ही जाब। दरजन का बाला गूल मेही बुकता है लेकिन मरम्मत से भी कुछ उमकी पुगीनी हो ही मकती है।

दूबरे दिन शाम को जब अंगा मामू साहब न पर आयी तो उन्होंने अन्दर का द्वार बन्द कर दिया। महीनों के अममजन हिचक और पानिक गपरा के बाद आज मामू साहब के जाने प्रम को आबहासिक रूप देने का निश्चय किया था।

बाड़े कुछ ही बाय कुछ भरजाव रहे या बाय बाय-दादा का नाम डूबे या उतराय ।

उपर जमारों का जल्पा ठाक में था ही। इपर किबाड़ बन्द हुए, उपर उर्हूनि बटबटाना शुरू किया। पहले तो मामू साहब ने समझा कोई असामी मिलने माया होया किबाड़ बन्द पाकर सौट जायगा लेकिन जब आदमियों का घोर मूक मुता तो बहड़ाये। आकर किबाड़ों की बराबर स साँका काइ बीस-पचीस जमार साठियाँ छिये द्वार राक सड़े किबाड़ों को तोड़न की कोशिश कर रहे थे। सब करेँ तो क्या करेँ, मायने का कोई रास्ता नहीं जम्मा को नहीं छिया नहीं सबते। ममस वच कि धामत आ गयी। आगिही इतनी जस्त गुप्त जिलाययी यह क्या जानते थे नहीं इन जमारिन पर निल को माने ही क्यों देत। उपर जम्मा इन्हीं को कौन रही थी—तुम्हारा क्या बिगड़या भरी तो इजरात सट गयी। घरबासे मुइ ही काटकर छोड़िये। कहती थी अपनी किबाड़ न बन्द करो हाथ-पाँव जोती थी मगर तुम्हारे मित्र पर तो मून मबार था। कभी मुँह में कासिब कि नहीं ?

मामू साहब बेचारे इस कब में कभी न भाये थे। कोई पक्का सिछाड़ी होता तो सौ जपाय निकाल लेता लेकिन मामू साहब की तो जैसे मिट्टी-पिट्टी मूर परी। बरीठ में घर-घर नापते इनुमान वालीता का पाठ करते हुए सड़े थे। कुछ न मूसता था।

भीर उपर द्वार पर कोलाहल बढ़ता जा रहा था यहाँ तक कि सारा दाँब बसा हो गया। बाम्हन ठाकुर, कादस्य सभी तमासा देखने भीर हाव की सुबसी मिटान भा पहुँचे। इसन रदादा मनोएजक और स्पूतिबजक तमासा भीर क्या होगा कि एक मय भीर एक भीरत को माय घर म बर पाया जाय ! बड़ई बुलाया गया किबाड़ बन्दे गये और मामू साहब मूम की कोठरी में छिने हुए मिले। जम्मा बाँपन में नहीं रो रही थी। डाग कुल्ले ही मायी। कोई उरस नहीं बोसा। मामू साहब भागकर कहाँ जाते ? वह जानते थे उनके लिए मायने का रास्ता नहीं है। मार खाने के लिए रीवार बीटे थे। मार पड़म लगी और बेभाव की पड़ने लयी। जिसके हाव को कुछ लया—जूता छड़ी छाता लाठ पूँसा सभी मस्त बर। यहाँ तक कि मामू साहब बेहीन हो पय-और लोनों ने उन्हें मुर्दा समझकर छोड़ दिया। अब इतनी दुगद के बाद बहु कब भी पय ती पाँव में पहुँची रह सकेते भीर उनकी जमीन पट्टीदारों क हाथ भायेयी।

एक महीने तक तो बरहन्दी भीर गुइ पोंते रहे। ज्योंही बलने-फिरने लायक हुए, इनारे यहाँ भाये। अपने गाँववालों पर डाने का इस्तगामा शायर करना चाहते थे।

मगर उन्होंने कुछ बीनता जिलायी हीवी तो घायल मुझे हमदयी ही आनी

बसठे समय भी रामचन्द्र की कुछ नहीं मिला जब कि मायावीजान तबायक को गुदा जान क्या-क्या मिला था।

मर पास ही जान पेसे पड़े हुए थे। मैंने पसे उठा मिय और जाकर शरमाते-शरमाते रामचन्द्र को दे दिये। उन पसें को देगकर रामचन्द्र को जितना हर्ष हुआ वह मरे मिय आशाशील था। टूट पड़े मानो प्यास को पानी मिल गया।

बड़ी ही आने पेस लेकर तीनों मूर्तियाँ बिदा हुईं। केवल मैं ही उनके साथ इन्व के बाहर तक पहुँचान आया। ●

बचपन की अशोच ममता और बँसी ही अभीम कातरता

कैबिल अब हम उस दौर की जोलट पर पहुँच गये हैं जब कि नबाब का बचपन अपनी कड़वी मौठी स्मृतियों के साथ बड़ी ठेकी से पीछ फूटता जा रहा है। अभी उसकी उम्र बीसह साल है। बचपन के बीठ जान की उम्र नहीं है, केवल बच-सुधि है। पर यह सब अब पाड़े दिनों का खेल है। मैं की मरे छ साल बीठ चुके हैं। इस बीष उसने बहुत कुछ देगा है महा है, सीला है और अकाल प्रीतता जो कुछ तो उसकी प्रतिमा का शूच-शोच है और कुछ उसकी परिस्मृतियों का उसका बर बाबा अटगटा रही है।

इस बार मुनी अत्रायबलाल योग्यपुर में बहुत सभे टिक मये थे इतना शायद इसके पहलु और नहीं भी रहने का मौका नहीं मिला था सगमग बार साल। इस बीष नबाब ने मियान स्वल मे आठवाँ बर्जा ज्यों-ज्यों पाम कर लिया था। जहीन थे मगर स्वामी किताना में जी न कगता था क्याकि ठसिरमी कहानियों की बबह न होग उड़ा रहना था और जो मजा हातिमडाई की सगल में वा बर भला मास्टर साहब की मयल में कर्ता। सस्टम-पस्टम पाम हो जैसे ब कैबिल ही टिगाव एक मुन्तकिल हीजा था जिसके नाम से बरीब का हलक मूगता था।

छोट, ती नबाब न आठवाँ पाम कर लिया और तभी मुनी अत्रायबलाल की बरनी जमनिया की हो गयी। उसकी सेहत विछने दिनों बहुत गिर गयी थी और बरबर गिरती जा रही थी। डूमरी पत्नी से उनका पहला लड़का मुलाब मप ही तीन साल का था। और डूमरा पहलाब हाल में ही पैदा हुआ था। नबाब की अब मरे बरों में माय किगाना था जो कि बनारस में ही मंत्रब था। पिताजी ने पूजा किगता गर्वा कलेना ? नबाब ने कहा — पाँच दये दे दिया कीगिगता। मपर पाँच दये में मरा बरा होना। बड़ी मुन्किल का मामला था। वा भी पान की पुन बगमर बनी हुई थी —

● पाँच में नून म प। देर पर गागिग कपड़ न थे। मँटमी अलग — दग गैर

के जाये। स्कूल से साढ़े तीन बजे छुट्टी मिलती थी। बाकी के बर्षान्त बासेज में पढ़ता था। हेडमास्टर ने फ़ीस माफ़ कर दी थी। इन्तहान सिर पर पा और मैं बाँस के फाटक एक लड़के को पढ़ाने जाता था। जाइँ के दिन थे। चार बजे पहुँचता था। पढ़ाकर छ बजे छुट्टी पाता। वहाँ से मेरा घर देहात में पाँच मील पर था। तेज चलने पर भी आठ बजे से पहले घर न पहुँच सकता। और प्रातःकाल आठ ही बजे फिर घर से चम्पना पढ़ता था नहीं बरत पर स्कूल न पहुँचता। रात को खाना खाकर कुर्मी के सामने पढ़ने बैठता और न जाने कब सो जाता। फिर भी हिम्मत बाँधे हुए था।

जब तक बचपन मर चुका था— यानी लड़के के कंधे पर शाही का जुआ रखने का बहुराज आ गया था। पिता लड़के को अँबरा के पुक का बाखू मानेवाला चमरोबा जुता और चार आने गज का नया कपड़ा न पहना सके लेकिन उसकी धारी तो कर ही सकता है। पन्द्रह बरस तब शाही क छिपे ऐसी कम उम्र भी न समझी जाती थी। गाँव में न जाने कितने थे जिनकी धारी इसी उम्र में हुई थी मुँगी अबायबकाल कड़े अपने धटे की न करते सोप नाम न करते। सेहत भी ठीक न बस रही थी अपने पीछे भी लड़के को लूँटे से बाँध देने का ख्याल भी मुमकिन है दिम में रखा हो। सम्भव है पत्नी न बार-बार मायह किया हो कि लड़का जब सवाना हुमा उसका ब्याह कर बना चाहिए। बहू बर में स आने का मोह किसे नहीं होता। पूरब में अस्ती ब्याह कर देने का बसम भी है। पत्नी बात इतनी है कि यह शाही कपायी नबाब के नाना साहब ने थी नाना साहब यानी मुँगी अबायब काल क नये समुर साहब। यह भी मुमकिन है कि नाना साहब ने अपने किसी मित्र का भला करने के बिचार से या अन्य किसी कारण से यह सम्बन्ध सिपर किया हो। जो भी बात रही हो यह बिबाह बस्ती जिसे की मेंहबाबक तहसील में बस्ती सहार स रस मील दूर रमबापुर सरकारी पाँच के एक छोटे-मोटे बर्मीवार के घर ठीक हुमा। बड़े आबमी है। लड़की बहुत अच्छी है। सब बहुत खुश थे नबाब सबसे प्यारा। मारे उत्साह के मध्यप छाने के लिए बाँस भी खुद उगी ने बाँधे। मुँगी उसके भीतर छमकी पड़ रही थी और शायद बाँस की जड़ पर कुम्हाड़ी चलाते समय वह कुछ गुनगुना भी रखा था। पिछले बरसों में उसने जो सिकड़ों किताबें पढ़ी थीं उनमें कितने ही शाही लकड़हार आये थे अपनी प्रेमिका की तलाश में भिवमर्गों का भेस बनाय जंगलों और रेमिस्तानों की लाक छानते हुए सुन्दर राजकुमार आये थे एक से एक सुन्दरी राजकुमारियाँ आयी थीं जिनके आगे चाँद भी चरमाता था। वही सब पीछे उसने पढ़ी थी वही तसबीरों उसके मन में थीं। उसका दिल किसोले कर रखा था और हवा में जगली मुलर्बी की भीग रातरानी की सुगन्ध थी। नहीं

बकते समय भी रामचन्द्र जी की कुछ नहीं मिला जब कि आबादीजान उषायक को गुवा जाने क्या-क्या मिला था।

मेरे पास ही जान जैसे पड़े हुए थे। मैंने जैसे उठा लिम और जाकर घरमाते घरमाते रामचन्द्र को दे दिये। उन पैसों को लेकर रामचन्द्र को जितना हूप हुआ वह मेरे लिए आभासीय था। दूट पड़े मानो प्यासे को पानी मिल गया।

वही वो आने जैसे भकर तीनों भूठियां बिदा हुई। केवल मैं ही उनके साथ कन्वे क बाहर तक पहुँचाने आया। ●

बचपन की अबोध ममता और बैठी ही अबोध कातरता

केकिन अब हम उस दौर की बीवण पर पहुँच गये हैं जब कि नवाब का बचपन अपनी कड़वी मीठी स्मृतियों के साथ बड़ी तेजी से पीछे छूटता जा रहा है। अभी उसकी उम्र चौदह साल है बचपन के बीठ जाने की उम्र नहीं है केवल कप छवि है। पर यह सब अब भाइ दिनों का देख है। माँ की मरे छ मास बीठ चुके हैं। इस बीच उसने बहुत कुछ देना है सहा है घीसा है और अकार-प्रभिता जो कुछ ही उसकी प्रतिमा का शून्य-शोध है और कुछ उसकी परिस्थितियों का उसका दर बाका खटनटा रही है।

इस बार मुझे बजायबलास योरसपुर में बहुत सभे टिक गये थे इतना सामय हमके पहुँच और कहीं भी रहने का मौका नहीं मिला था कमथम बार साल। इस बीच नवाब ने मिशन स्कूल से जाठवाँ दर्जा ज्यों-ज्यों पास कर लिया था। वहीं से मगर स्कूली किताबों में जी न लगाता था क्योंकि तसिसवी कहानियों की बजह से होय उठा रहता था और वो मजा हासिमवाई की मयत में था वह मला मास्टर साहब की संगत में नहीं। मन्टम-पस्टम पास हो जाते थे लेकिन ही हिंसाव एक मुस्तफिस हीजा था जिसके नाम से तरीब का हलक सुपता था।

तैर, तो नवाब ने जाठवाँ पास कर लिया और तमी मुझे बजायबलास की बरकी जमनिमा की हो गयी। उनकी सेहत पिछले दिनों बहुत किर बनी थी और बराबर गिरती जा रही थी। डूमरी पत्नी से उनका बहूला सड़का मुछाक तथ दो-तीन साल का था। और दूसरा महताब हास में ही पैदा हुआ था। नवाब को अब सबें दर्जे में नाम लिखाता था जो कि बनारस में ही संभव था। पिताजी ने पूछा कितावा ठकाँ मनेपा? नवाब ने कहा— पाँच स्वया दे दिया कीब्रिया। मपर पाँच रुपये में मजा क्या हाँता। बड़ी मुठिकल का सामना था। ती भी पढ़ने की धुन बराबर बनी हुई थी—

● बाँव में झूठे न थे। पैह पर साबित कपड़े न थे। मँहणी अलय — दग सेर

के जी थे। स्कूल से साढ़े तीन बजे छुट्टी मिलती थी। कार्गी के मनीष्य कारकम में पढ़ता था। हेइमास्टर ने प्रॉस माफ़ कर दी थी। इन्तहाग सिर पर था और मैं बांस के फाटक एक लड़के की पढ़ाने जाता था। जानों के दिन थे। चार बजे पहुँचता था। पढ़ाकर छ बजे छुट्टी पाता। वहाँ से मेरा घर बेहात में पाँच मील पर था। तेइ चलन पर भी आठ बजे से पहले घर न पहुँच सकता। और प्रातःकाल आठ ही बजे फिर घर से चलना पड़ता था नहीं बजत पर स्कूल न पहुँचता। रात को खाना खाकर कुर्पी के सामने पड़ने बैठता और न जाने कब सो जाता। फिर भी हिम्मत बाँधे हुए था।

मग़ तब बचपन मर चुका था — यानी लड़के के कंधे पर घादी का जुआ रखने का बजत आ गया था। पिता लड़के को अँधरा के पुक का बारह मानेवाला चमरीबा बुता और चार माने मग़ का मया कपड़ा न पहना सके लेकिन उसकी घाबी तो कर ही सकता है। पन्हु बरस तब घाणी के लिए ऐसी कम उम्र भी न समझी जाती थी। गाँव में न जाने कितने य जिनकी घाबी इसी उम्र में हुई थी मुँगी अबायबसाल कैसे अपने बेटे की न करते लोप नाम न करते। उह्त् भी ठीक न बस रही थी अपने जीते की लड़क को बूँटे से बाँध देने का खयाल भी मुमकिन है दिन में रहा हो। सम्मब है पत्नी न बार-बार आपह किया हो कि लड़का मग़ खयाला हुमा उसका ब्याह कर देना चाहिए। बहू घर में न भान का मोह किन नहीं होता। पूरब में जसरो ब्याह कर देने का चलन भी है। परकी बात इतनी है कि यह घादी लयायी नबाब ने मामा साहब ने भी नाना साहब यानी मुँगी अबायब काल के जये समुर साहब। यह भी मुमकिन है कि नाना साहब ने अपने किमी नित्र का मला करने के बिचार से या अन्य किमी कारण से यह सम्बन्ध नित्र किया हो। जो भी बात रही हा यह बिबाह बस्ती जिले की मेंहदाबल तहसील में बस्ती पाहूर से दस मील दूर रमबापुर मरजाठी गाँव के एक छोटे-मोटे जमींदार के घर ठीक हुआ। बड़े भादमी हैं। लड़की बहुत अच्छी है। सब बहुत मुग़ा थे नबाब सबस पयादा। मारे उल्हाह के मख्य जाने के लिए बाँस भी छुद उठी ने बाटे। मुपी उनके भीतर छसकी पड़ रही थी और शामद बाँस की बड़ पर कुसुहाड़ी बजाते समय यह कुछ मुग़ाना भी रहा था। पिछले बरसों में उसने जो सैकड़ों किताबें पढ़ी थी उनमें कितने ही दाही सरुङ्गहारे भाये थे अपनी प्रमिजा की तलाग में मित्रमयी का मेन बनाये जंगलों और रेविस्तानों की खान खाने हुए मुन्वर राजकुमार भाये थे एक में एक मुन्दरी राजकुमारियाँ आयी थी जिनके आम चाँद की शरमाता था। वही मग़ बीबे उनमें पड़ी थी वही तमबीरें उनके मन में थीं। उगका बिस किमोलें कर रहा था और हवा में जंगलों गुलाबों की और रातगनी की मुग़ा भी। नहीं

जब वह ऐसा भावान नहीं था उसे सब पता था कि घाबी क्या चीज होती है, किठनी रंगीन कैंसी सूबसूख। उसने अपनी इतिहास की किताबों में और अपने राजा रानी के किस्सों में पढ़ा था जैसे एक सुन्दरी की चितवन पर सस्तनतों कूट गयीं बून की गरियां बह गयीं इसी बात के लिए कि सहजारा उस माहे-बर्षी से उस अन्नमुली से घाबी करना चाहता था। उसके तमाम सपने बिन पर पिछले साल डेढ़ साल में बमाने की बोड़ी-बहुत बूझ पड़ गयी थी एक बार फिर बवान ही पये और उसके हाथ की कुल्हाड़ी और भी तेजी से चलने लगी।

घाबी हुई, घाबी में बून पुहलबाबी भी हुई, मनि-जये मबाक भी हुए जो बककर इस मीठे पर होते हैं चासकर पूरब में और नबाब ने बून रख से-केकर तुर्की-ब-तुर्की उनका बबाब भी दिया फिर बियाई हुई और नबाब (।) अपनी घोरों अपनी सैला को उँट-गाड़ी पर बिठाकर (हाँ उँटपाड़ी ! नियति कभी बबूरा ब्यम्प नहीं करती ! ) अपने घर से चला। घर पहुँचकर उसने अपनी घीघी की सूख बो देखी तो उसका बून सूख गया। उन्न में वह नबाब से क्यावा की मगर वह तो ऐसी कोई बात नहीं सैला भी तो मबनू से बड़ी थी। काली भी मगर सुनते हैं सैला भी तो काली थी।

मगर किस्ता और चीज है जिन्दगी और चीज। यथार्थ का यह एक और पहल पक्का था जो नबाब को क्या। देखते ही सकल से मजूरत ही गयी — भड़ी बुलबुल फूड़ड़। इतना ही नहीं उनके बेहरे पर बेचक के गाहरे-गाहरे बाग बे और एक टांग कुछ छोटी थी जिसके कारण गटीब को मचककर चलना पड़ता था। महीने में एकाब बार हनुमाती भी चकर थी जब उन पर मूत प्रथ जाते थे। सुनते हैं विमान में कुछ बलबल भी था क्योंकि कफाई होने पर अपने पति से कहती थी — हम तुम्हें गबहा छानने के पगहे से बँपबाकर मंगा लेंगे। ऐसे-ऐसे पात्र टोभ हैं हमारे पास।

नामा साहब ने पन्द्रह साल के इस सुबसूख नबाब के लिए ऐसी उन्न में क्यावा काली भड़ी बुलबुल बेचकर मझीम पानेबानी भचककर बजनेवाली बीरत ही क्यों चुनी यह रहस्य उनके साथ ही चला गया। लेकिन इसमें एक नहीं कि जिस जिस देवा उसके मुँह से एक सर्द भाह निकल गयी। वहाँ नबाब कहीं यह बीरत का कार्डन। यहाँ तक कि मुँची मजामब साल से भी नहीं रखा गया और उन्होंने हिम्मत बटारकर अपनी पत्नी से कह दिया — सालाजी ने मेरे बड़के को कुएँ में डकेल दिया। मेरा मुखाब-सा बड़का और उसकी यह बोबी ! मैं तो उसकी बूसपी घाबी करूँगा। पत्नी ने कहा — देवा प्रायगा। और उनके लिए बात नहीं खरम ही बपी। सैलिन नबाब के लिए बात

इतनी आसानी से कैंडे खत्म होती। वह तो गाँठ जोड़कर उन्हें अपने साम लाया था।

पर वही गाँठ अब चुनरी से छूटकर जिक में आ लगी थी। कौन जाने उस गाँठ में दो-एक गिरह सास-बहू के शगड़ों ने भी बाक दी हो जो ब्याम बिन होते रहते थे। मुमकिन है नबाब जैसा बाबमी उस स्त्री के साथ भी निबाह कर ल जाता लेकिन वह खुद अपनी सास होने जैसी बाठ होती और अब जब कि थोड़ा निर्बलकृति बंग से बिचार कर सकना सम्भव है यह धायद मच्छा हो हुआ कि मन और दायर से इतनी बमस स्त्री के साथ निबाह करने का मौका नहीं आया। जिन्दा वह बहुत बाह तक रही नबाब न अब बूसरी घादी की ठब तक उन्हें इस घर में दम बरस हो चुके थे लेकिन नबाब का धायद कभी उनसे कोई संबंध नहीं रहा। वह कभी लम्ही रहती और कभी अपने मैके चली जाती। पर नबाब को किसी बात से कोई मतलब न था। तीन बार बरस तो वह स्वाधानर लम्ही में ही रही पर अब नबाब ने अपनी गौरी की जिन्दगी शुरू की और उन्हें अपने साथ नहीं ल गये तो वह भी मेंहराबक चली गयी और अधिकतर वहीं रहन लगीं। कभी-कभी लम्ही भी आ जाती थीं। कई बार इस बात की कोसिग हुई कि नबाब उन्हें अपने पाम बुलाकर रसें। धायद इनी सिमसिसे में एक बार यह बात भी लगी कि उन्हें लड़का हुआ है जिसका नाम उनके बरबालों न रामदाद राम रखा है— कितना ठेठ मुगियागा नाम पर कितना सार्थक! मुमकिन है यह बात सिद्ध इनसिए उड़ायी गयी हो कि नबाब पर और भी कुछ दबाव पड़े। लकिन अगर यह बात सच भी हो कि वह स्त्री जानकी मैदा के समान ही निर्धोष थी तो भी धायद इन मानक में प्रमथ को मर्यादा पुरवोत्तम रामचन्द्र के समान दोषा ठूराना भी अम्पाय हा क्योंकि यह प्रमथ केवल बुद्ध का है— उस पुरानी, सामंती निबाह प्रचाली का और उससे भी अधिक उस व्यक्ति या उन व्यक्तियों का जिन्होंने यह मनदेस सम्बन्ध स्थिर किया या उसके लिए सहमति दी। मुंशी अबायद साल भी उसके नैतिक दार्ढ्य मे बच नहीं सके। बुड़ी में यह एक जवान्त बल्का उनका लगा और कुछ अजब नहीं कि उससे उनके अंत को और पाम ला दिया हो क्योंकि वह नबाब की घादी के बड़े बरस के भीतर ही कई महीने की बीमारी के बाद इस बुनिया से छप्पन बरस की अवस्था में विचार मय अब कि उनसे जिना छिन्न बरस की मानु पाकर मरे व और उनकी माँ भी अपनी केवल पार-पाँच बरस पहले मरी थीं।

नबाब नहीं में से अब उनका ब्याह हुआ। अपने सास दानी १८ ७ में उन्हें



मैट्रिक का इम्तहान देना था। लेकिन उसी साल पिता बीमार पड़े और इस दुनिया से उठ गये। नतीजा यह हुआ कि नबाब उस साल इम्तहान नहीं दे पाये। उसके अगले साल नबाब ने मैट्रिक का इम्तहान दिया। सेकंड डिवीजन में पास हुए। जो भी मजबूरियाँ नबाब की रही हों सेकंड क्लास का नतीजा यह हुआ कि कबीरस कामेज में उसका प्रवेश पाना एक समस्या बन गया क्योंकि प्रवेश तो चाहे मिल ही जाता पर क्रीस नियम के अनुसार केवल अच्छे वर्जवानों की ही माफ़ हो सकती थी और क्रीस देकर पढ़ने की स्थिति नबाब की नहीं थी।

● संयोग से उसी साल हिन्दू कामेज खुल गया। मैंने इस मये कामेज में पढ़ने का निश्चय किया। प्रिन्सिपल से मिस्टर रिचर्डसन। उनके मकान पर गया। वह पूरे हिन्दोस्तानी बेश में थे। कुर्तों और बाती पहने प्रार्थना करते कुछ सिद्ध रहे वे मपर मिजाज की तबदील करना इतना आसान न था। मेरी प्रार्थना सुन कर — बापी ही कहने पाया था — बोले कि घर पर मैं कामेज की बातचीत नहीं करता कामेज में जाओ। सैर, कामेज में गया। मुलाकात तो हुई पर निराशा बनकर। क्रीस माफ़ न हो सकती थी। अब क्या करें? अगर प्रतिष्ठित सिफारिशों का सकता तो शायद मेरी प्रार्थना पर कुछ विचार होता लेकिन बैहाती मुबक की सहर में जानता ही कौन था?

रोज घर से चकता कि कहीं से सिफारिश साडें पर बारह मील की मंजिल पारकर साम को घर लौट आता। किससे कहीं कोई अपना पुछतर न था।

कई दिनों के बाद एक सिफारिश मिली। एक ठाकुर इन्द्रनारायण सिंह हिन्दू कामेज की प्रबन्धकारिणी सभा में थे। उनके आदर रोया। उन्हें मुझ पर दया आ गयी सिफारिशों चिट्ठी दे दी। उस समय मेरे आनन्द की सीमा न थी। खुश हुआ हुआ घर आया। दूसरे दिन प्रिन्सिपल ने मेरी तरफ़ तीव्र नेत्रों से देखकर पूछा — इतने दिनों कहाँ थे?

— बीमार ही गया था।

— क्या बीमारी थी?

मैं इस प्रश्न के लिए तैयार न था। अगर अगर बताता हूँ तो शायद साहब मुझे झूठा समझें। अगर मेरी समझ में हस्की-सी बीमारी थी जिसके लिए इतनी लम्बी ईरशाबिली अनावश्यक थी। कोई ऐसी बीमारी बतानी चाहिए जो अपनी कष्ट साध्यता के कारण दया को भी उमारे। उस वक़्त मुझे और किसी बीमारी का नाम याद न आया। ठाकुर इन्द्रनारायण सिंह से जब मैं सिफारिश के लिए मिला तो उन्होंने अपने दिव्य की पढ़कन की बीमारी की चर्चा की थी। वह मरभ मुस पार आ गया। मैंने कहा — पैसपिटेशन माफ़ हार्ट मर!

साहब ने निश्चित होकर मेरी ओर देखा और कहा — अब तुम बिलकुल अच्छे हो ?

— जी हाँ।

— अच्छा प्रवेशपत्र लेकर लामो।

मैंने समझा देहा पार हुआ। फार्म किया खानापूरी की ओर पेश कर दिया। उस समय साहब कोई कलास के रहे थे। तीन बजे मुझे फार्म वापस मिला। उस पर लिखा था — इसकी मीथता की जाँच की जाय।

यह गई समस्या अवस्थित हुई। मेरा दिक्कत बैठ गया। अँग्रेजी के सिवा और किसी विषय में पास होने की मुझे आशा न थी और बीजगणित और रेखागणित से तो बूझ काँपती थी। जो कुछ पाठ था वह भी भूल-भाल गया था लेकिन दूसरा उपाय ही क्या था। माग्न का मरोटा करके क्लास में गया और अपना फार्म दिखाया। प्रोफेसर साहब बंगाली थे। अँग्रेजी पढ़ा रहे थे। वासिप्टन इन्जिन का रिप जान बिकिस था। मैं पीछे की कुर्तार में जाकर बैठ गया और दो ही चार मिनट में मुझे बात हो गया कि प्रोफेसर साहब अपने विषय के ज्ञाता हैं। घण्टा समाप्त होने पर उन्होंने बाज के पाठ पर मुझसे कई प्रश्न किये और मेरे फार्म पर 'सतीपत्रनक' लिख दिया।

दूसरा घण्टा बीजगणित का था इसके प्रोफेसर भी बंगाली थे। मैंने अपना फार्म दिखाया। नयी सम्प्राप्ति में प्राम यही छात्र जाते हैं जिन्हें कहीं जबड़ नहीं मिलती। यहाँ भी यही हाल था। क्लासों में अयोध्य छात्र भरे हुए थे। पहले रेंगे में जो आया वह भर्ती हो गया। भूल में छात्र-पाठ सभी खचकर होता है। जब पेट भर गया था। छात्र चुन-चुनकर सिन्धे जाते थे। इस प्रोफेसर साहब ने मणित में मेरी परीक्षा ली और मैं ऊँक हो गया। फार्म पर गणित के खाने में 'असन्तीपत्रनक' लिख दिया।

मैं इतना हुआस हुआ कि फार्म लेकर फिर प्रिन्सिपस के पास ल गया। सीधा पर बना गया। मणित मेरे लिए गौरीलंकर की थोटी थी। कभी उस पर न भड़ सका।

और, मैं निरास होकर घर लौट आया लेकिन पढ़ने की साहसा अभी तक बना हुई थी। पर बैठकर क्या करता ? किसी तरह गणित की बुझाई और कालम में भर्ती हो जाऊँ, यही चुन थी। इसके लिए घहर में रहना बकरी था।

खयोग से एक बकौल साहब के लड़के की पढाने का काम मिल गया। पाँच रुपये बेतन ठहरा। मैंने दो रुपये में अपना गुजर करके तीन रुपये घर पर देने का निश्चय किया। बकौल साहब के अस्तबस के ऊपर एक छोटी-सी कच्ची कीठरी

थी। उसी में रहने की आज्ञा से ली। एक टाट का टुकड़ा बिछा दिया बाजार से एक छोटा-सा छैन्य साया और बहर में रहने लगा। घर से कुछ बर्तन भी लाया। एक बकउ बिचड़ी पका भेता और बर्तन धो-माँजकर छाड़बरी भसा जाता। गणित तो बहाना था उपन्यास भावि पढ़ा करता। पंडित रतननाथ दर का प्रसंगा भाषार उन्हीं दिनों पढ़ा। चन्द्रकान्ता सन्तति भी पढ़ी। बंकिम बाबू क उर्दू अनुबाव बितभे पुस्तकालय में भिसे सब पढ़ डाले।

बिन बकौल साहब के सड़कों को पढ़ाता था उनके छाछे मेरे साथ मॅट्रिक्सु सेसन में पढ़ते थे। उन्हीं की सिझारिषा छ मुझे यह पद मिला था। उनसे दोस्ती थी इसलिए जब बकरत होती जैसे उबार के किया करता था। बेतन मिलन पर हिदाब हो जाता था। कमी दो रुपये हाथ आठे कमी तीन। जिस दिन बेतन के दो-तीन रुपये मिलते मेरा संयम हार्थ से निकल जाता। प्यासी तूष्णा हुसबाई की बुकान पर लीब से जाती। दो-तीन भागे जैसे ब्याकर ही उठता। उसी दिन घर जाता और डाई रुपये दे जाता। बूसरे दिन से फिर उबार भना शुरू कर देता। लेकिन कमी-कमी उबार माँगने में भी संकोच होता और बिन का बिन निराहार बत रहना पड़ जाता।

इस तरह चार-पाँच महीने बीते। इस बीच एक बजार से दो-डाई रुपये क कपड़े भिसे थे। रोज उबार से निकलता था। उस मुस पर बिस्वास हो गया था। जब महीने दो-महीने निकल गये और मैं रुपये न बुका सका तो मैंने उबार से निकलना ही छोड़ दिया। बकरत देकर निकल जाता। तीन सास के बाद उसके रुपये भदा कर सका। उसी जमाने में बाहर का एक बेसवार मुझसे कुछ हिन्री पढ़ने जाया करता था। एक बार मैंने उससे भी आठ भागे जैसे उबार किये थे। यह जैसे उसने मुझसे मेरे घर, गाँव में जाकर पाँच सास बाद बसूक किये। मरी जब भी पढ़ने की इच्छा थी लेकिन दिन-दिन निरास होता जाता था। जी भाट्टा था कहीं नौकरी कर लूँ। पर नौकरो कैसे मिलती है और कहीं मिलती है यह न जानता था।

जाइँ के दिन थे। पास एक कौड़ी न थी। दो दिन एक-एक जैसे का चबेना ब्याकर काटे थे। मेरे महाजन ने उबार देने छ इनकार कर दिया था या संकोचवध में उससे माँग न सका था। चिराण जल बुके थे। मैं एक बुकसेठर की बुकान पर एक किताब बचन गया। बकरती बणित की कुली थी। दो सास हुए सरीरी थी। अब तक उसे बड़ बतम छ रहे हुए था पर आज चारों ओर छ निरास होकर, मैंने उसे बेचने का निरपय किया। किताब दो रुपये की थी लेकिन एक पर सौदा टीक हुआ। मैं अपना सेकर बुकान से उतरा ही था कि एक बड़ी बड़ी मूर्छोबास छैन्य पुस्य ने जो उस बुकान पर बैठे हुए थे मुझसे पूछा — कहीं पढ़ते हो? \*

ठकरीर का बेस भी अब बनीसा है। कहीं तो कैसे-कैसे पापक वेस रहे ये बगसे बकत की रोगी का ठिकाना नहीं था और कहीं अब परोची हुई बाकी सामने रखी थी।

सबास पूछनेवासे सज्जन बुनार के एक छोटे-स मिशन स्कूल के हेडमास्टर थे। उन्हें मैट्रिक पास एक मास्टर की तलाश थी। बेतन या अठारह बन्या। बहने मर की बेर भी नबाब ने लपककर मंजूर कर लिया। जैसे दिन उसने देखे थे उनके सामने नबाब का यह कहना कुछ सतत नहीं था कि अठारह रुपये उस समय मेरी निरास स्थिति कल्पना की जैसी से जैसी उद्दान स भी ऊपर थे।

यह सन् १८९९ की बात है। पिता को मरे भी अब भी बरस हो रहा था। घर पर बस उनकी नयी माँ और उनकी एक तीन साल का बच्चा था — बड़ा बच्चा मुन्नाब दो-बाई बरस पहले जाता रहा था। बेटी अम्पस तो थी ही कितनी, और फिर लानेवाले भी कुछ कम न थे। घर में भूनी भाँग नहीं थी और कमानेवाला अनेका नबाब। अपनी नयी माँ से उसे बहुत मुग नहीं मिला यह और बात है, ककिन अब जब कि पिता की अखिरे मूर्त ययी थीं उनकी परवरिश की अपनी बिसात मर उनकी बारास से रखने की जिम्मेदारी उठी की थी।

नबाब ने अगसे ही रोव आकर सब कुछ पक्का कर लिया और तीन-चार रोव के भीतर बुनार पहुँच गया जो कि बजारस से बामीस मीर बुर, मिर्जापुर क पास एक कस्बा है।

छोटी-सी बामोस बगह थी। नये-नये पहुँचे थे। मिन्नाब में कुछ धर्मीलापन भी था ही। पढ़ने का बस्का लग ही चुका था। किसी स स्थापन कुछ मतलब न रखते थे बस अपने काम से काम।

साथ में पाकी के छोटे, सीतेसे भाई बिजयबहादुर भी थे। अपनी बहन के साथ ही वह भी आ गये थे और फिर यहीं रहे मय। उम्र में वह नबाब से चार-पाँच साल छोटे थे पर दोनों में बहुत बगती थी क्योंकि बिजयबहादुर भी बहुत तेर, मिलनसार और मुहूर्खती सविपत के आदमी थे। यवावा दिन बिन्ना नहीं रहे पर अब तक रहे नबाब के साथ ही रहे। जहाँ जहाँ नबाब का तबादला हुआ वहाँ वहाँ बिजयबहादुर उनके साथ गये।

बैतन स पूरा न पढ़ता था इसलिए नबाब ने पाँच रुपये का एक ट्यूसन भी कर लिया था। कड़का कर आकर पढ़ जाता था। उस छोटी-सी बगह में नबाब की जैसी बहुत मजहूर हो गयी थी।

नबाब को अपने पढ़ने-पढ़ाने में फर्मत न मिलती थी मर का इंतजाम बिजयबहादुर के जिम्मे था। पैस जो मिलते थे वह महीने के शुरू में ही खर्च हो जाते थे।

फिर उबार पर चरता था। बोर्डिंग हाउस का बनिया था उसी से रसद उबार ली जाती।

तमी की बात है, एक बार नवाब विजयनगर के साथ घर आये यानी छमही। बाड़े के दिन थे। चार-पाँच दिन घर रहे। चकने सये तो रास्ते के सिपायी से रुपये माँगे। चाची ने कहा — रुपये सब खर्च हो गये।

बड़ी मुस्किल थी। गाँव में उबार सये भी तो किससे? लिहाजा मजबूर होकर अपना गरम कोट बेचने की ठानी।

गाड़ी के बहुत पहले दोनों गाँव से चल दिये और सहर आकर नवाब ने अपना कोट दो रुपये में बेचा जो कि एक साल पहले बड़ी मुस्किलों से बतवामा था। सूटी पहनकर उस गरम कोट को बड़े बतन से रखा था। और वह दो रुपये में बिक गया।

इस सब के बावजूद बिन्दवी खैती कुछ भी बहुत अच्छी थी।

एक रोज स्कूल की टीम का फुटबाल मैच मिस्त्रि के पोरों की एक टीम से हुआ। गोरे छावर हार गये। स्कूल के लड़कों ने खोर-खोर से हिय हिय हुरें का नारा मगाना शुरू किया। गोरे जिसियाय हुए तो ये ही यह चीज उगको कटे पर लमक छिड़कने जैसी मालूम हुई। इन काळे आदमियाँ भी यह मजास। एक गोरे ने किसी लिकाड़ी को बूट से ठोकर मार दी। मैच देखनेवालों में नवाब भी था। गोरे को बूट चलाते भी उसने देखा। जिसम बहुत मजबूत नहीं था वो क्या बिल तो मजबूत था और फिर अपने ही मैदान पर खेल हो रहा था। चढ़ती नवानी की उग्र नवाब का सून लौक पड़ा — इसकी यह हिम्मत! सिर्फ़ इसलिए कि हम काळे हैं, हिन्दीस्तानी हैं! फिर क्या था उसने आब देखा न ठाव लपटनर मैदान में गड़ी हुई एक सन्धी उलाड़ ली और बेतहाशा उन पर पिक पड़ा। लड़को ने जो उसको आगे-आगे देखा तो खेलनेवाले और तमासाई सब मैदान में दूर पड़े और उन गोरो को ऐसी पिटाई की कि उन्हें छठी का दूब बाह आ गया साथी अकड़फूँ धरी रह गयी।

मैदान जब खाली हुआ तो स्कूलवालों को सबसे पयादा ताज्जुब इस बात का हुआ कि इस माके में पहले उस धर्मिक मौजवान मुदरिस ने की थी जिसे खेलने से बहुत कम मतलब था और जो हमेशा अपनी किस्से-कहानी की किताबों में डूबा रहता था।

लेकिन उससे भी पयादा ताज्जुब इस धर्मिक, बरबुनने मौजवान की दिखरी पर उस बकल होता है जब साठ-पैंसठ बरस पहले के बनार का नक्सा आँसों के सामने आता है। उग्र ने जो हिन्दी के बाने-साने सेत्रक हैं और बनार के ही रहने-वाले हैं अपनी खबर में उस बकल के बनार की यह एक हल्की-सी झलकती है —



पुनार के मिशन स्कूल से निकलकर मुंशीजी बिगकी उम्र उस समय बीस साल की, साठ मर के जल्द ही फिर बनारस पहुँचे और किसी गप काम की तलाश शुरू हुई।

ब्रिटेन कासेज में बेकन साहब प्रिन्सिपल थे। शिक्षा-विभाग में बड़ा असर रखते थे एक छोटीसी तीबनाग को हिले से बपाना उनके लिए मुश्किल बात न थी। पनाब के बारे में उनका ख्याल भी अच्छा था। सीधा सच्चा जहाँन मेहलती सड़का है। मगर बहुत छोटी है।

बेकन साहब ने यहाँ-वहाँ दो-एक सत लिखे और मुंशीजी की नियुक्ति २ बुलाई १९ को बहाराइच के बिला स्कूल में पाँचवे मास्टर के पद पर हुई। बेतन बीस रुपये महीना। सरकारी मीकरी का सिस्सिसा मुरु हुआ। पुनार की मास्टरी मुबारिशी के इस सबि ड्रामे का रिहसल थी।

बहाराइच में मुंशीजी को ख्याल दिन नहीं रहता पड़ा। डार्ले महीने बाद ही उनकी बबली परताबगढ़ के लिए हो गयी। २१ सितम्बर से उन्होंने परताबगढ़ के बिला स्कूल में प्रिन्सिपल मास्टर का काम सम्हाला। बेतन वही बीस जो कि पर की बरतों के लिए काफ़ी न था। खया बराबर घर भेजना पड़ता था। चाची अपने बेटे के साथ नहीं रहती थीं। परताबगढ़ में उन लोगों का अपने साथ रखने का ख्याल नहीं पैदा होता था क्योंकि मुंशीजी खुद ताले के ठाकुर साहब की हवेली के एक कमरे में रहते थे। उनके दो सड़कों की पड़ते थे और उन्हीं के यहाँ रहते थे। द्यूघन से अब भी छुटकाग न था। लेकिन यह द्यूघन और द्यूघनों बीना न था क्योंकि ताला के बह ठाकुर साहब बिचकुछ घर के सड़के की तरह उनकी मानते थे। और उनका भी संबंध अपने शिष्यों से गुरु-शिष्य का न होकर दोस्ती का ही ख्याल था। इस तरह परताबगढ़ में मुंशीजी की डिम्बरी काफ़ी इन्दीनान से बुरा रही थी। न कहीं जाते थे न आते थे। घर से स्कूल और स्कूल से घर।

मिस्त्रो-जुसमेबातो में पहला तंबर बाबू राधाकृष्ण का था जो जान बलकर अबब चीफ़ कोर्ट के जज हुए। उनसे मुंशीजी की बहुत बनती थी। बराबर बानी

नयी पीढ़ी उन्हें मुनाते थे। बाबू राधाकृष्ण साहित्यपरिषद तो जैसे थे ही खुद भी घर कह लेते थे।

पश्चिम अय्यराम शास्त्री संस्कृत के पश्चिम थे वहीं ठाकुर साह्य की हबेसी पर वह भी खूबते थे बराबर का साथ था पर सांस्कृतिक पृष्ठभूमि बिल्कुल भिन्न होत क कारण उनके साथ मुंशीजी की मैत्री साहित्यिक मत्री का रूप न ले पायी थी जैसी कि बाबू राधाकृष्ण के साथ थी।

अपना खाना मुंशीजी कभी खुद ही पका लेते थे मगर क्यादातर तो सड़कों क साथ हबेसी पर ही उनका खाना भी होता।

पढ़ना-लिखना यही उनकी चिन्तनी थी। बीर पढ़ने से क्याथा वह लिखते थे। बक्सर रात को बड़ी देर तक लिखते रह जाते।

सड़कों की बीर उनकी उम्र में बहुत क्याथा ऊर्ध्व न था पर सड़के उनका बड़ा बरब करते और वह भी उनको बड़ी मुहम्मत् से पढ़ाते खासकर अंग्रेजी और उर्दू। सड़कों स क्याथा मेहनत न करवाते।

पल्लवागड़ का पानी भी उनकी रास जा गया था। जब तक रहे एक बार भी बीमार नहीं पड़े। प्रसन्न थे संतुष्ट थे लिखने-पढ़ने में दिन बीत रहे थे।

लेकिन अब यह सिर्फ गोरखपुर-जैसा पढ़ने का अस्का न था बल्कि एक ऐसे बाबमी का पढ़ना था जो कि अपने भीतर एक नयी बरपरी महसूस कर रहा था। अब से साठ बरस पहले देखे धाल के एक सड़के ने अपने किसी मामा से बयसा लेने के लिए उनकी छीछालेवर को माटक की शकल दी थी। बात बायी-गयी ही पयी थी। लेकिन अब वह अपनी रसों में एक नयी ही सुरसुराहट और अपने बिरु मं एक नयी ही तब्य महसूस कर रहा था जो अपने लिए खबान माँगती थी। मगर वह खबान उस बीब को थे तो किस थे ?

पिछले बरसों में उसने न जाने कितना कुछ पढ़ा था लेकिन उसमें क्यागत राबा-रागी क लिखे थे तस्लिम और एपारी के लिखे थे। पढ़ने में वह बहुत अच्छ लगते थे मपर लिखना वह कुछ और चाहता था। उस तरह के लिखे फिर से लिखकर क्या होगा। ठीक है उनसे बिरुबहकाब होता है मगर खबाल यह है कि हम याबिर कब तक इसी तरह दिखबहकाब करते रहेंगे। इस तरह तो इतिहास क पमां से हमारा नाम भी मिट जायगा। परा अपने समाज की हालत भी तो देखी — कसो मुर्से को नीद सो रहा है। उसका बिरु बहलाने की बरुण्ड है कि घफसोरकर उसको खगाने की ? न जाने कब से सो रहा है इसी तरह। क्या इयामत तक सोता रहेगा ! यह तो मीत है सरामर ! अयर कुछ लिखना ही है तो ऐसा कुछ लिखो बिचसे यह मीत और अफकत को नीद कुछ दूटे, यह मुर्बती कुछ पूर हो।



कितनी बुरी हालत है हमारे हिन्दू समाज की। आदमी को आदमी नहीं सम्माना जाता। एक आदमी के छू जाने से दूसरे आदमी की आठ चली जाती है। यह क्या सिन्धा क्रौमों के लक्षण है ?

यह सब इन्हीं बड़े-बड़े तिसकबाटी ब्राह्मणों की पुजारियों महलों मठाधीशों की कारखाना है। कहने को चतुर्वेदी हैं, त्रिवेदी हैं यह है, वह है, लेकिन हैं निरे सिद्ध खोजा पड़ पत्थर, एक बेद की भी शकल जो उन्होंने देखी ही। बस अपने घर मास से काम हनुमा-पूरी उड़ाये जाओ, बैन की बंसी बजाये जाओ। मौन-बूटी छापी बितनी मत चाहे शराब मुँडामी सुन्दर-सुन्दर रमणियों की सेकर बिहार करो मन्दिर के भीतर रंजी-पतुरिया लचामो — इससे बड़ी मक्ति बर्म उपासना और क्या है। पतुरिया लचामो से भगवान मरस्ट नहीं होते चमार-यासी जलका वर्धन कर के तो भगवान मरस्ट ही जाते हैं। जैसे कहने को वह पतितपावन है। महतबी की तिथौरी में बंध।

छोटी इन मरदुव पंडों-महंतों को, एक मन्दर इस परीब औरत आठ पर भी तो जाओ। क्या मट्टी पत्थर की है बेचारियों की। कहने को कह दिया — जहाँ नारियों की पूजा होती है वहाँ देवता वास करते हैं। लेकिन कोई पूछ कि आपने किसी तरह का कोई अधिकार नारियों को दिया ? बराबरी का दर्जा न देते लेकिन कुछ तो ऐसे अधिकार देते कि नारी पुरुष के जन्माचारों से अपनी रक्षा कर सकती। वह सब कुछ नहीं। उसकी सच्ची स्थिति दासी के असावा और कुछ नहीं है। स्वामी अच्छा मिला तो बाह-बाह बुरा मिला तो रोये अपनी तकदीर को। कुछ कर नहीं सकती। हर हासत में वह किसी न किसी पुरुष की आधिपता है अपने पौरों पर लड़े होने का उसको अधिकार नहीं है। पिछा का भी अधिकार उसे नहीं है — पुरुष की बराबरी जो करने लग जायमी ! शत्रु और नारी के काल म बेद का स्वर पड़ने से पाठक लगता है। उसे अधिकृत रक्तो निपट असहाय रक्तो बर को जहारदीवारी में बन्द करके रक्तो। उसका उपयोग इतना ही है कि वह मौम्या है रमणी है और अगर इससे बड़कर कोई उपयोग है तो यही कि वह जगनी है। वह एक योत्र है जिससे संप्रदान की पुरुष की सम्पत्ति के उत्तराधिकारी की प्राप्ति होती है। उसका अपना कोई स्वतन्त्र व्यक्तित्व नहीं है उसकी अपनी किसी इच्छा को समाज मान्यता देने के लिए संवार नहीं है इमीलिए तो कम्पा और गी का स्थान एक है — चाहे बितने साथ बांध दो। पाँच साल को लड़की का ब्याह पचास साल के बुढ़े के साथ हो सकता है। लड़की में पति का मुँह भी न देना ही तो क्या ब्याह का मतलब भी वह न समझती हो तो क्या पति के मरण पर (या उसके द्वारा छोड़ दिये जाने पर) जब वह एक बार बियबा हो गयी तो हो गयी उनका कोई

## कर्म का तिरपाही

उपहार नहीं है। उसे फिर बिबबा के समान ही मारी बिम्बगी रहना है यानी अपनी घायी प्राकृतिक इच्छाओं को मारकर मुर्दे की तरह बिम्बा रहना है। ऐसा ही समाज का बिधान है और उसमें किसी प्रकार की छूट नहीं है। अगर कभी किसी समय वह कमबोरी दिखलाती है यानी प्रकृति के तकाबा के आगे झुकने पर मजबूर होनी है—किसी आदमी से प्यार करने लगती है या समझती हो जाती है या किसी के साथ भाग जाती है—तो फिर समाज उसका मुँह भी बेचना पाप समझता है। फिर वह समाज के किए मरे क समाज है और बहुत बार तो मौत के घाट उतार भी जाती है। उन बहू-ब्यवस्था में रती मर समा नहीं है। ऐसा सब अप्राकृतिक बिधान न होना तो छिने-छिने समाज में इतना सब पाप पनपता कैसे! कितनी ही बिबबाएँ और समाज की सतायो हुईं बिबबाई कोठो पर पहुँच जाती हैं। समाज यह सब अपनी आँसो के आगे होते देखता है लेकिन तो भी उसके काम पर चूँ नहीं रेंपती। अपनी बिम्बेदारियों की तरफ से कितना बेखबर लेकिन बेकाम को सताने के लिए कितना रोता। बरेया बरेया कुछ नहीं लेकिन किसी से कोई मसनी हो मर जाय कच्चा ही बचा जायगा! बिबबाओं पर तो उसकी बिरोध हुआ है—उस बुझियायी स्त्री की दूसरी बहनें ही उस पर चौकीबारी करती हैं और गरीब औरत अगर कहीं दुर्भाग्य से अपनी लौक से जी मर भी बिग पयो तो फिर उनकी संरिपत नहीं। पहलू तो वह औरतें ही उस अपन तानों में छेद-छेदकर मार डालती और अगर इनसे से वह नहीं मरी तो फिर उसका और कुछ उपाय किया जायगा। इस तरह की कितनी कहानियाँ नबाब की आँसों के आगे से गुजर चुकी थी और हर बार गुन्धे से उसकी आँसुं जलने लगी थी। वही सब अनमेल ब्याह की कहानियाँ बिबबा स्त्री की दुर्दशा की कहानियाँ समाज को जोखला करतबाली केन्द्रेन और दूनरी कृतिधियों की कहानियाँ—जिनके चलते कितने ही गरीब जी-जाप अपनी बेटी के हाथ पीले नी नहीं कर पाते और इसी दुःख में बुझ-बुझकर मर जाते हैं—अब उसके भीतर मचल रही थीं। रास्ता गया था। वह मसल न पाठा था किबर बड़े कैसे बड़े। लेकिन वही उसके भीतर की मय थी। मरुद बिलबुलकाब की बीबें वह नहीं सिधेया। वह ऐसी कहानियाँ लिखेगा जिन्हें पढ़कर इस मुर्दा समाज में कुछ हरकत पैदा हो। किस्सागोई का फल वह उन पुतली किताबों से सीखेगा अगर बात अपनी कहेगा। दस की बड़ी-बड़ी बातें वह क्या जाने मगर औरत बात से साथ नीच कहसामेबाली बातों के साथ जो बैरनाकियाँ उसकी आँसों के सामन होती हैं—जमान के मुक्कार, बोलेबाब लोभी स्पट, दुराबारी कोर्पा की जिम तरह समाज में तुनी बोझनी है उन सब की तरफ से वह कैस आँसुं मूँद ले।

आर्य समाज का इस समय काफ़ी बीरबीर था। प्रचारक लोग भूमते रहते। बागह बगह समाएँ होतीं बन्से होतीं सनातनी परिवर्तों से शास्त्रार्थ होते। बाल-बिवाह की बुराईयाँ बतलायी जातीं अगमक ब्याह की बुराईयाँ बतलायी जातीं बिबवा विवाह के शास्त्रीय प्रमाण जुटाये जाते करारबाह की निन्दा की जाती। यह सबका बिबकुछ दूसरा है कि इन बातों में कितना हिस्सा जबागी बमासर्ष या और कितने पर खुद अमुभा भोग बमक करने की तैयार थे। बातें ब्यादा भी अमक कम। जो भोग मंथ पर सड़े होकर पुंजाधार ब्यास्मान देते थे और साथी में धन-वेत की प्रमा को बुरा कहते थे खुद जोरी जोरी बड़ी काम करते थे सेते भी थे और देते भी थे। बिबबाओं की दुर्वला पर जाठ जाठ जाँसू रीते थे लेकिन खुद इसके लिए तैयार न थे कि किसी बिबबा से ब्याह कर लें या अपने बेटे का ब्याह कर दें या कि अपनी बिबबा बेटी का ब्याह फिर से करन का साहस अपने मीतर पा सकें। होठा ब्याबातर वही था जो सदा से हाता आया था अगर बातें बड़ी-बड़ी होतीं थीं। यही बीब बुन की तरह आर्य समाज के आन्दोलन को खा गयी और सनातन धर्म की खुँ न हिंसीं। लेकिन फिर भी यह एक नवी जागृति थी इसका बुकका आवर्षबाबी कमी कुछ कर भी गुजरता था। ऐसी हाकठ में फिर मला कैसे मुमकिन था कि नीबवान मुंछीबी का मन इस मयी जागृति की ओर न सिबठा। खुद अपनी बिबवा में उसने जो कुछ मोया था पाँब-बर टोके-पड़ोस में इस तरह के जो किन्से होते देखे थे सुने थे उस सब के आचार पर बह इस मयी बीब की तरफ मुवा और सच्चे मन से मुका। अच्छे-बुरे तो हर आन्दोलन में होते हैं इसके लिए किसी आन्दोलन को बिम्बेधार नहीं ठहराया जा सकता। बातों के घेर ब्यादा होते हैं बिबपी में उस बीब को बरतनेवाले मुट्टी पर। यह तो हमेषा का क्रिस्ता है। हर आन्दोलन में यही होता है। बेबना यह है कि जो कुछ ये भोग कहते हैं, उसमें सार है या नहीं। बुर जाने की क्या पकरत है, सबसे पहले तो खुद उसकी सिन्दगी में उनका प्रमाण मीजूर था। आसिरक्या पड़ी थी मयी बबामय काक को जो वेनी-वेते के रहते हुए बुझीती में जाकर दुबार ब्याह किया? सेहत भी आपकी माता अस्ता थी रोब गिबसिया भर बाक न बड़ाते तो बसना-फिरना बूमर हो जाता लेकिन घादी करने से बाब न जाये। ताग्जुब है बबीबों में किसी ने समझाया भी नहीं कि मैया यह क्या करते हो क्यों अपने पके की यह फाँसी मोस लते हो। भयवान क बिये तुम्हारे वो बच्चे हैं अब तुम्हें और क्या चाहिए। राम का नाम ला और इस हरकत से बाब आमो इसमें सिबाय स्वाटी के और कुछ तुम्हें हाथ न अयोगा। न किसी ने समझाया न खुद आपकी अकल आमी। बनी छोड़ो भी ऐसी भी क्या हबस कि उस पर ईसान काबू न रख सके सन्न भी तो आपकी

## क्रम का सिपाही

मुकाहिबा क्रमसार, पचास साल का मापका सिम है और माप बस है फिर ब्याह रवाने। है कुछ इतहा इम महमकपने की। पर कोई पूछे उनसे मापसे तो वो बरस नौ बीबी के बिना नहीं रहा गया और माप जाकर एक मयी बीबी ब्याह साये समाज ने बरा भी कनीतिपा नहीं सङ्गी की लेकिन अगर किसी औरत ने देवी ही उम्र में पहुँचकर बुबाए घादी की होती ता आपका समाज उसे बिन्दा रहन देता? इम उम्र को बात तो जान दीजिए, माप तो मरी बबानी में बबा सङ्गी को घानि नहीं करने देते। उसे समय का पाठ पडाते हैं। साप समय साप इन्पिय निपह उमी क सिए है आपने सिए कुछ नहीं है? मूक बस आपको लगती है औरत को मूक नहीं लगती? आपसे तो उस बुझीती मे भी दो बरस नहीं रहा गया और जवान औरत सारी बिन्दपी अपनी पहाड़ जैसी बबानी सिम बीठी रहे। वह क्या बाठ की बनी है, पत्थर की बनी है। मगर सैर, मापको किसी ने ब्याह करने से राका नहीं और आपने ब्याह किया। लेकिन हुमा बही का होता था। माप खुद तो सिबार गये लेकिन मेरे पैर में सत्रा के लिए बककी बाप मये। सत्रा के लिए मैं लूटे से बँब गया। क्या-क्या ठमझाएँ थीं पूनने की फिरने की दुनिया देखने की — सब परी की परी रह गयी। बनी एक ही पैर में बककी थी हुमा पैर आबाब था। लेकिन वह भी आपसे न देखा गया दूसरे पैर की बककी का भी इतबार माप खुद ही कर मय। बठकाएँ नहीं में पडाया था मैं क्या बस्ती की मेरी घारी की? वह भी कोई घारी की उम्र है? और घारी भी बीठी औरत स। रूप-रंग गिआ-सस्कार — हर चीज स कोटी। कोई उसके साथ निबाह करे भी तो बँसे। लडाका ऊमर से। बिन्दपी नास हो गयी। जो उम्र दुनिया देखने में बिन्दपी ने नय तनुबों का हासिल करने में खर्च होनी चाहिए थी वह बीस की तरह काम करने में बर के माप दिन के सगरे चुकाने में खर्च हो गयी। एक दिन क सिए मैंने नहीं जाना कि बिन्दपी में सुबुन या इमीमान किस चीज को कहत है। यह ठीक है कि उसकी तबीयत बहुत पुनकङ्क नहीं थी लेकिन तो भी कुछ न कुछ पूनने-फिरने की इच्छा तो हर मादमी के दिल में होती है। और जब वह पायद बिन्दपी भर बनी रही — बाबजुद इसके कि पीरे-बीरे, बस्त बीउने क साथ साथ परीघानियों क भँवर में पडकर बर पर बन रहना उसका अन्यास और उमर का स्वास्थ्य भी बिबघटा बन गयी। इम चीज का एक हुला-सा परिषय उम सत्र में मिच्छता है जो उन्होंने १२ दिसंबर सन् २९ को अपने एक मौजबान मनीज रामजा के पाम भेजा था। रामजी शकजाने में काम करते थे। वह उनही मौजरी के गुरु-गुरु के निन थे। ऐसा कुछ मौजा माया कि उनके महकमे के लोग अपने कुछ

बाबुमियों को काम के सिंसिधके में बेच के बाहर भेजना चाहते थे। कोई बबर्दस्ती न थी। कोई अगर वाला चाहे तो जा सकता था। रामजी खुद कुछ तय न कर पाते थे किहाबा उन्होंने मधुबिरे के लिए बापके पास लिखा। उसका बकाब वेठ हुए बापने मधुबिरे में लिखा—तुम्हारा खत पाकर खुशी हुई। काम के सिंसिधके में तुम बाहर जाने के लिए नाम लिखामो इसमें मुझे कोई बापति नहीं है। शर्त यही है कि इससे तुम्हारी तरफकी के रास्ते खुलते हों। जाने और मकान के साथ साठ रुपये महीना बुरा नहीं है। तुम अगर पाँच बरस भी रह गये तो करीब तीन हजार रुपये बका सोमे जिसकी यहाँ कोई उम्मीद नहीं है। इसके मकाना यह भी है कि तुम्हें नये-नये देस और नये-नये लोगों को देखने के मौके मिलेंगे और तुम जब बर छोड़ोगे तो बिनबगी की एक ब्यादा बच्छी समझ के माजिक होवे।

रामजी गये नहीं बर के लोगों में जाने नहीं दिया लेकिन आज भी बिक निकसने पर उनको मुझीकी के खत कर यही बुजबुद बार-बार माब माता है और बड़ी हसरत के साथ याब जाता है। बही हसरत शायब मुंघीकी के बिल में भी जब कि उन्होंने बह बात लिखी थी कुछ ऐसी बात कि बेटे, मैं तो कहीं जा-जा न सका लेकिन अगर तुमको इस चीज का मौका मिल रहा हो तो उसे हाथ से मत जाने दो।

मतलब यह कि आर्यसमाज बिल बुराईयों के बिबाहण रुक रहा था—जैसा भी रुक रहा था—उन सब बुराईयों का मुमताल बह खुब अपनी बिनबगी में कर रहा था। बाप ने बुझीती में ब्याह किया और अपनी बेबा छोड़ बये एक लड़के के साथ बिनकी परवरिश की बिनबेरापी उधे डोनी पड़ी और ऐसी उम्र में डोनी पड़ी जब कि हर शकस कुलुर्धे रुगाना चाहता है। खुब उसकी साथी बचपन में कर ही गयी एक निहायत अनमेल फूहड़ साथी जिसको निबाहने की बिनबेरापी और निबाह न पाने की बलिषा उधे सेलनी पड़ी। बह तो खुब एक बिनबा मिठाळ का हिन्दू समाज की बहाल्लत का। किहाबा आर्यसमाज में उसकी बिलबस्ती पूरी थी। जस्तों में तो खीर बाटे ही थे शायब बह आर्यसमाज के बाबाबुटा सदस्य भी थे। परदाबपड़ का हक तो पक्का नहीं मामूम लेकिन इसके कुछ ही साल बर हमीरपुर में बह आर्यसमाज के बाबाबुटा मेम्बर थे। ९ फरवरी १९१६ को मसगर्बा से मुंघी ब्यानरायन निगम को भेजे गये एक खत में और बहुत-सी बातों के साथ उन्होंने लिखा था—जब रहा उपयों का बिक। मुझे इस बज्र बग्दा बकरठ नहीं है। मयर मेरे बिनबे हमीरपुर आर्यसमाज के हम साथ बाकी हैं। बार-बार तडाबा हुमा है मगर अपनी तिही-बस्ती में इजाबत न की कि भया कर दूँ। बाप अगर effort कर सकें तो बराहेरास्त मेरे नाम से हमीरपुर बापसमाज के सेपेटरी

इसका नाम दम रुपये का मनीमांडर कर दें।

यहाँ अब जरूरता भी समझती

जिस जलसे का इस सत में बिक्र है घायद उसी में मीलबी महेश प्रसार को जाने का और मुची प्रेमचंद से पहली बार मिलने का इत्तफाक हुआ था। वह सिल्लते है सम् १९१२ में प्रेमचंदजी हमीरपुर बिल म गिजा विभाग के सब-डिप्टी इंस्पेक्टर थे। महोबा में रहते थे। मुझे ठीक याद नहीं कि मई का महीना था या जून का जब कि मुझे कार्यसमाप्त के एक प्रचारक के रूप में महोबा जाना पड़ा था। उस समय मुझे उसी के यहाँ ठहरना पड़ा था। उनसे जरिए ही मुझ ईसाइया के उस नाम के बारे में बहुत कुछ जानकारी हासिल हुई थी जो कि उस समय महोबा में ही नहीं बल्कि हमीरपुर जिले में भी हो रहा था। उन्होंने बताया था कि हमारी सामाजिक कुपारयो का ही फल है कि महोबा और बुन्देलखण्ड की बूसरी जगहों में हिन्दुओं के अनेक लड़की-लड़के ईसाइयों क घरों में पहुँच गये हैं।

मुचीजी क लिए यह सिर्फ कहने की एक बात न थी बल्कि चीन पर बैठे हुए एक बोस था और उन्होंने इसी विनां सुन सफेर नाम की कहानी लिखी। कहानी यह है कि बादायय का लड़का साधो परिस्थिति के चक्र में पड़कर पादरिया के साथ चला जाता है। कई बरस उसी के साथ रहता है। वह लोग उसका ईसाई बना लेते हैं। फिर एक रोज उसको अपने घर की अपने माँ-बाप की मुझ मानी है और वह किसी बुर-दरजक जगह से अपने घर पहुँचता है। माँ-बाप तो अब भी उसके के बाव भी पूरी तरह उसका अपने बीच लेने के लिए तैयार नहीं है। गतीबा होता है कि वह माप के-से स्वर में यह कहता हुआ कि जिसका सुन सफेर है उनके बीच में रहना स्वर्ग है फिर बड़ी चला जाता है जहाँ से माया था। कहानी कुछ खास बकबी नहीं है लेकिन ही उससे इस बात का पता चकर चलता है कि मुचीजी का मन किच तरह बन रहा था। मन की इस बनाबट में कार्यसमाप्त के अलावा कुछ हाथ गायद उन सोशल रिफार्म लीग का भी था जो राजादे और पोखरे के नेतृत्व में काशी महात्तपूर्व काम कर रही थी। उसका भी उद्येय सामाजिक कुपारियों को दूर करना था बही कुपारियां जिनके चलते उनक घरों में बकबी के ये मोटे-मोटे पाठ बँच गये थे बनां वह भी बिक्रियों की तरह आकार होता।

नहीं तो वह यहाँ परताबपड़ में पडा था और वहाँ घर पर समझी में उसकी रूपरी भी पिटा की बड़ीप्री की घारी की बैबा और लुभ उसकी बीबी बीटी की त्रिमय उसकी घायी पत्रह साल की उम्र में हुई थी। उसकी परवरिया की बिम्बराटी पूरी थी लेकिन मुझ एब भी नहीं उठे आय दिन की कहतू। चलो उस सबने ला

बना हुआ हूँ यहाँ पर। पकटा हूँ पकटा हूँ जो भी मैं खाता हूँ वो बजार बोध लेता हूँ। मेरे सुख के लिए यही बहुत काफ़ी है। लेकिन यह सब मन को बहकाने की बातें हैं। असल चीज़ यह है कि उसको अपनी जिन्दगी उछाड़ी हुई मासूम होती की और अब वह यह भी समझने लगा था कि इसकी जिम्मेदारी किसी एक व्यक्ति पर नहीं बल्कि समाज के पिछड़ेपन और उसकी कुटीरियों पर है। इसके लिए अपनी ताकत भर कुछ न कुछ करना होगा। किसी के हाथ में कोई हथियार है, किसी के हाथ में कोई। कुछ साग ब्याख्याम देने में निपुण होते हैं, वह घूम-घूमकर अपने ब्याख्यानों से लोगों को जगाते फिरते हैं। कुछ लोग संयोजन करने की कला जानते हैं, वह इस बिछरे हुए समाज को संयोजन की ओर में बाँधकर लोगों के बिमारियों के बन्द सिङ्करी-दरवाजे खोलते हैं। मुझसे वह चीज़े नहीं बन सकतीं। पर मेरे हाथ में कलम है। लोग क्रिस्से-कहानियाँ पढ़ना भी बहुत पसन्द करते हैं। मैं अपने क्रिस्से-कहानियों से लोगों को उनके समाज के असली रूप को उनकी भाँखों के सामने लाऊँगा और उन्हें सोचने के लिए मजबूर करूँगा। इतना अगर मैं कर सका तो समझूँगा कि मेरी जिन्दगी व्यकारण नहीं गयी। अपनी ज़ीम की बाँटि की देव की सेवा करने से बड़ी बात और क्या है। जीने का तो सभी जीते हैं कोई बाराह से कोई एकछीक से। कोई शाही टुकड़े खाता है, कमकाब पहनता है और महलों में रहता है। कोई जी की रोटी और बचुए का साव खाकर और पटी मिर्चई पहनकर अपनी चूटी हुई मईया में अपनी जिन्दगी के दिन गुबार देता है। वह सबकी अपनी-अपनी बात है बुनिया को उस सबसे कुछ सरोकार नहीं। जो यादवार है वह किसी का घर नहीं मर देता और जो दरिद्र है वह किसी का कुछ चीन नहीं लेता। बुनिया तो सिर्फ एक बात जानती है उसी कटि से वह सबको छोड़ती है — उसकी छातिर कौन कितना जिया मा नहीं जिबा। अपने लिए ता जानवर की जी लेता है जो दूसरों के लिए बिये बही असल आदमी है। करोड़पती मर जाता है, कुत्ता भी नहीं भूँकता। और जिन्दगी भर चीबड़ा लगाएर भूमदेबाके सच्चे बैरागी की समाधि पर लोग सिजद करते हैं फल और बछाये चढ़ाते हैं। बुनिया अपने उमर की सभी मलाई का कमी नहीं भुँसती। और फिर यह ता किसी पर मलाई करने की बात नहीं है। जिस मिट्टी में मेरा जन्म हुआ उसका साइ संसाइ साक करने की जिम्मेदारी मेरी भी ता है। न सही मैं कहीं का महाराम लेकिन अपनी बिगाठ भर नाम ही हर संस कर सकता है। सनुबंध बनाते समय वह गिखहरी जो वपन मुँह में एक दिनका सेकर पहुँची थी भगवान रामचन्द्र ने उसकी भी कुछ कम इइ न की थी। आराम और आसाइत की जिन्दगी पा लेना मुश्किल हो सकता है लेकिन नामुमकिन नहीं है। अगर सबसे बड़ा सबाइ तो यह

है कि काराम और बाठाइस लेकर आदमी करे भी क्या? उस रास्ते तो जो गया जो गया। मैं उस रास्ते नहीं जाऊँगा। सब कहता हूँ वैसे कोई तमन्ना मेने किम में नहीं है। मेरे लिए तो यही अपनी सीधी-सारी जिन्दगी सबसे अच्छी है, न ऊपों के केन में न मापों के देने से न दुनिया की हाय हाय से कोई मतलब। अपने घर बैठे मोटा-सोटा जो भिन्न चाये का सो और कोले में बैठकर अपना काम कर। इससे अच्छा कुछ भी नहीं है।

बहुत लोगों से पिछने-बुझने की बात उससे कभी न थी। किताबें ही उसकी सबसे अच्छी साथी थी। जो बस्त पढ़ाने से बचता वह अपने पढ़ने और लिखने से सँभ होता। लेकिन अब एक फ़िरक उसे सताने लगी थी—यही कि अब उसे ट्रेनिंग पास कर लेना चाहिए। जिन्दगी भर अब यही मास्टरी करनी है, ट्रेनिंग हासिल किये बिना काम न चलेगा। बहुत मन्ना होता कि छाप समय कितने पढ़ने को दिया जा सकता लेकिन लिख लिख किताबें लिखकर तो रोटी नहीं बन सकती। उसके लिए तो कुछ न कुछ करना ही होगा। और अब कुछ न कुछ करना ही है तो फिर उसमें सबसे अच्छी यही मास्टरी है। और मास्टरी के लिए ट्रेनिंग ऐन पकूरी है। उस बात सूब का सबसे पहला और अकेला ट्रेनिंग काउन्स इलाहाबाद में था। परछाबपड़ खुद इलाहाबाद जिंजे की तहसील का और दोनों के बीच लिख बलीस मील की दूरी थी। जिहाबा नबाब ने इलाहाबाद जाकर ट्रेनिंग सेने का निरूप्य किया और लम्भम दो बरस परछाबपड़ में रहने के बाद पहलमे से दो साल की छुट्टी लेकर इलाहाबाद पहुँचा और ६ जुलाई १९२० को ट्रेनिंग काउन्स की प्रेपेरेटरी क्लास में दाखिल हुआ। एक्ट्रेण्ड पास लोग एक साल इसी क्लास में पढ़ते थे और दूसरे साल जूनियर क्लास में। जूनियर और सीनियर क्लास के व्युपिक टीचर साथ-साथ पढ़ते थे। माटे इन्द (पाँच फूट चार इंच) और इकहरे बिस्म का यह चौड़ी-चौड़ी हड्डिमोंवाला मजबूत गौरवान अस्ती ही सबकी तबड़ों पर चढ़ गया। उसकी बचभूपा बहुत सारी थी यानी पानामा और मचकम या कुले मल का छंदा कोट, सर पर साफ़। और जिस तरह बचभूपा सारी थी उसी तरह उसकी आखों और उसका स्वभाव भी सीधा-सच्चा और बनावट से परे था। उसकी भाषा बुल्मद थी और शरीर में बल की भी कमी न थी—पना लोभमे पर र्चकियों को मोड़ना मामूली आदमी के लिए आसाम बात न थी। छामसाह मिती से दबता भी उसने न सीधा था लेकिन इस सब के बादबुद वह सबसे बहुत मुकदर, बदर के साथ और मुह्यवत से मिलता। होस्टल में लड़ना-सगड़ना तो दरकिनार उसको कभी किसी से असम्ब या बथ डेप से बात करते भी नहीं ईया गया। पीकटों के साथ भी वह बहुत अच्छी तरह पेश आता था।



पड़ने का उसकी मर्ज का और पड़ते-बिखरते वस्तु वह अक्षर अपना कमरा भीतर से बन्द कर लिया करता था। बेकम्बर में भी वह भी खोलकर हिस्सा देता था लेकिन उसके उसके प्राण अपने सिखाने-पढ़ने में बसते थे।

और इन्हीं दिनों उनका एक छोटा उपन्यास बरगदारे मजाबिद (देवस्थान रत्न) बंगाल के एक साप्ताहिक पत्र आबादाद खस्क में ८ अक्टूबर १९३३ से साप्ताहिक छपना शुरू हुआ। और इसे एक अनोखा संयोज ही कहना चाहिए कि जिस ८ अक्टूबर को उनकी पहली रचना रोशनी में आयी, उसी ८ अक्टूबर को तैलीस साल बाद उनकी मर्जें इस दुनिया की रोशनी पर बंद हुईं।

इस उपन्यास में एक महत्त्व भी और उनके बेने-बपार्टों की पोख खोली गयी है। नाच-गाने की महत्त्व बनी हुई है।

● राठ का वस्तु। अभी इस काली बच्चा की पहली ही मर्जि है। दूर से मीठे सुरों की आवाज सुनायी पड़ती है। माकूम होता है कि कोई कोकिल-कूडी गौर बर्ना सुन्दरी प्रेमिका खूब बिल तोड़-तोड़कर पा रही है (देवीके बकम काहे करो पतुपई) बर्सकों को भाव बता-बताकर सुना रही है। तारीयों की बीछार हो रही है, सबकों की भरमार हो रही है। बाह-बाह की घवा बुलन् है। हर घल्ल का दिख कुसुम् है। महत्त्व के लोग संगीत की घरान से मजमूर हैं। पक्षे के भीमव अंगूरी शपज से बुर है। महत्त्व का चिराघ दिख की शक्य के मारे बेकम्बर है, परवाना उस पर जान से निघार है। तमाम नेचर मदहोष है, बीबार भी हमातन-योस है।

यह आबादा भी महादेव क्रिमेस्वरमान के मंदिर से आ रही है।

इस वस्तु भीमान् बाबा बिलीकीगान भाये पर लाक बरन का टीका लगाये पीसे रेशम की धड़कीकी मिर्जई डाटे बैठे हैं। पले में मनमोक मोतियों की एक मोहनमाला पड़ी हुई है। सिर पर एक बड़ाठ टोपी अबीव घाल से रही हुई है। उनके खूनी बर्तों ने बेचारे बेबुनाह पाल के बीड़ों का खून इतना ख्यादा किया है कि खून की लाली काठिकों के पले का द्वार होकर बार-बार उनकी तरफ सँझी दिखा रही है और बूकि ये अल्लाही बर्त खून करने के आधी हो गये हैं, उन्हें बिना किसी बेबुनाह के खून से हाव रनि रनि नहीं। यह जो आप महत्त्व की भाये बर लाक निदान देख रहे हैं, वह बरन के निदान नहीं बल्कि इस बात को सिद्ध कर रहे हैं कि इब्रत ने म्याय और बर्न का खून कर बाका है। आप जो इनके गले में मोहन माला देख रहे हैं वह बसस में लोम का पंदा है जो आपकी खून बसकर पड़ने

हूए है। सिर पर ठिरछी रस्ती हुई गोपी मापकी ब्रह्म के ठिरठेगम का जाहिर कर रही है। आपके घरीर पर रंग-रिंगी मिर्चेंद नहीं है बल्कि अंबबिरवासियों को सम्म बाध दिखाने का रस है जो आपके हृदय के अंबकार और भीतरी कामेयन क ऊपर परे की तरह पड़ा हुआ है या बुद्धों को लाम बरबाका दिखाने का भीकार है जो भीतर की कामिमा को संयास और बैराग्य के परे में छिपा रहा है, या बोधे की टुटी है जो मक्तों को जाळ में फँसाने के लिए फँसायी गयी है। \*

पूत के पाँच पालमे में मुंशीजी का भरपूर रंग इसी पहली बीज में मौजूब है — वही पैनी सामाजिक दृष्टि वही बात कहने का फड़कता हुआ बंदाब। सरदार को मुंशीजी बिल तरह भोलकर पी मये ये वही मज उनके लिखने में उतर जाया पा। सरदार के किस्मे बिस तरह गली-कूचे मेले-ठके यहाँ-वहाँ सब जगह रहते टकरते और उनकी उसबीर उतारते हुए बचते हैं वही बीज यहाँ है, समाज के बिभिन्न मंगों की वही खोज बिभमय पकड़ अंतर इतना ही है (और वह बड़ा अंतर है) कि मुंशीजी में बिजोही तत्व अधिक है। मगर बंम उन्होंने सोनहों जामे मगधार का ही अपनया है।

यह देखिए औरतों की एक टोली सिबरावि के मेले में जा रही है —

\* समाम औरतें कपड़े-कपटे से सँघ हैं नाक-बोटी से हुस्सत खेबरों से गोंदनी की तरह लकी हुई, मारे खेबरों के बिस्म पर तिल रखन की जगह नहीं। आज वह डीमती जोड़े निकाले गय हैं जो बराळें कहलाते हैं और जो घाबी-म्याह के बन्ध बड़ छट-बाट से पहने जाते हैं। उनमें हरेक बेजोड़ है कोई छोटले काबिल नहीं। बन्सुरी में बती हुई बोटियाँ जो स्नान करने के बाद कबों पर बिखेर दी गयी हैं, उनकी मुन्दरता को और भी बढ़ाती हैं। हरेक स्त्री के मुन्दर और मुकुमार हावों म एच बहुत अच्छा पीतल का कमण्डल लटक रहा है जिसमें पूजा का सामान है।

ये बचक बचान औरतें आपस में हँसती-बोळती दिक्कपी-मडाक करती बनी जा रही थी। आपस में छेड़-छाड़ भी होती थी बोली-डोली भी मारी जाती थी कत बार्ते भी कही जाती थीं ताने-तिसन की भी गीबत मा जाती थी छिर मिजाय हो जाता था। इसी बीच एक बुड़े महाशय भिसे। उनही बाल-डाल उन सीधे बुद्धों की थी जो बाबकल कखनऊ में लाम छालते फिरते हैं या उन मुहम्मदवाही बीजबान आधिडमिदाबों की-सी जो बलियों में नहरें मड़ाया करते थे। सज्जेव बाड़ी लहरें मारती हुई। एक बुवानुमा टोपी सर पर, कामरानी का मँयरला बरन पर। आपन जो इन परियों को देखा तो बालों में बीबार का छीक पैसा हुआ और मुँह में पानी भर जाया \*

कहीं ठाकाब किनारे रंगीन तबीयत के मौजवान बाँसों सेक रहे हैं कहीं भौंगड़ियों की टोली बैठी है घंग बोटी जा रही है और मंग की घान में कन्डीये पड़े जा रहे हैं कहीं तबायक महुँतजी को चपतिया रही है और कहीं उसके हवाली मवाली उसके सिर पलौठियाँ कर रहे हैं, कहीं घूर्त स्वामीजी सुमार के बटे को बचीकरण का अंतर-भतर दे रहे हैं और कहीं उस तबायक के हवाली-मवाली उसके नकसी कण्डे को खसमी करके बचने की ठिकराम में लये हैं, कहीं मियाँ-बीबी में लकरार हो रही है और बीबी मियाँ के साथ न बाने क लिए तरह-तरह के छम-छम कर रही है, कहीं टोले-पबोस की बीरलें झुठमुठ टेसुए बहा रही हैं—सब कुछ बेहूत बामबार, बेहूत दिक्कतस और उन सब पर इस्मीमान क साथ सलवा-उहरटा क्रिस्ता दिक्कतु सरभार के रंभ में आवे बड़ता है कबानक डीला है वा कमबोर है इसकी मुछीजी को रती भर पिन्ता नहीं है।

अप्रैल १९४४ में मुंशीजी ने ट्रेनिंग का इम्तहान अच्छे दर्जे में पास कर लिया — हाँ मजिद न पढ़ा सकने की बात इस सर्टिफिकेट में भी दर्ज कर दी गयी !

सगमप उन्हीं दिनों बनपत राम श्रीवास्तव ने उर्दू और हिन्दी की स्पेशल बनस्पुकर परीक्षा भी पास की।

और शायद उन्हीं दिनों मुंशीजी की बिट्ठी-बपाठी मुषी बयानदायक नियम के साथ शुरू हुई जिन्होंने हाऊ में ही खाना शुरू किया था। उनको लिखने वालों की उलाह भी इनको अपने सिध किसी पत्र की जिसमें वह बैपकर लिख सकें। बीरे-बीरे इस संभव ने एक बड़ी गहरी दोस्ती का रूप ले लिया जो मरते वम तक बनी। लेकिन अभी तो बस सत-कियाबत तक बात भी सकल मी सायद एक बूसरे की उन्होंने न देखी थी।

आबाबाए सस्क में अभी यह किरसा छप ही रहा था कि मुंशीजी के लिए ट्रेनिंग का सिलसिला खरम करके वापस परताबपड़ जाने का बरत आ गया। ३ अप्रैल १९४४ को मुंशीजी अपनी जगह पर छोट गये। लेकिन नौ महीने बाद ही ट्रेनिंग कासेब के प्रिन्सिपल केम्पटर ने जो इस छात्र परिषदी मीठे और मिसन धार नीजवान से बहुत खुश था मुंशीजी को ट्रेनिंग कासेब से मने हुए माडल स्कूल का हेडमास्टर बनाकर फिर इलाहाबाद बुला लिया। पचीस साल के नीजवान के लिए माडल स्कूल की हेडमास्टरी कोई छोटी पीज न थी। माडल स्कूल छत्रमुच माण्ड सक्त था — लड़कों के सेकने-कूदने पढ़ने-लिखने के सरंजाम के खयाल से भी और पढ़ाई के स्टैंडर्ड के खयाल से भी। पढ़ाई को आसान और दिलचस्प बनाने के लिए नयी से नयी तरकीबें जो बिलायत में ईबाद होतीं उनको यहाँ अमक में खाने की बोधिस की जाती। और मुंशीजी ने बड़ी उमग और बड़ी तनदिली से उस मरोसे को सब करके बिलाया जो केम्पटर न उनके प्रति बिलकाया था।

लेकिन मुंशीजी को अभी यहाँ मुजकिल से तीन महीने हुए थे कि मई १९५५ में उनका उबादला कानपुर के लिए हो गया — उसी पचीस रुपये पर, डिस्ट्रिक्ट स्कूल में आठवें मास्टर के पद पर। मगर और, नीकरी के यह सब सिलसिल तो

चलते ही रहे, नवाब का लिखना भी अपनी सम गति से बराबर चलता रहा। अपनी बिल्दगी का आका अब उसकी आँखों के सामने साफ़ था। उसी हद तक यह भी साफ़ था कि लिखने का काम भी चाहे कम चाहे क्या बराबर दिनचर्या के रूप में चलना चाहिए। जाना-पीना सोना-बागना बिल्दगी के और सब काम अब बिला नाशा होते हैं तब लिखने के काम में ही नाशा क्यों हो — इस अनुशासन की ओर मैं अपने को बाँधना अब उसने शुरू कर दिया था। और जैसे-जैसे दिन गुजरते गये जैसे-जैसे यह अनुशासन और पक्का होता गया। अच्छा ही हुआ कि वह मुहूर्त देखकर लिखने के लिए बैठनेवालों में न था बर्ना तो उसकी बिल्दगी बँसी भी सामर कभी वह धूम मुहूर्त उसकी बिल्दगी में न आता क्योंकि परीधानियों से छुट्टी तो उसकी एक दिन के लिए भी नहीं मिली। चाँद-सूरज जाड़ा-बर्मी-बरसात — प्रकृति में ऐसी कौन-सी भीज है जिसका बन्त बँधा हुआ नहीं है? तो फिर आवमी भी कैसे इस नियम से बच सकता है आखिर वह भी तो इसी आक का पुतला है। लिखना अगर महज विमात्र की बुबली मिटाना नहीं है बल्कि बिल्दगी है तो उसे भी बिल्दगी के तमाम और रमसकों के बीच बिल्दा रहना होगा। इसकी तदबीर करनी होगी। इसके लिए अपने आपसे लड़ना होगा। पियात्र को विस को इस बात की दुर्निम देनी होगी। आसान काम नहीं है यह। इरमीनान बिल्दगी में कहाँ है इरमीनान तो बस मीठ में है। मास्टी उसकी जीबिका भी और लिखना उसका जीवन। जीबिका जब वह नहीं भी रही तब भी जीवन अपनी उसी और-गम्भीर आक से चलता रहा क्योंकि बही एकमात्र बही उसकी खुशी भी उसका मुख उसका संतोष उसकी सार्थकता। बहुत से दूसरे मुविबा-सम्पन्न लिखनेवालों की तरह उसने कभी जीवन और कला को दो अलग-अलग खानों में बाँटकर नहीं रखा। समय वही उसकी कमबोरी भी और बही उसकी सबसे बड़ी ताकत। उसने बिल्दगी में बहुत कुछ देखा था और समय उस कुछ को सह सकने के लिए ही प्रकृति ने उस उम्मुक्त हँसी का कत्रब दे दिया था। यह कबब उसके पास न हावा तो वह कबका टूटकर चरम हो गया होता। क्या भी उसकी बिल्दगी — उससे हुए चाये का एक गेला। माँ कबकी सिवार मेयी बाप का साया सर से उठे भी छ सात छाक हो गये। पर पर सँदेखी माँ और उनका बेटा और एन अपनी बीबी बदचरम फूहड़ मगझानू। सास-बहू के बाये दिन के मगड़े पूरना बूरना। आराम एक नहीं और मूचीबर्ती का एक बप्टर सर पर। पञ्चीस रुपये तनक्याह में से सस-बाएह रुपये अपने पास रखकर बाकी पर रवाना कर देने पड़ते। न साने का मुख न पहनने का लेकिन कभी टैबर मीका न हुआ। इतना ही नहीं बरं जितना ही बड़ठा था हँती उतनी ही बुकम्ब से बुकम्बतर होती जाती थी।

यहाँ तक कि ट्रेनिंग कालेज के कमरे सहपाठी बाबू सासकिशन साहब के मस्जिद में आपकी और स्वर्गीय बाबू गिरिजाकिशोर साहब असिस्टेंट कमिश्नर आबकारी की बगल से हमारा छोटा-सा कॉन्सिडर बन गया था जिसका रोजाना इज्जत मेरे ही कमरे में हुआ करता था। उसमें सायब और भी दो-एक साहब के सेकिंग इस बात स्याम नहीं जाता। बहुरहाल उनमें सभी हँसनेवासे ये मगर बनपतराय बचन करते थे। जब हँसते तो खूब हँसते और कड़कड़े पर कड़कड़ा बगाते बस जाते नहीं यह बनी हुई, खोबली हँसी न थी। खोबली हँसी प्रौरन पकड़ में आ जाती है यह खुद अपने सोससेपन का किशोर पीटती बलती है। उसमें सच्चे-झूठे की तमीब करना इतना मुश्किल काम नहीं है। चाँची की तरह बनकती हुई, ठनकती हुई यह हँसी जिसमें बेहरे पर सुन छलक आता है और भाँकों के आसपास शूरियाँ पड़ जाती है झूठी नहीं हो सकती।

लेकिन यह नाराज बच्चे की हँसी भी नहीं है जो दुनिया के दुस-दरद का सर्वाँ पर्वी का हास नहीं जानता। यह एक एम उठाने हुए बाकिश आबमी की हँसी है जिसने दुनिया में बहुत कुछ देखा है बहुत कुछ सहा है और जानता है कि एक मुकाम पर पहुँचकर रोना और हँसना एक ही जाता है। मगर बाकिश आबमी ही की तरह उसे इस बात का भी पता है कि जहाँ खुद अपनी तकलीफ़ में आबमी का हँसना अच्छा मामूम होता है वहाँ दूसरे की तकलीफ़ में उससे कुछ और ही उम्मीद की जाती है। तब यह हँसता नहीं हमदर्दी करता है और अपनी सकल भर उस दूसरे आबमी की मदद के लिए दीड़ता है। एक उसकी निजी जिन्दगी है दूसरी उसकी समाजी जिन्दगी। दोनों का अपना अलग अलगाऊ अपनी असग नैतिकता है। एक बगल टेसुए बरकाना बे-महल है तो दूसरी बगल हँसना बे-महल है। ठीक कहा रहीम ने अपने मन की बिधा मन में ही रखो क्या होगा दूसरे से कहकर, कोई बाँट तो लेगा नहीं चस्टे सब हँसिगे। तो मैं इसका मीठा ही किन्ती को क्यों दूँ। मुझे कुते ने काटा है जो मैं अपने दरद की रेबड़ी सारे जमाने में बाँटता फिर। दूसरे मुँस पर हँस सके, इसके पहले मैं खुद हँसूँगा और इस जोर से हँसूँगा कि छत गिर पड़ेगी। कितनी अच्छी बात कही है उस अंग्रेज कवि ने—हँसो तो सारी दुनिया तुम्हारे साथ हँसती है और रोओ तो अकेले रोओ। लिहाजा मैं हँसूँगा ताकि सारी दुनिया मेरे साथ हँस सके—जहाँ तक मेरी अपनी जिन्दगी की बात है। लेकिन जहाँ मैं समाज का एक अंग हूँ और मेरा दरद अकेले मेरा नहीं बल्कि समाज के बड़े दरद का ही एक नमूना-सा टुकड़ा है या मैं देखता हूँ कि किसी पर जुस्म हो रहा है वहाँ मैं चुप नहीं रह सकता और न हँसकर ही झूठी पा सकता हूँ। सही या गलत उसकी यह पुरता समझ है कि साहित्य को सिद्धनवाके की निजी जिन्दगी से नहीं

जसकी समाजी चिन्तनी से सरोकार होता है। साहित्य के बारे में जसकी यह समझ पहले रोज से शरकर आखिरी रोज तक रही। इसलिए किराक मोरखपुरी की बात सुनकर जस भी ठाम्ठुब नहीं होता कि मुंशी प्रेमचंद को उर्दू एजबनों में कुछ बात मुहम्बत न थी बल्कि इसी बात को लेकर दोनों दोस्तों में जब-तब चर्चे भी हो जाती थीं। ताहम मुंशीजी अपने इस सायर दोस्त की तमाम बलीबों के बाद भी अपनी जगह से हिलने को तैयार न थे। जैसा कि उन्होंने बहुत बाद को अपने मित्र उर्दू के प्रसिद्ध साहित्यकार इस्तयाज अली ताज को १४ सितम्बर १९२२ के अपने ज्ञत में लिखा था — मैं लिटरेचर को मैम्कुलिन देखना चाहता हूँ। प्रेमिभिरम ज्वाह बह किसी सुरत में हो मुझे पसन्द नहीं। इसी वजह से मुझे टैगोर की बन्दर गरमें नहीं जाती। यह मेरा भीतरी मुत्त है, क्या करूँ। बसजार्' भी मुझे वही खीरु करते हैं जिनमें कोई बिहू' हो। शक्ति के रंग का मैं आसिद्ध हूँ। खजीर कसनकी के गुरुकवे की लूब रीर की भी मगर बवकिस्मती से आज तक एक रोर भी मौजू' नहीं कर सका। न भी चाहता है। शक्तिन सापराता हिस्' विल में है ही नहीं।

इस ज्ञत के कई बरस बाद इन्द्रनाथ मदान के एक सवाल का जबाब देते हुए भी कि बँपका साहित्य क्यों बिक को ज्वादा छूटा है उन्होंने लगभग यही बात बड़ी थी — जसमें एक स्निमोचित मूभ पाया जाता है जिसे मैं अपने स्वभाव के प्रतिकूल पाता हूँ

किकिज उनके मन की यह बजाबट कुछ एक दिन की न थी। जबसे लिखना पड़ना शुरू किया तभी से यह बीज बहुत गहराई से उनके अन्दर बर कर गयी थी और ताबिन्वपी रही। इसीलिए जब जमाना ने जिससे उनका बहुत महत संबंध शुरू से ही रहा नवंबर १९२९ में अपना आठिध नम्बर निवासा जो मुंशी जी से नहीं रहा गया — इसलिए और भी कि वह प्रखर संर्ष का समय था — और उन्होंने एक बहुत तेज विक्रमती ज्ञत अपने दोस्त मुंशी बपानरायन निपय को लिखा। ज्ञत बहुत विक्रमता है और जससे मुंशीजी के मन की बजाबट और उनके साहित्यिक ज्ञान पर बहुत गयी और बछूती रोसनी पड़ती है। ज्ञत बूँकि कुछ हाड़े का है इसलिये हमेसा की तरह बरबरम (मेरे भाई) के संवापन से शुरू न होकर, बहुत बिकरे हुए बँदाज में इन तरह शुरू होता है —

● मकरंम बन्दा जमाना एडीटर साहब जमाना तसलीम।

रिसाला जमाना का माह नबवर का पर्चा देखकर मेरे दिम में खूब खयालत पैदा हुए बिन्हे अर्ब कर बेना मैं अपना ऊर्ब समझता हूँ। उम्मीद है कि जनाब को नागवार न होगा। इस जमाने में जब कि गुनागू बसलाऊी 'सियासी ममाघरती' और इतसाबी' मलायल' हमारी उमानतर एवज्जो' के मुस्तहक है मुसं यह बखकर अऊसोस हुआ कि रिसाला जमाना का क़रीब-क़रीब एक पुरा मंबर महब आतिश के कसाम' के तबसरे' की मबर हो गया। मैं आतिश की उस्तादी का कायस हूँ। कबलऊ शायरी का मबमूम' पहलू आतिश की शायरी में मुकाबलतन्' कम है। मगर फिर भी इतना क्यादा है कि बइस्तसना' उम हबरात के जो सखतबी शायरी के रम में रंगे हुए हैं और सभी तबामा' को मौजूदा भेयार' और खीने सही' से गिरा हुआ मबर आता है।

किटरेबर का मौजू' है तहबीब' अबल्लाऊ' मुसाहिदए बबबात हकमाऊे हकामऊ' और बारबाऊ-ओ-क़िन्नाते इस्ब' का इबहार।' जो शायरी हुस्म व इस्क को आदिना व सामा' खबर व महघर,' बुशाय व खत' दहन व कमर के लसीपुल' से मुकम्मल' करती हो बइ हरगिब इस क़ाबिल नहीं कि माब हम उसका बिर्' करें। बिनकी उजूतादे तबीमत' इस रग की है उन्हें अस्तियार है आतिश या नासिल रिन्द और जमानत का बबीऊा पड़ें। लेकिन जमाना के मुस्तकिफुतबा' नाबरीन' को इस बिर्द और बबीऊे में शरीक होने के लिए मजबूर करना कहां का इयाऊ है? बिर्दा बाऊर मकी का साहब ने अपने तबसरे में आतिश के कलाम का इंतख़ाब पेस किया है मगर इस इंतख़ाब में भी बेसतर एसे अघमार हैं बिन्हे खीके सतीऊ' हरगिब क़ाबिले सताइस' न समझेगा। मुसाहिबा हो—

भर गया बामने नरुबारा गुले नरगिस से  
 भासि उठाकर जो कमी तुमने इमर देख लिया।

१ तरह तरह की २ नैतिक ३ राजनीतिक ४ सामाजिक ५ आर्थिक  
 ६ समस्याएँ ७ समग्र ध्यान ८ व्यक्तिकारी ९ काव्य १० पर्चा ११ बुदा  
 १२ अपेक्षाकृत १३ बलाबा १४ तबीमतों १५ समय की कसौटी १६ स्वस्थ  
 बधि १७ विषय १८ संस्कृति १९ नैतिकता २० भाषों की अभिव्यक्ति  
 २१ सत्य का उद्घाटन २२ दिम की हाकतों २३ प्रकट करना २४ कंपी  
 २५ जमानत प्रकल्प २६ बहुरे पर मसों का भीमना २७ मुंह २८ कल्पना  
 २९ लपेट देती ३० माफ़ा जयें ३१ तबीमत का रतान ३२ अलग अलग  
 तबीमतों का ३३ पाठकों ३४ सुरधि ३५ स्तुत्य



माँस की रियासत से भरपिस को काकर दामने गन्धारा को चुके गरगिठ से भर देना, इसमें क्या गुदरते खयाल' है । क्या हकीकत है । समझ में नहीं आता ।

क्रासियो के पाँव छोड़े बहगुमानी ने मेरे  
छठ बिना लेकिन न बठफामा निघाने कूए होस्त ।

क्यों नहीं बठफामा ? बी मापकी हिमाकठ या नहीं ? आपको छाँड़ हुआ कहीं मादूक क्रासिय का बम न भरने लये । बाहू रे माभूक और बाहू रे बासिक दोनों बिन्हा हरगोर' । ●

इसी रंग में यह छठ सभी और भी काफ़ी संबा है लेकिन सायब इतने ही से यह बात साफ़ हो गयी होगी कि साहित्य का मतलब यह क्या समझता है । नाब तकटे, बॉम्बेबाबी सर्व आहों का बुजाँ सपनों की फूलझड़ी उपमानों का जमबट कोरा उक्ति-बिचिम्प — इन चीजों को यह सभी साहित्य के ऊँचे वासन पर नहीं बिठास सका । यह नहीं कि उनके मजे से यह बेगाना हो बाकिरकार यही चीजें ठो उसकी घुटी में पड़ी थीं । लेकिन नहीं उन चीजों का बमाना सब गया अब मुस्क और क्रीम को कुछ दूसरी ही बूटक चाहिए । रंग और बटबारा के को उसमें से बितना के सको लेकिन बात कहो अपने समाज के दुख-दर्द की उन भयानक सबालों की बितकी भाग में तुम्हारी बहनें तुम्हारे भाई, तुम्हारी कौम बल रही है । बहुत हो बुका आहों का बुजाँ अब इस घुँरे को बेसो जो तुम्हारी बेकस बहुत तुम्हारे मबकूम भाई की पिठा से उठ रहा है ।

असरार मभाविये तो आबाबए सस्क में क्रमस छप ही रहा था सायब इन्ही बिलों परताबगड़ के इन नौ महीनों में मुंछीबी ने अपना सबला उपन्यास हमबुर्मा व हमसबाब लिखा । ३० जनवरी १९५ को परताबगड़ से मुंछी दमानरावन निगम को भेजे गये छठ में बिस भाबिक का बिक है ( 'मैं बड़े इस्तिमाक' से मुन्तबिर हूँ कि आपने मेरा भाबिक पढ़ा या नहीं । ) और बीस रोज बाद फिर इलाहाबाद से बिसकी याबरेहानी करते हुए उम्होंने अंबेबी में लिखा था— वो महीने के समादा हुआ कि मुझे अपने उपन्यास की पाबबुक्ति आपके पास बनलोकनार्थ भेजने का सीमाय्य हुआ था इस आसता में कि आप मेरे लिए एक प्रकाशक पुराने की बूया करेंगे । मुझे याद है कि वह बिसम्बर की आठ तारीख थी जब कि मैंने फिताब आपके पास भेजी थी वह उपन्यास सायब हमबुर्मा व हमसबाब ही है ।

सुद मुंशीजी ने बहुत बरस बाद २९ जनवरी १९२१ को अपने दोस्त इन्ट याब यही टाब को लिखा था— हाँ हमसुर्मा व हमसबाब और फ़ियाना बघैरह मेरी इन्टरवाई उसनीफ़ हैं। पहली दिताब लो लखनऊ के लखनऊके प्रेस ने साया की थी दूसरी फ़िठाब बनारस के मेडिकल हाक प्रेस ने। ये फ़ालिबन सन् १९ की तसानीज़ हैं।

इस लख के भी उस-बाहू बरस बाद अपनी भात्मकया जीवन-सार में उन्होंने लिखा— मेरा एक उपन्यास १९ २ में निकला और दूसरा १९ ४ में।

१७ जुलाई १९२६ के लख में उन्होंने निम साहब को लिखा— सन् १९०१ से फ़िटरी बिन्दवी शुरू की। तिसाला जमाना में लिखता रहा। कई साल तक मूठफ़रिख़ मजामीन लिखे। सन् १९ ४ में एक हिन्दी नाविल प्रेमा लिख कर इन्डियन प्रेस से छापा करवाया।

काफ़ी परस्पर-बिरोधी थी बातें हैं और कुछ बख़ब नहीं कि मुंशीजी की स्मृति मोसा बे रही हो। प्रेमा पर प्रकाशन का बर्ष १९ ७ अंकित है। हनु-सुर्मा व हमसबाब पर प्रकाशन-बर्ष अंकित नहीं है। लेकिन उसका पहला बिजापन सितंबर १९ ६ के जमाना में मिलता है और फिर बराबर मिलता है। इससे यह नतीजा निकालना थायद बहुत शक़त न होया कि वह फ़िठाब सितंबर १९ ६ के बासपास निकली होगी। फ़ियाना का पहला इस्तहार अपस्त १९ ७ में और समालोचना बक़्शुबर-नवंबर १९ ७ के जमाना में मिलती है। क़दी रानी का फ़िस्ता अगस्त से अगस्त १९ ७ तक कमरा निकला।

पारख़ कि मुंशीजी ने बँपकर जमाना में लिखना शुरू कर दिया था और छोटी कहानी लो लखे उन्होंने सबसे पहले १९ ७ में ही लिखी लेकिन उसके पहले छोटे-छोटे लखों और समीसामों का सिख़सिला बहुत कायरे से बख़ता रहा।

हज़ीम बरहम के उपन्यास कृष्णहूँबर की समालोचना करते हुए मुंशीजी ने फ़रवरी १९ ५ के जमाना में लिखा—

उपन्यास अंग्रेज़ी साहित्य-मालोषकों की राय में अख़बिर्षों का एक संग्रह हँसता है। उपन्यास का क्षेत्र संग्रहित बहुत विस्तृत हो गया है। वहीं लो उतमें बिन्दवी के फ़िन्दी बरहम मसले पर बरहस की जाती है जिसकी मुहम्मद यकी साहब ने बड़ी कामयाबी के साथ कोशिश की है, क़ही उसमें माग़ब-स्वभाव की ब्यास्या की जाती है हुरम के भावों भाषामों और निराशामों के लखे उतारे जात हैं, वहीं वैदिक बुचानों को दूर करने की क़ाशिय की जाती है। उपन्यासकार क़मी

की उसकी मजबूत पकड़ समाज के विभिन्न वर्गों और समूहों के सोचने-विचारने और बोल-चार के दुकड़ों को फड़कते हुए संघर्ष में पेश करने का उसका तरीका और मुहावरों पर लेकरी हुई उसकी बातदार रबई-दर्बा भाषा।

मह देसिए टोले-महोस की पंडाइन और चीबाइन और बूछरी कुछ औरतें पूर्ण को बिसका पति जमी हाक में मरा है सिखावन देने बापी है —

● पंडाइन (जो बुझापे की बजह से सूखकर छुहारे की तरह ही बयी थी) — क्यों दुखहिण पंडितबी को गणासाम हुए कितने दिन बीते ?

पूर्णा (डरते-डरते) — तीन महीने से कुछ बयारा होता है।

पंडाइन — और जनी से तुम सबके घर माने-जाने करीं ? क्या नाम कि तुम एक सरकार के घर बनी गयी थी उनकी कुंजारी कन्या के पास दिन भर बैठी रहीं। मला सोचो तो तुमने अच्छा किया या बुरा। क्या नाम तुम्हारा और उनका अब क्या साम ! अब वह तुम्हारी सबी थीं अब थीं अब तो तुम बिबवा हो बयीं। तुमको कम से कम साम भर तक घर से पाँव बाहर नहीं निकालना चाहिए था। यह नहीं कि तुम बर्सेन को न जानो अथवा न जानो। मराना-पूजा तो अब तुम्हारा धरम ही है। हाँ किसी सुहाबिन या किसी कुंजारी कन्या के ऊपर तुमको अपना सामा नहीं डालना चाहिए।

पंडाइन सामोस हुई तो मूंशी बरीप्रसाद की महपबिन फरमाने लयी — क्या बतकारू, बड़ी सरकार और दुखहिण कम बून का बूँट पीकर रहु गयीं। बड़ी सरकार तो ईश्वर जाने बिलक-बिलक रो रही थीं कि एक ठी बेचारी कड़की के यूँही नाम के काले पड़े हैं बुरे अब रूँड-बेवा के साथ उल्ला-बैल्ला है, नही मामम ईश्वर क्या करनेवाले हैं। छोटी सरकार मारे पुस्से के काँप रही थीं। बारे मीने उनको समझाया कि आज भुवाऊँ कीबिए, जमी वह बेचारी बन्ना है रीठ-ब्योहार क्या जाने। सरकार का बेटा जिये अब बहुत समझाया एक जाकर मानी नही तो कहती थीं कि मैं जमी जाकर लड़े-पड़े निकाक बेटी हूँ। सो बेटा अब तुम सुहाबिनों और कन्याओं के साथ बैल्ले जाग नहीं रहीं। बरे ईश्वर ने तुम पर बिपत डाल ही अब तुम्हारा धरम यही है कि चुपचाप अपने घर में पड़ी रहो जो कुछ मयस्सर हो जानो पियो और, सरकार का बेटा जिये जहाँ तक हो सके धरम का काम करो।

पूर्णा ने चाहा कि जबकी कुछ बबाब ई कि चीबाइन ठाहवा के महीहत्तों का हपतर सोसा। मह एक मोटी बरेसक और बरेडू औरत थी। बाठ-बाठ पर जैसे मीचा करती थी और आबाब भी निहायत करकत थी — मला उनसे पूछो कि जमी तुम्हारे दुल्हे को ठेके तीन महीने भी मही बीते और तुमने जमी से आइना

कंबी-बोटी सब करना शुरू कर दिया। क्या नाम कि तुम अब बिचवा हो गयीं तुमको अब आइने-कंबी से क्या सरोकार उठ्य। क्या नाम कि मैंने हजारों बीरतों को देखा है जो पति के मरने के बाद पहना-पाठा नहीं पहनतीं हैंसना-बोचना तक छोड़ देती हैं न कि आज तो सुहाग उठ और कम सिंगारपट्टार होने लगा। क्या नाम कि मैं बसन्तो-पत्तो की बात नहीं जानती कर्तुंगी सब चाहे किसी को तीता छने या मीठ। ●

इन्हीं बूझत बुद्धियों में से एक की बिचवा बहु रामकली है (बसरारे मन्नाबिद में इसी नाम की इसी डब की एक छोकरी से हम मिल चुके हैं) — सोसह-सजह सारु की पुबती। उसे घर के भीतर बन्द रखा जाता है और हर-हर तरह से उसके ऊपर बकड़बन्दी है। मतीना होता है कि वह गंगा-स्नान और पूजा-पाठ के बहाने बप्टों-बप्टों घर से बाहर रहती है और राहचमते लोगों से पनबाकियों से मैना सझाती है और साबू-महात्माओं की रेक-पेक में चुसकर भाँप-बूटी छामकर क्या नहीं करती। यही रामकली पूर्वा से बात करते हुए कहती है—

सुनती हूँ करु हमारी आइत कई बूझों के साथ तुमको बसाने गयी थी। मुझे सताने से अभी तक जी नहीं मर। यह सब ऐसा दुख देती है कि जी चाहता है बहर का रूँ और अपर यही हास रहा तो एक न एक दिन यही होता है। मही मासूम ईस्वर का क्या बिगाड़ा या कि एक दिन भी जिन्दगी का सुख न भोगने पायी। मला तुम तो अपने पति के साथ हो बरस तक रहीं भी मैंने तो उसका मूँह भी नहीं देखा। अब ठामम औरतों को बनाव-सिंगार किये हूँसी-झूठी बसते फिरते देखती हूँ तो छापी पर साँप लोटने समता है। बिचवा क्या हो ययी घर घर की सौँडी बना यी ययी। जो काम कोई न करे वह मैं कहूँ। उस पर रोख उठते बूती बैठते जात। काबल मत म्नामो मिस्सी मत कपाओ बाळ मत गुँबबाओ, रंगीन साकियाँ मत पहनो पान मत लाओ। एक रोख एक सुझाबी साड़ी पहन ली थी तो वह बूझिस मारने उठी थी। जी में तो आया कि घर के बास मोच रूँ ममर बहर का बूँट पीकर रह ययी। और वह तो वह बसकी बैठियाँ और बूझी बहुरें मेरी सूरत से नछरत रहती हैं। सुबह को कोई मेरा मूँह नहीं देखता। अभी पड़ोस ही में एक छापी हुई थी। सब की सब गहने से कर-कर गाली-बजाती ययी एक मैं ही अभापिन घर में पड़ी रोती रही। मला बहान अब कहीं तक कोई जन्त करे। बाबिर हम भी तो आशमी हैं, हमारी भी तो जवानी है। बूझों की जुयी बहुर-बहुर देठ छामसाह निरु में हीसके होते हैं। अब मूँह लगती है और लाना नहीं मिस्तता तो बोटी करना पड़ती है।

और यह बसिए बनारस की एक लबोली की वृत्तम है—

काठ के लीनेनुमा लकड़ों पर सफ़ेद कपड़े पानी से मियाकर विछाये हुए थे। उस पर बैनका ब देसी ब मगही पान बड़ी सफ़ाई से चुने हुए थे। सामने थो बड़े-बड़े चौखटेदार वादने लगे हुए थे और एक छोटी-सी चौकी पर कुछनुआल की धीधियाँ और मसालों की बिसियाँ लूबी से सजाकर बरी हुई थीं। तंबोली एक लबीला बमान था। सर पर दुपस्सी टोपी चुनकर तिरछी रकी थी बरम में लाने रकी का कुमट पड़ा हुआ दुर्ता था। दले में सोने की लबील लबीलों में सुर्मा लाने पर लाल टीका होंठ पर पान की लसी

सबह लाल की मुपती बिसबा रामकली का एक लीहा यह थी है

नबाव ने लच्छी तरह समझ लिया है कि हिन्दू समाज का सबस बड़ा लमिषाप लिलोप लिरपलब बिसबा ली है लिस लकारण लीबन लर इतना दुःख लठाना पक़्ता है। वह समाज लिसमें इतना लन्याय हो ल्यावा लिन लही लल लक़्ता। यह लीड बराबर एक लिस की तरह उसके मन पर लीठी रहती है। जो समाज लकारण लिसी को इतना लमानक दुःख और पीडा पडुँवा लक़्ता है— एक लरल लिसमें को और दूसरी लरल लडुँवों को— वह लबमुल लमिषाप है और लच्छा हो कि लल के लरले लान ही लसका लनाना लिकल लान। लकिन लही वह लुल ली लो हिन्दू है और कायल है। लरुँ-लरली लसकी लुडी में पकी है। लस लालिल्य से लसका लरुल लरिलम है। मुसलमानों के लील वह लठ्ठा-लैठ्ठा है। लनके लालार-लिलार से लील-ल्योहार से लौर-लरीलों से लसका लच्छा लरिलम है। इलकिए वह लाने या न लाने लन ली लन वह लपन समाज का लिसान मुसल्लिम समाज से कक़्ता लक़्ता है और लिलना ही वह लिलान कक़्ता है लठना ही लसका लम ललाली से मुस्से ल लिल से लर लठ्ठा है लकीकि मुसल्लिम समाज में लही ल्यावा बराबरी है लाल्लार है लालमी को लालमी लमलता लता है, लमान में ली ली लिलल ललिक मुडुल है, लमान लसके ललिलारों को लाल्यता लैता है, लसका लिलान कक़्ता है हिन्दू समाज की तरह लब ललानी लमललल नही है।

समाज के यही लब ललाल यही लब लरं और लैलीनी नबाव की इस लौर की लीलों में नलर लाली है। लैकिन लब लल वह इतना बड़ा हा लुला है कि लानता है लिलं गुस्स या लुँललललल से कुल न हाया लसके लिए लपने समाज से लालालल लंय कक़्ती लोपी और यह लिर लाललललल लाल लही है कि लब वह इस लिलस में लमूललय और लुल की लाली कक़्ते लठ्ठा है लो वह लीड लालालल लललल का ल्य के लैली है।

लान ली लिलल-लिलल लाल लीड लही है लैकिन लमर कोरै कक़्ता ली लाले

तो धायद ऐसा न होया कि धर्मध्वजी सोय उसको मारने के लिए आयें। पर आज से पञ्चपन-साठ वरस पहले कुछ अबब नहीं कि ऐसी हालत रही हो।

वहाँ तक नबाब के अपन ब्याह की बात थी उसमें कुछ रस बाकी न था। बस एक रिस्ता था जिसे निबाहा जा रहा था। अब से नबाब इधर परताबपड़ और इलाहाबाद में रहे रहे थे तब से साय रहने के क्षमों से भी छुटी थी। दोनों सास-बहू कमही में रहती थी और नबाब उनसे मलग-मलग बिसने-मड़ने में अपने बिन गुबारते थे। छुट्टियों में घर जाते तो साबका पड़ता। बिल्गी में बहर बुक यया वा सेकिन फिर भी निवाह किये जा रहे थे और कोई हपदा उस बीबी को छोड़ने और दुनारा घर बसाने का न था। उबर पत्नी भी परित्यक्ता-बीसा जीवन बिता रही थी और धायद इसीलिए सास-बहू के लगड़े और भी बढ़ गये थे। बिनबी जैसे-ठीसे बिसट रही थी। सेकिन किसी को पता न था कि निवति उन सबके लिए कैसा बाब रप रही है।

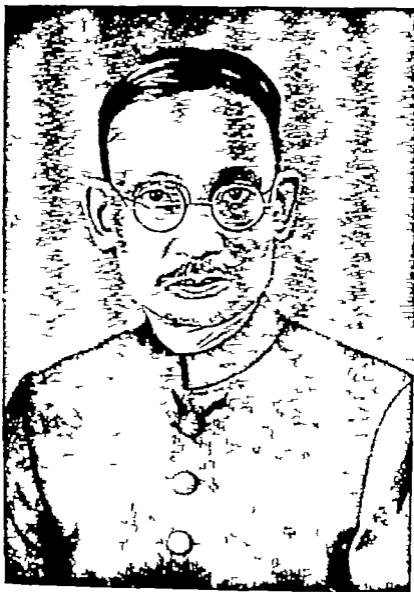
यह सन् पाँच की मई है और मुंशीजी इसाहाबाद से तम्बील होकर कानपुर आ गये हैं।

उनके मित्राब में तकस्तुच्छ काफ़ी है लेकिन तबीयत जिससे बुरा जाती है, बुरा जाती है। मुंशी बवानरामन ने उन्हें अपने यहाँ आकर ठहरने की बात भी है और मुंशीजी उस बात को झूठ करके उन्हीं के हवेली-बीसे मकान में गया भीक में रह रहे हैं। मुंशीजी बनाना परिवार के अपने बादमी हैं और नियम साहब के दोस्त ही उनके भी दोस्त हैं। पूरा जमबट है। नीबत राय नबर दुर्गा सहाय सरकर प्यारेकास घाकिर और और बहुत से लोप बिनके नाम अब लो गये हैं। हर रोज़ शाम को महज़िब जमती भी और हुस्न-ओ-इराक़ से लेकर घोसे बरसाती हुई सियासत तक दुनिया की हर चीज़ के बारे में बरम-बरम बहस होती थी। सभी मौजबान ने जोशीसे ने सेर-ओ-सायरी क लिखने-पढ़ने के शौकीन थे। बीन-नुनिया की कोई चीज़ ऐसी न बचती जिस पर मुत्तकर बातें न होतीं। एक दूसरे की मुत्ताचीमी होती हुई-मबाक होते इहक़हे पर इहक़हे उड़ते। और सिर्फ़ इहक़हे न उड़ते बोडलों के काग भी उड़ते। सरकर और नबर बाकायदा पीनेवालों में वे मबाब राय भी पाहे-ब-माहे मुँह मुठार बैठे।

मुंशीजी उन लोगों में से न थे जो बार दोस्तों के बीच भी कट्टर मौखाना की तरह सदाब पीने को एक बड़ा गुनाह समझते हुए, मुहर्मी मूरत बनाये सबों को सिधे बैठे रहते हैं। क्या मसरफ़ ऐसे आदमी का और अगर उसे बातचीत नहीं कर जाती और हँसने से ज़िबर के फटने का बरिषा रहता है तो वह जाय ही क्यों ऐसी महज़िब में।

मगर साय ही मुंशीजी उनमें भी न थे जिन्हें हर बक्त अपनी ही आबाब गुना ज़ब्र माफ़ूम होता है। ऐसा आदमी किसी भी महज़िब के लिए एक बजाब होना है और लोप उसकी मूरत से नज़रत करने लगते हैं। इसके बर-अस्म मुंशीजी महज़िब की जान थे। उनसे महज़िब का रंग उदड़ता नहीं जमता था।

बेधक उनके स्वभाव का एक पहलू ऐसा भी था जो बाफ़ी संकोची या सज़ीला



मुरती खण्डरायल नियम



بہت ۱۹۳۷ء - تا ۱۹۴۱ء منشی علی بک محل - حکومت  
 محل ماہر پریور - ماہر - ابتداً آصف محل ایک ماہر ہی -  
 آپ - ماہر تانہ لائف سکول سکول ٹرنس پریور - ورنہ  
 محل کی عمر عمر گئی - جو وہ ماہر سال گذری تھی -  
 مدت کی - ۱۹۱۱ء کے شروع ہونے سے ۱۹۲۱ء کی -  
 سال تک مشورہ معاش کی - تقریباً ایک تہائی سال  
 رتھورپور کے شائع کرنا - تقریباً ۱۹۲۱ء سے ۱۹۲۷ء -  
 یں - پرم اہم - ایک مجموعہ - کا ایک کتب خانوں

बा। अजनबियों के बीच वह मुसकिल से जवान झोठ पाते थे। लेकिन दोस्तों के बीच उनकी कायापन्य हो जाती थी। हँसते थे हँसाते थे उर्दू-अरबी के शेर और लतीफे सुनाते थे लोगों पर छिक्करे बसते थे भोग जग पर छिक्करे बसते थे आपस में किसी तरह का पर्दा न था। खुसी हुई, बबक तवीयत पायी थी जो दोस्तों की महफिल में बैठकर और भी बुरा जाती थी।

महफिल के रंग में बहने का यह हाल था कि एक रोज जब कि निगम साहब के यहाँ कुछ खास दोस्त जमा थे और करीब ही किसी छत पर प्रामोफान में बर्ट रोपर्स का मघहर काफिरा सांग I sat in a corner बजने लगा तो कुछ देर तो मुँचीजी सामोस खे और फिर यह कहकर कि खीबिए मैं भी इसके कहकहे में इसका साथ देता हूँ झुकका मारने लगे और बड़ी देर तक यों ही हँसते रहे।

छतों भी नहीं चंद दिनों के भीतर वह महफिलें मुँचीजी के बून का ऐसा बुरा बन गयीं कि जब वह मर्मी की छट्टियों में अपने घर समझी गये तो इन सोहबतों की याद करके तड़प-तड़प गये इसलिये और भी कि जिस नी नजर से देखिए, कलपुर की चिन्गी अजर स्वर्ग थी तो घर की वह चिन्गी नरक। वहाँ बस स्कल का काम था और उससे छुटी पायी तो दोस्तों की महफिल भी हँसी-मजाक का साहित्य बर्षा भी न कोई छिक् भी न परेशानी। और घर जो माये तो जैसे मिड़ के छत्ते में हाथ मार दिया छापी परेशानियाँ जिनसे दूर रहने के कारण नजलत मिली हुई थी बकवारगी उनके ऊपर टूट पड़ी और उन्होंने बबरकर मुँची ब्यानरायन की जो छतने ही दिनों में उनके सबसे अच्छे दोस्त बन चुके थे एक संघा छत लिखा —

बरबरम अपनी बीसी किसते कहीं। बसत किये किये कोज्य हो रही है।  
 झों-झों करके एक अघरा<sup>१</sup> काटा था कि खानगी ठरदुबरात<sup>२</sup> का ताँता बँधा।  
 बीरतों ने एक-दूसरे को जली-कटी सुनायी। हमारी मछुमा<sup>३</sup> ने जलमुनकर  
 बसे में फँसी समायी। मैं ने आवीरात को भाँपा पीड़ी उसको रिहा किया।  
 मुबह हुई, मैंने खबर पायी। झस्ताया बिगड़ा सकल मलामत की। बीबी साहबा  
 ने जब खिच पकड़ी कि यहाँ न रहूँगी मैंके जाऊँगी। मेरे पास खजाना न था। माचार  
 बेल का मुनाझ बनुक किया। उनकी छसती की ठँमापी की। वह रो-बोकर  
 बनी गयी। मैंने पहुँचाना भी न पसन्द किया। जब उनको एमे जाठ रोब हुए,  
 न बसत है न पलन। मैं उनसे पहले ही कुछ न था जब तो सूरत थे बेबार हूँ। राकि-

१ पतवार २ परेनु परेशानियों ३ माबकिन

बन् सबकी की जुबाई शायमी साबित हो। खुदा करे ऐसा ही हो। मैं बिना बीबी के रहूँगा। किसी बच्चे मुर्गी झेंडूय ही रहेगा। उबर नातिहाल से बाकिबा की तरफ से बिद है कि ब्याह रहे और बरूर रहे। जब कहता हूँ मैं मुफ्तबिध हूँ, फंयाक हूँ साने को ममस्तर नहीं था बाकिबा साहवा कहती है तुम अपनी रजामन्दी चाहिर करा तुमसे एक कौड़ी न माँगी जायगी। भुनता हूँ बीबी हसीन है, बासऊर है जेब से खर्चने बरीर मिली जाती है फिर तबीयत क्यों न मुरमुराय और मुवपुरी क्यों न पैदा हो। ईस्वर जानता है बो-तीन दिन उसका इनाम भी देल खुदा हूँ। बहरहाल सबकी तो पका सूझा ही खूबा माइत्या की बात मारायत के हाथ है। बीबी आपकी सलाह होगी वैसा कस्येगा। इस बारे में अभी फिर सहाबिउ करने की बरूरत बाकी है।

इसी बात में अपने घर की और भी जो ठठबीर खीची है, वह भी देखने काबिल है—

मर्मी की कैफियत न पूछिए। कहकाने को साहिबे-मकान' हूँ। और खुदा के इज्जत से मकान भी सारे गाँव का मामूर है मगर रहने काबिल एक कमरा भी नहीं। कोठे पर आप बरसती है। बैठा और पसीना चोटी से एड़ी को चला। नीचे के कमरे सब बंद। परीखान। किसी में बैठ बैठता है किसी में अपने जमा है। कहीं अनाब का डेर है किसी में जाँत चबकी ओकली मूसल बगीरह कुकस-फ्रमा' है। कोई बैठे कहीं सोये कहीं। मजबूरन अनाब के घर में एक चारपाई की बमह निकाल ली है। उठी पर दिन-रात पड़ा रहता हूँ। बकेले भूमने कहीं पाई। बच्चे तीन-चार दिन के लिए जाये हैं। हमारी सलजुमा को पहुँचाने के लिये बस्ती मये वहाँ से अपने बाकिब के पाठ चले जायेंगे। इस मर्मी में कैसा पढ़ना कैसा लिखना। सुबह के बरत पना-आध बंटा बर्क-विरखानी कर सेठा हूँ, बाकी रात दिन में हूँ और चारपाई। सुम्भकड़ बड़ा हूँ मगर नीच भी कुछ मेरे घर की लौड़ी नहीं। उस पर तरदुद बलव। कहीं होंसी मजाक में दिन कटता था कहीं चुप की मिठाई वा मूँके का गुड़ आकर बैठना पड़ता है। मजबूरी में पान मुबतिला है। मारि, जस्ती से छुट्टी कटे और फिर मारों के जलम और बहबहे इहकड़े हों। जाये बीस दिन से ब्यादा गुजरे मगर इसम नि जो जो खान से प्यारा लख्ख बंधूक एक बार भी निकला हो।

बहुत हसरत से भय हुआ लठ है। कोई छोटी बात नहीं है यह कि आपके घर की एक स्त्री जो आपकी स्त्री है चाहे बीबी भी मने में फाँसी लगा के। लेकिन

किम तरह से उसको बयान किया है। किसी तरह की हमदर्दी उस औरत को देने के लिए वह तैयार नहीं है। जिस कितना छत्र हुआ है वो इस तरह की बात मुमकिन हो सनी! उस रोज बिजयवहादुर उनको ले जाकर बस्ती जो पहुँचा जाने तो नवाब के लिए वह सचमुच मर गयी—वो मरी बहुत बाद को। खत उनके जाने के आठ रोज बाद लिखा जा रहा है। आठ रोज का बस्त मन की उदासी या भारीपन को कम करने के लिए पोड़ा नहीं होता लेकिन वो भी खत से एक बेदर्दी का एहसास होता है जो उनकी पूरी तबीयत से मेल नहीं खाता मगर धनर है इस बात की कि मह घादी घरीब के जी पर कितनी भारी हो रही थी।

मुंशीजी और निगम साहब दोनों एक दूसरे की तरह बड़ी तेजी से खिंचे और पापद इसकी एक बड़ी बजह यह थी कि दोनों का स्वभाव एक दूसरे से काफ़ी असम और कहीं-कहीं विरोधी भी था। मुंशी बयानचयन की एक-कटि से कुरस्त दुनियादार आदमी से पहल बचाकर काम करते थे हर काम में अपना नज़्म-नुरमान देखते थे। रहने-सहने में भी साक़-सुपरे, क्रामदे के आदमी के हर तरह से बहुत प्रीतिकर। मुंशी बनपठचय बिल्कुल उनके उस्टे थे। रहन-सहन में कठई सापर बाह न कपड़ की फिक्र न लते की न बाछों की फिक्र न जूते की। किसी भी हालत में एह छेते से और यह बीज आरत बन गयी थी। दुनियादारी से भी उन्हें कम ही आस्ता था। जो बात सही थी सही थी और जो सख्त शरत — दुनियादारी को उसमे बहुत कम दखल था। पहल बचाकर काम करना सीखा ही नहीं। स्वभाव का यह दुनियादारी अन्तर दोनों को काफ़ी असम-असम दिघामों में ल गया, लेकिन एक बीज जो दोनों के मिजाज में यकसाँ मिलती थी वह थी उनकी बजादारी जो कि उस पुराने जमाने की ही एक बीज थी और उसके साथ ही मिट गयी। दोनों अपने स्वभावों की मिश्रता को देखते हुए भी एक-दूसरे की कीमत समझते थे एक-दूसरे की कद्र करते थे। बात शुरू इसी तरह हुई कि बयानचयन साहब के लिए वह एक नया प्रतिमाचाली लेखक का और मुंशीजी के लिए निगम साहब एक ऐसे पत्र क संपादक थे जो तेजी से अपना स्वात बना रहा था। लेकिन जल्दी ही उनके कुछ और ही शकल बख्तियार कर ली। मुंशीजी ने नियम साहब को काफ़ी बारीकी जगह ही वो उन्न में मुंशीजी ही बड़े थे। यह बात नियम साहब को काफ़ी असौख मात्म हुई लेकिन सब पूछिए तो बजीब इनमें कुछ भी नहीं है — मुंशीजी को सारी का बहु मरकता अभी भूसा न था जो उन्होंने अपने बचपन में पढ़ा था कि उन्न की गिनती सामों से नहीं बकि उनुबों से होती है। और बूँकि दुनिया के उनुबों में बहु बयानचयन साहब को अपने से बड़ा समझते थे इसलिए उन्न में भी अपने से

बड़ा मानते थे। और इसीलिए, बीसा कि खुद निगम साहब ने भिखा है, बहुत से मामलों में तो जो मेरी राय होती उसी पर वह बमस करते। चारी बिन्दयी यह सिद्धसिद्धा बला और निगम साहब ने भी उनके किसी मामले में बहल देने में कभी आगापीछा नहीं किया।

और जब यह एक नया मामला मुन्शीजी की शाही का बरसेस था।

सुट्टियाँ बीसे-सीसे खत्म हुईं और नवाब फिर कामपुर पहुँच गया और फिर वही दोस्तों की महफ़िलें झूझते और बहचड़े शुरू हुए जिनके लिए उसका रिक्त तड़पना था।

लेकिन वह सब महफ़िलें सेर-ओ-शामची के बर्षे बेक्रिक कुँआरी बिन्दगी की मस्तिचा वही एक तरफ़ उसकी बिन्दगी के सूनैयन को भरती थी वहाँ बूसरी तरफ़ उसे और भी बढ़ा देती थीं। अपना अकेलापन अब उसे खत्मने लग्या था। तबीयत बहुत रपील न छोड़ी मगर बबान ठो थी। आसिर कब तक वह इसी तरह अपनी बिन्दगी की लड़िया ठिसेबा? पचीस साल का तो हुमा कर बसाने को अब जोर कीन-सी उभ्र आयेगी? या तो फिर उसका खमाक ही छोड़ दिया जाए कि नवाब के लिए मुसकिन न था। तबीयत ही उसने बीसी न पायी थी। वह परेलू हंग का आचमी था और उसकी तमाम परीयानियों के बावजूद उसी में कुछ रह सकता था। कुँआरेपन की मस्त बेक्रिक, रैर-बिम्बेशार बिन्दगी के अपने मजे हैं लेकिन वह मजे नवाब के लिए न थे। और फिर पन्द्रह-सोलह साल की उम्र से जिस लड़के के मजे में विरल्ली का पुआ पड़ गया हो वह बूसछ कुछ सोच भी तो नहीं सकता।

अब तक कि इकबाली बघावत पर न सामारा हो जाय। मयर बघावत भी कैसे करे, पहले से भी तो कुछ बिम्बेशारियाँ बकी आ रही हैं, माँ की तक बच्चे की — उनसे कैसे मुँह फेर ले? होते हैं ऐसे भी लोग होते हैं बहुत होते हैं, जो बूतों की बिन्ता नहीं करते बस अपनी खुपी अपना आराम देखते हैं। मयर नवाब उनमें से न था न प्रकृति से और न इतने बर्षों के बम्बास से।

लिहाजा अब यह सब अट्टरप रहला ही है तो इसका मुक भी कुछ क्यों न खम्मा जाय। वह तो शारी बुरी हुई, बिलकुल नाकाम रही बढ़ा कुछ दिया पठने। लेकिन अब तो खैर उससे नाता टूट गया। खम्मा ही हुमा।

मन पोड़ा हल्का था मयर कुछ था जो करक रहा था।

कायरलों में लड़कियों की कुछ कमी न थी और नवाब उस बस्त एक हँसमुख बिन्दारिक स्वस्व और मुन्बद, जाता-कमाता नौबवान था। बाकी शारी करने

कमिए पीछे पड़ी थीं और जेब से कुछ चाँचे बाँटकर एक हसीन और बासकर बीबी मिली जाती थी। मौजबान नबाब उसने सपने भी देखने स्या था। लेकिन फिर आत्मी का विवेक भी तो है। कैसे रचा से वह उस तरह का ब्याह। ऐसी बड़ी-बड़ी बातें भगी उसने अपनी किताब में लिखीं और जब अपनी बारी आयी तो मूक भाव उन सब बातों को? नहीं उसका लिए तो यही उचित है कि अगर उसे दुबारा धारी करनी ही हो तो किसी विधवा लड़की से करे, वह खुद कहीं का कुँआप है। न रहा हो उससे संबंध तो क्या ब्याह तो हुआ। यही सब बातें समझ करने की थी। आखिरकार, मुंशी दयानन्दन के सखा म साबी के बारे में बड़े सोच विचार और बहुत कुछ बहस-मुबाहसे के बाद उन्होंने तय किया कि बूखी धारी की जाय तो किसी विधवा ही से की जाय। परवाल खासकर चाची विधवा-विवाह के बहुत खिलाफ थीं। इस तरह की चीज घर में पहले कभी न हुई थी। बिरादरीबासे क्या कहेंगे! नाक कट जायगी! लोग कहेंगे बकर कोई ऐश है लड़क में तमी तो कुँआरी लड़की नहीं मिली बिरादरी में कर्ना क्यों करता विधवा लड़की से ब्याह। चाची उन दिनों नबाब के साथ ही कानपुर में रह रही थीं और नबाब कुछ दिनों से नाबुल तबीयत के, म्ने छत्रपुर मुंशी मौजतराय नबर और एक ब्रह्मराजिन के साथ दयानन्दन साहब के घर के पास ही मकान बठर रह रहे थे। हर रोज घर में साबी का मसमा छिड़ता और इसी तरह की बातें होतीं। कमी-कमी तो नबाब की तबीयत इतना ब्याबा मित्रा जाती कि वह धारी से बाब आने की बात सोचने लगता। लेकिन कुछ तो उम्र का तकाबा और कुछ उसकी घरेलू बंधन की तबीयत साबी कर कना ही उसने तय किया। लेकिन अयन इस इराद पर वह अटक था कि विधवा ही से धारी करेगा। बूखों की मुँहरेखी मैं नहीं कर सकता। मुझे जो बात ठीक मालूम होती है, वही मैं कसैसा बिने धरीक हाना हो हो न होना ही न हो।

तमी संयाग से एक रोड नबाब की नबर किसी बखवार में शायद बरेली के जार्जसमाजी चंकरलाक भोपिय के पर्बे में छन हुए एक इस्तहार पर पड़ी जिसमें लिखा था कि मौजा ससेमपुर डाकखाना कनवार बिजा फ़ोहेपुर के कोई मुंशी बेबीप्रसाद अपनी बाक-विधवा कन्या का विवाह करना चाहते हैं और जो सम्मत पाहुँ इस विषय में उत्तय पत्र पर पत्र-व्यवहार कर सकते हैं।

नबाब ने ड्रैरल उस पत्र पर उत्त लिखा। उसके जबाब में उत्त के माथ पचीत तीस पत्रे का एक किताबबा आया। यह किताबबा अगर और किसी बजह से नहीं तो अपनी सेपन पीसी के कारण एक याक के और बहुत रिक्तवस्य दस्तावेज है। लेकिन और भी बड़ी बात यह है कि उसका बहुत मजे की रोसनी उत कायस्य

समाज पर पड़ती है जिसमें नवाब का जन्म हुआ जिसके बीच बहू पला-बड़ा और जिसके माध्यम से उसने सबसे पहले हिन्दू समाज के मसलों को समझा। जिस समाज के अन्दर से यह बस्ताबज पैदा हुआ वहीं नवाबराय का पहला और बुनियादी समाज है। वहीं उसकी उबान है और वहीं उसके सोचने-विचारने का ढंग। बाद में उसकी निगाह भी फेरी और उसका समाज भी फेरा ठाहम उसकी बुद्धि में यही समाज था।

क्रिस्ताब्दे पर उसका नाम लिया है, कामस्य बास विषया उज्जरक और उसके मोचे यह इबारत है—मूल गुपनाम द्वारा छिहित जिसको मुंशी मजाबर प्रसाद नायब माखिर बीबानी ने यूनिवर्सल प्रेस इलाहाबाद में छपवाकर प्रकाशित किया। १९५१।

मुल्ल नाम से निताबके को लिखना और एक अजीब के नाम से उसको छपवाना यह सब कार्रवाई भी उन्हीं मुंशी देवीप्रसाद की जो अपनी बास-विषया कम्पायिबरानी का पुनर्बिबाह करना चाहते थे। यह मुंशी देवीप्रसाद अपने नाँव के एक बहुत प्रभावशाली व्यक्ति थे। पैसा तो कुछ चास न था मगर इरादत बहुत थी। रिमास तो वैसा ही पाया था जैसी कि कामस्य खोपड़ी मगहूर है मगर साथ ही निबाज में कुछ ठाकुरों वैसा भक्तकृपण भी था। बर्बन कड़ियल मादमी थे। बहुत धारीऊ, पुराने ढंग के बजादार, न तो खुद किसी से बेअदबी करते थे और न किसी की बेअदबी बर्बाद करते थे। बोस्ती की टेक निमाता भी जानते थे और कुस्मन को नेस्त-नाबूह करने में भी पीछे न रहते थे। उनके तीन सड़के थे और दो लड़कियाँ। दोनों लड़कियों का ब्याह उन्होंने छूटपन में ही बस-भ्यारूह चास की उम्र तक पहुँचते-पहुँचते कर दिया था। कुस्मत का खेल कुछ ऐसा हुआ कि छोटी लड़की चिकरानी ब्याह के तीन महीने बाद ही विषया हो गयी। न तो वह पति के घर गयी और न उसन पति का मुँह देखा मगर फिर भी वह विषया पी और यह उनकी बिल्ली का सबसे बड़ा धम था। माँ-बाप वालों अपनी इन बर्नी का मुँह बेगने और कसेजा धाम लेते थे। माखिरकार बहुत पछोपेसा क बाद वालों ने अपने मन में इन बात का फ़ैसला कर लिया कि हम अपनी बेटी का ब्याह फिर से करेंगे। माँ भी यह काम आसान नहीं है पपपन बरस पहले तो वह बजाबत से कम न था। लेकिन मुंशी देवीप्रसाद अब इस बजाबत पर आमादा थे। अपनी बेटी का कुछ उनसे देना न जाता था। होना समाज का विरोध उठकर होगा—हो। जो होना देना जायगा। एक बार फ़ैसला कर सने पर पीछे कदम हटाने-वाले मादमी मुंशी देवीप्रसाद न थे। बिरादरी का एक-एक मादमी हमें छोड़ दे, तो भी यह ब्याह हाया। और थोड़ी-छिन न होगा इरादत बँटवाकर होगा। सब



सोप जान जायें कि मुसी बेबीप्रसाद अपनी विधवा कन्या का विवाह फिर से कर रहे हैं।

लेकिन इसके लिए जरूरी था कि सबसे पहले इस काम के लिए जिन्हा तैयार की जाय। मुझसे मैं कूलने के पहले अपने नासबाब सब ठीक कर देने चाहिए ताकि बाब में बगैर न झगड़नी पड़े। इसी खयाल से यह इस्तहारी पर्चा हिन्दी और उर्दू में तैयार किया गया और उसे काफ़ी बड़ी संख्या में छपाकर दूर-दूर तक भेज दिया गया। जिसे एतराज करना हो करे आये हमसे बहस करे, या तो वह मुझे जवाब कर दे कि मैं उल्टा काम कर रहा हूँ या मैं उसे बद-गुण और घातकों की गवीर देकर कामल कर दूँगा कि ठीक बात यही है बाकी सब तो पोंया ब्राह्मणों का खेल है।

किताबचा बिक्रकुक भार्यसमाजी अन्दाज में अंमठसत् के साथ झुक होता है और उसी रंग में आगे बढ़ता है—

● प्रार्थना पत्र खिबमत में सब भाइयों कायसब बिभगुणबंदी के पहुँचकर सुधोमित हो परमारमा रोख-ब-रोख तरफ़की देवे।

बरकनासब बासे सुधार करने चाक चलन ब्योहार जो कानिक सुधार करने के है कि जो न सुधार चाक चलन करने से महापातक होता है कि सब भाइयों को मामूम है और देखते हैं घास्रोक्त प्रमाण व बेबासासुसार सब भाइयों के सामने इस पत्र हाथ प्रकाशित करता हूँ अपने-अपने ज्ञान बुद्धि से ध्यान देकर उनके सुधारने में बिक व जान से मुस्तीब हो जाए।

हूँ मेरे प्यारे ज़ौमी भाइयो कायसब बिभगुण बंदी बर घ्यान देकर मुनिए कि पद्य पुराण एक प्राचीन पुराण व मुस्तलिब किताब है जिससे साबित है कि बाबा बिभगुण पुस्या जाने मूरिस बाबा सब भाइयों के हैं और जब से सृष्टि की रचना हुई बदबारि महाराज बर्मराज के न्यायफाटी व आमाक नेक व बब जो वीसा काम करणा है तहरीर करमाया करते हैं वा उसी के मुताबिक सदा व बजा जाने स्वर्ग व नर्क तजबीब फ़मति हैं। × × × ×

उन्हीं बाबा बिभगुण जी के पुष्य व प्रताप व आधीबाब से सब उनको जीवाहें कि जिनके संतान व बंस में सब भाई हैं बैरबिघा का पछन-याछन करने रईं श्रेष्ठ कहलाते रह व बकत महापज क्षत्रियों के राज्य समय में काय व बग माई अपनी बैद बिघा व बुद्धि की क्षियाकृत से बड़े-बड़े जोहदों पर (म्यायाबीध) व राज्य कार्य के मंत्री व बीबांन मुहूरर होते रहे और राज्य का इन्तिबाम माफ़ूल करते रहे कि सबसे श्रेष्ठ व लायक समझे जाते रहे।

समय के ससट-फेर से कि जमाना तरफ़की का हमेजा किसी का एक ही तरह

पर नहीं कायम रहा है काम बन्ध भूमा करवा है राज्य हाथ से जाता रहा पाप कर्मों का प्रचार होता गया। •

समाज का बराबर पतन होता गया और उसमें कोई सुधार इसलिए नहीं होता कि लोग बस अपने स्वार्थ के बन्दे हैं किसी को अपने समाज के मले-दुरे की चिन्ता नहीं है और हैं तो बस संबी-बौड़ी बातें कम्पनी कुछ और करनी कुछ —

बाबबा शाहूँ व इन्हों व नामी मुकामात में कौमी समा व कपटी व कार्मण्य वास्ते बर्मे की रखा व कौमी बाल बलम ब्योहार व पीति रस्म के दुस्स्ती क किए पास्बोक्त प्रमाण से मुहुरेर फरमाया है और वही ब्याख्यान व लेखर बर्मे सबवी बिये जाते हैं। और इस बलसा समा में सब भाई बैठकर मुनते है और सत्य-सत्य कहते हैं ही में ही गला मिकाते है और उन ब्याख्यानों के समक करने का न ब्याख्यान देनेवालों के दिनों पर असर रहता है न ब्याख्यान सुननेवाले के दिख पर असर पहुँचता है। यह तो मघहुर बात है कि अब तक कोई नसीहत याने उपदेश देनेवाला उस नसीहत व उपदेश का मामिल न होगा अब तक करनेवाला सुननेवाले के असर दिख पर नहीं पहुँचता कि असक करे वह यह कहता है कि बुदय ऊँचीहत व बीपर्य नसीहत कटौ है। बस हे मेरे प्यारे भाइयो अब समा बिसर्जन करके थोटा बस्ता भाई साहेबाग बाहर सचरीक काम हा न अब ब्याख्यान की सुब है न उसके ध्यान की खबर है

और भाबिरकार इस सबका वही नतीजा हुमा जो होना वा सापी बेती किरकिरी हो पयी अब —

न वह बूट जूटा है न कोट फलून है न मुकूबंद है न टोपी पेटारीबार वस्तार है बस्कि रय्यार है पीरों में सार है यामाबीस्त से बेबार है बर की हस्त्य कहना बनुचित प्रभारमा रसापाल है बिककार बिककार बिककार माख नू माख नू माख नू बमध्य पर है

इतमी कामत-मकामत के बाद जो कि सब पेयबन्दी है, जिवाबबा सबक बात पर जाता है—

• हे मेरे उवाठीम भाई कायस्य बिनगुण्ट संघीक्याबाप क्लेग अपने-अपने प्रयत्न बनों से यह न देखते होंकि कि बिन कम्पार्मों का बिबाह हो गया है और दिरागमब याने पीना नहीं हुमा पति याने पीहर उनका मर गया है तो वह बाल बिबवा बेचारी नाटर्ने मुनाह अपनी-अपनी बिन्दयी किन्त-किन्त मुसीबत से काटती है इसरे वह कम्पार् कि बिनका बिबाह और दिरागमन दोनों हो गया है बहुत ही पांके दिन के बाद पति उनके कर गये हैं। कुछ भी बिन्दयी का लटक नहीं उअया यही

तक कि सन्तान उत्पन्न होने की नीयत नहीं। तो उन बच्चारियों की मुसीबत कहने में नहीं आ सकती है। उनका घर में रहना माइका क्या ससुराळ दोनों ही बगह के सहकृदुम्भी माता व पिता व भ्राता सब पर पहाड़ का ऐसा बोझ भार सिर पर माकूम होता है। घरक कि दोनों किसिम के बाल बिलबा कन्या कि बिनका बिबाह मात्र हुमा है विरगमन नहीं हुआ और घास्न के अनुसार उनका कन्यात्व गप्ट नहीं हुमा बह निमिल क्वारी कन्या के हैं। हे मेरे भाइयो जीव करने से माकूम हुमा है व देखने में आया है कि उन कन्याओं दोनों किसिम की कि कुछ तो मुसीबत बाले-गिने से कुछ सतसम पाकर कुछ काम के बस होकर कि कामदेव बड़ा बडी छंटान है मतिभ्रम कर देता है कि बड़े बड़े मुनियों और महारमा के हृदय में ध्योम कर बिया है और मला इन अबबामों की क्या बिनती है ब्यभिचार करने मगती हैं याने बहुतों का कस्बी हो जाना और बहुतों का घर ही में बरबकन हो जाना व बहुतों का अन्य पुरख बिरख बर्न याने दूसरे बाठ के छाष निकल जाना बहुतों के हूमक-हराम रू बाना व उसका इसकाठ हुमक कयना बालक का मारना बरीरा बरीरा कहीं तक कहा जावे बड़े-बड़े मोर पाप होते हैं व हो गये कि मुनि अब नरकहु मक सकोरी। संसार में कश्चिमाही बस्कि पुष्टों तक का ऐसा बाघ पम्बा कग बाठा है कि उसका मिटाना बहुत कठिन हो जाता है।

(अर्थात् बाल बिलबा कन्याओं की) हे मेरे सजातीय कायस्थ बिभगप्यबंदी आप सोच गीर करके बिबा पक्षपात के ईसाक कीबिए कि बह किसी पुरख की स्त्री मर जाती है तो वह पुरख बो-बो बपबा तीम-तीत बिबाह कर केमे का अधिकारी होता है और हम बाल बिलबाओं ने जो पति के पाठ तक नहीं गयी हैं और पति का मूह तक नहीं देखा है पुनबिबाह हमारे करने में आप सोच छज्जा व घुषा करते हो क्या पुरख को नाम प्रबळ अधिक पताता है और हम काम को जीते हुए हैं। हे भाइयो हम स्त्रियों का नाम ही नागिनी है। बरक दास्न से बाहिर है कि पुरख से दुगुण अधिक काम अभि स्त्री के होती है •

इसने बार फिर श्रुत, यजुर्वेद बधिष्यस्मृति नारदस्मृति प्रजापतिस्मृति कात्यायनस्मृति मनुस्मृति बादि सास्त्रों से प्रमाण पर प्रमाण कुटाय गये हैं कि किन किन बसाओं में बिबा का पुनबिबाह सम्भव है उचित है।

मबाब ने इस इत्तहार को पढ़ा तो उसकी तबीयत फड़क पठी इस सवाल पर खुद उसके बिचारों से यह चीज किना मेळ जाती थी। उसने प्रौरण लड़की की छोटी की क्रमाश्च की।

देहाट में तसबीर उतरवाने का तब कहाँ बचन मगर और मुंशी देवीप्रसाद ने अपनी सड़की भी तसबीर उतरवाकर कानपुर भेजी — सीधी-साधी दुबली पतली एक देहाती सड़की बाघ बिचरे हुए, माथे पर हल्का-सा धूपन। गालुमी रंग जो नबाब के तपे सोने जैसे रंग के मुझाबळे में काफ़ी बबा हुआ था नाक-नपया भी बहुत मामूली कोई कास घात नहीं जब कि नबाब पक्रीमन् दस-माँष ह्वार से एक खूबसूरत मौजवान था। लेकिन उसे मुन्दरी की तलाश न थी — उसके मजरे उदने की सक्त भी उसमें नहीं थी! बह तो एक सीधी-साधी घरेलू सड़की बाहुला था जो उसके संग तकलीफ़-आराम होत सके। यह सड़की बहाँ तक देखने में आता था बँसी ही थी। मुंशी दयानरयन से भी छापद मघविरा हुआ और फिर नबाब ने अपनी रजामन्दी भिस्त भेजी। अब मुंशी देवीप्रसाद ने सड़के को देखने की ग्वाहियत बाहिर की और उसे फ़तेहपुर बुलाया। नबाब पहुँचा। ससुर से भी बामाब को परसद किया। स्यादा अब तय करने के लिए था भी क्या। सेन-सेन की कोई बात ही न थी। साधी उसी बस तय हो गयी। दोनों पल समझ रहे थे कि उन्हें अपनी-अपनी बिचदरी का बिरोध सहना पड़ेगा और दोनों तैयार थे।

साखिर १९०६ के फागुन में शिबरानि के रोख खादी हो गयी। नबाब के साज बाघत में एक सतके छोटे माई महलाब को छोड़कर और कोई रिस्तोदार न था बस दो-चार दोस्त और हुमजोमी जिनमें मुंशी दयानरयन कास थे।

चिन्तनी का एक नया दौर शुरू हुआ। उधर जर्मनी की चिन्तनी का भी एक नया दौर शुरू हो रहा था। बिहाजा बोस्वॉ की मह महकिल्ले जब सिर्फ हॉसी-मजाक या घोर-भो-सायरी तक सीमित न रह गयीं। पहले भी ऐसी कोई ड्रैम न थी जब तक राजनीति की बम्बीर बर्बा भी हो जाती थी। लेकिन अब वह रंग सासकर मुंशीजी की बजह से कुछ और रमावा उमरने लगा। दूसरे जहाँ अपनी कविता और साहित्य बर्बा में ही पूरी तरह रम केते थे वहाँ मुंशीजी को रीन न आता जब तक कि वह अपने देश की और संसार की बटमारों से भी पूरी तरह संपर्क में न रहे। अक्सर पढ़ने और बहुत से अक्सर पढ़ने का उनका मर्ब पुराना था। और फिर वह अक्षर 'रफ्तारे बमाना' नाम का स्तम्भ भी लिखते थे। बमाने की रफ्तार इस व ठ सचमुच बहुत तेज थी। देश एक नयी करबट न रहा था — वैस ही जैसे अपने छोटे से पैमाने पर खुद मुंशीजी की चिन्तनी उनका रिश्त-रिमाज एक नयी करबट से रहा था। राष्ट्रीयता की बेतना में एक नया प्यार आ रहा था और इस नये प्यार को बिन लोगों ने अपने खून की गर्मी और खानी में सबसे पहले महसूस किया उन्ही में एक मुंशीजी भी थे।

बात सिर्फ इतनी न थी कि उस बेतना का व्यापकतर विस्तार हो रहा था। उससे भी बड़ी बात यह थी कि वह बेतना ही बरकने लगी थी उसके भीतर एक गुणात्मक परिवर्तन आ रहा था। उसको समझने के लिए उसकी पृष्ठभूमि को बोझा सा समझ लेना पड़ती है।

१८५७ का विद्रोह अपने ही आन्तरिक विरोधों के कारण असफल रहा और अपने ही खून में डूब गया। इरीज पञ्चीत बरस के लिए लक्षमण पूरी तरह सप्ताटा छाया रहा। बहादुरियों के आन्दोलन की तरह छिपुन कुछ कोशिशें यही-वही हुईं लेकिन ब्रिटिश साम्राज्य का पजा परा भी बीता न हो सका। लेकिन भारतीय भले न बोल सकें प्रकृति ने बोलकर बतलाया कि वह सिबसिबा एमठ है और बलनेवाला मही है कि एक देश के खूनेवाले दूसरे देश के खूनेवालों पर राज करें। अकारणों का ताता लम गया। करोड़ों लोग मूगे से मर गये और मरने रहे

## इज्जत का सिपाही

और सरकार अपनी टीमटास में खरा पाणी की तरह बहायी रही। बसमब वा कि ऐसी हासत में बेस की आत्मा धुल्ल न होती और डंग से झिन्वा रहने की कोई तदबीर न करती।

१८७३ में आत्मन्वयोहल बन्धु, गुरेफ्तनाप बेनर्जी और इटली के स्वातन्त्र्य-युद्ध के नेता मैडिनी व रोरीबास्की के जीवनीकार मोनेत्र बिद्यामूपन ने मिलकर इण्डियन एसोसिएशन की स्थापना की। समय की माँग के रूप में ही उसका जन्म हुआ था इसलिए स्वाभाविक था कि उसकी ताकत तेजी से बढ़ती। और बड़ बड़ी। बगाछ के अनेक देशप्रेमी उसकी ओर खिंचे। १८८२ में बकिम का आत्मन्वमठ प्रकाशित हुआ जिसमें आगे चलकर देश की उसका बन्देमातरम गान बिना।

इण्डियन एसोसिएशन का जोर इतनी तेजी से बढ़ रहा था कि राज्य के गोरे अधिकारी निमित्त हो उठ। सबाल वैदा हुआ कि कैसे उसका सामना किया जाय। एक रास्ता तो कठोर बयान का था। मैकिन १८५७ क बाद फिर इतनी बस्ती वमन का बह रास्ता अतिथवार करने में अधिकारियों की तबीयत कठप रही थी। नतीजा हुआ कि राष्ट्र की शक्ति को बाँटने और उसे घासकों की सुबिधानुसार मर्यादित रखने क विचार से अंग्रेज सरकार के परामर्श से सन् १८८५ मे इण्डियन नैशनल काँग्रेस का जन्म हुआ। और बह काम काँग्रेस ने अपने आरम्भिक कई बर्षों तक किया भी जिस लौक पर उगे चलाया गया उसी लौक पर चली। लेकिन बह सदा न तो हो सकता था और न हुआ क्योंकि देश की बेतला जब एक बार अपनी मात्रा आरम्भ करती है तो सदा मेड़ बचाकर ही नहीं पला करती। लेकिन उन बात को अभी कुछ बेर है। अभी तो देखने की बीज एक ही है। एन आम्बत प्राचीन इतिहास दर्शन और संस्कृति की गौरवशाली परम्पराबामा दन जो इस समय पराश्रित था अपमानित था ठिरसूठ था बर्षित था अपने को फिर से पहचान रहा था अपना भविष्य खोज रहा था। अपनी इस खोज में बह कनी इस और कनी उस दरबारे को बन्दबटा रहा था। देश की बन्दी किन्तु अपराधय आत्मा अपने को बाकी देश के लिए छटपटा रही थी।

इस समय जो कुछ हो रहा था सबका सम्पर्क यही था। अपनी शक्ति को पहचानो अपने प्राचीन गौरव को पहचानो। तुम्हारे पास ऐता भी कुछ है जो किसी के पास नहीं है। तुम किसी से बटकर नहीं हो। आत्मकिराबाम से बड़कर डूमरी काई शक्ति संघार में नहीं है। तुम्हारी बेह गूँजसित है तो क्या तुम्हारी आत्मा मुल्ल है। देह तो धीज जाती है, मर जाती है—बसक बीज आत्मा है। आत्मा बजर है। आत्मा बजर है। भाग उसे पला नहीं सकता धरुन उसे काट नहीं सकते। देह तो जीर्ण बरन के समान है। मनुष्य जिस प्रकार जीर्ण बरन स्वामकर

नया वस्त्र धारण कर लेता है उसी प्रकार आत्मा एक देह को छोड़कर दूसरा देह धारण कर लेती है। फिर मृत्यु का क्या भय और पराजय बँसी। देखो अपने दर्शन को और अपने इतिहास को। न जाने कैसे-कैसे पराक्रमी विजेता इस भारतभूमि में माये और काष्ठ के नरत में समा गये लेकिन भारत आज भी जीवित है।

विजेकानन्द ने जब १८९९ में अमरीका जाकर सर्व-धर्म-सम्मेलन में सब को परास्त किया और भारत की दुष्ट आत्मा का बाणी दी तो भारतवासियों की छाती मर्ब से फूट उठी उनका कूत कुछ और खेबी से दौड़ने लगा जैसे चमकने लगी। विष्णुकुच जादू का-सा बसर हुआ। देखते-देखते विजेकानन्द के छेस और मायन देश की स्वाधीनता चाहतेवासे हर युवक के लिए एक नयी पीठा बन गये। देश के मुत्साये हुए प्राण कहकहा उठे। हीनता की पन्थि कटी। आत्मगौरव लहरें मारने लगा।

उत्तर कांग्रेस गोल्ले दादाभाई नौरोजी मदनमोहन मालवीय और श्रीरामसाह मेहता जैसे लोगों के नेतृत्व में अपनी बँबी सीक पर बनी जा रही थी। जन मान्दोलन से उसका कोई संबंध न था। सास में एक बार अधिवेशन करके सरकार से अपना कुछ दुसड़ा रो किया जाता और कुछ समाज-मुपार की बात कर दी जाती और लगे हाथ बहुत बड़े स्वर में कुछ यह माचना भी कर दी जाती कि राज्य संचालन में भी योग देन का कुछ बबसर भारतीयों को दिया जाय। और फिर सब अपने-अपने घर बसे जाते सास भर के लिए छुटी हो जाती। कांग्रेस के जन्म से लेकर १९५ तक की कांग्रेस कार्यवाहियों का सार देते हुए कांग्रेस के अधिकारी इतिहासकार पट्टाभि सीतारमैया स्वयं कांग्रेस के इतिहास में लिखते हैं—

कांग्रेस प्रस्थाओं पर जो मापण होते उनकी और अध्यात्म के मापणों की देक यह होती कि अंग्रेज जाति मजठ न्यायप्रिय और भली है और अगर उसे स्थिति का ठीक-ठीक पता बराबर मिळता रहे तो वह जमी सत्य और न्याय के रास्ते से निरुद्ध नहीं हो सकती कि असल कठिनाई अंग्रेज को संकर नहीं बल्कि एम्बो-इंडियन को लेकर है कि बुराई स्थिति में नहीं ब्यबस्था में है कि कांग्रेस बुनियादी तौर पर ब्रिटिश राजमिहासन के प्रति बक्रदार है उसका हागड़ा ता हिन्दोस्तानी नौकरराही से है कि इंपरीयल का संविधान (संसार के) एमी स्वानो के जन तनात्मक अधिकारों का माधय-स्वक है और इंपरीयल की पासिपामेक संसार भर के जनत-धों की माँ है कि ब्रिटेन का संविधान सब संविधानों में पठ है कि कांग्रेस राजबोहात्मक या बारी संस्था नहीं है कि भारतीय राजनीतिज्ञों का नाम स्वभाबत सरकार की बात की जनता तक और जनता की बात को सरकार तक पहुँचाना है

कि भाषीयों को राज्य-संभारण के काम में योग देने का इससे अधिक अबसर देना चाहिए

स्पष्ट है कि देश के भीतर जितना शोभ और जितना उत्साह संचित हो रहा था उसकी समेटन के लिए इतना काफ़ी न था। ऐसे ही समय में भारतीय राजनीति में बाल गंगाधर तिलक का उदय हुआ और आठे ही आठे गोलमे से उनका टकराव हुआ। यों वा कांग्रेस की राजनीति में गोलमे और तिलक दोनों का आगमन सन् १८८९ में एक साथ ही हुआ था और जैसा कि तिलक ने गोलमे की अस्पेक्टि के समय कहा था गोलमे को राजनीति में से आगे के पीछे स्वयं तिलक का भी हाथ था। लेकिन इस समय की काग्रसी राजनीति का साथ दिया मेरु खाने के कारण गोलमे की स्थिति कांग्रेस संगठन में सुदृढ़ हो गयी और तिलक बाहर-बाहर जनता में काम करते रहे और अपनी जन-राजनीति की सम्भावनाओं को टटोलते रहे। और जैसे ही उनकी पकड़ कुछ बढ़ी वैसे ही उनकी सबसे पहली टक्कर पोखर से हुई। वास्तव में गोलमे और तिलक की टक्कर और बातों का साथ-साथ एक मन की दो बृतियों की टक्कर भी है। वेग को उसका प्राप्य कैसे मिलेगा पान्थि से विरोह स जन-आन्दोलन से या सुसह-नमतीति से? पहला महत्व किस चीज का है, समाज-सुधार का या स्वराज्य का?

यह सवाल बहुत लीखे रूप में पहली बार पूना के कांग्रेस अधिवेशन में सन् १८९५ में उठा और संभवतः तिलक की ही विनापीकता से। लेकिन सब तो यह है कि इस सवाल की जड़ें कांग्रेस के काम में ही थीं। ऐंग्लेन मार्कटबिन ह्यम ने उसकी परिकल्पना समाज-सुधार की एक संस्था के रूप में ही की थी लेकिन पीछे साईं बर्ट्रिन के कहन पर उसे राजनीतिक रूप दिया गया क्योंकि दापत्र इसी में उसकी उपयोगिता देखी गयी। सनूक्त प्राल्त के गबनर सर मार्कसेण्ड कार्लिन को संभवतः इन तथ्य का पता नहीं था जब उन्होंने कहा कि कांग्रेस को समाज-सुधार तक ही अपने को सीमित रखना चाहिए। इससे प्रकट है कि कांग्रेस के लिए यह प्रश्न नया नहीं था।

गोलमे आदि मरमदली शोभ राजनीति की बात भी ऐसे स्वर में कर सेतु से लेकिन उनका आग्रह समाज-सुधार पर था। इसी सम्पर्क में बहु लोग अंधी गिरा बीया इत्यादि का भी बहुत गुमगान करते रहते थे। तिलक को इस राजनीति से मौनिक विरोध था। बाल-विवाह का रोकने के लिए जब एक आज कन्सेप्ट बिल आया १८९१ का आशवास तो तिलक ने डटकर उसका विरोध किया। इसकी बजह में लोगों को उनका बारे में काफी चर्चा-उत्तही भी हुई और यह समझा गया कि समाज-सुधार के मामले में तिलक का दृष्टिकोण बहुत सनातनी हिम्नू का है।



केकिन बात यह न थी। उनके विरोध का कारण यह न था कि वह बाल-बिवाह के पोपक से बल्कि यह था कि यह सब काम खुद हम भारतीयों के करते के हैं अंग्रेज शासकों को इस सबसे क्या मतलब। हमें जो ठीक समझ में आयेगा हम करेंगे। अभी उमर हमारा कहना बस इतना है कि आप सासन हमारे हाथ में बीजिए। असल प्रबल स्वराज्य का है। इस प्रश्न को दूसरे प्रश्नों के साथ उलझाए मत। असल सवाल आजादी का सवाल पीछे न पड़ जाय इसीलिए तिलक का कहना था कि इन सब सवालों को उठाने का बन्ध यह नहीं है। अंग्रेज पहले मही से जायें और सत्ता हमारे हाथ में आये फिर हम लोगों को शिक्षित करके और पुरानी ज्ञानून बनाकर, अपनी सामाजिक और आर्थिक बुराईयाँ दूर कर देंगे। जबर शासकों की दिलचस्पी इन बातों में सामय इसीलिए थी कि इस तरह स्वराज्य का आन्दोलन पीछे पड़ जायगा। तिलक न इस बात को समझा।

यह नहीं कि तिलक अंग्रेजी शिक्षा-बीमा के महत्व को न समझते हों या उसे कम करके आँकते हों। अंग्रेजों के संपर्क से जो नयी रोशनी हिन्दुस्तान को मिली उसको भी वह समझते थे। अपने सार्वजनिक जीवन के पहले प्यारह बर्ष तिलक ने देश में अंग्रेजी शिक्षा के प्रसार में सहाये। इस बात को भी वह अच्छी तरह समझते थे कि देश की स्वतन्त्रता अंग्रेजी शिक्षा के प्रसार से ही आयेगी। इतना ही नहीं उनका और उनके सहकर्मी विष्णुशास्त्री चिपलूणकर का विश्वास था कि अंग्रेजी भाषा खेरनी के बूब की तरह बहुत पीष्टिक आहार है। निस्संदेह तिलक भारतीय जर्म संस्कृति और परम्पराओं के बहुत बड़े पोपक से मगर इसका साथ ही साथ वह यह भी समझते थे कि अंग्रेजी के आहार पर पककर देश क्या-बा ठेकी से स्वाधीनता की ओर बढ़ सकेगा। स्वराज्य की कल्पना भारतीयों के मन में बन सकी इसके पीछे भी वह प्रमान है जो अंग्रेजों के इतिहास और गणतान्त्रिक चिन्तन ने आने या बनाने उनके ऊपर डाला है। तिलक अपने मन से उस बात पर विश्वास करते थे जो मीकाक ने कही थी—

यह हो सकता है कि हमारी प्रजाती के अन्तर्गत रहकर भारतीय जनता का मन इतना बिकास कर जाय कि उस प्रजाती से आये निकल जाय वह प्रजाती फिर उसे अपने नीतर आबद्ध न रक सके कि यूरोपीय ज्ञान में दीक्षित होकर वह लोग कभी जाये जलनर यूरोपीय ज्ञान के आर्दन-ज्ञानून बनूर और रिवाजों की माँग करने कम जायें। ऐसा दिन कभी आयेगा या नहीं मैं नहीं जानता। लेकिन इतना मैं जानता हूँ कि ऐसा कोई काम मैं नहीं करूँगा जिससे वह दिन न जाये या उसके आने में देर सगे। जब भी वह दिन आयेगा अंग्रेज जाति क इतिहास का सबसे गौरवशासी दिन होगा।

लेकिन इसके बाद भी तिलक का बड़ा विश्वास था कि वसक और राजनीतिक शक्ति से मुक्त होना है स्वराज्य पाना है बाकी सब चीजें उसने बाद आती हैं। इसलिए राजनीतिक स्वाधीनता की बात प्रचार स्वर में करनी चाहिए। समाज सुधार क्रमहीन स्वयंसेवक रहे जा सकते हैं। कम से कम अंग्रेज शासकों से बात करने की चीज वह नहीं है। उनके साथ उसकी बात करना उनके जाल में फँसना है। और गोखले जैसे नरमरसी लोग यही करते थे। समाज-सुधार की बातें जो वह बहुत जोर-जोर से करते थे राजनीतिक स्वाधीनता के प्रश्न पर निगमनाते थे। इसी जगह पर उनसे तिलक का मुख्य संघर्ष था।

दोनों के इस मौखिक विरोध को गांधीजी ने बहुत अच्छी तरह समझा था और उन्होंने जिस प्रकार उसकी व्याख्या की है उसको रचना बहुत उपयोगी होगा विशेषतः इसलिए कि गोखले और तिलक की नीतियों का परस्पर विरोध भारतीय राजनीति के एक पूरे युग को समझने की कुंजी है।

१८९९ में जब गांधीजी पूना गये और दक्षिण अफ्रीका के भारतीयों की समस्या पर एक समावृत्त भाषाएँ देते थे तो उसके प्रसंग में वह लोकमान्य तिलक से और फिर उनके कहने पर गोखले से मिले। गांधीजी पर उन दोनों के व्यक्तिगत का प्रभाव जिस रूप में पड़ा वह उनको और स्वयं गांधीजी को समझने के लिए काफ़ी रोचक और महत्वपूर्ण है।

तिलक उन्हें हिमाचल के शिखर जैसे लड़े महान् उत्तुंग पर पास तक पहुँचना बुझाया और गोखले के पवित्र गंगा जैसे जिसमें इमीमान से डूबनी कपायी जा सकती है—

तिलक और गोखले दोनों महाराष्ट्र के दोनों ब्राह्मण के दोनों विद्वान् ब्राह्मण थे। दोनों ने जीवन में बड़े-बड़े त्याग किये थे। लेकिन दोनों के स्वभाव में बड़ा विचारान्तर था। उस समय की प्रचलित दृष्टिकोण में गोखले नरमरसी थे और तिलक गरमरसी। गोखले की योजना थी वर्तमान संविधान में सुधार करना तिलक की योजना थी उसका पुनर्निर्माण करना। गोखले को अनिर्वायत नौकरशाही के साथ मिलकर काम करना होता था तिलक को अनिर्वायत उससे कहना पड़ता था। गोखले का सिद्धान्त था सहयोग जहाँ तक संभव हो, और विरोध जहाँ आवश्यक हो तिलक की नीति बाधा छोड़ने की और लुकी लुकी थी। गोखले को सबसे बड़ी विन्ता शासन और उसके सुधार की थी तिलक का सबसे बड़ा ध्येय था राष्ट्र और उसका निर्माण। गोखले का आदर्श था प्रेम और त्याग तिलक का सेवा और कष्ट सहन। गोखले की कार्य-प्रणाली ऐसी थी जो विदेशी का हृदय जीतकर उसे अपनी ओर कर लेना चाहती थी तिलक की ऐसी जो

उसे बिस्मकुक हटा ही देना चाहती थी। गोखले दूसरों की सहायता पर निर्भर करते थे तिसक केवल अपनी शक्ति पर। गोखले उच्च वर्गों और बुद्धिजीवियों की ओर ताकते थे तिसक सामान्य जनता की ओर जिसकी सपना करोड़ों में थी। गोखले का मसाला भाग्यशास्त्री तिसक का संघ यौवना का मण्डप था। गोखले की व्यक्तिगतता का माध्यम अंग्रेजी थी तिसक की मराठी। गोखले का कल्पना या स्वायत्त धारण जिसके लिए भारतीयों को अंग्रेजों की बठापी हुई कड़ीटी पर धरे उतरकर अपनी योग्यता प्रमाणित करनी थी तिसक का कल्पना या स्वराज्य जो हर भारतीय का जन्मसिद्ध अधिकार है और जो वह लेकर खेना जिसके रास्ते में वह बिबेची सत्ता की किसी बाधा को स्वीकार न करेगा। गोखले अपने युग के साथ थे तिसक बहुत माये।

पापीजी तिसक के व्यक्तित्व के साथ शायद पूरा न्याय नहीं कर पाये और गोखले की ओर उनका हृदय-सा पक्षपात सपना है जो कि शायद स्वयं उनके मन के झुकाव को व्यक्त करता है पर तो भी इतना तो प्रकट ही है कि तिसक ने भारतीय राजनीति में एक नया स्वर लेकर प्रवेश किया। स्पष्ट है कि इस प्रकार की प्रखर राजनीति की कल्पना धर्म-आन्दोलन के बिना नहीं की जा सकती थी। इसीलिए हम देखते हैं कि तिसक ने आरम्भ से ही जनता को अपना और संगठित करना आरम्भ किया। इसके लिए धर्म को भी बाह्य बनाने में उन्हें कोई आपत्ति न हुई। १८९४ में उन्होंने मजपति उत्सव को एक विराट् सार्वजनिक मण्डल का रूप दिया जो तब से बराबर उसी प्रकार महाउत्सव मनाया जाता है। उसका कलेवर धार्मिक है और आत्मा राष्ट्रीय।

सैकिम उतने से ही तिसक को संतोष न हुआ। उसका अगल ही वर्ष से उन्होंने सिवाजी उत्सव की भी स्थापना कर ली। सिवाजी को मात्र एक हिन्दू क रूप में देना उनके साथ असह्य करना है। वह एक हीर मराठवा या जिसने मुगल बादशाह और अंग्रेज से मोहा लेकर सफ़रपूर्वक अपने राज्य की स्वाधीनता की रक्षा की। इस प्रसंग में यह बात छिद्र आत्मिक नहीं रह जाती कि सिवाजी की सेवा में मुसलमान भी थे और न यही कि सिवाजी-उत्सव में मुसलमान मराठे भी हिस्सा लेते हैं। कुछ भी हो जन-मता तिसक के लिए यह असम्भव था कि वह सिवाजी को केन्द्र बनाकर किसी उत्सव की बात न सोचते जब कि उनके सामन अपने देवताओं को बगाने और अन्धाय न अन्धकार के छिन्ना उनको सपष्टित करने का प्रयत्न था। स्वाधीनता के आन्दोलन की ये महत्वपूर्ण कड़ियाँ थीं।

इसके बाद क भीतर तिसक और मोगल क नेतृत्व में दो विरोधी प्रवृत्तियों का आपस में संघर्ष चल रहा था उधर भारत की विराटी आत्मा बुन पहचानकारी

राजनीति के रूप में भी प्रस्फुटित या बिस्फोटित हो रही थी जिसका सूत्रपात महात्मा के चापेकर बंधुओं ने किया। १८९७ में उन्हें फाँसी दी गयी। लेकिन यह तो अग्निपुत्र का प्राग्जन्म था जिसके ये दो पहले शहीद थे। इसी वर्ष शिबक पर पहली बार राजद्रोह का मुकदमा चला और उन्हें डेढ़ साल का कठोर सजा मिला। पर वह साल भर का दण्ड भोगकर ही बाहर आ गये। समय से पहले की इस रिहाई का कारण था वह आशेदनपत्र जो मीकसमुन्टर, सर बिलियम ह्यूट, सर रिचर्ड मार्श मि बिलियम केन बादाभाई गौरोजी और रमेशचन्द्र दत्त के हस्ताक्षर से सरकार के पास भेजा गया था। पर छूटते समय ही तिसक ने कह दिया था कि यह छ. महीने की छूट अगली बार मेरे दण्ड में जोड़ दी जाय अगर उसका अक्षर आये। और यही हुआ। १९ ८ में जब उन्हें माण्डले भेजा गया तो ये छ. महीने सजा में जोड़ दिये गये। यह सब इस बात की सूचना थी कि भारतीय राजनीति अब एक नये युग में प्रवेश कर रही थी। कांग्रेस के भीतर भी और कांग्रेस के बाहर भी। कांग्रेस के भीतर मोलले के नरमरूपी बल के मुकाबले में तिसक का एक्सट्रीमिस्ट या मीशनरिस्ट दल बढ़ी तेजी से जोर पकड़ता जा रहा था। रैण्ड और एमर्स्ट हत्याकाण्ड के प्रसंग में गोलमे ने सरकार से जो मांगी मांगी उसके पीछे जाहे बीसी सदाचयता रही हो उसने जनता में उनकी लोकप्रियता को अवरस्त बकफा पहुँचाया और "सी अनुपात में तिसक और उनके मीशनरिस्ट दल का प्रभाव बढ़ने का यह एक और तात्कालिक कारण हुआ। इसके साथ-साथ महात्मा से ही वह आम भी चली जो चापेकर बंधुओं ने लगायी थी और जिसने बंगाल पहुँचकर एक पूरे अग्निपुत्र की मृष्टि की। १९ २ और १९ ५ के बीच बंगाल में बहुत-सी मुक्त समितियाँ बनीं। और जब १९ ५ में कर्बन ने राजनीयता की इसी बढ़ती हुई लहर को रोकने के लिए बंगाल को दो टुकड़ों में बाँटने का बंधन का प्रस्ताव रखा तब तो बीसे देश में आग ही छग गयी। एक तरफ स्वदेशी का धार्मिकपूर्ण आन्दोलन शुरू हुआ और दूसरी तरफ अग्रह-अग्रह आन्ध्रकारियों की सरपमियाँ दिखायी देने लगी।

देश में आये जो धार्मिकपूर्ण राष्ट्रीय आन्दोलन चलनेवाला था बंगाल का स्वदेशी आन्दोलन उसकी पूर्वपीठिका थी। उसने सारे देश को सेहर छत्रमोर दिया और उसी से देश को वह सब राजनीतिक अस्त्र मिठे जिनका उपयोग राष्ट्रीय आन्दोलन ने आगे चलकर किया जिन्हें गांधीजी ने इसी स्वदेशी आन्दोलन से सेहर अपने हाथ पर बिजसित किया। ये राजनीतिक अस्त्र ये — स्वदेशी वस्तुओं को अपनाना और विभायती का बहिष्कार, निष्पक्ष प्रतियोग और असहयोग गन्धारी विद्यालयों का बहिष्कार और उनके स्थान पर राष्ट्रीय विद्यालयों की

स्वायत्ता सरकारी बहाकतों का बहिष्कार और उनके स्वात पर आपस में अपने पंच और मुक्षियों के करिये अपने सगड़ों का निपटाना।

एरब कि राष्ट्रीय आन्दोलन ने एक नयी करबट से सी पी और अब उसे आपस उस बँधी-टकी ढीक पर ल बसना संभव न था जैसा कि तरनपंथी चाहते थे।

उसी बर्ष १९५ में बनारस के काँग्रेस अधिवेशन में ही यह बात अच्छी तरह बिलामी हो गयी। काँग्रेस संगठन के भीतर तरनपंथियों का ही खोर था जो इस बात से सिठ था कि उस बर्ष काँग्रेस का समापित्व मोसले ने किया। पर मोसले के साथ म्याय करने के लिए यह मतलाना बकरी है कि उन्होंने अपने अख्यसीय नापण में निर्भीकता और सच्चाई से साहं क्लिटन के उस गुप्त पत्र का उद्घरण दिया जिसमें क्लिटन ने ऐसी बातें लिखी थीं जिनसे मोसले की अपनी नीति को खोल पड़ूँवटी थी और तिसक की नीति को बल मिरठा था। क्लिटन ने लिखा था —

हम सब इस बात को जानते हैं कि ये माँगें और ये उम्मीदें न कमी पूरी हो सकती हैं और न होंगी। हमें इन दो में से कोई एक रास्ता अपने लिए चुनना था — या तो उनका (हिन्दुस्तान के नेटिबों का) समन करना या उन्हें मोखा देना और हमने बाब बासा रास्ता ही चुना है जिसको सच्चाई से कोई मतलब नहीं है। मैं गुप्त रूप से यह पत्र लिख रहा हूँ, इसलिये मुझे यह कहने में भी संकोच नहीं है कि मेरी समझ में इंग्लैण्ड की सरकार और भारत सरकार दोनों ही अब तक इस अभियोग का कोई संदीबबनक उत्तर नहीं दे सकी है कि उन्होंने अपने हर पापरे को तोड़ने में अपनी सन्तिभर कोई कसर उठा नहीं रखी।

स्पष्ट है कि ऐसी परिस्थिति में जो जमता राष्ट्रीय आन्दोलन की ओर झुक रही थी उसका बहुत बड़ा बड़मत्त तिसक के साथ आटा जा रहा था जो इस बात से सिठ था कि स्टेशन पर गाँवले के स्वागत को गिने-बुम लोय पहुँचे थे और तिसक के स्वागत को लोग ऐसे टूटे कि स्टेशन पर तिसक बरने को बगहू न रही। और बही याही कि उतरते ही तिसक ने अपना नया भाव रिया जो छौरण लोनों की पबान पर बड़ गया — लड़ो — मीस मत मीनो।

साका काजपतरय ने अपनी पुस्तक संघ इतिहास में लिखा है कि बनारस में ही तिसक ने 'निष्किय प्रतिराब' की अपनी नीति प्रस्तुत की थी। और जमक बगले बर्ष कलकत्ता के अधिवेशन में उन्हान अपनी उस नीति की और भी बिराह ब्याख्या की जिस रूप में यह भाव की जागी और समझी और बरती गयी।

तिसक के राजनीतिक जीवन में बनारस का काँग्रेस अधिवेशन एक बड़ी मंडिरक है। इसके पहले अमरीका के पोरों और कम के टाख्यदाय जैसे विचारक

एक निराकार सिद्धान्त क रूप में निष्क्रिय प्रतिरोध की बात कह चुके थे लेकिन तिलक के पहले घामर किसी ने उसको इस तरह व्यावहारिक रूप देकर एक राजनीतिक अस्त्र की तरह जनता के हाथ में नहीं पकड़ाया था। इसी अस्त्र का उपयोग गांधीजी ने १९२ के बाद कई बार अलग-अलग नामों से किया।

बहरहाल राष्ट्रीय आन्दोलन अपनी लीक से हटकर एक दूरे, अधिक सशक्त रास्ते पर चल पड़ा था और उसका प्रभाव कांग्रेस के संगठन पर भी बाबजूर उस पर माइरेटों के आधिपत्य के पड़े बिना न रहा। १९ ६ में कलकत्ता कांग्रेस के अधिवेशन के मंच से कांग्रेस ने इतिहास में पहली बार स्वराज्य की माँग की घोषणा हुई। माइरेटों के लिए यह एक बड़ी हार थी — इसलिये और भी कि उनकी जाड़ को बिफुर करके तिलक की यह जीत हुई। कलकत्ता कांग्रेस के सम्मेलन पर के लिए अजिंकटा प्रदेशों से तिलक का ही नाम आ रहा था। लेकिन माइरेट किसी तरह इस बात को सह न सके तो उन्होंने तिलक के नाम को पीछे ढाकने के लिए एक ऐसे व्यक्ति का नाम सामने रक्खा जो अपनी सेवाओं और अपने बय बोलों ही दृष्टियों से सबका आदरणीय था — बादाभाई गौरीजी। माइरेट उनको अपना आत्मी समझते थे और बहुत हद तक बहु थे भी। लेकिन वह अनुभवी नेता भी थे और हवा का बख पहचानते थे। जिहादा उन्हें पूरी तरह तिलक क कार्यक्रम का साथ दिया और उन्हीं के समामित्त मं स्वराज्य की माँग कांग्रेस के मंच से पहली बार जोयित हुई। कांग्रेस के लिए उस समय यह एक बहुत बड़ा बहुत ऐतिहासिक कदम था।

सरकार न भी इस नयी स्थिति को समझा और उसका मुकाबला करने के लिए दमन की नीति का सहारा लिया। पुलिस का अत्याचार बहुत बढ़ गया। पंजाब में लाला लाजपतदास को गिरफ्तार कर लिया गया।

कलकत्ते के बाद कांग्रेस का अगला अधिवेशन नागपुर में होने की बात स्थिर पायी थी। नामपुर तिलक का पड़ था। नरमबली इस बात से बहुत उरे। वहाँ तो फिर तिलक की ही लूठी बोलेंगी और सम्मेलन बनन स भी उनको न रोका जा सकेगा। जिहादा नरमबलियों के नेता सर डीरोड दाह मेहता ने जिन्हें १९ ६ में बर्बन ने 'सर' का खिताब दिया था तिलक करके अपने अधिवेशन का स्थान नागपुर से हटाकर मुरत करवा दिया। नरमबली इस बात पर बहुत नापस हूए और ऐसी कुछ स्थिति पैदा हो गयी कि वह लोग कांग्रेस से अलग हा जायेंगे। लेकिन तिलक को यह बात मंनूर न थी कि कांग्रेस के भीतर पूरा पैदा हो। जिहादा भाव चलकर नरम दल के लोग इस आचार पर समझौता करने के लिए राजी हो गये कि अगर लाला लाजपतदास को जो मुरत अधिवेशन के पहले बल से रिहा

हो गये थे समापति बनाया जाय तो हम लोग अधिवेशन में सम्मिलित होंगे। यह प्रस्ताव रखने के पीछे उनका स्पष्ट उद्देश्य यही था कि इस तरह हम कांग्रेस की ओर से बेग के एक बिरोही नेता का सम्मान कर सकेंगे जो अमी-अमी बेच से घुटकर आ रहा है। नरमदस्तीयों ने ऊपर से तो हमारी भरी लेकिन भीतर ही भीतर अपनी पाक वेस्तें रहे क्योंकि वह किसी भी हाकत में छाका कागज़पत्रों को समापति बनाने के लिए तैयार न थे। उन्हें डर लगता था कि ऐसा करने से सरकार बहुत नाराज हो जायेगी।

आखिरकार अधिवेशन जुना नरमदस्ती नरमदस्ती सभी छसमें घरीक हुए। गोबसे भी तिष्क भी। लेकिन सभी नरमदस्ती वालों ने क्या किया कि कांग्रेस संभलन के भीतर अपने प्रमुख के बल पर उन्होंने नरमदस्ती के साथ अपने समझौते को मुकाफर समापति के आसन पर बंधाक के प्रसिद्ध सरकार-नरस्त नरमदस्ती नेता रासबिहारी घोष को बैठा दिया। यह चीज परमदस्ती वालों की सहनशक्ति के बाहर हो गयी। तिष्क ने अपना नाम समापति के पास भेजा कि उन्हें समा की कार्रवाई शुरू होने के पहले समापति के चुनाव के संबंध में कुछ करने का अवसर दिया जाय। समापति ने इस पर कोई ध्यान नहीं दिया। आखिरकार तिष्क ने हुनरा कोई रास्ता न देख जबलन मंच पर आ पहुँचने का फैसला किया। मंच पर उनका पहुँचना था और समापति का उनको बोलने से रोकना था कि जोरों से मारपीट शुरू हो गयी। और फिर वह अधिवेशन जैसा हुआ वैसा न हुआ। नरमदस्ती और नरमदस्ती वाली से बिस्कुट अलग हो गये दोनों का एक दूसरे से फिर कोई संबंध न रहा।

सरकार भी भारतीय राजनीति के इस बराबर गाड़े हँते हुए बिरोही रूप को देख रही थी। दमन की बबली और ठंड हो गयी। नये-नये कानून बन गये। नवंबर १९३७ में Prevention of Seditious Meetings Act लागू किया गया। लक्ष्मण इसी समय बंगाल में १९३८ का तीन भाग (स्क III) पुनर्परीक्षा कर दिया गया और उनके अंतर्गत बंगाल के स्वदेशी आन्दोलन के नेता इयाम सुन्दर चन्द्रवर्ती कृष्णकुमार मिश्र शशीश्वरप्रसाद शर्मा, अदिबन्दीकुमार दत्त जनता की ओर से राजा की उपाधि पाये हुए राजा मुबाब मलिक इत्यादि को पकड़ लिया गया और बिना उन पर मुकदमा चलाय उन्हें निर्वासित कर दिया गया।

मद्रिज जैसा कि रमापन्त दत्त ने कहा था राजशोह उलान करने का हमसे अफला कोई उपाय नहीं है कि पत्रों और समाजों में होनेवाले स्वतन्त्र विचार विमर्श पर राक मगा ही जाय। वही हुआ उय तत्व और प्रबल होने लगे। इपर कांग्रेस के भीतर नरमदस्ती का जोर बगबर बढ़ता जा रहा था और उबर

सन् १९०७ और सन् १९१ के बीच जातिकारियों की सरयमियों में एक प्यार-सा आमा हुआ था। १९८ में कलकत्ते में मछीपुर पब्लिक स्कूल में शिक्षण के दौरान धोप और दूसरे जातिवादी पकड़े और निर्वासित किये गये। बंगाल के गवर्नर की हत्या की चेष्टा हुई। कलकत्ते के पुलिस मजिस्ट्रेट किम्सफर्ड की हत्या की चेष्टा हुई। अमृतनगर के मेयर की हत्या की चेष्टा हुई। इसी तरह के और भी कई काण्ड हुए। राजनीतिक इकट्टियाँ भी शुरू हो गयीं।

वही कलकत्ते का किम्सफर्ड जब ठबलील होकर मुजफ्फरपुर आया तो १० अप्रैल १९८ को प्रफुल्ल बाकी (उम्र १७ साल) और लुदीराम बोस (उम्र १५ साल) ने मिस्रकर उसकी हत्या की चेष्टा की। उन्होंने किम्सफर्ड पर बम तो फेंका लेकिन वह बच गया और उसकी जगह मिस्र और मिस्र केमेडी नाम की दो अंग्रेज स्त्रियाँ मार-बेटी मारी गयीं। प्रफुल्ल बाकी ने वहीं अपने आपको योली मार ली। लुदीराम बोस भाग निकला और अपने दिन मुजफ्फरपुर में बीबीम मील की छूटी पर पकड़ा गया। ११ अगस्त १९८ को उसे छाँगी से घारा बेरा सिहर उठा। घर घर लुदीराम की पूजा होन लगी। अंग्रेजों की म्याद परदा और भारत के प्रति उनकी मंगलकामना के जा रंगमहल मरमदसी राज नीतिज्ञों ने इतने बरमों में इतने जनम से खड़े किये थे सब देखते-देखते लुदीराम के मुन में बूब गये।

अब दोनों पर आमने-सामने लड़े थे — मरकार हर तरह से कुचकन का पकड़ा इच्छा लेकर और किम्सफी बीर मर ह्येती पर किये शहादत का जाम निय हुए सब कुछ झेलने को तैयार।

१ अगस्त १९८ को भी अरविन्द ने बिनबे नाम की उम समय मारे देग में लुडी बोब रही थी अपनी पत्नी को यह पत्र लिखा जो विप्लवकारियों की तत्कालीन मन-स्थिति का परिचय देता है —

मेरा पागलपन यह है कि जहाँ हमारे भाग स्वयं को एक बड़ बसु मानते हैं कुछ खेत-नीशाल जंगल-महाइ-मही बहाँ में उसको माँ के रूप में देखता हूँ वैसे ही मैं उनकी मनि करता हूँ पूजा करता हूँ। माँ की छापी पर बैठकर अगर कोई रागस जमका रसपान करता हो तो उम समय बटे का क्या बर्तव्य है? निश्चित होकर आहार करता बैठे स्त्री-मुन के संग मानोश बरे या माँ को बचाने के लिए बौड़?

यह भाग बचकर जोर पकड़ती जा रही थी। भाये दिन यहाँ-वहाँ बम ब पड़ाके होते थे। राष्ट्रीय समाचारपत्र — जिनमें निम्न के बमरी अरविन्द



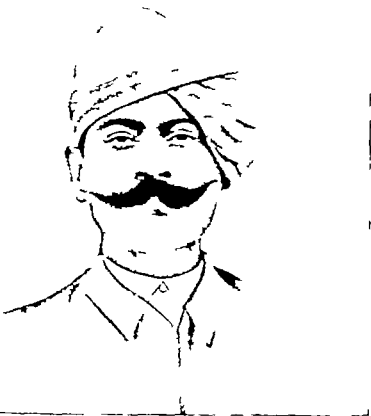
बोप के बन्धेमातरम और विवेकानन्द के अनुबन्धेमातरम बल के बुवातर का विशेष स्वाग वा — मजबूत भाग उभरते रहते थे। सरकार के किए बड़ी विस्फोटक स्थिति का सामना था। हमन की चक्की और भी तेज हुई। सन् ८, १९ ८ को एकसप्तीसिध सम्मर्तसुब (विस्फोटक द्रव्य) ऐक्ट और न्यूजपेपर (इनसाइडमेण्ट टु बाउन्डसेज) ऐक्ट लागू किये गये। प्रेस ऐक्ट की मार से कोई न बच सका और उसके अन्तर्गत सन् १ और सन् १९ के बीच साढ़े तीन सौ प्रेस तीन सौ मजबूत और पाँच सौ से ऊपर कितारों बन्द की गयीं। हमन की यह चक्की इतनी तेज चली कि भारत-संगी काई मासों तक उस पना न सके और उन्होंने भारतसयम मिष्टो को इस बीच के बारे में खत लिखा। मगर साथ ही यह भी लिखना न भूले कि आप वहाँ मौजूद पर मौजूब हैं, स्थिति को क्यास समझ सकते हैं मैं तो बस एक नेक सबाह दे रहा हूँ। जिसकी बकरत न तो बड़े काट मिष्टो को थी और न बंबई के छोटे काट सैम्बहस्ट को जो सचमुच स्थिति का समझ रहे थे। फिर मसा कैसे समझ था कि हमकी तरफार कप्रेस के भीतर और बाहर उप तर्कों के सबसे बड़े नेता तिलक पर न गिरती। १३ जुलाई १९ ८ को बंबई के हार्डकोर्ट में उन पर राजद्रोह का मुकदमा चलना शुरू हुआ और उन्हें जल्दी से जल्दी हिन्दुस्तानी जूरी के ईंससे के खिलाफ केवल अटैच जूरी के ईंससे के खोर पर छ साल का बन्द देकर चुपके-चुपके माण्डले (बर्मा) भेज दिया गया। उसके साथ भारतीय राजनीति का एक अत्यन्त महत्वपूर्ण युग समाप्त हुआ। पर तिलक को और उनके काम को भूलना तो दूर रहा जनता न उन्हें अपने हृदय में और भी गहरे बिठास किया। तिलक के बन्द के विरोध में बंबई के मजदूरों की अवर्तस्त हड़ताल हुई जो इस बात की भी सूचना देती थी कि मजदूर सिर्फ अपनी पगार की ही बात नहीं समझता देश की आजादी की बात भी समझता है।

तिलक छः बरस बाब माण्डले से छोटकर आये और फिर अपने उसी पुत्रने उत्साह से देश के काम में जुट गये। बहुत कुछ उन्होंने किया जिस दिन सबा पाच रवंगा लेकिन इसमें सम्ह नहीं कि भारत की स्वाधीनता की राजनीति को उसकी सबसे बड़ी देन जनक्य माण्डले जाने से पहले का युग है क्योंकि इसी युग में और विशेषरूप से सन् १९ ५ और १९ ८ के बीच अन्तर्मत और स्वदेशी के आन्दोलन की पृष्ठभूमि में राष्ट्रीय आन्दोलन को अपना स्पष्ट रूप मिला और उसे यह रूप देने में जिस एक व्यक्ति की देन सबसे बड़ी है उसका नाम है बाल गंगाधर तिलक।

राष्ट्रीय राजनीति क संवर्धन पर आकर तिलक ने कुछ ही बरनों में यह

को बिस्फोटक स्थिति पैदा कर ही थी उसका मुकाबला बरेल सरकार अपनी बुर्गी नीति से कर रही थी। उग्र विद्रोही तत्वों को मुचकने के लिए तो उसके पास इंडा-नोली भी जिनका उपयोग वह हथर बरमों से कर रही थी। लेकिन उसका काम पूरा होते न देख उन्होंने मरमत्तवालों और विधायकों को फतलाने के लिए वैधानिक सबिद्धारों की मृगमरीचिका दिखलानी आरम्भ की। १९०९ में मिन्टो-माले रिफ़ार्म्स प्रस्ताव के रूप में आये। उन्हें देखकर मरमत्तवाले बहुत बचाने लये क्योंकि उनके नज़रीक यह उनकी वैधानिक नीति की विजय थी। जैसे बूबडे को सहायता मिला और वह लोग बहुत जोर-शोर से ब्रिटिश साम्राज्य के अन्तर्गत औपनिवेशिक स्वराज्य की बात करने लये। जब ये रिफ़ार्म्स २५ दिसंबर १९१० को लागू किये गये तब ठिलक माण्डले में थे। लेकिन देना की शैतना को वह जैसा बनाकर गये थे साधारण जनता उसके जाल में नहीं फँसी। ठिलक ने जो शिक्षा दी थी वह भारतीय जनता के अन्तर्गत में बहुत सहारे जाकर बैठ गयी थी। उसे कभी मुझाया न आ सया।

क्या गुनाह है बेचारों का यही न कि वह अपने देश को आजाद देलना चाहते हैं? यह तो कोई गुनाह नहीं है। तभी देश आजाद होगा चाहते हैं। कौन चाहता है कि यहाँ आकर बिबेसी राज करें। आमरलैखवासे तो कितने ही मामलों में अंग्रेजों से इतने मिलते-जुलते हैं कि हम-तुम तो उन्हें अंग्रेजों से अलग करके पहचान भी न सकें लेकिन उन्हें भी इंगलैण्डवासियों की सरपरस्ती मंजूर नहीं हुई। वह भी अपने मुस्क की आजादी के लिए लड़ रहे हैं। इटली वाले अलग अपनी आजादी के लिए लड़ रहे हैं। अमरीका के अंग्रेज तो यही थे पाकर उसे वे यहाँ लेकिन जब उनकी अलग क्रौम धन मपी तो फिर उन्होंने भी इन्हें मारकर अपने यहाँ घ निकासना या नहीं। कम में भी तो इसी तरह का पुष्ट प्रतिबन्धी आन्दोलन है, वह नहीं चाहते बार का अर्याचारी घासन। कितनी अच्छी बात कही है तिलक ने स्वराज्य मेरा अग्रसिद्ध अधिकार है और मैं उसे लेकर पहुँगा। नौम होते हैं आप यह कहनेवाले कि हम अपने देश की जिम्मेदारी संभालने के काबिल हुए या नहीं? न हाँबि तो बेसी बामपी जो पड़ेगी हम पर हम मुक्त खेने आपसे कहने न बामपी! मगर नहीं यह सब तो कहने की बातें हैं। मासिक और मुकाम के रिपते में ऐसा कही नहीं होगा और कमी नहीं हुआ कि मासिक ने एक रोज मुकाम को इस काबिल समझकर कि वह अपनी जिम्मेदारी खुद संभाल सकता है ताकत उसके हाथ में खुद से तौप री हो। मासिक तो हमेशा मुकाम को नाकारा समझता है— क्योंकि इसी में उसका जयबा है। वह इतिहास का बिचारपी बा और इतिहास में इस तरह की कोई मजोर नहीं मिलती। मासिक की गियाह में मुकाम कयामत के रोज तक इन काबिल न होपा कि उसे खुद उसके मरोसे छोड़ बिना जाय। तो इसका मतलब है कि हम कयामत के रोज तक मुकाम रहेने? और अगर हमें यह बलीक मंजूर न हो और हम आपस कहें कि आप इनको हमारे हाथ पर छोड़ दीजिए तो इसका बबान आपके पास है पर्यपी और कामापाती। तनी तो आपने इस तरह पस्तकारी पर कमर बाँपी है। हुकूमत करनेवाले सब एक-से होते हैं। गीगने ने कामकाह माम रगा रकरी है उनसे। कुछ होने जाने बाधा नहीं है। तिलक का रास्ता ही ठीक है। बात समस में आती है। आजागी हमेशा सफरर ती जाती है भीख माँगने से आजादी नहीं मिला करती। खीन ती रहे हैं भीत इतने दिनों से मिला कुछ। किसी को मिली है कि आप ही को मिलेगी? दुर्बाली बरकार है उसके लिए। यह तो कड़ाई है बाक्रामन। हमने नहीं का खम और नहीं की मुतीबत। सब बच्चों को बहकाने की बातें हैं। जिस दिन मुक्त दुर्बाली के रागने पर बाम पड़ेगा आजादी रगी हुई है



११७



शौर मुघीबी ने सन् १९७७ में अपनी पहली छोटी कहानी टिप्पणी बिलकुल पहली — दुनिया का सबसे अनमोल रत्न। क्या है दुनिया का सबसे अनमोल रत्न? एक फ़ारसी पाने वाले पिता के दो बच्चे? नहीं। अपने पति के साथ पिता पर भ्रम हो जानेवाली एक सखी स्त्री की छाक? नहीं। 'खून की वह माखिरी बूंद जो देस की आबादी के लिए गिरे, वही दुनिया का सबसे अनमोल रत्न है।

ऐसी ही कहानी 'दोष मखमूर' है जो इन्हीं दिनों मुघीबी की कलम से निकली। बाहर का एक राजा हमला करके किसी देश को जीत लेता है। पराजित देश का राजा सब मरने लपटा है तो अपना राज और अपनी तरफ़ार अपने बेटे को सौंप जाता है और बसीमत करता है —

यह तुम्हें तुम्हारा है, यह राज तुम्हारा है यह रिवाज तुम्हारा है। तुम इन्हें अपने बच्चे में लान ली मरने तक कोशिश करत रहना और अगर तुम्हारी उमाम कोशिशों नाकाम हो जायें और तुम्हें भी वही बेमरामानी की मौत लगी है तो यही बसीमत तुम अपने बेटे से कर देना और यह राज जो उसकी अमानत होगी उसका सिपूर कर देना।

पन्द्रह साल के लड़के मुदीराम का जब फाँसी हो गयो और जिसो तरह का दिहाड़ उसको उन्न का नहीं दिया गया तो सारा देस बैस कराह उठा एक बार। सब को यही लगा कि बैस इन्हीं का बेटा उन्हीं का माँ बड़ गया फाँसी पर। जिसो को ख़ुम न आया उगधी कच्ची उन्न पर! और बायें इतनी इतनी बंधकों का इमाऊ की! सब वही हाजी न राँड — जाने के और विनाश के और। जब तक अपने ऊपर माँच नहीं जाती तब तक हम बड़ इमाऊवाने हैं लेकिन जहाँ बाँड कुछ भी इबर स उबर हुई, फिर वहाँ का इमाऊ और वहाँ का क्या। तब तो फिर एक ही इमाऊ है कि टकवार उठामो और एक-एक का कर बाँड से जुदा कर दो। पहले भी यही हुआ है, अब भी यही हो रहा है। होन में कोई बुवाई नहीं है, जहाँ जंग का ऐलाज हो दो ज़ीमों के बीच वहाँ ख़ुमरी किसी बीज की उम्मीद भी न करनी चाहिए। शीत करता है कुछ और उम्मीद हम का उमने निजापन भी नहीं करते। निजापन तो हमें अपने ही लीमों स है, क्यों बरदावाने हैं वह ख़ुमरी का बहुरियाद बायें बड़-बड़कर?

मुघीबी बेतरह बिकरे हुए थे और बीमा कि निपम साहब कहते हैं —

प्रेमचंद का 'राजनीति' श्रुवाव परम तक की तरह था। महमदाबाद बरिेन देलन हम सगा माप ही सप्य देने और एक ही जगह टूर कैलिन बह विन्टर निक्क के तरुतरा न और मैं विन्टर गावने और सर प्रीतेज ताव

का हामी बा। हर बक्त बहस खूबी थी मगर दोनों अपनी जगह ज़ायम रहे। छोटे-मोटे सुबारों को वह काफ़ी न समझते थे और मिष्टो-मार्क और माष्टेयू-वेम्सफ़ोर्ड की स्त्रीय से जास्वरत न थे।

इसका कारण नी निगम साहब बतलाते हैं—

रेगर्बद नाबरबर की सड़ाई में समझौते के ज़यास को मुबहू की मज़र से बेसते थे। उनका ज़यास था कि कड़ी ज़रोजहद के बरीर कुछ हासिल न होगा और वह इसके लिए अबाम को बन्द से बन्द तीबार करने की तरफ़ थे। उनका ज़यास था कि हुकूमत से सख्त टक्कर लिये बरीर काम न बसेगा।

काप्रेस के मीतर तिकक का बाम्बोजन और काप्रेस के बाहर अन्तिफारियों की सरयमियाँ और उन दोनों पर बसनेवाला सरकार का कठोर, गुंथस वमन रोड-ब-रोड मुंसीजी के मन का बिरोही बनाता था रहा था और जब ११ अक्टूबर १९८ को सुदीयम को फाँसी हो गयी तो उनके दिव से समझौते की बात किसी तरह क समझौते की बात हमेशा के लिए बलगत हो गयी। उस दिन के बाद से उनके और सरकार के बीच सुबीराम की साथ थी। इस बहादुर लड़के की घड़ीबाना मोठ हमेशा के लिए मुंसीजी के दिव में बर कर गयी और वह कभी सरकार को इस बच्चे के जून के लिए माफ़ नहीं कर सक। बड़ी महीरी मोट लयी दिव को लेकिन गर्व भी कम न हुआ और मुंसीजी जो कभी किसी की लसबीर-बसबीर घर में नहीं टाँसा करते थे जाकर सुबीराम की एक लसबीर के भाय और बड़े प्रेम से अपने कमरे में उसे टाँस लिया। सरकारी मुलाजिम होकर ऐसे एक बाड़ी की लसबीर घर में टाँगता उनके हक में गुण हो सकता है इसका पता भी उनको होगा ही ताहम वह लसबीर लरीबकर पर आयी और बेमिस्तक टाँगी गयी। इस तरह एक बेधमकत मौजबान ने एक बहादुर गहीर की मोठ पर मडा के दो फूल बड़ाये। वह रास्ता शायद कभी मुंसीजी को नहीं मही मालम हुआ लेकिन उससे क्या।

इस सिंससिल में यह भी ध्यान देने की बात है कि मुंसीजी मछे अन्तिफारी बान्बोजन में सरीक न हों और उस रास्ते को नहीं न समझने हों लेकिन वह भी उन्हीं बिबकानम्य और मैजिनी और वीरीबावदी की तरफ़ मुक रहे थे जिनकी तरफ़ अन्तिफारी मौजबानों की वह पीड़ी मुक रही थी।

जुलाई १९०४ में वीरीबावदी का एक छाटा-सा बीबनबलि उन्हीं 'अमाना' से लिखा गही जोबेऊ वीरीबावदी जिसने इटली को मुगामी के बड़े से निषामा और जा इतिहास के उन इने-वने महागुरों में है जो अपनी निस्स्वार्थ और

साहसमयी बेधमक्ति के कारण सारी दुनिया का उपकार करनेवाले माने पड़े हैं। बहादुरी के कारनामों से मरी हुई उसकी रोमांचकारी खिन्गी का बखान करने के बाद मुंशीजी ने एक जगह पर लिखा —

सच है, स्वदेश की सेवा सहाज काम नहीं है। उसके लिए जैसा हीयसा कौछाब की वृद्धता बिना राठ मरने-पिसने का अम्यास और हर समय जान हथेली पर लिये रहने की जरूरत है। जब तक यह गुण अपने स्वभाव में न समा जायें स्वदेश-सेवा का घठ बजानी हकोससा है।

मैजिनी के खिन्दपी के हलाकत को मबाब ने किस्से की एकस में देस किया और इसके दुनिया और हुस्मे बतन के नाम से उसकी कहानी बर्रक १९ ८ के बमाना में लिखी। कहानी के रूप में यह बीब कुछ खास उतर न सकी मगर हाँ किस्सेवासे ने अपने हृदय के भाव प्रेम और बटा के उसमें अच्छी तरह उहेस दिये। अपने देश की आबादी के लिए उसने अपनी मुहब्बत कुर्बान कर दी यही सारी कहानी है मगर इसको लिखनेवासे ने बहुत जोर के साथ लिखा है —

मैजिनी अपने सयाधों में बूबा हुआ है — माह बदनसीब क्रीम! ऐ मबलूम इटली! क्या तेरी किस्मतें कभी न सुबरेबी क्या तेरे धैकड़ों सपूतों का बून बरा भी रंग न सायगा क्या तेरे हबारहा बकावठन देस के निकाले हुए जानिसारों की बाहा में बरा भी ठासीर नहीं! क्या तू अम्याम और दासता के पाठ में हमेया गिरन्तार रहेगी। घायद तुझमें बनी सुपरले की स्वाधीन बमने की योम्यता नहीं मानी। घायद तेरी किस्मत में कुछ दिनों और बिस्कत और टवारी सेकनी लिखी है।

कहने की जरूरत नहीं कि इटली महा एक बहाना है बाठ बह-अपने ही देश की कर रहा है। और उसी री में कर रहा है जिसमें देश की यह ठमान जीबबान पीड़ी कर रही थी बिसने बिद्राह और दिक्कत का रास्ता अपनाया था।

इस पीड़ी ने बिबेकानन्द से किठना मनोबल पाया यह सब जानते हैं। और मुंशीजी जो कि उसी उग्र राष्ट्रीयता के साथ बह रहे थे और हिन्दू जाति के उत्कर्ष का स्वप्न देखते हुए हम और माये थे जैसे संभव था कि बह जोरों के साथ बिबेकानन्द की ओर न लिखते। कई क्यों में बिबेकानन्द उन्हें अपनी तरफ खींचते थे। एक तो सच्चे हिन्दू का रूप एसा हिन्दू जिसके मन में यह काससा है कि आज की धन और बल से हीन हिन्दू जाति फिर पूर्वकाक की सबर समुद्र और भारतगौरबघाभिनी आर्य जाति बने।

दुमरा बप एक अच्छे देससेबी बनसेबी का था —

१८९७ ई० का साल सारे हिन्दुस्तान के लिए बड़ा मन्मूष था। किठने ही



स्वामीयों में ध्येय का प्रकोप वा और अकाश भी पड़ रहा था। लोग भूत और रोप से काश का घास बनने लगे। बेसवासियों को इस विपत्ति में देखकर स्वामीजी जैसे बुध बैठ सकते थे। आपने साहसीरवाके मापण में कहा था — साधारण मनुष्य का धर्म नहीं है कि सामु-संन्यासियों और धीन-भुक्तियों को भरपेट भोजन कराये। मनुष्य का हृदय ईश्वर का सब से बड़ा मन्दिर है और इसी मन्दिर में उसकी आराधना करनी होती। परन्तु आपने बड़ी सरगमी से खीरतबाने शोसना शुरू किये। स्वामी रमकृष्ण ने देखतेबाबती संन्यासियों की एक छोटी-सी मण्डली बना ली थी। वह सब स्वामीजी के निरीक्षण में तन-भन से धीन-भुक्तियों की सेवा में लग गये। वेदाद्य के प्रचार के लिए, अगह-अगह विद्यालय भी स्थापित किये गये। कई अनाथाश्रम भी लुके

तीसरा स्म एक सदैव स्वाधीनता-प्रेमी का है। मुसीबी में विवेकानन्द के किसी मापण का यह टुकड़ा गलत किया —

मेरे मौजबान दोस्तों बसवान् बनो। तुम्हारे लिए मेरी यही सलाह है। तुम भगवद्गीता के स्वाध्याय की अपेक्षा फुटबाल खेलकर कहीं अधिक सुगमता से मुक्ति प्राप्त कर सकते हो। जब तुम्हारी रों और पुट्टे अधिक बूढ़ होने लगे तो तुम भगवद्गीता के उपदेशों पर अधिक बलवी तरह लग सकते हो। गीता का उपदेश काम्यों को नहीं दिया गया था अर्जुन को दिया गया था जो बड़ा धूर्तवीर, पराक्रमी और लक्ष्मि-सिरोमणि था।

फिर एक दूसरे ध्यास्यान का यह टुकड़ा पेश करते हैं —

यह समय आनन्द में भी जाँसू बहाने का नहीं। हम रो लो बहुत लुके। इस कोमलता ने हमें इस हृद तक पहुँचा दिया है कि हम बई का घाला बन गये हैं। जब हमारे रेश और जाति की धिन धीनों की पकड़ है वह है — काह क हाथ-पर और क्रीकार के-स पुट्टे और वह बूढ़ संकल्प धक्ति जिसे बुनिया की कोई चीज नहीं टोक सकती जो प्रकृति के रहस्यों की हृद तक पहुँच जाती है और अपने लय से कभी विमुक्त नहीं होती चाहे उसे समुद्र की तह में धाला या मृत्यु का सामना क्यों न करना पड़े।

सामाजिक मुषारों के बारे में विवेकानन्द के वृष्टिकोल का उल्लेख करते हुए उन्होंने जो बात लिखी है वह इस प्रश्न पर लुब उनक विचारों की उस गयी कड़ी का सामास बेटी है जो पिछले दो-चार बरों में लुकी है। लिखते हैं —

स्वामीजी सामाजिक मुषारों के उनके समयके वे पर उसकी वर्तमान गति से सहमत न थे। उस समय सामाज-मुषार के जो मल किय जाते थे वह प्रायः उच्च और शिक्षित वर्ग से ही संबंध रखते थे। परोंकी रत्म विधवा-विवाह जाति-बंघन — यही इस समय की सबसे बड़ी सामाजिक समस्याएँ हैं जिनमें मुषार होना बहुत ही जल्दी

है और सभी सिविल बर्ग से सर्वत्र रलती है। स्वामीजी का मास्य बहुत ऊँचा था — अर्थात् निम्न श्रेणीवासियों को ऊपर उठाना उन्हें शिक्षा देना और अपनाना। यह लोग हिन्दू जाति की जड़ हैं और सिविल बर्ग उसकी शाखाएँ। कबल शक्तियों की सींचने से वेड़ पुष्ट नहीं हो सकता। उसे हय-भय बनाना हो तो जड़ को सींचना होगा।

चेतना की यह एक नयी ही यहाराई है और उस गम्भीर मानसिक शक्ति का पता देती है जिसके बीच से मुंशीजी पिछले जिनों गुजरे थे। वेस में उस समय चारों तरफ़ जो अबस-मुपल मची हुई थी और राष्ट्रीय आन्दोलन को लोकमान्य तिलक स था नेतृत्व मिला था या उसमें मुंशीजी ने अपने विचारों की यात्रा में काफ़ी लंबा सफ़र तय किया था।

सब बेकार की बातें हैं सत्ता पर जब आँसु माटी है सब एक बराबर हो जाते हैं। सीपी बात तिलक कहता है वेग को लड़ने के लिए तैयार करो।

मगर यह ता कहो — वेग कौन है? यह मुट्ठी भर पड़े-बिछे कोप या कह करेड़ों छोटे कोप? असल बंश बही निम्न श्रेणी है। बही तो जड़ है सिविल बर्ग तो उसकी शाखा है। केवल शक्तियों को सींचने से वेड़ पुष्ट नहीं हो सकता। उसे हय-भय बनाना हो तो जड़ को सींचना होगा।

बाद में जो कुछ हुआ उसका अंकुर यही था चेतना का यही शान्तिकारी स्तर।

सबसे पहले तो मुंशीजी की एक धोरदार शक्ति योरलपुर के हकीम बरहम स हो गयी। हुआ यह कि अकबर ने शरर और सरगार का एक मार्ग लिखा था जिसमें दोनों बड़े कमानाचों के मुन-दीप पर विचार था। मगर वह बीच कुछ इस तरह फँसी और कुछ ऐसा अकबर ने असर उसने पढ़नवाला पर आभा कि शरर के (जो आस इस्लामी रंग में लिखते थे) चाहनेवालों और सरगार के चाहनेवालों के जो मतम विरोह-बैमे हो गये और अकबर की छेड़ी हुई उस बहस स और भी बहुत सी शान्तें फूट निकलीं। हकीम बरहम ने शरर की तरफ़ापी करते हुए उर्दू मुबस्ला में सरगार की तूक ले-ने की। मुंशीजी ने जो वह बीच पड़ी तो उनके अपने उस्ताद की यह ठीहीन बर्दान्त न हुई और वह भी ताल छेड़कर सरगार की तरफ़ से बचाइ में बूढ़ पड़े। उभी पक्ष में हकीम गारुब को अबाव देव हुए मुंशीजी ने लिखा —

हम हुकीम साहब के कहने से इस बात को मान लेते हैं कि इस्लाम धरत भरकी के प्राथमिक धरती के बहुत बड़े आदिम और अपने बात के बहुत बड़े विज्ञान हैं। बेचार सरदार धरती में कच्चा और धरती में मादाग बच्चा है। मगर उससे हमको क्या बहस। हम सिर्फ यह देखना चाहते हैं कि कौन ही धरत के मैदान में किसका इस्लाम उठाने भरता है।

फिर मुंशीजी ने उपन्यास की कसौटी कायम की कि वह अपने बमाने की ठसबीर होता है और सिखा —

इस कसौटी को अपने सामने रखकर अगर सरदार के किस्सों को देखिए तो ऐसी कौन-सी कूबी है जो इनमें भरपूर मही। सब तो यह है कि जलकी सब किताबें अपने बमाने की सच्ची ठसबीरें हैं। सांस्कृतिक जीवन का कोई ऐसा पहलू नहीं जिस पर सरदार की खान ने अपने निरसे डंग से फूक न बरसाये हों। यहाँ तक कि मदारियों के बेक भौड़ों की मऊसे बाइरक धरत पिछानेवाकियों के लखरे और ऐसी ही वेसुमार बाइरों की छोटी-छोटी बाकियों में भी अद्भुत विचार का कौशल दिखाया है।

हुकीम बरहम साहब के इस अभियान का खबाब देते हुए कि सरदार के उपन्यासों में न कोई उद्देश्य है न कोई विचार, मुंशीजी ने सिखा —

● जितना ही इस पर धीर करत है उतनी ही उच्छम मामूम होती है कि इस बात पर हेंसे या गम्भीरता से उसका खबाब दें। सरदार ने उन सामाजिक रोगों के उपचार का बीड़ा उठया या जिनके पत्र में फेंसकर समाज की खान निकसी जा रही की और दूसरे अनुमयी बंधों और हुकीमों की तरह उठने भी ककबी बरमजा बचाएँ सफर और मिथी में बोलकर मिलायी। जिन लोगों के पास खाल है वह खामते हैं कि बीमारियों की रोफवाम का कोई धाधन एसा उपन्यासी और बसरदार नहीं है जितना कि दिखगी का काका और सरदार ने बड़ी बेरहमी से एस कोड़े लगाव है। सरदार की बेपइक ठिठोकी डिरेन्स के गम्भीर ख्यम से अधिक प्रभावशाली है।

मगर छात्रियन हुकीम साहब ऐस लिफरों या मतीजा की मतीजा न समझे। उनके मऊबीर उस भाबिक के धीरे म लिफरये सहेस्य और विचार बरे होते हैं जिस पर इस तरह का कोई सेबुक लया होता है — इस उपन्यास में पदों के बुरे मतीजे दिख म बय है। दा इस उपन्यास में यह लिख दिखा गया है कि मधा के लिफाफ धारियों का हमेसा बुरा मतीजा होता है। माया उपन्यास म हुए काई दर्शन की लिख हुई सिधमें किसी न सिखा प्यारी की स्थापित करना बकरी है। मजा तो यह है कि मतीजा ऊपर से नीच तक मरा हा और एसे सरल मतायास डंग स कि पाठक के दिमों में खुब जाय। ●

## कलम का सितपही

और फिर साहित्य के एक बड़े सिद्धान्त की स्थापना की —

मनुष्य की भावनाओं और स्थितियों व प्रकृति के वृत्तों और चमत्कारों की उसबीर खींचना स्वयं एक निष्कर्ष या गतीना है।

हकीम साहब के इस अनियोग का जबाब देते हुए कि सरकार के सब पात्र कलमनऊ ही के स्वी-मुख्य हैं, मुंशीजी ने कहा —

● इसमें हर्ज ही क्या है ? एक पात्र तो क्या एक मुहत्के और एक परिवार में अक्षय-मक्षय स्वभावों और तौर-तरीकों के लोग हो सकते हैं और एक सचमुच कमा का घनी उपन्यासकार उसही की रोबमर्त हिन्दगी में आधू का-सा असर पैदा कर सकता है एक खास बगह के वृत्तों और संस्कृति का बिस्तृत चित्र पिलाना कहीं क्यावा अच्छा है बजाय इसके कि सारी बुनिया के मौलिक मकधे दिखाये जायें।

मगर इसका हमें क्या खयाल रहना चाहिए कि उपन्यास लिखने की सफलता यही नहीं है कि पात्रों में केवल विशेषताएँ पैदा कर बी जायें सच्ची कारीगरी तो इसमें है कि पात्रों में जान डाल दी जाय उनकी जबाब से जो शब्द निकलें वह खुद-ब-खुद निकलें निकाले न जायें जो काम वह करें, प्युद करें, उनके हाथ-पाँव मरोड़कर जबर्दस्ती उनसे कोई काम न कराया जाय। इस कसौटी पर सरकार के पात्रों को कसिए तो वह आम तौर पर खरे निकलेंगे। उनमें वही बल-फिरत है जो जीते-जामते आश्चर्यों में हुआ करती है। उनमें वही छेड़छाड़ वही हँसी-मजाक वही गुपचुप इशारे, वही चुक-गपाड़े होते हैं जो हम अपनी बेतकस्मृष्टी की नकलियों में किया करते हैं। उनकी एक-एक बात से हमको हमदर्दी हो जाती है। वह हमको हँसाते हैं, रसाते हैं, चिढ़ाते हैं, सताते हैं उनके कह-बह की आवाजें हमारे कान में आती हैं, हमारे दिल में गुदगुदी पैदा होती है और हम खुद-ब-खुद खिलखिला पड़ते हैं। उनके रोने की विश्व हिसा देनेवाली आवाजें हम सुनते हैं और हमारी माँओं में बरबस आँसू भर जाते हैं और पात्रों को जाने दीजिए, सरकार का लौकी ही एक ऐसी अमर मुष्टि है जो बुनिया की किसी जबाब में उसकी जबर्दस्त घीहल का सिक्का बिठाने के लिए काजी है। माया बन्नाह, कैसा हँसता-बोलता आदमी है। सुबह हुई, आप उठे अश्रम खोकी हुकमे का दम लगाया राड़ी फटकायी और अपने मुजबब को बेघते बकड़ते अपने खोम में मस्त चले जा रहे हैं। क्यों ही रास्ते में किसी बन्द-बन्ना मुन्दरी को धीमे-धीमे माते देना वहीं आपकी बाँछें लिल गयीं। जरा और बन्द गये। उसने जो कहीं आपके रंग-रूप पर मुस्कय दिया तो आप पूल पये। गुमान हुआ मुस पर रीस गयी। ज़ीरन मूर्छों पर ताब दिया और मुस्कयकर तीखी-बाँकी चित्तवनों से आसपास के लोगों को देखने लगे कि पाँव में ठोकर लमी और चारों पाने चित। पात्रों ने कह-कहा मयाया मपर

क्या मजाल कि हज़ारों के बेहरे पर चर भी मस माने पायें। यह झाड़ी उठ खड़े हुए और उस ओ भीदी का मारा ज़याया क़रीबी म्यान से निकल पड़ी और चारों तरफ़ मुबराक हो गया सर मर्कों से बसय नज़र आने रुय और लार्गे फ़रफने कर्मी। साबास लोत्री ! तुमको बुरा हमेशा जित्वा समामत रखे तेरे एहसानों से एक दुनिया का सर मुका हुना है। ●

अपने एक इतने बड़े उस्ताद पर कोई अनाप-जनाप तोहमत लगाना यह मला मुंशीजी बर्बास्त कर सकते थे ? अपनी पूरी ताक़त और जोश से वह हकीम साहब के ऊपर पिस पड़े और माखे-माखे उनको बेरम कर दिया। सरसार की रखा करने में मुंशीजी बुरा अपने साहित्यिक भावनों को रखा कर रहे हैं जिसको वह सबकुटी क साब पकड़ चुके हैं।

जीवन के प्रति ऐसी ही प्रीड़ दृष्टि इन मोठियों में नज़र आती है जो मुंशीजी ने बिकुर नीति की समालोचना करते हुए उसमें से चुनकर पेश किये। कहना न होगा कि बिकुर नीति को ये सूक्तियाँ ब्याब मुंशीजी की अपनी उपलब्धि अपनी भाषा-सहितानी भी हैं, बर्ना इन्हीं मोठियों पर उनकी नज़र क्यों ठहरती —

● विद्वान उसी को कह सकते हैं जो संसार के व्यापार में क्लिप्त रहने पर भी ऐत्रिक दृष्टियों और मन-सपना से ऊँचा स्थान सबाचार को देता हो। जो व्यक्ति अपना अन्तमोक्ष समय व्यर्थ नहीं गँवाता और विचारों पर जिसको अधिकार होता है उसे विद्वान कहते हैं। पश्चित और बुद्धिमान बही है जो संसार की आपद-बिपद से ऐसा ही निरिचलित रहे जैसे नदी अपन में बँकड़-पत्थर सेके जाने से रूही है।

मनुष्य के शरीर से लूम निकालने के लिए दो नस्तर हैं जिनमें से पहला नस्तर तो कंगाल को अकूत संपत्ति की कालसा है और दूसरा है कमजोरी व बानबुर दूसरों पर मुस्सा करना।

इन दो व्यक्तियों को कमर में रखर बांधकर नदी में डुबो देना चाहिए — एन तो ऐसे बनबान को जो अपने मन में अधिकारी व्यक्तियों को सम्मिलित न करे और दूसरे ऐसे कंगाल को जो शरीबी के बाबबुर परमेस्वर की उपासना न करे।

दो भावनी ऐसे आश्रय के परकासे होते हैं कि सूरज के सने-बाड़े घेरे को भी नीर-प्यड़कर ऊपर दालिल हो सकते हैं — पहला तो आश्रयाम करनकाला संन्यासी है और दूसरा सफ़ाई के यैदान में बहानुरी के माब दुस्मन का मुबाबना करके घहीब हो जानेवाला भीर।

## इकतम का सितपट्टी

जिस तरह राहुब की मकली फूल को बनाये रखकर उसमें से सिर्फ राहुब ले लिया करती है वही तरह राजा को चाहिए कि प्रजा की स्थिति को बनाये रखकर उससे कर वसूल करे।

सदाचार से सन्तुष्टों की अध्ययन से ज्ञान की अण्डे धारण से सीधर्म की मेक आचरण से परिवार की माप-तोला से गल्के की फेरने से बाढ़ की देख-भाल से जानवरों की और सारे कपड़ों से स्त्री के सटीक की रखा जाती है।

पूटकर सेव तो इस तरह के बने ही हो सके किन्तु भी इसी बीच छपे। एक जो राजपूताने की कहानी की- कट्टी राजी को मरील से अक्ट १९ ७ तक बमना में भारवाहिक रूप से निकली और दूसरी किशाना समय इन्हीं किर्लो विद्या की मूरत में बनारस के मेडिकल हास प्रेस से छपी।

अक्टूबर १९ ७ के मंक में उसकी समालोचना करते हुए नीचत राय नबर न सिक्का —

यह एक उपन्यास है और हमारे सोचल रिपरम स सास्त्रक रकता है उन्होंने औरतों में बेबर के किबुल चीर की मण्डी बिपाड़ की है सोमा यह एक ऐनी औरत की काइऊ है जिसे बेबरा का चीर नहीं वन्दि सनक पी साय ही राधी-न्याह की कुछ रसों का भी छाका उड़ाया गया है सासकर इतर-रात्र और बसका सरती से बसूल करवा। किशान में जो भाया इन्तमाक की यमी है वह मुंघी साहुब की प्राबल सेवतरीती से बहुत कम मिलती है। धायद यह भाया इन्तमा इस्तेमाल की गयी है कि जिन लोगों का मुबार मभीष्ट है उनके लिए पचक हो। यह एक ऐसा उपन्यास है जिनमें कोई हीरा या हीरोशन नहीं है और उसे उपन्यास कहना कठिन है। दरमसल यह उपन्यास है श्री मही बन्दि सिखियों की एक कुत्सित प्रकृति का छाका उड़ाया गया है जिसे बंदि में कैरिक्चर कहने है

किशाना निकलने के साक मर वाह दुनिया का सबसे मनमोल एतन और दूसरी बार कहानियों का संग्रह सोबे बतन के नाम से लिखता।

और उसके छ भाठ यहीन बाद, १ जून १९ ९ को मूच का परबाला जा गया।

कागपुर पूटने का मुंछीजी को रंज वा। पारों की यह साहुबसे फिर बर्न मिलेंगी। यह हरबन का साक उट्टा-बीट्टा साहित्य की और राजनीति की बाँटें तरह-तरह के मंजूबे। हम जिनगी का मका ही और वा। कपता वा कि मचमुच

बिन्दा है। जब सता नहीं वहाँ क्या हाल रहे। महोबा तो बंदक है। बुदेकतण्ड का पहाड़ी इलाका। पड़े-सिन्डे भादमी की मूरत देखने को सरस बाउआ।

मगर और, इलाक भी क्या है। सरकारी नौकरी में ठबावका तो एक जड़की शर्त है। हमीरपुर फिर भी कागपुर से उतना दूर नहीं है। हाँ रेस नहीं है, मगर उससे क्या।

नौकरी करनी है तो फिरता पड़ेगा। और फिर यह तो सरकारी हुई है, बन्धी खासी सरकारी — ठीक रुपये से पचास रुपये। मगर हाँ बैठन को न मिलेगा वहाँ भी। पैर में चक्कर रहेगा हज्जम।

इन्हीं दिना कभी इलाहाबाद पले जाने की सूख एक बार बनी थी। इधियन प्रेस के बाबू चिन्तामणि बोय उर्दू का एक रिस्साका तिकाधना चाहते थे। उसी की एडिटरी के सिक्किसे में। चिन्तामणि बाबू ने मुंशीजी को बुलाया। मुंशीजी आये। बाउं हुडे। मुंशीजी ने उसका नाम किरदीस राजबीर किया। कुछ लोगों से रचनाएँ भी मंगा ली। मगर दोस्तों ने नौकरी छोड़कर जाने की सलाह न की। आखिरकार बात खत्म हो गयी और बाद को प्यारेसाक धाकिर ने कई बरस तक उसी रिस्साले को मबीव के नाम से तिकाका।

और मुंशीजी तो अब हमीरपुर जा रहे थे।

स्वर्णों के मुझाइने का काम वा वही उनके जाने-गइजाने बेहाती मरग्ये —

एक पेड़ के नीचे जिसके इबर-उबर कूडा-करकट पड़ा हुआ है और वहाँ छाया बनी से भाइ नहीं दी गयी एक फटे-मुचने टाट पर बीस-गन्धीस लड़के बैठे ऊँच रहे हैं। सामने एक टूटी हुई कुर्सी और पुरानी मेज है। उस पर जगाब मास्टर टाहब बैठे हुए हैं। लड़के भूम-भूमकर पहाड़े रट रहे हैं। छापर किसी के बदल पर छाबित कुर्ता न होका। बोली थाँब के ऊपर तक बंधी हुई, टोपी मेसी-कुर्बली तकमें भुनी बेहरे बुस हुए। यह आर्वाबर्दे का मररसा है वहाँ किसी बमाने में तसधिक्का और नालका के बिछापीठ के

मुंशीजी खुद ऐसे मदरसों में पढ़ चुके हैं और अपने आसपास बराबर देखने रहे हैं। अपनी ठेठ किसान बुद्धि से उनके बारे में सोचा भी है। हमीरपुर के सिध् रजाना होने के ठीक पहले 'संयुक्त प्रान्त में आरम्भिक बिद्या के नाम से उन्होंने एक बड़ी गहरी भूम-भूम का लेख पूरी निर्भीरता से लिखा बिना इस बात की रती भर बिन्दा तिये कि यह गुद इनी सीधे में सरकारी मुताबिम थे और उतरे बड़े हाकिम लोग नाराज हो जाबिये। इस लेख में उन्होंने मरने अनमर्तों को निचोड़कर एव रिया कटिआर्या भी बतलायी और उनके बारे में

अपने सुझाव भी दिये और जहाँ करी-खरी सुनाने की बात भी वहाँ करी-खरी सुनायी —

हमारी आरम्भिक शिक्षा के सुधार और उन्नति के लिए सबसे बड़ी जरूरत योग्य शिक्षकों की है। और योग्य आत्मी भाठ रुपये या नौ रुपये माहवार के वेतन पर दुनिया के पदों में कहीं नहीं मिल सकते। जिस आदमी को पेट की किक से आबादी ही नसीब न होगी वह तालीम की ठरक क्या छाक ध्यान देगा? जब सरकारी मददों का यह हाल है तो इमानी मददों का विक्रय क्या! उनमें कम-से-कम तीन चौपाई ऐसे हैं जिन्हें सरकार चार रुपये माहवार इमवाद बेटी है और उसमें एक आना मनीमाबंर का महमूस कट जाता है। तीन रुपये पन्हा जाने में कौन महीना भर दरखती मचाय करेगा! यहाँ में कहरों की तनाबाहें छ और साठ रुपये माहवार है, बल्कि अक्सर तो इससे भी खाल। मामूली मजदूर चार जाने पैसे रोब कमा लेता है। मगर करीब मुहरिस इससे भी खलीस समसा जाता है।

काम का बोस मुहरिसों पर बहुत है मददों के लिए भर नहीं है पाठ्यक्रम बढत है उसमें शिक्षानों की खास अपनी बख्तों का खयाल नहीं रखा गया है, शिक्षा पर पैसा खर्च करने में सरकार बेहू कंबूसी से काम लेती है सब कुछ कह बाता और सीपे-सीपे अपने हुककाम पर थोट की। जब हिम्मत तो बेकिए इस सब डिप्टी-इंस्पेक्टर की जो अपने डायरेक्टरों तक पर हाप छाऊ करने से बाब नहीं जाता —

कुछ तो दर्यों की कमी है और कुछ बेजा खर्च। कमी-कमी सरकार ने दो-चार लाख खयादा दिया भी तो वह इंस्पेक्टर और डायरेक्टरों और मैं और तू के बाँट-बखरे में पड़ जाता है और मुहरिस प्यो का त्यों मूला रह जाता है दुर्भाग्य से सरकार का खयाल है कि मुभाइता खयादा होना चाहिए चाहे तालीम हो या न हो। मभाइने पर खया खर्च किया जाता है मगर तालीम की ठबर नहीं ली जाती मबनियेष्ट कर यह समानी कि मुभाइता कमी तालीम की खपह नहीं से सकता।

और वही मुभाइने का काम अब मुंजीजी के सिपुरे किया जा रहा था। यों मुंजीजी की मबर से बेकिए तो यह काम बिसा कुछ बुरा न था।

अक्सर पाड़े पर या बैलगाड़ी पर जाना होता। और जब वह तीस साल का थोप-बिहुा चौड़ा-थकता खबान — चौड़ी चौड़ी कलाइयाँ चौड़ा पीना बड़ी बड़ी मूँटें — घर पर साजस बाँये निकलता तो ऐसा माकूम होता कि कोई राजकुमार या पुलिस का बड़ा हाकिम जा रहा है। अरली साब होता खाना पकानेवाला माय



होता। जिस गाँव के स्कूल का मुआवजा होता वहाँ पहुँचते ही मौसम के हिसाब से कहीं किसी मैदान में या अमरपई में टपटी सब जाती और बेचते बचते गाँव भर में खबर फँक जाती कि निसपिट्टर साहब आये हैं। अगलड़ बेहाती मात्र से पचास बरस पहले की बात अंग्रेजी अमलखारी का खमाना सब दौड़-दौड़कर सत्ताम-बुहार करने लगते। खाने-पीने का इंतजाम होने लगता। कोई दूध साठा कोई घी कोई आटा कोई दाल कोई धी। खान की खान में सब प्रबन्ध हो जाता और महत्त्व खाना पकाने में बूट जाता।

लाञ्छित को वह एक मञ्जर बे (स्कूलों के सब-मिस्ट्री-इंसपेक्टर।) और मिठने बड़े मञ्जर बे उससे बड़ा गाँववासे उनको समझते थे। स्कूल का मुआवजा करने आये थे। कलम से कहीं कुछ ऐसी-वैसी बात बचीट बें तो। इसलिये हर तरह से उनको खुश करने की तखवीर की जाती या मुधीजी क बिस पर जारी भी गुबरती। एक बस्तूर यह भी था कि नयी किसी बगह पहुँचने पर वहाँ के सम्मानित कोष वही-मञ्जर से उनका टीका करते। टीका तो गवाब करवा लेते। पान दिया जाता पान भी खा लेते सबसे गले मिलते। मगर जब खया देने की जारी आती तो साऊ इतकार कर देते।

यह सब चीजें उन्हें पसन्द न थीं। न तो उनको तखीपत हाकिमाला भी और न वह चाहते थे कि कोई उनको हाकिम समझे। बखारी क बर्से पर सबसे मिलना ही उनके जी को माता था। मगर तो भी हर बगह का बस्तूर-काबवा भी एक चीज होती है। उससे पूरी तरह बगबत करना बाखान नहीं होता और मां भी बगबत से पयावा समझते का ही पस्ता उन्हें पसंद था। बिहावा उन्होंने समझा कर किया था। टीका करवा सेते थे रसद-धानी की चीजें भी ले सेते थे मगर खया न लेते थे। जईसी-महत्त्व को जो कुछ बस्तूरी मिलती हो उस पर कोई रोक-टोक न थी।

यही हाल उस सब अनाख और दूध-धो का भी था जो महोबे में भर पर पहुँचता था। देहात का इलाका हाकिम को खुश करने के लिए डाली लगाने का बस्तूर न जाने कब से पला जाता था। बड़ी बगह में सिद्ध बड़े कोषों को डाली खयायी जाती है। छोटी बगह में छोटे कोषों को भी डाली खयायी जाती है। बिहावा जब यह चीज शुरू हुई तो मुंजीजी ने इसका विरोध किया लेकिन फिर सार्वो न समझाया कि वहाँ का यही बस्तूर है। अपने बाद आनेवालों के लिए आप क्यों मुसदिकत छोड़ी करते हैं? इस इलाक के आये मुंजी जी न हार मान की मगर इतना बहा कि इन चीजों का इन्तेजाम मैं नहीं मेरे नोकर करेँ।

इस्तेमाल कोई करे, बेनेवाले तो यह जानते थे कि वह मुंशी बनपठण्य को दे रहे हैं।

इसके कि नाम बुरा नहीं था काफ़ी इरबत थी ल-सपक थी और तनस्वाह में चाहे मले कुछ बीच रुपये की ही बढ़ती हुई हो पर ज़बे में तो बढ़ती ही बढ़ती थी। धानपुर में वह एक मामूली-सा मुस्लिम था यहाँ पर वह एक हाकिम का जिसके बाये-बीचे लोग हाथ बाँधे घूमते रहते थे।

मगर इससे भी बड़ा साम इस नौकरी में यह था कि घूमने का लूब मिलता था। बुदिलसख्त का झठाहा यों भी बहुत लूबसुरत है। तमाम नदी बंगल पहाड़ — यू पी जैसे सपाट समतल मैदान नहीं। अपने घोड़े या बैलगाड़ी में एक से एक बीहड़ जगह उसको खाना होता मगर उठना ही स्यादा वह अपने देश को देख रहा था जिसका मौका अब तक कम मिला था। और यह देखता सिर्फ़ नदी-पहाड़ का रेंजना न था बल्कि उस जिले की पूरी खिन्दी को देखना था उसका मुँह उसका हुल उसकी प्रतीची उसकी बहादुरी — सभी कुछ।

अपने उन दौरों में जो अक्सर इकबाली रेड-वेड दो-दो महीने के हो जाते थे इस गाँव से उस गाँव उसे किस्सा कहनेवालों से बड़ी की प्रशिक्षित लौक-कपारें और जल्दियों से आस्था घुनने का भी मौका मिलता जो कि ज्ञान बुन्देसख्त की चीज है। उसके लिए यह एक बहुत नामाब मीठा था जिसका ध्यमदा वह भरपूर उद्य रहा था। मुझाने का काम तो मामभार का था वह मिनटों में छाम हो जाता। और कभी किसी स्कूल की बुरी रिपोर्ट उन्होंने नहीं लिखी। अक्सर तो लुर उन मास्टर्स से ही वह देते कि आप ही अपनी रिपोर्ट तैयार कर दीजिए। दो-एक बार उनकी पत्नी ने इसके बारे में उनसे कहा भी तो हँसकर बोले — क्या करे मैं जो सही-सही मुझारना करता हूँ तो मुस्लिम लोग लड़कों के सामने पर्चा छोड़ आते हैं। इसलिए अब तो यह काम मैं जन्हीं पर छोड़ देता हूँ कम से कम यह लफ्फाऊ तां उन्हें न उठानी पड़े। वह बेचारे खुश भी रहते हैं और मुझारने की अच्छी रिपोर्ट होने पर उनकी तरफ़िकर्मा भी होती है।

इस पर उनकी पत्नी ने कहा — तो फिर आपको रखने की जरूरत ही सरकार को क्या थी?

बोले — वह अपना काम करती है, मैं अपना काम करता हूँ। क्या ये बड़े बड़े अउमर सब देवता हैं?

नाची उस्ती-मुस्ती सी बलौल थी मगर मसा चाहे बुरा यही उनका लटीक था और हम लटीके से उन्हें अपने अउमरों की जानों में मुर्कई मले न मिमी हो पर अपने माउहवों का प्रेम और भाईचार्य तो जरूर मिला और लूब मिला।

कि नहीं तो फिर एक इहकहा नामा और इसके बाद बोले — मुसी दमानराम निगम के यहाँ से किताब घाया हुई थी। मामूम नहीं क्या बबह हुई कि किताब प मिटर-मक्किशर का नाम नहीं था। बाहिर है कि ऐसी सखती बात-बुझकर न हुआ करती मगर मुनवा कौन है जाँच-पड़वाह हुई तो इसी सिलसिले में मेरा नाम भी कुछ पया। सुद ही सोचो एक सरकारी मुकादिम और सोचे बतन जैसी बायी किताब का लेखक ! तौबा तौबा !! यह तो मन्हा हुआ कि किताबों पर बला टल गयी बर्ना क्या मन्ब या कि माधसे नी हवा बानी पड़ती। इतना कहकर फिर ऐसा बोर का इहकहा नामा कि बाजारवाले भी हक्का-बक्का हो गये।

बाहिर है कि उस क्रिस्ते की कोई गहरी छाया उनके मन पर न थी। एक झोंका था जो जाया और निकल गया। और उसके साथ ही कुछ बेक का-सा मजा कुछ यह बात कि जो लेख में लल रहा हूँ उसमें यह छत्र तो होना ही है। मैंने अपना काम किया। किताब लिखी। उन्होंने अपना काम किया। किताब बन्द की। अब फिर मुझे अपना काम करना है। उसकी तबदीर करनी होगी — क्योंकि एक बेकार की पञ्च सग गयी है कि जो कुछ लिखूँ वह पहले कलेक्टर साहब को दिखाऊँ। इस तरह तो हो चुका ! ककिम मगर आप चाहते ही हैं कि बूहे-बिस्वी का लेख हो तो यही सही। फिर उसमें ईमानदारी और बेईमानी का क्या तबाम ? क्यों नहीं मैं आकारी से अपन बिल की बात कह सकता ? क्यों मानूँ आपका यह नाजायब हुनम ? नाजायब तो है ही सरसर ? या बतन की आकारी आपको अच्छी मामूम होती है उसी की बात में अपनी ज़ौम के लिए बर्से तो आप मेरी मर्न काटने के लिए तैयार हैं ! यह तो फिर कड़ाई है सरसर ! इसमें मूठ-सच को क्या बसल। अपेजी की वह कहावत है न — कड़ाई और मुहम्बत में सब कुछ आपस होता है।

किहाजा पहला काम तो नबाब ने यह किया कि सोचे बतन की कुछ ही कापियाँ कलेक्टर साहब क हवाले की जा जाय की गजर कर दी गयीं। मगर या कापियाँ पमाना के दफ्तर में बच गयीं उन पर किसी का ध्यान नहीं क्या और वह गुधिया और पर बिकती रहीं।

लेकिन वह जो ईब कलेक्टर साहब ने क्या दी की बुरी थी कि हन बीर जो किसी जाय पहले उनको दिखाना ली जाय और इसका कुछ न कुछ हक निवाकना करनी था।

किहाजा को ही बार महीने बाद उन्होंने मुठपहाड़ से १३ मई १९११ को मुसी दमानराम निगम को लिखा —

नबाब राय तो दानिबन कुछ दिनों के लिए इस बहाल से गये।

बोबारा यादवेहानी हुई है कि तुमने मुझाहिबे में गो अख्तारी मजामीन नहीं लिखे मगर इसका मंशा हर किस्म की तहरीर से था। गोया मैं कोई मजमून इबाह किसी मजमून पर — इबाहीदात पर ही क्यों न हो — लिखूँ मुझे पहले वह जनाब ऊँच मजाब कलेक्टर साहब बहादुर की खिदमत में वेध करना पड़ेगा। और मुझे छठे-छमासे लिखना नहीं यह तो मेरा रोख का धमा ठहरा। हर माह एक मजमून जनाबबाका की खिदमत में पहुँचिगा तो वह समझे कि मैं अपने उराइबे' सरकारी में जमान्त' कच्छा हूँ। और काम मेरे सर बोया जायगा। इसलिए कुछ दिनों के किए मजाब राय मरहूम हुए। उनके जानघी' काई और छाहब होंगे। आप मेरा मजमून फिदावत कपने के बाद मुँगी चिराघ बली को दे दिया करेंगे।

अब दूसरे नाम की तलाश शुरू हुई।

मुँगी यमानरामन ने प्रेमचंद नाम वेध किया। इसके जबाब में मुँगी मजाब राय ने लिखा —

प्रेमचंद अच्छा नाम है। मुझे भी पसंद है। अउस्ताव सिर्फ़ यह है कि पाँच का साल में मजाब राय को कराव देने की जो मेहनत की गयी वह सब मकारग्य हो गयी। यह हजरत किस्मत के हुमेधा लँडूरे रहे और धामब रह्ये।

इस तरह मजाबराय ने मरहूम होने के चार-पाँच महीने बाद सन् १९१ के अक्तूबर-नवंबर में साकर प्रेमचंद का जन्म हुआ। इस नये नाम के साथ अपनेबाली पहली कहानी बड़े घर की बेटा है।

इन्हीं जिनो अब इलाहाबाद के एन्कउजल गजट में कुछ लिखने की बात उठी तो मुँगी जी ने नियम साहब को लिखा —

मेरे लिए कलेक्टर को हर एक मजमून दिखाने की ऐसी पछ लगी है कि एक मजमून महीनों में लौटकर आता है। एन्कउजल गजट में प्रेमचंद का नाम नहीं देना चाहता। मानूम नहीं यह हजरत हाप-वीर सैमाने पर क्या लिखें पढ़ें। इन्हें किस्वागो ही रहने बीबिए। बीठे-बीठे प्रेम और बीर रस के किस्से लिखा करें।

महोबे की जिन्दगी धीरे-धीरे अपनी सम आँक पर आयी आ रही थी। लेकिन एक चीज भी जो बराबर टकड़ीय पड़ना रही थी — घर में सास-बहू के झगड़े। शिवरानी जब तक अपने मीके में ही रमाया समय बिताती थीं तब तक और बात थी। चाची ही मकान का घर सँभालती थीं और जो कुछ स्याह-संकेत उनकी समझ में आता था करती थी। कोई हाथ पकड़नेवाला न था। गिरस्ती अपने कस्टम-पस्टम ढंग से चला रही थी।

महोबे पहुँचने पर शिवरानी बेबी ने भी जब अपने पति के साथ बसकर रहना शुरू किया तो सास-बहू के झगड़े शुरू हुए, जैसे ही जैसे हर घर में होता है — बपि कार के प्रश्न को लेकर। चाची उस घर पर अपना अधिकार समझती थीं मात्रिक उन्हीं ने बरसों उस घर को सँभाला था और शिवरानी बेबी का भी यह समझना कि उस घर पर, उनके पति के घर पर, पड़ना अधिकार उन्हीं का है कुछ एकर नहीं था। यानी कि महाभारत के लिए भूमिका पूरी तरह तैयार थी और आये दिन कमी आने पर से कमी कपड़े पर से कमी छर्चे पर से महाभारत हुआ करता। जहाँ तक चाची की बात थी वह घर उनका तो था लेकिन बीबी एकान्त ममता उन्हें मकान से होनी चाहिए थी बीबी न थी और हो भी कैसे सकती थी। शिवरानी बेबी को भला यह बात कैसे बर्बाद होती। कमाया तो उसका पति था पसीना तो उसका गिरता था और उसी के टकड़ीय-आयाम का ध्यान सबसे बाद की। मकड़ी की तरह घीघी सपाट, सखी निबर, बकलड़ हठीली शिवरानी को भला यह चीज कैसे न लगती। दूसरों के और जो लोग सगे हैंने होंगे उसका लिए तो सगा एक ही भावनी था। और उसी को जब इतना सब पार्श्व करने के बाद भी अपने ही घर में आयाम न मिल पाया तो शिवरानी आनन्दबूला हा जाती। किसी की सिफारिश का इतना बेजा प्रपंचा? नहीं मैं तो यह न होने दूँगी। या हा मैं यह सब कुछ ठीक करूँगी और उनको आयाम दूँगी या फिर इस घर से कोई मठकक न रहूँगी अब आयाम मरे बाप का क्या आता है।

लेकिन चाहे उदासीनता की स्थिति हो चाहे सक्रिय हस्तक्षेप की पार्श्विक

अज्ञानि दोनों में थी क्योंकि असल सवाल एक म्यान में दो लकड़ारों का था। दूसरे सब प्रश्न सुलझ सकते थे सत्ता का प्रश्न जब तक नहीं सुलझ सकता था जब तक कि एक प्रतिद्वंद्वी हार न मान ले या मैदान छोड़कर भाग न जाय। और धिबराणी बीसी बर्ग रानी जिसके नीतर घासन की प्रवृत्ति कूट-कूट कर मरी थी हार माननेबाधी जीब न थी और धाये दिन कुछ न कुछ हुजा करता था। इन्ही सब झपड़ों से बचने के लिए प्रेमचंद अब तक बहुत-सी बीबों को दरगुजर करते जाये थे लेकिन अब उन्हें भी इन झगड़ों में लिंचकर धाना ही पड़ा जिमि दसनन बिब बीभ बिचारी। पर क्या था बिचायतों का दफतर था। कमी सास बहु की शिकायत करती थीर कमी बहु सास की और प्रमचर ही हु करते हुए दोनों की बात सुन सेते। लेकिन बाहिर को आदमी ये सुनते-सुनते हिमाय लपक हो जाता तो कमी बिफर भी पडते लेकिन ऐसे मौकों पर अक्सर यह होता कि बहु पली वा पक्ष न लेकर चाबी का पक्ष सेते इसकिए मही कि म्याम उनकी ओर होता बसिक इसकिए कि बहु बड़ी थी असहाय थी भाँ के स्वान पर थी और उनके प्रति मुगी थी का उत्तरदायित्व एक विशेष प्रकार का था। लेकिन रानी ने मुकना सीया ही न था।

इन सब बीबों से घर में जो एक अज्ञानि की स्थिति रही जाती थी उसकी हल्की-धी हलक ईशक्याष्ट के रूप में उस बात में मिलती है जो प्रेमचंद ने घायब सन् १२ में मुंशी बयानरामन निगम को लिखा। संदर्भ यह है कि नियम साहब ने अपने एक साप्ताहिक पत्र का मोटिस जमाना में निकाल दिया है। यही साप्ताहिक पीछे आबाद के नाम से निकला। उसकी क्यरेला के बारे में ससाह देते हुए प्रेमचंद ने लिखा कि आपका हस्ताचार कामरेड के ममूने का होना चाहिए। उसमें घायब बिभा कुछ लिये बरबर कोई स्वम्म सिखने को आमंत्रित किये जाने पर प्रेमचंद ने नियम साहब को लिखा—

जगजान का नाम लेकर शुरू कीजिए। मुससे जो मयब होगी करता रूँगा। अत्रिहाल मेरी हालत मुसे इजाबत नहीं देती कि कुछ ईसार कर सकूँ। यहीन मानिए, आपसे बसिदके विम कहता हूँ कि जब से यहाँ आया हूँ सिर्फ़ दो सी रुपये मेरे पास जभा हुए हैं और बहु भी एक सी रुपया माबिस का मुभावका है और एक सी रुपये में कोई तीस रुपये इंडियन प्रेस से मिसे घायब तीस या पैंतीस आपने किये और इती इतर एमुकेशनल गजट से मिला। मेरी तनक्याह और मसे में कीही को बचत नहीं हुई, हाँ बचत कहिये तो कमाई कहिये तो, बीबीजान की बरसों की

द्विज भी उछाए विक्रयत<sup>१</sup> के लिए एक कड़ा बनवाया बिलवा सधमा अब तक न भूला। इस बिरते पर मैं क्या ईशार करूँ। पचास रुपये तनखाह है, बस रुपये का बीसत और, और खर्च में कुछ<sup>२</sup> से काम लेता हूँ तक भी बनी उपलब्ध नहीं नसीब हुई। नहीं मामूम यहाँ कानपुर के मुद्राबिके में क्या खर्च बढ़ गया है। वहाँ ठीस रुपये में गुजर हो जाता था यहाँ उधक पुमन में भी रोना पड़ा हुआ है और अब बढ़े हुए अक्षयवात को ठोड़ना मुझ पर तो नहीं मगर दूसरों पर स्थित होना।

और यह कोई एक दिन की बात न थी। इसकी विक्रयत अब से करीब तीन बरस पहले २ नवम्बर सन् १९११ के सत में भी उम्होंने की थी — मेरे अक्षयवात रोज-ब-रोज बढ़ते ही जाते हैं। अब कानपुर और मझोबा दो जपह का खर्च सीमास्ता पड़ता है।

मगर और, बीसे-बीसे बर का प्रबन्ध शिबराती अपने हाथ में करती जा रही थी बीसे-बीसे पैसों की बर्बादी भी कम होने लगी थी और उसी हूब तक प्रेमचन्द की परेशानी भी। और एक रोज तो वह बिलकुल अचम्भे में पड़ गये अब उनकी बीबी ने बीलगाड़ी लीटने के लिए अपने सन्धूक से पूरे डेढ़ सौ रुपये निकालकर दे दिये। प्रेमचन्द ने खुश होते हुए कहा — बसो बेड़ा पार हुआ। इसमें गाड़ी और बील सब जा चार्ये।

● दिन भर में दूसरे रोज गाड़ी और बील दोनों जा गये। मुझसे बोले — एक बात तुम मेरी मान जाओ कुछ बसो चरखापी में मैला है, बेल आये।

मैंने कहा — बसिए।

हम सब मिलाकर बस आदमी बहे। हम सब बीलगाड़ी से गये खुब बोड़े से गये।

वहाँ जाकर बेसा लनवाया। राजा साहब के आदमियों को मामूम हुआ कि बिन्टी साहब आये हैं तो रसब उनके यहाँ से आयी। लैट, घाम को लाना बना। जपरासी महराज का उसमे जाना बनाया। सब लोगों के ला बुकने पर मैला बेलने की ट्यूरी। मैं और मेरी एक सहेली तो जानते हिस्से में गये आप लोग मरमि में गये। सर्कस यहाँ बहुत बपछा हागा था। मगर मैं तो बो-डाई बप्टे में ही बबरा गयी। मैं अपनी सहेली को लेकर डेरे पर चली आयी। आप लीट्टे बोर्ड डेढ़ बजे। ●

इसके बाद वह लोग बरनों यहाँ रहे और कई बार मैला बेलने की बात आयी लेकिन पत्नी का मन उससे उबाट हो गया था। लिहाजा मुझी भी अकले ही चल पाते। मगर जात और जाना पसन्द करते।

बंगल-गहाड़ की सैर रानी को भी पसन्द थी और जब तो घर में अपनी बैलगाड़ी थी फिर क्या बात है। नबाब और रानी दोनों अपनी बैलगाड़ी पर सवार होकर किसी तरह निकल जाते। दिन भर वहीं फिरते रहते। इसी तरह दिन बीत जाता। पति-पत्नी को साथ रहने का मुस्त जिन्दगी में पहली बार मिल रहा था।

महोबा प्रवास के इन्हीं आरम्भिक दिनों में तिनगुनी देवी को उनकी पहली सन्तान हुई, लड़की जो बस महीने की होकर नहीं रही।

ऐसे कुछ तो जिन्दगी के साथ कये ही बाड़ी बारात था। चाची ज्यादातर अपन भाई के पास कानपुर ही रहने लगी थी। मुन्गी जी वहीं लये भेज देते थे। घर में कासी सान्ति थी। सेहत भी मुन्गी जी की अच्छी थी। कोई तकलीफ न थी।

और सबसे बड़ी बात तो यह थी कि किलने का काम बराबर चल रहा था। हीरों के सिक्किने में महीनों यहाँ-वहाँ बूमना वहाँ शरीर के लिए एक कठिन परीक्षा थी वहाँ लिखने के लिए मपी-नपी सामग्री का एक भंडार भाण्डार — और डेरों समय।

अकबर की शासनी पर मुन्गी जी जान देते थे। जाने के कुछ ही महीने बाद एक लंबे मकसूर में उन्होंने अकबर की खूब-खूब सराहा —

● भाव की उर्धू सायरी एक मजीब कथमकम में फिरलतार है बाघ और हाथी के अछर में उर्धू सायरी के दो परस्पर-बिरोधी स्कूक कायम हुए जो कई लिहाज से बरबारी और मुस्ली ने माय से पुछरे जा सकते हैं। इन दोनों सम्प्रदायों में दो धुवों की बुरी है। एक ने पुदानेपन की क्रमम खा ली है और पुछरे है कि गई-गई बातों और माकादी पर पिटे हुए हैं

मुन्गी की बात है कि इन दोनों सम्प्रदायों के बीच कुछ ऐसे कवि भी हैं जिन्होंने भाषा और कविता पर पूर्ण अधिकार रखने का साथ-साथ मुग की आबस्यकताओं को भी अच्छी तरह अनुभव कर लिया है और उनमें हम जनाब खान बहादुर मैयर अकबर हुसेन साहब बज इलाहाबाद का बर्जा बहुत उँचा पाते हैं। अपने मुग के विचारों और आबस्यकताओं का सही अंदाजा कर लिया है।

इसी बजह से आपकी सायरी मौजूदा कवीनी पर बरी उतरती है। उसमें बात कहने का एशियार्ड ङंग में परिचयी विचारों के सुन्दरतम समूह मिलते हैं ●

ऐकमर्ष की बातचीत में गालियाँ बकब और पाकी-प्याह के मौकों पर गालियाँ गाने-गवान के लिहाज को लेकर जिनम अपने समाज में उनका अच्छा परिचय था मंगी जी ने इन्हीं दिनों एक अद्भुत पत्रकता हुआ लेख लिखा —

● हम बात-बात पर गालियाँ बकते हैं और हमारी गालियाँ सारी दुनिया



की गालियों से गिराही बृणित और गंधी होती है जिन गालियों का बवान किसी बूसरी क्रीम का आदमी ठरकार और पिस्तील से बना उससे कई गुना बृणित और गंधी गालियाँ हम इस कान से सुनकर उस कान उड़ा देते हैं हमारी गालियों से माँ-बहूत बीबी माई, कोई नहीं बचता।

यों तो गालियाँ बकना हमारा सिपार है मगर साइतौर पर जबरस्त पुस्से की हाछत में हमारी बवान के पर सय जाते हैं। गुस्से की बटा सर पर मँडकारी और मुँह से गालियाँ मूसलाघार मेह की तरह बरसने लगीं। अपने दुरमन या बियोगी को दूर से बड़े बड़ी-बोटी गुना रहे हैं आस्तीनों बजाते हैं, पैतरे बरकते हैं, जैसे छान-पीली करते हैं और सारा जोख बंद नापाक गालियाँ पर बरतन हो जाता है। बियोगी की सतर पुस्तों को बवान की गंधी से सभपन कर देते हैं। इससे बढ़कर हमारे आतीय कमीनेपन और नामदी का सबूत नहीं मिल सकता कि जिन गालियों को सुनकर हमारे कान में जोख आ जाता चाहिए, उन गालियों को हम बूब की तरह पी जाते हैं। ●

बुहलक लगाये है मगर क्या बूब मजा के-सेकर —

पुस्से की हास्य में बवान की बहू रबानी औरतों में क्या रंग दिखाती है क्या-क्या संवमियाँ उनकी बवान से निकलती हैं कि लीबा। जिन राधों की याद एक सज्जासील स्त्री के गालों को साज से साज कर बेपी ब सभ्य इन औरतों की बवान से बेभड़क और मोटरकार की रबानी के साथ निकलते हैं। अम्बासी और दुसरिया बरा पुरबोर सहजे में बिचारों का सेनवेन कर रही हैं। अम्बासी दुसरिया के बेटे को बवा जाती है। दुसरिया उससे घौहर को कम्पा जा जाती है। एक अम्बासी उसके बामाद को निगल लेती है। इसके बवान में दुसरिया उसके बामाद की बेबी की भेंट बड़ा बेती है। अम्बासी झुंझकार दुसरिया के बूड़े बारा की लंबी बाड़ी को बलाकर झाक कर देती है दुसरिया जाने में बाहर होकर अम्बासी के छातों पुस्त के मुँह पर छारकोल लपेट बेती है

घादी-म्बाह के मौके का यह सीन बैलिए —

बाराठ बरबाजे पर आयी और गालियों से उसका स्वागत किया गया क्यों ही खान का बच बाया सोम हाथ-पाँव धो-बोकर पत्तलों पर कड़ी-भात खाने बैठे कि चारों तरफ से गालियों की बाछार होने लगी और गालियाँ भी देखी बैती महीं पंचमेख कि वीछान लुने लो जहनुम से निकल भाये। सींग सपड़-सपड़ भात खा रहे हैं, डोस-मजीरे बज रहे हैं, बाह-बाह मची है और गालियाँ मापी खा रही हैं बोबा पेट भरने के लिए भात के बलाबा गालियाँ खाता भी बरुटी है। और है भी ऐसा ही। साथ ऐसे मौक से गालियाँ मुगने हैं कि चायद रामायण

महामारत और सत्यमाराधन की कथा भी न सुनी होगी। मुस्कण्डे हैं मुग्ध होकर गर्दन दिखाते हैं और एक दूसरे का नाम गंरगी में लिपेटे जाने के लिए पस करते हैं। जिन महाशयों के नाम इस तरह पेश होते हैं वे इसे अपना सीमाय्य समझते हैं। और शकत खरम होने के बाद कितने ही ऐसे लोग बच रहते हैं जिनके दिम में पाकियां जाने की हबस बाड़ी रहती है। कुशलसीव है वह भारती जो इस बन्त पाकियां जाता है।

जलबए ईसार नाम का उपन्यास (जो हिन्दी में बहुत साल बाद बरवान के नाम से आया) कानपुर ही में लिखना शुरू कर दिया था। उस पर भी कान बपबर बल रहा था। गन्धी प्रोहसु बाठें बकने की हमारी भारत का जिक्र यहाँ भी आया होखी के हुकरंग के सिलसिले में—

● परसों घाम ही से गाँव में बहस-बहस मचने लगी। मौजबानों का एक एक हाप में बऊ लिये प्रोहसु बाठें बकता हुआ दरबाजों-दरबाजों सेरी सगावे रुपा। मुझे भाकूम न था कि आज यहाँ इतनी पाकियां खानी पड़ेंगी। सज्वाहीन घण्ट उमके मुँह से इस तरह बेबड़न निकलते थे जैसे पूल लखते हों!

यहाँ से छुटी पाकर पुष्य मण्डी देवी जी के बबूतरे की ओर बड़ी और यह न समझना यहाँ देवी जी की प्रतिष्ठा की घयी होगी। आज वे भी पाकियां सुनना पसंद करती हैं। छोटे-बड़े सब उन्हें यंकी-गंदी पाकियां सुना रहे थे। आज के रोज ईतर को गाम्नी देना भी माऊ है, माँ-बहनों की तो कोई मिनती नहीं। ●

मपर पाकियां तो सिर्फ एक किस्म हैं जहालत की। और भी बहुत तरह की बहानत वेखने में आती हैं। और फिर मूब है, बीमार है।

जलबए ईसार १९१२ में प्रकाशित हुआ। ४ मार्च १९१४ को मुँगी जी ने निगम साहब को लिखा था— मुझे अभी तक यह इत्मीमान नहीं हुआ कि कौन-सा तबे तहरीर' अकित्यार कर्ने। अभी तो बकिम की मकल करता हूँ अभी बाबाद के पीछे बकता हूँ। आजकल काउण्ट टाम्बटाय के किस्से पढ़ रहा हूँ। तब से कुछ अभी रंग की तरक तबीयत माइस है। यह अपनी कमबोरी है और क्या।

जलबए ईसार में बपबर बकिम का रंग धिलता है, लकिन मुब अपने रंग की तलाय भी मौजूद है। पहली बार, अपने घर से दूर, बुन्देस्मण्ड के देहात में मुँगी जी की कथाकार बुटि अपने गाँवों की तरक जाती है जहाँ हिन्दुस्तान बसना है उसकी मूब और छपीकी की तरक अगिधा और अंबकिरवास की तरक।

कथा की नायिका विरजन महारानी से (जो हमीरपुर का ही एक इन्सा है) बिट्टी मिलती है—

● क्या सुनती थी और क्या देखती है। टूट-भूटे फूल के सोंपड़े मिट्टी की दीवारों, बरों के सामने कूड़े-करकट के बढ़े-बढ़े डेर, कौबड़ में छिपी हुई जैसे दुर्बल मायों— थी चाहता है कि कहीं चली जाऊँ। आदमियों की देखो तो उनकी सोचनीय बसा है। हड्डियाँ निकली हुई हैं। व विपत्ति की मूर्तियाँ और दरिद्रता के जीवनचरित्र हैं। किसी के शरीर पर एक केपटा बन्ध नहीं है और जैसे माम् हीन कि राठ-बिन पसीना बहाने पर भी कभी भरपेट रोटियाँ नहीं मिलती।

हमारे घर के पिछवाड़े एक पड़ा है। माचबी सेल्टी थी। पीब पिटसा ता पानी में गिर पड़ी। यहाँ कियवती है कि गड्डे में चुईलें महाने आया करती है और वे अकारण राह चलनेवालों से छेड़छाड़ किया करती हैं। इसी तरह बरवाड़े पर एक पीपल का पेड़ है। वह मूठों का अड्डा है। गड्डे का ठो मय नहीं है परन्तु इस पीपल का भास सारे गाँव के हृदय पर ऐसा छाया हुआ है कि सुखोस्त ही से रास्ता बन्द हो जाता है। बच्चे और भीरों तो उभर पैर ही नहीं रखती। हाँ बकेले-दुकेले मई कभी-कभी बसे जाते हैं पर वे भी बबरपये हुए।

किसी मूठ के विषय में कहा जाता है कि वह गिर पर चढ़ा है तो महीनों नहीं उतरता और कोई दो-एक दिन से पूजा लेकर बचग हो जाता है। माँबबाकों में इन विषयों पर इस तरह बातचीत होती है मानो ये आँसों-बैनी पटनाएँ हैं। यहाँ तक सुना गया है कि चुईलें बाना-पानी माँगने भी आया करती है। उनकी छाड़ी प्रायः बनुले के पंस की तरह सफ़ेद होती है और वे बाँयें कुछ-कुछ नाक से करती हैं।

मूठों के मान और प्रतिष्ठा का अनुमान बड़ी बनुराई से किया गया है। घोषी बाबा धापी राठ को काली कमरिया जोड़े अड्डाईप तबार, गाँव के बाँयें मोर घूमा करती हैं और मूठ-जटके पबिकों को मार्ग बताते हैं। राठ में एक बार उनकी पूजा होती है। वह अब मूठों में नहीं बसिक देवताओं में गिने जाते हैं।

इनके विपरीत घोषी बाबा से गाँव भर पराँता है। जिस पेड़ पर उनका डेरा है उधर से अगर कोई बिया पसने के बार निकल प्राय तो उसकी लीरियत नहीं। उन्हें मवाने से लिए दो बोटक दाक काफ़ी है। उनका पुजारी मंयस के दिन उस पेड़ के नीच गाँवा और बरस रग माठा है। एक कामा साहब भी मूठ बन पीटे हैं। यह महाप्रय पटवारी थे। उन्हें कई पंडित अतामियों ने मार डाला था। उनकी पकड़ ऐसी यद्दी है कि प्रायः लिये बिना नहीं छोड़ती। कोई पटवारी

यही एक वर्ष से अधिक नहीं जीता। पाँच से षोड़ी दूर पर एक पेड़ है। उस पर एक मौलवी साहब निवास करते हैं। वह बेचारे किसी को नहीं छेड़ते। हाँ बृहस्पति के रोब पूजा न पहुँचायी जाय तो बच्चों को छेड़ते हैं।

यहाँ न देवी है न देवता। मूठों ही का सा भाग्य है। ●

इसी किस्म की एक और जहाजत की तस्वीर बिरजन देती है—

कहा यहाँ देवी जी की पूजा थी। हल पत्थी पुर चूल्ह सब बन्द थे। देवी जी की ऐसी ही आज्ञा है। उतकी आज्ञा का उस्तर्धन कौन करे? हुक्का पानी बन्द हो जाय। सात मर में यही एक दिन है जिसे गाँववाले भी छुट्टी का समझते हैं। बर्ना होली-दीवाली भी रोब के जरूरी कामों को नहीं गोक सकती। बकरा चड़ा हवन हुआ। सत्तू खिलाया गया। अब गाँव के बच्चे-बच्चे को पूर्व विद्वान्त है कि प्लेग का भागमम यहाँ न होगा। यह सब तमाशा देसकर सोमी थी। लगभग बारह बजे होये कि सैकड़ों जाबमी हाथ में मशालें लिये धोर मचलते निकले और सारे गाँव का घेरा किया। इसका यह मतलब था कि इस सीमा के भीतर बीमारी पैर न रख सकेगी। घेरे के समाप्त होने पर कई लोग दूसरे गाँव की सीमा में कुछ गये और बोड़े पूरक पान चाबक लीग आदि चीजे जमीन पर रख माये। यानी अपने पाँव को बना दूसरे पाँव के सिर बास आये। जब ये लोग अपना काम खतम करके यहाँ से चलने लगे तो उस गाँववासों को मुनगुन मिल गयी। सैकड़ों जाबमी काठियाँ सेकर चढ़ बीड़े। दोनों पक्षवाला में खूब मार-पीट हुई। इस समय गाँव के कई लोग हस्टी पी रहे हैं।

मूक शरीबी बीमारी और जहाजत का यही गढ़ा है जिसमें से हिन्दुस्तान के पाँवों को निकलना है। इसकी चेतना पहली बार प्रेमचन्द को 'जलबए ईमार' में बाकर हुई और मुशामा का यही बेटा प्रतापचन्द जो देवी अष्टभुजा के बरबाम से उसको प्राप्त हुआ था बिरजन को न पाने पर संन्यासी बनकर बाबाजी के नाम से बैबडेबा के इसी महायज्ञ में कूर पड़ता है और गाँव-गाँव जकल जगाता धूमता है।

छोटी कहानियाँ का सिलसिला भी मजे में चल रहा था। इसी बीच उर्दू प्रेम-यशीली की तमाम कहानियाँ लिखी गयीं जिनमें आम्हा खानी सारबा खाना इरशील-जैवी खजपूती खिरता की कहानियाँ भी हैं जो मुंशीजी का स्थानीय लोक-कथाओं से मिलीं।

यह सब ताठीक था लेकिन एक जमी थी जो खू-खूकर मन को कचोटती थी।

१८ मार्च १९११ को उम्हूनि महोब से निबन्ध साहब का लिखा था— जी बाहुता है मये-मये बाजबाव पर कुछ नाटिक लिखा करें। मयर बाजबाव का इत्तम

मुझे उस बात होता है जब वह मजबूतों में निकल चुकते हैं और उनके देर बर-  
बात हो जाने का खौफ रहता है।

१३ अक्टूबर १९१५ को फिर बस्ती से लिखा था — जब तक करो-  
मंडेय से लगाव न रहे किसी मजबूत पर किञ्चने की तहरीक नहीं होती और मजबू-  
तों की मुक्ति से घृणा है।'

यह चीज उस आधमी के मन की बनावट का पता देती है। उसका मन ऐसा  
नहीं बना था कि वह सबसे जसम अपने कोने में बैठकर कहानियाँ लिखता रहे। म-  
ठीक है कि उसे जसम अपने कोने में बैठना भी अच्छा लगता है और कहानियाँ  
लिखना भी अच्छा लगता है लेकिन उसको भी नहीं आता जब तक उसे बचकर इस  
बात का पता न हो कि दुनिया में कहीं क्या हो रहा है।

दिसम्बर की मिरफ्तारी के बाद सन् १९८ से लेकर सन् १४ तक भारतीय  
राजनीति में बहुत सभाटा छाया रहा। कांग्रेस फिर बहुत कुछ अपने उसी पुराने  
परम्पराओं पर लौट आयी थी। ताहम पता तो होना चाहिए कि देश में किसे  
में क्या हो रहा है। सक्रिय राजनीति में उसने जीवन भर कभी कोई हिस्सा नहीं  
लिया कोई पर नहीं समझा लेकिन राजनीति का महत्त्व जहाँ पर और प्रमुख  
के लिए जोड़-तोड़ नहीं बल्कि जाबादी की और ईमान की बेहतरी की सफाई है  
चाहे अपने देश में चाहे दुनिया के किसी कोने में उसमें शुक से उसकी दिसचस्पी  
रही और गहरी दिसचस्पी रही और मरते बस तक रही। अपने जीवन में वह एक  
बिना के लिए भी उस तरह का विरुद्ध कलाकार नहीं रहा जो इन सब बातों की  
ओर से नीतरग होकर, उदासीन रहकर, अपनी कला की साधना करता है। कोई  
उसकी यह भाव उसका यह रूप पसन्द करे या न करे, मगर यह है। साहित्य उसके  
लिए बसनेवा है, लोकेवा है। दोनों में कोई अंतर नहीं है और न दोनों के बीच  
कोई खाई या पर्वा है।

इसीलिए मजबूत पढ़ने का उसको बहुत चाव है और एक मजबूत से उसका  
काम नहीं चलता। लुभ एक मजबूत से पचावा सँवापि की उसकी विघात नहीं है  
इसलिए वह जहाँ भी रहता है किसी कर्म या वाचमात्म्य की सहाय में रहता है  
जहाँ जाकर बार-बार मजबूत पढ़ सके। इलाहाबाद भी जाता है तो पैदल या एक  
जाना इसके का देकर बटवा से दो मील दूर भारतीय भवन जाता है।

ऐसे आधमी के लिए यह पूरी सजा है कि उसे मजबूत और मजबूत-जमी बौद्ध  
जगहों में पटक जाय और दूर-दूर देहातों में घटकना पड़े जहाँ जाफ भी भी मुक्ति

नहीं है। न अखबार ही पढ़ने को मिलते हैं और न ऐसी संगत ही मिलती है कि बातचीत करके वह कुछ पा सके। और भी सजने की बजह यह है कि वह रफ्तार बनाता — वैसे काठम लिखते रहता चाहता है जो कि क्रिस्महाङ्क छूट गया है। महब किस्सागो बनने से उसकी तबीयत नहीं मखी वह अखबारनबीस भी बनना चाहता है। ४ मई १९१३ को मुंशीजी ने महोबे से निगम साहब को लिखा — देस ऐजाना मेरे नाम जारी हो गया है। मैंने उसका मामानिगार बनना मंजूर कर लिया है। मुजाबबे की बातचीत हो रही है। नहीं उसके मन में ऐसा कोई भाव नहीं है कि अखबारनबीसी बटिया काम है।

वह भंभा हुआ था रहा है। नहीं यह भीज नहीं पक सकती एक मिनट नहीं पक सकती। कुछ न कुछ इंतजाम करना ही होना। और मुंशीजी फौरम उसके इंतजाम में लग जाते हैं। खुद को तकलीफ देते हैं, अपने बोस्टों के पीछे पड़ते हैं मगर जैसे भी हो उस भीज का इंतजाम करके ही दम लेते हैं।

उठ एक नजर ज़ाहिमे इन सतों पर जो अपनी कहानी बाप कह रहे हैं।

१३ मई १९१३ को उन्होंने महोबा के एक छोटे-से कस्बे कुम्पहाङ्क से लिखा —

मैंने मखबन मांगा था वह आपने न भेजा। कोई नाबिख गुदड़ी बाजार से लिया हो तो वह भी बीरंग भेजिए। इलाहाबाद की काइबेरी की निस्वत दर्यास्त किया मगर वह आउट स्टेशन में किताबें नहीं भेजते। अब की इलाहाबाद जाऊंगा तो अपने सुसरबादे को अपना कायम मुकाम<sup>१</sup> बना जाऊंगा। वह अपने नाम से किताबें लेजर मेरे पास भेज दिया करेंगे।

फिर एक सत में लिखा —

अब रिवालों और अखबारों का बिक। आप मुझे माडर्न रिप्यू सीडर और हिन्दुस्तान न बीजिए। माडर्न रिप्यू मैं मंगाऊंगा। हमदर्द जब मनकपीब आने ही लवेगा। बस कोई एक धर्तु पर्चा मसखन बकील या बतन मुझे और मिलना चाहिए। हिन्दुस्तान मैं आज मंगाता हूँ। इतना काफ़ी हो जायगा।

घनू १४ में बस्ती से लिखा —

सीडर मेरे पास एक भी नहीं आया। फालूम नहीं क्या हुआ। मैंने बंपाली जारी करवाया है। घायब दो-तीन दिन बाक जारी हो जाये। अब यहाँ मुझे माडर्न रिप्यू इंडियन रिप्यू बगीरूड मिल जाया करेंगे क्योंकि पंडित मदन द्विवेदी कुमरिया बंध के तहसीलदार हैं।

फिर ४ सितंबर १९१४ को वही बस्ती से चिन्ता —

भाज स्टेट्समैन के लिए किस दिया है और अब मैं डाक का बेहतर इंतजाम रखूंगा ताकि आबाद के लिए बागौजा नोटिस सिख सकूँ। लीडर का इंतजाम जो आपने किया है एक मामूली अलबारन्सा' के लिए तो अच्छा है मगर जिसे अलबारन्साभीची भी करनी पड़े उसके लिए क्याया कारभार' नहीं है। इसलिये स्टेट्समैन के जारी हो जाने पर उसे बंद करना पड़ेगा। आप मेरे पास पत्रह रुपये भेज दें तो ऐन नबाबिख' हो। उसमें मैं स्टेट्समैन भेजा सूँगा। और माह सितंबर की तनकाह भी महसूस हो जायगी। नये-नये इंतजाम की बजह से मैं यहाँ ठमरस्त हो गया। आरपाइया बनवानी पड़ीं। अभी जानवर नहीं भिया मगर उसके लिए रुपये की दिन-रात क्रिक है। कुव सैनाटोजन का इस्तेमाल कर रहा हूँ या घायब यह धीधी बरम हो जाने पर मुस्किर से भिख सकेगी। बस्ती में अभी किसी से समासाई' नहीं। बस किट्टी इसपक्टर को जानता हूँ। और कुमरियामज मे पं मदन द्विबेबी तहसीलदार से बाकक्रियत हो गयी है। प्रताप की बरीस्त। अभी तक यह नहीं तय कर सका कि कुमरियामज में क्याय कइँ या बस्ती में।

तय करने में जो दिक्कत हो रही है वह घायब इलीकिए कि रहना तो घायब बस्ती में क्याया अच्छा होगा क्योंकि वह कुमरियामज से बड़ी बनह है मगर कुमरिया पंज में अलबारों का और घायब कुछ क्रिठारों का भी क्याया सुभीता रहेगा।

जो भी हो, इस बात से इन्कार करना मुस्किर है कि बीहड़ से बीहड़ बनह में भी बैठकर, जहाँ न तो डाक का सुभीता है न टीशनक्यास सारों की सोहबत सहत से मजबूर, लेमी के बीरु की तरह बनकी में जुते होने के बाबजूब उसने एक जिन्दा आयमी की तरह जीने और काम करने की तदबीर निकाल ली।

साधा तबीयत का आरमी बिसठे भीतर कइी काई उलजाय नहीं है, जिस चीख को पकड़ता है इसी एकाग्र भाव से ऐसी ही एकाम्त गिय्य से। स्वराज्य की बात ने तितक की बात ने बहुत मजबूती से उसके दिल को पकड़ लिया है।

यों आरमी भी वह बीमड़ है जैसे तलत बीमड़ होता है। जिन्दी पर उसकी पकड़ मजबूत है और उसकी कसाइया सब थोड़ी हैं। पैरा बरूर तैतिहर कं पर नहीं हुआ लेकिन मन का साँचा वही है। कँसी भी नहीं भरती हो वह उसे फोड़े बिना नहीं रह सकता।

मन्तिल बसीम नहीं है पर उसको बेमिख करना जानता है। बिगराय नहीं है।

बीरे पर हो चाहे बर पर, भिन्नता नहीं रहता। पहले बंद कमरे में लिखने का अभ्यास वा जब लुछी राबटी में लिखने का अभ्यास बाल सिपा है। जिस दिन नहीं लिख पाते वो उदास रहता है कि जैसे एक दिन व्यर्थ गया। कर्म ही जीवन का एकमात्र सच्चा सुख है। जो समय सरकारी झूठी का नहीं है वह समय उनका अपना है नितांत अपना यानी अपने बरबालों और अपने साहित्य का। रस्मी भेंट-मुलाकात के लिए यहाँ-वहाँ जाने की अतिरिक्त सामाजिकता उनके अन्तर न थी। समय भी नहीं मिलता था प्रकृति भी नहीं थी। वो-एक दोस्त-अहबाब सदा रहे जिसके साथ हर बरत का उठना-बैठना था जो उनकी तकलीफ-आराम में साथ बैठे थे लेकिन बस नहीं। जिस चीज को हम अपने समय समाज में सोचकर चाहते थे वह सब लागू करते हैं उससे प्रेमचंद का कोई नाता न था। अपने अफसरे तक के यहाँ जाने की मुदीजी को फूसित न थी।

प्रमचंद को महोत्र में रहते चार बरस पूरे हो रहे थे। तभी उनकी तन्दुरुस्ती को एक बबरदस्त धक्का लगा जिससे वह हिम उठे और जो सब पुष्टि तो सारी शिथिली उबर नहीं सके—

● मैं हमीरपुर ही में था कि मुझे पेशिदा की जानकारी हो गयी। गर्मी के दिनों में देशांत में कोई हरी सरकारी भिन्नता न थी। एक बार कई दिन तक लगातार सूखी बुझी लानी पड़ी। यों मैं बुझों को बिच्छू समझता हूँ और तब भी समझता था कि न जाने क्याकर यह कारण मन में हो गयी कि अजबान से बुझों का बारीपन जाता रहता है। खूब अजबान बसबाबर का लिया करता। इस-आरह दिन तक किसी तरह का बरत न हुआ। मैंने समझा घामद बुन्देलखण्ड की पहाड़ी बसबायु मे मेरी पुर्बल पावन-भक्ति को तीव्र कर दिया अकिन एक दिन पेट में बरं बुरा हुआ और सारे दिन मैं मछली की भाँति तड़पता रहा। फंकियाँ खापी मगर बरं कम न हुआ। दूसरे दिन से पेशिदा हो गयी मछ के साथ भाँच जाने लगा लेकिन बरं जाता रहा।

एक महीना बीत चुका था। मैं एक इस्ते में पहुँचा तो वहाँ के पानेदार चाहते ने मुझसे जाने ही में ठहरने और भोजन करने का आग्रह किया। कई दिन के भूंग की बाल खाते और पच्य करते-करते ऊब उठा था। सोचा गया हर्ब है जान यहीं ठहरो भोजन तो स्वादिष्ट मिलेगा। जाने ही में अइसा जमा दिया। बरोगा जी ने बमीरन्द का सालन पकबाया पकौड़ियाँ बही-बड़े पुमाब। मैंने एहतिमान से खाया—बमीरन्द ता मैंने केवल दो फंकें खायीं—लेकिन ला-मीकर जब पाने के सामने बरगा जी के पूरु क बँगले में सटा तो दो-दार्द मटे के बाद पेट में



सबाल का जिसके लिए पानी का एक छीटा काड़ी होता है। अब एक बच्चे का बीमार पैंटी बेसबी इम्फलाइज और चिड़चिड़ापन पहली बार उसके स्वभाव में आ रहा था। वह बेहती कैरियल जो हर चीज को हँसी-मुसी सेस सेती थी, जो उसने इतनी मुश्किलों के बीच होकर पायी थी अब हाप से छूट रही थी और मुसी भी उसे बखरार रखने के लिए भी छोड़कर अपने आप से रुक रहे थे। बहुत रुका इन्तहाम था।

इन्हीं दिनों उर्बु प्रेम पचीसी के प्रकाशन का विचार उनके मन में आया। जिस काल में उम्होन पहली बार लिखा था कि सेहत अच्छता बहुत अच्छी नहीं है उसी काल में ९ फ़रवरी १९१३ को उन्होंने मसयबाँ से नियम साहब को लिखा था —

“ मुझे यह सुनकर बड़ी खुशी हुई कि आपका मधीन प्रेस अब बनफ़टीक बन आयगा। जिसकाबी कुतुबफरोपी की शार्से भी कामम होगी। ईस्वर आपकी कोशिशों को सरसम्ब करे। मजबूर हूँ कि मुझे to fall back upon का कोई सहारा नहीं है। बस किराये का टट्टू हूँ। प्रेम पचीसी इस प्रस का पहला काम होगा। अपने तई मुबारकबाद देता हूँ। बीस किस्सों से बायब हो गव हैं, वो अभी हमबर्ब के वफ़तर में पड़े हुए हैं। माफ़ूम नहीं हमबर्ब खुलेपा भी या ठण्डा पड़ गया। बहरहाल दो-तीन माह में पचीस किस्से उकर हो जायेंगे। हूँ किताब किमी क्वर खलीम हो जायगी। बार सी मुक़दे से बिची तरह कम न होगी। विस्तर उचीस सठरी रहता बाहिए और साइब जमाना के दो बरस काल के साइब के बरबर। काठिब खुशख़त हो। मैं मजामीन की उरठीब दे दूंगा और कहीं कहीं आपे की इसतियाँ हो गयी हैं उनको इसलाह भी कर दूँगा। मगर मेरे पास सब पर्बे मौजूब नहीं हैं। बकसर बायब हो पये हैं। इसलिए बकरत होयी कि मेरे पास सब पर्बे मौजूब हो जायें। बहरहाल जिस बक़्त प्रैयला हो जाय मैं पहाँ स उन बन्व किस्सों की काफी मेज दूंगा जो मेरे पास मौजूब हैं। बीबाबा आप सिस्सेमे या थाप जिसे मुनामिब समझें उससे सिखवाइया। खर्च और ग़फ़े में मुझे निरक़ का सठीक समझिए। पर्बे का बिक्र ही क्या खर्च में आपे का सास बार हूँ।

यह ख़ास बात है उनकी विमात्र विचार बल पड़ता है बल पड़ता है। कुछ तो यह उमंश कि नियम साहब का प्रेस आ गया है जो एक तरह से अपने घर का ही प्रेस है और अब कहानी-संघइ छप जायगा। जमाना में कहानीयाँ निजसी भी तो पड़नेवालों ने बहुत पसन्ब किया था लेकिन बकरत है कि विठावी मूठ में उन्हें लोपा के सामने पैदा किया जाय। बहुत जमाने से कोई संघइ नहीं निकला और एक जो पाँच कहानीयाँ का चार बरस पहले निकला भी था वह भी जल हा

— आपका नाम बर दिया गया। एक मसम्ब में यह जमाना पहला कहानी

संग्रह होमा, पन्चीस कहानियों का जो लोगों के सामने पहुँचिगा। हममें अब देर न होनी चाहिए।

नये छत्रक की इसी अभीरता में उन्होंने अपने पहले ही छत्र में सब बाँधें छिस मारी और अपने स्वभाव की सहज एकाग्रता के साथ उसी की तैयारी में लग गये।

महीन भर बाद लिखा — प्रम (पन्चीसी) के बिस्स २१ भापके यहाँ छप गये हैं २ हमदर्द के यहाँ हैं। वह दोनों आज मँपबाये सेता हूँ। तब दो की कमी रह जायगी और यह बा किताबत के पूरे होने तक बन जायेंगे। तरतीब क्योंकर है। अबबाब' की मूरत में नहीं माते बर्ना मने बाहा या कि गुनामत सुदवारी' ईसार बरैरू के जनबान' से तरतीब है।

बीरता स्वामिमान त्याग — इन्हीं की ता जरूरत है देघ को और उसका मन महोबे की मिट्टी में एसी ही कहानियाँ बुँड रहा या जा पड़नेबाब के म तर इन गुणों को विकसित कर सकें। उसके मिजाज में एक तरह बुर्जा-जैसा ठहराव है और धूमरी तरह बर्णों-जैसी उतावली। बीच की हाकत उसके लिए नहीं है। जो भी काम बह हाप में सेता है इसी तरह हाब थोकर उसके पीछे पड़ता है। क्हा नियाँ लिखते बाब जैसे प्लाट के नये-नये पहलू बाठबीज के नये-नये टुकड़े दूर्य क नये-नये रंग बड़ी तेजी से उसके त्रिमाण में आते हैं, इतनी तेजी से कि इकलम साप नहीं ब पाता उसी तरह बूझरो सब बाँधों में।

किताब छपना तो दूर रहा अभी प्रेस में भी नहीं बी पयी प्रेम काफी भी अभी ठपार नहीं हुई यहाँ तक कि प्रम भी अभी नहीं जम' सेकिन इसी खत न बह इतना और जोड़ना जरूरी समझता है — यह बहुत अच्छा होगा कि किताब पच्छिद में आने से पहले तास-त्राम महुके इकलम क पाम इजहारे तय क लिए भेजी जाय और यही छपे इतहार का नाम है।

सेकिन किताब का जन्म से जन्म छपान की जितनी बेताबी संभव को है उतनी अगर छापनेबासे को न हो तो कोई ताज्जुब की बात नहीं है। मुसकिन है कि क्या नयापन साहब की तरह से कुछ मुस्ती न हुई हो। सेकिन मुँधीजी एक बार बस पड़े तो फिर मुस्ती की ताब नहीं ला सकते। बाबमुसी का बेटा है बाब क हरकारों के बीच पककर बसा हुआ है बस्त्र से बस्त्र सब खतों को टिकान लपाकर अपने घर पहुँचकर आराम करना चाहता है। और जितनी ही तेज उसके पैरों की बाब है उतनी ही तेजी बह हर काम में चाहता है। नहीं मिलती तो मँडकाता है।

१ परिच्छेद २ बीरता ३ स्वामिमान ४ त्याग ५ छीपक  
६ सेयवों

१ दिसम्बर १९१३ तक किताब के बस साढ़े चार फर्में हो पाये थे। इसकी पोड़ी-सी झुंझसाहट इस वाक्य में दिखायी देती है — कापड़ के लिए मैं बहुत जल्द भ्रम्या भेजता हूँ। अब जो कुछ जाबीर होगी उसका इन्तजाम मेरे ऊपर न रहेगा।

और फिर हस्की-सी सिकापठ — प्राक्सिल कापड़ के एकबाई इन्तजाम न होने के बावजूद किताब पचरवी हो गयी है। कोई मुबायका नहीं। टाइटिक पत्र बूबसूरत होना चाहिए। बस।

मगर जिस भी बजह से जो किताब के छपने में देर पर देर हो रही थी और उसी अनुपात में मुंचीबी की झुंझसाहट बढ़ती जाती थी। २ फरवरी १९१४ को उन्होंने बाँदा बिसे में छरीसा नाम के इन्से से बहुत ही खीसकर लिखा — मामूम नहीं मेरी किताब की किताबत हो रही है या नहीं। बचते कर्म उसमें जमा लगाएँ और धना देने की जरूरत हो तो मुतला फरमाएँ ताकि किताब के छाया होने की उम्मीद को बिल से निकाल दूँ क्योंकि मुझे उस भस्मानस की तरह जो आपके बपुद से अपनी किताब छपाकर उठा या इतनी पूर्यत नहीं है। बिल गुजरते जाते हैं। अगर किताब उस बफ्त निकली जब लोगों को यह ख्याल भी न रहेगा कि प्रेमबंध कौन है तो उसके निकलने से क्या फायदा ?

ताहम किताब न निकली और मुंची बी के हमीरपुर से निकलने का बफ्त आ पहुँचा। सेहत जिस तेजी से गिर रही थी हमीरपुर में अब रहना खतरे से खामी नहीं था। २२ मई १९१४ को उन्होंने निगम साहब को लिखा — कापड़ मैं किसी तरह कानपुर तकरीब होकर आ सकता। तबदखे की दरखास्त तो बी है मगर मामूम नहीं कहाँ फेंका जाऊँ

कानपुर का तबदखना मामूमकिन समझकर सायद उन्होंने दर्यास्त में अपनी पसंद स्ट्रेलबंड के लिए जाहिर की। लेकिन तबदखना जब हुआ तो न कानपुर मिजा न स्ट्रेलबंड वह पटका गया बस्ती के डिसे में और इलाका वह मिजा जा नैपाक की तरफ है।

छाड़ से गिरा खमूर में बटका। काम बही दौरोँ का बेतन नहीं छाठ। जगह-जगह का खाना जयह-जगह का पानी। पचिया और बड़ गयी। और छतके साथ ही नाउम्मीदी अपन जीन की तरह स। अग्रदा भी क्या हम तरह बिम्बा रहने स। इससे तो बच्छा है कि इस सरकारी नौकरी को छोड़कर बही किसी बखवार में काम लिया जाय या किसी प्राइवेट स्कूल में मुर्शिखी की जाय। यह ठीक है कि सरकारी नौकरी के अपने भी बहुत से फायदे हैं। बेसी हुई तनखाह मिलती है और बफ्त पर भिस्तती है। बेजिजी रूठी है। लेकिन अब यह भी मरते बड़ी फ़िक्र अपनी जाय की लप गयी है

इसी हिस-बिस में जान पड़ी थी क्या करें क्या न करें। एक मन कृता या छोड़छाड़कर भागो जहाँ सींग सनाये, यहाँ तो बेनीत मर जायामे। दूमरा मन जो बँबरे में कूबडे करता था वहाँ को बँब देता था।

बहुत बार भी होता था कि जाकर जमाना में काम करने सगें सेहिन उसकी अपनी विस्तृत थी। वह अल्प एक कहानी है।

दुमरे पक्षों पर भी खयाल जाता था और मुमकिन है खयालरायन साहब को उन्होंने सिखा भी हो कि नजर उछिएया और मुतको बताइया।

नियम साहब ने उन्हीं दिनों सायब अबब अखबार की बात छेड़ी। उसका खयाल देते हुए मुंशीजी ने लिखा —

पहले अबब अखबार वाला मामला। क्या खयाल हूँ। मासी पृष्ठ यह है कि यहाँ नेट आमदनी अस्सी रुपये से किसी तरह खयाल नहीं है। बीरे का खर्च और मुकाबिलों की लतख्वाह इसमें शामिल नहीं है। कड़ीब-कड़ीब पही हायलत यहाँ भी हायी। और मसालिख बरस्तुर। मगर काम में बड़ा फर्क है। यहाँ बहुत आबादी है, बाबनूर गुजामी के बुँकि कोई मसलर सर पर नहीं रहता और न कोई खयालदेही है। इसलिए आबादी-सी मामूम हायी है। १ बजे से ५ बजे की हाबिरी रिमाणी काम रोबाना अखबार—जी काप जाता है। हिम्मत नहीं पड़ती। यहाँ लिटररी काम ख-मंडला लऊपीह है यहाँ पर मबाया हो जायमा।

इसी तरह का एक प्रस्ताव सन् १४ के आखीर में आया जब कि मुंशीजी बस्ती में से अपन नाम से बेजार और अपनी बिन्दगी से बेजार।

कोई पंडित बिखनाप जी बैनिक पत्र निकालनेवाले थे। उसक बारे में प्रमचन्द ने १ नवम्बर १९१४ को नियम साहब को लिखा —

मैं अपनी मौजूदा हाबत के एतबार स रोबाना अखबार के खयाल बिनी तरह नहीं हूँ। मेरे लिए तो अब यही मुनासिब है कि किसी प्राइवट स्कूल की मास्टरी कर लूँ, जहाँ से माहवार मिले। इमी के साथ-साथ जमाना और आबाद की बिबमत बरें। इस तरह मुझे साठ-मत्तर रुपये माहवार का मौसल पड़ता जाये। इसमे खयाल की ख्वाहिश नहीं और न इममे खयालपा सक्त हूँ। खामनाह लखीर से क्यों लूँ। कुछ बिताबें मिलूँगा कुछ अपनी बिताबें छन बाँडेगा। पाँच सौ सेरी बमाई है अबे इन्हीं कामों में सजें बरेंगा और बिब आखिर जब लिटररी रोहरत हासिल कर सकूँगा तो कोई माहवार रिमाता निबालकर

मुबार करेगा। और अगर इसके पहले ही हवात<sup>१</sup> में अबाध दे दिया तो फिर समनाम सत है।

फिर बड़े हसरत भरे कहने में —

क्या कहूँ आपने मुझे उलझने में कोई कसर नहीं रखी। खुब उछावा मगर मैं ही क्रिस्मत का अंश हूँ कि उलझकर परबाब<sup>२</sup> नहीं कर सकता बकि मीचे मिलने के लिए करता हूँ बर्ना सिमबतसाक बर्मेन की टाछ<sup>३</sup> बिन से चिन्वपी बसर कया। इन्हीकत कह है कि सेहूत बड़ी नीब है बिचने इसकी कइ न की उसक लिए बजुब राने और सर बुनने के और कोई इलाज नहीं है। साँठ बुनिया को सैगानोजन अयबा करती है, मुझे इसक कुछ न हुमा। आपन चार-पाँच मीक हवा खाने की सलाह बी है, उसकी तामीक कर रहा हूँ। पाँच दिन से अगावार तीन-चार मीक चूमठा हूँ। उम्मीद है कि तबीमत टिचन होगी। कोई प्राइवेट स्कूल की मुबारिरी का चर्चा हो तो मेरा सपाक रसिदेगा क्योंकि मैं अब इससे बेखार हो गया हूँ।

तबीमत के टिचन यानी बिलकुल ठीक होने की उम्मीद अलत साबित हुई और प्रेमचन्द को मजबूर होकर अपने इलाज के लिए एक महीने को इलाहाबाद जाना पड़ा वहाँ उनके समुर साहब ने उनका इलाज करवाया। सक्रिम अब उधसे कोई अयबा न हुमा तो उन्होने अपने समुर साहब के ही और बेने पर चार महीन की छुट्टी की दरवास्त दी।

बड़ी-बड़ी मुश्किलों से भापी तनइबाह पर छुट्टी मंजूर हुई।

मुंशीजी ने निमम साहब को लिखा —

कल से मैं आजार हो गया मगर अतबाब बरीछ<sup>४</sup> यहीं पड़ा हुआ है। उधे सेकर मजबूरन बनारस जाला पड़ता है। अर्जत बरीछ<sup>५</sup> बुरस से मरूँ तो दूदन फूटने का डर रहता है। सालिबन दो या तीन दिन बनारस में बर्गे। असइ बाण कानपुर आ जाऊँगा मगर इयाबा मुस्तकिल तीर पर बनारस में रहने का है।

बस्ती से अलत-बकत उम्होने एक बहुत सुन्दर कहानी मरहूम के नाम से लिखी जिसका परिबेग बुन्वेअसअइ का है। उसके बाद तो फिर कः महीने पुरे के पूरे बीमारी की मजर हो पये लिपना-मइना बिलकुल बन्द रहा।

इलाज के लिए सबसे पहले वह काठपुर पहुँचे। बीबी अपने मँके पीं चाची कमही में। निगम साहब के नाम ही बर लिमा और इलाज बनने लगा। सुर ही रही अमात्रे के और उनका मट्टा निमालकर पीठे प। बही मुख्य आहार था।

लेकिन कोई प्रायदा न हुआ तब वह काननक मेडिकल कॉलेज गये कुछ दिन वहाँ भी इलाज कराया लेकिन जब कोई काम हुआ न दिखायी दिया तो बनारस चले आये और एक हकीम का इलाज शुरू हुआ। हकीम के इलाज से तीन-चार महीने में कुछ प्रायदा तो मालूम हुआ पर बीमारी जड़ स न गयी।

बस्ती आने के ज़पारक से उन्हें डर मालूम हो रहा था। मन दूमरी दूसरी बीबी में आशय खोज रहा था।

एक रोज उन्होंने अपनी पत्नी से कहा — मेरी इच्छा होती है कि मौजूद छोड़ छोड़कर कहीं एकान्त में बैठकर लिखाता-पढ़ता। क्या कहें मेरा पुत्रान्य है कि मेरे पास थोड़ी-सी जमीन भी नहीं। मेरे पास दस बीघे भी जमीन होती तो मैं अपने खाने भर का गुल्का पैसा कर लेता और चुनचाप एकान्त में बैठकर साहित्य की सेवा करता।

पत्नी ने स्त्री की सहज व्यवहार-बुद्धि से उत्तर दिया — दस बीघे जमीन में आप क्या सोना उपजा लेते? अपनी आप हो महीने मौजूद छोड़कर बैठ जायें तो हाथ-तोबा मच जाय। आठ साल काम करते हो गये। आपने सौ रुपये साल बचाये होते तो आठ सौ रुपये होते। मन की मिठाई खाना एक बात है काम टोक-ठीक चलाना दूमरी।

प्रथम बस्ती आने के ज़पारक से डर मालूम होता था। और तब उन्होंने उस सूत्र को एक बार फिर पकड़ने का निश्चय किया जो

इससे पहले भी बहुत बार हाथ में धाया था और घूट गया था या छोड़ दिया गया था — सूत्र जो उनकी विन्दपी को बाँधनेवाला एक बड़ा मजबूत धागा था उनके जीवन का एक पुराना स्वप्न जिसकी छाया में बिघाम करता उन्हें बहुत अच्छा मालूम होता था पर जब आय चलकर एक दिन वह खाना मच हुआ तो फिर बिघाम नहीं मिला।

और उन्होंने ३० अप्रैल १९१५ को बतारस से किता —

क्या जमाना की मौजूदा हालत इस क्रांतिक है कि कोई शकस उसे बर १० )  
 रुपये आपके मर करने के बाद १२० ) रुपये बीमार मसाराफ़, मसकन् उगल्लाह  
 मीनेजर, फ़िजमा मकान गुजराना एबीटर और उनस्वाह अपराधी बहैरु के लिए  
 निकास सके ? आप बरय मेहरबानी तहरीर करमाइए कि कस्टुमर बिच टापीक  
 से शुरू होमा उस टापीक से आप अपने कस्टुमर पर कौन-कौन-सी जिम्मेदारियाँ  
 वापर करेंगे ? मैंने अभी मौक़ी पर जाने का कोई इच्छा नहीं किया। वो माह की  
 कससत और ले सी है। अगर कस्टुमर की सूख निकल जाये तो मैं प्रीरल चाक भरकी  
 कससत बेतगल्लाह की बख़रिस्त मेजरर चाक भर तहरीर बाबमाई करना  
 चाहता हूँ।

जमाना को अपने हाथ में लेकर चलाने की यह एक नयी योजना थी जो इस  
 बन्त उन्हें सुझ रही थी और वह इस बार अंतिम बार एक गम्भीर प्रयत्न करके देत  
 लेना चाहते थे। विशेषकर इसलिए कि उनकी बीमारी पूरी तरह ठीक न हुई थी  
 और सारी कोशिश-मैरकी के बावजूद वह फिर बस्ती में ही पटके जानेवाले थे जहाँ  
 जाने के सवाब से ही उन्हें डर मामूम होता था।

जमाना का इत्तमदान सैमाकने की बात पहली बार जून १९१५ में उड़ी थी  
 जब कि मुंशी बी ने निगम साहब को लिखा था —

अधवीच में छोड़नेवाले और हूयि। यहाँ तो जब एक बार बाह पकड़ी तो  
 बिलगी पार लगा बी। मौक़तउय न आवें। क्या बहाँ मुर्ता न होमा बहाँ मुबह  
 न होयी ? एबीटोरियस में सब कर लूंगा। सतो-किटावत जो मुआमल की है  
 मैं कर लूंगा। घास एबीटर की तकजो के क्राविल जो मुतुत होने वह तिरमते  
 टापीक में पेश हूयि। और काम करने का बंदोबस्त होना पकटी है। केविल टपा  
 सेंके। जाने का बन्त जायेया तो मगबिरा हो रहेया। जान पात्रे में न डाली।  
 हिम्मते मरई, मरये सुदा, हिम्मते एबिटरी मरये बोग्ता। हाँ यह एमान करना  
 बकरी होमा कि नबाह टय स्ट्राक में बाविल हो गये।

अगले महीने मुंघीजी कानपुर आ गये और १९ ९ के जुग महीने तक इनका कोई सवाल ही न था क्योंकि स्कूल में मास्टरी करते हुए वह दयानन्दन नियम के शर्तों में बे-बाधा ढीर पर जमाना के अस्तित्व एडीटर का काम करते रहे।

फिर जैसे ही उनका तबादला इमीरपुर के लिए हुआ और जमाना के साथ उनका संबंध बँधा गया और रोडमार्ग का नशी रह गया उनके मन की मूख बेहद तेज हो गयी और जब निगम साहब ने अपना साप्ताहिक पत्र आबाद त्रिफाला तो उसके सिलसिले में प्रेमचन्द ने लिखा—

छ माह मखबार की हालत देखकर बाप को फँसला कर सचूँगा कि मरे लिए कौन-सा रास्ता खपाया सीमा है। यहाँ से रजमठ लेकर चला आऊँगा। क्या बजब है, मैं मखबार को चला सचूँ। अगर छ माह के बाद मखबार कुछ बे निकला तो मैं हाथ-पैर फँलाऊँगा बर्ना अपना-सा मुँह लेकर अपने पुराने डबबर पर चलेगा। नगर साठ रुपये से कम पर मेरा मुजाय नहीं हो सकता। यह माऊगोई भावको अपना दोस्त हमदर्द और माई समनकर करता हूँ। मैं काम से जी नहीं चुपना न इस ऊदर मुठालवा चाहता हूँ गोवा मैं नहीं का बड़ा मुगी-बिहार हूँ। नहीं न इस ऊदर मुठालवा चाहता हूँ और मुजाय साठ रुपये से कम में नहीं हो सकता। निरुं मुजाय चाहता हूँ और मुजाय साठ रुपये से कम में नहीं हो सकता। मैं काम करने के लिए तैयार हूँ ऊपर लिखी हुई शर्तों पर और उम हाकत में जब कि मानी हाकत मुस्तक़िहो। और मैं क्रिये का टट्ट बनकर काम न करूँगा बल्कि सच्चे बोध से।

निगम साहब की अपनी मजबूरियाँ थीं और कोई ठीक आरबातम मुगी जी को न मिस सका। ठाहम जन्होंने हिम्मत न हारी और २ नवम्बर १९ ९ को इमीरपुर से ही लिखा— बीकनी के मुतालिक मेरा जपाल अब भी है, मगर मेरा जपाल है कि मैं मजाग की फ़िक से आबाद होकर खाना काम कर सकता हूँ।

फ़िरना नासुक इयाय है कि आप जीविका की कुछ व्यवस्था कर लें तो मैं जा जाऊँ। उस दौर से तक भी कोई आरबातम न आया मगर मुंघी जी इतनी जस्टी हार माननेवाले न थे।

१८ मार्च १९१ को उन्होंने लिखा— बहुराक मीने मुन्मन' इयाय किया है कि जुलाई और अगस्त में रजमठ लूँ और अपनी मखबारी आबमियत को आरमाऊँ। आशिया बीना ईदर आहे।



पटा नहीं वह छुट्टी लेकर कानपुर गये या नहीं लेकिन इतना तो साफ है कि वहाँ ठहरने की कोई मुरत नहीं बनी।

आजाद को निकलते अब पाँच महीने हो गये वे और मुंशीजी मुक से ही उसमें लिप्त रहे थे। २ मई १९१३ को उन्होंने नियम साहब को ठकावे का एक पत्र लिखा—

आज मैं आपसे कुछ मुआमले की बातचीत करने की आजादी चाहता हूँ। आजाद को छाया हुए टकरीबन पाँच महीने हुए। आप छ महीने की मुरत की मजबूर की कामयाबी के लिए काफ़ी ज़यास करते थे। वह मुरत अब टकरीब है। मुझे पकौन है कि आजाद अब बल निकला। मैं अच्छे से और अब तक हस्ते भीजात और फुसंत आजाद के सिंगे बोझा-बहुत लिखता रहा हूँ। मगर आप जानते हैं वह माहिवात का जमाना है। हर एक इंसान अपनी मेहनत का कुछ न कुछ मतीबा बकर चाहता है। खुदबख्त ऐसी हासत में अब कि मेरी सेहत भी अच्छी नहीं है। कुछ असली मतीबा की तरतीब<sup>१</sup> गप्स<sup>२</sup> के सिंगे बहुत कात्पर खातिर होती है।

इसी तिलसिखे में वह इस बात का संकित भी वे जाते हैं कि उनकी तबीयत सरकारी मुआजिमत से क्यों मानती है—

मैं कितनी कीड़ा मचडूर हूँ और मेरा ठबई मैदान<sup>३</sup> जैवा है उससे उम्मीद नहीं है कि मैं सरकारी मुआजिमत में कभी कारमुबार कहला सकूँ। मेरा सुमार अब तक दर्जए सोम के आरमियों में रहा है और आहत्या रहेगा।

लेकिन यहाँ पर वह कुछ और बात कह रहे हैं बड़े व्यावहारिक आदमी की तरह अपने पारिभमिक का ठकावा—

मेरी अस्कमोई<sup>४</sup> होनी काजिमी है। अगर इपर से नहीं तो किसी और तरफ से सही कुछ माभी प्रयत्न हीना चाहिए। इसीलिए मेरी आपसे बरगवास्त है कि आप अब उहे करण<sup>५</sup> जितने मजामीन या नोट शायद करें उनकी सजस्त किसी एक घरह से मसलतु जाठ जाने की कालम मुकरर<sup>६</sup> फ़र्मा दीजिए। मेरा तयाक है कि यह आजाद पर कोई नाकाबिले बर्दास्त बार न होगा क्योंकि मैं किसी हफ्ते में भी बार कालम से स्पादा नहीं कित्त लफंगा और आजाद को स्पादा से स्पादा सिर्फ़ बस फ़ाय मेरी नजर करने पड़ेंगे। मुझे उम्मीद है कि आप इसे मेरी जानिब से भी लली न जमाना प्रयत्निकि। मैं आहवा का बि यह लहूक<sup>७</sup>

१ मजामीन २ भीविजता ३ मेरवा ४ आमा ५ किसी रजान ६ तीवरे  
बज ७ मौदु पाँचना ८ हुपवा ९ पारिभमिक १ दर ११ मुताब

आपकी 'आदि' से होती मगर एक ही बात है। अगर आप इसे पसन्द न करविये तो कोई मुझपरका नहीं मैं हूँ बरपूर, मौजूद और फुर्सत के लिहाज से कुछ न कुछ कर्मों लिखवत करता रहूँगा मगर सायद बोस्ताना बेगार समझकर। मैं जानता हूँ कि आप ठीकी-बस्त हैं, माकी हाकत अच्छी मही मगर ऐसा क्यों हो। और अक्सर तय्य कर रहे हैं, आप क्यों मुकसान उठाने देखकर और बेनतीबा ईमार क्यों करें। इस बेतकसफ़ी के लिए मुझे मुआफ़ करविएगा। और अगर तय्यीय पसन्द आये तो सिर्फ़ क्नाये से इसका जिक्र कीजिए बर्ना वा मन जो दु' यह जिक्र मही खाम हो जाना चाहिए।

तक़ाज़ा भी है और किसी इतर सक्ती से तक़ाज़ा है क्योंकि वैसे का अभाव निरन्तर दबा रहा है लेकिन बजाबारी को ह्राब से नहीं जाने देते।

एक रोज़ बाद जब निगम साहब का अभाव आया तो मुंशी जी को फ़ौरन महसूस हुआ कि दोस्त का बिल दुखाकर मैंने अच्छा मही किया और उन्होंने माफी नामे के तौर पर उसी दिन लिखा — मुझे यह सुनकर सतत मत्काक हुआ कि अभी तक आबाद अपने पैरों पर खड़े होने के इच्छित नहीं हुआ। यही फ़र्क करके मैंने एक आपको एक सिकावतनामा लिखा है जिस पर अब नादिम हूँ। कौती भी बनावट मुघीमी के लिए बिरानी भीज है। न तो उन्हें पिक्कापतनामा लिखते देर लगती है और न उसके बमले ही रोज़ माफ़ीनामा लिखते।

देखिए एक ठण्ड पारिकमिक का तक़ाज़ा और दूसरी तरफ़ दोस्ती की बजा बारी कितने सहज रूप से चुक-मिलकर ७ जून १९१३ के पत्र में सामने आती है — मैंने अपने परसोंनामे खत में कुछ अठियाए आबाद का जिक्र किया है। मई और जून में कुछ भीनीस जातम हुए। अब सायद जून में कुछ न लिखूँगा क्योंकि ह्राबमा निहायत कमबोर हो गया है और एक बच्चे भी पैटना बुरवार है। अगर मज्जा सारह' रसिए तो आठ मुबस्किमात' हूँगे हैं। अगर आप बरैर बहुत क्याया तय्युब के एक तीन चार रुपये की बाब और साढ़े चार रुपये का जूठा भिजवा सकें तो आपका बहुत ममनून' होऊँगा। एक ह। पारिस में दोनों जा सकते हैं। येच जूना छोटक में किया है और मैं बरख़ता-या हूँ। मगर यह सब उसी हासल में कि आपको तय्युब या परीगामी न हो बर्ना तय्युब हूँ बुरमत हूँ सही। और क्या लिखूँ। पूने का न ७×४ है।

१ मोर २ इपारे ३ आपने और मेरे बीच ४ तय्यियत ५ बुरस्वार  
६ स्वीकृत दर ७ रुपये ८ इपत ९ तमे पांच १ मज्ज क्याया अच्छा  
है (बहाबन)

जिस मोलेपन के साथ जूते और घड़ी का बिज बाता है उसने बात की संकष ही बाल भी है। और तवीयत की इसी सावगी का एक पहलू यह है कि कमी छोटक उनका जूता बटाकर बरुये बनवें हैं और कमी बिजयवहापुर उनका कोट, और कमी इस घटना के समयभ बीस बरस बाद, सिबरानी रेबी उनको सभे देठी है जाकर अपने लिए कपड़ा सरीदने को और वह उस सभे को से जाकर प्रेस के मजदूरों में बांट देते हैं और खासी हाथ बर खीटने पर बीबी को डीट साते हैं।

तवीयत की यह सावगी यह मोलापन सभ्या है इसीलिए उनकी और निरम साहब को तीस-इकतीस बरस की वीस्ती में कमी ऊर्क नहीं पड़ा बाबजूद इसक निरगड़ के कई मोठे बाये बीस कि किन्ही दो ब्यक्तियों के बीच जाते हैं।

ऐसा एक मौका वह था जब कि शायद १९१४ के आरम्भ में जिस समय जर्दू प्रेमपचीसी छप रही थी और मुंछी जी का उबावसा बस्ती के लिए अभी नहीं हुआ था वह छुट्टी लेकर निरम साहब के यहाँ काम करने पहुँचे। इरादा शायद यह था कि आबमाकर देखा जाय। बीरे की मौकरी में सेहत बराबर निरखी जा रही थी जैसे इस भाव-बोध से नवात मिसे कि पर पर रोटी खा सकें।

बिहाबा वह कामपुर पहुँचे कुछ हफ्ते काम किना और सुट्टी जब लख हुई तो हमीरपुर सौत गये। निरम साहब को यह बात बुची लगी उन्होंने शायद समझ लिया था कि मुंछी जी मुस्तकिल तौर पर काम करने के लिए आ गये। कुछ अजब नहीं कि मुंछी जी ने बास में जाकर इस तरह का कुछ आमास निरम साहब को दिया भी हो और जब उनके दूसरे मन में मामले के ब्यावहारिक पहलू पर धीर किया हो तो वह भाव सजे हुए हों। बहरहाल दोस्तों में बोड़ी रंजित हुई। निरम साहब ने बिफरकर एक ठेक-सा सत लिखा। मुंछी जी ने ठण्डे पानी का सौटा देते हुए अपनी सज्जई की—

अताबनामा<sup>१</sup> जिसे आपका इलायतनामा<sup>२</sup> कहता चाहिए, बगुल हुआ। कई दिन हो गये सोचता रहा किन सफरों में जाबाब रँ बीसे मुस्ता ठण्डा करें। कुछ अजक नै काम न किया। न देर-बो-धावरी से मस<sup>३</sup> है कि से-चार बरिया घेर चस्ता<sup>४</sup> कर रूँ। बिजबातिर दिख ने यही प्रैमता किया कि तुम लडाचार<sup>५</sup> हो। मिजाजे यार में जो कुछ बाबे कहने दो और खबाल बन्द क्रिये सुन जाओ। यह कहता कि मैं बेगला<sup>६</sup> हूँ सामिबन आपके नबरीक कोई मानी नहीं एउता क्याकि आपका मुस्तर है कि आपके बंद बडीड भी मुलाजिने सरकार है और आप इबाइर

१ मोब का पत्र    २ इलायतनामा    ३ सेंट    ४ लोरी    ५ निर्घोष  
६ निरमों

से बाकिफ्त<sup>१</sup> हैं। मगर मुआक कौबिएमा जमर में अर्ब कर्हें कि आपन अपनी उन्न का सबसे बेगाबहा हिस्सा मेरी तरह सरकारी मुखाबिमठ में सर्क किया होता तो आप इतनी बेजौरी से यह अस्फाब न लिखते। मैंने रखसत सेने में कोई 'नजीबा'<sup>२</sup> नहीं छोड़ा। वो दर्तास्तें बीं तार दिया। दर्तास्तें दोनों बाद अन्न बस्त दी गयी और दोनों मेरे पास रखती हुई हैं। बेराक मैंने मेडिकल सर्जिकिनेट देने की कोशिश नहीं की लेकिन मुझे वहाँ उसके मिलने की उम्मीद भी न थी। यह इसबाम कि दर्तास्तें कर्हों बाद अन्न बस्त दी गयीं मेरे सर रयाग से रयाग १ से है क्योंकि मेरे पहले इतए जयामे कानपुर में तो आपने राबाना बरीरह का कोई बाहरका तबकिया<sup>३</sup> नहीं किया। बिक किया तब जब मेरी रखसत सरम होन को मायी और फ्रैमला उस बरत हुआ जब कुछ तीन दिन रह पये। ऐसी हाकत में मेरे जैसे जरणे का बारमी बनूब इसके और क्या कर सस्ता था कि रखसत उन की कोशिश बहरे इमकान<sup>४</sup> करे और न मिल सके तो मजबूरन बसाचारन अपनी शौकरी पर आपन आ जाये। आप ही फर्माइए, मुझे क्या करना पड़ी थी क्या दबाव था कि मैं पहले कान गुरू कर बैठा और तब आप रुका होता? आपने मेरा गला नहीं दबाया था और न दबा सकते थे। आपने मुझे किसी सैजिअरस पर मजबूर नहीं किया न मैंने कोई सैजिअरस की। मेरा मासी फायदा था। फिर ऐसा कौन अर्ब<sup>५</sup> था जो मेरी बेचिनी<sup>६</sup> का बाइस होता? हमीरपुर में मैं एने वक्त पढ़ूँगा जब मेरी रखसत तमाम होनबासी थी। मैं १३ की शान को चला और इतबार का दिन। डिप्टी इमपेकर बीरे पर। सरब हमीरपुर में ऐसा कोई शंस न था जिससे मैं सताह-मघबिरा ले सकता क्योंकि हमीरपुर में मेरे जाननेवाले गिनती के आपसी भी नहीं हैं। यहाँ फायदा, और चार्ज सेन में तब भी एक दिन की बेर हो गयी जिसका जबाब मुझको देना पड़ा। यह है मेरा बयान हक़ी।

और अब मुझीकी उस बात पर आते हैं जो कि शायद उनक चले आने या माग निकलने का असली कारण हो—

अब दूसरे पहलू पर सबर कौबिए। आपको मेरे भाग निकलने पर नाउब होने की चकरत नहीं है क्योंकि जैसा अखबार आप चाहते हैं वह कम उनसबाह और खर्चों में निकल सकता है और निकल रहा है। एक मामूली सेहत और मामूली शिप्राजन का आरमी ऐसा अखबार निकाल सकता है जिनमें बहुत-सा आरिबिगत न लिखना पड़े।

१ परिचित २ अतमोल ३ जटा नहीं रया ४ बेर से ५ बिक, चर्चा  
६ आपन ७ सामर्थ्य मर ८ बात ९ अदिच्छा १ बारप

बच्छा तो यह बात है। मुंशीजी न बोस्ती का हक बना किया है — जो काम कम पैसों में हो सकता है उसके लिए बोस्ती पर क्यादा खर्च का बोझ क्यों डालो ? इसी री में २२ मई १९१४ को उन्होंने हमीरपुर से कुछ जानपी बातों का हवाला देने के बाद लिखा —

जब रही जमाना का इकमबान सँमासने की बात। उर्दू की हवा आजकल बिगड़ी हुई है। अजबदारनबीसी बहुत मुश्किल हो गयी है। बितने मौजूदा रिवाजे हैं उनमें किसी को फ़रोख़ नहीं है। सब क़ुत्ते की ज़िन्गी भीते हैं। इन हाज़ात में क्या हीसका हो। इबर १५ साल की मुलाजमत। कुछ दिन भीर ज़िन्वा रहें तो Invalid पेंशन का इक़्तार हो जाऊँ। मेरे लिए यही लाइन सबसे अच्छी है और मुझे यहीं पढ़ा रहने दीजिए। यहाँ आक्रियत<sup>१</sup> है और गोधानसीली<sup>२</sup> में क्यादा कामें<sup>३</sup> रहूँगा। इसी हालत में कुछ तसनीक<sup>४</sup> का काम भी कर सकता हूँ। जतबार बा रिवाका केकर मैं तसनीक का काम कुछ न कर सकंगा। अभी रोज़ बंटा भर सिट्टेरी काम करना अच्छा माकूम होता है लेकिन दिन भर इसी सल्ल में बैठ रहूँगा।

३ जून १९१४ को जब कि स्वास्थ्य बहुत गिर चुका है और वह एक ठरक तवाबले की औसिध कर रहे हैं और बूखरी ठरक छुट्टी की बजास्त दिये बैठे हैं, उन्होंने साफ़ भर गुबार जाने पर फिर बड़ी की इरमाइस की मगर ज़ी लुबमूखी के साथ —

अगर आप इसाजे बोस्ती के ठीर पर मुझे एक बाब इताबत कर सकें तो आबाद की माबदार रहेगी। मगर वह बाब नहीं जिसक घाय तीन रुपये में सोमह बीजें मिलती है। अजबूत भड़ी हो जो क्यादा नहीं तो ठील-बार साल तक तो साथ है।

बास्ताने के यह तज़ाजे बछते रहे कभी थोड़ा मनमुटाव भी हो गया लेकिन ग़ाँठ नहीं पड़ी। अमड़े की पोसना न इन्हें आठा या न उन्हें, और बोस्ती की नीब पक्की थी।

मुंशीजी को बूस्ता आते बेर न लगती थी लेकिन उतरते और भी कम बेर समती थी। मिबात्र में एक अकलइपन सवा से वा और साऊगोर्न की आबत थी। कोई बात नागबार माकूम होती तो ज़ौरन एक छर्न लिख मारते लेकिन बस एक नर्म-ते छत या एक नर्म-सी बात की बेर थी और वह पानी-गानी हो पाते।

२२ मई १९१४ के छत क साथ-आठ महीने बाद जब रिमम्बर-जनवरी मं

छ महीने की छुट्टी देने की मौजबत मापी तो मुंशीजी एक बार फिर अपने उची पुराने सपने की खोज में कानपुर पहुँचे। लेकिन धर्म।

कानपुर से लौटने पर उन्होंने नियम साहब को दिखा —

भाप मेरे यहाँ बसे भाने से कुछ तरह-रु में तो नहीं पड़े ? बात यह है कि मैंने जमाना की मौजूदा हालत को देखकर उस पर क्या-बा बोल डालना मुनासिब नहीं समझा। मेरा खयाल था कि उसकी मासी हालत में कुछ एस्तहकाम<sup>१</sup> आया होगा मगर जनबदी नंबर ने मुझे वहाँ और क्या-बा नहीं रूने दिया। मेरे बड़ भाने से मगर क्या-बा नहीं तो तीन सी रुपये साल की बचत तो हो पयी

और अब पत्र को ठेके पर लेकर आमाने की यह अंतिम योजना निगम साहब की ओर से पेश हुई।

मुंशीजी ने बस्ती पहुँचकर बचाव लिया — शरीफदार तो बनने के लिए मैं बना रहूँ, मगर जब तक भाप नहीं बनाते नहीं बनता। यह शबरोरोज की गुलामी फिसे पसब है मगर मजापा<sup>२</sup> की सूरत भी तो होना बरूटी है।

पन्द्रह रोज बाद १ अगस्त १९१५ को एक सबि सत में तउसील से अपनी सत्ते लिखकर भेजी जिनका सारांश यह था कि मासी जिम्मेदारी सब बदस्तूर निपम साहब की रहेगी मुंशीजी बिना कुछ लिये-रिये काम करेये जब तक कि जमाना कुछ देने इाबिल नहीं हो जाता। मुंशीजी ने लिखा —

मैंने मासी जिम्मेदारियाँ सब भाप पर रखी हैं। इसके बजुह<sup>३</sup> मुनिए। मेरे पास इन छ माह की रखसत के बाद आठ सी रुपये हैं। तीन सी रुपये मैंने तीन असाभियों को अठारह फ्री सरी मूद पर इर्ब दे रिये हैं। मेरा नजवी घरमाया इस बजुह कुल पाँच सी रुपया है। इमे मैं उम बजुह तक के लिए सुरप<sup>४</sup> का वसीला<sup>५</sup> समझता हूँ जब तक कि जमाना से मुझे कोई अयपदा न हो — और कौन जानता है उस मुबारक बजुह के लिए कितने दिनों तक इंतजार करना पड़े।

शरीफ ने अपना साप कर्षा बिदूअ सोसकर रख दिया एक तरह से अपना सपी कुछ बाँब पर उपा दिया ताहम सासेबारी न हो सकी।

बाखिरकार मुंशीजी ने मंसबदारक पहली मितंबर को लिखा —

मैं जो आबिज हूँ वह मातहठी से। काम ऐसा करना चाहता हूँ जिसमें बजुह मेरी तबीयत के और किसी का लडावा न हो। मगर जी में भावे तो पउ-रिन कटाया रहूँ भी चाहे तो पोड़ा ही कर्बे और यह भिर्क मानिकाना हैसियत में हो सफटा

नजर और बुझ-झपाक इंसान है जिसने दुनिया को 'क्या दुनिया थीर क्या दुनिया का जगारा' क्या पिढ़ी थीर क्या पिढ़ी का शोरवा' समझ रक्खा बा। अपनी खुदबारी और बेर-सनासी के बावजूद जो उनसे मिच्छा बा उससे बड़े अछ-साऊ' और खम्दापेशानी' के साथ पेश खाते थे और हर मिलनेवाला उनसे हरबर्न मूठास्तिर' होता बा। इन्तहा रज के नेक थे। किसी के मुआमले में दखलंदाज' होना उसी तरह उनकी फितरत' के बिखाऊ बा जिस तरह बेकार बैठना उप रजामा या थीर तरीकों से बरत जाया' करना। उनके मजदूक बिन्दवी के हर कामहे की हीमत थी। अपनी झूटी बड़ी तनखिही और फर्ज-सनासी' से अंजाम देते थे और उससे अरिण होते ही सामोषी से कुछ बिखाने-मढ़ने में लम जाते थे। वगब उनकी मज-मियारी' उस बन्द भी मसहूर हो चुकी थी मगर उन्होंने कभी अपनी खजान से उसका तबकिया मही किया और न किसी इशारे-कनाये से बाहिर होने देते थे कि वह छे अरब' में कोई खास दस्तगाह' रखते हैं। खाकसारी और मुकसिर-उल-मिजाजी उनकी ठीगत' थी। उनसे मिलने थीर उनके साथ रहने से एक ऐसे इंसान का तबैमुक' काबम होता बा जो अपनी बिन्दवी किसी बुझ-नजरिये के लिए बरऊ' कर चुका हो और जिसकी तबमील' के लिए हयात का एक एक कामहा हीमती समझकर मुकम्मल' इन्हाका' और पूरी लमन के साथ मसक्रे-कार' हो। अमाने नै यह बात बाद का शक्ति की जो हममें से बहुत सं लोग उसी ब त समझ चुके थे कि वह एक अजीमुस्सान' इंसान होये।

सूक छूठे ही मुंशी जी अपना झोका किये हुए रवाना हो जाते और रास्ते में सब्जीमण्डी से फल-तरकारी अंजाम-मछली-वाल बकरत की सब चीजें लींगते हुए घर जा पहुँचते। यह रोड का धंया था और उनका मनपसंद काम बा। अपने घर का काम करने में धर्म बैसी? धर्म ही दुसरे का मुहताज बनने में है। अपने बच्चों में भी वह यही बात बोलने की कासिदा करते थे। अपने छोटे-मोटे कामों के लिए किसी का अपने मौक्यों के भरोसे बैठना उन्हें पूटी और न मुहताज था। अपने जीवन के अंतिम अघ्याप में जिस समय मुंशी जी बंबई में थे और उनके लड़के

१ मुकसान २ मजबनता ३ हंसमुगपन ४ प्रभावित ५ हलधप करना ६ प्रहृष्टि ७ बर्जि ८ परिश्रम ९ कसम्बवीप १ गल-लेगन ११ बाहिरप कला १२ खजान १३ बिन्दवीसता १४ खमाय १५ बन्गता १६ समपिन १७ पूनि १८ पूटी १९ लमन २ काम में लया २१ मीरबनासी

इलाहाबाद में खूबर पड़ रहे थे जगमें कुछ बिबावटी छट-बाट की घानबमाऊ प्रवृत्ति देखकर मुंशीजी ने एक बार काफ़ी सिङ्की के स्वर में बंबई से लिखा था — Don't try to play the big man's son (मह बिसमाने की कोसिस मत करो कि तुम बड़े रहसजादे हो )

इन्हीं बस्ती के लिनों की दो-दीन मगोरंबक बटगाएँ शिबराजी बेबी ने वयान की हैं जो मुंशी जी के ब्यक्तित्व पर मच्छी रोसनी बासठी हैं। पहूनी घटना स्कूच के चाकिम हेडमास्टर भीबनकाक साहब से तात्लुक रखती है बिमसे सोम घर घर काँपते थे।

● एक दिन की बात है। हुम्मार का महीना था। हृषिया बरस रहा था। मकान गिर रहे थे। खू-खूकर हुम्म की आबाब सुगामी पड़ती। हम चार आबमी साबही एक मकान में बैठे थे कि मकान गिरेमा तो फिर जो कुछ होगा हम साप ही खतरा उठाएँगे। बूसरे पोच किसी तरह पानी निकला। बाप स्कूच गये।

हेडमास्टर बोला — कस बाप क्यों नहीं माये ?

— साहब उधर पानी बहुत तैज था।

— क्या बाप नमक थे जो पक चाते ?

— मैं नमक तो नहीं था हूँ मेरे पङ्गोस के मकान गिर रहे थे मुमकिन है मैच मकान भी गिर पड़ता।

— क्या बाप खूकर उधे गिरने से रोक लेते ?

— रोक तो नहीं सकता था हूँ घाब मर सकता था।●

ऐसे बेहूदा सवालों का जबाब बिच तरह देना चाहिए था उसी तरह मुंशी जी ने उनका जबाब दिया। होमा जो होमा।

लेकिन अपने दैनिक आचरण में यह आबमी बहुत-सी बातों में वच्नु भी नहा था सकता है।

● एक बार की बात है मैं बस्ती जा रही थी। बाप बीमार ही थे। रात का समय था। पेट भारी था। हम तीन आबमी थे। गाड़ी में भीड़ बहुत थी। उनके किए मैंने बिस्तर लमा दिया। वे छेटे हुए थे। सड़की भी छोपी हुई थी। जो मुताफिर माये। बोले — बीरों को बीठने की जगह नहीं पर ये सो रहे हैं।

मैंने कहा — तुम भी कहीं बैठ जाओ।

— उनको उठ दो।

— उनकी तबीयत मच्छी नहीं है।

— जब तबीयत ठीक नहीं थी तो कैसे क्यों थे ?

— बरबक मत करो।



की तैयारी में लगे थे। आसान परीक्षा नहीं की यह। चिन्त को एकाग्र कर पाना स्वयं एक परीक्षा थी। विद्यासहाई-साहूने बराबर सिरझूते रखी रखी पत्तों को बाय-बायकर मुँही की छत्तीस साल की उम्र में इष्टर का अपना कोर्स पूरा करने में लगे रहते।

मार्च १९१६ में उन्होंने अंग्रेजी साहित्य अखरीली तर्कशास्त्र और आधुनिक इतिहास में इष्टर की परीक्षा की और सेकंड डिबिजन में पास हो गये। इष्टर के पूरे अग्ररह बरस बाद।

अपनी इसी विमाही परेधानी और छटपटाहट की हालत में मुँही की का ध्यान पड़सी बार बहुत बोरों के साथ हिन्दी की ओर गया। उर्दू बखबारों से आमदनी कुछ आस नहीं थी किताबों का हाल भी बुरा था। 'बकनए ईशार' से साल भर में तीस रुपये मिळते थे और 'श्रीम पचीसी' छपकर तैयार होते-होते महापुत्र शुरू हो गया था जब कि मुँही की के सम्बन्धों में बंध की बून में सायब ही किछी को किस्से कहानी का सीक हो। और मुँही की का यह डर बिलकुल सही निकला।

उर्दू की यह हालत कुछ आस की नहीं थी एक बर्से से मुँही की देखते आ रहे थे और बाने-बनवाने हिन्दी की तरफ उनका लुकाव बढ़ता आ रहा था। ६ अक्टूरी १९१३ को उन्होंने निगम साहब को लिखा था — साथ मुझे अपने हिन्दी डिपार्टमेन्ट का एडीटर समझिए। मैं बखबारों और रिखाकों से मुनासिब और बिलचस्प तर्जुमे कर बिया करूँगा। कहीं-कहीं उन पर नोट और तनकीब लिखूँगा। हिन्दी छोडकर भी बिलचस्प और मुस्तसर सवानेहउमियाँ का सिलसिला भी पूँगा।

भारतेन्दु, केराब बिहारी बाले लेख जिनसे इन कवियों के जीवन और साहित्य का परिचय मिलता है, इसी सिलसिले की कड़ियाँ हैं।

काबिदास की कविता पर एक संवा लेख (जो अजु संहार क मुँही प्यारैनाम साकिर-हुय उर्दू पद्यानुबाद अकसीरे सुखन की भूमिका है) और मेबदूत और बिश्रमोर्बसी के उर्दू पद्यानुबादों की संवा समीक्षाएँ भी इसी समय इसी प्रकाश में लिखी गयीं और इन सबका उर्दूय एक ही है — हिन्दी-अंग्रेज की परम्परा से उर्दू पाठकों को परिचित करना। मुँही की इसकी उम्र बरस समझते हैं क्योंकि उनका कुछ बिस्वास है कि उर्दू का पीरा तब तक नहीं कहकरा सरता जब तक यह इसी देश की मिट्टी से हुआ-गला से अपनी गुराक सेना नहीं सीगता। करते हैं —

● अब इस बात को सिद्ध करने के लिए स्यास बलीकों की उकान नहीं है कि वह मजे-का सा अक्षर या संशुद्ध कविता हमारे दिनों पर पैदा करती है किसी दूसरी

भाषा की कविता की सामर्थ्य से परे है, विशेषतया उर्दू कविता के जिसकी उपमा उन पीतों से की जा सकती है जो अक्सर बागों में बनावटी चिन्दी बसर करते नजर आते हैं—मुझसे हुए पत्ते निर्बोव पीला रंग सिमटी हुई छाबों न फल न फूल। फारस का पीला हिन्दोस्ताण में लगाया गया न वह खमीन न वह भावहवा देखने से आँसों को टावगी होती है न फिर को लुधी। बेखिए वासिदास बर्पा खतु में यहद की मस्क्तियों का यहद बना करता किस मर्मी और खूबमूरती से दिखाता है—

तकासे यहद में है मस्क्तियाँ मुकुट परबाज  
मगर मिजाज में ये सादगी के हैं बंबाज  
कि नाचते कहीं आते हैं जब नजर टावस  
झिजाए वस्त में फैलाये बास-बो-पर टावस  
तराने साती हुई जब करीब आती है  
कौबस के फूलों के बोखे में बैठ जाती है  
महक रही है हवा केतकी के फूलों से  
बसी हुई है सबा केतकी के फूलों से  
हर एक रजिष ये है अमचट परीबमाळों का  
अबब बनाव है फूलों के यहनेबाळों का  
अमन में करती हुई मुम्बरम गुळ अछयानी  
छक छक के हैं पीतों को ये रही पागी  
कहीं अरम के दरख्तों पर छा रही है बहार  
हरे हरे किती जानिव हैं नीम के अघबार

छरो अमसाद, और अनोबर के मुकाबले में कबम्ब और भीम और केतकी कीसे अपने आन पड़ते हैं। ●

और फिर अगस्त १९१४ के अपने इसी मेल के अंत में मुंशी जी ने लिखा — काय उर्दू के कवि मौलाना दारर की तरह समझते कि इन कविताओं की नयी उपमाएँ और नयी बंदिमें उर्दू लिटरेचर के लिए अंग्रेजी और फारसी लिटरेचर की खेखन-सीसी से अधिक उपयुक्त हैं तो आज उर्दू दायरी को इतने ठाने न मिलते और उसे इतना दुःख-मला न कहा जाता।

यही वह जमाना है जब मुंशी जी की जान-महपान प्रताप की बरोखत पंडित ममन त्रिवेदी दमपुरी से हुईं। बीरे-बीरे इस जान-महपान ने अरमीयता का रग के किया और कुछ अजब नहीं कि मुंशी जी को हिन्दी की ओर खींचने में दमपुरी

जी का भी काफ़ी हाथ रहा हो। वैसे मुंशी जी खुद ही परिस्थितियों से बिकर होकर हिन्दी की ओर आ रहे थे। २२ मई १९१४ को उन्होंने निगम साहब को लिखा था—

‘उर्दू की हवा आजकल बिगड़ी हुई है। अखबारोंकीसी बहुत मुशकिल हो गयी है। बिलने मौजूबा रिसाले हैं उनमें किसी को प्रयोग नहीं है सब कुत्ते की बिलवपी बीते हैं।

फिर ४ सितंबर १९१४ को लिखा—

प्रताप के इसरात से मजबूर होकर एक मुस्तसर-सा हिस्सा हिन्दी में उसके बिजयवसमी मंवर के लिए लिखा है। हिन्दी लिखनी तो बाती नहीं मगर कुछ इकम ठोड़-मोड़ दिया है।

साल भर और बुझरा और १ सितंबर १९१५ को मुंशी जी ने वैसे अपने निरवय की सूचना निगम साहब को देते हुए लिखा—

अब हिन्दी लिखने की मस्क भी कर रहा हूँ। उर्दू में अब गुजर नहीं है। बह मामूम होता है कि बालमुकुन्ध मुत्त मरूम की तरह मैं भी हिन्दी लिखने में बिलवपी सर्फ कर वूंगा। उर्दूकीसी में किठ हिन्दू को ऊँच हुमा है जो मुझे हा बायना।

काहे की डेव लग गयी मुंशी जी को यह बालिरी जुमला उनके इकमकी गोक पर उतर आया? नहीं हिन्दुत्व की इस बिधेय गंभ के पीछे उनके तन्काणीम बार्सवमाजी मन का संस्कार तो नहीं है?

सोबे बरतन (१९८) देखने का पहला उबाल था। उतकी पुष्पभूमि में बंध-बंध-बिरोपी स्वदेसी आन्दोलन था जिसने हिन्दुओं और मुसलमानों दोनों को अपनी तरफ खींचा था।

१९१२ में ‘जल्बए ईतार आया जब कि मुंशी जी हमीरपुर में ब और बाइामवा बार्सवमाज के सरस्य थे। राष्ट्रीयता की भावना उनमें भी सहरे मार रही है पर वह हिन्दू राष्ट्रीयता है। सब तरफ के बिकास की राय बही सीमा-रेखा है। बहुत से लोग तो अंत तक उठ रेखा को नहीं लांघ सक। मुंशी जी ने लांघा और बच्छी तरह लांघा लकिन आम बलकर। अभी तो ‘जल्बए ईतार के बालाजी की पूरि बम्पना एक हिन्दू संघामी की है जिसके समस्त संस्कार, आचार-बिचार हिन्दू हैं, यही तक कि गोरसा भी मौजूद है— वैसे ही वैसे लिखक भी माहत्या निरोबिनी-सभा बनाना नहीं भूके।

सकिन यहाँ पर यह भी बाव लगना छीक होगा कि सोबे बरतन और जल्बए ईतार के बीच बिप्टे-भार्ने रिआर्म्स है जिन्होंने पुसक निर्वाचन के मिजाल को

मायता देकर, हिन्दुओं और मुसलमानों को भारतीय राजनीति में पहली बार स्पष्ट रूप से दो शिकरों में बाँट दिया।

बंगाल में तो बोट नहीं भूमि ही बाँट दी गयी थी पर तो भी विभों को नहीं बाँटा जा सका और बंगाल के समुक्त हृषय ने बिद्रोह कर दिया। १९७ के मूरठ इस बार बैसा कुछ भी नहीं हुआ और होता भी कैसे। १९७ के मूरठ अन्विवेधन के बाद कांग्रेस पूरी तरह नरमवसी लोगों के हाथ में आ गयी। तिलक को १९८ में पकड़कर बर्मा भेज दिया गया। सचर्प का स्वर बन गया। पहले के संविध बेग से मारा डेढ़-दो बरस जैसे-जैसे बढ़ती रही और फिर रुक गयी छोटी-छोटी चर्चों में बिचारकर ठहरा हुआ पानी सड़ने लगा। फिर वह भी सूख गया और जमीन का सीना दरक गया। पीर करते ही बात है कि मिष्टो मार्से रिप्रार्मर्स जब १९१ में आये तो उनके विरोध में कहीं कुछ नहीं हुआ किन्ती उन्हें की कोई हरकत नहीं हुई, परार बैसी की बैसी बनी रही। यही बरार मुसी जी के इस खत में भी बोल रही है जो उन्होंने धायप सन् १२१३ में हमीरपुर से निगम साहब को उनके प्रस्तावित साप्ताहिक आजाद के बारे में लिखा था—

“माम हिन्दू बहुत मौजूं था मपर धायप इस नाम का कोई पर्चा पंजाब में निकलने लया है बखबार का तमूना कामरेड ही हो। पाकिस्ती हिन्दू। जब मेरा हिन्दोस्तानी कौम पर एतकाद नहीं रहा और उसकी कोशिया किमूल है लेकिन म्याय कर सकने के लिए यह भी समझना बरूरी है कि यह मन की केवल एक वृत्ति है सहर अन्विवेकी प्रतिक्रिया किटी एक सामाजिक स्थिति की वह मुंठी जी का संपूर्ण मन नहीं है। होवा तो आये का इतिहास कुछ और ई होवा। और तो और, मौलाना मुहम्मद अली और उनके हमदर्द के साथ मुंठी जी का जो आत्मीय संबंध इन्हीं दिनों स्थापित हुआ वह भी धायप न हो पावा। मौलाना मोहम्मद अली सन् १४ में नजरबंद किये गये। उसके पहले मुंठी जी की बरार उनसे खत-किताबत रही। मौलाना उनकी कहानियाँ बहुत पसन्द करते और हर कहानी के लिए एक मित्री मख नल की डिकिया में रजकर मुंठी जी की नजर करते। इनसे बाहिर है कि यह हिन्दूपन मुंठी जी के मन की केवल एक वृत्ति थी एक उसनी हुई परिस्थिति की छाया— कुछ बैसी ही बीब बैसी सुनते हैं, उनकी कहानियाँ पढ़कर प्रविठ इस्लामी बिचारक और इतिहासकार मौलाना जिबनी नोयानी के साथ होती थी जो एक तरह तो उन कहानियाँ को पढ़कर सर सुनते थे और दूसरी तरह बहुत उबास होकर कहते थे— हिन्दोस्तान ने पाँच करोड़ मुसलमानों में कोई ऐसा क्यों नहीं है जो प्रेमबंद की उबास सिग धने

अगस्त की अठारह तारीख शाम के पाँच बजे बीमारी से दूटे हुए आयर प्रेमचंद अपनी सटिया-मभिया बर्तन-भाड़े समेत अपनी तीन बरस की बेटी कमला और पत्नी के साथ बस्ती से गोरखपुर पहुँचे।

क्वार्टर एक रोड बाद खाली होनेवाला था। बिहारा उनका अपना इपरा उनके रोड ही खाना होने का था। सड़क के नाम से धँ भी उनकी जान पर बसती थी और फिर इस वक्त तो बाल-बच्चों के साथ पूरी मिरस्ती समेत सड़क था।

लेकिन बीबी सब तैयारी कर चुकी थी और उन्हें उसी रोड खाना हो जाना पड़ा। पर बिल में बरबोर डर लगा हुआ था कि रात को वहाँ कोई बात न हो।

और वही हुआ जिसका डर था। वहीं उसी बरबारे में जहाँ उस रात उन्हें ठहराया गया था उनके बड़े बड़े मुसू (भीपल) के आगमन की तैयारी हो गयी। रात का बरत मयी जगह न किसी से जान न पहचान न बार्ड का पता न बाबुलर का। छापी मुसीबत का सामना था — लेकिन जिस अपनपी से दूसरे मास्टर लोग पैदा जाये उसके कारण कोई तकलीफ नहीं हुई और सब कुछ बहुत आसानी से हो गया। एक साहब ने बड़ी मुहब्बत से उन्हें से जाकर खुद अपने घर में ठहरा लिया था। तभी जगह के इस पहले ही परिचय से मुंशी जी का मन हलचलता से भर उठा। बीरे-बीरे मुंशी जी पर यह बात चुसी कि इस अपनपी के पीछे जहाँ सब लोगों का एक साथ खूना-सहना था वही हेडमास्टर बेचनलाल का व्यक्तिगत भी था।

बेचनलाल जतने ही स्नेही से जितने बस्ती के भीषनलाल बने। बेचनलाल को सबसे साथ बुलमिलकर खूना मज्जम लगाता था भीषनलाल अपने और मात हठों के बीच एक बीमार लड़ी रखते। बिल जैसा भी हा सड़गरियत उनमें कूट कूटकर मरी थी। एर ही मंत्र उन्होंने सीगा था जीवन में — कठोर अनुशासन। हरवम उसी का डरना घुमाया करते। बेचनलाल बिल के नेर भी के और मुँह के नीठ भी। अनुशासन का हास उन्हें बस इतना पता था कि सब को जी लगाकर काम करना चाहिए, रुपी में कोनाही न करनी चाहिए — और बिस्वास करते

ये कि ऐसा ही होता होगा। अगर और किसी कारणसे नहीं तो उनके इसी सरल विरवास के कारण लोय जाड़ी भी लमाकर काम करते थे।

मुंठी जी की नियुक्ति बेचनलाल के नीचे सेकड़ मास्टर के कम म गाठ रुपय पर हुई थी। खुसी तबीयत के एक आदमी को अपने ही बीसा दूसरा मिला गया। और दोनों की बूक धुर से ही मच्छी बैठ गयी। उन्हीं की हृषा से छ महीने के अन्दर ही बस रुपये की तरक्की भी हो पयी — इलाहाबाद से एक महीने की फ्रस्ट एड की ट्रेनिंग लेकर लौटने पर, जिस के लिए बेचनलाल साहब ने मुंठी जी को बुला और उनकी बीबी की बीमारी के बावजूब बिल करके भेजा। इनके बाद सास-बेड़ साल और बीतने पर मुंठी जी को बोर्डिंग हाउस का सुपरिण्टेण्डेण्ट बना दिया गया। उससे और भी पन्द्रह रुपये महीने की तरक्की मिल गयी।

मुंठी जी खुश थे काड़ी खुश। हेडमास्टर मेक। छापी मास्टरों म भाई पार। लड़के स्टेडी आकाफारी। और फिर बगह भी कितनी अच्छी थी। जाने के साथ भी को भा पयी थी। छ महीने पहले जब एक बार एक दिन के लिये भाये थे तब भी मन लसबा उठा था।

पुलमी बस्ती के उस गुंजान मुहल्ले के बाद पचीसों एकड़ जमीन में फैसा हुमा यह नार्मल स्कूल थीर ही और थी। एक ठरक ईवगाह का बड़ा-सा मैदान दूसरी ठरक फ्लफ्टर साहब का बँगला। मगर सब दूर-दूर। स्कूल का अपना महाठा पचीसों एकड़ का था। स्कूल बोर्डिंग सब कुछ उसी के अन्दर। कहीं मिसती है ऐसी बगह। साँस केठे वम बुटता था बहाँ — सँकरी-सँकरी थी गळिमा गिरने पड़े पुलने मकान एक पर एक बड़े हुए। और अब ? पूरी बादशाहत समझो। कितनी चाहो खुसी हवा मस्त रूप। बाइर बड़ी सेहतमंद जयह है। बच्चों को बेकने-कूदने का भी बड़ा आछम है। किसी बात का डर नहीं। चोट-बहरी से भी नबाठ मिली। अलप ही एक छोटी-सी दुनिया है। शहर के पास भी और दूर भी। जाना हो तो जर्द बाजार मुक्किल से दो फ्रलंग और न जाना हो तो नमी न बाइए, हमें मसलब ही क्या बाड़ी दुनिया से।

मोरलपुर उनके लिए नयी जगह नहीं है। महीं के एक-एक गली कूब से बह परिचित है। बचपन के कई बरस उसने यहीं बिताये हैं। आवागमनी भी जूब की है। तल्लिमे होयारवा और हरमसरा के क्रिस्से भी महीं पड़े और धुने हैं। बाए मियाँ के मेशान में परतगों का लड़ना भी बच्चों यही देखा है और ठरस-ठरन्दर रह गया क्योंकि खुद परतप उड़ाने के लिए पास में पैसे नहीं थे। बिन्दमी की पहली सिगरेट भी ठरह माक की डम में उमने यही पी है। बाबाक लड़को के साथ गयी बातचीत

के मझे भी उसने सायब यही पहली बार उठाये हों। अगिबी पढ़ाई भी उसकी यहीं शुरू हुई थी — राबत पाठशाला में। राबत पाठशाला मार्मल स्कूल से बना हुआ है। लेकिन तब यह मार्मल स्कूल नहीं था। तब तो यहाँ बस एक बीहड़ मैदान था। रात को इधर से निकलते डर लगता था। किसी पेड़ पर कोई भूत खड़ा था किसी पर कोई ब्रह्मपिशाच — और किसी पर कोई चुड़ैल। रात को इधर से कोई निकलता थोड़े ही था। हाँ दिन की बमाचौकड़ी के लिए यह मैदान अच्छा था।

गोरखपुर के साब उसकी न जाने कितनी कड़वी-मीठी स्मृतियाँ जुड़ी हैं। यही से आठवीं पास करके वह अपने पिता के साथ बनारस गया था। फिर वहीं में उसका नाम लिखाया गया। फिर उसकी शादी कर दी गयी। फिर पिता भी नहीं रहे। और भी न जाने क्या-क्या हुआ। अब फिर घूम-फिरकर वह इसी गोरखपुर में आ गया है। अच्छी-बुरी बहुत-सी स्मृतियाँ हैं पर उसको अच्छा लग रहा है यहाँ आकर, बहुत अच्छा लग रहा है। शरीर और मन दोनों से कुछ हलका।

हाँ घर में खरक साये दिन बीबी की अटपट बाबी से हो बापा कटती है। कभी बाबी मूँह में अपनी गुड़गुड़ी दबाये आकर बहू का रोगा रोने लगती है कभी बीबी नाराज होकर कोपमवन में जा बैठती है। हर रोज कुछ-न-कुछ लमा रहता है। बड़ी साँस में जान फँसी है। सब कुछ तो करके हार गया। कभी एक की बात ठीक माफूम होती है और कभी दूसरे की। अकल बकरा बाती है। इन लोगों को तो बकील होना चाहिए था — कितनी खूबसूरती से अपना मुकदमा पेश करती है। समझ में ही नहीं आता किसका क्या है और किसका अच्छा है। कभी एक को समझाता हूँ कभी दूसरे को मगर कोई जैसे अपनी जगह से हिम्मे को तैयार नहीं है। आपने समझा बात की सज़ाई हो गयी उधर फिर कोई क्या जगड़ा तैयार। क्या करे आवनी ऐसी हालत में। कोई तदबीर काम नहीं करती। बहुत बार वह बाबी के पक्ष को उभरत जानकर भी उम्मी का साथ देता है। अगर और किसी लिए नहीं तो मिर्ज़े इसलिए कि वह बड़ी है बुद्धि है और बुद्धों के स्वभाव में हट की माया भ्रमसर बढ़ जाया करती है। लेकिन उस सबसे भी बाल कुछ बनती नहीं। दिन जब लोगों तक से फट गया हो।

लेकिन वह भी तो अब पुरानी बात हाँ गयी है। इन जगड़ों को सोसने-सोसने अब वह भबर हो गया है। वह भी एक स्थितप्रज्ञता है अपने डब की। जीने का कुछ तो उपाय करना होगा — या बूब मरे इसी बन्दरत में? बाबी जैमी है, है। अब उन्हें बदला मही जा सकता। लेकिन बीबी का मिश्रण बदलना भी तो गैस नहीं है। वह पसन्दी है मुसल है मुहट्ट है। न होनी तो यारा अच्छा होगा

लेकिन ऐसा प्ररिस्ता कहाँ मिलता है। ऐब तो सभी में होते हैं। शासनप्रियता बरूरत से पयावा है इसके स्वभाव में। उपर जाधी अपना एक भी अधिकार छोड़ने को तैयार नहीं हैं। सारे सगड़ों की जड़ यही है। बूब समझता है वह इस बात को संकिन करे क्या? बहू अपने घर में अधिकार कैसे न बमाये। वो कुछ बहू करती है सब इसीलिए न कि घर की ब्यबस्था ठीक हो जाय और हरदम की पैसे की चिन्ता से छूटकारा मिले? अच्छा ही है, नहीं तो भावमी इसी में दफन होकर रह जाय। कुछ काम कर सकने के लिए जरूरी है कि रोज-रोज के सर्भों की चिन्ता से भावमी को मुक्ति मिल जाय। मन ही मन वह बहुत ख़ुशी है अपनी पत्नी का। लेकिन खूबसूरती सब को साथ लेकर निबाह करने में है। इसीलिए समय बीतने के साथ-साथ वह इन सगड़ों से अब बिलकुल अलग-बलग रहने लगा है। तो भी इंसान ही है। मित्रान उचका भी तेज है। गुस्सा जस्ट आ जाता है। नमी मुंसला भी पड़ता है, बरस भी पड़ता है। और फिर अपने काम में जुट जाता है। यही उसकी असल मुक्ति है निर्वाण है। कर्म ही जीवन का सच्चा उस्तास है यह सत्य उसके भीतर बहुत पहले से बैठ चुका है। मुन्धी रहना चाहते हो तो उटकर काम करो, दिन-रात काम करो। इसलिये साध-बहू के ये सगड़े अब उसको बहुत नहीं छूते।

लेकिन एक रोज उन्हें जाधी पर सचमुच गुस्सा आया। महताब स्क्रू लीविय के इन्टरव्यू में दूसरी बार प्रेस होने के बाद टाइपिंग और बुककीपिंग सीखने एक साल के लिए लज्जतक जैसे गये थे। मुन्धी जी हमेशा की तरह यहाँ भी उनका बराबर सर्भ भजते रहे।

साल भर बाद जब वह टाइपिंग सीखकर पोरबपुर सीटें ता एक रोज मुन्धी जी को जाधी की बातचीत में कुछ हम तरह का स्त-तेवर दिखायी दिया ऐसी कुछ संप मिली कि जैसे उनके सवाल में वह अब अपने छोटे भाई की कमाई में हिस्सा बँटाने का इरादा रखते हों। इस पर मुन्धी जी गुस्से से पापक हो गये और उनकी पोरवार सड़प जाधी से हुई। वह उनके चिन्दपी घर के किचे-बारे पर पानी फेरने की बात भी बड़ा ही क्रूट आवाज जिये बहू सह नहीं सके किन्ती तरह और उन्होंने जमी गुस्से की हास्य में भाकर अपनी पत्नी से कहा —जिस दिन मुझे दूसरे की कमाई जानी पड़ेगी मैं बहर या भूंगा।

अस्मर बातों को हँसकर टाल देने की आदत पड़ गयी थी — चिन्ता रहन की राई थी बहू — लेकिन यह तो मम पर आधात्र करनेवाली बात थी। आधात्र हुआ। प्रतिभिया हुई। बरस पड़े। घान्त हो गये। गाँठ मन में नहीं पड़ी। भाई के प्रति स्नेह और दामित्वबोध उसी प्रकार बना रहा। और महताब की भी



अपनी भावना से भले न बनी हो पर आई की बबूजा उन्हेनी भी नहीं की और मन का एक स्तर या जहाँ अन्त तक वह सहज स्नेह बना रहा।

२ मार्च १९१७ के अपने पत्र में मुंशी जी ने दिगम साहब को लिखा —  
बाबू महोदय राय लखनऊ से टाइप सीसकर आ गये हैं। आप इन्हें नहीं किसी भिन्न या क्रम में इन्फोर्म्स करा सकते हैं? अगर ऐसा हो सके तो मुझ पर आश इनायत होगी।

वह तो नहीं हो सका पर बस्ती में ही बन्दोबस्त के महकमे में उन्हें काम मिल गया। लेकिन शाम भर बाद जब इस काम के खरम होने की सूचना पंचा हुई तो, मिर्जा की बीड़ मसजिद तक मुंशी जी ने फिर नियम साहब को याद किया —

‘छोटा हफ्ते-बचारे’ में या पयादा से क्याबा एक माह में ठलझीऊ में आ जायेंगे। बन्दोबस्त का काम क्रिकहाऊ बन्द किया जा रहा है। मुझे उनकी क्रिक लगी हुई है। अगर आप उनके लिए कोई काम दिखाने में मेरी मदद कर सकें तो ऐन एहसान हो। मेरे और कौन से बोस्त हैं जिनसे इनकी सिफारिश करें। बस्ती में टाइपिस्ट के वैसीय रुपये पाठे से। कागपुर के किसी कारखाने में अगर आपकी सिफारिश कारगर हो सके तो इन्हें बाद ठलझीऊ नहीं भेजें। या बार के मुठा स्त्रिक कोई ऐसा काम हो जिसमें हिन्दोस्तान के बाहर न जाना पड़े तो भी कोई उज्य नहीं है।

छोल्हों आने गृहत्व मुंशी जी को घर में एक-एक की क्रिक रही थी।

पत्नी जब मोरकपुर पहुचने के साथ ही बच्चे की पैदाइश के बाद बीमार पड़ी और एसी बीमार पड़ी कि बिस्तर से उग नहीं और बच्चे को डूब पिलाने तक स मजबूर हो नहीं इतनी कि इस काम के लिए एक बार्ड रखनी पड़ी जब बाल मुंशी जी ने घर के भीतरी काम भी समाप्त अपने ऊपर ओढ़ लिये। बच्चों की भुलाना जगाना महफाना-मुठाना बिलाला-पिलाला सभी काम उनके से। और माघ पर शिफन नहीं न कोई शिफक। बीच में कभी पछा पाली होता तो घर बाहर बेग-गुन जाठ। कभी बच्चे को लिये हुए स्क्रल पहुँच पाठे जहाँ बड़के उनके हाथ से बच्चे को लेकर गुर मोलाने लय जाने। सब कुछ अत्यन्त सरुन भाव से।

बहने का मतलब यह कि गृहस्त्री की इन सब सदर-मन्द, हारी-बीमार बीर धरेल सपड़े-ठाठार के होते हुए मुंशीजी को अपने भीतर स्थाय गूनी मिल रही है, जैनी कि इपर एक अर्थ से नहीं मिली।

उन्हें अपनी जिन्दगी का नया कुछ मुपल्ला हुआ मकर भाग्य है। एन ठो



कमला



महात्मा राय



महात्मा राय



महात्मा राय



सेहत पहले से कुछ अच्छी है जो कि एक बड़ी बात है। स्कूल का बातावरण अधिक अनुकूल है। महावीरप्रसाद पादार से मुलाकात हो चुकी है और उनके माध्यम से एक नयी माया हिन्दी का दरवाजा उनके लिए खुल रहा है। प्रेमचंद को उससे बड़ी-बड़ी उम्मीरें हैं। जर्दू जसा हास यहाँ नहीं है जहाँ किताब लुप्त अपने पैसे सँभालनी पड़ती थी और बिन्नी की भयानक सुस्ती को देखकर बार-बार पूछना पड़ता था किताब कुछ बिक रही या महज बीमरों की खुराक बन रही है। साल में दो सौ प्रतिमाँ बिक गयीं तो सम्भिए कमाल हो गया। हिन्दी की हास्य धायद इतनी सराब नहीं है जहाँ प्रकाशक उनके पीछे इतना क्यों पड़ता। सेब सादी पर एक छोटी-सी किताब लिखकर बहु दे चुके हैं। टासस्टाय की कहानियों का अनुबाद दे चुके हैं। हिन्दी प्रेमपत्नीसी छप रही है। बिक्री होगी सभी तो सापता है। अब नये नाबिक के लिए जान को पड़ा है।

अच्छा सपता है मुँधी जी की यह सब और क्यों न अच्छा सप। लेखक को इससे क्या और चाहिए भी क्या — रिश में लिखने की उमंग है, इज्जत तेजी से बर रहा है छापनेवाला उसे लिखे दरवाजे पर बैठा है, कीति एक भापा की सीमा को लाँचकर दूसरी मापामों में पहुँच रही है। हिन्दी ठा है ही मरठी में प्रेमपत्नीसी छप रही है। पत्रों में कहानियों के अनुबाद पुजराती में भी छपने लये हैं। किठनी ही तो बार्ते हैं जिनसे मन में उभार आता है।

और सबसे बड़ी बात तो यह कि राष्ट्रीय जीवन में एक नया उभार आ रहा है। बहुत दिनों की पस्ती और मुर्दनी के बाद। सैसा निश्चिन्त उपयोग है यह कि उनके स्वास्थ्य की गिरावट और राष्ट्रीय जागोऊन की गिरावट का समय अपमग एक ही है और अब फिर एक नयी जागृति आ रही है जिसे मुँधी जी छोरल अपने कून की रबानी में महसूस करते हैं। इस बन्त उनकी तबीयत में जो उभार है उसमें निरचय ही कुछ हाथ देघ की इस जागृति का भी है।

उसकी तबीयत ही कुछ ऐसी बनी है। सबसे अक्षय-बलग व्यक्ति की अपनी छोटी-सी दुनिया में रहना उसने सीखाही नहीं। पुपता गृहस्थ आरमी है। गृहस्त्री में गृहस्त्री का होकर रहना ही उसे आता है। उसकी सब संसर्दे, सब जिम्मेदारियाँ सब परेयानियाँ उसे मंजूर है अबसे रहना मंजूर नहीं मले उसमें किठनी ही बेकिनी हो।

देघ भी उसने किए एक बड़े परिवार पैसा ही है। उसका हर सुख-दुख उसका अपना सुत-दुप है। जो सहज आरमीयता की ओर उस अपने परिवार से बाँधी है वही उसे इस बड़े परिवार के बाँधी है।

बहु भूगोल का बिचारनी है। नुवाक उसने बरसों पड़ा है पढ़ाया है। मारल का नागबिच न जाने कब से उसकी आँसों के सामने नुमता रहा है। नरी पहाड़ सब

उसे पता है। मालूमि को माँ के रूप में उसने पूजा है जो कि उसके भीतर का गहव भारतीय संस्कार है, हिन्दू संस्कार है स्वदेशी और अग्निपुत्र का संस्कार है तिरुक्क और बंकिम का संस्कार है। लेकिन अपने जीवन-अनुभव से वह यह भी जानता है कि हवाई देश प्रेम काफी नहीं है। देश का असल मतलब है देश का अरमी, उसका सुख-दुख। यह इतिहास और समाज शास्त्र का भी विषय है और उसे पता है कि आजादी के बिना कभी कोई देश उन्नति नहीं करता। आजाद इचीनिए जब आजादी के आन्दोलन में कुछ जान जाती है तो उसके भीतर भी जान आ जाती है और जब उसमें मुर्गी छा जाती है तो जने-अमजाने उसके मन पर भी बड़ी मुर्गी छा जाती है।

साधारणतः ऐसे आरमी को सक्रिय राजनीति में होना चाहिए था। आन्दोलनकर्ता के रूप में संगठनकर्ता के रूप में। लेकिन मुँची जी को अपनी कमजोरियाँ भी मालूम हैं।

सबसे बड़ी कमजोरी है कच्ची बूझबी — वो छोटे-छोटे बच्चे पत्नी चाची और उनका बेटा जिन सबका अकेला अधरंब वह है। और दूसरी बड़ी कमजोरी है उसका अपना स्वभाव। राजनीति के धुरंधरों के बीच वह खप नहीं सकता। बड़े बलादेबाब होते हैं मज। वह अलग ही एक दुनिया है। उस खप की तो उसमें मट्टी पसीब हो जायेगी। उसमें बड़ी जा सकता है जिसे उन सब शक्ति-शक्ति में रख मिलता हो। आजादी की लड़ाई तो कही पीछे छूट जाती है पर की कालका ही मुख्य हो जाती है। और फिर आने दिन के छोटे-छोटे झगड़े और मुटबन्दी — नहीं उस पलकत से दूर ही रहना ठीक है। दूर रहकर आदमी स्यादा अच्छी तरह बीज को देख सकता है और स्यादा बैबाग डेन से बच कर सकता है।

यह ठीक है कि घटनाएँ उसको आन्दोलित करनी हैं। इसका मतलब है कि वह पल करे तो अपनी उसी गहरी अनुभूति से दूसरों को भी आन्दोलित कर सकता है — लेकिन ऐसे के धोर से नहीं इसम के धोर से।

मंच पर जाते उसे डर लगता है और भापम देने के जवाब से ही पकती कह प्रता हो जाती है। जिनकी भर उसकी यह कमजोरी बनी रही और इस कमजोरी का एहसास बना रहा और उसने बटबर अपने बेटों को इस ओर से सावधान किया। यह नहीं कि उन्नत पढ़ने पर वह बोल नहीं सकता था या उसका मसा टेंग जाता था। पर ही उन्नत खरर छापी मालूम होती थी। वह गूब जानता है कि मंच उसके लिए नहीं है। मंच उससे क्या, इसम तो है उसके हाथ में। उससे बड़ा क्या बीज है। उसकी सबसे बड़ी ताजत यही इसम है। इतिहास के पत्रे पकतो तो पता चले इसम क्या कर सकता है।

इस तरह यह विरोधाभास सामने आता है कि एक तरफ़ समसामयिक राजनीति में उसकी दिलचस्पी और जानकारी ठा इतनी है कि मच्छे-अच्छे राजनीतिज्ञों की क्या हाथी सजिन बूसरी तरफ़, जिसे सक्रिय राजनीति कहा जाता है उसमें पूरा का भी संबन्ध उमका नहीं है। और अफ़सस है तो इतना ही कि वह मीटिंगों में बला जाता है कभी कांग्रेस के एग़र पला जाता है सिखने-सूज़न का कुछ काम हुआ तो उस कर देता है। इससे ज्यादा मतलब वह नहीं रखता। पर उसकी दिलचस्पी पहरी है या उसके साहित्य में बोलती है। अपने साहित्य के माध्यम से वह अपना श्रेष्ठतम अंग देव की स्वाधीनता और उसके भविष्य को देता है।

सूरत अधिवेशन (१९०७) में दरमदल तिलक के नेतृत्व में कांग्रेस से अलग हुआ। काँग्रेस पूरी तरह गोखले और श्रीरोडघाह महता के हाथ में आ गयी और उसकी राजनीति फिर अपने उसी पुराने ढर्रे पर चलने लगी। तिलक अपना साथ जो ग्धार काले से वह बीरे-बीरे उतर चला। सन् १९०८ में तिलक को छ साल का सिर्फ़ माण्डले भेज दिया गया। सन् ११ में पञ्चम बार्ज के राज्याभिवेक का दरबार हुआ और उसमें बंगभग की योजना का रू करन की घोषणा हुई। उसमें बंगाल के नान्दिकारी आन्दाकन की तेजी भी कुछ समय के सिर्फ़ समाप्त हो गयी।

सन् १४ आठे-आठे देस पूरी तरह निप्याण हो चुका था।

जुलाई १९१४ में महामुज छिड़ा। नवंबर में जर्मन सेनाएँ फ्रांस के दरबाजे पर थीं। इंग्लैण्ड-फ्रांस के सिर्फ़ जीवन-मरण का संकट उपस्थित था। ऐसे समय में हिन्दुस्तान का बड़ साट हाडिब ने बड़ी हिम्मत करके हिन्दुस्तान से अपनी गारी और वाली फ्रीजें हटायीं और उन्हें योरान के मोर्चों पर भेजा। सादी रेशों की प्राणरक्षा हुई।

ऐसी बिनाय परिस्थिति में जो देस का सिर्फ़ इतनी अनुकूल और गारी मत्ता के सिर्फ़ इतनी प्रतिकूल थी काँग्रेस ने एक बार फिर अपने १९१४ के अधिवेशन में ब्रिटिश साम्राज्य के अन्तर्गत अधिनिबेदिक स्वायत्त शासन की माँग उठायी। सजिन को चीर माँगी गयी और बित तरह गिड़विड़ाकर माँगी गयी दोनों ही ने पता चलता है कि सूरत अधिवेशन के बाद की दरमदमी राजनीति देस का कितना पीछे डकेल चुकी थी—

भारत की जनता ने वर्तमान संकट में जिन गहरी और निपपट राजभक्ति का परिचय दिया है उसको देखत हुए यह बापेस सरकार से प्राथना करती है कि वह इस राजभक्ति को और भी महत और दीर्घजीवी करने लाकि वह साम्राज्य की एक स्वाधी और महत्वपूर्ण सम्पदा बन सक और इस हेतु उसका आवेदन है कि हिं

मैजिस्ट्री की भारतीय और अन्य प्रजा के बीच भय भाव करनेवाले खेदजनक नियम हटा देने कार्य २५ अगस्त १९११ के फरमान में उल्लिखित प्रांतीय स्वामत्तवासन प्रदान करने के कथन को पूरा किया जाय और ऐसी सब आवश्यक कार्रवाई की जाय जिससे भारत को साम्राज्य-संघ के एक अंग के रूप में मान्यता और उदगुहार सम्पूर्ण अधिकारों के स्वतंत्र उपयोग का अवसर मिले। कांग्रेस के प्रामाणिक इतिहास के अनुसार यह प्रस्ताव उस समय की राष्ट्रीय आकांक्षाओं का चरम सिद्धार है।

पर कितना छोटा कितना नीचा है यह ठिकर! ठिकर के स्वराज्य से कितनी दूर, जो बकरीय नहीं आत्मसिद्ध अधिकार था।

लेकिन वह बात अब तक साठ-आठ साल पुपगी हो चुकी है और उन साठ-आठ में से छ साल महाराष्ट्र-कच्छी माण्डके के कठपटे में बन्द रहा है।

पर भी यह लज्जा की ही बात कि वहाँ गोखले और सुरेन्द्रनाथ बँतर्जी इनाम और बकरीय की संकल में वह भीड़ माँग रहे थे वहाँ एक विदेशी स्त्री ऐनी बेसेण्ट, अधिकार के रूप में उसे माँग रही थी और कह रही थी कि हिन्दुस्तान अपना बटे के रून का सीसा नहीं करना चाहता।

प्रेमचंद भी इसी बीच इण्डियाई पत्नी के दौर से गुजरे। सरदार, मन बोलों बिस्तुक टूटा हुआ।

राष्ट्रीय आन्दोलन की इसी विकृत स्थिति में ठिकर जून १९१४ में जेल से छूटकर बापल आये। उनका संतोष इस राजनीति से भरा क्या होता बाहर जाने के साथ ही वह अपना होमरूल का आन्दोलन लेकर मैदान में नर पड़े। कुछ अरब नहीं कि कांग्रेस के प्रस्ताव के पीछे जैसा कुछ भी वह या ठिकर की उपस्थिति भी एक अंगुठा रही हो।

जो भी हो, इधर ठिकर और उधर एनी बेसेण्ट, दोनों होमरूल की आवाज उठा रहे थे। लेकिन बेसेण्ट क भी में यह भी लगी थी कि कांग्रेस फिर बलवान हो जाय। इसके लिए ठिकर और गोखल घरमाल और नरमरक में मल होना जरूरी था। बेसेण्ट ने इसकी पूरी कामिनी की कुछ भी उठ नहीं रणा लेकिन दुर्भाग्यवश मेक नहीं हा सका और इसकी बड़ी शिम्परायी इतिहास गगनले की कुरसी नीति और बोर्मुही बातचीत पर रयन के लिए बाध्य है। बाग पत्र चुनी और गुणते उस दिन नहीं लगी तो दोसल को बहुत लगित होना पड़ा और संभव है उनके अंग को पाल लाने में इन घरक का भी कुछ हाथ हो क्योंकि इन बाग क लाने-दग रोड

के भीतर ही १९ फरवरी १९१५ को मोरले का देहान्त हो गया। नवम्बर में पीरोब राह मेहता भी बस बस।

देश की अब बड़ी विभिन्न स्थिति थी। कांग्रेस दल की सबसे बड़ी संस्था थी। कांग्रेस का सबसे कर्मठ सबसे बलिष्ठ अंग गरमदल कांग्रेस के बाहर था। मरमाली जो कांग्रेस को बैच-टैसे हो रहे थे वह अपने ही सबसे बड़े नेताओं को खोकर बिल्कुल पयहार हो रहे थे। गांधी का उच्च राष्ट्रीय राजनीति के आकाश में अभी नहीं हुआ था। अभी वी हास ही में वह क्षिण अश्रीका से लौटे थे और अपने वीक्षामुठ मोरले के चरणों में बैठकर देश की स्थिति का अध्ययन कर रहे थे।

ऐसे में जैन या जो नेतृत्व तिलक के हाथ में आने से रोक सके ऐजिन बापा यही थी कि वह कांग्रेस के बाहर से और उनके भीतर आने की मूर्च्छ नहीं बन रही थी। वो भी सायब तिलक की उपस्थिति में ही कुछ व्यापू वा क्योंकि मूरत के बाए एक बार फिर बर्द कांग्रेस (१९१५) में जान बैसी जान शिखरायी की बाबबूर इन्होंने कि वह केवल मरमदली लोगों का अधिबेगन था। ऐजिन सायब जनता के वह सब प्रतिनिधि कट्टर नरमदली नहीं थे क्योंकि उसी अधिबेगन में कांग्रेस के विधान में ऐसा संशोधन किया गया कि तिलक और उनके गरमदल के लिए भीतर आने का रास्ता खुला।

ऐजिन एक बात थी — तिलक साकमर के बाद ही कांग्रेस की नीति को बनाने के लिए उद्योग कर सकते थे। लिहाजा तिलक और ऐनी बेसेण्ट ने फिर अपना अपना होमरूल वा मान्दोलन संभाषा। लंबी मीद के बाद देश में फिर कुछ हलचल खिसायी थी।

इसी बीच देश ने एक नयी करवत और ली— कांग्रेस और मुसलिम लीग के बीच एका स्थापित करने का प्रयत्न। होमरूल के बाने हुए मायोडन की पूरभूमि में शासन-मुबार की बातें सरकार की मार से भी होन लगी थीं। मद्रको विरवान वा कि लड़ाई खान होन पर इस तरह की कोई न कोई याचना उकर सामने आपदी। उसके पहल इबर आपस में एका उकर हा जाना चाहिए बना जिमी को कुछ न विडेया।

जमीन इन तरह एनता के लिए कात्री ठैवार थी। बर्द कांग्रेस न पहल की। बलों संस्थाओं के प्रतिनिधियों वा सम्पदन हुआ। याचना ठैवार करने के लिए मयुक्त समिति बनी। अक्नूर के मईने म कलकत्त में उस समिति की बैठक हुई। योजना को अंजिम कर दिया गया।

अगले वर्ष कांग्रेस का अधिबेगन मयनरु में हाजराया था। अभी मयम योजना



की पेश होना था। देश की आँखें उसी पर कमी थीं। एक बड़ी बात होने का रही थी। सबका भी धकक रहा था। मुंशी जी की भी आँखें कलकल पर लगी थीं। पारसपुर से बस रात भर का सफ़र था। एक वनत यह इन्हीं कांग्रेस के बसों के सिमसिमे में अहमदाबाद तक का बाबा मार चुके थे। बहुत खोर से जी कलकल जाने के लिए तड़प रहा था मगर राहचर्च कहीं से आये ? सौ-पचास रुपया पास में हो तब कहीं आकर यह चौक पूछ हो। ११ दिसम्बर १९१६ को उन्होंने निजम साहब को सिखा —

दिसम्बर में कलकल जाने का इरादा तो करया हूँ। बेबू जी से मबर मिलती है या नहीं। इसी के लिए कई रिशालों में लिखा। एक साहब ने तो खबर ली दूसरे साहब आरुन्दा लेंगे। हो सकेवा जायेंगे नहीं तो न सही। तजरीर में सुनता नहीं और तो कोई काम नहीं। अखबारों में पढ़ लेंवा। और क्या करें। जब धध-जो-रोज की मेहनत पर यह हास है तो माकूम होता है इच्छास से कमी नजात न होमी।

बहुर्यास आ नहीं सके।

अभियेसन असाधारण रूप से सफल रहा। कांग्रेस और सींग के बीच समझौता हुआ। गरमबल और नरमबल के बीच समझौता हुआ। मंच पर रासबिहारी बोप और सुरेन्द्रनाथ बँनर्जी के साथ सिक्क और लापडें बैठे थे। यह रासबिहारी बोप नहीं थे जिन्होंने भी बरस पहले सुपु में सिक्क को बोलने का मौका नहीं दिया था। ऐसे कट्टर विरोधियों को भाव एक साथ बैठे देखकर बहुत अच्छा माकूम होता था। मिसर बेसेष्ट मीनूब थीं। मुसकमानों में राजा महमूदाबाद एकाड रभुल और बिष्ना-जैसे बोप थे। और मीनूब थे मोहनदास बरमचंद बायी बिनप्री कीति सतसे पहले ही यहाँ पहुँच चुकी थी।

बिहार के कुछ लोग यहीं पर बाँबी भी से मिले और उनसे बम्पारन के रिशालों की करुण कथा कही। निलहे साहबों के अत्याचार का कहीं अंत न था। किसानों की हालत पुसालों से बरतर थी। सब पुस्म सहेते थे मगर भूँ भी न कर सकते थे। साहब लोग बिनदहाड़े मारकर फेंक बैठे थे और कोई उनका हाल पूछनेवाला न था।

आखिरकार माँधीजी बम्पारन पहुँचे और हिन्दुस्तान में सत्याग्रह का पहला प्रयोग आरम्भ हुआ — जो कि असाधारण रूप से सफल रहा।

यहाँ से छुट्टी पाकर गांधी जी ने मुबयलत पहुँचकर मिजा के किसानों की लड़ाई छेड़ दी।

ये राष्ट्रीय आन्दोलन का नये अध्याय थे — जिन्हें एक आत्मी जो राजनीति की दुनिया से दूर था बठा-बैठा बड़े ध्यान से देख रहा था। गांधी जी के आन के साथ प्रेमचंद की पैनी आँखें उन पर नज़र गयी थीं। अपने हृदय स्थित सहज ज्ञान से उन्होंने संकेत पा लिया था कि यह आदमी जरूर कुछ करेगा। कुर्सी-गैर राजनीतियों से किष्काना निष्ठ है यह व्यक्ति जो राजनीति का पहला अर्थ जनसेवा समझता है दुसरी जनों के बीच जाता है उनकी समस्याओं को समझने की कोशिश करता है उनका दुख-दर्द में साथ देता है और उन्हें जो अगाध सघर्ष में आगे ले जाता है। ऐसे ही देशसेवी महात्मा की कल्पना उन्होंने 'अस्वर्ण ईश्वर' में बालाजी के रूप में की थी। बाला जी विवेकानन्द थे। बाला जी तिरुकार थे। बाला जी गांधी थे। समय के साथ उनका रूप बदलता जा रहा था क्योंकि वास्तव में बात बेचक रूप बदलने की थी। भारतवर्ष सबका एक था। उनका दिल गवाही दे रहा था कि इस तरह का काम कभी अकारण नहीं जा सकता।

सत्य अहिंसा अपरिग्रह के जो आदर्श गांधी जी देश के सामने रख रहे थे वह समग्रतः उनके अपने मन के थे क्योंकि जिस रास्ते चलकर गांधी जी ने उन्हें पाया था बहुत कुछ उसी रास्ते चलकर प्रेमचंद भी उन्हें पा चुके थे। टास्सटाय की नीतिरूपार्थ उन्होंने भी पढ़ी थी। उनका अंतर अपने लिखने में लिया था और गांधी जी के रंज-मज पर माने के पहले जर्मन से तेईस कहानियों का भारतीय परिवेश के अनुसार रूपांतर करके 'प्रिम प्रभाकर' के नाम से छपा चुके थे। इनमें टास्सटाय की सगमग समी प्रसिद्ध नीति-रूपार्थ आ गयी थी — मनुष्य का जीवन आभार क्या नीति है? ( रैट ब्यूरोवाई मेन लिब ) एक चितगायी घर को अका हती है ( मैम्मेन्ट अ प्रयार ऐष इट बिल नाग बी क्वैण्ड ) प्रेम में परमेदवर ( ब्यूमर म्म इव देयर गाड इव आसतो ) बाल लीला ( बिस्त्रेन म बी बाइडर रैन देयर एस्डर ) एक आदमी को कितनी भूमि चाहिए? ( हाउ मच लैण्ड इव ए मैन रिक्वायर ? ) अग्ने के बराबर दाना ( व सेन रैट बाइ लाइक एन एम ) जर्मपुत्र ( व गाइसन ) आदि।

प्रम दया क्षमा परोपकार, अहिंसा त्याग अपरिग्रह आत्मशुद्धि की शिक्षा उन्होंने श्री टास्सटाय से पायी थी। उनी प्रभाव में सेवा-भार्य और उपदेश पैली नीतिरूपार्थ भी उन्होंने लिखीं जिनमें सेवा को ही परापकार को ही सबसे बड़ी शिक्षा बताया गया है।

मनुष्य में तत्व-अस्तु प्रम है। प्रेम ही उन्हें जिलाता है। मनुष्य का जीवन आभार परमात्मा है। प्रेम और परमात्मा में कोई भेद नहीं है।

कोई तुम्हें माली दे तो सह सा वह स्वयं पछतायेगा। कोई तुम्हारे पास

पर एक क्षण मारे तो दूसरा गाल उसके सामने कर दो वह अभिमत हो जायेगा।

उत्तम तीर्थयात्रा यही है कि व्यक्ति आजीवन हर प्राणी के साथ प्रेमभाव रखकर हर समय उपकार में तत्पर रहे। प्राणिमात्र पर दया करना ही परमात्मा का दर्शन करता है।

सबसे बड़ा धन सतोप-धन है। असल सुख त्याग में है।

पाप से पाप नष्ट नहीं होता। पूजा से पूजा और हिंसा से हिंसा का जन्म होता है।

अपना अन्तःकरण शुद्ध किये बिना दूसरों का अन्तःकरण शुद्ध करना असंभव है। जिस प्रकार सभे को स्थिर किये बिना छड़ नहीं मुड़ सकती उसी प्रकार अपना चित्त स्थिर किये बिना दूसरों के चित्त को अपनी ओर मोड़ना कठिन है। जिस प्रकार मशिम आग गीली बास को नहीं जला सकती उसी प्रकार जब तक व्यक्ति का अपना चित्त प्रकाशस्वरूप नहीं हो जाता तब तक वह दूसरे को प्रकाशित नहीं कर सकता। इसी के भीतर से गांधी-वर्षन की यह आचार्यसिद्धा निकलती है कि आत्म शुद्धि अपने अधिकारों के संघर्ष का अभिभाग्य अंग है।

प्रेमभाव के लिए ये कोरे मीठिवाण्य नहीं हैं, उनके सत्य को उन्होंने अपने चिन्तन-मनन अनुभव से पुनः उपलब्ध किया है। उनकी सच्चाई उनके भीतर बहरे बैठे-बैठे उनकी अपनी जीवनदृष्टि अपनी आस्था बन गयी है। तभी वह उनके साहित्य में निरन्तर रक्त की माँति प्रवाहित है। संन्यास पंच परमेश्वर और महातीर्थ जैसी कहानियाँ जो इसी दौर में लिखी गयीं और जिनके पीछे यही जीवनदृष्टि काम कर रही है मन की गहरी निष्ठा से ही निराल सकती हैं।

साहित्य और जीवन के बीच यहाँ गाय या बीमार भी नहीं है। जीवन निम्न जैसा बिपा जाता है वही रसायन किया है साहित्य बन जाता है— प्राण का आने-लेकट, बिबेक की निर्भूम अग्नि में तपकर, स्वप्न को भविष्य बनकर। और साहित्य में जीवन का जो उदात्त स्वरूप चित्रित होता है उसकी अभिव्यक्ति अपने अपने जीवन में स्थापित करने की उत्सुकता हृत्ती के मन में होती है। यह नहीं कि गिरा जा भी है सब दूसरों के लिये है। पहले उस अपने जीवन में परिष्कार करके दिग्गज (आजो) अपना अन्तःकरण शुद्ध किये बिना दूसरे का अन्तःकरण शुद्ध करना असंभव है। जब तक अपना चित्त प्रकाशस्वरूप नहीं हो जाता तब तक वह दूसरे को प्रकाशित नहीं कर सकता। साहित्य के पीछे हृत्ती के जीवन का साधक साहित्य की शक्ति देना है।

## कमल का विवाह

पी फलने से पहले ही हल-बैल लेकर अपने घेत पर चले जानेवाले किमान का अनुशासित पर अनुशासन के माइम्बर से मकत जीवन ही उमका जीवन है।

मुंह खेरि ही बह उठ जाता है और प्ररित होकर बड़े भर के लिये घूमन बना जाता है—और जब तो बस्तर स्कूल के सबेरे बड़े महाले में ही घूम लेता है। लौकर आना है तब तब पर के बाकी लोप भी उठ गये रहते हैं। फिर बह पर के बकरी काम निपटाता है। लौकर से ख्यादा काम सेना उसे पसंद नहीं है। अपना बिस्तर बह खुद उठा लेता है। अपनी छोटी बह पुद छीट लेता है। बीबी को कमी कमी नागवार भी गुजरती है यह बात लेकिन बह अपनी आरत नहीं बिगाटना चाहता। उसे भूखा नहीं है कि बह खुद कमी पांच रुपये का लौकर पा। और क्या बुराई है छोटे-मोटे काम अपन हाथ से कर लेने में। अपने हाथ से पानी लकड़ न पीन में लौन लौ नबाबी है यह लो काहिलों की हरकत है। जिस आदमी के हाथ में काम करने से घटे म पड़े हों उसे घाना खाने का अधिकार नहीं है—टास्मटाय की कहानी के नायक मूर्ख मुसलत के राज्य में एसा ही बिमान था और यह बात जने बहुत पसंद आयी थी। एसी मर जर्म नहीं है उस काई काम करने म। पनी जोरकर बकरी के सामने बाल देता है। गाप की सानी बोर देता है। अपन कमरे म बाहर के बरामदे में झाड़ू भी लगा करता है। बूझा जसा देता है क्योंकि पनी बीमार है और बाबी को यह सब काम पसन्द नहीं है। घूम परम कर देता है और बस्तर पुद ही बरखा का मुंह-हाथ बुझाकर उन्हे घूम पिता भी देता है। और फिर हल्का सा कुछ माफना करके अपने काम पर बैठ जाता है।

लिपने क लिए उन्हे सबेरे का बकत ही सबम ख्यादा पसन्द है। स्वस का समय होने तक इनी लखू बैठे लिखने रहते हैं फिर बपडे बदलत हैं और टीक बकत से स्कूल जा पहुँचत हैं।

बकत की पाबन्दी उनका मिजाम बम गयी है। यहाँ ता और भी बकरी है बकत से परीपना—बच्छा उखाहलन खाना चाहिए इन छात्रों के नामने जो भग्ना पर भी है और बकत क राज फिर अपने स्कूल बापस पहुँच जायें। उन्हे समझना चाहिए कि बकत बरबार करना बहुत बड़ा गुनाह है। बकत की पाबन्दी के बिना कमी जिनी लौम ने तरकारी नहीं की।

उनका एक छात्र संजूरत हर मिलता है— भापका निवम या कि स्कूल में माम लौ पर टीक बकत पर पहुँच जाते थे। घन्ना बड़ा और बाप गापरना बंदाब में निकले। बस्तर माप खुले मर, बाल बिगने हुए, और एन बोट, त्रिमके बटन खुले रहते थे और घोड़ी पहने एक बनीब

जबाब से स्फुल्ल आते थे। लड़के बिलगा उनका अर्थ करत थे किसी बुद्धे का नहीं करते थे। मेरे हर्षों को बहु इतिहास पढ़ाते थे। उनका इस्तूर यह था कि खूब इतिहास की पुस्तक लेकर पढ़त थक जाते थे। पूँकि लड़के मित्रिभ और ट्रेनिंग पास होते थे इसलिए स्वादा विषयक नहीं पढ़ती थी। एक बच्चा में जो कुछ पढ़ाना होता पन्द्रह मिनट में पढ़ाकर इतिहास के बारे में बहु बातें बयान करते जो उध पुस्तक में न होती। महीं मामूम उनकी जानकारी कितनी बजाह थी। अस्तर ऐसा हाता कि जो कुछ इतिहास की पुस्तक में से पढ़कर मुनाठे उसके विमात्र इतिहास के बुद्धे इबाधों से बयान करते। कुछ बटनाओं के बारे में यह भी बिलगाते कि सिर्फ हित्क-मुसलमानों में घूट बाढने के लिए उनको लिखा गया है। बध्य बराम होने के पहले यह भी कह देते कि देखो जो कुछ मैंने बयान किया है वह समझने की चीज है इस्तहान में बही लिखना जो तुम्हारी किताब में है बर्ना खेर हो जाबोगे।

स्फुल्ल की अपनी मजबूरियाँ थीं और खतरा भी कम नहीं था लेकिन जहाँ तक मुमकिन हो राष्ट्रीय विद्या का काम उनसे भी क्यों न किया जाय। मसधन् एक रोड बनाने यह भी बयलाया — आज से साठ बरस पहले जब कम ही छागों को मखर इस चीज पर मधी थी — कि सिउजुहीना के समय का कर्बहोक का बाइया बिस्कुम मनागदुल और छक्य है। यह एक बरिद मज्जर की बमयी हुई कहानी है जिसका उद्देश्य केवल यह है कि बंगाल पर कब्जा बमान के लिए उनके पक को नैतिक बल मिक जाय।

इरख कि उनका पच्चा मजीबोबरीब जानकारियों का पध्य होता। कोठ की पढ़ाई तक अपने को सीमित रखने का जो तरीका बुनरे मास्टरों का था वह उनका नहीं था। और न वह चाहते थे कि लड़कों को रट्टू टीठा बनाकर और रिमी तरह इस्तहान पास करके अपने कर्तव्य की इतिथी समझ ली जाय। छामकर मार्मस स्फुल्ल के उम बड़े-बड़े लड़का को जो खूब भी मास्टर प अच्छे छामे बयान बाइमी से मुक्त को उनसे उम्मीदें थीं। एक मिर हुए, पचपीन देध को ऊपर उठाना था आबाह करना था। उनके भीतर वैसी भावना का संचार उनके मास्टर का नहीं तो और किसका काम है? गिधा-मस्मान स नहीं तो और वहाँ स उरह त्याप साहम देधमम और देनसेबा का पद्य मिछेगा? हमारी जवान पीढ़ी भापसी हा, कावर हो स्वामी हो बिलामी हा तो हम क्या हमकी जिम्मेदारी ले बरी हा मरने ?

कोई और इन बातों को सोच या न सोचे मंमीजी जकर सोचते हैं और रनी किण उनका पढ़ाने का तरीका बूमरों से बारी बयक है। उनकी रक्ति लड़कों को मोट लिपाने और कर्बहोर्ड पर मरना बनाने में छर्ब न होकर उन्हें मन और शरीर से स्वम्य माप्य बनाने में छर्ब होती थी।

## कर्म का सिपाही

पर कृतियों का यह संस्कार गुरु के प्रबचन से अधिक गुरु क थाचरण स होजा  
 दला गया है। वही यहाँ भी हुआ। वास्तविक संस्कार सबको न अपन गुरु के  
 स्वामिमानी और साहसपूर्ण आचरण का सिया। उसी का स्मृति मात्र बालीम  
 बरम बाह भी उनके मानस-यत्न पर ज्यों की त्यों बरित है।

प्रबचन बेता उनके स्वभाव के प्रतिकूल था। उन्हें ता कबम एक संभव का  
 पता था — बराबरी का संभव नैमी का संभव। खुली तबीयत क आत्मी ये  
 अपन और लड़कों के बीच किसी तरह की दूरी उन्हें मबूर न थी। क्या घर में  
 और क्या बाहर, बर्बिकार बतलामा उन्हें हृद दर्ज का घाटापन मान्य होता था।  
 बहु बर्बिकार ही क्या जिसे बतलाना पड़े! बर्बिकार बहु जो सहज मिले बनापास।  
 और बेमा ही स्नेह का बर्बिकार उन्हें लड़कों पर था जैसा दूसरे किसी का न था।  
 हर बन्ध बेहरे पर मुस्कराहट बलती रहती। घर पर, स्कूल में सब जगह  
 लड़कों से बराबरी की सजह पर मिलते। उनकी हँसी-मुन्नी म घोरेक रहते।  
 होमी में बहुत बेचकस्कुड़ी स उनके साप रंग बेलते ईद म उनस गल मिलत।

बोडिय हाउस के मुजाबने क लिए सब बहु अपन बचकर पर निबलते तो लड़का  
 को उनसे डर न लगता अपनापन माकूम होता कि जैम अपने ही घर का कोई बड़ा  
 आत्मी जाया हा जिससे अपना सब तकलीफ-आपम बहा जा सकता है।

धीरे-धीरे लड़के उनको बहुत ही स्वाग चाहत लग और उनका जी करता कि  
 मास्टर साहब हमसे कोई काम लें। मगर मास्टर साहब जिन्हें नीबर तक से काम  
 सेना बहुत पसन्द न था सबको से भला क्या काम सेत — सेबिन ही एक काम  
 बहु उकर बो-एक लाख लड़कों स लत्र और बसिमक सेते। बहु था बहानिया को  
 साऊ करना। यह उनका बराबर का वन्दूर था। पायद इसी को बहु अपनी पुर-  
 बसिपा समझे थ। जा लड़का इस काम का जिदगी ही लुबी न कर लाना उस  
 उनका ही यादा कुन रहत। यह एक तरह की रिबरन थी जिम मत म उम्ह बरेज  
 न था।

दर्जें में दर्जे बाहर, सब जगह सब समय बहु आत्मी एब-मा ही था — उतना  
 ही मान निरापमर, सेही लसा हुमा। सज्ज या लगती हुई बाज बहना डोट  
 दान करना या किसी दलती क लिए कोई बड़ी सडा देना उन्हें बिलकुल नापमर  
 था। भारिबाय और रबादारी ही उनका उमूक था और इन्ही की दान स बहु  
 बराबर अपने दर्जे म और बोडिय हाउस में अनपामन बनाय रहत थ। घमा की  
 गति उनके लिए बोध नीति-बाच्य न थी। उममे उनका गहुरा बिदबाम था और  
 बहु उमे अपने घामन प्रबध म बराबर बरतते थ। दर्जे म हाजिरी पर भी कोई बड़ी  
 पाबन्दी न थी बसिम यह कुछ उनके ब्यक्तिब और उनका पान के राबक संय

की विशेषता थी कि उनके दर्जे में उपस्थिति सबसे अच्छी रहती। उनका एक छान सिद्धांत है—

क्यास में उनके भाते ही ऐसी विन्वादिनी पैदा हो जाती थी कि हर एक का ध्यान उनकी तरफ़ खींच जाता। यह बकरी न था कि वो विषय पढ़ना है वही पढ़ाया जाय बल्कि जिस विषय की ओर उनका मुकाब या सड़कों का उड़ना हुआ उसी के बारे में बताने लग जाते। अगर क्यास में पढ़ाते बहुत कोई हेरी की बात आ गयी तो बेअशियार हँसने लगते। उनकी किसी का डर नहीं था। एक बार की बात है कि इन्स्पेक्टर साहब मुमाइने के लिए आये। बाबू बेधनमाल साहब हेडमास्टर जो बहुत सीधे आबनी थे कुछ परेशान-से थे। तमाम सड़कों की अपनी-अपनी ड्रेस पहने हुए थे मगर हमारे उस्ताद का वही आत्म था—मिथ सर, बाल बिखरे हुए, कोट का बन्त घुसा हुआ। इन्स्पेक्टर साहब क्यास में आये मगर उसका भी कोई अमर न हुआ। कुछ मंजुरी में बातचीत हुई, उसके बाद इन्स्पेक्टर जाहब चले गये।

तबीयत का ऐसा पलापन और इतनी बेकौस छादगी जरा मुसकिल से देखने में आती है और इन्ही का जाहू था जो तमाम सड़कों को बेअशियार अपनी तरफ़ खींच लेता था। और अशियार में सबके संग निपटय स्याय। इन्हीं पुनो के बल पर मुंजीबी ने काफी मकम्लापूर्वक पूरे तीन साल तक बोर्डिंग हाउस की मुक्ति स्ट्रेण्डेरी की कर्ना उनसे बस का राग न था वह। प्रबन्ध-कीचल में बहु-साधे कोरे थे। बेकिन जो काम प्रबन्ध-कीचल से नहीं होता वह सम्भवना से हो जाता है— जो वह छोटे-बड़े सबको समान रूप से देखे थे।

जानू उनका अपना मीकर था। था तो बोर्डिंग हाउस का मीकर मगर कुछ पैसो के एब्ज उनके घर का नाम भी करता था।

मुमान मुगकिस मय का बाबर्ची था।

मुहम्मद स्कल का रपरी का बिस्माबी का काम करता था।

समी के माब उनका सलूक एक-ही तर्नी और हुनदबी का था। अमार उकरत पढ़ने पर रपयों न थी उनही मदन करते। मुहम्मद रपरी बहुत दुगी-मा आरबी का बिषयी डिपारी पर उग्हेंति एर अच्छी बहानी भी लिपी। ("रपरी विस्तुक्त लाइक न लिया गया है। उसमुक्त का बहुत कम श्याम है। — इन्-याज अभी ठाम का पत्र २५ मितर १ १ ) इमरी पारी थी थी। आमन्नी कम और गानकामे स्यान्। आर मे बीपी पटोरी घमन्नी ममझानू। आर रिग

तंगवस्ती उसे बरे रहती। घर में महतामय मचा रहता। ऐसी हावपट में मुंगोबी और बहनों की तरह उनकी भी मदद करते। रुपयों की बापसी के लिए कमी तकाजा न करते। तनब्याह मिलने पर बहु सुद से रे जाते तो से सेज। इन तरह के मन-वेन में जैसे कभी डूब भी जाते। मगर उस बन्त मुंगीबी का उन पैसों के डूबने का धम उठना न होला अितना बीबी की नाराजगी और खल्ल-मुस्त बातों का डर।

अब तक बमाने के साथ-साथ उनकी राष्ट्रीय भावना का भी संस्कार हो चुका था हिन्दू-मुसलिम एकता की बात उनके भीतर काष्टी पहरी बड़ जमा चुकी थी। और बिना तरह उनका कोई भी सिखास्य मौनिक न रहकर तन्नाय उनके माचरण में रिशतगामी देता था बस ही इन मामल में भी उन्हान बौद्धिय हाउम की अपनी तीन मास की खरीदाबता में अपनी इस छोटी-सी दुनिया में बानों आनियों के बीच भाईभारे को मजबूत करने के लिए कुछ भी उठा नहीं रखा। जैसा कि उनके नस बन्त के एक छात्र मुहम्मद हनीफ़ खाँ ने अपने बयान में कहा है—

“बहु हिन्दू-मुसलिम एतहाद के बड़े हामी थे। नार्मय खुस गोरखपुर म कमोबेग डेढ़ सौ मुतअस्लिम<sup>१</sup> छासीम हामिल कर रह थे जिनमें ठकुरीबन ठान प्युपिल टीचर मुसलिम थे। जुलाई मन् १९६ मर्दक मन् १७ तक पूरे एक साल में एक भी एगा बाइया नहीं आया जिसमें हिन्दू-मुसलिम प्रीमिय कायम हा। कमी बिमी से ऐमा मौजा पैदा करना बाहा जिससे किराउंवागला जबबाठ मुतइल<sup>२</sup> हों तो उन साथ न मिर्ज़े दबा रते थे बल्कि मुतअस्लिमों के दिक्कों से इस खयाल का निहाय देने की कोशिश करते थे।

जैक-नीच हिन्दू-मुसलमान छूत-छात — इन हिमाकतों म उन्हें कोई मजबूत न था। बटुन-म मौ-बाय को इसकी बड़ी चिन्ता रहती है कि उनक बन्ध अपने बीनों क साथ ही खेने नीची पात के बन्धों के साथ न खने और मुसलमानों से तो और भी दूर रहें। कमी गंदा आदर्शों नीच आम की दलील ही जाती है कमी बीना रिपॉ एग जाने की कमी यह कि नीच हीमबाल टाना-टोटका कर देत हैं, कमी यह कि क्या ठिकाना इन लोया का कोई बहर-माकर जिकर दे लो

“मर्खर का इस तरह को बातों म बहद चिड थी। उनक घर बन्धों की गम बन् पर न उन बन्त कोई पाबन्दी थी और न आग कभी रहीं। इतना ही नहीं कि बह गद इसी तरह मुस-मिदूरी म चलकर बडे हुए थे बन्धा में इस तरह भइ-भाब करना उनक नइरीक एह अयातक सामाजिक अन्वयय था और गाय<sup>३</sup> उनका बिरदान



या कि बच्चों के स्वस्थ मानसिक विकास के लिए यह जरूरी भी है कि बच्चे सब साथ खेलें-कूदें उनके भीतर यह ऊँच-नीच का भाव डालना खुद उनकी मिट्टी खराब करना है।

बेटी का जवाब बहुत सुमान के घर पर ही बैठता था। मौका मिलते ही बेटी बो-तीन सास के भुद्रू को लेकर सुमान के घर पहुँच जाती थीर बच्चों बड़ी खी जाती। सुमान की बेटी सरिया थीर बेटे सिराजू से उसकी बड़ी पक्की बोस्ती थी। मुहम्मद बख्तारी के बेटे खुद्द से भी उसकी बाड़ी बमती थी लेकिन सबसे अच्छा समता था सुमान के घर। खुद्द की माँ बहुत चिड़चिड़ी थी। सरिया की माँ ऐसी नहीं थी। और फिर वहाँ पर सरिया थी। उनके साथ भरीबे बनाने में खुद्दे-खुद्दिया का ब्याह रचाने में बड़ा मजा आता था। घर में बकरियाँ पली थी। उनके बच्चे कैसे प्यारे लगते हैं। कौसी रेचम जैसी आल होती है उनकी। उनके काम छूने में विद्यता मजा आता है।

सरिया की माँ वहाँ सरिया और सिराजू को खाने के लिए रोटी-गूड़ देती वहाँ बेटी को भी पकड़ा देती। एक रोड़ बेटी वही रोटी लिये-लिये घर पहुँच गयी। अम्मा ने देखा तो आगबबूला हो गयी थीर बेटी को बाग-छा हापड़ रखीर किये। लेकिन दो-चार रोड़ में बाठ आयी-मयी हो गयी थीर फिर वही सिलसिला चल निकला।

घर के सामने सहम का जिते अकधर वह खुद ही रहट्टे से साक कर लिया करते थे। आम नीम कटहल के फर्र पेड़ लगे थे। उन्ही की छाया में दो-चार कुर्सियाँ दो-एक चारों पड़ी रहीं। यही उनकी बैठक थीर बापमपाह सब कुछ थी।

स्कूल से लौटते तो हुस्का-आ कुछ नास्ता करके अकधर दूधरे-जीमरे साम सम्बी मोदा-मुकुड जैसे बाजार चल जाते थीर वहाँ से लौटते तो फिर उन्हीं पेड़ों के साये में आसन आमाते अकधर पकटते पक-पकिवार्ये बेगने दोस्तों से एप घाप करते थीर अपने कूडकूहाँ में उस जगह की आबाव कर देते। तब तक साम हो जाती थीर वह अपने कमरे में कुछ मिलने-मिलन चले जाते। फिर आना गाने और वही सामने बोड़ा-आ टहलकर दस बज क जयमग विस्तर पर चले जाते। पैर के मयिज को राल का ख्याबा देर तर जायना माँ भी मना है और फिर उन्हें नबरे मुँह अँपेरे उटना गहना।

यही उनकी रोड़ की दिनचर्या थी। एक दिन फिर दूमरा दिन फिर निजामत बोबा-टका जीवन बलाजार था वही निजामत का जितने हाप में दुगाव की जगह इत्तम थी।

इसी दिनों एक रोड बचानक उनकी मुलाकात रघुनथिहाय क्रियज्ञ से हुई जो माये बचकर उम्र भर की बोली बन गयी। उसकी दास्तान सुन क्रियज्ञ साहब की बखानी सुनिए—

● मात्र मे पचाम-वचपन साठ पहले पूरे हिन्दोस्तान में जो भाग उर्दू साहित्य में रचि रखते थे उनके पास एक ही मासिक पत्रिका पढ़ने के लिए थी— बानपूर का रिवाजा जमाना। पहले-महक सायद सन् १ में एक कहानी इम गिमाले में मीने पढ़ी जिसका नाम था बड़े घर की बेटी। मेरे घर में बस्कि मुहम्मदे ये इम कहानी की बर्षा थी। पहली बार कोई चीज पढ़कर मेरी आँखों में आँसू आये थे तो वह चीज यह कहानी थी। बरेलू जीवन की एक ऐसी बीबी-जागती शकक इस कहानी में थी जिसकी मिसाल उस समय तक के उर्दू और हिन्दी-साहित्य में कहीं नहीं मिलती थी। सबसे बड़ी बात उस कहानी में यह थी कि वह सड़कों और सड़कियों तक को सोचने पर मजबूर करती थी। उसी समय से मुझे कुछ ऐसा मालूम होने लगा कि प्रेमचंद आदमी के रूप में सायद कोई बखता हूँ। अब ता मैं यह साबता हूँ कि जिस ठेठ भावबता की शकक मुझे इस कहानी में मिली थी उमस बखता और प्ररिस्ते महम्म हूँ।

मैं स्कूल से निकलकर काभेज में जा चुका था और म्योर काठज इलाहाबाद में भी ए में पढ़ रहा था। गर्मी की छुट्टियों में मैं पोरखतुर आया हुआ था और तीसरे पहर को कायस्य बैंक की शानदार इमारत में अब मैं एक गिन पहुँचा तो मुझ अपने पुराने दोस्त महाबीरसाद पोहार बहाँ मिल। बैंक के ऊबे-बीड़े बरामदे में चारपाइयाँ और कुर्सियाँ पड़ी थीं। पोहार जी के माय कोई एक और साहब बडे हुए थे— पोरन-बिट्टा रग मियाता इय बड़ी-बड़ी बाँके पनी-बनी मूँछे सर के बाक और मूँछे कुछ मुनहरे रंग की। बुटने से कुछ ही नीचे मानेबानी बीडी और छोटे साइज का कुर्ता पहने हुए थे। मैं पोहार जी से बाँके बराम लगा। उन साहब की तरफ मुजाबिब मैं न हुआ म उनका परिचय पोहार जी से कराया।

बाँकार प्रेम से माहूर सोनों के मधियत जीवनचरित की एक पुस्तक-मासा निबल रही थी जिसकी हर चित्राव का नाम चार आना होता था। इसी पुस्तक-मासा की बात चल गयी। मीने यह रय बाहिर की कि हिन्दास्तान के मराहूर लालों के जीवनचरित छापकर इस पुस्तक-मासा में अण्डा नाम दिया सेबिन अबाहम निबन जैसे भारतीय जनता में अपरिचित सोनों का जीवनचरित छापना बिन्बुक्त बेकार है। मरी यह बात सुनकर पाहार जी के पास जो साहब बैठे हुए थे उन्होंने बड़े जोर का इह्जहा मात्र और बिना परिचय हुए ही मजम बहन लगे— मात्रिर निबन में क्या कुमूर दिया है कि उनको इस पुस्तक-मासा में अणह न की पाय ?

फिर प्रेमचंद का जिक्र माया और मैं जो कई बरों से गहरे तौर पर प्रेमचंद की कहानियों से प्रभावित हुआ था प्रेमचंद के प्रति अपनी श्रद्धा और प्रशंसा के माब प्रकट करने लगा। बीच ही में पोद्दार जी ने कुछ उत्सुक स्वर में मुझसे पूछा—आप प्रेमचंद से मिलेंगे? मुझे यह बात इतनी अनहोनी मालूम पड़ी कि उनकी बात का विश्वास ही नहीं हुआ। मैंने कहा—मैं तो यह भी नहीं जानता कि प्रेमचंद कौन हैं और कहाँ रहते हैं। मैं उन्हें कैसे देख सकूँगा

मैं यह कहना चाहता हूँ कि प्रेमचंद के नाम का जो असर मेरी कल्पना पर था प्रेमचंद को देखकर उन असर को कुछ ठेक-सी समी। मैं अब समझता था कि इतना महान लेखक सूरत-सकल और विश्वास में इतना साधा और दूसरे आशयों की तरह का न होगा। मैं एक बहुत रोबीछे और छोट-बाट के आशय की कल्पना को अपने दिम में पाक हुए था। ●

किराऊ के पिता मुसी गोरक्षप्रसाद इबरात घायर के जिंके के नामी बर्काल के ठेरोँ पैसा कमाया और चरब-कबाब में उड़ाया था।

आपनी वास्तव आठी रखते हुए 'किराऊ' कहते हैं—

● प्रेमचंद का घर मेरे लिए बूझा घर हो गया था। तीसरे पहर को मैं राख ही उनके घर पर पहुँच जाता था। आम तौर से मकान के बाहर सहन में खोटीन कुर्तियाँ पड़ी रहती थीं और प्रेमचंद एक कुर्सी पर बैठे होते थे मैं भी आकर बैठ जाता था बातें शुरू हा जाती थीं और बनें तक होती रहती थीं।

इन बातों के दौरान मैं मुझे अनुभव होने लगा कि प्रेमचंद उर्वु कविता से बहुत कम प्रभावित होते थे। वह कुछ ऐसे बने ही थे कि उर्वु छंद की मजाकें और लताछत्रों उनके पन्ना बहुत कम पड़ती थीं। इससे मेरे निक को चोट लगती थी। यह ऐसे साहित्य के बहुत कम पापक के जिसमें रूप और प्रेम या ऐन्द्रिक प्रेरणाओं को सबसे बड़ा महत्व दिया जाता है। स्त्री उनके लिए बहन, बटी माँ पड़ोसिन सहकारी औबन-माथी गुणवत्तमी देवी सब कुछ हो जाती थीं और ऐसी स्त्री के चरित्र भी उनकी रचनाओं में कई एक मिलते हैं। ऐन्द्रिक एन्द्रिता के बल पर छा आनवाणी हस्ती क रूप में स्त्री का चरित्र उनकी रचना में न आ सकता था। प्रेमचंद रयावी या बीगवी आशय नहीं थे लेकिन यह भी बल थी कि ऐन्द्रिक प्रेम का वह महत्व नहीं दे पाए थे। वह रोसापियर के मानेदों उर्वु-वाणी की छत्रों ऐन्द्रियर के अनेक नाटकों वाली कि बिदब-साहित्य के उम हिसते की जिसमें ऐन्द्रिक प्रेम एक बड़ी और रबी रक्ति बन गया है, अपना नहीं पाए थे। टाप्पागय व मारिग 'दिना करैनिता' की वह मुक्त बंट व प्रशंसा करने थे। टाप्पागय के श्रम का जादू

उन पर चम गया था लेकिन जैसा कि मैंने अपने एक दोस्त में कहा है 'बात वो कह ऐ इत्तम कि सुनकर सब डायस हों कार्मि माग — कुछ इमी तरह की प्रतिक्रिया उन पर देना करेगिना पड़कर हुई थी।

मैं स्वयं प्रचण्ड ऐत्रिक प्ररमाओं क ऐस सक्कों का पिकार र्हा हूँ जो बिन्दगी का जड़ से उखाड़ फेंकन की ताइत रखते थे सजिन मैं अब इस मतीके पर पहुँचा हूँ कि ऐत्रिकता और जीवन की दूसरी महान् प्रेरणादां में जब तक मेल नहीं हामा ऐत्रिकता आदमी का ले डूबेगी।

आम ठौर स दो-ड्राई घंटा दिन र्हे मैं प्रेमचंद के पास जाना करता था और जब दिन डूबन को हाठा तो बह एक बनारसी गमछा हाम में लकर रांज पास ही के चर्खु बाजार में तरकारी लीयने बठ जाना करत ब-धीर मैं अपने घर सीट आता था।

प्रेमचंद अब कनी-कमी मरे घर में आन कम ब। उनक घर और मरे घर में कुछ दो सौ गज का अरसला था बल्कि मेरे घर स उनका घर शिष्यायी पड़ता था। एकदम बार मर पिता जी से भी बह मिल सजिन यह मुसाइरा कृष्ण रस्मी हिस्न की र्ही। ●

पर अिपक क बड़े मारि मगरत सहाय स जो तपत्रिक क पिकार हाकर जर्सी ही दुनिया स उठ पय क्याथा राह-रस्म थी। मुजी जी गाह-ब-गाह उनके पास से मदाम आबाट्स्की और कनक बोल्नाट की लिपी हुई बियासाडी की फिठाबे आकर पठ थे।

प्रेमचंद और अिपक के स्वभाव में अधिकतर बातें बिल्कुल बिरोधी थीं लेकिन यह भीज उनको एक-दूसरे क पाम आने से न रोक सगी बल्कि आनर "स में सहायक ही हुई। जब भी अिपक गोरखपुर में होते उनकी समय हर खान मुषी जी की सोहबत में बीतती। बंटों उनकी बैठक बसती और साहित्य समाज राजनीति सब पर धुब तज-तेज बातें हातीं। प्रेमचंद की आनकारी इनक बार में अयाह थी लेकिन अिपक क पाम हर सवाल पर एक मछूती मौलिक बुटि र्ही जो मुषीजी को बहुत आनपक लमती।

अिपक ने सभी बिलता दुक ही बिया था सजिन प्रेमचंद का उनकी प्रतिभा परभावत देर मही लमी और जैसा कि उनका स्वभाव था बह अिपक को सामने जान का पान करन बपे। निगम साहब को उन्हेने लिखा — आज की राक स एक मजमून भेजता हू। एन नरम भी है जो मरे इबिल दोस्त बाबू रपुवति सहाय ने मपबदुपीना की हमरी मदिस स ठजुमा की है। यह हमसाज हिन्दी बलेस्टी में नामजब हा पये है। इस्म-बल्लु आमी है। परत-गुज्जन का बर्चा

पसंद है। हाँ इस नरम में कुछ नौमस्की' की छत्रपुबाली' रह गयी है। क्या अच्छा हो कि आप मंडी नौबतराय या किन्ही दूसरे उस्ताद से इसकी छहरीह' करा लें।

मह विलान की या महज रस्मी दिक्कती न थी। यहीने मर बाद मुंशीजी ने निबन्ध साहब को फिर लिखा — भाबू रघुपति सहाय आबकक कातबोदेरात के बस्ते म नये हुए हैं। आबमी सुबानप्रहम हैं। बिमाघ प्रमसक्रिमाना' है। मुस्तैद हैं। मगर बरा मुतकब्बिन' हैं।

बच्छाई-बुर्खाई कुछ भी नजर से छिपती न थी लेकिन निगाह उधरती बच्छाई पर थी।

नयी प्रतिभा को पहचानने संभारने और सामने लाने में मुंशीजी ने कभी आलस्य नहीं किया। आजीवन काम के बाध से बने रहे लेकिन जैसे भी हुआ इसके लिए समय निकाला। बर्बनों नयी प्रतिभाओं को सामने लाने (हिन्दी की एक पूरी पीढ़ी उनका ह्रास की संभारी हुई है) जिनमें से अनेक नाम भी साहित्य में चलीं और वो नहीं बस सभी मह प्रोत्साहन की कमी नहीं बल्कि अपनी किसी मात्रिक दुर्बलता के कारण।

नये लेखक को संभारने और लाने लाने की उनही अपनी ही धीली थी। बड़े अनुभव और बड़ी अन्तर्दृष्टि से बखित। वह जानते थे कि नय लेखक को अपनी रचना के प्रति कैसी विशेष समता कैसा असाधारण मोह होता है। दुनिया को वह अपने सामने बस समझता है। आसपास के ठारे छोड़ जाने के बंधूने उसके दिल में होते हैं। अपनी कम या ज्यादा प्रतिभा के बल पर वह अपना बचनेब का जोड़ा छोड़ता है। किसी हिम्मत है जो उसे ह्रास भी करा सके। अपनी आत्मो जन्म के प्रति अक्सर वह बहुत असहिष्णु होता है। इतना अहंकार ठीक नहीं। लेकिन उसको बुहतड़ मारकर छोड़ा नहीं जा सकता। बीरे-बीरे ही उसका संस्कार संभव है। बुहतड़ मारने में लज्जत है क्योंकि उसके वो ही मतीने निबन्ध सात है — या ठी अहंकार और जो भवानक रूप से से या उस अहंकार के भाप-भाप लेखक भी हमेशा के लिए दूर जाय।

इसलिए पूँक-पूँककर आगे बढ़ना हाना। और मुंशीजी ने इसकी एक बिल्कुल मुंशियाना तरीकीब निकाली। वहाँ प्रतिभा का बीज नजर आता वहाँ पहले लत या पहली मुलाजाल में ठी वह रचना की दुर्बलताओं को एक मिरे ल



है कि इतनी मूर्ति न हों तो अच्छा क्योंकि ऐसी कहानियाँ कमजोर मानी जाती हैं जिनमें सेनापति को करवा पैसा करने के लिए मौत का सहारा देना पड़ता है। वैसे मैं खुद इसी मर्ज का शिकार हूँ। बाकी सब बहुत ठीक है।

बाकी उसमें का ही क्या किरी बचकानी होगी या थी। लेकिन मैं बहुत सुपीरियर अंदाज में उनको जबाब लिखा कि हाँ जो बात तुम लिखते हो वह आम तौर पर सही हो सकती है लेकिन यहाँ तक इस कहानी का तास्सुक है, ये मूर्ति बचायी नहीं जा सकती क्योंकि कहानी का यही तर्क है। इसी किस्म की कोई बात मैंने लिखा ही जिसके बाद वह चुप हो गई। और करते भी क्या। ●

छोटे से छोटे सेनापति से भी मुँही जी बचकानी की तरह पर आकर ही बात कर सकते थे और उसी की एक छाटी-सी मिसाल है यह कि अपने बेटे से बात करते समय भी जिसे अभी इसका पकड़ना का फ़क़र भी नहीं था उन्होंने वह एक छोटा-सा पर उनके मन को कुछ ख़ुशी के साथ खोल देनावाला वाक्य लिखा उसका — वैसे मैं खुद इसी मर्ज का शिकार हूँ। यह वाक्य लिखते ही जैसे सब बुरियाँ मिट गयी और ऐसा लगा कि वह बेटे में बहिन डालकर बात करते लगे। दुराज हम उन्हें नहीं भाता था। छोटे-बड़े का संबंध उनके मित्राज के लिए बनावटी और तन्मयीपद्वैह था।

त्रिपुड़ा के साथ भी उनकी ऐसी ही दोस्ती थी और बहुत अच्छी साहित्यिक दोस्ती थी। बहुत खुशी हुई। त्रिपुड़ा मायरा व सबके करते थे अपनी और दूसरों की डेरों सबके सुनाते थे लेकिन मुँही जी उनकी तरह कम ही पसंद करते थे। मन का साँचा ही कुछ ऐसा बन गया था कि सबके सबके का जानू उन पर न चलता। आगिनी-मापूकी की गर्म और ठण्डी सर्सिँ मापूकी की एक-एक मरा और अंगों के एक-एक मोड़ को बटखाने के सेकर बयान करना हिन्द में जातिव का बरेबाँ बाट करना और छवटी कूटना — यह सब मुँही जी का एक भाग न भागा था। हाँ छानिब की बात और थी। वह कुछ बड़ा था। उसका दिल का एक नयी गटराई और दिमाग को एक नयी रोशनी मिलती थी। वह इंसान को ऊपर उटाना है। साहित्य एक यन्त्रीय साहित्य का नाम है। टैमुर बहाना साहित्य नहीं है। वह गिरते एक तरह की दिमागी गुजली है। कोई अपनी गुजली दिगने के लिए लिखना चाहता है किंतु उसको अग्निमान है और हम साधना भी नहीं कर पाते। लेकिन फिर उस चीज को वह हमारे सामने क्यों लाता है? गिरायन हम इस बात से है। इन्कार को देगो। उनको मायरी साहित्य है। ऊँचा है ऊँचा साहित्य जिसमे क्रोमों की तखीर बना करती है। उनका को उर्तों गुब पना है। इनकाप उन्हें बेहद पसंद है। इनोलिए उन उन्हें मायरी की उबान में कुछ करने की उबान

पड़ती है तो वह बड़े मजे में अपनी बात की छत्र के तौर पर सीधे जाकर इन्द्रबाबू का कोई अरसी या उर्दू खेर उठा सात है।

इसे एक संयोग ही कहना चाहिए कि उभर इन्द्रबाबू जी प्रमथ की कहानियाँ पर इसी तरह जान देते थे। सन् १५ में जब 'प्रिम पनीनी' कानपुर से छी ता इन्द्रबाबू ने फौरन उस पर अपनी बहुत अच्छी और सभी सम्मति भरी जिने बाज़ा प्रचारित भी किया गया।

लेकिन किराऊ का रम कुछ और था। मुषी जी के मन का बातने के लिए वह अग्रणी भाषापत्नी करते एक से एक साऊ, सुपरी बुस्त सूबगुरती से तरापी हुई थीं मुनाते लेकिन मुषी जी टस से मस न होते। देग और समाज की चिन्तनी से हटकर साहित्य का उनके लिए कोई मर्भ न था। यह अगर उनकी एकांगिता थी ता थी। क्योंकि इतनी बात मुषी जी स रवादा अच्छी तरह और कार्म न जानता था कि उनका लिखना बचकाग को भरन के लिए महीं है उन्हें लिखने के लिए अबकाग पैदा करना पड़ता था और वह इसी तरह पैदा होता था कि उन्होंने अपनी चिन्तनी से और सब बातें काटकर निद्राल फेंकी थी और एकान्त भाव से साहित्य-रचना में लन गये थे। यह एक गृहस्थ योमी की साबक की भक्त की निमम इच्छ साबना थी। साहित्य को किसी महान व्यावहारिक लक्ष्य न ओडना उनके सम्पूर्ण जीवन की उपकर्मि और आन्तरिक विवसता थी।

यहाँ गारलपुर में आकर जमते-जमाते चार छः महीने का समय गया और गये साल १९१० के पहले महीने में ही उन्होंने 'बाबारे हुस्न' ठकी स मिलना शुरू कर दिया। उसी जमंग में उन्होंने २५ जनवरी १९१७ को निमम साहूब को लिखा — मैं आबकक एक डिस्सा लिखते-लिखत नाबिल सिख बसा। कोई सौ सजे तक पहुँच चुका है। इनी बजह से छोटा डिस्सा न सिख सता। अब इस नाबिल में ऐसा जी लग गया है कि हुसरा काम करन को भी ही नहीं चाहता। डिस्सा दिखलस है और मुझे एसा खयाल होता है कि मैं अबकी बार नाबिल-जकीनी में भी कामयाब हा सकंगा।

फ्रस्ट एड की ट्रेनिंग लेने एक महीन के लिए इलाहाबाद पहुँचि ठो बर्गो नी नाबिल माप गया। ४ मास को उन्होंने वहाँ से लिखा — लिप्यक क अन्दर जाने गुनूत देने। गुनू हूँ। हालाँकि मेरे पास बहुत डिस्सागार्द के लिए न रिमास है न बसत। आजकल अपना नाबिल लिखने में मज्ज हूँ। यह छान ही



जाय तो कुछ और करें। इसी बात में उन्होंने विगम साहब को यह भी सूचना दी कि प्रेमपत्नी का हिन्दी और मराठी एबीघम छप रहा है।

सेखक की खुशी के लिए इससे न्याय चाहिए भी क्या।

छप्पे अर्धों में बरसों की बीमारी और पस्ती के बाद यह उनका नवजीवन है जिसमें बड़ी उत्साह है उमंग है उमार है जो कि नये जीवन की पहचान है। भीतर स्फूर्ति इतनी है कि जैसे समा नहीं पा रही है और वह खुद अपने साथ बीड़-सी कमा रहे हैं।

४ मार्च को उन्होंने लिखा था आबकल अपना नाबिल लिखने में पड़ गई है। फिर साठ दिन बाद वही इम्माहाबाद से लिखा नाबिल शाकिबन् एक माह में पूरा होगा और उम्मीद करता हूँ कि मई में उसे आपके मुआवजे के लिए हाजिर कर सकूँगा। जो कि बच्चों जैसे उत्साह के अतिरेक में लिखी हुई बात थी क्योंकि फिर २३ मार्च को उन्होंने अधिक संयत और सुस्तिर होकर लिखा — मरा नाबिल बस रहा है। अब बरा इमीनात हो जाने तो सरम करें। दूर हो रहा है। बाहूँ कि अब अंजाम की तरफ चरूँ।

माधिरकार ८ अपरल को उन्होंने लिखा —

अपना नाबिल खत्म कर रहा हूँ। उसे पहले हिन्दी में तथा फरने का खन्ब है। उर्दू में तो पश्किलर मगका है।

और फिर २९ जनवरी १९१८ को —

अपना नाबिल हिन्दी में मिल रहा हूँ। पुस्तक नहीं मिलती। न कोई ठाठीस ही पड़ती है। मगर अब इरादा करता हूँ कि साज करने में हाथ लगा दूँ।

घास भर के भीतर, घामव जाठ का नौ महीने में ही 'सिवागदन' अपने मूक उर्दू रूप में तैयार हो गया। मगर प्रकाशक नहीं। इपर हिन्दी का प्रकाशक तकाजे पर तकाजे कर रहा था। प्रेमचंद के लिए यह एक नया ही अनुभव था —

—और उर्दू के अब तक के अनुभव ने चित्तना भिन्न वहाँ कोई उपनेवाला ही न मिलता था और अकसर फिदाब गुर अपने खर्च से छानी पड़ती थी या बचाव रूपसे सेखर एक एबीघम का बाय-भ्यारा कर देना पड़ता था। उर्दू प्रेम पत्नी के साथ यही तो हुआ था। बड़ी-बड़ी मुपकिलों से बहुत-बहुत चिरी-चिरी-बिगड़ी के बाद उसका पहला हिस्सा जिनमें कुछ बायू कहानियाँ भी बीड़ बरम में छानर तैयार हुआ था सन् १५ के आरम्भ में। दूसरा हिस्सा उसके बीरम बाद आना

चाहिए या उसके बिना किताब खरीदी थी। लेकिन कभी यह कभी वह एक न एक अक्षर नहीं मानी रही और उसका पूरा-पूरा हिस्सा छपकर तैयार हुआ सन् १८ के आरम्भ में 'बाबारे हुस्न' लिख जाने के माफ-साफ उसी एक बरस में जिसमें बाबारे हुस्न लिखा गया जिसके उपनाम का अभी नहीं लिख न या। और पोहार इसी हम उपन्यास की पाण्डुलिपि मॉय रहे थे जितनी जल्दी लिख और वह जगदीश मुरु करे। यह एक जी को अच्छी लगनेवाली बात थी। लिहाजा बिना री में किताब लिखी मपी थी उसी ठेकी से उसका हिन्दीकरण शुरू हुआ।

इस ठेकी और इस समय को देखकर धाँसा हो सकता है। पर यह बवानी की उम्रम नहीं है। अभी पिछले ही साल तो उन्होंने लिखा था मेरे लिए बुनाप का लिख ही किबूख है। मैं किस बूझे से कम हूँ। तबसे तबीयत मँभली बकर पी लेकिन ऐसी नहीं कि लिखा के बाद एकदम छँटे गये हों और अगर वह इस समय छँटे हुए मानुम होते हैं तो सिर्फ इसलिए कि वह आपे में नहीं है उसका ज्वर अपने काम का मूठ सवार है। उपन्यास पूरा हाँडे ही देखिये जितना उगास सत है यह जो उन्होंने अप्रैल १९१८ में लिखा था—

बिन्दगी की उम्मीद यहाँ भी कम है। मगर यह चाहता हूँ कि या तो साथ चले या लड़कियों-तकरीम-आ-ताकरीर हो। मैं आपका पेशवा बनना चाहता हूँ। मौत की किबू मारे डालती है। जितना चाहता हूँ कि परमात्मा पर मरेशा रखें मगर लिख मूबी है समझता नहीं। किसी महारत्ना की सोहबत मिल तो धामर रास्ते पर आय। यही किबू है कि मैं आज मर जाऊँ तो इन बच्चों का पुरसाहाक कौन होगा। घर में कोई ऐसा नहीं सोमों में अगर है तो मान और नहीं है ता आप। और न होगा तो मरे बाद साल-दो साल इन बच्चों की खबर तो ले सकते हैं। इसी किबू में दूबा जाता हूँ। कुछ सरमाया जमा करन की काविष्ठ करता हूँ मगर कामयाबी नहीं होती। कभी किसी दूबान की कभी किसी दूसरे कारोबार की नीयत बाँचना हूँ।

जो दो-चार हजार रुपय बीबी ने बनर-ब्योड करके बचा लिय है वही कुछ बिसात है। उसी की बुनियाद पर अपना रोखबिस्वी का महक रुझा करना चाहत है। न जाने कहीं से निहायत रही काग्रज पर पूरक रंग से उपो हुई एक किताब जगहें मिल जाती है। जममें आनन-अग्रन डेरों रचना कमाने की तरकीबें लिखी हुई हैं। मुगी जो बहुत जउन से उसको रज हुए हैं। कभी रचना मूद पर चलाने हैं— मगर वह लौटकर नहीं आता। कभी साटरी का लिखत खरीयत है— मगर मान

नहीं निकलता। कमी सेपर खरीदने की बात करते हैं— मगर भाव ठीक नहीं बैठता।

बुझाये का चिकित्सा बर्तीस-बैतीस की उम्र में ही शुरू हो गया था। अब तक वो बह न जान कितना बुझा हो चुका है। जिन्दा कैसे है यही ताज्जुब है।

मगर एक बात है। बहुत जमाने से बीमारियों और बुझाये के साथे में रहते रहते उसने एक सबक यह खरूर सीख लिया है कि जब जख्मी बननी छूटे और घुप हो तो उसी को बहार समझना चाहिए। मुश्किल सबक है मगर उम्र सिखा देती है।

बिहावा यह जो उमंग या तेजी इस बस्त रिवाजी बेटी है। बहु कुछ उस बीमार की भी उमंग है जो मौत के मुँह से निकलकर आया है और जो बिल्टर उसने अभी नहीं छोड़ा है और न मन पर से बह डरावने माये मिटे हैं तो भी जितनी कुछ राहत उसे मिली है उसी को बह घनीमठ समझता है और जो हुल्का-गा ट्हराव उसकी लबीमत्त में आया है उनका एक पल भी बह अकारण नहीं जाने देना चाहता। उसे पता है कि हर खाँस और मूरज की हर किरन कितनी अनयोज है।

बाजारे हुल्क का सेवा सदन बनते-बनते गर्मी की छुट्टियाँ आ बयीं। इसी बीच छाने मई की घासी लय हो गयी थी। पिछले बरसों में कितनी ही बार बात उठकर लय हा चुकी थी जो कि ठीक ही था। अब बह हीमे स भग मये ये। घासी और हो जाम तो एक बड़ी जिम्मेदारी सर स उतर जाय।

२ जून १९१८ को मुंगी जी ने निपम साहब को लिखा —

मैं २९ मई को घासी स करारत पा गया। अभी दो-एक रोड की संमत और बाकी है। इसके बाद बसकते जाने का इत्स है। भयन हिन्दी नाबिल को प्रेम से बैता है।

इन्हीं सब परीणानियों में इस बार छट्टियों में कामतुर नहीं आ पाय। बह एम भनहोनी बाय थी।

गारामपुर पहुँचकर ६ जुलाई को उम्हनि लिखा —

ऐसी परीणानियों में था कि बानपुर जाने का मौका ही न मिला। ११ मई का यहाँ से चला २० को बाराक के साथ गया, ३ को बायम आया ११ को बलकते गया २ को बहाँ से आया। दिन बतान की दरमन में रँगा। गरीक का पिमा पुगना बीबीदा गतान बिर पढ़न का बन्देगा था। लेनी बालन न बरा लिपता। अभी अब से आया हूँ जहाँ उठी हुई है। कितनी तग महरमे जाना हूँ।

मेबा सदन प्रेम में जाने ही मुंगी जी को बाजार हुल्क की जिफ मगर हई।

लाहौर स जमाब इस्तबाब मानी 'ताक' जो बहुत उदार राष्ट्रीय विचारों के भावनी व ओंग लुद भी मन्टे लखक व कहकगी नाम की एक परिवार निकाली य। उननी मानी प्रकाशक सम्पा र्जी पी — बाबक हुगाजन। मुगी जी 'कहकगी' में बराबर लिखते व ओर गो उन दातों का मुसाहास बहुत बाद में जाकर हुई, बरना बाद, बिट्टी-मन्नी व रनिष् दातों के बीच बहुत पक्का स्नेह-संदंभ स्थापित हा गया था। न्हें एक दुमरे को जानत तीन-चार बरम स ऊरर हा गया था जबकि मुगी जी न बड़े हमरन के सहज में उम्ह २९ जनवरी १९२१ का मिला —

क्या आपकी और मेरी मुसाहास न हो मन्गेगी? बुनिया में मेरे मिर्क गिन-गिताव होम्य हैं। आप भी इस निहायन सहजुद ताशर क रकन-उास हैं। मगर जउमाम कि अभी तक मुगन-आगना भी नहीं। और न हा तो अपना प्रौढी ही मेक लीजिए।

मब स डेड बरम पहा एक बार एमा हुआ कि प्रेमचंद की एक कहानी से ताक की कहानी का विचार रकण गया। प्रेमचंद की कहानी 'कहकगी' क लिए मानी और ताक ने उसे पडा तो फिर मानी कहानी पूरी न कर सक। उमका बिक कण्ट हुए मुगी जी न १४ जुलाई १९१९ को लिखा —

मजानीन का मुझे भरमाम इसलिए है कि मायका किम्ना अबूरा रहू गया और मुगो इमलिण कि हमारे बरमिगन काई कहानी या बातिभी तापक उम्पर है बना औरों का कही बाने क्यो नहो मुमती। पर धान अपना डिस्सा तमाम करें। हर मुगरा रंग ओ बू दोगर ।

एक नय लखक की लिखोई क लिए इमम स्थान क्या कहा जा सकता था। मगर बाव इतनी ही न की। प्रेमचंद का सचमुच भवन इस मये दाम्द से हाविक स्नेह हा गया था। भरन मी खन में माये बसकर बहु लिखने हैं —

मरी बजा-जाउता शरक-ओ-दाबाहन' क मुनाम्किज आरन जा कपास बिना है उमन कहानी तापक का मुमान और पुगता हा जाता है। बेक मेरा मिन बापीस नाम है। मैं बन्द नामक का कोर और मोषा पाजामा पहनता हूँ और पगड़ी पहनता हूँ। एक पूरबी आदमी का पहनावा उम्पट रीप है आरन पगड़ी का गुमान कयों बिना? क्या आपकी इकहाम शमा है? मैं अपन मुमपनमा — मुगों के लिखक बनना एक प्राण नी तरदान विरमण करता हूँ इस मज पर कि बहु बाद

- १ माहित      २ बिजिण मन्स      ३ आभिन      ४ आम्गिक  
 ५ हर फूक का रम और पंख बरम होनी है      ६ एन-अहन      ७ मुग  
 ८ पक

मुसाहिबा वापस कर दिया जाय। और वा अगर आप कठोर एक दोस्त की याद गार के रखना चाहें तो उसका किसी आर्टिस्ट से एक बड़े पैमाने में बन्ट बनवा लें।

यों ही किबाने-मकने के सिलसिले में यह आल-महबान शुरू हुई लेकिन अन्त ही उसने बहुत अच्छी बोस्ती की सक्क अस्तियार कर ली। अपन इस नये दोस्त के सुन्दर राष्ट्रीय विचारों और साहित्यिक प्रतिभा दोनों ने मुंशी जी को बहुत जार स अपनी तरफ खींचा। उसकी सिखी कई चीज मुंशी जी की तियाह पर पड़ चुकी है और मुंशी जी ने बहुत कुछकर उनकी बाय भी ली है— जैसे 'भारतसुत' जो गीपी जी की जीवनी है 'जगारकली' जिसे मुंशी जी बहुत ठेके पाये का नाटक समझते हैं और जिसे आगे बसकर बैसी ही अपनह मिकी भी 'टीन की सीसा' और 'गाबीना बबान' जो कि बहुत सुन्दर कहानियाँ हैं और बहुत-सी छत्रों जिनकी शरीर करते मुंशी जी नहीं सकते।

मुंशी जी को इस समय अपने लिए एक नयी परिवार की तलाश भी है जो उनके मजदीक जमाना की जगह ले सके। बेघ में इस बीच बहुत कुछ हुआ है और मुंशी जी जमाना के नये रंज-दंग से बिस्त्रुल छलुष्ट नहीं हैं। निगम साहब की दोस्ती अपनी जगह, जमाना की पासिरी के साथ चल पाना इन बरसे हुए जमान में मुंशी जी के लिए मुशकिल हो रहा है। ४ सितंबर १९१८ का उद्दान अपने सहर स्पष्टबादी दंग स निगम साहब को सिखा था— जमाना क लिए बसक इधर कुछ नहीं मिल सका। कोरस का मुनासबा सौहान-रह है और कुछ यह मम भी माने होता है कि जमाना में अब जियारिदी की बाकी नहीं रही। यह सिमी नये रकीब के लिए जगह खाली करता हुआ मासूम होता है। जमाना में अब दिल नहीं है सिर्फ आदिब है।

ताज के राष्ट्रीय विचार मुंशी जी के समान ही हैं। उनके पास परिवार है। प्रकाशन-संस्था भी है। किताबें भी निकाल सकती हैं वहाँ से। उनका मिशनिषा अभी कुछ ठीक जम नहीं पाया है। अच्छा प्रकाशक वही मबर नहीं जाता। जमाना प्रेम का अनुभव भी बहुत अच्छा नहीं है। जयामत हो जाती है बिनाब उपने उपने। पिर भी अच्छी नहीं छपती। बिनी का भी कुछ यों ही सा बन्दाबस्त है। लाहीर वाले रिनाबें अच्छी छापने हैं। शरक इयामत से मुजायजा हा जाय ता क्या रहना।

मिहाजा २३ फुलाई १९१८ को उन्होंने ताज मासक को लिखा—

१ अक्षयपन      २ और मानविर कच्छ      ३ बाग      ४ बाबा  
५ प्रविशुम्बी    ६ देइ

“कह यह मुदकिन हो कि बहुराई में मेरा नाबिल बिलखों” निराल सच। मुदकिन है कि इसक निरालने से पर्वों की इलाकत पर कुछ असर पड़। यह नाबिल कोई तीन सौ सज्जान का है। इसके लिखने में मैंने अपनी का कागिप ठठा नहीं रको।”

दिर १ सितंबर को लिखा —

अगर आप इतनी बड़ी जितार छाप सके तो मैं साऊ करना शुरू करे बर्ना अभी पर्वों की तातील तक मुन्तबी रऊ। आपको साऊ करने की तकलीफ न ईया क्योंकि साऊ करने म असर तीन के तीन पण्ट जाते हैं। इस जितस में मैंने एक अलहादी बेगमी यानी बाबारे अस्मनउरराही पर जोर की है।

दिर २० मई १९१९ को लिखा —

माप हमे हमेगा के लिए चाहते हैं तो मुम बार्ड ठख नहीं है। मैं उवु पम्पिक से बाइजिड हूँ। यहाँ हमेगा क मानी है रयाग म रयाश तीन एडीशन और वह भी दस माकों में या हमसे भी ज्यादा। इसलिए मैं एमो एतें हरदिड पेग नहीं कर सकता जो मामाकूल हों। मर खजाल न पहले एडीशन के लिए बीड जो मरो रकें और बक्रिया वा एडीशन के लिए दम प्रो मरी। यानी कुल खजम माफ तीन सौ रुपय होती है। यह हिमाक मैंने कुल अमूर का मर नजर रखर पेग किया है और मुझे यकीन है कि भारतको लागवार न होगा।

प्रेसबलीमी भी अब बालक इलाकत मे ही छगी। जुंगीजी ने ५ सितम्बर १९१९ को लिखा —

मुम पबीमी और बलीमी क लिए १४ जो मरो का माऊन हा चुका है। रबीन्ड बाबू को मेकमिलन बीम प्रो मरी वेगा है। मैं रबीन्ड बाबू नहीं हूँ। इसलिए बाबू और बीम के दरमियान पण्ट पर फाज होना चाहता हूँ।

बाबारे हस्त में मुगीजी को अपनी खनील निक मयो है। मनाक में विजयी बईमानी है, गंदगी है, अन्याय है अंग-बोमला है, प्य पर थोट करलेबाये जिम्मे लिखना हा उनको अपनी बाल हागी।

अन्याय का नाम लते हा उनका प्यान मरम पहले स्त्री जाति पर जाता है। उनके रयाश मुन्त का निवार और बीन है। बहुरे क लिए औरउ-मर बरउबर है। मर उकोमला है। औरत मर के पर की जुगी है। मर बान इगनी ही है। बाजी सब इतर-मुत्तमा है।

मर्द कुछ भी करे, कहीं जाये कहीं जाये बिना-यात रणनी के कोठे पर बैठ रहे, औरत खुं भी नहीं कर सकती। औरत ने घर क बाहर पैर निकाला नहीं कि मुझे मे मर्द का सामन पकड़ा और उसक विभाग का पाप बड़ा — बाहे फिर बेचारी औरत अपना रिक बहुमान के लिए किसी सूसी क बार ही क्यों न गयी है। मर्द की अदाकत में फिर उसकी कोई मुनबाई नहीं है। जो कुछ भी बनाप-बनाप उसके मुंह में जायेगा कहेगा — औरत को मुंह खालन की भी इजाजत नहीं है। अपनी सफ़ाई मे कुछ कहना भी बेजदबी है और इसकी सजा यह है कि उसे भाबी रात का बिस्कुल बेसहाय अपने घर से निकाल दिया जाता है जहाँ जी चाह जाये जो जी में जाये करे। लेकिन सवाल तो यह है कि कहीं जाय और क्या करे। कोई उमका पुरसोहात नहीं होता। कोई एक रात के लिए उसे अपने घर में जगह देने के लिए तैयार नहीं होता। बदनामी का डर है। वह अपने घर से निकाली हुई, प्रति-परित्यक्ता कर्त्तनी जो है। ग्याय-अग्याय की जानबीन करने का अकटास किसे है! बीन है जो उस पड़ी पक भर को उसका हाव बाम सफ ? और जो ऐसे म जीबित रहने के लिए, वह कहीं कोई बुध मार्ग परक से तो वह बुध-कर्त्तनी है बुध-जातिनी है हरजारी है, रणनी-संस्था है

सब है सब है। जितनी गालियाँ जाती है सब वे बालो। लेकिन उससे कुछ काम नहीं बनता रोग भी दूर नहीं हो सकता और न इस लम्बाई पर ही पर्वी कामा जा सकता है कि उस गरीब औरत को ऐसी हालत में पहुँचाने की सजम बड़ी और सबसे पहली जिम्मदारी समाज की है।

बहुत बार मुसीबी दालमणी होकर गुजरे हैं और हर बार रोना तरफ बाठों पर अपना घोरर बेचने के लिए पैटी हुई औरतों का देखकर उनका जो कराह उठता है और हर बार उनके सत में सवाल पैदा हुआ है — इन बीरता में मुह कोई मोट है जैसे जैसे कौ हबम या बरबसनी का पीर या बेचारी पिहार है अपनी परिस्थितियों की ? और हर बार उनका मत न यही कहा है कि नहीं इन बीरता में मुह कोई मोट नहीं है कर्मकाय वे भी बीनी ही हैं बीनी कि और सब बीरता हानी है। अभा-पूने कहीं नहीं होने। यह तो दुनिया का नापका है क्या मर्द बना औरत। मं परों में भी बरबसम औरतों जिनका जाती है और बाबाफ औरतों में भी नेकबम औरतों पावी जाती है जो उन बाबाफ को काली में गूना हुए अपने उपाय बाब नई जगते दंतों। मनुष्य का स्वभाव सब जगह एक है। बर न तो देवता है और। कामक। वह मनुष्य है। जिसे हम देवता समझते हैं उममें भी जबाब मोदपियां हने मिल सकती है और जिसे हम शम्भ गवरा देते हैं वह भी बीरता जिनका घर बरिद नै अजम्बनीय उतराय का परिचय वे सजटा है। सबसे बड़ी बात यह है कि आत्मी

परिस्थितियों का दान है। परिस्थितियाँ जो माप बचाती हैं धार्मिकी नापता है जैसा बना देती हैं आदमी बन जाता है। उनस भोहा स सजनबाण भारती पावे हो शते हैं उनक भगपे समाज के नियम नहीं बनाय जा सकत। किनी तरह जिस अनुस नहीं करता कि य औरों धार्मिकी सुगो से अपना रापर बचती है। कुछ है किन्तुने उसी परिवेग में उसी बाताबरण में सम्म किया है और दूसरा कुछ देला ही नहीं आता हा नहीं। कुछ है जो छन्देन की कटिगाइयों म वस्त पर गारी न हो पावे क कारण या मरी अबानी में बिपबा हो जाने पर फिर सारी बिन्दगी अपनी अबानी का बोस न हो सकने क कारण छन्दे-संरंगों क समुप में पैसेकर हम साने या सगी है। कुछ है जिन्हें गायन बिन्दगी की निके एक मूल यहाँ क आयी है — क्योंकि समाज मरे की हवाक मुँके माक कर सकता है औरत की एक मूल नहीं माक कर सकता।

बहूछाल जैने भी आयी हों, उनका हम बहुमन से निकालने की कोई तरकीब हा मक्नी है या नहीं ?

मुनिए गरीफ हमन की अबानी सुयीकी क्या कह रह है —

हममें या कारि सुयई मही कि बहु मनन का मयसमान बहती है, सुयई यह है कि इसकाम भी उन्हें राहे-राम्य पर जान की कोई कोमिग नहीं करना। किन्तुओ की देलादेसी इसकाम न भी उन्हें अपन दापर स सारिब कर दिया है। या औरत एक बाण किनी बबह स मुनराह हो गयी उसकी तरफ क इसकाम हमेग क लिए भदनी बाँके बन्द कर रता है। बाक हमार मीकाना माहब मध्य राना बाँध बाँधों में मुरमा लपावे गमु सँभारे उनकी मजहबी तमकीन क लिए या पहुँचन है उनके दस्तरखान मे मीने सजम लाते हैं पुगबुगर लमीरे क बरा मयाने हैं और उनक कामदान स मुयतर' बाँक उड़ाने हैं। कम इसकाम की मजहबी करने मन्नाह मही तक काम हो जाती है। अपने बुरे जेन्नों पर नारिम होना मन्नी मन्ना है। ये मुनराह औरों पेगतर नहीं हा गपब का मगा उनरले के बाद बकर अपनी हातन पर मउमोय करती हैं सेकिन उम बन्द उनका पउताना बमु होजा है। उनके मुबरात की मक मिबा और बोई मूरत नहीं रती कि बहु अपना मजहबी मे बूमगों को बाने-मार्पब' में पँगावे। और म लए यह मिक मिका हमका जारी रता है। अपर उम मन्कियों की जानब तीर पर गानी हो मरे और मक मय ही उनकी परवरिग की मूरत भी निकल मय हा मरे तनाक

१ मीब साने २ पाग का बम्बा ३ मुयदिउ ४ मुपार की धरि  
५ हयों ६ प्रम के जाल



में ज्यादा नहीं तो ७५ फी सदी तबायक इसे लुप्टी से क़ुल कर में। हम बाड़े लुप्टिने ही मुनहगार हों पर अपनी बीलाद को हम मेक थीर रासबाक' देखने की तय्यार रखते हैं। तबायकों को ख़र से ख़ारिज कर देने से उनकी इससाह नहीं हो सकती।

लेकिन अरीक़ हसन या वेय अली जैसे मुसली हुए, उदार बिचारों से लौक कम हैं। बहुमत क्या हिन्दुओं में और क्या मुसलमानों में उनका है जो या तो हिन्दू हैं या मुसलमान इनसाज नहीं हैं, जो इस गंभीर सामाजिक और मानवीय प्रश्न पर भी हिन्दू या मुसलमान की ही भाषा में सोच पाते हैं। उन्हें इतमें एक-दूसरे की राजनीतिक चालें नज़र आती हैं। उनकी इसी ज़ेहतिमत्त की लुटकी लेंते हुए वेच अपनी कहते हैं—

भाजकक पोलिटिकल मधर का ख़ोर है हुक और इलाक़ का नाम न लीजिए। अगर आप मुस्लिम हैं तो हिन्दू कड़कों का छेक लीजिए। तस्लीमदार हैं तो हिन्दुओं पर टैक्स लगाइए। मजिस्ट्रेट हैं तो हिन्दुआ को लडा लीजिए। सब-इंस्पेक्टर पुलिस हैं तो हिन्दुओं पर गूठ मुकदमे ख़ार कर लीजिए, तहज़ीबत करने जाइए तो हिन्दुओं के बयान एमत लिजिए। अगर आप ख़ोर हैं तो किसी हिन्दू के घर डाका डाकिए, अगर आपकी हुसल या दक का लखत है तो किसी हिन्दू नाबलीन को उड़ाइए, सब आप क़ीम के प्रादिम 'क़ीम के मुस्लिम क़ीमी किन्ती के पालुदा' सब कुछ हैं।

प्रेमबंद ने बहुत बुनिया देखी है और उनके पीक ज़मीन पर हैं। उन्हें लुप पता है कि सपनक में कांग्रेस-कीम एक्ला का प्रस्ताव पाम करने से एनता न हो जायेगी वह असग एक लंबा और कठिन लुप्य है। बर्ना तो यही शायन रहनी है कि एक तरफ़ हाथी हाथिम कहेंगे — बिनाहरामे बल की यह मपी बाम आप लोमां में देखी? बसनाह इनका मुसली लुब है। बग़नी बूसे मारना कोई इनम सीप क !

और लुसपी ठरक बिग़मलान कहेंगे — मुस पालिबम में बोर् वास्ता नहीं है और न में उसके निकट जाना है। लेकिन मन यह कहने म लिनक भी संकोच नहीं है कि हमारे मुसलिम भाइया में हमारी गर्दन लुनी लण परड़ी है। बाबकमधी और लौर के अधिकांश मकाल हिन्दुआ के हैं। यदि बोर्ड में यह स्वीकार कर लिया तो हिन्दुओं का मन्दिमाेट हो जायगा। लिप-लिने बाण क़ाना बोर् बूसलमानों में मीप है।

और समझा ज्यों की त्यों अपनी जगह पर बनी रहती है।

यह था और, जैसे भी अपनी जगह पर बटल है जब तक कि समाज के मनुष्य बिनक बंधों पर हमारा समाज टिका है बेचारा को मनुष्य न समझकर पुत्र की अतिरिक्त कामछा के लिए एक गन्दी गाड़ी समझते रहेंगे। बहुत सहज ऋष से पाकिर बग कहते हैं— आप जब कोई मकान ठामीर करते हैं तो उसमें बदरती बनना जरूरी खयाल करते हैं। अगर बदरती न हा तो पन् दिनों में दीवारों की बुनियातें हिस बायें। हम फिरछे को सोनापती का बदरती समझना चाहिए और बिम तरह बदरती मकान क गुमावाँ हिस्से में नहीं होती बल्कि निमाह म पाभीवा एक सोमे में बनायी जाती है उसी तरह हम फिरछे को पाहर क पुरकिता मुकामात से हटाकर किसी गोमे में आबाइ करना चाहिए।

मगर यह कोर् इलाक नहीं है। यह पनपी ताड़ने जैसी बात है इलाक तो बड़ का करना होता। उस सामाजिक अत्याचार को मिटाना होमा या कुछ बनानियों को इन चाले से जाता है और यह रूपिण समाज-व्यवस्था मिटानी हागी त्रिममें म अत्याचार पनपते हैं, पकते हैं बचते हैं।

अमल बोपी है यह महाजनी समाज जिसमें आपनी पैसे की तराजू पर तुलता है और उस पैसे को एकत्र करन के लिए रिबनखोरी मूरखोरी डाका बून सब कुछ मोखि-संगत है— पार्त एक ही है कि पहाडू बचाकर जान करे और पकड़ा न बाय। जो पहाडू बचाकर काम करते हैं उनमें महन्त रामशास जैन सोम हैं—

यह साधुओं की एक गद्दी के महन्त था। उनके यहाँ सारा कारोबार भी बनिबिहारी जी के नाम पर होना था। भी बनिबिहारी सेन-देन करने से और बतीय रूप्य सैकड़े से कम मूद न लेते थे। बही मामयुद्धारा बमुफ करने न बही रेहननामे-बैनाम बिसते थे। भी बनिबिहारी जी रजम दवाने का रिमी को माहम न होता था और न अपनी रजम क लिए कोई हुनरा आनी उनसे बड़ाई कर मकता था। भी बनिबिहारी जी को रप्ट करके ठम इलाके में रहना कठिन था। महन्त रामनाम के यहाँ दम-बीस मोने-ठाक सापु स्वायी रूप स रहने थे। यह अन्नाड़ में बग देन्ते भैस का ताबा दूब पीउ संख्या का दुबिया संय छानन और त्रि चरस की बिनाम ता कमी ठगी न होने पाती थी। एम बलवान ज्ये के बिन्दु कौन तर उदयता? महन्त जी का अविचारियों में मूब मान था। भी बनिबिहारी जी उन्हें मूब मोतीचूर के लहू और मोहननाय निभात थे। उनसे प्रमात्र से बौन इनकार कर मकता था। टाहुर जी संमार में आकर समार की रीति पर बचते थे।”

कोई उनका बाल भी बाँधा नहीं कर सकता। और जा सोप पहुँच बचाने का काम करना नहीं चाहते उनका जीवन सुमन के पिता कृष्णचन्द्र की तरह एक ही मूस में बर्बाद हो जाता है।

इससे गतीना निकला कि धर्म-अधर्म नीति-अनीति म्बल कोई चीज नहीं है पैसे और प्रभुत्व के लिए जो कुछ किया जाय सब ठीक है। नीति-संगत है। ऐसा ही यह समाज है।

ठीक इन्हीं दिनों फरवरी १९१९ में मुंबईजी का एक बहुत माफ़ का लेम बीरे इमीन बीरे जदीर (पुराना जमाना नया जमाना) के नाम से जमाना में निकला। इस नये जमाने नयी समाज व्यवस्था की बलिवा मण्डी लख उबड़ते हुए मुंबईजी ने उसमें लिखा—

बहु कुछ आराम से अपना पेट भरेपी चाहे दुनिया भूखा मरे, पुँ हँसिगी चाहे दुनिया बून के भीसू रोये। अगर उसे साक कपड पहनने की पुन हो चाये और काम रंग सून से निकसता हो ताँ चस बूसराँ का पुन करने में भी कितक न होगी। अगर इंसान के बिस का टुकड़ा उसके सरीर को साकत पहुँचानेवाला हो तो निरथप ही हवाय भावपी उसके लंबर के नीच तकपते नजर आवेये। स्वार्थ परता उसका धर्म उसकी पुस्तक उसका रास्ता सब कुछ है। घाटी मानवीय भावनाएँ, सारे नैतिक प्रान इस हबस के पुतसे के भाये सिर मुका रेते है। यह कल और मशीन का मुन है और राष्ट्र इस युग की सबसे स्पष्ट अभिव्यक्ति है। यह दैव-जेसी मशीन बिम-राठ पायलों-बैसी तेजी मयर सिपाहियों बैसी पाबन्दी के भाव चलती रहती है। कोई इसके मरे में आ जाय यह उसे देखते-देखते निमग्न आवे उसे पीम बासेपी। यह किसी पर क्या नहीं करती किसी क साथ रिज करती। यह एक भीमकाय रोकुर है जिसमें ब्यापार और प्रभुत्व की दोँ बाँटें घूर-भूरकर बेखबर लोगोँ को भेताबनी देती है कि लबरदार, बर्ता पसक सपकते मर में मारे आभोग

ब्यापार और कल-कारखानों की वसति लख-गख के बिस पर मये युग को इतना धर्म है मुंबईजी के लिए कोई जब कि सिगरेट बौड़ियों क मोन बिकना है बदन और लान मारे चिगत है मगर घुप और भी मर्ई और ज्वाय का है जब कि दहात उबड़ते जाते हैं और गहराँ की ५ ५ । कि आइम के केमुमार के बरपुहार और औपरी कोट्रियों के लिए मजदूर है जब कि बड़े-बड़े ब्याबसायिक न और परीमान रोगा छिरता है (एहन में बाजीम हजार के

कमरुते म सोलह हजार से रपारा) जब कि भाइय मेहनत की रात पानेवाने इमान पूंजीपतियों के गुलाम होते जाते हैं जब कि महज पमेबाक ध्यावागियों के मठे के लिए सूनी लड़ाइयों में कूदन म भी शोग बाब नही माठ

कहाँ की बाग यों ही नही आ गयी है महाजती ममाज की मानव-द्रोहिता की बहु बनिम भीमा है और कानों बगुनाहों का पून करनेबाक महामुज का मनी मुनकिल से दो महीने बीते हैं।

इन्ही दिनों का एक कहानी होनी की छुट्टी में लड़ाई म शोग ब्या नवा एक सिपाही कहता है—

अब इस फौजी विस्मयी की हाकतों पर और करता हूँ ता वार्न और बज्रसोस से मरा सर मुक जाता है। बित्तन ही बगुनाह मरी राइफल क सिहार हुए। मेरा उन्होंने क्या नजसाज किया था? मरी उनस कौन-सी मराबत थी मुझे तो जर्मन और आस्ट्रियन सिपाही भी बैसे ही सम्भे बस ही बहादुर, बैसे ही कुगमिबाज बैसे ही हमदर्द मालूम हुए जैसे प्यंस या इगलैण्ड के। हमारी उनस बूब बोम्बी हो गयी थी साथ बल्लत से साथ बैठते से यह लपलह ही न माठा था कि यह शोग हमारे अपने नही है। मगर फिर भी हम एक-दुमरे के बून क प्यासे थ। किमलिए? इसीलिए कि बड़े-बड़े मदेब सौदागरा को लतरा था कि कही जमनी उनका रोबगार म छीन के। यह सौदागरो का राज है। हमारी फौज उन्हीं क इगारों पर नाचनेबाकी कठपुतलियाँ हैं। जाम हम एरीबो की गयी जेबे यम हुई कोटे-कोटे मौदागरो की

मुंगीजी की अमल लड़ाई इन सौदागरो से इस महाजती ममाज से है और उन्हें इस बात से गिबायत है कि 'उम जहूर को जो समाज-ब्यबस्था में मुक्त मया है निकालने की कोशिश नही की जाती सिर्फ उससे ऊपरी प्रमाबों, ऊपरी बिहृतियों को छिपाने और मिटाने में लाग लम हुए हैं। कोड़ी विस्म का रंगीन कपडा से रेंका था र्हा है।

अकलत उस कोड़ की दूर करने की है। औरत का अपनी जाबरू बचन के लिए बाजार में बैठना भी इसी काड़ की एक पंमी है मगर क्योंकि उम्मी हा इस पूमी के भी इलाज की उमी कोड़ी ममाज से जो 'आग्मा की भी तराजू क पलड़ों पर लौकना है। उमे जननत्र कहना चलती है। बराबरी और भाईचारे का उमने वैरौणन इन तरू रोश है कि अब उसकी दकल भी पहपानी नही जाती। इमान की शीमन उसक नजदोक इतना ही है कि वह एक कपवा कमान का माचन है। वह जमाई की तरू इमान के पीन और घाम का मशाबा करने उमरी शीमन मगाना है।

कूर समाज की बस्की में पिटती हुई मानवता की ऐसी ही भाँट पुकार मंजीवी को बिकटर झूगो की से मिडराम्म में मिली थी जिसे उन्होंने बाबारे हुल्ल पुरु करने के ठीक पहले पढ़ा था और उसका इतना गहरा असर उनके मन पर हुआ था कि २ जनवरी १९१७ को उन्होंने नियम साहब को जैसे बेचैन होकर लिखा — पहले यह बताइए कि बिकटर झूगो की मजहूर किताब अ मिडराम्म का कर्तुत्व क्या हुआ है या नहीं। अगर हुआ है तो कहीं मिल सकता है। अगर नहीं हुआ है तो मैं इस काम में जुटना चाहता हूँ। साज भर का काम है। किसी तरह से पता लगाकर बतलाइए।

कथा-बीज उससे इतना ही है कि अ्याँ बालक्याँ नाम का एक आदमी मूज से पीड़ित होकर एक बार बोरी करता है। वह एक बोरी उसे हमेशा के लिए बोर बना देती है। किन्तु ही बार वह चाहता है कि उस रास्ते को छोड़कर भले आदमी की तरह धार्मिक से जीवन व्यतीत करे। लेकिन कर नहीं पाता क्योंकि बोर का छया उसका अंतर समा हुआ है और समाज के निर्मम प्रतिपोषात्मक म्याम के प्रतीक के रूप में जाकेर निरन्तर किसी कूर नियति के समान उछका पीछा कर रहा है।

मुमन की एक भूस भी नियति की छाया की तरह जउ तक उसका पीछा करती है और सबसे बन्ध निर्मम आचार्य है वह जो उसे अपनी ही छोटी बहन के हाथों सहना पड़ता है जिसकी उमड़ी हुई चिन्तनी का सँभारने में खुद मुमन का हाथ है। मुमन जीवन से निरपछ होकर उमका अंत कर देने के लिए गगा जी की ओर बढ़ी था रही है, जो कि प्रतिकूल समाज के बाध व्यक्तिक की अतिव पराजय है, जब कि अकस्मात् एक अमलकार की भाँटि स्वामी गत्रानम्य मुमन के पति जो मुमन के बने जाने के बाध पदचातापकम संन्यामी हो गये व अचतरित हो जाने हैं और मुमन को आत्महत्या के मार्ग से बिरत करके उसे सेवाधर्म की सीसा देते हैं।

अक्षर ऐसी स्थितिया में मुजीवी अमलकार का आघय सेते हैं। उनक कुछ साहित्यप्रेमी बंधुओं को बरी भी लगती है यह बीज। उनमें से एक बौई अकनुम्ना नाम के सम्बन्ध नियम साहब को इसके बारे में लिखते हैं जिसके उत्तर में मुजीवी ने मणवान् जान अपन किम अनुभव या प्रभाव के आचार पर (या गायन यह भी उनक भीतर का विमान है) अर्सेस १९१८ के एक पत्र में *मिलम मार्क को मिया* — मिस्टर अकनुम्ना की राय पर अमल कर्त्या हालाँकि *Supernatural element* इमान की चिन्तनी में बागिक है।

वह हो या न हो इतना सिद्ध है कि यहाँ जीवन का प्रमाण खुद जाता है यहाँ

चमत्कार की धरम सभी पढ़ती है, जहाँ लेखक समाज के बहि को बचान में अपने को बचान पाता है वहाँ एक न एक आत्मम की स्थापना करके अपना मन शोष पा सता है।

छपाई में लमभग साठ भर का समय लेकर सवासदन १९१९ के मध्य में प्रकाशित हुआ। प्रेमा क बार जो सन् १९७ म प्रकाशित हुआ था और जिसकी वही कोई बर्षा न हुई थी मुंजीजी का यह पहला उपन्यास था जो हिन्दी में प्रकाशित हो रहा था। मुंजीजी को स्वभावतः अपनी इस कृति से बड़ी-बड़ी आशाएँ थी — और पुस्तक जब निकली तो यच्छा-च्छासा एक तूफान का गया। चारों ओर बूम मच गयी। मोरलपुर से निकलन बाल साप्ताहिक पत्र स्वदेश क ८ नितम्बर १ १९ क अंक में पंडित पद्मसिंह शर्मा और श्री रामदास गौड़ के समुक्त हस्ताक्षर से एक ममाकाचना निकली जिसमें पुस्तक को बुर-बुर सपहा गया। और भी सब तरफ बर्षा हुई। २५ अक्तूबर १९१९ का मुंजीजी न सहज उ साह क म्बार में नियम साहब को बड़े पुलबुध अंशक में लिखा — 'सरस्वती खान पर नहीं आगड़ी पर म्बार है। लक्ष्मी दरबार पर नही बामाए बाम बैठी हुई है। बाना बिसाता है बुलाता है, पर उतरने का नाम नही लगी। किस में चाय लिकू या न किक आत्रकक बाबारे हुन की सञ्चई और नये नाबिल की तसनाक में बेहर मसकक है। बाबारे हुन का गुजरती तनुमा पाया हो रहा है। हिन्दी में लोग इस बेहतरीन नाबिल ख्याल करते हैं। कहानियों का तनुमा बेमसा खान में हो रहा है। हिन्दी में पम्भार बुर है। बिषाब की इजाअत में बार्ई खान नहीं हुई।

साठ भर में पहला संस्करण बिक भी गया। ऐसे में मुंजीजी के जोषों का क्या कहना। लेकिन एक बात बराबर सठ रही थी कि कहीं तो एक तीसरी ही खान गुजरती में बिषाब का तनुमा निकल रहा है और कहीं जिस खान में बिषाब सबसे पहली लिखी गयी उसी में छपन का सब तक कोई बंदोबस्त नहीं हो सका। ठाक साहब का इनके बारे में लिखे हुए एक साठ पूछ हो रहा था और अब तक वह प्रस्ताव पर बिचार ही कर रहे थे। आखिरकार मुंजीजी ने जैसे भी हो मामला तय करने की शरत में बहुत दुखी होकर और चाय सोड़ा मूससाकर २२ अप्रैल १९२ को ठाक साहब को लिखा —

भयर इन मूरतो में कोई पसन्द न हा तो मुझे पहले एडीशन के लिए बार्ई भी गप्य बना करमायें। हिन्दी में मुझे पाँच ही मिले थे। गुजरती एडीशन

के मुझे सी रुपये मिले। आप जिस तरह चाहें प्रैसका करें। बाईं सी रुपये प्राक्सन पत्ररत से क्याया मताक्या' नहीं है। मेरी डेढ़ सास की मेहनत और काम फर्साई का नतीजा यह किताब है। अगर यह सब शर्तें आपको लागवार माफूम हों तो अपनी मर्जी के मुताबिक किताब बाया करके मुझे जो चाहे दे दें। मैं आपका मग बूर हूँया। मुझे यह सतत खिस्तत मालूम होती है कि अपनी किताब के लिए पक-सिमरों की खुशामद करता फिरें।

और, किताब छपी — लेकिन कोई सास कामयाबी उसे नहीं मिली। उरू वालों के लिए फोटे की खिस्तगी और उसके मसलों में कोई नयापन नहीं था। नबीर अहमद सरघार और मिर्जा इसबा जैसे लोग उसके बारे में बहुत लिख चुके थे और बहुत अच्छा खिस्त चुके थे।

भारत-मंत्री माष्टेयू ने अपना पद संभालते ही २ अगस्त १९१७ का शासन-सुधार का आश्वासन दिया। तत्काल उसका प्रयास पड़ा। होमरूल के लिए 'निश्चित प्रतिरोध' आन्दोलन की जो बात उस समय उठ रही थी वह दब गयी और उसकी जगह यह निरख्य किया गया कि एक डेप्युटी-चान वाइसराय और भारत-मंत्री के पास भेजा जाय जो कांग्रेस-सीध मान्यता के आभार पर उनसे बात कर। प्रसिद्ध लिबरल नेता सी. बार्ड बिस्तामसि को इस कमेटी का प्रधान चुना गया। नवम्बर के महीने में यह डेप्युटी-चान माष्टेयू और केम्सफर्ड से मिला।

उन दिनों सारे देश में जारों और इसी रिजर्व स्कीम की चर्चा थी। माष्टेयू और केम्सफर्ड सारे देश में घूम-घूमकर बिसिष्ट लोगों से मिल रहे थे।

माष्टेयू रिपोर्ट करने पर मिस्टर बेसष्ट ने कहा था कि इस रिजर्व स्कीम का ब्रिटेन की ओर से पेश किया जाना और हिन्दुस्तान का उसे मजबूत करना दोनों ही बातें असोभव होंगी। लेकिन माष्टेयू से मिलने पर उनका विचार बदल गया और वे कुछ घुमघुमी ही रह जाने लगे।

दोसरे व. नरमदली उनकी इस बात को सुनकर और बड़े स्पष्ट स्वर में कहने — मिस्टर माष्टेयू बेचारे क्या कर सकते हैं अगर एक तरफ यहाँ के गवर्नर-बाजे और दूसरी तरफ इंग्लैण्ड के कट्टरपन्दी दोनों ही उनका विरोध करेंगे।

विमर्श मतलब था कि रिजर्व स्कीम अपने मूल उद्देश्य में सफल हो रही थी। कांग्रेसकार जून १९१८ में रिजर्व स्कीम अपने अन्तिम रूप में देश के सामने मापी — भारत की राष्ट्रीय आकांक्षाओं को बहूलाभ-समकाल की सम्मन्धी शक्तों को बढ़ावा देकर राष्ट्रीय आशासन में पूरा आत्मनिर्भरता की एक छलपरी यात्रा। ब्रिटिश सरकार की पुरानी बुराई नीति का एक नया रूप — नरमदलीवादी का उभारो और उच्च राष्ट्रवादीयों को शक्तों से बृचलो।

भारतगदा बानूक विमर्श अन्तर्गत सरकार ने बहुत ही व्यापक अधिकार अपने हाथ में ले लिये थे जोरों से काम कर रहा था। अन्तारा का गया बाडा था रहा था। उभा-सोभापदी पर रोक लगी थी। लोय सब तरफ देनों में बल



किये जा रहे थे। मौलाना मुहम्मद अली और चौधुरी जली लड़ाई छिड़ने के तीन महीने बाद अक्टूबर १९१४ से ही जेल में बन्द थे और लड़ाई खत्म होने के भी बरस भर बाद तक बन्द रहे आये। तिरुक् और विपिनचन्द्र पाण्ड के गिल्की और पंजाब-प्रवेश पर रोक लगी हुई थी।

सरकार को अपनी लड़ाई के लिए चाहिए जवान भी थे रुपये भी मगर अपने इंसानों से। तिरुक्-बैसे पुण्डने उग्र राष्ट्रीयवादी पर उसका विश्वास कर सचन्या कठिन था। मद्रास लेते भी डर लगता था। तिरुक् कठोर व्यावहारिक राजनीतिज्ञ थे और सरकार भी इस बात को समझती थी।

बम्बई के दफ्तर ने जब युद्ध के प्रसंग में नेताओं की एक सभा बुलायी तो तिरुक् भी उसमें गये। पर उन्हें बोल्ते अभी मुद्राधिक संशोधन हुआ था कि जबराज्य चुप करा दिया गया क्योंकि उन्होंने वहाँ भी भारत के राष्ट्रीय अधिकारों की बात उठायी। टीका है हम आपकी हर मदद करते लेकिन हमें भी तो बचने में बीबिए कुछ। और फिर, जब हमारे जवान आपकी पकड़ में भर्ती होकर लड़ते तो उन्हें भी योग्यतानुसार वही रैंक या स्थान मिलना चाहिए जो कि आप अपने सैनिकों को देते हैं। यह तो बिलकुल न्याय की बात है। लेकिन सरकार यह न्याय की बात सुनके के लिए तैयार न थी और तिरुक् को बैठा दिया गया। कांग्रेसराय ने जब दिल्ली में मीटिंग बुलायी और गांधी जी को उसके लिए आमंत्रित किया तो गांधी जी को पहले उसमें जाने में आपत्ति हुई, केवल इस कारण से नहीं कि मुला पाठा या ब्रिटेन ने कस से कोई गुप्त संधि की है जिसके अन्तर्गत कुस्तुनतुनिया तुर्की से लेकर रूस को दे देने की बात थी बल्कि इसलिए भी कि तिरुक् और विपेन्द्र बेसेन्ट जैसे लोगों को नहीं आमंत्रित किया गया था। लेकिन टीर बेसेन्ट ने उनको समझा किया और वह मीटिंग में शरीक हुए। तिरुक् को भी ठार देकर गिल्की बुलाया पर तिरुक् ने जाने से इनकार कर दिया। उनके दिल्ली प्रवेश पर रोक लगी हुई थी और इस तरह जाना उनके लिए अपमानजनक था।

अगस्त १९१८ में तिरुक् पर एक नयी पाबन्दी यह लया गयी कि वह क्वैन्टर से इजाजत किये बगैर पकड़ने में भर्ती होने का समर्पण करने के लिए भी नहीं आपन न हो सकते थे।

उन्हीं दिनों तिरुक् ने गांधी जी के रबीये से सायर कुछ गिरा होकर उनके पास पञ्जाम हज़ार रुपये का एक बक भेजा था जो कि एक तरह की जमानत थी — अमर आन सरकार ने यह आश्वासन सचन मेरे पास भेज दें कि हिन्दुस्तानियों को भी फौज में कम्पाउंड रैंक मिलेगा तो मैं अपने महापुरुषों के साथ हज़ार जवान आपको भर्ती करके दूँगा और अमर मैं यह न कर सकूँ तो आप इन रुपये को वण कर लें।

लेकिन मांभी जो इसके लिए भी तैयार न थे और उन्होंने यह बहकन तिलक का बक कौन लिया कि सरकार को विस्तृत युद्ध मन से महायत्न देनी चाहिए, उसका रूप किसी प्रकार सौदेबाजी का न होना चाहिए। दक्षिण मन्त्रीका म बुधवार युद्ध में सरकार का साथ देने के बाद वहाँ की सरकार न उनके साथ जो कुछ किया था उससे भी निम्ना लभ क लिए मांभी जो तैयार न थे। उनका मोहताब होने में अभी कुछ देर थी।

बहरहाल सरकार ने अच्छी तरह समझ लिया था कि तिलक को, और जिसके बिनके प्रतीक थे उन्हें, एवाकर रखन में ही साम्राज्य की सुरक्षा है।

इस तरह मुक्त के सामने ब्रिटिश हुक्मत के दो बेहरे भाये — एक तो मुम्बराणा हुआ बिफना-बिफना घण्टन का पुतला रिजर्व स्कीम का बहग और दूसरा काल-काल भावें निकाले मुम्ने से बिफरा हुआ रोज्म ऐक्ट का बेहय

मुंगी की व्यावहारिक राजनीति क आज न बिलकुल भलग अपने एक कोन में बैठे हुए सामोपी में काम कर रहे थे — लेकिन भाव-कान सूख-सूख चुके हुए, बेच-बिदेस की हर बड़ी कम्ता क प्रति बर्माचारकरूप स मन्त्रय। और उनक जैसे अलग-अलग एक ब्यक्ति के आचरण का समाज पर तत्काल कोई प्रभाव पड़ता हो या न पड़ता हो उनकी दृष्टि में यह बात अपने आप में महत्व रखती थी कि ब्यक्ति बिलको सत्य और स्याय समनता है उसके लिए अपनी आवाज उठता है, नल बह आवाज फिटनी ही अकेली हो, बिलनी ही कमबार हो। महत्व इन बात का नहीं है कि उस आवाज में बम या बा नहीं और बुनिया उससे त्रिभी या नहीं हिली। महत्व इन बात का है कि एक आदमी ने चाहे बह बिलना ही छाग क्यों न हो सब को सब और झूठ को झूठ, स्याय को स्याय और अस्याय को अस्याय कहा।

एक स हो और दो से चार आवाजें पैरा हो जाती हैं वैसे ही जैसे ताल में बचक पैरने पर एक से दो और दो से चार लहरें पैरा हो जाती हैं।

बह भी न हों तो भी दूसरों का मुँह जोड़कर अपनी आवाज को यन्त्र में न पैरने दो क्योंकि अपने उम अनेकैपन में भी उन आवाज का सार्थिक महत्व रह्या और बिल सचेतकिलि को एक पीड़ी नहीं पड़ पाठी जब आनेशामी पीड़ियां पड़ती हैं।

यह बिचार उनको एक त्रि भी उपलब्ध नहीं है। अब स कई चार बरम पर्थ उन्होंने इमी आगय को एक कहानी एक ही आवाज किसी की जो कहानी के रूप में कमबार है लेकिन जिसकी आघाट्यिता यह सत्य एक बड़ा सत्य है।

सरकारी नौकरों अब रिमोडिन बुबह होनी जा रही थी। चारों तरफ हाथ पैर मार रहे थ कि दूसरी कोई नौकरों बिल आय तो हमको छोड़ दें। उनके रोम्य

निगम साहब की माइनेट राजनीति अब तक उन्हें सरकार से पुरा-पूर वहायोग करने की ओर से वा चुकी थी और लड़ाई के उमाने में जब सूबे की सरकार ने बार बर्नल (जमी अखबार) जायी किया तो नियम साहब को भी उसकी कमेटी का मेम्बर बनाया। मुहरिरी छोड़न और अखबार का काम करने की बात अब तक बीचियों बार मुंशी जी उनसे कर चुके थे। लिहाजा नियम साहब के दिल में छायाक भावा कि अगर मुंशी जी उच अखबार क उर्दू संस्करण की जिम्मेदारी लेने की तैयार हों तो उन्हें वहाँ जाने की तौदिस की जाय।

मुंशी जी न उनक इस प्रस्ताव के जबाब में ६ जुलाई १९१८ को लिखा —

जब मैं सरकारी अखबारकीय क्या बनूँगा। अगर अखबारकीय बनना लखनौर में है तो गैर-सरकारी जाबाब अखबारकीय हाईया। जंम के मुतासिलक मजामीन मिलने की भी इस बन्द मुझे फुर्तग गही है। बस इसी अपनी रफ्तार-कदीम' पर चलूँगा। बी० ए करके किसी प्राइवेट स्कूल की हजमास्टरी और एक अच्छे अखबार की एडिटरी और कुछ और पश्चिम काम। यही मेराये जिन्वगी' है। अखबार मजबूतों-किसालों का हामी और मुजाबिन' होवा।

बाहिर है कि एसा आदमी सरकारी अखबार के बहुत काम का नहीं बा। उपर निगम साहब की उन दिनों गही दुनिया थी। दिन-रात हुकूम के संक वा उठना-बैठना था। इन्ही जिनों एक ब र एसा हुआ कि निगम साहब ने अपनी बड़ी सन्धी की शारी में अपने कुछ अंजब बीस्तों को भी बाबत थी। मुंशी जी को यह बात इतनी काफ़ी नागवार हुई कि उन्होंने निगम साहब को लिखा कि आपने अंजबों को अपने यहाँ क्यों बुलाया। जब वह साय हमको काला आदमी समझत है और हमारी छाया से भागते हैं ता हमें भी बाहिर कि उनको अपने मे बतई बूर रखते।

एराब कि दोनों मिन दो विरोधी दिशाओं में एक दूसरे से काफ़ी दूर जा पड़े थे और उनसे बीच एक राई लिखनी चली आ रही थी लेकिन दोनों अगले बतों के बजाय आदमी से और दोस्ती की बुनियातें बहुत पानी थीं इसलिए कुछ तान बिपदा नहीं। पर अब वह पुरानी बात भी न थी।

अपनी किन्हीं तंगानों में निगम साहब को जबाब देने में कुछ देर हा पयो, लेकिन उन्होंने तापर एक बार फिर और कर लेने के लिए मुंशी जी से कहा। उनके जवाब में मुंशी जी ने अपने इनकार को दोहराने हुए लिखा —

● भाईवान तमलीम। हजारा-हजार दुखिया। भवा मुस तरीब मुर्गिन की याद अभी तक हुनूर क दिव न बागी ता है। यह बावरी गता नहीं। जमाने

की हवा स भाप भी नहीं बच सकते। और न मुझे इसका बाबा है। मंसब और मरबत का इन्क सम्बल है और जो महब पोस्त है और कुछ नहीं उगका सानी ! गिनापत करे, बहू रँवार। बुरा न मानिएगा।

बार जर्मल क मुताल्लिक। मुझे यहाँ मय मकाग क ची रपय मिलते हैं इसाहाबाद में एक सी बीस पर आगा मेरे लिए बेसूद है। और मैं बरजिस्मती से इन ज़ौमी काम नहीं समझता। मुझे इस काम स मुजाफ़ रबिए। ●

असल बात यही है मुसी बी इन कौमी काम नहीं समझते। सेकिन एक बोस्त उसी सब में समा हुआ है इसलिए इतने लटठमार डग से इस बात को कहन मे जी कगपता है लिहाजा मुसी बी इपर उधर स बठाने सोझकर लाते हैं। सेकिन छिर डर मामूम होगा है कि निगम माहूब कही तनम्बाहू को बत्रवान की बात न कहें फिर क्या होगा ? चुनाव बहू हिम्मत करके भगव ही जुगले न बहू बात बहू बेता है वा अब तक उसने गले में फँस रही थी। किसी तरह यह जिस्मा खत्म हुआ। बहरहाल मुसी बी ने इसी सठ न यह भी सिखा कि हाँ मैंने उसमानिया मुनिवसिती में दरकबास्त दी है। अगर भाप मिस्टर हैदरी पर मेरी वाबत कोई असर डाल सकें तो यह भापकी पोस्त-नबाबी होमी हालाँकि मुझे उम्मीद नहीं है कि हैदराबाद में मेरा कोई पुरसा होगा।

उबू सेफवरर की जगह थी। मगर हुआ बही जो होता था। सर अकबर हैदरी सरकार क नामी खैरबाहों न ये प्रेमपद के लिए बहाँ कहीं गुजाइरा थी जहाँ दरगहास्त के बिभाग में नियक्ति के लिए सारी कोणिंग-वीरबी क बाबमुद इकबास की दाल गहा पकी वो उन बरत बहू अपनी चाहत की चाटी पर थे।

आजकल अंग्रबार हम की खबरों से भरे रहते हैं और कौमी-कौमी भयानक खबरें। भगता है कि न जाने कहाँ के खबर बहूची भा मरे हैं बहाँ ! सब कुछ तहम-नहम कर डाला। खून की खरियाँ बहा दी। एक स एक रोमटे लड़े कर देनजामी कशानियाँ और तसवीरें।

गब पठा है मुसी बी को। तर्क उनके पास नहीं है पर उनका दिल बहूना है कि सब मनपकंड बातें हैं। जहाँ आमाम नो पोड़े ही टपक है बालगबिक उसी बरनी के ता बने हैं। मय कंस भाप उनका राज उन सोपों का जो बल तक गुर राजा थ और ये सोग जो आज गही पर वीठे हुए थे कल तक उनक गुप्तान थे गियाया थ जिन्हें बहू मरे-बाबार कोड़े मागते थे। गूब गहग हल बन्ना नीब की मिट्टी ऊपर आ गयी। इमी को भूखर भी बहूने हैं।

बैनी ही कुछ पीछे यहाँ भी खींच रही है, पक रही है मूमि के गर्म में। और लोग उसे बहलाना चाहते हैं रिजर्वमें स्वीम से!

मगर मुंशी जी तो पूरी तरह उसी मूडोल के साथ हैं। छोटे-मोटे मुपारों से उनका काम नहीं चलने का। फरवरी १९१९ के उमी सेम में बिचका बिक्र ठगर भा चुका है, मुंशी जी की भबर इस तपे खमाने के उस एक रौशन पहलू पर जी जाती है जो उन काले बागों को किसी हद तक डेक देता है। वह रौशन पहलू है बेइबानों की ताइयत का जाहिर होना। अब एक छत्रकाकत मजदूर भी अपनी अहमियत समझने लगा है और धन-वीर्य की दूधोड़ी पर धिर गुजाना पसंद नहीं करता। वह भी अच्छे मकानों में रहना चाहता है, अच्छे पाने पाना चाहता है और मनोरंजन के लिए अचकात की मांग करता है। वह पूंजी का दुश्मन है व्यक्तिगत संपत्ति की बड़ धोदनबाका और ब्यापारियों की जल्येबंदी का हथियार। सब की एकता उसका जेहार का नाश है। वह ऊँच-नीच को मिटाकर सारी जमीन को समतल बनाने की कोशिश करता है। वह गमी राज्य व्यवस्था स्थापित करना चाहता है जो मनोपार्जन के समस्त मापन अपने हाथ में रखे और हर व्यक्ति को उसकी मेहनत और योग्यता के अनुसार बग़बर बाँटे। वह जमीन्दारों को एक गरीब और बेकार पीछे समास्ता है और उनकी जगति का उनके कब्जे में निकालकर जनता के इच्छ में रखना चाहता है।

और यह दूसरों की आंख में हाथ सेंकने की बात नहीं है अपने देग के लिए भी उन्हें इसी आंख की इसी मूडोल की तड़प है। स्वराज्य की लपड़ी पकड़ती से बहल जानेवाले वह नहीं हैं, उनके सबाध परती से उठने हैं और परती की करबट ही उनका अबाध दे सरती है—

● हमारे स्वराज्य के नेताओं में बड़ीक और जमीन्दार ही सबसे खारा हैं। हमारी कौमियों में भी यही दो समुदाय जाये-जाये सिपाही पड़ते हैं। मगर कितने धर्म और अजमान की बात है कि उन दोनों में से एक भी जनता का हमदर्द नहीं। वे अपने ही स्वार्थ और प्रभुत्व की धुन में बस्त हैं। वह अधिकार और शासन की मांग करते हैं और धन और बौद्ध के इच्छुक हैं जनता की भलाई के नहीं। आप स्वराज्य की हाँक लगाएँ, मन्त्र गवर्नमेण्ट की माँग कीजिए, कौमियों का बिग्लान देने की माँग कीजिए, उपाधियों के लिए हाँक फेंकाएँ, जनता को इन चीजों से कोर् मनबर नहीं है बल्कि अगर कोई अमौखिक शक्ति उसे मूगर बना कर तो वह मात्र जोल्हार आबाध में धंग बजाकर आपकी इन माँगों का बिरोध करेदी। कोई कारण नहीं है कि वह दूसरे देग के हाथियों के मुखाबके में आपकी हजमत को खारा पर्वद करे। जो देग अपने अयाचारी और नाकबी जमीन्दार के मुँह में बंदी

हुई है, जिन अधिकार-सम्पन्न लोगों के ब्रह्माचार और बेगार से उसका हृदय छप्पनी हो रहा है। उनको हाकिम के रूप में देखने की कोई इच्छा उसे नहीं हो सकती।

इसकी क्या अमानत है कि आपके पत्र में आकर उनको हाकल और भी बुरी न हो जाएगी? आपने जब तक इसका कोई सबूत नहीं दिया कि आप उनकी भलाई चाहते-चाहे हैं। अगर कोई सबूत दिया है तो उनकी बुराई चाहने का स्वार्थ का लोभ का कमीनेपन का। आप स्वराज्य की कल्पना का मजा के-केकर बूझ लें और बगलें बजायें मगर अधिकारों के साथ-साथ कर्तव्यों का ध्यान रखना भी बहकती है। बाह्य रईसों या अमीन्दारों से हमें सिकामत नहीं। उनकी आँखें सब बन्द कुँसेंगी जब उनकी गर्दन अन्तः के हाथों में होगी और वह बेबस निवाहों से डर-उपर तार रहे होंगे। गिरावट हमें उन लोगों से है जो पड़-सिधे हैं और अमीन्दार हैं बकीर हैं और अमीन्दार हैं। वह अपने दिल से पूछे कि वह प्रजा के साथ अपना कर्तव्य पूरा कर रहे हैं? उनका दिल साफ़ रहेगा कि तुम इस तय्यार पर ठीक पड़े और छोड़े निकले।

आनेवाला अमानत अब किनारों और मजदूरों का है। दुनिया की रस्ता इसका साफ़ सबूत दे रही है। हिन्दुस्तान इस हवा से बेमसर नहीं रह सकता। हिमाचल की चोटियाँ उस इस हमले से नहीं बचा सकतीं। अन्तः की इस छड़ी हुई हातों से बोले में न आइए। इनकलाब के पहले कीम जानना कि हम की पीड़ित अमता में इतनी ताकत छिपी हुई है? ●

और इसके ऊपर इस महीने का २१ विमम्बर १९१९ को मुरी जी के नियम साहब को लिखा जा —

मैंने अभी तक क्रेडिट पालिटिक्स पर कुछ नहीं लिखा। मुझे अमानत की पालिसी पर नजर डालते हुए कुछ लिखना मुनासिब नहीं मान्य होता। मैं पीपुल डिपेन्डेंस का तो अमरन्त्र लिख न करूँगा लेकिन रिपब्लिक स्कीम का लिख न करना वीर-मुमकिन है। और स्कीम या एक्ट के मुताबिक मैं विस्टर विमतामनि बरीरुहम से मुक्तिक नहीं हूँ। मेरे लयाल मैं मोतकिर' पार्टी इस बन्द बन्द से अन्तः मगर और बाड़ी है हालाँकि इसलार्हों में मगर कोई सुधी है तो निरुक्त यह कि वालीमनाफ़ा अमानत को कुछ आसानियाँ अन्तः मिठ आयेगी और बिना तय्यार यह अमानत बकीर बनकर रिमाना का धून पी रही है उसी तय्यार आरम्भ यह हाकिम होकर रिमाना का पसा काटेगी। इसके सिवा और कोई अन्तः अन्तः

बैठी ही कुछ चीज यहाँ भी घीस रही है, पक रही है भूमि के गर्म में। और लोग उसे बहकाना चाहते हैं रिज़र्व स्कीम से।

मगर मुंजी भी तो पूरी तरह उसी मूडोल के साथ है। छोट-माटे मुषारा से उनका काम नहीं चलने का। प्रवर्षी १९१९ के उसी लेख में जिसका शिक्क ऊपर का चुका है मुंजी भी की मजूर इस वर्ष जमाने के उस एक रीछन पहलू पर भी जाती है जो उन काले शायों को किसी हद तक रोक बैठा है। वह रीछन पहलू है बेजबानों की ताकत का बाहिर होना। जब एक प्रकाशक मजदूर भी अपनी अहमियत समझने लगा है और मन-दीलत की खोड़ी पर सिर झुकाता पहर नहीं करता। वह भी बाण्डे मकानों में रहना चाहता है बाण्डे खाने छाना चाहता है और मनोरञ्जन के लिए अवकाश की माँग करता है। वह पूँजी का दुश्मन है, व्यक्तिगत संपत्ति की बढ़ खानेवाला और व्यापारियों की जल्मेबंदी का उत्पात। सब की एकता उसका बेह्राद का मारा है। वह डीप-नीच को मिटाकर सारी जमीन को समतल बनाने की कोशिश करता है। वह एपी राज्य-व्यवस्था स्थापित करना चाहता है जो मनोपार्जन के समस्त साधन अपने हाथ में रखे और हर व्यक्ति को उसकी मेहनत और योग्यता के अनुसार बराबर बाँटे। वह जमीन्दारों को एक पंरी और बेकार चीज समझता है और उनकी सम्पत्ति को उनके कच्चे से निकासकर जमता के कच्चे में रखना चाहता है।

और यह दूसरों की भाग में हाथ सेकने की बात नहीं है अपने देश के लिए भी उन्हें इसी भाग की इसी मूडोल की तड़प है। स्वराज्य की लपड़ी फलझड़ी से बहल जानेवाले वह नहीं हैं, उनके सवाल परती से उठते हैं और परती की करबट ही उनका बचाव हो सकती है—

● हमारे स्वराज्य के नेताओं में बकील और जमीन्दार ही सबसे ज्यादा हैं। हमारी कौंसिलों में भी यही दो समुदाय धाये-आगे दिखायी पड़ते हैं। मगर कितने दर्द और अफ़सोस की बात है कि उन दोनों में से एक भी जनता का हमबरे नहीं। वे अपने ही स्वार्थ और प्रभुत्व की धुन में मस्त हैं। वह अधिकार और सासन की माँग करते हैं और जन और बैभव के इच्छुक हैं, जनता की बलाई के नहीं। आप स्वराज्य की हाँक लगाएँ, सेसज़ एबनेमिष्ट की माँग कीजिए, कौंसिलों को विस्तार देने की माँग कीजिए, उपायियों के लिए हाथ फैलाएँ, जनता को इन चीजों से कोई मतलब नहीं है बल्कि अगर कोई मनीकित घण्टि उसे सुखर बना धके लो वह जान जोरदार आवाज में धंस बनाकर आपकी इन माँगों का विरोध करेगी। कोई कारण नहीं है कि वह दूसरे देश के हाकिमों के मुकाबले में आपकी हदमत्त को खराबा पहर करे। जो रैमठ अपने अत्याजाही और सातवीं जमीन्दार के मुँह में बनी

हुई है बिना अधिकार-मम्पन्न लोगों के अत्याचार और बेगार से उसका हृदय छलनी हो रहा है। उनको हाकिम के रूप में रखने की कोई इच्छा उस नहीं हो सकती।

इसकी क्या जमानत है कि आपके पजे में आकर उनकी हासत और नी बुरी न हो जाएगी? आपने अब तक इसका कोई सबूत नहीं दिया कि आप उनकी मर्दाई चाहते हैं। अगर कोई सबूत दिया है तो उनकी बुराई चाहने का स्वार्थ का सोम का कमीनेपन का। आप स्वराज्य की कल्पना का मजा से-बेकर लूब फूलें और बसलें बजायें अगर अधिकारों के साथ-साथ कर्तव्यों का ध्यान रखना भी जरूरी है। जाहिल रईसों या जमीन्दारों से हमें शिकायत नहीं। उनकी मर्जे उस बलत कुर्सेमी अब उनकी गर्भे अनता के हाथों में होंगी और वह बेबम निगाहों से इबर-उमर तक रहेंगे। शिकायत हमें उन लोगों से है जो पड़े-किये हैं और जमीन्दार हैं बकीक हैं और जमीन्दार हैं। वह अपने लिये सब कुछ कि वह प्रजा के साथ अपना कर्तव्य पूरा कर रहे हैं? उनका दिल साफ़ रहेगा कि तुम इस तरह पर ठीक गये और मोछ निकसे।

आनेवाला जमाना अब किमानो और मजदूरों का है। हुनिया की रस्ता इसका साफ़ सबूत है रही है। हिन्दुस्तान इस हवा से बमसर नहीं रह सकता। हिवालय की थोटियाँ उसे इस हृमल से नहीं बचा सकती। जमाना की इस टूटी हुई हालत से थोके में न आइए। इनकलाब के पहले कीमत जानता था कि हम की पीड़ित जनता में इतनी ताकत छिपी हुई है? ●

और इसके करीब बस महीन वाद २१ दिसम्बर १९१९ को मुजो जी ने नियम साहब को लिखा था—

मैंने अभी तक करेण पालिटिकस पर कुछ नहीं लिखा। मुझे जमाना की पामिडी पर नजर डालते हुए कुछ लिखना मुनासिब नहीं मानसु हाता। मैं पीन डिप्लोमेट का तो असमन् बिबक न कसैया सेकिन रिफार्म स्कीम का बिबक न करना गैर-मुमकिन है। और स्कीम या ऐन के मुतालिबक मैं मिस्टर चिन्तामणि बगैरहम से मुतकिब नहीं हूँ। मेरे खयाल में मोतलिब पार्टी इस बलत बहरत से स्यादा मरहर और माबा है हासाकि इससाहो में अगर कोई सूबी है तो मित्र यह कि तामीमयाफ़ता जमात को कुछ आसानियाँ स्यादा मिल जायेंगी और बिबक तरह यह जमात बकीक बनकर रिबाया वा गून पी रही है उमी तरह आइन्दा यह हाकिम होकर रिबाया वा गमा काटगी। हमके सिवा और कोई बरीबे अशितपार



नहीं दिया गया। जो अस्तिमायत दिये गये हैं उनमें भी इतनी छठें लगा ही मयी है कि उमका बेना न बेना बराबर हो गया है। एसी हालत में मैं जमाना में क्या करूँगा। मैं अब इरीब इरीब बोस्चेबिस्ट उतूनों का कामका हो गया हूँ।

किन्तु वे पीवगियों न पढ़ने की उन्हें आबत नहीं। इरो रूप में से वोका भर मकसत निकसता है। कौम पीठा बैठे उतमा सब रूप। मकसत के किया। काशी है।

बाकी बातों से उन्हें बहुत नहीं। होगा जो होपा। कोई कितान बोधे ही निम्नती है बोस्चेबिस्ट पर। मोटी-मोटी बातें समझ की बहुत है।

वही कि बुनिया जो हिस्सों में बँटी हुई है। करोड़ों गणे-मूवे और मुद्दीमर मारुमार जो उन करोड़ों का कूल पीकर ही मोटे हुए है।

यह अन्धाय अब नहीं चल सकता। झूठ है जिसका बीसा नाम्य भयवान ने जिसको बीसा बनाया मगवान ने सबका बराबर बनाया है। यह ऊँच-नीच एरीब-अमीर की बीबारें हमने क्यु खीपी है। और हनी अब उनको मिटायेगे। अपने पीरक से अपना कूल-पसीता बहाकर। कस में यही हुआ है। बुराप कुछ नहीं हुआ। यही बोस्चेबिस्ट है।

जंगल में जाग क्य जाती है। मरी में काड़ या जाती है। मूबोक न पड़ाक मिट्टी में मिला जाते है और मिट्टी में से पानी निकल जाता है। बोस्चेबिस्ट भी मुंठी की के लिए कुछ ऐसी ही चीज है—सदियों से बनी-पिसी जनता की बनावत बहुत हो भी अंधेरगर्ही रोब-रोब की हापी-बेगारी चाक़ा-बबकली। क्यों उन्हें जिन्दी की बीस। जमीन उसकी जो उसे बोधे।

ऐसी कोई नयी बात भी नहीं है इससे। नया इतना ही है कि उखड़ी-उखड़ी ची एक बात जो बनी-सहमी उसके सीने में कहीं पड़ी थी उसे किसी वेध के लोगों ने पूरा करके दिखा दिया। मन के पीके रंज अटक हो मये और पड़ली बार उन्होंने समझा कि किमान बकन पढ़ने पर बगावत भी कर सकता है। अगर इस में कर सकता है तो यहाँ भी कर सकता है। अकण्ठ मिर्ज़ हम बात की है कि उन्हें ठीकार किया जाय जगाया जाय—बीस ही बीस बह्नीबार्नों ने जगाया टासतयय ने तुगनेब न बेसोब ने गार्की ने। जोर मुझी की का अब बुरी ही हैरती की कि अब तक मेरी समझ में यह बात क्यों नहीं आयी। कैसा हो जाता है कभी-कभी कि जाल के सामने पड़ी हुई चीज मजूर नहीं जाती। बरसों भटकना मैं हमर उभर, कभी जो रोड इसके पीछे था बार राड उससे पीछे समझ में ही न जाता था कि अपने लिए कौम-सा रास्ता अस्तिमार कर्से और इतना बड़ा-सा चौड़ा-सा रास्ता जो मरी जाल के सामने था वह मुझे दिखा ही नहीं। कुछ स मैं उझी के बीच रहा पका बड़ा

उठ-बीठा बोला-बतियाया। खुद हल नहीं बोला तो क्या उनका राई-रसी हाथ तो बानठा है। क्या खाते हैं क्या पहनते हैं क्या ओढ़ते हैं क्या बिछाते हैं क्या सोचते हैं क्या कहते हैं, कैसे कहते हैं सब कुछ तो मैंने देखा है मुग़ा है। चौपाक में बैठकर पित्तम पीते अन्नाब के मिर्द बैठकर बच्चों आल-मटर मूनकर खाते और जाने कहीं-कहीं की बातें करते कोम्हाड़े में ऊह का रस पेरते आम-महुया बीजत करबी काटते गैमा को सानो घोरते मोट छीनते हल बोसते घेत हपाते बीब छिड़कते धान काटते हँबाते जोसाते — हर समय ता मैंने उन्हें देखा है उनसे बातें की हैं और बीस नहीं जैसे पहरी बाबू करते हैं। मैं कहीं का दाहरी बाबू हूँ। मैं तो मूढ़ किसान हूँ। उनका कौन-सा पुस-दर्द ऐसा है जो मैंने एक न एक कुर्मी के घर में नहीं देखा। फिर मुझ क्यों नहीं दिखायी दिया कि मेरी असक जमीन कौन-सी है? क्यों भटकता रहा मैं इसर-उधर? कोई बड़ा जिस्सा किसानो की बिन्दयी को लेकर मैंने क्यों नहीं लिखा? याही उम निकल गयी और जो जमीन ग्राह मेरे जोतने की थी उसे मैंने जाता ही नहीं!

और बाबारे हुसल खत्म होने के तीन महीने के भीतर २ मई १९१८ को मुंशी जी ने प्रमाण्य के मूक उर्दू बप गोपाए आफियत पर काम शुरू कर दिया।

अन्नाब को घेरकर किसान बैठ गये और बातें होने लगी — अपने दुख-दर्द की, हारी-बमारी की जायज-बखली की रिदबत और बूस की। कितना सहब रंग है उनका जैसे बिन्दगी जुद-ब-जुद बास रही हो कुम्हार अपने चाक पर बैठ सीसी मिट्टी से खेल रहा हो मछली पानी में तैर रही हो घेर जगस में बिचर रहा हो

इहीं दिनों फ़रवरी १९१९ में रौमट बिल पास सभा में पेश हुआ। अंपज सरकार को बिना धन सहायता देने का यह अच्छा पुरस्कार यांची जी को मिला। वह निरमिमा उठे और उन्होंने अन्नाब अपने हम निरक्षय की सूचना की कि वह उनके बिरद सत्याग्रह करेंगे। फिर अपने रोने पर निकल। हर जगह उन्हें जनता का बिराट समर्पण प्राप्त हुआ। ऐसा क्योंकर संभव हुआ जब कि यापी जी देश के लिए अभी काफ़ी नय थे? इसका उत्तर अंग्रेज सरकार के ही इन दब्दों में मिलता है — मिस्टर यांची को सब जगह एक बहुत ऊँचे आदरों का और पूषत निस्स्वार्थ टास्मटाप-भक्त गमता जाता है। बखिण अन्दीरा के हिदुस्तानियों के लिए उम्हने जो कुछ किया या उसके कारण लमी से उन्हु बहु सब परंपरागत आर और मजिद अपने रोवासियों की और के मिली जो पूरबबासे सभा से अपने साबु-सन्नों को रते

आये हैं जिनके त्याग और साधना में उन्हें पूरा विश्वास है। जहाँ तक गांधी की बात है, उनकी शक्ति इसलिए और बढ़ जाती है कि उनके प्रयासक किसी एक धर्म या सम्प्रदाय के माननेवाले नहीं हैं। जब से उन्होंने बहमशाबाद में रहना शुरू किया है वह बराबर तरह-तरह के सामाजिक कार्यों में सक्रिय योग देते हैं। जिस तत्परता से वह किसी भी ऐसे व्यक्ति या समूह का पक्ष लेकर बिते वह पीड़ित समझते हैं, कष्टों को ठीका करते हैं, उसके कारण उनके देशवासी उन्हें बहुत चाहते हैं। बम्बई प्रवेश के बहुत से हिस्सों में देहाती और सहरी लोगों के बीच उनका प्रभाव सबेह से परे है और उन्हें इतने गहरे भावर और सम्मान की दृष्टि से देखा जाता है कि उसको भक्ति भी कहा जा सकता है। आरम्भिक बस को भौतिक शक्ति से बढ़ा मानते हुए मिस्टर गांधी ने अच्छी तरह समझ लिया कि उन्हें सर्वव्यवस्था रीसट ऐक्ट के विरुद्ध अपने उस अल्प मिणिक्य प्रतिरोध का प्रयोग करना चाहिए जिसका इतना सफल प्रयोग उन्होंने दक्षिण अफ्रीका में किया था। २४ जनवरी को बोपिट किया गया कि अमर बिल पास हुए तो वह निरिचय प्रतिरोध या सत्याग्रह के आन्दोलन का नेतृत्व करेंगे। इस घोषणा को सरकार ने और बहुत-से भारतीय राज नीतियों ने बहुत धीरे-धीरे रूप में ग्रहण किया। केविलेटीव कौंसिल के कुछ नरमवर्ती सदस्यों ने ऐसा कर्म ठठाने के तरीकों के बारे में खुले धाप अपनी आशंका व्यक्त की। मिसेज बेसेण्ट ने बिल्हे भारतीयों के मानस की बहुत अच्छी समझ है, बहुत गंभीर शब्दों में मिस्टर गांधी को चेतावनी भी दी कि जिस तरह क आन्दोलन की बात उनके मन में है उसके फलस्वरूप ऐसी बहुत-सी शक्तियों को खुल लेकने का असर मिलेगा जिससे असीम छति पहुँचने की आशंका है।

लेकिन गांधी जी को अपने ऊपर पूरा विश्वास था और उन्होंने बेसव्यापी हड़ताल के लिए ३ मार्च की तारीख निमत की जो कि बाद को बदलकर ९ अप्रैल कर दी गयी जिस परिवर्तन की सूचना दिल्ली को समय से न मिल सकी। जब दिल्ली में उड़ी रोड हड़ताल हुई और जुलूस निकले— और जाती भी चली। उसके अगले रोज को जुलूस निकला उसका नेतृत्व स्वामी भद्रानन्द कर रहे थे। कुछ गोरे सिपाहियों ने मोसी चलाने की बमकी दी तो स्वामी भी अपना चीना खोकर लड़े हो गये आन्दोलन का यह एक नया स्तर था। इसके बारे में सरकारी प्रकाशन इण्डिया १९१९ लिखता है— इस आम हलचल की एक खास बात यह थी कि हिन्दुओं और मुसलमानों में अनोखा भाईचारा विकसानी दिया हिन्दू कुंठे आम मुसलमानों के हाथ से और मुसलमान हिन्दुओं के हाथ से पानी लेकर पी रहे थे। हिन्दू-मुसलमन एकता इन जुलूसों का मुख्य भाग था। वह हास था इस भाईचारे का कि हिन्दू नेताओं को मसजिदों तक में जाकर

घाघर देने की आजादी मिल गयी थी। साठ बेघर उस समय जैसे एक बाखर घाना बना हुआ था जिसको बिस्फोट के लिए बस एक चिनगायी की जरूरत थी। ऐसे में पांजीजी का आन्दोलन अधिकारियों के लिए निरवयव ही बनने की बीज की और उन्हें सबसे बड़ा डर था पंजाब को लेकर क्योंकि वही भारतीय सेना का मेरुस्थल था।

उन दिनों वहाँ पर सर माइकेल मो' डायर का राज था जो एक मजहूर नेता था। राष्ट्रीयता की आग का पंजाब में बाखर होना उसे किसी तरह गबाघर न था। इन्टर कांसेस ने अपने उस बर्ष के अधिवेशन के लिए अमृतसर को ही चुना था। दोनों फ़ौजों ने बीच यह एक तरह की चुनौती थी।

ऐसी बिस्फोटक स्थिति में बुरा क्या होता — जनता में खबरदस्त बनावट की आग मड़की कुछ हिंसात्मक कार्रवाइयाँ भी यहाँ-वहाँ हुईं और सरकार तो जैसे अपने होठ-बुचास ही घो बैठी।

और इसी सिलसिले की आखिरी कड़ी थी १३ मर्च १९१९ का जलियाँवाला बाग का हत्याकाण्ड जिसने १८५७ के बिद्रोह की याद को ताज़ा कर दिया।

भासल का लगा हुआ था। उसकी बबला करके अमृतसर के एक बाग में जिसका एक ही छोटा-सा रास्ता था बीस हजार लोगों की मीटिंग हो रही थी जब कि जेनरल डायर ने पचास गोरोँ और सौ हिन्दुस्तानी सिपाहियों की पारख के साथ वहाँ पहुँचकर मीटिंग को प्रौरन बर्बास्त करने का हुक्म दिया और उस पूरे बीस हजार के मजमे को बाग के उस अकेले छोटे-से रास्ते से बाहर निकल जाने के लिए दो मिनट का काल दिया। और फिर गोळियाँ चलनी शुरू हुईं। कुछ सोकह सौ राउण्ड गोळियाँ चलीं — और अगर इससे स्यादा नहीं चली तो तिके इससिन् कि भी नहीं। अब मिनटों में जमीन कासों से पट गयी — और पायकों से जिनकी मरहम-मट्टी का तो बिक ही क्या उनके पास कोई पहुँच भी न करता था। और वह लोग एक बुँद पानी तक के लिए तड़प-तड़पकर मर गये। जैसा कि बार में जेनरल डायर ने हुष्टर बमेटी के सामने कहा — पारना ही उनका उल्प था। उसने कहा — राहर शौज के इन्ध में जा गया था और मैंने सबेरे ही मुताबी कम्बा बी की किमी तरह की सजा न हो। लोगों ने जब इन तरह खुले आम मेरी हुकमतदूमी की तो मैंने तय किया कि इन लोगों को इस बार सबड सिपाना चाहिए ताकि पीछे वह लोग मरे ऊपर हँस न सकें। अगर मेरे पाम और मोमी होती तो मैंने और भी बेर तक बचायी होती। मैंने सोकह सौ राउण्ड ही चलाये क्योंकि इससे स्यादा मेरे पाम ये नहीं।

सबक सिपाने की यह क्रिया बहुत दिनों तक चली रही। नये-नये ठपैजे

सोचकर लोगों को दण्ड दिया गया। पानी की सप्लाई काट दी गयी। बिजली की सप्लाई काट दी गयी। कुसे आम सड़कों पर बाजारों में लोगों को कोढ़े मारे गये। कहीं-कहीं चौपटों पर टिनटियाँ भी लड़ी हो गयीं। लोगों को पेट के बच्चे पिसाया गया। क्या नहीं हुआ उस समय। छोटे-मोटे प्रीवी मण्डलों में अपनी तरह से खीर भी तरह-तरह की मयी सजाएँ ईजाद कीं। हर बात की छूट भी जो चाहे करो और ऐसा करो कि फिर मूलकर सर उठाने की हिम्मत में खोम न करें।

उमर से मजा यह कि एक सख्त अलबार में नहीं निकल सकता था। महीनों तक किसी को कुछ भी पता न चल सका। मुसीबी उन दिनों इलाहाबाद में बी. ए. का इन्वैशन दे रहे थे। पर कहीं से कुछ सुनगुन उन्हें मिस नहीं थी। मोरख पुर लीटकर १९ अप्रैल १९१९ के अपने ज्ञापन में उन्होंने ताब साहब को लिखा — तुला करे साहौर में बमन हो। फिर ३ जुलाई के ज्ञापन में — शुक्र है कि पंजाब में अब सुकन हुआ।

बस। इतना ही। क्या कहीं और। खबान पर बहिष है। मगर जी सुकन रहा है और खंजीर को सटककर छोड़ देने का इरादा और पक्का हो रहा है।

बिपकार है मन की इस कमबोरी पर। इतनी खरा-सी बात के लिए साहस नहीं बटोर पाता। अब तो नहीं सही जाती यह बिस्मल। अपमान की भी नाई सीमा हावी है। आबमी को किरिब के खोर पर मजबूर करता कि वह कीड़ मकोड़ों को तरह पेट के बल रहे।

विष में गुस्सा है तिरुमिनाहट है एक बिपकार है जो न जान कब से बदर ही खंडर पकटा रहा है उस सबको भी बांधी देना जरूरी है। और उसे बांधी मिच्छी है बाप-बेटे मनोहर और बलराज के रूप में। दोनों बच्चा के कपलड़ है, दिलेर है जान पर खेल जामा उनके लिए कोई चीज नहीं है। बसराज में अगर खजानी क कुन की यमी है तो मनोहर में बनबोर निराशा के भीतर से निकलनेवाला साहस बिसका कहीं और-छोर नहीं है। वह क्या समझते हैं खमीदार को या उनक बुयों को। उन्हें तो बस अपने काठिन्यास का भरोसा है।

लेकिन काहिर बिलकुल उनका उलगा है सान्ति की माकार प्रतिमा। उसके हृदय में किसी के लिए कोई राग-रोष नहीं है।

और सप्लाई यह है कि य दोनों मुसीबी के ही बिल की दो विरोधी वृत्तियाँ हैं, जिनमें खराबर महानारत बला बरखा है।

लेकिन उनसे भी बड़ी सप्लाई है अरुम की वह बकरी जिसमें किसान हरदन पिसठा पड़ा है —

● जिस तरह सूरज डूबने पर एक बिरोप प्रकार के बीबघारी जो न पदु हैं

म पक्षी कीबिका की लोब में निकल पड़ते हैं और अपनी लंबी क्लारों से आसमान की छा भेते हैं उसी तरह काठिक का आरम्भ होते ही एक अन्य प्रकार के जन्तु देहातों में निकल पड़ते हैं और अपने खेमों तथा छोसदारियों से समस्त ग्राम-मण्डल को उज्ज्वल कर देते हैं। उनके उठते ही भूकम्प-सा आ बाता है और भोग मय से प्राय छिपाने लगते हैं।

अधिकारी वर्ग और उनके कर्मचारी बिरहिणी की भांति इस सुख काम के दिन मिला करते हैं। छाहरों में तो उनकी धार नहीं गलती या गलती है ता बहुत कम। वहाँ हर चीज के लिए उन्हें जेब में हाथ डालना पड़ता है मगर देहाता म जेब की जपह उनका हाथ अपने छोटे पर होता है या किसी चीन किसान की गर्दन पर। जिस ची-दूब साम-भाजी मांग-मछली आदि के लिए बाहर में तरफते से बिनका स्वप्न में भी वर्णन नहीं हाता था उन पदार्थों की यहाँ केवल जिज्ञा और बाहु क बल से रेस-नेक हो जाती है। अठना या सकते हैं साथे हैं बारबार साथे हैं और जो नहीं या सकते वह घर भेजते हैं। भी से भरे हुए कलमटर, धूप से भरे हुए मटक उपने और लकड़ी बाम और चारे से लदी हुई गाड़ियाँ बाहर में आने लगती हैं। परवासे हुए से फूम नहीं समाते अपन माय्य को सघरने हैं, क्योंकि अब दु-ज के दिन मय और सुख के दिन आय। दहातवालों के लिए वह बड़ संकट के दिन होते हैं, उनकी धामत आ जाती है मार खात है, बमार में पकड़े जात है वासन्ध के शरय निर्दय आबातों से आत्मा का भी ह्रास हो जाता है। ●

जेती पर निर्वाह करना कठिन हो गया है। कोई एक जून खरेना खाता है तो दूसरी जून रोटी-माय। निमी का वह भी नहीं मिला पाता। वह खुटकी मर मनु पीरकर रह जाता है। माँ में मुसू चीपटी का छाड़कर और निमी के घर दोनों बेला चूसा नहीं चलता। बमीन की बरसत उठ गया है। वहाँ बीषा पीछ बीम-बीम मन हाने से वहाँ अब चार-पाँच मन से भागे-नहीं जाता।

तो भी भरनी बरती उमम छोड़ी नहीं जाती। यह ठीक है कि सडार्न के दिनों में कुछ कन्-कागलाने मुन है और उनमें मजूर की माँग है मेकिन

इसी निना का एक कहानी बन्धाल का गिरघारी अपने मन छूट जाने पर उसी के मन में बिना कुछ कह-मुन मन जाता है और मून बनकर जगम उम्ही जेनों के दिनें मँडगता रहता है। नि-बय ही कुछ अनियाहून-सा एक गुन है भरती के प्रति निमान के इस लपाव में और वासद इमीफिर वहाँ डूमने मन्दभों में अलीकित तल का ममावण तल जाता है इस कहानी से न मिटें वह कि नहीं लगता वहीं चीज इस मुँर कहानी की जान है। बजा द है भरनी बरती के प्रति गिरघारी की इस वासना में — भेपग हात ही वह मड़ पर जाकर बैठ जाता है और कनी गन

को उपर से उसके रोने की आवाज सुनायी देती है। वह किसी से बोझता नहीं किसी को छोड़ता नहीं। उसे केवल अपने सतों को देखकर संतोष होता है। उसकी व्यापार की यह निराशाहता ही काम्य का सत्य बनकर एक विभिन्न कोमल पर जोखन्दी भाषा में बोलने लगती है जो गिरभाटी की भाषा नहीं यात्री की भाषा है।

और फिर किसान की मरबाद का उबाव —

गिरभाटी को प्रायः हुए छ महीने बीत चुके हैं। उसका बड़ा लड़का अब एक ईट के मट्टे पर काम करता है बीस रुपये महीना पर जाता है। अब वह कमीज और खंडेबी जूता पहनता है, घर में दोनो जून तरकारी पकती है और जो के बपे मेहँ खाया जाता है लेकिन गाँव में उसका कुछ भी ख़ादर नहीं। वह अब मजूर है। सुभागी अब पढ़ाये गाँव में भाये हुए कुत्ते की भाँति बकती फिरती है। वह अब मजूर की भाँति है।

दूसरा रास्ता बरकरार का है, हिम्मत और मर्दानगी से अपनी जमीन पर बटे रहने का। अपनी लाठी का भरोसा करो दुनिया को देखो कहीं जा रही है —

दुम कोय तो ऐसी हँसी उड़ाते हो मानों कास्तकार कुछ होता ही नहीं वह जमीन्दार की बेमार ही मरने के लिए बनाया गया है। लेकिन मेरे पास जो लखबार जाता है उसमें लिखा है कि इस देस में कास्तकारों ही का राज है वह जो चाहते हैं करते हैं। उसी के पास कोई और देस बरगायी है। वहाँ अभी इंसान की बात है कास्तकारों से राजा को गरी से उतार दिया है और अब किसानों और मजदूरों की पंचायत राज करती है।

इस नये तरह के पंचायती राज को दुनिया में काम्य हुए जमी मुसकिल से भाठ-बस महीन हुए हैं और मुसीबी की भाँति उस पर जमी हुई हैं। यह ज़ान्ति की भाव है बिद्रोह की भाव है। दूर है तो क्या भीषण रही है। एक नयी दुनिया की बुनियाद पड़ रही है जो साम्य की दुनिया होनी चाहिए की दुनिया होनी जिसमें कोई श्रेष्ठियों का जून पीकर मोटा न हो सकेया। इना आबादी का तपना गा रही है। घर पर आबादी का सूरज चमक रहा है। उसमें रोशनी भी है और पर्नी भी। बीस सड़ने के दिन गये।

अपनी मजदूर से बेलने पर बरकरार और गिरभाटी एक दूसरे के परिपंभी जान पड़ते हैं एक की वृत्ति कठोर है दूसरे की कोमल। पर साहित्य उस रस का नाम है जिसमें कठोर और कोमल सब कुछ आकर एक हो जाता है और अनेक बार कठोर उपादानों से कोमल की और कोमल उपादानों से कठोर की अभिव्यंजना होती है। तो भी वृत्ति की वृत्तियाँ बाँ हैं और दोनों विरोधी वृत्तियाँ हैं — एक हिंसा की दूसरी अहिंसा की एक जो उन्हें रस की ज़ान्ति की ओर खींचती है और दूसरी जो यात्री

## कलम का सिलपही

जी भी ओर सींचती है। जीवन का प्रमाण एक बार सींचता है, आदर्श की कल्पना दूसरी ओर। इन्द्र है सुबिधा है।

नवम्बर १९१८ में युद्ध का अंत हुआ और देश भर में विद्रोह का उत्पन्न मनाया गया। गोरखपुर में सरदार लक्ष्मीकांत क शर्मा को बेलकूर के लिए नाममात्र स्कूल में बुलाया गया था। और भी कुछ कार्यक्रम था।

मुंशीजी क भीतर विद्रोह पनप रहा था। होपी यह विमर्श विद्रोह होगी। हमको तो कोई विद्रोह मिली नहीं था हम क्यों इस उत्पन्न में जायें। जैह होगा जो हमारा। यानी स्ट्रेंगो अपना सुहाय लेंगी। मैं नहीं जाता। और मुंशीजी उसमें नहीं गए। शिला-खंजालक मीकेन्डो साहब न जो उस समय वहीं मौजूद थे (मन्-वन्तः कलकत्ता साहब के बँचले से) आते समय मुंशीजी को बाहर बँचले काम करने देखा था। लिहाजा उन्होंने हेडमास्टर बेचनलाल से लिखित जवाब माँगा कि मुंशीजी उम बचले में क्यों नहीं घसीक हुए। बेचनलाल की तो बिगबी बँच गयी लेकिन अगले पेट जब मुंशीजी को इसका पता चला था उन्होंने अपनी तरफ स एक लिखित बयान दिया और बेचनलाल साहब पर जोर डाला कि मान इसे ऊपर बढ़ाए। मगर बेचनलाल मुंशीजी क शुभचिन्तक थे उन्होंने मामले को वहीं खत्म कर दिया।

गोरेगाही क आशंका से यहाँ पर यह उमकी पहली टक्कर थी।

दूसरा टक्कर भी जल्दी ही हुई जो आनन्द-अनन गार्मस स्कूल के लिए एक बहानी बन गयी और उस समय क लोगों का मान तक याद है। जैसा कि हर इन्द्र कया के साथ होता है बिस्वा बयान करनेवाला की कल्पना का रंग उसमें बुझता चला है और बीरे-बीरे जितन मुँह उमको बाँटें हो जाती है। उनमें से दो बयान मौजे दर्ज किये जाते हैं।

घाम परदहा मुहम्मताबाद, आनन्दगढ़ क मुवामा सिंह कहते हैं—

“एक दिन प्रातः अंधक कलकत्ता को कुत्तों के साथ हाथ में हन्टर लिये बागम में आकर क्वार्टर पर आकर, पैर पटककर बाला — लरी पाव लिये मरे बँचले में आकर मुकमान करती है। मैं उमका झूठ कर चुँगा। आपने आपे बड़कर लड़पकर कहा — सौद नहीं है यह प्रमचंद की भाव है। मजिस्ट्री का अभिमान दूर कर हुँदा ! ”

सौद नहीं है कहन का संकेत शायद यह है कि साहब एक सौद का इसके पहल मोपी मात्र बुझा था।

अब मुनिए आनन्दपुर, आनन्दगढ़ के मुनगाब अहमद क्या कहते हैं—

“मजह के एक ओर प्रमचंद जी का निशामन्दाप था और नामन दूसरी ओर



बिनाभीष का बैंगला था। प्रमचंद की गाय एक बिल सड़क पार करके बिनाभीष के बैंगल के महल में चुस गयी जिस पर फूट होकर उन्होंने मोठी मारने के लिए उसका पीछा किया। माय ने अपने खरसक प्रेमचंद जी के खरीर की मोट में सरण ली जो अपने द्वार पर पेड़ के नीचे कुछ पड़ने में तन्वीन थे। बिनाभीष महोदय पिस्तौल लिये प्रेमचंद जी के सम्मुख उपस्थित हो गये

सब के पास इस क्रिसे के बारे में अपनी एक अलग बातान है। पर एक बात सबमें समान है और वही महत्व की है— मुंशीजी की गाय कलक्टर के हाते में गयी और इस मामले को लेकर कलक्टर से उसकी खोरदार सड़क हुई जिसमें मुंशीजी रसी मर नहीं बने।

माय रखने की बातें यहाँ वो ही हैं— एक तो यह कि मुंशीजी अभी बाकायदा सरकारी नौकर थे और दूसरी यह कि यह क्रिस्ता बस्मिर्बाका बाघ के समय का है।

लेकिन इतने ही से बस नहीं हुआ अभी एक टक्कर होनी बाकी थी। उसके बारे में उस वक़्त के एक प्युब्लिक टीचर मुहम्मद हुनीफ़ खाँ का बयान यह है—

● बड़े बुद्धवार' थे। अपनी इम्बत और शाल के पूरे महाक्रिब थे। अपनी कुख्याती कामम रखने के लिए बड़ी से बड़ी कुर्बानी देने के लिए तैयार रहते। ईश' क बाइसे से यह नतीजा आसानी से अस्ब' किया जा सकता है। साहेब कलक्टर के बैंगले और जहासा मार्मल स्कूल के परमियाम एक पुस्ता सड़क है। कलक्टर साहब रोजाना खाम को चार बजे के बाद मार्मल स्कूल की इसी सड़क पर, जो हावा मार्मल स्कूल के बक्सल-पूरब से उत्तर-मन्दिम को जाती हुई सड़क का बची मयी है बहसक्रयमी करछे हुए गुजरते थे। सड़क क बक्सल तरछ सेकंड मास्टर मुंशी प्रेमचंद का ब्वार्टर था। मास्टर साहब चार बजे के बाद अपने बरामदे में बैठे क्रिस्ता-मभीसी में मधमूळ रहते। एक रोज कलक्टर साहब ने मास्टर साहब को आबाब बेकर हाथ के इयारे से बुसाया। जब वह जा मये तो साहब ने कहा— मैं खंबाना इस वक़्त टहकने आया करता हूँ आप मुसं सखाम करने के लिए कमी नहीं आते ?

मास्टर साहब ने जबाब दिया— मैं अपने काम में मधगूळ रह्या हूँ। यह मेरी कोई इमूटी नहीं कि हर क्रिसो को जो सड़क से गुजर रहा ही एबाह वह हुनू-मठ के अखर ही क्यों म हों सखाम करता फिरै।

इस पर कलक्टर साहब ने मास्टर साहब पर खअ्र होकर कुछ खमए-

मासका<sup>१</sup> उनकी घाम में इस्तेमाक किया। मास्टर साहब ने कहा — आप जल्द से जल्द इस हाथ से निकल जायें बर्ना प्युपिक टीबर्टों को खबर हो जायगी तो वह तडीय को सोचे बौर आपकी कृपी तरह मरम्मत कर दें। इतना सुनते ही कम्पन्टर साहब घर पर पैर रतकर भाये। जनाब वेचनघाक साहब हेइमास्टर नामक स्कुल बहुत चौकड़ना<sup>२</sup> हुए और मुधी प्रेमचंद स कहा कि कम्पन्टर बिसे का बहुत बड़ा पावर होता है, उसके मन्थिमारण्ड कामहदुर<sup>३</sup> होते हैं, वह आपका स्कुल पूंजवा सभता है। मास्टर साहब ने कहा — आप हरिए, मैं क्यों करने सया जब कि मैं बरसरे-हक<sup>४</sup> हूँ। वह चत में इस ताबा मामके पर घौर करते रह। धूमरे ही रिम आपने एक शाना कम्पन्टर साहब के लिखाक अशकल बीवानी म मबर्नी-उक-हैमियत का दावर किया। जामम-कालम में इम नामक की सारे साहर में घोहरत मच गयी। एक हुने तक सपन जब गारखदुर और बीनर रऊमा-ए-साहर<sup>५</sup> की मीटिंग हाती रही। मुतकिकर-आका<sup>६</sup> अफसरे और रऊमा-ए-साहर की कोगिय बकोर् से दानों मुमनिब<sup>७</sup> छरीकन क दरमिमान मसाकहत हो गयी। ●

हो सकता है, कल्पना ने यहाँ भी कुछ न कुछ अपना नमक-मिर्च लगाया हो, लेकिन धायर मह बही बटना है जिसे खिचपनी बेपी ने इम तरह बधान किया है —

● काहे क नि सें। स्कुल का इंसपेक्टर मुमाइना करने आया था। एक रोज तो इंसपेक्टर के साथ रहकर आपने स्कुल दिखा दिया, दूसरे रोज लड़कों को पेंद खिलाता था। उस दिन आप नहीं गये। छुट्टी होने पर आप बरबके भाये। आराम पूरी पर सेटे दरवाजे पर आप मखबार पढ़ रहे थे। सामने ही स इंसपेक्टर अपनी मोटर पर जा रहा था। वह आया कपटा था कि आप उठकर खलाम करेसे लेकिन भार उठे भी नहीं। इस पर कुछ दूर जाने के बाद इंसपेक्टर ने पाड़ी रोककर अपने मरती को भेजा। मरती जब आया तो आप गये।

कहिए क्या है?

इंसपेक्टर — तुम बड़े मजदूर हो। तुम्हारा बज्रर दरवाज स निबल जाता है, उठकर सामान भी नहीं करते?

मैं जब स्वस में जाता हूँ तब तीकर हूँ। बाद में मैं भी अपने घर का कारवाह हूँ।

इंसपेक्टर चला गया। आपने अपन दिनों से राय ली कि इस पर मानहानि

१ अनुकिय सान २ मयमीउ ३ असीम ४ म्याय पर ५ मानहानि  
६ पाहर के रईको ७ उपरोक्त ८ बकन्त कोजिय ९ प्रतिष्ठित १ पान्पिये  
११ मयमीता

का केश बलाना चाहिए। मित्रों ने सप्ताह ही आने बीबिए, आप भी उसे मरकर कह सकते थे। हटाइए इस बात को। ●

स्मरण रहे कि यह बही रघु आरमी है जो अब से कुछ बरस पहले एक बार रेल के तीसरे बर्थ के डिब्बे में कुछ बीमारी की हासत में बीस पैसे सेटा सेटा अपनी पत्नी को किन्ही उबड़बुद आरमी से समझा करते सुनता रहा था और कुछ कुछ करना तो बुर की बात है उसके काग पर बू भी न रेंगी थी लेकिन यह बीर बात थी। छोटी बात थी। कोई आरमी मुझको गही सेटने देना चाहता और मैं चटकर बैठ ही गया तो मेरी कौन सी बात बनी गयी। लेकिन यह तो बिल्कुल दूसरी ही बात थी—एक हिन्दुस्तानी की मरजाद का सवाल था। बीसी ही बात थी बीसी बीस बरस पहले एक बार पुनार में पेश आयी थी जब कि उसने पृथ्वार के मैदान में जाये बढ़कर हरबंदी की सड़ियाँ उखाड़कर पोरों की टीम पर हुस्का बोल दिया था तब उसकी नयी बजानी थी अब वह उबड़ था लेकिन किन्ही-किन्हीं बातों के लिए अब भी जून में गर्मी बाड़ी थी।

बही जो 'मियायम' के मनोहर का हाक है। बसराब जब अपनी बजानी के पास में बहुत लड़ने-भिड़ने की बातें करता है तो मनोहर उसको सिद्ध करता है लेकिन जब एक बार बमीन्दार के कारिन्दा चौंस खाँ के राह देने पर फेबू मनोहर की बीबी बिलसिमा पर हाथ उठ देता है और वह पक्का खाकर फिर पकती है, तब उस किस्सा के लिए यह एक मरजाद का सवाल बन जाता है।

मन का तार किन्ही जल्दी टाँछ मिला हुआ है। मनोहर के मन के भीतर पैठना उनके लिए सब अपने मन के भीतर पैठना है।

● फेबू ने बिलासी की गर्दन पकड़ी और उसे इतने जोर से झोंका दिया कि वह जो इन्धम पर जाकर गिरी। उसकी बाँधें तिलमिला पयीं मुर्छा-बी जा गयी। एक जब वह वहीं अकेल पड़ी रही तब पठी और लँगवन्ती हुई उन पुरखों से अपना-कपा कहने लगी जो उसके माग और गर्बादा के रकाव थे।

उसे उस समय परिचाम और फल की बेसमान भी बिन्दा न थी। कौन मरेगा? किसका घर मिट्टी में मिलेगा? यह बातें उसके ध्यान में भी न आती थीं। वह संकल्प-बिन्दस्य के बन्धन से मुक्त हो गयी थी।

लेकिन जब वह उस बाँध के पाछ पहुँची और जान के कड़पते हुए श्वेत खिवायी देने लगे तो पहली बार उसके मन में यह प्रश्न उठा कि इसका फल क्या होगा।

पेश रोमा सुनते ही दोनों बभक उठे पान पर सेल आये तब? किन्ही आहत हबम ने उत्तर दिया क्या हासि है! लड़कों के लिए आरमी क्यों बीन्दा है? पति के लिए क्यों रोता है? इसी बिन के लिए तो?

उब भी जब वह अपने बेटों के डरों पर पहुँची मनोहर और बकराज नजर जाने लगे तब उसका पैर आप ही स्कने लगे। वही तक कि जब वह उनके पास पहुँची तब परिचाम-बिन्ता ने उसे पकड़ कर दिया। वह बैठ के किलारे खड़ी हो गयी और मुँह ढँककर रोने लगी।

बकराज ने सचक होकर पूछा—बम्मा क्या है? रोती क्यों है? क्या हुआ? वह साध कमड़ा कैसे लम्बुझान हो गया?

बिन्तासी ने सिसकते हुए कहा—फैजू और मौस खाँ हमारी सब धाम पैसों कानीहीद हाँक ले गये।

बकराज—क्यों? क्या उनकी सीर में पड़ी थी?

बिन्तासी—नहीं कहते थे कि बकराज में बराने की मग़ाही हो गयी।

बकराज ने देखा कि माँ की माँसें झुकी हुई हैं और मुँह पर मर्मापात की आया छक्क रही है। कुछ और पूछने की हिम्मत न पड़ी। जैसे लाल हो गयी। कंध पर लट्ट रक़ लिया थीर मनोहर से बोला मैं जरा बाँध तक जाता हूँ।

मनोहर—क्या काम है?

बकराज—फैजू और मौस खाँ से दो दो बार्से करनी हैं।

मनोहर—एसी बार्से करने का मह मौक़ा नहीं। अभी बाओये तो बात बढ़ेगी और कुछ हाथ नी न कनेया। बार बारनी तुम्ही को कुछ कहेँ। अपनाप का बदला इस तरह नहीं किया जाता।

मनोहर ऐसे उदीपत उल्लाह से अपने काम में रुपा हुआ था मानों उसकी जवानी लौट आयी हो। पान के पुकों के डर लगते जाते थे। न आये ताक़ता था न पीछे न कित्ती से कुछ बोळता था, न किसी की कुछ सुनता था न हाथ पक़टे थे न कमर झुकती थी। बकराज ने बिचम मरकर रक़ ली। तम्बाक़ रते-रते बत गया। बिन्तासी छाँड़ कर रस धोळकर सामने लायी। उसने उलकी ओर देखा तक नहीं कुता पी गया। कुबार की रूप थी देह से बिमवारिकी निकम्पती थी कतीये की बार्से बहूठी थी मगर वह सिर तक न उलता था। बकराज कभी सेठ में जाय, कभी येड़ के नीचे जा बैठता कभी बिचम पीता। एक ही आग दोनों के लीने में जल रही थी एक ओर सुकपती हुई कुडरि ओर दहलती हुई।

लौल हो गयी। तीनों ने पान क पटठ गाड़ी पर लारे और लयाभुर खे। बकराज माही हाँकता था और मनोहर पीऊ-पीछे ऊँचे स्वर से एक बिरहा पाता हुआ अपना जाता था। यह में कम्बू अदीर मिला, बोला—मनोहर कारा आज बढ़े मयन हो

कादिर के दरबाजे एक पंचायत-ली बँटी हुई थी। लेकिन मनोहर पंचायत

में न जाकर सीधे पर यपा और जाते ही जाते भोजन मांगा। बहू ने रसोई तैयार कर रखी थी। इच्छापूर्वक भोजन करके तार्पिक पीने लगा। बोड़ी बैर में बलराज भी पंचायत से बीटा। मनोहर ने पूछा—कहो क्या हुआ?

बलराज—कुछ नहीं यह सप्ताह हुई है कि काँ साहब को कुछ नजर-बजर देकर मना किया जाय। अदालत से सब सोम बबकाते हैं।

मनोहर—यह तो मैं पहले ही समझ गया था। अच्छा जाकर बटप खा-पी लो। आज मैं भी तुम्हारे साथ खबाली करने चलूँगा। जैसा लग पाय लो जगा जगा।

एक घंटे के बाद बानों बैठ की ओर चलने को तैयार हुए।

मनोहर ने पूछा—तुम्हारा पूज्य जगता है न?

बलराज—हाँ आज ही तो रगड़ा है।

मनोहर—तो उसे ले लो।

बलराज—मेरा तो कस्मेजा परपर काँप रहा है।

मनोहर—काँपने दो। तुम्हारे साथ मैं भी लो रहूँगा। तुम दो-एक हाथ बलाके वहाँ से कबे हो जाना। और सब मैं देख लूँगा। इस तरह आके लो खूना जैसे कुछ जानते ही नहीं। कोई कितना ही पूछे बराबे-बमकाबे मूँह मत खोलना। मैं जकैसे ही जाया मुदा एक लो मुझे अच्छी तरह मूसता नहीं कई दिनों से खलीपी होती है, पूछते हाथों में अब वह बक नहीं कि एक खोट में बारा-बारा हो जाय।

मनोहर यह बातें ऐसी सहजता से कह रहा था भागों कोई साधारण परेसू बातचीत हो।

लेत में पहुँचकर दोनों मजान पर सेटे। अमावस की रात थी। आकाश पर कुछ बादल भी हो माये थे। बारी बोर बोर जंबकार छाया हुआ था।

मनोहर लो सेठे ही छरटि लेने लगा लेकिन बलराज पड़ा-पड़ा करबटें बरकता रहा।

दो बड़ी बीतने पर मनोहर जागा बोला—बलराज लो मये क्या?

बलराज—महीं मीय नहीं जाली।

मनोहर—अच्छा लो अब राम का माम लेकर तैयार हो जाओ। इले लो बबरामे की कोई बात नहीं। अपने मरजाद की रखा करना मरबों का काम है। ऐसे बालाचारों का हम और क्या जबाब दे सक्ते हैं। बेइश्वरत होकर जीन से मर जाया अच्छा है। दिव को पूज सँभालो। अपना काम करके सीधे यहाँ जले जाना। बीघरी रात है। किसी की नजर भी नहीं पड़ सक्ती। बानेदार तुम्हें

उपरोक्त केकिन अबरदार, डरना मत। वस गाँव के लोगों से मेल रओगे तो कोई तुम्हारा बाल भी बाँका न कर सकेगा। तुम्हारा मन बच्छा आधमी नहीं है। उससे पीछे रहना। हाँ काबिर मरोसे का आधमी है। उसकी बातों का बुरा मत मानना। मैं तो फिर लौटकर पर न आऊँगा। तुम्हीं पर के माँझिक बनोगे। अब वह छड़कपन छोड़ देना कोई चार बात कहे तो गम खाना। ऐसा कोई काम न करना कि बाप-दादे के नाम को बरसके समे। अपनी बरबाली को मिर मत चाना, उसे समझावे रहना कि सास के कहे न रहे। मैं तो देखने न आऊँगा लेकिन इसी तरह पर में पर मबठा रहा तो पर मिट्टी में मिक आगया।

बलराज ने ईँ स्वर में कहा—बाबा मेरी इतनी बात मानो इस बपत बर कर आओ। मैं कुछ एक-एक की जोपड़ी तोड़कर रख दूँगा।

मनोहर—हाँ तुम्हें कोई न मारे तो तुम संसार भर को मार गियाओ! पैजू और कर्तार क्या मिट्टी के सादे हैं? पीस खाँ भी पबटन में रहे बुरा है। तुम लकड़ी में उनसे पेघ न पा सकोने। यह देखो हिरमा निकल आया। महावीर की का नाम लेकर उठ जाके हो। ऐसे कामों में आमा-पीछा बच्छा नहीं होगा। बाब के बाहर ही बाहर चलना होगा नहीं तो कुल भूँचि और लोग आम उठेगे।

बलराज—मेरे तो हाय-पीर काँप रहे हैं।

मनोहर—कोई परवाह नहीं। तुम्हारा हाय में लोमे तो सब टिन हो आगया। तुम मेरे बेटे हो, तुम्हारा कलेजा मजबूत है। तुम्हें अभी जो डर लग रहा है वह ताप के पहले का जाड़ा है। तुमने तुम्हारा कंधे पर रखता महावीर का नाम लेकर उबर चल तो तुम्हारी आँसों से चिनगाएियाँ निकलने लपेंदी। फिर पर तुम सवार हो आगया। बाब की तरह चिखार पर मपटोये। फिर ता मैं तुम्हें क्या भी कहे तो न सुनोये। यह देखो सिवार बोलने लगे आभी रात हो गयी। मेरा हाय पकड़ सो भीर माये-आये आओ। अब महावीर की! ●

मिगमेवाले को लुभ पठा नहीं होता कि उसके प्रतीक में जो वह क्या में चरित के रूप में दे रहा है कनी-कनी अर्पम्यवता छिपी रहती है। और प्राणवत् प्रतीक में से, उसकी प्राणवत्ता में से बराबर नयी-नयी बापलें पन्ती रहती हैं।

बिलसिया अब केवल बिलसिया नहीं रहे जाती वह भारतमाता हो जाती है, अनामिक मु-नदित उस अत्याचारी व्यवस्था के एक अनुचर के हाथों या यहाँ से यहाँ तक एक है।

मनोहर और बलराज उसकी मर्दाना की रसा करनेवाले दो पुरख मिहू हैं दो पीढ़ियाँ सदियों बुझली हुई भारतीय मानवता की जो अब अपने हृदिनाओं में

सँस होकर उठ रही है — अपने अपमान का बदला चुकाने को।

यह बिज्रोह की बेठा है और अकियाँवाला बाग की या आम मुसी भी क सीने में दबी रह गयी थी जिसके बारे में वह अपने किसी दोस्त को भी नहीं लिख सके थे अब इस रूप में बाहर आयी।

अमृतसर में ही अभिवेशन करने की टेक कांग्रेस ने पूरी कर दिखायी। उसमें शरीक होने की तमना मुसी भी के दिम में भी बहुत थी। लेकिन अपनी संज्ञा से मजबूर थे। ३ दिसंबर १९१९ के अपने बैठ में उन्होंने नियम साहब को लिखा था — अमृतसर चलने का ठोस भी चाहता है। समय स्वया भी मिस जाये। प्रेम बत्तीसी के गुजरती एबीपन से सौ रुपये का जाकर आकर रखा हुआ है। लेकिन तकलीफ का खयाल करके एक बात है। पेशिस ने मुझे बिरुद्ध निकम्मा कर दिया अब तबीयत ही कसकमन्द<sup>१</sup> रही तो कुछ क्या जायेगा किसी तरह माचने के लिए तबीयत बेठाव रहेगी। ऐसी ह्वाकत मे पड़ा रहना ही बेहतर है।

अमृतसर में बनता की हिंसा की निम्ना करते हुए एक प्रस्ताव स्वीकृत हुआ। उस पर बोझों हुए याबीबी ने कहा — इस कांग्रेस के सामने इसके अधिक महत्व का दूसरा कोई प्रस्ताव नहीं है। इसके भीतर जो खर्चा है उसको हृषय से माम्यता देने और उसके अनुसार आचरण करने में ही अभिप्य की सफरता की कुंजी है। इसके भीतर जो सनातन सत्य है उसको जिस सीमा तक हम नहीं देख पाते उस सीमा तक हमारा असफल रहना अनिवार्य है। मैं कहता हूँ कि अगर हमारी ओर से हिंसा न हुई होती तो ये सब सगड़ न होते — हमारे पास इसके बेरों प्रमाण हैं और मैं उन सबको आपके सामने रख सकता हूँ बिचममाम महमदाबाद और बंबई का सारा कच्चा बिट्टा और उसे देखकर आप अपना संतोष कर सकते हैं कि हमारे मन में हिंसा की भावना थी और हमारी ओर से हिंसा हुई। मैं इस बात को मानता हूँ कि डाक्टर किचनू और डाक्टर सत्यनाथ को मिरपवार करके अब कि मैं डाक्टर सत्यनाथ और स्वामी जी के बुकाने पर, पान्ति स्थापित करने का समय सेकर नहीं था रहा था सरकार ने देश को बंभीर सत्तेबता का कारण दिया। और फिर सरकार तो जैसे उस समय पागल हो ही गयी हम भी पागल हो गये। मैं कहता हूँ कि पागलपन का बजाब पागलपन से मत दो समझवारी से दो और तुम स्थिति को अपने बस में कर लोव।

घारहाट का घस्ता जलिमावाला बाघ में जाकर खत्म हुआ। गांधी जी का अहिंसक आन्दोलन चम्पारन और छेड़ा में अपनी शक्ति को प्रमाणित कर चुका था।

टास्सटाय के प्रभाव में अन्त करण की सुझि क सिद्धांत की ओर मुंशीजी का मुकाबल सब ठक काठी स्पष्ट आकार में चुका था। टास्सटाय-अन्त याधी जी जिन्होंने भी टास्सटाय की बही और बैसी ही कहानियों का अनुवाद अपनी माया यंत्राली में किया था उसी सिद्धांत को एक अधिक व्यापक अंततल पर, राष्ट्रीय स्तर पर लागू कर रहे थे। मुंशीजी को उसे अपने माने में मत्ता क्या मुपतिक होती।

जमाने की हवा के साथ बहते हुए उन्होंने भी गांधी जी का भरपूर अंतर लिया। जो चीज उन्हें इस आदमी में सबसे ज्यादा भावी थी और सचमुच मन को छूती थी वह वह थी कि जहाँ और छोप सिर्फ़ बातें करते थे वहाँ यह आदमी सचमुच कुछ काम करता था जनता की सेवा करता था। और जो सच पूछिए तो इसी चीज का अंतर मुंशीजी ने लिया इसी अर्थ पर आकर वह रूप से गांधी कर्मयोगी गांधी के प्रति प्रसन्न हुए, सेप तो उनकी अपनी प्रकृत भूमि है अपनी अहम जीवन्-वासा। विचार या दर्शन में उन्हें जो कुछ नया गांधी जी से मिल सकता था उसे वह पहले ही टास्सटाय से पा चुके थे जब कि भारतीय राजनीति में अभी गांधी का उदय भी नहीं हुआ था।

बचपन की किताबों में एक सारी-सी नीति की बानी पढ़ी थी—जहाँ से जो कुछ अच्छा मिले उसे ले लो। जन्म भर वह इसको गीठ बाँधे रहे और जब जितने जो कुछ मिला उन्होंने मुसल होकर लिया लेकिन वही जिसका साध्य अपने भीतर पाया और उठना ही जितने का साध्य अपने भीतर पाया। बाकी के लिए अपनी मौलें अपना रिमाग सुता रखा और अपने अन्त अतते रहे। जैसा कि मयमान बुड ने जावरक को एक कथा में कहा है विचारों को सिर पर पठरी की तरह लाकर मठ चलो इस समय भी जब कि गांधीजी के अहिंसा के प्रयोग में उनकी विविध आस्था की आन्टेम्प्टेन्सपूर्ण रिखा में ऐक्ट क सर्वप में मुंशी जी के विचार गांधी जी की अपना चितरंजनदास के अविश्व निकर प। और न मुंशीजी को इस बात की रती भर चिन्ता थी कि उनका विचार किससे मिलने हैं और किससे नहीं मिलते। सही-गलत वह जैसे भी है उनका अपने विचार हैं। बाग बरन हुई। लेकिन ही जब कोई नयी बात मिल और वह अपने को सही मान्ना हो तो उसे स्वीकार करना चाहिए और जिन्दगी की बसोटी पर परगाकर उसे देगना चाहिए। यही विचारों की याचा है। वही नवजीवन का अन्त है।



गांधी जी का ही रास्ता ठीक है। अगर और किसी कारण से नहीं तो सिर्फ इसलिए कि हमारे सामने ब्रुसर कोई रास्ता नहीं। साम्राज्य के पास हिंसा की बड़ी विराद संगठित शक्ति है। हिंसा के रास्ते हम उससे कैसे पैदा पा सकेंगे। क्या वे तो बस रही है यह कोशिश निकला कोई नतीजा? न जाने कितने बहादुर मीठवान फर्सी मूठ गये कितने मच्छमन में सड़ रहे हैं। मगर सब बेकार।

इस में यह तरीका कैसे कामयाब हो गया? हो गया जैसे हो गया मगर उससे क्या हर समय हर जगह एक ही मस्झा काम नहीं होता। हर देश का अपना अलग रंग-रंग होता है परंपरा इतिहास मनोविज्ञान सब कुछ अलग होता है। उसको समझना जरूरी है वना बस नाकापी हाथ माठी है।

हमारा रास्ता वह नहीं है। हिन्दुस्तान हमेशा से बहुत दान्तिप्रिय देश रहा है और यहाँ पर दान्ति का रास्ता ही हमें अपनी मंजिल पर पहुँचा सकता है। नहीं यह सिर्फ कहने की बात नहीं है गांधी जी करके भी चला रहे हैं। छोड़ो पंपारन को छोड़ा को मारे देश में आज कौसी बागुति दिखामी पड़ रही है? गांधी के पहले कभी किसी न बेची-मुनी बी ऐसी चीज? यह सब एक कसब है। मयी चीज बकर है, निहल्ले आदमियों को केकर मीदान में उतर जाना मगर हंसम की चीज नहीं है। बड़ी गहरी सूझ-बूझ है उसके पीछे।

गुलामी का यह डींचा आखिर किसके कंधों पर लड़ा है? हमारे-आपके कंधों ही पर ता? गोरे कितने हैं इस देश में हमी-आप तो पसाते हैं सरकार का काम और ययन हमी असहयोग पर कमर बांध में तो कौ दिन टिक सकती है यह व्यवस्था? ककवा मार जायवा सरकार को। कुछ और करने की जरूरत नहीं है बस असहयोग। अभी लोग डीक से समझ नहीं रहे हैं बड़ी ताकत है दान्ति और अहिंसा के इस बरत में जो गांधी देश की जकता को दे रहे हैं। कमी अकारण नहीं पा सकता यह बखिरान। उनका बून हम नहीं बहामेगे अपना बून बहावपे और वह रंग साकर रहेगा। दुनिया में सब कमह हमी जैसे सोय रहते हैं। स्वराम्य की हमारी माँग सत्य और म्याय की माँग है। सब इस बात को समझते हैं। ब्रिटेनवाले भी समझते हैं। हमारा आत्म-बखिरान उनकी आत्मा को बगावेगा किमासीक करेगा—उनको जिन हम दुनिया की मारक कामर्तस कहते हैं। हर आदमी की रह में एक हबान और एक इंसान होता है। हिंसा का तरीका उसकी हबानियत को उमास्ता है हमारा तरीका उसकी इंसानियत को उमारेगा। समय की भी बात होती है। दुनिया अब बहुत छोटी हो मयी है एक की बात औरल वूगे के काम तक पहुँचती है। और फिर, वह बात भी अब कायम हो गयी है कि हर देश

को आबाद होने का आबादी माँगने का हक है। एक देश को दूसरे देश पर राज करने का हक नहीं है।

सास भर पहले सन् १८ के आखिरी दिना में मुंशीजी व कापेनी मित्र द्वायय प्रमात्र डिबेरी ने गोरखपुर से ही अपना हिन्दी साप्ताहिक स्वयंय निकाला था। उसके प्रबन्धीक का संपादकीय डिबेरी जी के कहने पर प्रमन्ध ने ही छिन्ना था। छद्माई मभी-मभी खलन हुई थी और उसके नतीजे अपने खंय न निकालते हुए मुंशी जी ने उसके प्रबन्धीक में सिखा था —

● सचमुच जनता का इशारा गौरव इस युद्ध से पहले कभी न था। बालक में इस युद्ध में अगर किसी की जीत हुई है तो वह है जनता की जीत। इस युद्ध के बनना कं लिए वह कर दिया है जो फ्रांस की राज्यशक्ति ने भी न किया था।

इस युद्धको औरमायव की मन्धने से बूमरा फसरल यह निकला है कि अब निर्बल जातियां को शक्तिसम्पन्न जातियों का आशर नहीं बनन दिया जायगा। अब तक शक्तिशाली जातियां निर्बल को अपना श्राय खनसती थीं। बिन्धी श्राटी मकी भेन का मिद्धान्त मबमाय्य था। पार्सिण्ड अपनी इच्छा व विच्छु जर्नीय स्म आम्पिया आदि देशों का प्राप्त बना हुआ था। सन्धिया पर आम्पिया क शीत थे। राज्य-विस्तार की घुन में इस बात की गती नर भी परबाह न की जाती थी कि बिन्ध पर हम अधिकार जमागा चाहते हैं वास्तव में उनकी अपनी इच्छा क्या है। बिन्धी राजा अपना साम्राज्य को अधिकार था कि परम्न देशों के बिन्ध नाग का चाहे हूय बडे। यहाँ तक शीबली होती थी कि बहेखों में राज्यों व बार-म्यारे हो जाने थे। परन्तु अब इस दुरवस्था का संशोधन हो रहा है। अब भविष्य में राज्यों के माप बन्धुओं या पशुओं के ममान ब्यवहार नहीं बिन्ध जायगा। प्रन्धेक जाति को इस बात का अधिकार होगा कि वह अपने भाय्य का श्राय निर्णय करे, बिन्ध साम्राज्य के अधीन रहना चाहे रहे और उसकी इच्छा हो ता स्वयं अपना राज्य सामन करे। हम नहीं वह सकते कि इस प्रया का क्या फल होया। संभव है संसार बर्नस्य छोटे-मोटे राज्यों में बिन्धस्त हो जाय पर कुछ भी हा जनता फल इतना भबय्य होया कि राज्य-विस्तार की बुधेय्य का स्पेय हो जागा। निर्बल जातियां भी निर्बलक अपना जीवन-निर्बाह कर सकेंगी। ●

गांधी का यस्ता हमी बन्धे हुए समय का यस्ता है — एमे समय का बिन्धमें एक और साम्राज्य की संघटिन हिन्ध की बिच्छु शक्ति के मुशायय में पराजित देश की हिन्ध कमबोर पड़ जाती है और बूमरी ओर, एक परपरीत देश क आबादा मायनकाय उद्दाम म्बर के सामने साम्राज्य-नरतण का शीबान डिस्लेक और पीरा म्नापी यस्ता है। यही यतीनि है इन नये तरह के श्रापीनता संघान की —

यमन की शक्ति को अपनी अहिंसा से विफल कर था और आवाहन करो यत्न के अन्त-अन्त की उस मुक्ति चेतना का जो इस युग की मयी उपलब्धि है।

अहिंसा का रास्ता ही ठीक है।

सम्भारपुर के किसानों ने हिंसा का रास्ता अपनाया — तो उनका सर्वनाश हो गया और कुछ ह्रास न गया। सब जंगल में पड़े सड़ते रहे। सब का घर-बार मष्ट हो गया। मनोहर ने जेल की कोठरी में ही अपने को फँसी स्या भी।

दूसरा रास्ता अहिंसा का है गांधी की नवरचना का है — प्रेमसंकर का रास्ता प्रेमसंकर जो प्रेमचर की गड़ी हुई मानस-भूति है गांधी की।

बारसों देश से बाहर रहने के बाद गांधी जी सन् १५ में अपने देश लौटे और सभी उन्होंने अहमदाबाद में अपना सत्याग्रह आश्रम स्थापित किया।

प्रेमसंकर भी बारसों देश से बाहर रहने के बाद अपने देश लौटते हैं और अपना प्रेमआश्रम स्थापित करते हैं। अन्तर इतना ही है कि गांधी जी अफ्रीका गये व प्रेमसंकर अमरीका जाते हैं वहाँ उन दिनों स्वायत्तार क्रांतिकारी भागकर जाया करते थे। और वह खुद भी ऐसे ही राजद्रोह के प्रसंग में भागकर गये थे — 'मैं कावेज से ही स्वराज्य आन्दोलन में अग्रसर हो गया। उन दिनों नेतामन स्वराज्य के नाम से कर्पते थे। इस आन्दोलन में प्रायः सबसूत्रक ही सम्मिलित थे। मैंने सारा भर बड़े उत्साह से काम किया। पुलिस ने मुझे फँसाने का प्रयास करना शुरू किया। मुझे ज्योंही माझूम हुआ कि मुझ पर अभियोग चलाते की तैयारियाँ हो रही हैं त्यों ही मैंने जान सेकर भावने में ही कृतान्त समझी।

मगर जब लौटे तो गांधी जी की प्रतिमूर्ति बनकर — क्योंकि गांधी की मूर्ति इस बीच मुंशी जी के हृदय-आसन पर स्थापित हो चुकी थी। इंद मिट गया है। अब मुंशी जी की एकनिष्ठ शक्ति गांधी जी के बेधोडार आन्दोलन में है। और इस बेधोडार में भूत-काठ और दूसरे सभी अमविस्वासों के खिलाफ लड़ाई चालित है — सहकारी सैती का प्रयोग भी उसी का एक बरूरी हिस्सा है।

अंग्रेजी साहित्य छारसी और इतिहास में भी ए का इन्तहाज अप्रैल १९१९ में देने के बाद मुंशी जी एकाग्र मन से उर्बु 'प्रेमआश्रम' पर ही काम करते रहे।

और मन की इन एकाग्रता का यह ह्रास था कि शायद ही कोई दूसरी चीज सिद्धी हो। २८ नवंबर १९१९ के अपने सत में उन्होंने निगम साहब से अपनी इस मजबूरी का शिक भी किया था —

अब कुछ दिनों के लिए छोटे किस्से लिखना बंद करके इसी मजामीन सिद्धने की कोशिश करेंगा। किनाए एक साथ को मुल्लकिष्ठ प्काट नहीं सैमाक

सकता। तजुर्बा कर चुका हूँ कि एक ही काम एक बन्ध हो सकता है। या तो माबिस लिब्बू या कहानियाँ माबिस के लिए एक ही फ्माट काफ़ी है और उसका लिब्बना इतना मुश्किल नहीं है जितना हर माह में बो-लीन कहानियों का।

इस एक साल के दौरान मैं मुँसी जी ने घायब एक ही कहानी लिखी 'पमू से मनुष्य' — जो कि सब पूछिए तो 'प्रेमाश्रम' का ही एक टुकड़ा मामूम होती है। उसके भी नायक प्रमथंकर हैं जो 'प्रेमाश्रम' के अपने नामरसी भाई की तरह सहकारी बेटी का ब्याबहारिक समाजबाद का प्रयोग करते हैं। एक मासी पहले फ़िरी के यहाँ पाँच रुपये पर नौकरों करता है। बर-बारबाका भावमी है इतने में उसका पेट नहीं भरता तो वह बाण के आम बनीख़ बुराकर बेच देता है। वही भावमी प्रेमथंकर के यहाँ पहुँचकर बहुत मेहनती और ईमानदार भावमी बन जाता है।

निष्कर्ष ? पाँच और पाँच हजार, पचास और पचास हजार का अस्वामाधिक कंठर ही हर पाप की बड़ है। ऐसे समाज में थोड़ी बमारी के लिए बाप से बाप कोई बयह नहीं रह जाती जिसमें कोई भी यह नहीं समझता कि मैं किसी का नौकर हूँ। सब के सब अपने को सामेदार समझते हैं और भी तोड़कर मेहनत करते हैं। वहाँ कोई मासिक होता है और दूसरा उसका नौकर तो उन दोनों में तुरन्त डैप पैग हो जाता है। मासिक चाहता है कि इससे जितना काम करूँ बने लेना चाहिए। नौकर चाहता है कि मैं कम से कम काम करूँ। काम-बिन्हीं से मात होता है कि वह प्रतिदिनता अब कुछ ही दिनों की मेहमान है। इसकी बयह अब सहकारिता का कामकाज होनेवाला है। चारों ओर से बन्तबाब का थोर नाय हमारे कानों में आ रहा है पर हम ऐसे निश्चिन्त हैं मानों वह साधारण मेच भी बरब है।

जिस बेडीक डंग से यहाँ दिल्प की मर्यादा को भुसकर कहानी की छूटी पर बिचार टयि गये हैं उसी से यह सिद्ध है कि ये प्रेमथंकर के नहीं प्रेमथंय के बिचार हैं और ये बिचार इस बुटी तरह उनके मन पर छाये हुए हैं कि दूसरी सब बायें भीच हो बपी हैं। यह एक नयी उपलब्धि उनको हुई है जिसे वह सबको दिखाना चाहते हैं, सबके साथ बाटना चाहते हैं — कुछ-कुछ जैसे ही जैसे बन्ना गया मुनमुना मिन्ने पर उसे टोके-पड़ोस के अपने हमजोबियों को दिखाने के लिए बेठाब रहना है। काई टोक-टोक मानने के लिए वह तैयार नहीं है। दिल्प की भी बाबा कोई बाबा नहीं है। मतलब बीब बाव है। बाव बड़ी हो तो फिर सब ठीक है।

और बाव इतनी बड़ी है कि उसने मुँसी जी को ऊपर से नीचे तक छा दिया है और वह बाव के पूरे समाज पर, जिसकी बापार-दिखा घन है एक बड़ना प्रलम्बिह लगा देते हैं। घन ही साथी बुचद्यों की बड़ है। उसी ने वो इमानों

के बीच यह बीमार खड़ी की है। वही आधमी को जानकर बना बेटी है। उसको मिया दो।

मगर उसक साथ ही गांधी और टाल्स्टाय का इतना गहन असर मुंठी जी क मन पर है कि जाहू की छड़ी घुमाते ही वह सारे पड़े-छिसे लोग बकीस-बैरिस्टर, डाक्टर सरकारी बमले जो इस समाज-व्यवस्था को पूरी तरह स्वीकार करते खुद अर्क-पिघाच बन चुके हैं और जिनके बारे में मुंठी जी की संकाओं का अन्त नहीं है, उनका हृदय-परिवर्तन हो जाता है और वह बहुत नेक सीधे-सम्ब इंसान बन जाते हैं। उनकी सोयी हुई आत्मा जाग पड़ती है और फिर मुंठी जी उन्हीं के मूंह से आज की इस समाज-व्यवस्था की पोस खुसवाते हैं।

इक़िम ज्वाला सिंह कहते हैं— यहाँ उसको सफ़कता होती है जो खुशामबी और बछटा हुआ है, जिसे सिखान्तों की परवाह नहीं। मैंने तो आज तक किसी सहाय्य पुरुष को फसले-फूलेते नहीं देखा। बस घर-बाराहों की चौकी है।

डाक्टर भोपरा कहते हैं— बस यही उन सोपों की चौकी है जिनके कान्ठस मुड़ा हो गये हैं। बैरिस्टर इफ़्तल अमी कहते हैं— जब बकाअत का स्याह जामा पहना तो उस पर सराउत का शुक्र दास क्यों सगाये। जब छूटने पर जाये तो दोलों हाथों से क्यों न समेटें। बिल में बीसत का जरमान क्यों रख जाय। बनिमों को लोग ब्वाहमब्वाह साकनी कहते हैं। इस अजब का हक हमको है। दीअत हमारा धीन है, ईमान है। यह न समझिये कि इस पेरो में जो लोग जोटी पर पहुँच गये हैं वह क्याबा ऐसनबमान है। नहीं जलाब वह बबुसे भगत है। ऐसे सामोस बैठ रहते हैं गोया बुनिया स कोई बास्ता ही नहीं लेकिन शिकार मखर भाते ही आप उनकी झपट और फूर्ती बलकर बंग हो जायेंगे। जिस तरह क्साई बकरे को सिर्फ़ उसके बदन के एतबार से देखता है उसी तरह हम इंसान को महब इस एतबार से देखते हैं कि वह कहीं तक बीब का अंबा और पाँठ का पूरा है।

राय कमसामन्ध, जो एक बिल्कुल अपने डंप के अत्यंत प्रबळ भ्यक्तित्व के, पुराने वाल्मुनेवार हैं कौंसिल के मेम्बर हैं और भोग को ही योब समझते हैं, उनकी अंतबिराहों से मरी हुई स्थिति की सच्चाई उनके मूंह से इस रूप में बाणी पाती है— मुझे खुशामबी टट्टू कहने में अगर किसी को आनन्द मिळता है कहे मुझे रोना और जाति का झोड़ी रहने से अगर किसी का पेट भरता है तो मुझे कोई दिक्कत नहीं है, पर मैं अपने स्वभाव को नहीं बलस सकता। अगर रस्ती तुझकर मैं जेबक में अबाब फिर सई तो मैं आज ही लूँटा उबाड़ फेंकूँ। लेकिन जब जागता हूँ कि रस्ती तुझने पर भी मैं बाड़े से बाहर नहीं जा सकता बल्कि ऊपर से और बडे पड़ने तो फिर लूँटे पर चुपचाप बड़ा क्यों न रूँ ? और कुछ नहीं तो मानिक की ह्पादृष्टि

तो खेमी! जब राजसत्ता अधिकारियों के हाथों में है, हमारे सहयोग और सहमति से उसमें कोई परिवर्तन नहीं हो सकता तो इसकी क्या जरूरत है कि हम स्वयं अधिकारियों की टीका-टिप्पणी करते बैठे और उनकी भाँजो म लटवें। हम काठ के पुतले हैं, तमासे दिखाने के लिए खड़ा किये गये हैं इसलिए हमें बोरी के इचारे पर नाचना चाहिए। यह हमारी सामसयाभी है कि हम अपने को राष्ट्र का प्रतिनिधि समझते हैं। जाति हम बीसों को बिनका अस्तित्व ही उसक रक्त पर अवलंबित है कभी अपना प्रतिनिधि न बनायेगी। जिस दिन जाति में अपना हानि काम समझन की सक्ति होगी हम और आप दोनों में कुवामी पछाते नबर आयेंगे।

सोम स्वार्थ और पालक्य का पुतला ज्ञानसंकर जो इतना फिर गया है कि जायदाद क पीछे अपन समुद्र राय कमजानन्द को पहर रैन में भी संकोच नहीं करता कहता है—यह जीवन-संग्राम है। यहाँ कपट, नष्ट-अरेव सब कुछ उपयुक्त है अगर उससे अपना स्वार्थ सिद्ध होता है। यहाँ छापा मारना आड़ से घुसना पक्षाना विजय प्राप्ति के साधन हैं। यहाँ अधीनत्व-अनीनित्य का निर्णय हमारी सफलता के माबीन है। अगर जीत गये तो सारे पाके और मुणामते मुमबरर क नाम से पुकारे जाते हैं हमारी कार्यश्रुतता की प्रवसा होती है। हारे वा उन्हें पाप कहा जाता है।

मरते-मरते कमजानन्द कहते हैं—इस जायदाद की बहीनत हम और तुम एक-दूसरे के खून के प्यासे हा रहे हैं। यह इसी जायदाद के इनी रियासत के करिस्म है। बुनिया में तमा और हिंस कीना और इसद कृष्ट और खून का राज है। मार-मार का बुसमन हो रहा है। इसी जमीन के लिए, इसी जायदाद के लिए। यही वह पैत है यहाँ बुनिया एक मराने कारखार बनी हुई है। इसी न इंसान को ईबानों से बदतर बना दिया है।

इतने से भी नहीं मरता तो राय कमजानन्द फिर कहते हैं— यह जायदाद नहीं है। इसे रियासत कहना मूल है। यह निरी दमानी है। इस भूमि पर मेरा क्या अधिकार है? मैंने इसे बाहुबल से नहीं लिया। नबार्वा क जमान में किसी सुवेदाय न इस इलाके की आमदनी बमूल करने के लिए मेर दादा को निपुस्त किया था। मेरे पिता पर भी नबार्वा की हुपादुष्टि बनी रही। इसके बाद अंग्रजों का जमाना आया और यही सिलसिला ज़ायम रहा ।

पहले उर्दू मसीखे से अनुवाद करते समय मुंजी जी ने और जब कुछ ठा प्या वा खों रहने दिया मैकिज जब आखीर के दुकड़ पर आय तो वह बाग एमरत मानम हुई क्योंकि अंग्रजों ने बहुतों की जमीनधारियाँ छीन ली थी और फिर अपन नय जमीनधार पैदा किए थे—अपने पिदुमों में से जिन्होंने एर में और उसक पहले भी उनकी

मदद की थी। आज भी राष्ट्रीय आन्दोलन के बही सबसे बड़े दुश्मन ने और यह विश्वासना डकड़ों या कि इस दुश्मनी की बड़ कहीं पर है। सिद्धान्त मुंशी जी ने आपनासा टुकड़ा बदलकर यह कर दिया — इसके बाद अंग्रेजों का जमाना आया और यह अधिकार पिता जी के हाथ से निकल गया। लेकिन राज-विद्रोह के समय पिता जी ने तन-मन से अंग्रेजों की सहायता की। सान्ति स्थापित होन पर हमें बही पुनरा अधिकार फिर मिल गया। यही इस रिवाज की हकीकत है। हम केवल जमान बदल करने के लिए रहे सये हैं। इसी इच्छा के लिए हम एक दूसरे के कून से अपने हाथ रँगते हैं। इसी हीन-हत्या को हम रोब कहते हैं। इसी कारिवागरी पर हम फूले नहीं समाले। सरकार अपना मतसब निकालने के लिए हमें इस इच्छा के मासिक काहटी है, लेकिन जब साक में दो बार हमसे माकमुबारी बसूष की चाठी है तब हम मासिक कहां रहे? सब बोले की टट्टी है। तुम कहोये यह सब कोरी बकवास है रियासत इतनी बुरी चीज है तो उसे छोड़ क्यों नहीं बेटे? हा! यही तो रोना है कि इस रियासत ने हमें बिज्जासी बामसी और अपाहिब बना दिया। हम अब किसी काम के नहीं रहे। हम पाकतू बिकिया हैं हमारे पंख सक्तिहीन हो सये हैं। हममें अब उड़ने की सामर्थ्य नहीं है। हमारी बृष्टि सदैव अपने पिबरे के कुम्हिन और व्यापी पर रहती है।

जमीन किसकी है, इसके बारे में मुंशी जी के मन में कोई बुबिधा नहीं है। प्रेमसंकर स्पष्ट शब्दों में कहता है — जमीन उसकी है तो उसको ओते। सासक को उसकी अपन में भाव लेने का अधिकार इसलिए है कि वह देश में सान्ति और रक्षा की व्यवस्था करता है जिसके बिना बेटी हो ही नहीं सकती। किसी तीसरे बर्ग का समाज में कोई स्थान नहीं है।

उसकी इस बात को सुनकर किट्टी प्वाका सिंह कहते हैं — महासय इन बिचारों से तो आप देश में सान्ति मचा सये। जो कि प्रायस सकत बात नहीं है क्योंकि इस की बोल्सेबिक सान्ति के तीन बड़े नारों में सबसे बड़ा माय नहीं था — जमीन ओतनेवाले को।

कसतपुर की जमीनवादी से अपना नाता तोड़ते हुए प्रेमसंकर अपने भाई से कहता है — मैं यह सुनना ही नहीं चाहता कि मैं उस माँ का जमीनदार हूँ। अपने भ्रम की रोटी खाना चाहता हूँ। बीब का बकास नहीं बनना चाहता। अगर सरकारी पत्रों में मेरा नाम बर्न हो गया हो तो मैं इस्तीफा देन की तैयार हूँ।

प्रेमसंकर के यही आदर्श जब ज्ञानसंकर ने बेटे मायासंकर के आदर्श बन जाते हैं, बिचने लिए ही ज्ञानसंकर सब कस-कन्द करता है, यहाँ तक कि हत्या भी तब

ज्ञानचक्र के लिए मर जाने के सिवा दूसरा रास्ता नहीं बचता और वह पया में डूबकर भागमभाग कर जाता है।

जमीन किसानों को सीपते हुए मायासंकर कहता है—

भूमि या तो ईश्वर की है जिसने हमकी सृष्टि की या किसान की जो ईश्वरीय इच्छा के अनुसार हमका उपयोग करता है। राबा रोष की रसा करता है इसलिए उसे किसानों से कर लेने का अधिकार है चाहे प्रत्यक्ष रूप में न या कोई इससे कम आपत्तिजनक व्यवस्था करे। अगर किसी अन्य वर्ग या श्रेणी को मीरास मिलिस्वत आपदाय अधिकार के नाम पर किसानों को अपना मोक्ष पदार्थ बनाने की स्वच्छ-मत्ता दी जाती है तो इस प्रथा को वर्तमान व्यवस्था का नर्सक-भिन्नु समझना चाहिए।

जमीन्दार बीज में से हट जाय और जमीन का मास्कि खुद जोतनेवाला हो जाय। अपना समय से बहुत भागे बड़ी हुई बात है। जमी गायब कोई इस रूप में नहीं सोचता। मांभी जी भी नहीं। लेकिन प्रेमचंद का ऐसा ही कुछ स्वप्न है। उसके लिए उन्हें किसी पुर की बीजा नहीं चाहिए और न उन्हें जरूरत है किसी गदे-गुदान बड़-भास्त्र की सनद की। जिनगी की सनद उसके लिए काफी है।

जिनगी में जो कुछ देना है मुभा है पका है सोचा है—वही तो स्वप्न है। कल्पना है। वामना है। उनमें मेरा भी भंग है दूसरों का भी। मित्रान्त मीलिक तो कुछ भी नहीं है संसार में—एक बड़ को छोड़कर। फिर तो जो है सब किसी न किसी से आधिर्भूत है सब कुछ एक धूमरे से समा-सिपटा है। वही तो सेतु है एक मनुष्य और धूमरे मनुष्य के बीच। वही तो एकता की डोर में बाँधता जाया है सब मानवजाति की कल्पनाया को, प्रयागों को। एक के अनुभव से दूसरा सीगता है। लेकिन उतना ही जितने का प्रमाण अपने भीतर पाता है।

इसी तरह तो उसका सौन्दर्यबोध बनना है विवेक बनना है। वही मंत्रक है। उसी की उँगली पकड़कर आदमी अपने जीवन की यात्रा करता है। बहुत बहुत घटने लपते हैं हम माया में। न जाने क्या क्या बेलने को मिलता है वैसे वैसे रूप एक से एक मयात्मक एक से एक सुन्दर। हाय-उजोसले के बीमो रूप तरह तरह के मस्याय-आत्याचार। सब बेगो। सब मुजो। सब महजो। वही तुम्हारा बलाय बोप है। इसका सीरा किसी जीमत पर न करो। अपनी बुद्धि अपना विवेक किसी क नहीं बचक न रगो। और ज्ञान-ज्ञान तुम्हें रग्या। फिर कोई चिन्ता नहीं। अच्छ-बुरे बहुत से भाय मिलेंगे तुम्हें। सबके संग उठो-बैठो। जितने जा कुछ अपने काम का निक ले लो पर भरोसा अरन आंग-ज्ञान का करो अपनी बुद्धि का अरन विवेक का। और अपनी राह चलो। राह सिंगानेवाले भी



कम न मिलेंगे एक से एक पढ़ेंगे हुए साधु-सन्त प्रक्रीर, दरवेश। उनको अपनी राह जाने दो। वह तुम्हारी राह नहीं है। तुम इही बुनिया के आवसी हो। स्वागत-सकार करो उनका कुछ दूर साब हो लेने में भी बुवाई नहीं है लेकिन फिर अपनी राह पर आ ज्ञो। बस एक बात कमी न भूजो — जीवन से बड़ी पुस्तक नाई नहीं है न कोई बेध न कोई छास्व न कोई छाधु न कोई सन्त।

गांधी बड़ा आवसी है। देश का बई उसके भीतर है। मये तरह का नेता है जो बात से ज्यादा काम पर जोर देता है। बेध का बना रहा है। उसे आत्म विस्वास से रहा है, मुस्क की मख्य पहचानता है। अग्याप के बिरुद्ध सिर ठेका करके लड़े होना सिखाया रहा है। प्रतिकार का जहाँ किसी को कोई रास्ता नहीं मिल रहा था वहाँ एक रास्ता दे रखा है जो एक घास भारतीय रास्ता है और आबाधकारिक रास्ता है।

गांधी जी के लिए प्रमत्त के मन में गहरी भक्ति है बसल निष्ठा कर्मपथ पर उनके नेतृत्व में। इतनी कि मुँदी जी कमी-कमी संघाम में पड़ जाने हैं — प्रमाण किसे मानें जीवन के अपने अनुभव और ज्ञान को या गांधी को! खबरस्त रस्ताकधी होती है। आबिरकार समझौता हो जाता है जीवन भी रहेगा गांधी भी रहे। कठार वास्तविकता की लंगी-बुरदुटी जमीन रहेगी और उस पर गांधी बर्धन का बँबाबा तना रहेगा। जमीन के बुरदुरेपन को रोकने के लिए काकीम की तरह उसका इस्तेमास — नहीं वह किसी तरह मुमकिन न होगा।

किसी पाषण्ड से वह समझौता नहीं करेगा किसी अग्याप से वह जीस नहीं बुरावेगा। जिन्गी की पूरी उसबीर देगा सखी उसबीर देगा। यह उसकी प्रतिभुति है अपने प्रति। तल्कास कर्म की एक रूपरेखा गांधी के यहाँ मिलती है। अच्छी है, यत को भाठी है और जहाँ तक अपने स्वप्न से उसका मेक खाता है गांधी के सान या उनके पीछ चलने में कोई बुराई नहीं है मरोसे का आवसी है। ऐसे क लिए मैं स्वतन्त्र हूँ। मैं अपनी राह जाऊँगा वह अपनी राह आवेंगे।

लेकिन स्थिति का ध्यय यह है कि समाज की पूरी परिकल्पना तो दूर की बात है, आबाधी की स्वराज्य की उनकी लछबीर भी एक नहीं है।

आबाधरसाक नेहक उन दिनों के बारे में अपनी आत्मकथा में लिखते हैं —

इस तरह हम बस रहे थे अनिश्चित-से, पर अपने भीतर गहरा आवेग बिबे हुए। कर्म का उत्सास हमें मजबूती से पकड़े था पर अपने लक्ष्य के बारे में स्पष्ट चिन्तन का मिस्तान्त अभाव था। आज बड़ा बजीव मासूम होता है कि हमने कौन अपने आन्दोलन के सिद्धाण्टपथ की ओर से उसके बर्धन और स्पष्ट लक्ष्य की ओर से इस तरह बाँध मूँब रखी थी। यह ठीक है कि स्वराज्य का नाम लड़े ही

हम सब की सरस्वती जाप उठती भी मगर हममें से शायद हर एक के पास इस शब्द का अपना अर्थ न था। क्यादातर मौजबान इसका मतलब राजनीतिक स्वाधीनता या एसा ही कुछ समझते थे और जनताधिक डंप की धारणाप्रणाली और यही हम अपने भाषकों में कहा करते थे। हमम से बहुत से यह भी सोचते थे कि इसका एक लाजिमी नतीजा यह होगा कि वह बौद्ध कुछ कम हो जायगा जिसके नीचे आज मजदूर और किसान पिस रहे हैं। लेकिन यह स्पष्ट था कि हमारे अधिकतर नेताओं के लिए स्वराज्य का मतलब जाजायी से कम कोई चीज था। यांभी की इस चीज के बारे में ऐसे अस्पष्ट थे कि क्या कहना और मजा यह कि पसन्द भी न करते थे कि कोई इसके बारे में सफाई से सोचे।

जो बात सामने आनी दिसम्बर सन् २ में गागपुर के कांग्रेस अधिवेशन में जब कि असहयोग के प्रस्ताव के सिद्धांतों में स्वराज्य पर बात हो रही थी। हसरत मोहानी ने जब स्वराज्य को पूर्ण स्वाधीनता के अर्थ में ग्रहण करने के लिए जोर दिया तो यांभीजी ने उन्हें बिड़बिड़े स्फुटमास्टर की तरह सिद्धांतर चुप कर दिया। लेकिन इस मामले में तो मुंशीजी भी हसरत मोहानी के साथ हैं। उनके लिए 'स्वराज्य' का नाम कोई हैसियत नहीं रहता। वह कोई ब्राह्म की छड़ी नहीं है। उनके पास हर चीज की अपनी कसौटी है जिस पर धरे-सोटे की परत होती है और वह सब से ऊँचीब हो बरस पहुँचे अपने उस ठेक-तरारि लेख पुचना प्रमाण 'नया जमाना' में स्वराज्य की हाँक लगानेवालों से आमतो-सामने लड़े होकर

लेकिन वह तो साम्य की बात है, जो कलाकार के स्वप्न-विश्रामक मन की बपनी चीज है। उसमें कहीं कोई उलझाव नहीं है, भ्रान्ति नहीं है। जीवन भर का अनुभव उसके पीछे है। हाँ साधन का हाक उसे नहीं मासम। वह उसका शत्रु भी तो नहीं है। उसके लिए किसी अच्छे मार्गदर्शक का हाथ पकड़ना चाहिए। यांभी से अच्छा मार्गदर्शक अब कौन है। इस देश की गाड़ी का उन्हें बहुत ज्ञान है।

जलियाँवाला बाग के जल्पाचारों और खिजाफत के प्रति बन्ध्याम से सारा देश मुग्ध था हिन्दू मुसलमान सभी।

२५ फ़रवरी १९२ को मुंशी जी ने उर्दू प्रेमाभय का निरुत्थान समाप्त किया और १ मार्च को यांभी जी ने एक बोपचापन में पहली बार खिजाफत के सवाल को समेटते हुए असहयोग की अपनी योजना का संकेत किया— 'अब एक शब्द इसके बारे में कि अगर हमारी माँगें नहीं पूरी होती तो हमें क्या करना होगा। बर्बर तरीका तो झुंझाई का है, फिर वह चाहे कुंजी झुंझाई हो चाहे गुप्त। इसको तो हमें काट ही लेना होगा अगर और किसी कारण से नहीं तो केवल इसलिए कि वह अस्वभाविक है। अगर मैं सब को इस बात का विश्वास दिला सकता कि वह बीज हमेशा हर हासत में बुरी होती है तो हमें अपने व्यापोजित उद्देश्यों में और बरूदी सफलता मिलती। हिंसा को विघ्नबन्धि देनेवाले किसी व्यक्ति या राष्ट्र में इतनी व्यक्ति या जाती है कि फिर कोई उसका सामना नहीं कर सकता। लेकिन आज हिंसा के विरुद्ध मेरा तर्क शून्य व्यावहारिकता पर आधारित है— हिंसा विरुद्ध निष्कण्ड है। ऐसी स्थिति में हमारे सामने केवल एक उपचार रह जाता है— असहयोग।

देश अहिंसक समर-बाधा के लिए निकल रहा था।

लेकिन इस समय भी कुछ लोग ऐसे हैं या हम सब के भीतर कोई एक जीव ऐसा है जिसे केवल अपने पेट की चिन्ता है। उसकी मरम्मत करने की जरूरत है और मुंशी जी ने पेटू-सिरोमन्धि पंडित मोटेराय शास्त्री को अपने तीर का निधान बनाते हुए एक बड़े मजे का चुटकुला किया— मनुष्य का परम धर्म।

● होसी का विम है। लड्डू के अक्ष और रसमुस्के के प्रेमी पंडित मोटेराय शास्त्री अपने अंगन में एक टूटी छोट पर सिर मुझाये चिन्ता और शोक की मूर्ति बने बैठे हैं। उनकी सहबमिणी उनके निकट बैठी हुई उनकी बार सन्धी महबेदना की बृष्टि से ताक रही हैं और अपनी गुरु बाणी से पति की चिन्ताओं को शांत करने की चेष्टा कर रही हैं।

पंडित जी बहुत देर तक चिन्ता में डूबे रहने के पश्चात् उदासीन भाव से बोय — नतीजा समुप न जाने कहाँ जाकर मो गया। होम्सी के दिन भी न थाया।

पंडितान्न — दिन ही बुरे भा गये हैं। इहाँ तो बीन दिन से तुम्हार हुठुम पाबा ओही बड़ी से सौंस-मबरे दोनो जन मूरज नपापन से यही बरदास मोगा बरिख है कि कहीं स बुलीबा जावे। सैकड़न दिया तुलनी माई का बड़ाबा मुसा सब सोय यय। पाइ परे कोऊ काम नारी भावय है। ●  
 पति-पत्नी में य बय नरी बातेँ बस ही रही हैं कि उनक मित्र पंडित चिन्तामणि आ पाते हैं। सोना मित्र कुछ देर आपन में अपने बाजार की मंडी का रोना रोने हैं और फिर निरक्षय होना है कि पंयाजी के घाट पर बतकर ब्याख्यान देना चाहिए, घायर इनी तरह कुछ डील बीट जाय। दोनो ब्राह्मण बबता घाट पर पहुँचते हैं और तब पंडित मोट राम न्याय और मीमांसा की पीली में बेर और शास्त्रों के प्रमाण सहित ब्याख्यान दकर सिद्ध करते हैं कि मुल ही शरीर का अष्टम अंग है क्योंकि बड़ा क मुल से ही ब्राह्मण की उत्पत्ति हुई और उन मुग को मुल पहुँचाना ही मनुष्य का परम धर्म है। मो बीसे हो इमक बारे में पंडित मोटराम ने कहा —  
 मुग को मुघ बैसे के लिए हमारा परम कर्ण्य है कि हुन उत्तम से उत्तम मिच्छ पाओ का मेहन करें और कपयें। मेघ अपना विचार है कि यदि आपके बाल में जैनपुर की इमरतियाँ आपरे के मोंतीबुर मघुप के देहे बनारस की कलाकण्ड कलमठ के रममुल्य अयोध्या की मुताबजामुन और दिल्ली का हुकमा सोहन हो तो बह ईश्वर-भोग के माय्य है। बेबनागस उन पर मुग हो जायि और जो माहमी पणमी जीव एसे स्वादिष्ट बाल ब्राह्मणों को बिमायेया उसे मवेह स्वयंभाम प्राण हमा।

असहपाय की तैयारी हो रही थी लकिन उसका क्या क्या हो — इगकी ठसबीर अभी माक न थी। और आ ठसबीर अनी तक सामने आयी की उगम कावमाय्य निलक को मंगोप-म पा लेकिन उम्हान गांधीजी को मारबामन दे दिया था कि मैं उसने बिरोध में कुछ न करेपा और अयर भाव इममें देण का अपने माब से आ पाते हैं ताँ मैं भी आपडे साथ हूँ।  
 बय तो माय था। अमल नबल या अपने महयोपियों का साथ ल बनने का। यापीजी ने १ आग्न १ २ की शापील अपना आगान्न मुक करन के लिए निरन की थी। परही की पी छान में अमी कुछ घटो की देण थी अर कि निरक का देहाबमान हा गया।

असहयोग के संबंध में आपस में काफ़ी मतभेद था। सितंबर में दानी बगले ही महीने कांग्रेस का विशेष अधिवेशन कलकत्ते में हुआ। देश गांधीजी के साथ वा और अपने प्रतिनिधियों के जरिये अधिवेशन में अपना समर्थन गांधीजी के लिए व्यक्त कर रहा था लेकिन बड़ गेठार्यों के मन में संदेह वा संशय था। लाला लाजपत राय कट्टर विरोधी के रूप में सामने आये। देशबंधु चितरंजन दास कट्टर विरोधी के रूप में सामने आये। देशबंधु के साथ बंगाल की पूरी कांग्रेस थी। इस तरह कलकत्ते में यह स्थिति थी कि जाने-जाने लोगों में केवल एक व्यक्ति पंडित मोतीलाल नेहरू, का समर्थन गांधी जी को प्राप्त था। और वह भी तब जब गांधीजी ने उनका यह संशोधन स्वीकार कर किया कि अवास्तव-कचहरी और स्कूल-कालेज का बहिष्कार एकदम से न करके धीरे-धीरे किया जायगा। तो भी गांधीजी की जीत हुई क्योंकि देश उनके साथ था।

तीन महीने बाद नागपुर की कांग्रेस में स्थिति बिल्कुल बदल चुकी थी। देशबंधु अपनी ओर से छत्तीस हजार पत्राचार करके बंगाल की अपनी पूरी जीत लाये थे — कलकत्ते की अपनी हार को जीत में बदलने के लिए। लेकिन जिस भी कारण से हो, चाहे देश के मनोभाव को देखकर-समझकर चाहे गांधी जी के व्यक्तित्व के सम्मोहन से हुआ यह कि असहयोग का प्रस्ताव देशबंधु ने रखा — और उसके समर्थन किया लाला लाजपत राय ने।

असहयोग की इमारत अब मजबूती से अपने चारों ओर पर लड़ी थी — गांधीजी पंडित मोतीलाल देशबंधु चितरंजन दास और लाला लाजपत राय। रूप और विस्तार भी अब काफ़ी सुनिश्चित हो गया था और जो कमी रह गयी थी वह अबसे वर्ष अहमदाबाद के अधिवेशन में पूरी हो गयी। स्वदेशी वस्त्र बंदर, चर्खे हाथ के करचे का विकास। बिदेसी चीनों का बहिष्कार। अवास्तव-कचहरी का बहिष्कार। सरकारी स्कूल-कालेज का बहिष्कार। राष्ट्रीय विद्यालयों की स्थापना। कौंसिल और उसके चुनावों का बहिष्कार। फूट-जफूट के भेद को मिटाना। हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच एकता और भाईचारा बनाना करना। और और भी बहुत कुछ।

देश का विवेक जाग रहा था। गांधी के हाथों देश को एक बार फिर अपना खोसा हुआ मेकअप मिला रहा था।

प्रयत्न के लिए इसमें नयी वा चौकानेवाली बात एक न थी। धर्म के धर्म में गांधी जी और उनके बीच गुरु-शिष्य का संबंध वा विचार के स्तर पर, दासदास के गुरु-भाई का।

प्रेमाश्रम तो हमारे सामने है ही मुसीबी की पंच परमेस्वर कहानी बन से चार-पाँच बरस पहले जून १९१६ की सरस्वती में छपी थी। गांधीजी को हिन्दुस्तान जाने तक मुजफ्फर से एक साल हुआ या और खुद उन्हें भी पता न था कि वह क्या करने जा रहे हैं। असहयोग की कही कल्पना भी न थी। कितने पना था कि चार-पाँच साल बाद असहयोग का आन्दोलन छेड़ा जायगा उसमें और बहुत-सी चीजों के बहिष्कार के साथ-साथ कचहरी-अदालत के बहिष्कार भी बात उठायी जायगी बकीलों से कहा जायगा कि कचहरियों से अपना नागा तोड़ लो और बनता से बड़ा जायगा कि अपने हाक़ लेकर कचहरियों में मत दीरो उन्हें खुद ही गाँव की पंचायत में बैठकर सुरुआत लो।

उसी पंचायत का अनिपक मुसीबी की इस सुंवर कहानी में है। उसकी प्ररपा का स्रोत कोई आम्बालन नहीं पाँच के जीवन की वास्तविकता है। तम जब देखो तब अपने हाक़ों को लेकर कचहरी पहुँचे रहते हैं। वही उनको लटने के लिए, दोनों हाथ से मुटन के लिए, पूरी एक झौंन बीटी रहती है — बकील-मुल्तार, देवकार, अहलमद अर्धली-बापसी सब। हर ख्योड़ी पर उसे कुछ न कुछ चडामा पड़ता है तो भी कोई सीपे मुँह बात नहीं करण। और ख्याप भी उमे कहीं मिलना है? नयी ठारीछ मिलती है। दो-चार रुपये का हेर-फेर होता है और मगली किसी ठारीछ के लिए पेची लग जाती है। और उस दिन फिर यही सब होगा है। गोया एक साथ है किते सब गिड मिलकर मोच रहे हैं। क्या कुब ईसाऊ है। ठीठान के दिमाग की उपज है यह मसीन — ल कर डाक दी बीच में उतमे रहो इयामत तक। मपर इन बाहिलों को क्या कहा जाय जिनकी अकल पर परपर पड़ गया है! रेल में कचहरी में हर जगह बपके छाते हैं, खेरवार होते हैं, बतन मीशा बेचते हैं, पर-इमीन रहन रहते हैं यहा-गुरिया साबरी की दुकान पर रखर पेची के लिए बस-बीम जमा करते हैं और बाकर पूँज माते हैं। मच्छा महादोय लगा है यह, किस घुटकाण हो?

परती से सवाल उठता है और परती से ही विचार का अँडुर घूटता है। गांधी ने भी चरनीति को धरती से उठया। वही दोनों के साम्य का आधार है। वही जनक सर्वत्र की राशि है। जिनकी दूर तक साथ चल सके चल लिये — और फिर उन्हें अलग हो पनी। दोना प्रयोग कर रहे थे अपने-अपने माध्यम से और दोनों को अपने प्रयोग में निपटा थी।

सरकारी गौदरी बन रिनों-न भी पर भाठी होती जा रही थी। दो बरस होगा है जब उमपानिया पुनिबनिते के लिए कोनिग की बी मपर बीम घुटता है।

पिछले साल एक रोज मुंशी जी ने लीडर में इस्तहार देना कि कानपुर में डी ए बी स्कूल की हेडमास्टरी खाली है। वहाँ लिख गयी। बहुत अच्छा स्कूल है। फिर, कानपुर है, वहाँ पमानापवन है जमाना का बस्तर है। इस जंगल से जबहँगा बहुअसम। अब तो कटने लगी बरान इस ठीक को डोते-डोते। मियाँ की बीड़ मसखिर तक। मुंशी जी ने फ़ौरन ६ नवंबर १९१९ को एक छत निमम साहब के पास भेजा। लेकिन बात कुछ बनी नहीं तो २१ दिसम्बर को जम्होने लिखा — मैं डी ए.बी. कमेटी के फ़ैसले का मुस्तबिर हूँ। मापूसी की कोई बात नहीं है। अगर मारवाड़ी स्कूल में इसकी पुंवाइध हो तो आप यहाँ भी मेरी तबबीज करने की तकसीफ उठाइए। किसी तरह यका छूने। उसमा निमा मुनिबसिटी से लेकर मारवाड़ी स्कूल तक कुछ हो। बस सरकारी स्कूल न हो। यह गुलामी अब सही नहीं जाती अगर क्या करे बालबच्चेदार जाबनी है यों ही कैसे कद पड़े माय में। अकेला होता तो एक बार चाहे कूर भी पढ़ता सबको कैसे शोक है अपने साथ।

हर तरह हाब-पैर मारते हैं अगर कुछ होता नहीं दिखायी देता। मारवाड़ी स्कूल में हेडमास्टरी की बयह नहीं खाली या। ही बसिस्टेंट टीचरी मिल सकती थी तनस्वाह असबता कुछ बढ़ाई जा सकती है। मुंशी जी ने १८ फरवरी तन् २ को लिखा —

मारवाड़ी स्कूल की बसिस्टेंट टीचरी मुझे मंजूर नहीं स्वाह फिलती ही तनस्वाह मिले। बड़ी हाकत तो यहाँ भी है। यहाँ फुसंत बहुत स्वादा है। हेड मास्टर निहायत माकक। कहेना तो हेडमास्टरी और बसिस्टेंट ख्या हो तो बड़ी बड़े मजे में हूँ। मुझे यहाँ मय मकान के १२ मिलते हैं। इस लिहाज से भी कोई अयबा नहीं है। इसलिए स्वाहमस्वाह क्यों डाबाडोस हूँ।

निश्चय अभी नहीं है। लिखड़ी मन में पक ही रही है। इसीलिए इतना सब हिसाब-किताब नुस रहा है। सब अपने मन के बहुलाने के लिए, टहलाने के लिए। बस जम भड़ी का इंतजार है जब बात मन में पक्की हो जायगी। तब तक यही संकल्प बिकस्य जालेगा। लेकिन सब बात यह है कि अब पैर नहीं मिलता इस गौकरी में। पित्रे से आजाद होने के लिए तबीयत छटपटाती रहती है।

और इस छटपटाहट में जैसा कि हर बार होता आया है तबीयत बतबार और प्रस की तरह भागती है फिर हिचक पाती है और फिर भागती है। अबब एक उमसज है जो हम मास्टर और लेखक की जिन्दगी में बार-बार उभरता रहा है लेकिन हर बार मन डोक-डोककर भी नहीं डोकता! मन का यह तर्पण बड़ी सबसूरती से इन्ही दिनों की दो कहानिया में उभरकर आया है।



शिबराजी प्रसन्न १९९२





बाद में एक टर्नमेंट स्कूल में पढ़ित जा जब-जब अपना विषय एक हेतु  
 वाणिज्यिक और कबहुत क एक निरहिनकीय से कर्ण है तब-तब इस नाम  
 का एक है—वहाँ "नर एन और टाट-बाट और वहाँ मरी कर्णो रणिनी।  
 कर्ण एक बार जब तीनों मित्र तोपचावा के लिए अयोध्याजी जाते हैं तब एक  
 और बीना-बीसी कुण्ड उन लोगों की हाथी है और डूमरी भार जैनी भावभयत पंडित  
 की की होती है उस देलकर पंडित जो की मालि युक्त जाती है और वह फिर किसी  
 दूसरे महकमे में जान की कामिया नहीं करते। वही बोध है। बोध माने ज्ञान।  
 बाद मान मानना तमस्वी मनकुमार। डूमरी कहाता बाद मर मय यानी  
 मरने क बाद है जो उर्ध्व क महादूर सायर कब-कब क संपादन में निरकमेवाले  
 मानिक मुबहू उम्मीद के अमस्त-मिडबर १९२ के अंक में छपी। हिन्दी में  
 इसका नाम मूल्य क पीछ है जो कि भ्रामक है।

अपनी पत्नी मानकी के बहुत विरोध करने पर भी ईश्वरचर सब कुछ छोड़  
 छोड़कर एक पत्र का संपादन करने लगते हैं। बहुत सख्त माय से वह हर तकमीक  
 और मुनीबत उठाकर छत्तीस साल तक यह देखासेवा करते है। मर्ण एरबयं तो  
 हुए की बात है, मान-प्रतिष्ठा भी उन्हें अपने जीवन-कास में नहीं मिलती। मरने के  
 बाद उनकी मूर्तिमा स्थापित होती है स्मारक बनते हैं देवना की तरह पूजा होती है।

और तब मानकी की समझ में आता है कि देखासेवा का सच्चा पुरस्कार कब  
 और कैसे मिलता है और वह अपने बेटे कृष्णचन्द्र को प्रेरित करती है कि वह अपनी  
 पुर्जावार बकायत को छोड़कर अपने पिता का रास्ता पकड़े। कोई बात नहीं अमर  
 हमम गयीही है तकमीक है।

बहुत रोब तक ता मुनीजी ने इस उम्मीद को पाला कि मुझी बपालरायन के  
 मान काम करने की कोई सबीस निकल आयेगी। अमर जब वह क निरम सरी तो  
 उनके सामे में गया प्रम कायम करने का सपाक माया और इन्हीं सब बाणा को  
 मरुतबर रनते हुए मुनीजी ने १९ मार्च को उन्हें लिखा—

अन्धकारकीसी की तरवुहुदात की बर्णित का प्रयास मारे शमठा है।  
 मास्ट्री में वह मर्णिए घोहरत क सही रोबी तो बसनी है। अमर जानपुत्र भा  
 पया तो हम और आप मिलकर कुछ काम कर सकेंगे। बनी इतकी और क्या मुक्त  
 है। महतावरय कसकत के उस छापेदाने म त्रिमके मानिक मर शान्त मिष्टर  
 पोहार क मनेजर है। माहवार पाते हैं और पोहार का इरादा है कि उम्ह नर मं  
 कुछ हिम्मा भी दे दें। बहुत फासले क और उन्हें वही हर तरह भागम है।  
 हम मार्ग का छापादाना कायम होगा ता उम्ह यही बसा सेंगा। वह काम से  
 सब वाकिफ हो गये है।

वह सब ठीक है लेकिन निगम साहब क्यावा बुनियादार बाबगी है, ऐसी सब स्क्रीमों के बनकर में बल्की नहीं पड़ते। फूँक-फूँककर कर्म रलते हैं और सब तो यह है कि अपने बोस्त को भी वह प्रेस बोलने की राय नहीं देते। उनका मिजाज बुरा है प्रेस बोलकर मुसीबत में पड़ जायेंगे। मैं तक तो रो रहा हूँ प्रेस के नाम को !

मगर यह भी सब है कि मुखरिती तरीक की साइन नहीं है।

आखिरकार मुँशी जी ने झुंझकार २४ अप्रैल १९१९ को बी ए का इम्तहान इमाहाबाद से देकर योरखपुर लौटने पर जब कि बसियाबाबा पास के हत्याकाण्ड को बनी सिर्फ़ बस रोख हुए थे निगम साहब को सिखा —

आप फरमाते हैं तुम्हारी लाइन यह नहीं है। मैं तयसीम करता हूँ। मगर बारा क्या है? मैं कुर्बानी को अपनी बात तक रखना चाहता हूँ क्यास को इस बन्की में पीसना नहीं चाहता। फ़िल्हास मेरी रोटियाँ मिस्की जाती हैं। कुछ सिट रेरी नाम कर लेता हूँ। यह कुर्बानी है। बुबा और बुनियाए र्बू जीम और बात दोनों को साथ किये हुए हूँ। मैं सिटरेरी काम को बोडी कुर्बानी नहीं समझता। जो शम्स अपनी अकलू आमदनी का एक हिस्सा किसी मबरते के लिए ख़रच कर देता है वह हमारी कुर्बानी का सही अंदाजा नहीं कर सकता जो अपने ऊपर सोना तक हराम कर लेती है। आपने मेरे लिए कोई ऐसी तजवीज नहीं निकाली जिसमें फ़िल्मे-ममाश<sup>१</sup> से आकार होकर मैं ज़िन्दगी काटता। मैं सब कर चुका कि इससे क्यावा नपसकुशी<sup>२</sup> मेरे हमकाम से बाहर है। और आपने जब कभी कोई तजवीज की तो नहीं हवाई। आकाशी। आकाशी मबाश से मुझे इत्मीमान नहीं होता। बहरियात के लिए मुस्तफ़िस सूरत चाहिए, तफ़्तफ़ात के छिप आकाशी सूरत हो तो मुजायका नहीं। मुझे फ़िल्हास ही अपने मिल जाते हैं। मगर साल में एक नाबिल सिक्कू तो घायब बार पाँच ही अपने और मिल जायें। इस तरह से मैं अपने पसमादयात<sup>३</sup> के लिए इस साल में घायब बार-पाँच हजार रुपये छोड़ सकूँ। बसवारी ज़िन्दगी में किम इबर तो फ़िल्म और शंसट उस पर पचास-साठ रुपये से घायब कोई बेनकासा नहीं। अभी हमारे यहाँ वह जमाना नहीं आया कि बर्नसियम को Career बनाया जा सके। आप सीडर की तरह कोई कम्पनी कायम करें। वह माहवार रिमासा रोबाना बसवार निकाले। कारकुमों को माकूल तनदबाह दे। तक बैकिए मैं कितनी मुसी से बीड़ता हूँ। मगर यहाँ तो यह हाल है कि अबब बसवार भी प्रेजुएट मुतरजिजम<sup>४</sup> ललाध करता है तो उसकी तनदबाह भी रयम बतधाता है।

१ जीविका की बिम्ता

२ मायबकिशान

३ बाल-बन्धों

मैं अगर इन्तहान में पास हो गया तो किसी एग्जैम्प्लु में (१२५) का हेडमास्टर हो जाऊँगा। वहाँ योद्य एमक्रियत में बैठना हुआ अपना इसम मियता चूँगा। साल में एक डिस्टा जरूर मिलत बाँधूँगा। यही कौमी खियमत होगी। मजामीन जो इसम से निकलने बहु नौ खियमत ही के मय में बालिए। अगर आप इससे बेहतर कोई सूख मिकाल सकते हैं तो मैं हाजिर हूँ वना मुझे अपने दरें पर बलने बीबिए। क्या हीतया बलवार और बिटरेयी काम का हो। प्रेमपबीसी हिस्सा बज्जल को छुए हुए बार साल हुए मगर बनी तक निस्सु' पड़ी हुई है। हिस्सा बाम की मुचकिल से १५० मिलें बिकी। मैं इससे बेहतर नहीं मिल सकता।

बहत्हाल कहीं कुछ न हुआ और इसी हैस-बैस में बिन्दयी मुजरती रही। तभी मुँगी जी के मये दोस्त इन्तपाज बली तान न लाहीर से उनको मिला कि बलिए अबकी यमियों में मजूरी की सीर की जाय। कहीं जाने-जाने के नाम से मुगीजी की जान पर बनती थी। एक तो यों ही घर छोड़कर यहाँ-वहाँ फिरने का ब्याज काड़ी तकलीफदेह का मिजाज ही मुमकक न का बुरदे सेहत का खयाल करके और भी बर मालम होता का छत्र में खाने-पीने का क्या ठिकाना जो मिसे धामो घर की-सी सतुल्लें कहीं। मगर इन सबसे बलग एक बात थी जो अक्सर पीरों को बाँध देती थी— मैं तो पहाड़ की हवा लाऊँ और घर के बाड़ी लोग यहीं में मुँगे! सबको लेकर जाने की मुगत नहीं।

सेकिम जब इस बार तान साहब ने दाबत दी तो जी लरुषा गया। मेहनत भी मिछने एक साल में बहुत सट्ट पड़ी थी सेहत को उसका कुछ बरका भी लया था। और फिर एक बड़ी फिताब अभी लिबकर छाम की थी इसकी सुपी भी थी। तान से मिलने की तमना बहुत रोब से जी में थी ही। इतने पर भी अगर मन में कोई हिचक थी तो उसे पली ने अपनी तरफ से पोड़ी जबरैस्ती करके दूर कर लिया— यहीनों से इनी तरह बैठे-बैठे आप काम करते रहे हैं। जाइए बूम जाइए तबी-यत कुछ बहल जायगी। सेहत के लिए भी बाल्लों का कहना है, पहाड़ की हवा बहुत अच्छी होती है। मिहाबा मुँगीजी ने हामी मर बी। सेकिम उस तरफ से फिर को लबर न आयी। २४ मास १९२ को मुँगीजी ने उनको बिन्हा— मजूरी बलने की दाबत ही थी। मैं तैयार हूँ मगर आप दाबत करके मूल गय। जम्ब ईमया बौबिए ताकि उपर में मायुमी हो तो मैं देहखून जाने का इच्छा कर लं। उपर से मायुमी रही और मुगीजी अपने इच्छे न बमूजिब घर से निकल पड़। फिर जो कुछ हुआ उसकी मुत्तसर-ची दास्ताम ६ मून के उनक बो लर्गों में है वा

उन्होंने देहरादून से ताज और निगम छाहब को भेजे। मजमून दोनों का बहुत कुछ एक है। ताज को उन्होंने सिखा — मैं आज कनकल श्रुतिकेय बगीरह का सऊर करता हुआ देहरादून आ पहुँचा। आप इधर आने का सयास रखते हों तो बराहैकरम मुझे मुक्तका करमाएँ ताकि आपका इन्तजार कर्कें बर्ना मैं बहुत जल्द यहाँ से बका जाऊँगा। मेरी तबीयत बीरामे सऊर में स्याबा साराब हा मयी है। आया था कि हरिहार की भावहवासे कुछ प्रायबा होगा सेफिन मतीबा इसका चलना हुआ। वेचिसा ने जिथसे मेरा पुरानी दोस्ती है बहुत बिड कर रसा है।

निगम साहज से भी उन्होंने सख्त तकलीऊँ का रोना रोया और सिखा कि मैं बहुत जल्द यहाँ से भागने का कसब रखता हूँ।

कौटो बन्त दिल्ली आगरा होते हुए मुसी भी २४ जून को पारबपुर पहुँचे और आठे ही आठे छोटा बच्चा बीमार हो गया। आजकल इसी परेधानी में हूँ।

यह परेधानी मामूली न थी एक बड़े सवमे की तैयारी थी।

५ जुलाई को प्रेमचंद ने सिखा —

ताज रात को मुस पर एक सानिहा गुबरा। मरीब मुझू मेरा छोटा बच्चा इसाहाबाद से आकर बेचक में मुबतिका हो गया था। उसने नौ दिन तक मरीब को मुका-मुकारर आडिर जान ही सेकर छोड़ा।

म्यारह महीमे का होकर नहीं रहा। इसरा कडका था यह मुसीबी का जो पहले के तीव्र बरस बाब गोरबपुर में ही हुआ था। बड़ा कष्ट भोगा बेचारे ने। कासी बेचक भी जो मीठ का दूसरा माम है। मजली की तरह तइपता था बिस्तर में। बेसा नहीं जाता था।

दाने बेसकर ही माँ-बाप का बिस् बँठ गया था और मुसीबी ने मरिये हुए बसे से कहा था — तुम्हारा यह सड़का बचता नहीं मामूम होता।

म्यारहवें दिन सड़का ठग्रा होने लया। फिर डाक्टर आया। उसने कहा सब कीजिए।

● जब उन्होंने रोते बेसा ता मेरा हाथ पकड़कर वहाँ से उठ्य साबे और मुससे बोले — क्यों रस्ती हा? क्या मुज उससे तुम्हें सिखा? म्यारह ही महीना जिन्दा रहा उस पर भी बराबर बीमार। मैं तो जिन्दा ही हूँ। असल में मैं ही तुम्हारा हूँ।

उस दिन रात मर मुझे पकड़ बैठे रहे। मुबह जब उसकी काम बली बपी तो उसके सारे सामान जसबा दिये। फिर सारे कमरे को फिनाइम से दुसबाया उसक बाह वहाँ पर हवन करया। फिर उस कमरे में नौ महीन तक ठामा पड़ा रहा। उन्होंने अपने हाथ से कमरा बन्द कर ठामी बाहर फेंक दी। ●

बीबी की हास्य पायलों वैसे ही रही थी। उसका अपना बिल घान्त था —  
लेकिन कितना घान्त ! तबदीर ने तो अपनी दानिस्त में मझे सजा ही होगी  
लेकिन मैं खुद हूँ कि किशों का बाबा बोस सर से दूर हो गया।

कितनी गहरी ब्यथा बोल रही है इन तीन शब्दों में — मैं खुद हूँ ! बाग्यम  
बियाण की इसी परत को एक दूसरे सम्पर्क में उठाने खोला बरबन दस बरब बार  
अपनी एक कहानी पूस की रात में — कि जैसे एक पतली-सी नित्सी हो पतली  
की और उसे असय करते ही कच्चा जन्म लच्छलसा आये —

● दोनों फिर खेत की बाँट पर आये देखा सारा खेत रीसा पड़ा हुआ है और  
बबरा मईया के नीचे बिल डेटा है मानों प्राण ही न हों।  
दोनों खेत की बया देख रहे थे। मुझी के मुख पर उदामी छावी थी। पर  
हस्क प्रमथ था।

मुझी ने चिठित होकर कहा — अब मजूरी करके मालगुजारी भरनी पड़गी।  
हस्कु ने प्रसन्न मुख से कहा — रात की ठण्डी में यहाँ सोना तो न पड्या। ●

बिच दिन बच्चा नहीं रहा उस दिन मुंजीजी ने लिखा — मैं खुद हूँ। उँ

बाईस रोड बार ताज साहब को लिखा — छोटा बच्चा बचक में मुफला  
गया और हमेना के लिए बाय दे गया। अभी तक इन राम से लबीयत को जिजा  
नहीं हुई। मज तो हो गया मगर बार बाकी है और पापर ठाबीला रहेगी। इ  
अपने बामाल का गठीना समझता हूँ और क्या। जब तक दिन न सौमके मजमू  
वहाँ न आये। अठो का जबाब देना भी शाऊँ है।

और वह खुद बीमार पड़े। प्रेमासय की कड़ी देहजन। एक महीने के सतर  
ही बचान दुपथ्य। देखिय जड़ से तो पयी न थी फिर उमड़ आयी। और  
अब यह बच्चे का घोर। मुपकित था इतने सब बचकों का सह सकना। मुंजीजी  
ने शाट पकड़ ली।

पोहार का आना-जाना क्या ही रहता था। प्राइविक चिचिस्ता में उनकी  
बचि वमी से है। उन्होंने मुंजीजी को सलाह दी कि आप अल-चिचिस्ता करें, इसम  
आनको जरूर आधम होया। और भी दो-एक दोस्तों ने राय दी खुद भी मुंजीजी  
का मुबार जम तरफ को जा। एलोदीपी से बहुत परबतने थे। जहाँ तक बनना था  
उतने बचते थे। उसको छोडकर बाकी तीनों इलाज टीक से अर्न जिनका अण्डा  
पानरार मिल जाय हबीम मिल गया तो हबीम बीच मिल गया तो बीच हामिने-

पैस मिल गया तो होमियोपैथ। सब पर बराबर विश्वास था उनको नहीं था किसी पर तो एलोपैथी पर।

टब-स्नान के बारे में कई कूने की और ऐसी ही बने-एक किताबें उन्होंने भी पढ़ी थीं। सिहाबा जब पोद्दारजी ने बख्त-बिक्रिस्ता की सलाह दी तो यह उनके अपने मन की बात थी। और टब-बन बाजार से आया और बख्त-बिक्रिस्ता शुरू हुई। लेकिन उसकी सेवन-विधि उससे कुछ ब्यादा टेढ़ी है बितनी कि ऊपर से जान पड़ती है। कहीं कुछ सज्जी हो गयी। फिर क्या हुआ यह खुद मुंजीजी से सुनिए —

● तीन बार महीने के स्नान और पथ्य का मेरे दुर्मात्म से यह परिचय हुआ कि मेरा पेट बड़ गया और मुझे पस्ता बचने में भी दुर्बलता भासने लगी। एक बार कई मिर्चों के साथ मुझे एक डीने पर बड़ने का बखतर पड़ा। और डोय बड़ बढ़ात हुए चले गये पर मेरे पाँव ही न चले थे। बड़ी मुश्किल से हाथों का सहाय लेते हुए ऊपर पहुँचा। समझ गया जब थोड़े दिनों का और मेहमान हूँ। बख्त-बिक्रिस्ता बन्द कर दी।

एक दिन संध्या समय उर्दू बाजार में श्री बखतरप्रसादजी द्विवेदी संपादक स्वदेश से मेरी भेंट हो गयी। कभी-कभी उनसे भी साहित्य-बर्षा होती रहती थी। उन्होंने मेरी पीछी सूरत देखकर बेच के साथ कहा — बाबूजी आप तो विस्तृत पीछे पड़ गये हैं कोई इलाज कराइए।

मुझे अपनी बीमारी का जिक्र कुछ लगता था। मैं पूछ जाता था कि मैं बीमार हूँ। जब बने-बार महीने ही का जिक्रगी से जाता है तो क्यों न ईश्वर मर्से। मैंने चिड़कर कहा — मर ही तो जाऊँगा भई, या और कुछ। मैं मीठ का स्वागत करने को तैयार हूँ। ●

और इसी तैयारी में उन्होंने एक रोख पत्नी को बुलाकर बैंक की पाठबुक उनके हाथ में देते हुए कुछ मर्राई आबाब में कहा था — वे जो रानी इसमें तीन हजार रुपये हैं और तीन तुम हो। मेरी जिक्रगी मर की कमाई

लेकिन मरमा आसान नहीं है। चाखीठ साल की उम्र में जब कि जमी बिल में बहुत कुछ सिन्धने-करने के हीसके बाकी हैं।

बिड़बिड़पन अकबता बेहद बढ़ गया था जो कि इन्तहाई कमजोरी की निशानी थी।

जो व्यक्ति मारता तो बुर की बात है, बच्चों को कमी डालता ठक न था उसने इन्हीं दिनों एक रोख अपने बड़े सड़के को बुटी तरह माघ हुस्क की निवाधी स। सर पर जैसे मूठ सवार हा गया था। और बात क्या थी? सिर्फ इतनी कि एक रोख सड़का एक पैसा लेकर बाजार गया स्टेट की वैधिल जाने। मुंजीजी उसको पढ़ाने बैठे

तो यह बात सुनी कि पेंसिल तो नहीं आयी। अब क्या था मुसीबो भागबतुला हो गये और छप उससे बिगड़ करन कि पेंसिल क्यों नहीं आयी? और वह पैसा नहीं गया। परछ तो दो-एक साफ़ रसीद किये मगर उतनस भी जो नहीं मरा तो जाकर अपने हुकमे की निगामी निजाल लाये। लड़के की जवान यों ही डर के मारे नहीं सुक रही थी हुकमे की निगामी देखी तो पिगबी बँय गयी। और मुसीबी के कि उसके मुँह से जबाब निकलवाने की पैसी इसम आती थी। जितना ही मारते थे मुस्सा उतना ही और बढ़ता था। मगर लड़का नी एक ही जिरी था उसने मुँह नहीं खाला तो नहीं खोला।

— यह था कि रास्ते में नहीं फिर गया।  
बुप।

— यह दो कि किमी को दे दिया।  
बुप।

— यह दो कि बाजार में कुछ लेकर सा लिया।  
बुप।

निगामी उस रात्र टट कैसे नहीं गयो यही ताजबुह है। मरिन किमकी मजाल थी कि इन मुसकी हालत म उनका हाथ जाकर पकड़ से। तो भी एक बिन्दु भावा जहाँ माँ से और न देवा गा और उग्होमि भाये बन्दर जैसे-जैसे बच्च की रखा की। इन्हीं निनों बेटी को भी एक बार हुम्नी-सी मार पड़ी — बिलकुल मकारप मगर उसके पीछ बिड़बिड़न से जवाग पावर बरपहट थी।

स्ूस के अहाजे में ही एक पुपना कच्चा हुआ था। कुर्मा मड गया था लेकिन तब भी बोझ पानी था। खेपडे-खाकडे न जाने कैसे बेटी और मुपू उस हुए पर जा पहुँचे। कुर्मा साँवने का पीछ बच्चो को होठा ही है, बमु साहब न जो साँवन की कोपिय की तो मगप से उस अन्दर! और जो बिल्पाय ठा बटी ने भाव देना न ताक वह भी बुर पड़ी! सीमाप्य से रास्ता बिन्दुस पूना न था और भी स्थिती ने यह बूय देन लिया। घोर-मुस मचा और बानों को निजाला गया। बच्चों को लिये हुए अब लोग मास्टर माह्र के पर पहुँचे ठा मास्टर साहब ने मरम पहले बेटी की भावमगन की कि तू उधर गयी तो क्यों पयी! बेटी ने अपनी मजार् में कुछ कहना चाहा लेकिन बाबू जी कुछ भी सुनने को तैयार न थ — बाप-बाप बने जात्र नहीं घर का सजाया था!

अन्ना मरीर दुर्बल हो रहा था पर देग में हलचल थी। बीमार का बदन न था। उठना चाहिए दीनस में साबार होकर। इ



पैस मिळ गया तो होमियोपैस। सब पर बापवर बिस्वास था उनको नहीं था किसी पर हा एसोनेषी पर।

टब-स्नान के बारे में कई कूने की और एसी ही बो-एक किताबें उम्होंने भी पढ़ी थीं। सिहाबा अब पोद्दारजी ने बल-बिक्रिया की सलाह दी तो यह उनके अपने मन की बात थी। क्रौरव टब-बब बाजार से आया और बल-बिक्रिया शुरू हुई। लेकिन उसकी सेबन-बिचि उससे कुछ ज्यादा टेढ़ी है जितनी कि ऊपर से जान पड़ती है। कहीं कुछ छपती हो गयी। फिर क्या हुआ यह बुध मुंशीजी से सुनिए —

● तीन बार महीने के स्नान और पध्व का भरे दुर्भाग्य से यह परिणाम हुआ कि मेरा पेट बड़ गया और मुझे रास्ता चलने में भी दुर्बलता मामूम होने लगी। एक बार कई मित्रों के साथ मुझे एक बीने पर बड़ने का बबसर पड़ा। और कोय बड़-बड़ाते हुए बले गये पर भरे पाँव ही न उल्ले थे। बड़ी मुसकिल से हाथों का सहाय लेते हुए ऊपर पहुँचा। समझ गया अब बोड़े बिनो का और मेहमान हूँ। बल-बिक्रिया बन्द कर दी।

एक दिन संभ्या समय जब बाजार में थी बघारनप्रसादजी द्विनेषी संपादन स्वदेश से मेरी भेंट हो गयी। कभी-कभी उनसे भी साहित्य बर्न होती रहती थी। उम्होंने मेरी पीछी सुरत देखकर वेर के साथ कहा — बाबूजी आप तो बिस्तुत पीके पड़ गये हैं, कोई इलाज कपाइए।

मुझे अपनी बीमारी का बिक बुध समता था। मैं भूख जाना चाहता था कि मैं बीमार हूँ। अब बो-बार महीन ही का बिन्दगी से नाता है तो क्यों न हँसकर मर्के। मैंने बिककर कहा — मर ही ठा जाऊँगा भई, या और कुछ। मैं मीठ का स्वास्त करने को तैयार हूँ। ●

और इसी तैयारी में उम्होंने एक रोड पत्नी को बुलाकर बैक की पासदुक उनके हाथ में देते हुए कुछ मर्चाई आजाब में कहा था — ये लो रानी इसमें तीग हजारा खन है और तीन तुम हो! मेरी बित्पयी मर की कमाई

लेकिन मरना आसान नहीं है, वालीस छाल की उन्न में अब कि अभी दिव में बहुत कुछ लिखने-करने के हँससे बाकी हों।

बिड़बिड़ापन अलबता बेहद बड़ गया था जो कि इन्तहाई कमबोरी की निशानी थी।

जो ब्यक्ति मारना तो दूर की बात है बच्चों को कभी बँटठा तक न था उसने इन्हीं दिनों एक रोड अपने बड़े कड़क को बुटी रख माघ हुक्के की निगाली स। सर पर पीसे भूख सवार हो गया था। और बात क्या थी? सिर्फ़ इतनी कि एक रोड मर्का एक पीठा सैकर बाजार मवा स्टेट की पँसब आने। मुंशीजी उसको पढ़ाने बैठे

तो यह बात खुसी कि पेंसिल तो नहीं आयी। अब क्या था मुसीबी भागवतूला हो गये और कपे उसस जिन्हें करने कि पेंसिल क्यों नहीं आयी? और वह पैसा नहीं पया। पहले तो वो-एक हाथि रसीद किम मपर उतने से भी जी नहीं मप तो पाकर अपने हुकटे को निपासी निकाल जाये। रुकटे की बचाम या ही डर के मारे नहीं बुझ रही थी हुकट की निपासी देखी तो भिन्नी बँक गयी। और मुपीजी के कि उसके मुँह से अबाब निकलवाने की जैसी इसम खा की थी। जितना ही माछे से गुस्सा उठता ही और बढ़ता था। मपर लड़का भी एक ही जिही था उसने मुँह नहीं घासा तो नहीं घासा।

—वह दो कि रास्ते में नहीं गिर गया।

बुप।

—वह दो कि किन्नी को दे लिया।

बुप।

—वह दो कि बाजार में कुछ लेकर जा किया।

बुप।

निपासी उस टोंड टूट जैसे नहीं गयी यही वास्तव है। लेकिन किमकी मजा भी कि इस गुस्सेकी हालत में उनका हाथ जाकर पकड़ ले। तो भी एक बिन्दु मात्र जहाँ भी से और न देला गया और उम्होंने जामे बन्द कर जैसे-जैसे बचक की रजा की। इन्हीं दिनों बेटी को भी एक बार हुस्की-सी मार पड़ी—बिस्कुल अकारम मपर उसके पीछ बिड़बिड़गन स समान घायल बबराहट थी। स्कूल के अहाले में ही एक पुराना कच्चा कुर्मा था। कुर्मा भठ मया था लकिन ठब भी घोड़ा पानी था। बेतक-खाकने न जाने कैसे बेटी और बुन्द उस कुर्मे पर जा पहुँचे। कुर्मा झोकने का घौक बच्चों को होगा ही है, मनु साहब ने जो झिनन की बोधिय की तो मझाप स उसक अन्दर! और जो बिल्याय तो बेटी ने आव देता न ठाव वह भी बूब पड़ी। सीमान्य स रास्ता बिस्कुल मूना न था और भी किमी ने यह दृश्य देख लिया। पोर-मुल मचा और दोनों को निवाला मया। बच्चों को लिने हुए जब लोग मास्टर साहब के घर पहुँचे तो मास्टर साहब ने सबस पहले बेटी की आबमपन की कि नु उपर लयी तो क्यों गयी! बेटी ने अपनी मज्दारी में कुछ बहना चाहा लकिन बापू जी कुछ भी मुनने को तैयार न थे—बात-बात बने आम नहीं पर का सझाया था!

मला गरीर दुर्बल हा रजा था पर देग में हुकबल थी। सीमापी लेकर बैठने का बरत न था। उरला बाहिए मँगन में आबाद होकर। इसी बीच एक बार

अंग्रेजी में एम ए करने का लक्ष्य भी था। २९ अगस्त १९२२ को उन्होंने  
 ठाण को लिखा — अब आपको विनायत जाने का मौक़ा है तो इससे फ़ायदा  
 न उठाना अपने आप और कौम पर पुष्प करना है। यह उम्र के दो-चार साल  
 निकल जायेंगे तो मेरी तरह आपको भी पछताना पड़ेगा। काष्ठ में अवायत  
 लक्ष में एम ए० पास कर लिया होता तो यह कस-नपुर्सी की हाकत न होती।  
 बर्ता यह जमाना फ़साना-निपारी के नजर हुआ और अब अक़रों जिन्दी के लिए  
 मजबूर करती है। लेकिन दो ही महीने बाद विचार बदल गया और उन्होंने  
 १२ नवम्बर १९२० के अपने ख़त में नियम साहब को लिखा — एम ए का  
 इरादा तर्क कर दिया। चाकीम-वचाठ रुपये फ़िस्तानों में सँकू हुए। कुछ ख़ेतर पर  
 देख लिया। तसदीक़ हो गयी।

साथब बेकार मामूम हुआ इतनी सब मेहनत करना। मुल्क का अब कुछ  
 घुसरा ही रहा था। कैरिम बनाने का लक्ष्य जो भी ए के दो हुक़म अपने नाम  
 के साथ जोड़ने के पीछे था वैक़लत और बेमहक़ मामूम हुआ।

अब तो प्रस ख़रीदने पर भी जाता हुआ था। बड़ी पुरानी इच्छा थी। अब  
 न क्या प्रस तो फिर क्या करोगे? फिर तो यह बस अपने पैर का बंधा होकर रह  
 जायगा। अभी करोगे तो आबादी के साथ रोखी भी ज़सेयी और कुछ देखसेना भी  
 हो जायगी। महताब राय कक़ले में जिस प्रस में काम कर रहे थे वह बिक रहा  
 था और उनका इरादा नये ख़रीदारों के साथ छीक़ हो जाने का था। लेकिन उनके  
 पास पैसे कहीं थे। उन्होंने मुंशीजी को लिखा। मुंशीजी प्रेरण रखी हो गये।  
 लेकिन पैसे अपने पास भी कुछ कम पड़े थे। उसकी वक़त बीछने लये।

२६ अगस्त १९२० को ताज साहब को लिखा —

मैंने कक़ले के एक हिन्दी प्रस में शिरक़त कर ली है। ग्वाल्हा बाग़ा मेरे  
 एक दोस्त का होया और पाँच आना येरा। मुझे अपने हिस्से के रुपों की ज़िक़  
 करनी है। अगर काम बस गया तो यायब बचाव-साठ रुपये माहवार का ख़ायद  
 हो सके। अगर आपको तरह-तुद न हो तो सितम्बर में हिस्सा तब करवा बीचिएगा।

२ अक्टूबर को नियम साहब को लिखा —

मैंने कक़ले के प्रस में अरब-जग़ का लाना कर लिया। ५० ) देने  
 पड़े। इस वक़त अगर आपकी माकी हाक़त ख़राब न हो तो आप कुछ मेरी अवायत  
 करवाइए। मुझ इस वक़त २० ) की अघब अक़रत है। यह रक़म मुझे बगीर  
 ई दे सकें तो एन एलान समझीना।

लेकिन इसमें एक पंख पड़ गया। एक रोज मुन्गीजी की पत्नी पूछ बैठी—  
 सपने देने का ढंग कैसा है? प्रस फिल्ल घर्तों पर ठीक होया?  
 मुन्गीजी बोले—घर्त क्या! अरे, प्रेस रखेया जो ठुछ मुनाफ़ा होगा  
 मुम्हें भी देया।

पत्नी बोलीं—इन घर्तों पर सपया देना ठीक नहीं। ईं पुसू के नाम से प्रस  
 करीया जाय वह काम करनेवाले रहें।  
 कैसी बात करती हो। वह झटका उठया!

तो फिर छोकिये ये सपये आपने नहीं आप अपने सपये दीजिए! सपये  
 मेरी ही घर्त पर आयेंगे।  
 और, मैं सिम्हा देया कि पुसू की माँ इस घर्त पर सपये देना चाहती है।

इस बात का बीजे रोज अबाब आया कि मेरी माँ यही हींयी हो रही है।  
 क्या आप हमारे ऊपर विश्वास नहीं करते? मेरे ही और कौन है, पुसू ही तो मेरे  
 माँ है। मेरे लिए बड़े अफ़सोस की बात है।

उस पढ़कर जग्होंने बीबी को गुना दिया और बोले—बड़ा पढ़कर हुआ।  
 पत्नी ने कहा—कोई गड़बड़ नहीं। मेरी राय ठीक है। मैं किसी के हाथ  
 नहीं होना चाहती। कोई काम हो अपनी बपहू होना चाहिए। मैं बहुतों को  
 'बुकी हूँ। आप आँखें बन्द करके बसते हैं मैं आँखें खोलकर बसती हूँ।  
 अच्छा बोलो इसका जबाब क्या मिलूँ?

मेरी तरफ़ से किसी कि अब तक कोई झूठका मेरे पास न था तक तुम्ही  
 सब कुछ थे। यह झूठका तुम्हारा भी है तब नाम रखना क्या बुच? तुम माँ  
 तुम माँ जानो सब बातें साफ़-साफ़ हो जायें। फिर सब तुम्हारे ही हाथ में था होया।  
 उतका तो यहूब नाम रहेया।

यही बात उन्होंने उसका डंक तोड़कर, बहुत नहीं से बहुत समझा-मुझाकर  
 'मस्तूबर' २ के अपने तबे बात में लिनी—

● तुम्हारा सब निम्हा। पढ़कर खुशी भी हुई कुछ रंज भी हुआ। खुशी इसलिए  
 हुई कि तुम्हारे दिम में बराबरपना मुहम्मत के ऐसे जैके माब मौजूद हैं रंज इसलिए  
 कि तुमने मेरी बातों का मंया प्रकत समझा। मैंने पोटारजी को जो बात लिखा है  
 उसमे मेरा मंया सिर्फ़ यही है कि मैं धीपतराय के नाम से साझा चाहता हूँ अपने  
 या तुम्हारे नाम से नहीं। हम और तुम अपनी छिक कर सकते हैं और बच्चे ही के  
 माइन्दा के घराल से यह सब इतबाम करने की छिकर है। इसलिए बही साझा  
 भी रहे। बूँकि तुम बही मौजूद हो और तुम्हारी नियरानी मे उसकी जायदाद रहेपी  
 इसलिए तुम बोया उतकी जायदाद के Trustee और Guardian हो। मैं

क्या अगर सब दया तुम्हीं देते तब भी मैं यही कहता कि साम्रा थीपठराय के नाम से हो क्योंकि मैं जानता हूँ कि तुम्हारे दिव में मेरे और मेरे बच्चों की निश्चय ऐसे ढँके जयापात हैं। मैं हमेशा तुम्हारी सभासतमें ही तारीफ़ किया करता हूँ। अगर मैं जानता कि तुम इस बात के कहने से इतने बद्गुमान हो जाओगे तो हरबिब न सिबता। अगर तुम्हारा बच्चा होता तो मैं इस सारी को अपने और तुम्हारे बच्चे दोनों ही के नाम से देता। और अगर ईश्वर ने बिन्बनी बाकी रखी तो मैं इसे साबित करूँगा। हूँ एक बात बकर है, चूँकि मेरे घर में भी औरत है और तुम्हारे घर में भी औरत है मैं यह नहीं चाहता कि बच्चा न जास्ता अगर मेरी बिन्बनी बच्चा न करे तो औरतों में तानाबनी हो और एक दूसरे पर रोब या सज़ाी बठाये। मैं यह साक़ कर देता चाहता हूँ कि मैं अपने बच्चे के लिए जो कुछ करता हूँ वह सब अपनी झूठे बाबू से करता हूँ और उसकी पत्नी पर महब उसकी सार परस्ती और निगरानी का भार बाकना चाहता हूँ। महब तुम्हें इस बात का मौका देने के लिए कि तुम अपनी सभासतमें ही का इबहार कर सको मैं कसकते के कापे-वार में शरीक होने पर राजी हूँ हालाँकि मेरा बुरा से इरादा था कि तुम वनास रहते और वहीं खानदान को अपने साथ रखकर मुझे हर एक तिक़ से भाबाब कर देते। यहाँ ईशबाब में एक तास्तुक्रार प्रेस बिक रहा है। उसकी बाबत मैंने मुँधी गुरुहारी नाम को जिन्ता भी है।

एक और बात याप रखो। तुम्हारा दिव मैं जानता हूँ बहुत साक़ है। कनिन औरतों का दिव अक्सर तंग-जपाक होता है। तुम्हारी बीबी को शक्तिबन मासम हो कि तुम अपना इबर् से रहे हाँ महब इसलिए कि थीपठराय के नाम से प्रेस खरीबो तो वह इसे हरपिब पसान न करेगी। तुम सभासतमें ही से ब्याह सते बँटते रहो केकिन बहुत मुमकिन है कि इससे तुम्हारी आश्रित में मुशकिल पैदा हो और तुम्हारे घर में एक घर मथे। इन सब बातों का खयाल करके मैंने नहीं इरादा किया कि अपना सब मेरा हो जो मैंने अपनी मेहनत से बसूल किया हो। वह तुम्हारी निब-रानी में बच्चे के नाम से लया दिया जाने। गोवा तुम उसकी बापराब के दुस्ती रहो। और जब तुम भी साहसे औसाब हो जाओ — ईश्वर करे कि मैं वह मुबारक दिन देखूँ — तो हर एक जामराब में दोनों भाइयों की औसाबें बराबर हिस्तेदार हूँ दोनों के साप-साब नाम चडें। इसलिए तुम्हारे दिव में मेरे इस सत से खरा भी मासाक हो तो उसे निकाल जाओ •

तीन रोब बाब १ अक़ुबर की, मुँधीनी ने कसकते के प्रेस की बात की, जो सारे सनमुटाब का कारण बन रहा था सिरे से खत्म करते हुए सिपा —

• बाब फिर तुमसे कुछ मसबिरा करना चाहता हूँ। इसहरे में जा जाओ तो

सब बातें मुहम्मद तक ही जायें। यहाँ मेरे दोस्तों की और नीच बरवालों की चपकता में प्रेस करने की नहीं होती और मैं भी इसमें कोई खयाल प्रयत्न नहीं देता। पोद्दारजी ही के बयान के मुताबिक उसका सामाना मजरा १५ ) के करीब है। इस हिदायत से हम छोरों को बापे हिस्से पर ८ ०) सामाना मिले। पाँच हजार का मूँद सामाना ४५ ) होगा। गोमा कुल सामाना प्रयत्न १२ ) के करीब होगा। कुछ कम या ज्यादा होना भी मुमकिन है। क्या मपर हम लोग अपना जाती प्रेस पाँच हजार के दरमाये से बनारस में खोलें तो सौ खयाल माहवार क्या १२ ०) खयाल सामाना मुनाअब न होगा? मेरा खयाल है कि जरूर होगा। इससे कम किसी तरह नहीं हो सकता। यहाँ इससे छोटे-छोटे प्रेस जो दो-बड़ाई हजार से शुरू हुए हैं, सौ खयाल माहवार कमा रहे हैं। मैं यह चाहता हूँ कि गुप्त किसी नये प्रेस की उलास में रहो जिसमें टारप टूटल मशीन बरीरह सय सामाना मुकम्मल मौजूद हो। अगर सेकंडहैंड न मिल सके तो कलकत्ता की किसी प्रेस से नये सामान का आर्डर करो। बनारस में भी मुद्रण लगाया हूँ। यहाँ अभी हाल हजार से ज्यादा न होने पाये। बनारस में भी मुद्रण लगाया हूँ। यहाँ अभी हाल में ही दो आदमी बनारस से सामान लाये हैं और शुरू करवाए। ऊँडाबाद का वाल्मुकेश्वर प्रेस बंद रहा है। तीन हजार में सब सामान मिलता है। मुँगी मुक्त-हवाठीका से बर्जास्त किया है। बेवू क्या बनाव आया है। अब इसी इपदे को हवाठीका से बर्जास्त किया है। तुम्हारे कलकत्ता रहने से मुझे ऐसा मामूम होता है कि मैं बिलकुल मुस्तकिल समझो। तुम्हारे कलकत्ता रहने से मुझे ऐसा मामूम होती है। मेरी सेहत बकेता हूँ। मुझे हमेशा एक मजदवार की जरूरत मामूम होती है। मेरी सेहत कुछ अच्छी मामूम होती थी। लेकिन अब फिर ज्यो की एगो हो रही है। जल्द बिक्रिया से भी कोई प्रयत्न खयाल नहीं हुआ। ऐसी हालत में मेरी किसी आरजू यह है कि बनारस में तुम्हारे मुस्तकिल रहने का इंतजाम हो जाये ताकि गुप्त हर हालत में पर को संभाल सको। खुदा न चास्ता मैं न रहा तो तुम्हें कितनी मुगकिल पड़ेगी। गुप्त रहोये कलकत्ता मेरे बाल-बच्चे रहेंगे बनारस कुछ भी न हो सकेगा। ● यह तो तसबीर का बंधेप पहलू है, रोजग पहलू भी कुछ कम नहीं है, मौजा भर मिलना चाहिए मुँगीजी को उद्दान करने का— अब तुम्हें पाँच हजार रुपये मिल सकते हैं। उसकी जरूरत नहीं। मार्च अर्पक तक मपर प्रेस का इंतजाम हो जाये तो मैं जून में हम लोग मझान बरीरह केन्द्र बनारस में बस जायें। ऐसा मझान किया जाय कि उसम प्रेस भी रहे और गुप्त भी रहो। धरे बच्चे कभी बनारस रहें कभी मेरे साथ। पृथिवी में मैं भी बनारस

भाषा करके और कुछ तुम्हारी मदद किया करके। साल-छ महीने में सब काम सब निकले तो मकान बनवाना शुरू कर दिया जाय। तुम एक साइकिल के लो और अपनी निगरानी में मकान बनवाओ। इस तरह माइन्दा का इंतजाम पूरा हो जायगा और मुझे इतना ही बायेगा कि मैं कच्ची गृहस्त्री छोड़कर नहीं मरू। कानपुर में बयानपसल और राममरोसे मुझे शरीक करना चाहते हैं और बीस हजार से प्रेस खोल्ना चाहते हैं। लेकिन जब मैं बनारस के सिवा और अपने लिए पत्नी चुनीता नहीं पाता। बनारस में चाहे नफ़्त कुछ कम भी हो लेकिन मुझे मह इतना ही रहेगा कि मेरे बाद खानदान मुझे नहीं मरेगा और इच्छत क साप निबाह होता जायगा। यह भी मुमकिन है कि मैं बनारस तबाहका करूँ। सब तो चैन ही हो जायगा। हम दोनों साप रहेंगे और एक-दूसरे की मदद करते रहेंगे। जो कुछ अपने पास सया होमा वह कारबार बढ़ाने में खर्च करेंगे। और मुमकिन होगा तो बस-पाँच बीघा जमीन से ज़ेरी ताकि एक हल की खेती का भी आसानी से इंतजाम हो जाय। खाने को धस्ता पर पर हो जाय बीगर मसालिक के लिए प्रेस से मामबनी हो जाय।

दरहा में जामी प्रकर जामो इस बारे में और भी सचाह हो जायगी। लेकिन अब अपनी सेहत की हास्य देखते हुए मैं तुम्हारा कलकता रहना पसन्द नहीं कर सकता। अब तक प्रेस का इंतजाम न हो जाय तुम नौकरी करो। चाहे पोद्दार जी के प्रेस में चाहे किसी दूसरे प्रेस में। लेकिन अग्रेस में तुम्हें हमेशा के लिए कलकता छोड़ना पड़ेगा अगर गृहस्त्री और खानदान की तुम्हें छिन्न है। अब यही मेरा आखिरी फ़ैसला है, अब इसमें किसी किसम का ख़ोबबक नहीं करूँगा। तुम खुद इसका फ़ैसला कर सकते हो कि प्रेस के लिए गया सामान खरीदना बेहतर होगा या सेकंड-हैंड। क्या-क्या सामान बरकार होये। इस बारे में डिबिहान मुझे कोई सन्वर्षा नहीं है •

कहने की जरूरत नहीं कि इसके बाद कलकत्ते के प्रेस में साप्ता करने का फिर मयास न रह गया और २ अक्टूबर को मुंशीजी ने निपम साहब को लिखा — अब आप बेक न भर्ने क्योंकि कलकत्ते में साप्ता करने का दरवा पिटक हो गया है। पन्द्रह सौ भेज चुका था लेकिन अब ऐसी बातें हुईं जिनसे वह समीप तक करनी पड़ी। बरबस्त मुसाकत मुहस्तस बयान करेगा। अब आप ही की सचाह पक्की रखी यानी बनारस इलाहाबाद या कानपुर में प्रेस। छोटक यहाँ आ बने हैं और अब ग्रान्दिन् कलकत्ता न जायेंगे। बनारस में उन्हें सतर की पोस्ट जान-

मण्डलवासियों से आकर की है। वहीं चले हुए हैं। लेकिन कस मीने प्रयाप में लाइट प्रेस कानपुर के फ़ोटोस्ट होने का इस्तहार देया। क्यों न हम और आप मिलकर इस प्रेस को से लें। मेरे पास ४ ) है। मुमकिन है क्रिक करने से कुछ और बहन' पठूँ बाये। अगर आपको यह प्रेस काम का और बलता हुआ मामल हो तो उसके गुणगू कौनिए और कौमठ वगैरह तय करमाए। तब मुझे साटिम कौनिए टाकि मैं भी जा जाऊँ और मुमामला अपना हो जाय। तब छोटक को कानपुर छोड़ दूँ। वह मीनेजर रहे और आप सुपरवाइजर अगर मानरेयी। उसी रोज़ तब को छिता — हाँ मीने कलकत्ते में प्रस लेने का इच्छा तर्क कर दिया। दूर-दराज का मामला था। अब इसी मूने में इरादा है। कानपुर में एक प्रेस बिक रहा है। लाइट प्रेस नाम है। इसके गुणास्तिङ्ग खणे-छिताबत कर रहा हूँ। तब हो जाये तो लीकरी से मुस्तमझी हो जाऊँगा। अब यह तीङ्ग नहीं छटा जाता।

दिमाङ्ग जब एक ठरक सरपट भागता है तो फिर इपर उपर देवता-तापठा नहीं और सीध आकर धान पर ही रुकता है। छोटी से छोटी बात सोच दाकता है। बहुत प्रीकिङ्कल भादमी समझते हैं वह अपने आप को और इसमें धन नहीं कि काण्ड के पत्रे पर उनसे क्याया पक्की-पौड़ी स्कीम काई नहीं ठपार कर सक्ता! बदना से बदना बात का उन्हें लपास रूहता है स्कीम बनाते समय और जाइ-बाकी गुमा-भाग में सब कुछ ठीक। इतने पर भी अगर स्कीम कामयाब न हो तो इसमें उस सरीर का क्या सोच!

अब हम एक ही राय का उनके पास हर इस रोज़ पर उन्होंने नियम साहूब को लाइट प्रेस की याद दिसानी शुरू की। लेकिन नियम साहूब की तबीयत जिन्ने तरह उपर बढ़ती ही न थी — धायद इसटिए कि दूध क जने से और जान कि प्रस छोल सेना खितना आसान है उसको जमाना जतना आसान नहीं है। फिर होल के साथ साथ में बिबनेस करने क छतरों को समझते थे। लिहाजा : बघबर दाकते रहे और आधिरकार मुजी जी ने मजबूर होकर ११ निसंबर २ को निर्या — प्रेस का लपास अब धायक पया। मीने गवर्नमेण्ट के काण्डात में लग दिव। अब बीम रुपये साहूबार घर बैठे मिल जायेगी। रुपयों का बन्देबा नहीं। हाँ एक किन्ता बघबर जी को छा रही थी। प्रमबत्तीसी का दूमरा हिस्सा जो बार में प्रस में पया था दाख इयाभव पंजाब स छपरकर भा गया था और पकू हिस्से का अब तक नहीं पया न था। दो बरस के ऊपर हो गय था। साथ के

१ मिल जान

२ इस्तीफा दे देना



दुकान में ९ जनवरी को उन्हें एक बार काशी खीझकर लिखा था — बराह करम प्रवर्ती तक प्रेमबलीषी का हिस्सा मन्वस निकाल दीजिए। मर जाऊँगा तो आप Posthumous एडीशन क्या निकालेंगे जब बिन्द्या में बिन्द्या एडीशन नहीं निकालते।

तब से बराबर एक के बाद दूसरे महीने पर बाठ टक्की जा रही थी। पीट पीट-पीट साल के आखीर तक किताब की क्यारि हो पायी। अब गाड़ी टाइमिंग पेज पर आकर बटक गयी थी। कितनी समानक और कौड़ी प्यारी श्रुसमाहट है ११ दिसंबर के इस बात में — 'आपको बाजार में जैसा कागज मिले अच्छा कुछ बकिया-बटिया डाउन कासा पीछा मीका खरब मुर्ख गारंजी लेकिन टाइमिंग पेज क्यारि दीजिए'

फिर २९ दिसंबर को — बिन्द्या हूँ। नाबिल की हिन्दी कर रहा हूँ। प्रेम बलीषी की किक सामे जा रही है।

और इतने ज़ेद तीन साल के इंतजार के बाद जब किताब मिली तो १८ जनवरी को उन्हें लिखा — बलीषी का पीट मिका। टाइमिंग बैककर रो दिया। उस और क्या लिखूँ। किताब की मिट्टी सपन हो गयी।

असहयोग का अरुण जगाते हुए गांधीजी सारे देश का बीच कर रहे थे। ८ फ़रवरी को कोरसपुर पहुँचे। छापी मियाँ के मैदान में ऊँचा प्लेटफ़ॉर्म तैयार किया गया। जो कास से कम का जमाव न था। क्या शहर क्या देहात भद्राक जनता बीड़ी बकी जाती थी। मुझीजी भी अपनी बीमारों के बाबजूद पत्नी और दोनों बच्चों समेत पहुँचे।

पर सामे ता माँझीजी की ही बालें दिमाग में बम रही थीं। बालें सब अपने ही बिल की बॉ और ऐसी कुछ नहीं भी न थीं तो भी नहीं थी और उनसे बेतना को एक नया ही वातावरण बना। मीकरी छोड़-न-छोड़ के बिस शूँसे पर वह इधर बरसों से झूल रहे थे उसकी ओर अब कट गयी प्राण पड़ती थी। बहुत रोड हो मिमा यह लेस। एक न एक निश्चय अब करना ही होगा। और वह निश्चय क्या होया इसके बारे में मुँझीजी को कोई सन्नेह न था। लेकिन अब भीर कील बिम बायेया निश्चय करने का। संघय बूटी बीड है, बुन की तरह भीतर ही भीतर खोबला कर देता है मन को। जो कुछ करना हो अब बेघटके कर डालो। अब न किया तो फिर कभी न कर सकोगे और हमेशा दुखी रहोगे। देव बार बार कितनी को नहीं पुकारता। लेकिन भगतना ता बरवालों को पढ़ना। और वह वाकर पत्नी से बोले — तुम राय देतीं तो मैं परकाटी मीकरी छोड़ देता।

पत्नी ने जवाब देने के लिए दो-तीन रोज का समय माँगा। पीछे उन दिनों की बात करते हुए उन्होंने लिखा —

● जो उम्मान उनको भी बही दो-तीन दिन मुझे भी हुई। मुझे भी बार-बार यही सपना होता कि आखिर बी० ए० की स्वाहिसा क्यों हुई यही न कि जागे उरफटी की आशा। पहले तो यह पयास था कि यह कभी प्रोफेसर हो जायेंगे और बीमर के दिन आराम से कटेंगे क्योंकि सेहत अच्छी न थी। और कहाँ यह प्रस्ताव कि जो कुछ मिळता है उसको भी छोड़कर महबूब हना में उड़ा जाय। उस समय उनको कुछ मिळाकर एक सौ पचीस के करीब मिळता था। स्कूल की नौकरी होने की बजह से घर पर भी काम करने का समय मिल जाता था। मुझे भी इस बात की उम्मान थी कि आखिर नौकरी छोड़कर करने क्या? एक कड़की और एक कड़का सामने था और अभी बच्चे होने की उम्मीद थी। उधर मेरी इच्छा यह भी न थी कि किसी के पैर की बेड़ी बनकर रहूँ यह नहीं कि स्वयं का मूल्य मेरी आँसों में कम था। एक तो अपनी जरूरतों को देखते हुए, लुग भी बहुत दिनों से बीमार, न घर न द्वार — इन सब बातों को सोचकर यही दिवस में माता का कि इनकी नौकरी छोड़ने से रोक हूँ। दो रोज का समय लिया था अकिम बार-पाँच दिन में भी कोई निर्णय न कर सकी। बार-पाँच दिन के बाद उन्होंने फिर पूछा कि बतलाओ तुमने क्या निर्णय किया। मैं बोली — एक दिन का समय और। उस दिन मैंने यह सोचा कि आखिर जब यह इतने बीमार थे और बचने की कोई आशा न थी एक तरह से शायद उन्होंने मुझे जवाब ही दे दिया था यह कहकर कि यह तीन हप्ता रखें हैं और तीन तुम ईश्वर कुछ अच्छा ही करतेवाला होगा तभी तो यह अच्छे हो गये हैं

दूसरे दिन मैंने उनसे कहा — छोड़ बीविए नौकरी को। यह सरकारी नौकरी अब सहनशक्ति के बाहर है।

जब आप अपनी स्वाभाविक हँसी हँसकर बाले — दूसरों का धन्त करने के पहले अपना मन्त सोच लो।

मैंने सोच लिया है। जब तुम अच्छे हो गये हो तो मैं सोचती हूँ कि अब आगे भी जंगल में मंमल कर सकूँगी और मेरा पयास है कि ईश्वर कुछ अच्छा ही करने वाला है।

सोच लो फिर न कहना कि छोड़कर खुद भी उम्मीद उठावी और मुग तकलीफ की बयोकि घर पर तकलीफें आने बहुत आनेवासी हैं मुमकिन है कि पाने को भी न मिले।

मैं इनके लिए सोच चुकी हूँ। मैं तो यह जानती हूँ कि घर पर जब बला

भाती है तब हर कोई भुगत रुंठा है। फिर भुगतते तो है बड़े-बड़े घर के लोग अपनी तो बिसात ही क्या है।

तब वह बोले — यही निश्चय है ?

मैं बोली — हाँ।

तो मैं कस ही इस्तीफ़ा देवा हूँ और कस ही यह सरकारी मकाम भी आपकी छोड़ना होगा। कहीं जाना है इसका भी कोई ठिकाना नहीं। ●

इतनी धाड़-धाड़ बातचीत के बाद फिर वहाँ की बुबिधा और कैंडी बुबिधा मुंशी जी ने अपने रोब इस्तीफ़ा लिखकर दे दिया। कुछ दोस्तों ने यह भी सझाई थी कि नीकरो अगर छोड़नी ही है तो बरा रककर छोड़िएगा कोई आपको बाँककर बोड़े ही रख सकता है। क्यों मुफ्त दो महीने की ठनल्वाह से हाब घोंते हैं ? घृष्टियों को अब बिन ही फिटने हैं ?

लेकिन नहीं जो निश्चय ही क्या हो गया। हिदाब-किताब नहीं देता जाता ऐसे बन्त।

मंजूरस हूँ सिखते हैं कि जमको नीकरी से बकब होतै बेलकर 'तमाम सड़के स्कूल छोड़ने पर आमादा हो गये मगर आपने सबों को रोका और बताया कि यह रास्ता बहुत कठिन है। मैं तो इस काबिल हो गया हूँ कि अपना और अपने बच्चों का पैट पास हूँ मगर तुम लोग अभी इस काबिल नहीं। इसलिए अगर तुम लोगों ने स्कूल छोड़ा तो बड़ी मुस्किल में पड़ जाओगे। चुनबि बहुत से सड़के स्कूल में रह गये फिर भी कुछ सड़के तो मुहम्बत क मारे स्कूल से बकब हा ही गये।

वह अर्बरी १९२१ की १५ तारीख थी। १६ तारीख से वह कार्यमुक्त कर दिये गये।

उसी रोब सङ्गोने अपना क्वार्टर छोड़ दिया और सहर में ही एक बोस्त क घर चले गये। उसके अगले बिन वह अपने मित्र महाबीर प्रयाब पोहार के संग उसके गाँव मानीराम चले गये जो सहर से तेरह मील दूर था। इसकीस घरन की सरकारी गुजामी का अन्त हुआ।

अरैरल उन्हेंनि इसकी सूचना पैठ हुए १५ को ही नियम छाहब को लिखा — मैं कस घरकारी मुलाजमत से मुकुफ़बोच हो गया। आज इस्तीफ़ा भी मंजूर हा गया। यहाँ से एक हफ्तावार उर्दू अलबबार निकालने का इस्ब है। प्रैठ की भी तकाब है। कालिबन् मही रुपये का भी इंतजाम हो जायगा। अब से यह समाज था। अब इसके पुने होने के बिन जाये।

फिर मानीराम से २३ तारीख को लिखा—

मिने तर्कें मुलाजमत कर ही ली। आप मुझे बहुत अच्छे से इसकी तहरीक कर रहे हैं। हालाँकि यह आपकी तहरीक का असर नहीं है। यत्नि रफ्तारे जमाना का। मगर किसी तरह अब मैं जाड़ा हो गया। अब बतलाइए क्या करें। प्रथ और मखबारनबीसी और मुनुयनबीसी के सिवा मैं कोई दूसरा का करने के इच्छित नहीं। रुपये वुमने के लिए तैयार नहीं। कास्तकारी मेरे किये हा नहीं सकती। क्या आपका इतदा अब भी प्रेस की तरफ है? मैं चार-पाँच हजार का सरमाया और अपना सारा बचत आपके नजर करने को तैयार हूँ। वगैरों कि आप भी मेरे 'मखाबिन' और 'तरीक' हो। मैं अब 'क्याता तखबखब' में नहीं जना चाहता। अब कोई-न-कोई प्रैसला करना चाहता हूँ। मेरे लिए मोरगपुर बजारस और कानपुर तीन मुकामात हैं। और भी लम्बे पोड़ी-बहुत आसानियाँ हैं। लेकिन कानपुर में जितनी आसानी नजर आती है उतनी और कहीं मिलनी नहीं। मैं एक अच्छा प्रेस उर्बू हिन्दी और मखेजी का जोलना चाहता हूँ। जा फ़िरहाक महज चाब बर्के पर चले। अजबार से उसे कोई तास्तक न रहे। मैं जली तौर पर अजबार का काम भी कर सकता हूँ। मगर ज्यादा नहीं। अगर जा चाहें तो दो-एक दिन के लिए कानपुर जा जाऊँ और जिस मुसाऊ 'जमूर' लय हो जायें। काइत प्रस अभी गालिबम फ़रेस्त न हुआ होगा। अगर यह बिक भी गया हो तो कलकत्त से मखीन और टूटिन मँगारा जा सकता है। लीबो प्रस का इस्तकाम भी बरुपी है। ताकि अपने घर के काम के लिए दूसरे का 'वस्तनिगर' न हुला पड़। मीनेजरी का काम हम और आप दोनों मिलकर त्ज कर सकते हैं। एडिटी के काम में भी हुस्तुल 'इमकान' आपकी चाड़ी मखद कर सकता हूँ। हम तन के बजाय का मुस्तदिर हूँ। अगर आपने कुछ उम्मीर न शिमायी तो और को' सवीक सोर्बुया। यहीं मीने फ़िरहाक एक रुपइ का नारनामा ताल रफता है जिसमें माठ करप चल रहे हैं। कुछ चले बड़ीरह भी बनवाये जा रहे हैं। एक मीनेजर पचीस रुपये माहवार पर रख किया है। जो इससे मुझे माहवार कुछ न कुछ बच्य पकर होगा लेकिन इतना नहीं कि मैं उस पर 'ठकिया' कर सकूँ। बाबजू' गान-नामापरेयन करन के अभी तक मैं दोस्त की तरफ से बिस्तुल मुस्तदनी नहीं हूँ। और मैं जली तौर पर हो भी जाऊँ लेकिन मेरी बीबा को यकीन हा चाये कि अब इसी तरह उसकी बिन्दवी बसर होगी ता यह मुझे हरगिज मुभाऊ

१ मोइती छोड़ ही दी २ प्रेरणा ३ सहयोगी ४ सत्य ५ आसन-नासन  
६ बार्ने ७ बह्ताज ८ यथावति ९ मुक्ति १० सहाय ११ बिरक्त

न करेगी। और क्या मर्ज कहें। आजकल एक वेहास में मुक़ीम हूँ। खूब मायाम से दिन कट रहे हैं। आबादी का अटक उठा रहा हूँ।

सब कहने की बातें हैं। दो-तीन हफ्ते भी न मुझे हूँ कि इस तरह बैठे रहना मुंशीजी को बहाने लगा और यह योजना बनी कि पोद्दारजी के पास में शहर में चर्खे की ठूकाम खोली जाय। एक मकान वहाँ खिया गया। इस कर्म ख्याये गये। मुंशीजी खुद भी मानीराम से आकर वहीं शहर में कुछ रोज रहे। चर्खे के प्रचार का जोश अपनी बोटी पर था। हवा में चर्खे की गूँज थी —

बैठ बखि दीन बुझ टारि  
यबि बाहो करना उठार  
तो चर्खे का करो प्रचार  
पहनो शहर सब तर गारि॥

मुंशीजी भी इतने एक महीने तक इसी चर्खे के रंग में डूबे रहे। और इन्हीं दिनों अतबाने ही उन्होंने पुकिश के एक बड़े मण्डल को जिसका नाम मुहम्मद इकराम या असहयोज के रास्ते पर रखा दिया।

मुंशीजी शहर में वहाँ मकान लेकर उन दिनों रह रहे थे वहाँ से अक्सर कोई बहुत मीठी आवाज में गाता हुआ निकलता था। एक रोज मुंशीजी से नहीं रहा गया तो वह बाहर निकल गये। देखा कि वह एक अम्बा सड़का था जो शामद उस बरत अपने घर लौटता था। मुंशी जी ने उसे बुझाकर इधर उधर की कुछ बातें कीं। फिर तो वह सड़का अक्सर ही आने लगा और रात को काफ़ी देर भर तक सीताराम बर्मा और मुंशीजी और और कुछ दोस्त बैठे उसका गाना सुनते रहते। अब एक सोच का दर्द था उसके मस्ते में।

एक रोज पुकिश के एक डी एस पी साहब आ बसने। सोम बहुत चाँके कि आज यह साहब कैसे तयरीक से आये क्या मामला है कहीं छाप तो नहीं मारनेवाले हैं हमारे चर्खों केन्द्र पर। मगर बात कुछ और थी। कप्तान साहब को दूख ही दूख था। कहीं ऐसा तो नहीं है कि अगर से दिवाने को कुछ चर्खे बर्से रख दिये हों और भीतर-भीतर कुछ और ही खिचड़ी पकती हो! बर्मा हर रोज रात को इतनी-इतनी देर तक घर में रोयनी क्यों रहती है! अकर कुछ बाक में काला है! इस तरह मुहम्मद इकराम साहब की मुलाअत मुंशी प्रेमचन्द से हुई और वह भी अब-तब आने लगे। धीरे-धीरे उन पर कुछ ऐसा पानू पला कि वह भी इसी पथ के पवित्र हो रहे। कौई साठ-आठ महीने बाद किसानों की किटी बड़ी समा पर गोपी बनाने की बात उठी। मुहम्मद इकराम ने इस्तीफ़ा दे दिया।

## इस्लाम का सिपाही

जब का वह रंग मुंजीजी पर कटीब एक महीने रहा। लेकिन उ  
 रोड़ी ही बस सकती थी और न उस तरह की देखरेखा के लिए मुंजी  
 से। उनका मामूय तो साहित्य है। सो लिखाई और-धोर से बच रही है।  
 स्वराज्य का प्रकार करनेवाले सेवक चीचे-सादे देरा-मैम के क्रिस्ते जिनम बिगी  
 तरह का बनाब सिगार नहीं है और न उनको सिचते समय मुंजीजी को इस  
 बात की ही बिग्या है कि उनकी पिनती स्वामी साहित्य में होगी या नहीं। मापी  
 की ने स्वराज्य की लडाईं छेड रली है। हर वह आन्मी जिसे अपने देस स प्यार  
 है इस समय स्वराज्य का सिपाही है। कोई मीदान ये जाकर लाठी धावा है  
 जेठ की यह पकड़वा है मुंजी जी अपना इस्लाम लेकर मीदान में उतरते हैं।  
 एक ही बात है। अधिक से अधिक जनता को इस लडाईं के अन्दर छे जाना है।  
 मैं इस्लाम का सिपाही हूँ इस्लाम के जोर से लोगों को जवाऊंगा। आम्बोसल का  
 प्रकार करूँगा। हाँ ठेठ प्रकार। इस राज्य से मुसको डर नहीं लगता। कोई बात  
 मही अयर बीज कुछ बनयक भी हो जाती है। बसक बात यह है कि लोगो को  
 बयाना है, बीसे भी हो। मीनाकारी का समय यह नहीं है। उसने लिए और  
 बहुत समय मिलेगा।

इस बक्त मन का कुछ हुनय ही रंग है। कोई कष्ट, कोई बिग्या टिक नहीं  
 पावी। बास-बच्चों की चिन्त है। मरिप्य बंधनारूप है। कुछ पत्रा नहीं बना  
 होगा नहीं होगा। मयर उससे क्या आबाद तो है, किसी के गुलाम तो नहीं।  
 मोटा छोटा लाकर ही सही। तकलीफ उट्यकर सही। यह सब तो पहले से  
 मारूम था। इससे भी बुरी हाकत हो सकती थी। आबादी कोई सस्ती बीज  
 तो है नहीं। उसकी सीमय चुफानी पड़ती है सब चुका रहे हैं मैं भी बका  
 रहा है। उन्हें टिनी स कोई चिकायत नहीं है और न मन में उबासी की छाया  
 है। आबादी की सुधी हर तकलीफ पर मारी है। मन में एक मजीब उमय  
 है जो उन हम्कीनी शायरत की गुट के साथ जो कि मुंजी जी के खमीर में  
 पायिल है कुछ अजब गुल थिलती है। एक मस्त बैररबाह स्वच्छन्दता एक मया  
 माने रंग का आबादी का पहला पुमार। आबाद होने के बाद यत उनही पहनी  
 होगी है—और मुंजीजी बिबिज होली नाम की एक बहानी की शकल म  
 अपनी टेवू के दोय साल रंग से मरी हुई पिबकारी लेकर सफ़र पर मौनुद है—  
 • होनी का दिन था मिस्र ए बी कास गिकार धेकने मये हुए थे। मार्म  
 बरली महता मिस्री गाला घोषी—सब होनी मया रहे थे। सबों ने साहब  
 के जाने ही शुक पहरी रंग बगार् की और इस समय बगीचे में बैठे हुए होनी-याय  
 या रहे थे।

छाईस ने पूछा — कहां जानसामाजी साहब कब तक आयेगे ?

नूर अली बोला — उसका जब भी चाहे आये मेरा आज इस्तीफ़ा है। अब इसकी नीकरी न करूँगा।

अर्दली ने कहा — ऐसी नीकरी फिर न पाओगे। चार पैसे ऊपर की आमदनी है। ग्राहक छोड़ते हो।

नूर अली — मजी कामत मेजो ! अब मुझसे गुलामी न होनी। यह हमें पूर्वों से ठुकराये और हम इनकी गुलामी करें। आज यहाँ से बेरा कूच है। आजो तुम सोपों की बाबत करों। जैसे जाओ कमरे में बायम से मेज पर बट जाओ वह वह बोटसे पिछाई कि बिपर टप्यो हो जाय।

नूर अली ने हिल्ली की बोटक कोसकर पिछास परे और चारों ने पढ़ागा धुक कर दिया। ठर्रा पीनेवालों ने अब वह मजेदार चीजें पानी लो मिखास पर पिछास सँढाने लये। चरा बेर में सबों के सिर फिर गये। भय बाठा रहा। एक ने होली छोड़ी दूसरे ने मुर मिखाया। पाता होने लगा। नूर अली ने डोल-मझीरु काकर रख दिया। बही मबकिस बम पयी। दाते-बाते एक उठकर नाचने लगा। दूसरा उठा। यहाँ तक कि सबके सब कमरे में चौकड़ियाँ चल लगे। हु हुक मचने लगा। कबीर, फ़ाय भीवाल वाली-वलीज मार-पीट, बारी-बारी सब का नम्बर आया। कुचियाँ उकट पयी। बीबायें पर की लसबीरें टूट गयीं। एक न मेज उकट दी। दूसरे न रकामियों का पैर बत्ताकर उछलना शुरू किया। ●

तमी महर के रईस काफ़ा उजागरमल का आनमन होता है। आलाजी 'महर के सहयोगी समाज के नेता थे। उन्हें अंग्रेज़ा की भावी सुनकामनाओं पर पूर्ण विश्वास था। अंग्रेज़ी राज्य की ठालीमी माली और मुन्की तरफ़की के राग गाते रहते थे। असहयोगियों को बुरा फ़टकाय करते थे। अंग्रेज़ों में इपर उनका आदर-सम्मान विशेषरूप से हास कया था। कई बड़े-बड़े ठेके जो पहले अंग्रेज़ ठेकेदारों ही को मिखा करते थे उन्हें वे दिये पये थे। मतलब यह कि वह बिलकुल सचि में बड़े हुए टोही बन्धे हैं अंग्रेज़ों के पक्के पीरबन्धु !

नूर अली बरमा देकर उन्हें भी इस हुकूमत में सहीक कर सिता है। अब बेगिए क्या होता है —

मिस्टर जास अपनी बन्दूक हाथ में हिमे मोटर से उतरे और लये आदमियों को बुलाने पर बड़ी लो आरों से भीवाल हो रहा था सुनता कीन है। बकराये यह मामला क्या है। क्या सब मरे बंगले में गा रहे हैं ? जाप से मरे हुए बँगले में वासिल हुए तो दाइनिन बम से गान की आवाज आ रही थी। अब क्या था

जाये से बाहर हो गये। हटर उठार लिया और डाइनिंग रूम की ओर बने सफ़िन अनी एक क़दम दरवाजे के बाहर ही था कि सेठ उजागरमल ने पिचकारी छोड़ी। सारे कपड़े तर हो गये। आँसों में भी रंग घुस गया। जाँवे पाठ ही रहे थे कि सार्सि ग्लास सब के सब दौड़े और साहब को पकड़कर उनके मुँह में रंग भरने लगे। बोबी ने तेल और कालिन्त का पाउडर छपा दिया। साहब के केश की सीमा न रही। हटर लेकर गर्बों को अंबाबुंग पीटने लगा। बेचारे कोई इतर भागा कोई उधर। सेठ उजागरमल न यह रंग होगा ता माह गये कि मूर अनी ने हाँसा दिया। एक कोने में बबक रहे। जब कमरा नीटला से घाटी हो गया तो साहब उनकी ओर बढ़े। लाला साहब के होग उड़ गये। ठेकी से कमरे के बाहर निकले और सिर पर रँग रसकर बेतहाशा नाये। साहब उनके पीछे दौड़े। सेठनी की फिल्म फाटक पर खड़ी थी चोड़े न धम धम टाट टाट मुनी तो चौंका। कनीलियाँ सड़ी की और पिटन को लेकर भागा। बिचित्र दृश्य था। आये-आय फिल्म उसके पीछे सेठ उजागरमल उनके पीछे हूँकारपाटी मिस्टर नाम। तीनों बपट्ट दौड़े बने जाते थे।

कैसा मजा आ रहा है मुँचीजी को इस दृश्य में! आँता के आये तसवीर गाय रही है और अगर इस बगल वह ठट्कार नहीं हूँस रहे हैं तो सिर्फ इगम्बिफ़ि कि होल्डर की स्वाही छलक जाने का डर है! लेकिन भीतर ही भीतर बटछारे से रहे हैं और बहरे पर एक पछाछ से मछी हुई मुस्कपट है! कैसी पट बनायी लाला जी की और साहब को भी मंगा करके रख दिया! पुचने बैम्पियन निगानपी बेमेबाज है एक डेले से दो बिड़ियों का गिछार कर रहे हैं। लाला जी पीछे कापेस बस्तर जाकर असहपोपियों में अपना नाम लिखा देने हैं। वह कहानी का नीति-मस है और बही उसका सभने कमबोर पहलू भी है। असल बीज है वह मन्गी और धितलपानत जो कहानी के एक-एक रूप और रेमे में गून की तरह बौड़ रहा है। बहुत लम्बे इस्तबार के बाद वह मुसानी का लौक गले से उतरा है। जैसे बतलाये वह अपनी मुक्ति के उन मास्वाद को! एक अजीब बर्बनी है उबात है जो समा नहीं पा रहा है बउन में और उछलकर फिर-फिर पड़ता है सब तरह! अत्याप पर म्याप की बिजय हो रही है। जमी का तो नाम होली है। मुँचीजी भी होली मना रहे हैं। यह उनकी अचने रंग की निचनी होली है—उनका बिजय उल्लव और उली का पान-पम यह मन्दा सा बुटुमा। और मन की बुति मन्गीर होने पर 'साल प्रीजा जो एर मैरिस्ट के हृदय-परिवर्तन और इस्तीफे की कहानी है।



अंग्रेजी राज्य की वह सदैव स्तुति किया करते थे। वीनों और असहायों की इतनी रक्षा किसने की! शिक्षा की इतनी उपस्थिति कब हुई? व्यापार का इतना प्रचार कब हुआ? राष्ट्रीय भावों की ऐसी जागृति कहाँ थी? वह जानते थे कि इस राज्य में भी कुछ न कुछ बुद्धियाँ अवश्य हैं। मानवी संस्कार कभी दोपरीष्ट नहीं हो सकती। लेकिन बुद्धियों से मछारियों का पत्था कहाँ भारी है। यही विचार थे जिनसे प्रेरित होकर यूरोपीय महासमर में हरिद्विधास न सरकारी औरजाही में कोई बाध उठ नहीं रखी हवारों रैपकट मर्ती करावे शासों स्वमे कई दिखानाये और महीनों धूम धूम कर लोगों को उन्नेजित करते रहे।

अब एक मुखबरीमान सम्जन उनसे कहते हैं— यह तो बतलाइए हुपूर, यह आजकल क्या हवा फिर गयी है कि जहाँ बेसिए नहीं मारसे बन्ध होते जाते हैं। मुनता हूँ बड़े-बड़े कासेज भी टूट रहे हैं। अब उसके जबाब में डिप्टी साहब कहते हैं— मैं तो इसे पागलपन समझता हूँ गिरा पागलपन। यह लोग समझते हैं कि इन कार्रबाइयों से यह हमारी सरकार को परास्त कर देंगे। कुछ लोग देहातों में पंचायतों भी बनाते फिरते हैं। इनका मतस्य भी यही है कि सरकारी अदास्तों की बड़ बोरी बाय लेकिन कोई इन मलेमानुसों से पूछे कि क्या कानूनी पुरिषियाँ इन देहातियों के सुमसाये सुबस जायेंगी। जिस कानून के पढ़ने और समझने में उमरें गुबार जाती हैं, उसका व्यवहार यह हकनुते क्या बाकर करेंगे।... खोर दिया जा रहा है कि लोग सरकारी नौकरियाँ छोड़ दें। इस चरैस्य का पूरा हाना और भी कठिन है।... जो बुरे हैं वह नौकरी कभी न छोड़ेंगे इसलिये कि बेईमानी और रिस्वत के ऐसे अवसर और नहीं नहीं मिल सकते। जो अच्छे हैं उनके लिए भी यहाँ जातिसेबा और उपकार का बड़ा बिस्तृत क्षेत्र है। उन्हें किसी पर अन्याय करने के लिए मजबूर नहीं किया जाता। सरकार निष्ठी युक्त और प्रजापातक नीति का व्यवहार नहीं करती।'

लेकिन सब की जाँच एक न एक दिन खुलती है और डिप्टी साहब की जाँच खुलती है उस रोख जब कि काफ़ ड्रैटे से बँबा हुआ एक युक्त निर्वेध-मध उनको सरकार से मिलता है— अब तक मैं समझता था कि मेरा कर्तव्य न्याय पर बलना है। अब मामूम हुआ कि यह मेरी भूल थी। मेरा कर्तव्य न्याय का बधा नोटना है, नहीं तो मुझे ऐसे जाबजब क्यों मिलत? क्या समाचारपत्रों का फुला भी कोई अपराध है? क्या दौन किसानों की रक्षा करना भी कोई पाप है? मुझे उन साधु-संन्यासियों पर कड़ी दृष्टि रखने का हुकम दिया गया है जो धर्मोपदेश करते हुए दिखायी दें। वही नहीं मुझे यह भी देखना चाहिए कि कौन बनी-

पाड़े के बपड़े पहने हुए है, जिसके सिर पर कैंची टोनी है उस टोनी पर कैंची छाप सनी हुई है। बर्सा बसानबाओं पर भी मखर रखनी चाहिए। मुझे उम लोगों के नाम भी अपने पत्रमासके में दर्ज कराने चाहिए जो राष्ट्रीय पाठशाळाएँ छात्रों जो देहातों में पंचायतों बनायें जो जनता को नये की चीजें त्याग करने का उपदेश करें वह सब अब सहा नहीं जाता और वह इस्तीफ़ा देने का निरवयव करते हैं। जब सरकार अपने धर्मपत्र से हट जाती है तो मेरा धर्म भी यही है कि उनका साथ छोड़ दूँ। और वह अपना इस्तीफ़ा इन छात्रों में लिखते हैं—

मेरे विचार में वरमान घासन सत्य से सम्पूर्णतः विचलित हो गया है। यह आज्ञा प्रकाश के जन्मसिद्ध स्वार्थों को छीनना और उनका राष्ट्रीय भाव का बच करना चाहती है। ऐसे दुष्कार्य में योग देना अपनी भावना विकृत और जातीयता का धून करना है। अतएव अब मुझे इन छात्र-संस्था से अनहयोग करने के सिवा और कोई उपाय नहीं है।

और वह इस्तीफ़ा देकर अपने पाँच बच्चे जाते हैं और चणू बयारू का प्रचार करने लगते हैं। मिट्टी साहब का छोटा छद्मनाम पौषिकासिध अपनी बहुत मजनी की धारी का पूरा अर्पणालय समझाता है।

कोई बात नहीं अगर इससे कहानी की मिट्टी खराब होती है। किसका कहना कि मैं कहानी लिख रहा हूँ मैं तो कहानी के खाने में सपेकर स्वागत का संदेश घर-घर पहुँचा रहा हूँ। कहानी के बनने-बिगड़ने की चिन्ता नहीं करते, देखना यह है कि आन्दोलन का कोई मुद्दा छूटने न पाये।

आन्दोलन के मुद्दे हैं—विदेशी चीजों का बहिष्कार और स्वदेशी का प्रचार जिसका सबसे बड़ा जग धारी है सरकारी स्कूलों का बहिष्कार और राष्ट्रीय विद्यालयों की स्थापना अनामर्तों का बहिष्कार और उनके स्थान पर पंचायतों कायम करना। इनके अलावा ठाकुर सरकारी नौकरियों का बहिष्कार, कौशल का बहिष्कार, मठ-निषेध।

इन्हीं का प्रचार लोगों में करना है और मुँगी की नौकरी छोड़ने के बात सलाह अपने सरल मन की सम्पूर्ण निष्ठा से हवी में लय जाते हैं। एक के बाद दूसरी कहानी उनके कर्म से निकलती चली आ रही है। मुत्तामी स्वयं अपने मन की प्रेरणा से असहयोग आन्दोलन के प्रचारक बन जाते हैं। मही या इतन मुँगी की जो हममें अपनी कला की प्रतिष्ठा की चोरी हुई नहीं दिखलायी देती। स्वयं की बात समझाने की बात जानों तक पहुँचानी चाहिए—और पूरे-पूरे बात छोपे-छेपे बीती बी हो। मौखिक-महक समझने की भी हम समय मुँगी की जो पूर्वम नहीं है। कुछ मन बोमो पर में काम लयी है इन बात—कहानी

ठेठ गुहस्व भावमी उसको कैद छूटे। लर्न तो कमाई में से ही हो सकता है। यह तो हार-गाड़े के लिए है। अपने उसी छत में मुंशीजी ने बरतारप्रसाद को बिस्वा का बीस रुपये जो आपने प्रदान किये उसके लिए कोटिया बनवावा। बड़े बरत पर पहुँचे क्योंकि मुझे एक पाय सेनी भी और कहीं से कुछ मिठने का सहाय न था। लेकिन छोर स्वदेण से बात नहीं बनी। योंही सस्टम-सस्टम काम चला रहा। हाँ बिस्वाई उसी खोप और मुस्वी से।

इन्हीं दिनों महावीरप्रसाद पोद्दार ने अपनी हिन्दी पुस्तक एजेन्सी से एक असहयोग नामा महारमा जी की भासा से प्रकाशित की जिसका उद्देश्य था — घर घर स्वराज्य-सन्देश पहुँचाना। बहुत ही सस्ती पैस-खो पैसे-एक जाने की पुस्तिकाएँ थीं — जैसे गांधीजी के व्याख्यान सूत के धागे में स्वराज्य असहयोग अर्थात् आत्मसुद्धि अवार्थों का इन्द्रबाक जिसमें गांधीजी पं मोतीलाल नेहरू और राजेन्द्रबाबू के केबले चरखे की तान जिसमें चरखे पर एक सपयोबी सेख और कबीरबाबू के मीठ और मजम थे। इसी तरह की अनेक पुस्तिकाएँ थीं। प्रेमचंद की तीन कहानियाँ भी इन्हीं दिनों इस असहयोग-नामा में प्रकाशित हुईं — पंच परमेश्वर, छास छीटा और साम-बाँट। स्वराज्य के फायदे (प्रकाशित आपाक १९७८) के नाम से मुंशीजी ने एक पैम्फलेट इस पुस्तकनामा के लिए असह से लिखा —

● अपने देश का पूरा-पूरा इन्तजाम जब प्रजा के हाथों में हो तो उसे स्वराज कहते हैं। जिन देशों में स्वराज है वहाँ की प्रजा अपने ही बुने हुए पर्वों द्वारा अपने ऊपर राज करती है। वहाँ यह नहीं हो सकता कि प्रजा सगान और करों के बोझ से दबी रहे और अधिकारी लोग दिनोदिन सेना बढ़ाते जायें। प्रजा मुक्तों मर रही हो चारों ओर अज्ञास पड़ा हो और देश का अन्न दूसरे देशों को डोया जमा खाता हो। मरी हैजा भादि रोग फैल रहे हों और अधिकारी लोग उसके रोकने का उचित प्रयत्न न करके सैर-सपाटे क्रिया करते हों। गरीब मुसाफिरों को रैलगाड़ियों में बैठने की जगह न मिलती हो और अधिकारियों के बास्ते एक-एक पूरी गाड़ी जमा लगी रहती हो।

स्वराज के तीन मेर हैं। एक यह है जहाँ का राजा उसी देश का निवासी होता है लेकिन वह राज का सब काम अपनी ही इच्छानुसार करता है प्रजा उसके इन्तजाम में खरा भी बसस नहीं दे सकती जैसे ताबुस नैपाल। दूसरा यह है जहाँ का राजा अपनी प्रजा के प्रतिनिधियों की सलाह के बिना स्वयं कुछ न कर सकता हो जैसे ईंग्लिस्तान जापान। तीसरा यह है जहाँ राजा नहीं होता उसकी जगह पर सब छोप किसी योग्य और सर्वमान्य पुद्ग को चुनकर कुछ नियत समय के लिए

बपता प्रदान बना लेते हैं और बहु प्रजा के चुने हुए मंत्रों की सम्मति से राज्य का शासन प्रबन्ध करता है जब पर्यन्त अमेरिका चीन आदि। भारत की दशा विचित्र है बहु इन तीनों भेदों में से एक में भी नहीं आता। हम इन तीनों भेदों में कौन चाहते हैं यह अपनी माऊ-बाऊ नहीं कहा जा सकता पर इनमें सब बरा भी सम्यक् नहीं है कि हम बहु स्वराज्य चाहते हैं जहाँ प्रजा के चुने हुए पक्षों की सलाह से सब राज-कार्य चला जाता है और पक्षों की सम्मति के बिना शासन लोग कुछ भी नहीं कर सकते। भारत में पर्यन्त मन्त्रों हैं जहाँ प्रजा के प्रतिनिधि सरकार को सलाह देने वाले हैं। छोटे लाल साहब और बड़े लाल साहब दोनों ही को सलाह देने के लिए सभी मन्त्रों बनायी गयी हैं। लेकिन एक तो इन मन्त्रों में जो पक्ष प्रजा की ओर में मने जाते हैं उन्हें बड़ी सोग चुनने हैं जो या तो महाजन हैं या बहु समीपार या बड़े बालकदार, साधारण जनता को उनके चुनन का अधिकार नहीं है हमने इन मन्त्रों को केवल राज देने का अधिकार है अधिकारियों की इच्छा है चाहे उन राज को मानें या न मानें। यह मन्त्रों केवल हाथी के दाँत हैं उनकी जान में जनता ऐसी ही एक मन्त्र के एक हिलोमानी मन्त्र की कहानी है आर्गन विरोध जो इन्हीं दिनों लिखी गयी — महापद्म दयाहृत्न महता के पाँच जमीन पर म पड़ते थे। उनकी बहु आकाशा पूरी हो गयी थी जो उनके जीवन का मयूर स्वप्न थी। उन्हें बहु राज्याधिकार मिल गया था जो भारतवासियों के लिए जीवन-म्वर्ण है। काश्मिर ने उन्हें अपनी कार्यकारिणी सभा का मन्त्र नियुक्त कर दिया था। कुछ ही दिनों में बहु पूरी तरह घड़े शासकों के रंग में रंग जाते हैं बल्कि उनमें भी दो बर्ग काय निकल जाते हैं। उनकी बर्ग स्वीच पर लन्दन के भारतीय मुन्त्रों का रोय इन दायों से प्रकट हुआ है — हम बङ्गाला ने निश्चय कर दिया कि भारत के उदार का कोई उपाय है तो बहु स्वराज्य है, जिसका आग्रह है मन और बचन की पून स्वाधीनता। न्यायन उत्पत्ति (evolution) पर न यदि हमारा एतवार भव तक नहीं उदा या तो सब उठ गया। हमारा रोय अमाध्य हो गया है। बहु सब चुनों और अन्वेषों से भ्रष्ट नहीं हो सकता। हमने निवृत्त होने के लिए हमें सामान्य की आवश्यकता है। जैसे राजनन्द हमें स्वाधीन नहीं बनाने बल्कि हमारी सामान्य पदवीनता को और भी पुष्ट कर देते हैं। लड़के को अपने पिता के कारण बहुत लज्जित होता पड़ता है और बहु तंग आकर एक रोड आग्रहणा कर लेता है।

बङ्गाली तो फिर स्वराज्य का माधन क्या है?

● स्वराज्य का मुख्य माधन स्वाधीनत्व है अर्थात् अपने देश की सब उदारों

को आप पूरा कर लेना। जो प्राणी अपने बेट का बनाव खाता है, अपने कटे हुए सूत का कपड़ा पहनता है और अपने झगड़े-बड़बड़े अपनी पंचामृतों में चुका देता है उसे हम स्वाधीन कह सकते हैं।

स्वराज्य-भाषि का बुरा राबन उन व्यवस्थाओं को त्याग करना है जो हमारी आत्मा को दबाती है और उसे पराधीन परावर्त्तनी बनाती हैं। अदालतों सरकारी नौकरियों सरकारी शिक्षा आदि हमारी आत्मा को कुचकनेवाली हमारे मन के पवित्र भावों को दमन करनेवाली हमें कौड़ी का गुलाम बनानेवाली हमारी बासनाओं को भड़कानेवाली संस्थाएँ हैं। हमारे बाह्यकृन्त्र बाह्यत ही से सरकारी नौकरियों की आशा करने समते हैं, उसी समय से उनकी आत्मरक्षा पराधीन होगे लगती है, उन्हें परकटे पक्षी की भाँति अपने दरजे के सिवा और कुछ नहीं समता आपलूती करने की कार्यसौपन की आशत पड़ जाती है। यह तं हुआ शिक्षा का हाल।

अदालतों का प्रभाव इससे कम प्राणनाटक नहीं। वहाँ मुकदमेबाजी करने वाली बनता और उनका बन सूटनेवाले बलीस-मुस्तार, बोगों ही अपनी आत्मा को हटाहूत करते हैं। अगर कोई आदमी सूठ, छल-कपट बेईमानी का भीषण नाटक देखना चाहे तो उसे एक बार अदालत में जाना चाहिए। कहीं मवाह पैया किये जा रहे हैं, कहीं मुबकिकों को उनका बयान तोले की भाँति रटाया जा रहा है कहीं कौदमी मुहरिर मुबकिकों से खर्च के लिए तफरार कर रहा है कहीं कर्मचारी लोभ रिस्वत के पीरे चुका रहे हैं, कहीं बकीष साहब अपने मेहनताने का चौथा पयान में मम्म हैं, कही मुस्तार साहब बेइयातियों के एक बल को साम लिये इज्जतों में पीड़ते फिरे हैं। और यह सब भूर्त्तमीका सुस्मम-सुल्था बिना किसी संकोच के होती रहती है। •

बीस पनों की इस पुस्तिका में मुंजीबी ने बहुत सरल-सुबोब ढंग से लोगों को स्वराज्य के बारे में सब कुछ बतलाना चाहा है—स्वराज्य क्या है स्वराज्य के भेद स्वराज्य के शासन स्वराज्य के प्रयदे

स्वराज्य में कैसी समाज-रचना होगी इसका पूरा भवता स्मृषिष्ट उनकी आँवों के सामने है—

यह भी याद रखना चाहिए कि हमारा वैस इपिप्रबान है। सिस्व और उद्योग यहाँ सर्वैव इपि के नीचे ही रहेगा। अतएव हम अपने यहाँ बहुत बड़े-बड़े कारखाने नहीं कायम कर सकते। हमें यही उद्योग करना चाहिए कि हमारा साम्य जीवन मष्ट न होने पाये। छोटे-छाटे कारखाने बलबता इस्वों में शोल जा सकते हैं। इसमें सन्देह नहीं कि इस व्यावसायिक नीति से हम विरेपी वस्तुओं

का मुकाबला न कर सके। लेकिन जब हम कर लगाकर विदेशी बस्तुओं को रोक देते तो उनसे मुकाबला करने का प्रयत्न ही न रह जायगा। इसके विना हम तो केवल अपनी जरूरतों को पूरा करने के लिए विन्य और बला की उपाय चाहते हैं, हमारा उद्देश्य यह बताना नहीं है कि सस्ता माल बनाकर निराल देशों पर पतकों और व्यवसाय के बहाने से उन पर आधिपत्य जमायें। इसी व्यावसायिक जड़-ऊपरी के कारण यूरोप की जातियों में नित्य बैमनस्य बना रहता है। एक दूसरे को घनु समझती है। उसका मरकर परिणाम यह महाममर या जिनका सभी तक निबटाप नहीं हुआ। हम इस संघाम से दूर रहना चाहते हैं। त्रिभाषण का प्रयत्न जिनसे समस्त संसार के मुसलमानों को बेचैन कर रहा है बहुत कुछ इसी व्यावसायिक जड़ ऊपरी से संबंध रखता है। अंग पाम देप को नहीं छोड़ना इसलिये कि वह पाम के बन्दरगाहों से अपना माल मरब देस में ला सके। मरब सोम बसरा और बप बाद नहीं छोड़ना चाहते क्योंकि वहाँ मिट्टी के तेल की लातें हैं। हम व्यावसायिक स्वार्थपरता को छिनाने के लिये तरह-तरह के नैतिक बकोसले गा जाते हैं।

मुली और संतोपपूर्ण जीवन का यह मानमभित्त उनका अपना है बहुत पुषमा है। टासटाप के बरान मे उध पर मनी मुहर लगाकर उसे और भी पक्का कर दिया और पांभीजी ने उनी साम्य को देप की स्वाधीनता प्राप्ति का साधन बनाकर उस स्वयं को व्यावहारिक राजनीति का एक आकार दे दिया है। इनीलिय तो पांभीजी की रीति-नीति को जिन बोड़ से लोगों ने सबसे पहले समझा और पहचान से समझा उनमें प्रमचर भी एक हैं। बिरबा उनके मन में पहले से लहकटा रहा है। पांभीजी को उसे रोस्ता नहीं पड़ा। हाँ सीषा बकर।

बहु तो सब टीक है लेकिन रोटी-पाणी की भी तो कुछ व्यवस्था करनी पड़यो। बसबायों के काठम लिखने से बोड़ें ही बचेया। गोरखपुर से निदबप ही मिराणा हुई लेकिन मुंशीजी इनी बन्धी हिम्मत हारनेवाले मारभो न थे। ५ अर्रैठ को उन्हाने निगम को लिखा — मेरा अग्रवार हारने का मुयम्मम इयाग हो छा है बाउं कि बाउं सरमाया ऊपहम हो पाये और मरमार बाउं मित जायें। जो कि नहीं हो सबा। दूमरी बिसी तछ हाय-नर मारना जरूरी बा। तभी संयोग से बानपुर के मारबाड़ी विद्यालय में हेमालार की जगह छाठी हुई। १४ अर्र को मुंशीजी ने लिखा — मीने मने मरिडिने-बायू महापय बाधीनाय के पाम मेज रिये हैं। अब उनके जबाब का मुयबिर हैं।

दिर २७ मर बा — मरगापजी बा लप बागा पा। मरप्रदेब बर बागा पय लप मरमेरा है। होतै-होतै ११ नूत की लपीय बा दनी लबिन बाजायग

सत नहीं आया। तब मुंशीजी को कुछ चिन्ता होने लगी और उन्होंने बनारस में ही म्युनिसिपल सेक्रेटरी की जगह के लिए कोशिश करना शुरू किया। इसी बीच कानपुर से महासम काशीनाथ का बाकायदा सत आ गया तो १९ जून को मुंशीजी ने निगम साहब को लिखा —

● कुछ सव ठीकारियां कर चुका था। इसका तब मँगवा लिया था (बेहात में यह आसान काम नहीं है) लेकिन धाम को डोटक माना साहब का सत जाये कि मैं सोमवार को तुमसे मिलने आ रहा हूँ। इसलिये तुमन् लो करेण्' रुकना पड़ा और वही पहली मुअम्यन' तारीख मुकद्दम' रही। मैं २२ को चलूँगा और २३ को पहुँचूँगा। पहले इच्छा था कि अयाक को इसाहाबाद छोड़ दूँ और कानपुर में मकान ठह करके सिबा काऊँ। अब आप फरमाते हैं कि मकान भी रोक लिया गया है। यह मुश्किल भी आसान हो गयी। अब सब अयाक के कानपुर आऊँगा। मेरी बकरतों से आप बाकिफ है ही लेकिन बहरसे मुहाक अगर मकान मुझ पसन्द न भी आया तो फिर दूसरा ठलाव करूँगा। हाँ अगर आते ही चाते मकान न मिला तो फिर मुझे आपके घर को छानए बेतकम्सुक' बनाना पड़गा। दो-एक दिन मस्तू रात' को भी एक बेहकानी औरत की मेहमानबाजी करनी पड़गी जिसमें जालिबन पयावा बिलकत न होगी।

● म्युनिसिपल सेक्रेटरी का जिक्र आप किन्तू करते हैं। एक मुजाहिदा तय हो जाने के बाद अब मैं किसी दूसरी मुलाजिमत का खयाल भी नहीं कर सकता। मैंने म्युनिसिपल मुलाजिमत की कोशिश उची हाकत में ही की अब महासम काशी नाथजी ने कोई इयमी' बादा न किया था। उनके और आपके मज्दीन बिसाने के बाद फिर मैंने इस खयाल को बिस में जगह ही नहीं की — वनाँ यहाँ मुस डेढ़ सौ रुपया माहबाद, मकान मुफ्त और काम हत्वे-स्वाहिध की सुरत पेच हो गयी थी। यह मैंने मंजूर न किया। कुछ तो मुजाहिदे का खयाल था और इससे पयावा आपके कुर्ब' का खयाल। महाभायजी की हमदर्दी और सखामतरबी' भी इस कैससे में मुर्द' हुई। अब यह जाखिरी कैसका है।

और २३ जून को सरकमरी लौकरी से इस्तीफ़ा देने के कुछ बाद महीने बाद मुंशीजी मारवाड़ी विद्यालय कानपुर पहुँच गये।

बीबी-बच्चों समेत कानपुर पहुँचने की बात उन्होंने निजय साहब को लिखी थी

१ मजबूरत २ निश्चय ३ पदवी ४ बाल-बच्चों ५ बिल्कुल अपना घर  
जहाँ कोई फिट्ठाबार नहीं बरतना पड़ता ६ सिबयो ७ जालिब्य मरफार ८ पयावा  
९ इच्छानुसार १ निम्नता ११ सराफ्त १२ सहायक

मगर वह न हो सता। बनारस से रवाना होने के पहले ही उन्हें अपने समुर साहब के बेहान्त की खबर मिली और वह परिवार को इलाहाबाद छोड़ कर अकेले ही कानपुर पहुँचे। इस बार मेस्टन रोड पर मकान लिया।

राजनीति का वही रंग था। अमृतसर और खिछाऊत के राष्ट्रीय अपमान से बेस के हिन्दू-मुसलमान दोनों क्षुब्ध थे। असहयोग का आन्दोलन कहीं ठेक कहीं भीमी पास से-जस रहा था। लोग सरकारी नौकरियाँ छोड़ रहे थे नकारत को खरबाद कह रहे थे। नये-नये राष्ट्रीय विद्यापीठ स्थापित हो रहे थे। विदेपी का बहिष्कार पाठ था और जगह-जगह विदेपी कपड़ों और दास्य की दुकानों पर बरना नी दिया जाने लगा था। माँसों में भी एक रुहर आयी हुई थी। पुलिस का अलक लोगो के मन पर अब उठता न रह गया था। जमीन्दार की मनमानी हरजानी सस्ती और बेमार के खिछाऊ सर उठाने की हिम्मत अब किसान को बोड़ी-बोड़ी होने लगी थी।

मुंशीजी का क्या कहता वह तो पहले ही से स्वराज्य के रंग में रंगे हुए थे। और जैसे-जैसे आन्दोलन और पकड़ता जाता था जैसे-जैसे मुंशीजी का उत्साह बढ़ता जाता था। लगभग हर रोज ही कांग्रेस की मीटिंग होती। उसमें उनका शरीक होना जरूरी था। कमी-कमी लौटने में रात के बस बज जाते।

इन्हीं दिनों जगसत के महीने में कानपुर पहुँचने के महीने-बेड़ महीने बाद मुंशीजी के छोटे लड़के अमृत का जन्म हुआ जिसे घर पर सब लोग बट्टू के नाम से पुकारते थे।

मुंशीजी की दिनचर्या वही थी जो सवा से थी। साढ़े पार बज उठकर अपने किराने-गड़ने में लग जाते। बड़े लड़के मुट्टू (मीपत) की पढ़ाई अब घर पर शुरू हो गयी थी। उसे पास में बिठाकर पढ़ाते भी जाते और खुद कितते भी जाते। फिर नहा-आकर स्कूल जाते। स्कूल से लौटते हुए तरकारी बगीरह अपने साथ लेते जाते। बस्ती मोरप्रपुर, बनारस — सब जगह यही उनकी दिनचर्या थी। उसम पिछी तरह का हेरफेर नहीं होता था। नियमित रूप से काम करने की आदत थी। वही उनका मुग था। वही उनका जीवन था। सच्चे जनों में। छेप तो बीबिया थी। उससे जो समय बचता वह सब साहित्य का था। दूसरी कोई बिलचम्पी इधर बरसों से न थी। सिहाबा लिखने की लड़प हर समय उनके मन में रहती थी। छटे-छमागे जिनकी लिखने की मौज आती है मुंशीजी उनमें से न थे। और फिर जिनके लिखने के पीछे तालाकिल राष्ट्रीय हलचलों की प्रेरणा हो और जो केवल रायट को टुक रंग से अपने लिखने को उन हलचलों का अस्त्र बनाना चाहता हो अपने



साहित्य-द्वारा उनमें योग बना चाहता हो उसकी स्फूर्ति का मोल घों भी अपने मन की मीज में ही नहीं बल्कि अपने से बाहर, राष्ट्र के जीवन में भी होता है। इससे पोरबे में मठ भाइए कि उनके बराम पर सिपाही की बर्ती नहीं है बरौर बर्तीबाजे सिपाही भी तो होते हैं। मुंशीजी बेष के एसे ही बरौर बर्तीबाजे सिपाही हैं। अपने बिक की पटिया को छोड़कर और किसी रजिस्टर में उनका नाम भी दर्ज नहीं है लेकिन इतना ही बहुत है। बर्तीपोष सिपाही को और नहीं तो कम-से-कम अपनी बर्ती उतारने पर कुछ हल्कापन कुछ बेछिन्नी माझूम होती है मुंशीजी के लिए उतनी भी सुविधा नहीं है क्योंकि उनके पास उतारने के लिए बर्ती नहीं है और एक जो मर्मपूत गेस्सा बाना उन्होंने अपने मन के ऊपर पहन रखा है, वह उतारने की बीज नहीं है। अपनी बीमारी घर में बाल-बच्चों का रोम-शोक यह सब कुछ नहीं है वह गेस्सा बाना जैसे का तैसा बड़ा रहता है। अपनी तबीयत खराब रहती है इधर कुछ दिनों से बीबी से रोब ही इस बात पर समझा होता है कि बाप काफ़ी खाराम नहीं करते कसम भी खाती जाती है बीबी को कुछ करने के लिए — लेकिन तब रात को चुपके से उठकर जोरौ-जोरी काम करने की तबदीर की जाती है। काम तो होना ही है। मुन्क बिन्दमी और मौत की कफ़ाई लड़ रहा है, ऐसे समय में अपनी तबीयत केकर बैरूंगा? होगा जो होगा देखा जायगा। बच्चे की तबीयत खराब है, उसकी जगहेलना नहीं की जा सकती। ठीक है, उतना काम और जोड़ किया जायेगा। यह कोई आज की बात नहीं है पहले भी बहुत बार एसा मौका आया है कि घर के भीतर की बहुत-सी बिम्बेशारियां झाड़ू-बुहाक और बाना पकाने तक की उनके घिर आ पड़ी हैं, और उन्होंने बहुत खुशी-खुशी उनको निभामा है लेकिन अपने काम की इमिठ बेकर नहीं खाराम की इमिठ देकर।

उनकी पत्नी अपने संस्मरण में लिखती हैं —

● रात को जब मैं सो जाती तो भीरे से उठकर अपनी काफी इत्तम-दावात उठ जाती। जाड़े के दिन के चारपाई पर खबाई जाड़े किसने जगते। मैं देख पत्नी तो लज्जा उठती — क्या अभी बीमारी कुछ कम है या और किसी बीमारी की चाह है।

— नहीं मैं सिध कहां रहा वा बेखता वा पीछे का लिखा हुआ।

— छारा जमाना तो बापको टा घंटा है लेकिन बाप है कि मुंशी का ट्यना चाहते हैं।

— तुम्हें कौन ठोसा नसा।

— इसी तरह गोरखपुर में बीमारी जड़ पकड़ गयी सिपान के कारण अब फिर बैसा ही करने पर तुमे हुए हैं।

—कहाँ? तुमने कमल ही छोड़कर फेंक दी थी। झिंझा कर था!

—कमल तो बाद को मैंने छाड़ी जब और किसी तरह भाग नहीं माने।  
रिन मर मैं भी तुम्हारे साथ बेकार बैठी रहती थी।

—बच्चा छो भाई, जब मैं कुछ काम न करूँगा! ●

मगर नहीं। इन्हीं दिनों २९ दिसंबर १९२१ के अपने लठ में उन्होंने इन्तबाज वाली ताब को सिखा था — मैं भी तर्क-मवालाती हूँ। मेरे दिर-बो-दिमाग में भी आबकलन वही मसामक पूजा करते हैं।

वह पूज चुप कर बैठने बेती है। असहयोग आन्दोलन को खिलाफत का आन्दोलन भी जिसका ही एक अंग है, हर तरह से ताकत पहुँचाना उनका कर्तव्य है, सेव सिपाकर, झिंझे सिपाकर, नाटक सिपाकर, उपम्यास लिखकर, यानी जितनी तरह से अपनी बात सोगों तक पहुँचायी जा सकती हो उन सब तरीकों से उसको पहुँचाना है। यह चुप बैठने का बीमारी को सेने का बल नहीं है।

एक कमजोर-सी बीमार-सी जान है मगर वह हर तरह जूत रही है। कुछ भी उसकी मदद से बचा नहीं है और न असहयोग आन्दोलन के प्रति उसकी समता केवल माबुकता पर ही आधारित है। वह सहज सचेत सचिव अंग की रचि है। वह आन्दोलन की गतिविधि को अपनी पीनी आँवों से देख रहा है, गहरी ध्यानबीन की आँवों से देख रहा है, जितनी गहराई से साम्य उस आन्दोलन के बड़े-बड़े गवा भी नहीं देख पा रहे हैं। और अक्टूबर-नवंबर १९२१ के बमाला में मुंजीबी ने एक सेव लिखा वर्तमान आन्दोलन के रास्ते में रकाबटें। यह रचने की बरूत है कि अभी इन रकाबटों की तरह किसी का ध्यान नहीं जा रहा है सब आन्दोलन को बराबर बढ़ता हुआ ही देख पा रहे हैं। चौरीचौर के काण्ड को अभी तीन बार महीने की देर है। उस बल उनक अपितर सहकर्मों समम भी नहीं छोके कि बापीबी ने आन्दोलन क्यों ठप कर दिया। वहीं पर किसानों की एक मीड ने जान पर हमला करके उसमें भाग लगा बी और कुछ फानिस्टिबिल उसमें जलकर मर वय यह क्या देण के पूरे आन्दोलन को धरम कर देने के लिए काउरी कारण था? बापीबी ने बात की छडाई करना भी बरूती नहीं समता और इतना बहकर संताप कर लिया कि मही उनके अंत-करण की आबाज हूँ। मेकिल जैसा कि भाये बलकर बबाहरलास नेहक ने अपनी आत्मकथा में लिखा — जुलै १९२२ में सायाग्रह आन्दोलन को बंद करने का कारण केवल चौरीचौर नहीं था योकि यह लख है कि रबातानर लोपो ने मही समता। मगल कारण इमते नहीं बड़ा था — उस समय हुनाय आन्दोलन अपनी जाहिर तागत भीर ध्यारत उग्याह क बाबजू बगन ठेकी से बितर रहा था। हमारे समावातर अपठ आदमी जेता में ब म और जनता

को अब तक इस बात के लिए चर भी नहीं तैयार किया गया था कि वह स्वतः अपना काम बचा सके। चौरीचौर काण्ड के कुछ ही महीने बाद मुंशीजी काधी विद्यापीठ में अध्यापक हो गये थे। वहाँ एक रोज बात निकलने पर मुंशीजी ने कहा था कि चौरीचौर के कारण आन्दोलन बन्द करके गांधीजी ने ठीक नहीं किया। उस समय उनके छात्रों में भ्रमबनाय गुप्त भी थे जिन्होंने जागे चलकर आन्दोलन में काफ़ी काम किया। उन्हीं से यह बात माफ़ूम हुई।

मुंशीजी इतिहास के विद्यार्थी थे समाजशास्त्र के विद्यार्थी थे राजनीति की अच्छी धूस-बूस रखते थे मन की एक-एक बूति से इस धान्ति-समर में रमे हुए थे। आन्दोलन के प्रति उनकी ममता थी बसाधारण ममता थी लेकिन बिलकुल निस्वार्थ क्योंकि एक निस्संगता भी उसके साथ समी हुई थी। वह सच्चे निष्कपट भाव से समर्पित हैं देश की स्वाधीनता के संग्राम को लेकिन वो भी अरुण-बसम हैं उस पीढ़ से जिसे सक्रिय राजनीति कहा जाता है। समय इसीलिए वह हर चीज को भीड़ों से अधिक निरपेक्ष होकर बचावा धाक और सौधे ढंग से सोच पाते हैं, देख पाते हैं। वहाँ घुसने बहुत से लोग प्यार के साथ केवल बहे जा रहे हैं इतने बेसुप होकर कि उन्हें एक झटका-सा लगा जब गांधीजी ने आन्दोलन को रोक दिया वहाँ मुंशीजी आँसू-कान खोसकर चल रहे हैं, अमल-बसल दार्ये-बार्ये देसकर चल रहे हैं, बीच बीच में शायद पूछ भी लेंगे हैं मुझसे-तुझसे बक तो नहीं रहे हो बकी दूर जाना है कुछ कमबोरी तो नहीं कम रही है अपने भीतर।

एक सजग देशमन्द और राष्ट्रकर्मी की दृष्टि है जो अपने संग्राम का सिंहास सोकर नर रही है—

स्वराज्य का बचमान आन्दोलन अभी तक तो कामयाबी के साथ जारी ही है लेकिन अब हासिलें रोज-ब-रोज बचारा सतरताक होती जा रही हैं। यों कुछ लोगों की दृष्टि में तो असहयोग आन्दोलन को धिरे से ही कोई कामयाबी हासिल न हुई— न लड़कों ने मवरसे छोड़े न सरकारी मुलाजिमों ने नौकरियाँ छोड़ीं न बकीसों ने बचालत को ममस्कार किया न पचायतें कामम हुईं। लेकिन असहयोग के बड़े से बड़े समर्थक के भी ध्यान में यह बात न रही होती कि इन सभी शाखों में सोकहों जाना कामयाबी होगी। ऐसे मामलों में वहाँ निजी नज़े-मुकसान का चवाल पेश हो जाता है सोकहों जाने कामयाबी की उम्मीद करना मुनहरे सपना देखना है। यहाँ तो अपने में जाना-बो जाना कामयाबी हो जाय वही बहुत है, और सासकर हिन्दुस्तान जैसे गरीब देश में वहाँ साध मागसा रोजी पर आकर रक जाता है। अभी निजी हित और स्वार्थ दिनों से दूर नहीं हैं। और जब तयास कीजिए कि अभी वो साल पहले यहाँ की राजनीतिक हासल क्या थी—साग

सुझाव और व्यर्थ के आश्चर्य को राजनीति का मुख्य अद्य समझने से यहाँ तक कि मजदूरी जलसों और मुद्यायों में भी राजमन्त्रि पर प्रस्ताव पाम करता एक मुख्य कर्तव्य हो गया था सरकारी मौकरियों के लिए किन्तनी दीइयुप बिगनी छीनासपटी और किन्तनी युव्य कारबाइयाँ की जाती थीं तो ऐसी हास्य में यह उम्मीद करता कि किन्तनी जाहू-मंतर से छीम का हुरेक व्यक्ति अपने मित्री पत्रपदे को अपनी बिगनी को छीम पर कुबलि कर देगा असम्भित की तरफ से जाये बन्द कर लेना है। इतलिए हम यह दावा करता अपने तई ठीक समझने हैं कि स्वराज्य का आन्दोलन अब तक कामयाब हुआ।

सेकिन भाये क्या होपा ? कुछ अनिष्टकारी तब भीतर ही भीतर पनप रहे हैं। ये बहर की गाँठें हैं, सदेह की संघय की। संघय ही मन को दुर्बल बनाता है। मन की अँधेरी गहवाइयों से निकलकर उन सब कौड़ों को बाहर झुसी हवा और रोसनी में काओ। दूसरा कोई हलाक उनका नहीं है और अपार देस के नताथा का प्यान इस बात पर नहीं है ता यह सचमुच बड़े दुःख की बात है। बहरहाल किमी को तई करता ही है— और सबसे पहले उस आइमी को करता है जिसका काम ही मात्मा का संस्कार करना है। इतीलिए तो आराध करने की मोहल्ल नहीं है उनको। रिता-दिमाग में हरबन बही मसायन पूजा करते हैं। किन्ता म भी बही खया टन सलफटे हैं। एक नाटक लिखता शुरू किया है, सजाम। उसम भी यही बात है। मन एक ही पन्दी पर बीड़ना जानता है। कछिन न किर सचमुच दीन्ता है, कोई प्रमीन बचती नहीं जहाँ तक उसकी बीड़ न हो।

आन्दोलन के बारे में उसकी वृष्टि जैसी अच्छ और बैज्ञानिक है वैसी उन समय (और भावे भी) कम ही लोगों की रही होवी। उस समय जबकि आन्दोलन में सभी लोग यकसा हिस्सा लेने दिखानी दे रहे थ उसके भीतर काम करमेवाले बयत्वारों को देख सकता और उन बयत्वारों के आधार पर आन्दोलन में पन्ती हुई दरार को देख सकता अमाबारण बन्दर्दष्टि की बात थी।

स्वारा बठिन और हिम्मत को लोड़नेवाला बहु स्वार्थों का टकराव है जिसके एक तरफ जमीन्दार और पूंजीपति हैं और दूसरी तरफ जात्रकार और मजदूर। बाइस पहले भी मध्यकाल का आन्दोलन थी जिसमें जमीन्दार और पूंजीपति साथ साथ थे। बिचकास संस्था बकीरों, प्रोटेसरो और पत्रकारों की थी जो न पूंजीपति हैं और न जमीन्दार। हाँ उस बकन किमानों और मजदूरों में जूनि राजनीतिक बेगना पैदा न हुई थी इसलिए बाइस भी स्पष्ट रूप से उनक बिचकास और उनकी माँदा को भावे न रगती थी। इस दौरान म जनरल ने मायी पून्को का भावे बिच कार में कर लिया है और हिन्दुस्तान न भी जमरा प्रजा हाँ चुना है। बाइस में

बतनी छठरे से छाडी नहीं मबर जाती। उनको खदेसा है कि इन माठ करोड़ मुसलमानों की हमदर्दी दूसरे स्वतन्त्र मुसलमन राज्यों के साथ होगी इसलिए वह खदेरों की छत्रछाया में रहना अधिक निरापव समझते हैं। बहुम की दवा सम्मान के पास भी नहीं है।

सबिह दुर्बलता की निघानी है और मानसिक कायरता का प्रमाण। उस घबरा की बिन्बयी खबीरन है जो बरो-बीबार को चौकसी नजरों से देखता रहे, जिसे अपने चारों तरफ दुस्मन ही दुस्मन नजर आबे कहीं बोस्त की सुरत न रिचापी पड़े।

हिन्दुओं को अपनी पीकमप्रवाली में अपने बार्मिक रीति-रिवाज में ऐसे सुधार करने चाहिए कि उन्हें अपने बेस के रहनेवाले दूसरे लोगों से डर बाकी न रहे क्योंकि स्वराज्य क्या दुनिया की कोई ताकत कमजोरों को बत्याचार से नहीं बचा सकती।

चारोंघा हिन्दू-मुसलमन एकता का मसला निहामत माजुक है और अगर पूरी एह्तिमास और धीरज और बल और रबावारी से काम न लिया गया तो वह स्वराज्य के आन्दोलन के रास्ते में सबसे बड़ी स्काबट साबित होया।

और बही हुआ। चौरीचौर के सवाल पर आन्दोलन के बकबक ठप हो जाने से मुस्क में जो पस्तहिम्मती छापी उसका दूसरा कुछ गतीजा साबर हो भी न सकता था। बदाहरमास नेहरू ने आगे चलकर अपनी आत्मकथा में इसके बारे में लिखा —

यह बिलकुल संभव है कि उसके बाद देश में बटनानों ने जो बुसद माड़ किया उसमें इस बीज का भी हास रहा हो कि एक बिभाल आन्दोलन को इस तरह एना एक ठप कर दिया गया था। उससे राजनीतिक संघर्ष में हानेबासी छिपुट और निरबक हिंसा की प्रबृति चाह एक बपी हो लेकिन उस बमित हिंसा को अपने लिए निवास तो चाहिए ही था और कबाबित् उची ने बाब के बपों में साम्प्रदायिक झगड़ों को और बढ़ाया। अग्रहयोप और सविनय अवज्ञा के आन्दोलन को बनता का जो बिगड् समर्बन मिस रहा था उसके कारण तरह-तरह के साम्प्रदायिक लोन जो अधिकतर राजनीति में प्रतिपामी से सर न उठ पाते थे। वह अब सामने आ गये। और भी बहुत से लोन सरकारी भेदिये और ऐसे लोग जो साम्प्रदायिक झगड़े पैदा करके अधिकारियों को तुस करना चाहते थे इसी रास्ते पर चल पड़े। मोपसाओं के बिरोह से और जिस असाधारण क्रुता से उसका दमन किया गया — कितनी बयानक बीज भी मोपसा ब्रैदियों को देश के बन्द डिम्बा में भूनकर मार डालना — उससे उन लोगों को जो साम्प्रदायिक पूट को बढ़ाना चाहते थे नाम करने का मौक़ा मिस ही गया था। यह बिलकुल संभव है कि अगर आन्दोलन बय

न किया गया होता और सरकार ने उसका बमन किया होता तो साम्प्रदायिक वैमनस्य कम होता

वैसे जमीन इसके लिए बराबर पिछले तीन बरसों से तैयार हो रही थी। पचाह्रलाख लिखते हैं—

१९२१ में विभाजन के आन्दोलन को जो महत्व मिला उसके कारण बहुत से मौलवियों और मुसलिम धार्मिक नेताओं ने राजनीतिक संघर्ष में भागे बड़कर हिस्सा लिया। उन्होंने आन्दोलन को एक स्पष्ट धार्मिक रंग दे दिया और मुसलमानों पर आतंकीर से उसका बहुत असर पड़ा। मौलवियों का प्रभाव और उनकी प्रसिद्धता जो नये जमानत की रोशनी और रहन-सहन के बदले हुए युरोपियन तौर-तरीकों के असर में बराबर कम होती जा रही थी एक बार फिर बढ़ने और मुसलिम समाज पर छाने लगी। असी भाइयों ने जो खुद भी धार्मिक प्रवृत्तियों के थे इस चीज को मन्द पहुँचायी जैसे कि गांधीजी ने भी जो इन मौलवियों और मौलानाओं को अधिक से अधिक सम्मान देते थे।

हमारी राजनीति में जिस तरह धार्मिकता का अंश बढ़ता जा रहा था हिन्दुओं और मुसलमानों दोनों में उससे भी कमी-कमी बहुत परीक्षण हो जाया करता था। मुझे यह चीज बिल्कुल अच्छी न लगती थी। बहुत-सी बातें जा मौलवी और मौलाना और स्वामी और इस किसम के लोग अपने भाषणों में कहते थे मुसको बहुत अस्वसोचनाक मामू होती थीं। उनका इतिहास और समाजशास्त्र और अर्थशास्त्र सब कुछ मुझको बिल्कुल अज्ञात मामू होता था और जिस तरह से यह लोग हर चीज को धर्म का रंग देते थे उससे कारण सचवाई से किसी सवाल पर सोच सकना असंभव हो जाता था। यहाँ तक कि गांधीजी के कुछ दण भी मुझे बैतरह पटकते थे—जैसे राम राज

बहरहाल कारण जो भी हो आन्दोलन रोकने के कुछ ही हफ्ते बाद साम्प्रदायिक शगड़ों का सिलसिला बसा जो काफ़ी संबा बसा। सबसे पहले मुल्तान में दिये हुए, उसी साल १९२२ में। १९२३ का साल भी आरम्भ से ही विभाजन था। मुहम्मद के मौजे पर बंगाल और पंजाब दोनों ही प्रायों में बहुत मयानव दिये हुए।

मूंसीजी शान्तिपूर्वक झगड़ी में बैठे अपने सुरवास की कहानी लिख रहे थे पर बेघर में भाग लगी हुई थी। बलराज और ज़ादिर, इकबर और फतू एक-दूसरे के खून से होली खेल रहे थे। यतीमत इतनी ही थी कि रात में यह ज़हर कम बहुत कम फैला था। यह बीमारी खास तौर से ज़हर की थी और पर्व के पीछे बैठे हुए वही लोग जिनसे हमारी मुलाक़ात सेवा सदन में हुई थी किसी छीसरे के झारे पर डोरियाँ खींच रहे थे। मक़िन ज़हर हो या देहात मोटी बात यह थी कि दो हिन्दोस्वामी ओ इसी मिट्टी में पैदा हुए और इसी मिट्टी में मिला जायेंगे जिन्हें एक-दूसरे के लिए खून बहाता चाहिए था इस समय एक-दूसरे का खून बहा रहे थे और अंधेरे मूंछों पर टाव दे रहा था। सबमुख यह मूंसीजी के लिए परीक्षा की जड़ी थी। उनका सब कुछ किमा-बरा सोचा-समसा स्वप्न-आदर्श मिट्टी में मिला था रहा था।

विषय होकर उनकी समस्त चेतना कुछ समय के लिए सब तरफ़ से अपने का खींचकर इसी ओर लग गयी। प्रेस और मक़ान बनवाने के समेतों में रंगभूमि की गति या ही मन्त्र थी सब इस चीज़ ने जाकर इस बुरी तरह उनको छा लिया कि भाव नहीं सके और कैसे भागते समाज की जिस रंगभूमि का चित्र वह खींच रहे थे वहाँ इस समय भाग लगी हुई थी चढ़कों पर बगुनाहों की छारों गिर रही थी औरतों की जाबरजस्ट रही थी ज़हर के बपूके उठ रहे थे साँस कटे दम बुट्टा था। हर हर महादेव और बल्लाहो अफ़्जर की सवाएँ कानों में विषका हुआ सीसा उँबेलती थीं। एक तरफ़ पर्व-पुरोहित और दूसरी तरफ़ मुस्मा-मौलवी — आज कल यही समाज के अमुबा थे। कहीं हिन्दुओं को कलमा पढ़ाया जाता था कहीं मुसलमानों की दुष्टि की जाती थी। याने के सवाल पर आखी-ममाज के सपके रोड की चीज़ हो गये थे। एक गाय की दुर्बानि के लिए दस-बीस आदमियों की दुर्बानि कर देने में भी लोगों को भार न थी। मुसलमान अगर बीन के बोस में अंसे हो रहे थे तो हिन्दू भी उसका बचाव समाजदारी से नहीं दुबने अंपन से देने पर तुले हुए थे। ईट का जबाब पत्थर।

दोनों अपनी गिरोहबंदी में रूगे थे। लाठिया को तल पिसाया जा रहा था घुटों का मान ही जा रही थी। सेनाएँ सब रही थी।

धर्म की ध्वजा आकाश बुझ रही थी देग भूम में मोट रहा था। कगार दूट दूटकर गिर रहे थे धर्म की बाँड़ में।

कोई किसी की एक बात बरमुक़्त करने के लिए तैयार न था उस्टे छेड़ कर लड़न की फ़िक्र रखी थी। अछबारों और फ़िताबों के जरिये एक-दूसरे पर बहुर में बुझ हुए ठीर छोड़ जाते थे। हिन्दू भी इसमें पीछ नहीं रहना चाहते थे। रवीला रमूक नाम की फ़िताब उन्हीं दिनों पंजाब में छपी थी। रिताना बतमान ने भी इसमें बाँड़ी नाम कमाया था। मुसलमानों में भयानक उतारना फैली हुई थी। कोई खोहार बँत से न भीतने पाता था।

आप समाज ने किसी बत आबाणी की कड़ाई की सिपाही दिये थे इस समय सब हिन्दू धर्म के सिपाही थे।

दोनों तरफ़ बाबद का एक डेर-ना सपा हुआ था — और बिनगारियों की भी कमी न थी।

जैसे कि मलकाना राजपूतों की मुझि जिसे लेकर हिन्दू बहुत बगलें बना रहे थे। यह सब एक मौक न माता था मुचीजी को। गुस्से और रई से बिल तड़प तड़पकर रह जाता था।

यह भी कि झगड़े जितने होते थे उन सबकी जिम्मेदारी हिन्दुओं की थी और मुसलमान सब दूध के बाये थे।

मेजिन कुछ तो पायद इसलिए कि मुचीजी गुद हिन्दू थे और कुछ इसलिए कि उन्हीं का बहुमत था मुचीजी को हिन्दुओं में ही ब्यादा रखागरी की उम्मीद थी। इसीलिए हिन्दुओं की तंगलबरी उन्हें ग्रास तीर पर खली। उसके मुचावले में मुसलमानों का रबैया उन्हें कहीं ब्यादा मच्छा मुकह और समझीने का मामूम हुआ।

और जिस बात की सच्चाई मन में उतर चुकी हो उमका बहने में फिर डर बीमा।

२२ अप्रैल १९२३ का उहोने दिगम माहब की लिगा —

मलकाना मुझि पर एक मुक़तम मबयून लिग रहा है। मुझे इस तहरीक न मान इफ़िलहाक है। आपें ममाजबासे मिदापेगे लिजिन मुझ उम्मीद है आप जमाना में इस मबयून का पगह देगे।



निगम साहब ने पूरे गौ महीने उस पर धीर किया। आपने की हिम्मत न पड़ती थी। ९ जनवरी १९२४ को मुंशीजी ने लिखा — आपने मेरे मजमून को गुस्तरवा कर दिया। और, कोई मुजायजा नहीं। मैंने सिक्क बासा दिरु की बारजू निकल यपी।

मुंशी बयानरामन को वायद कुछ घमिन्दगी हुई इस बात से और वह पुनः आपने फ्रैसले पर धीर करने के लिए मजबूर हुए। और फिर अपने ही महीने इहलुरिबास (मनुष्यता का बकाब) नाम का वह विस्फोटक लेख प्रकाशित हुआ। उसका छपना वा कि पारों तरफ ठहलका मज गया। मुसलमानों ने उसको हार्मों हाय किया और हिन्दू गुस्से से बाँट किटकिटाने लगे।

मुंशीजी के लिए दोनों ही चीजें यकसाँ थीं। वह न किसी की टारीफ़ के मूले से और न किसी क ओप से आक्रान्त उम्होंने तो सच्चे दिरु से बस एक बाबाब उठयी थी एक ऐसी चीज के लिए जिसकी सच्चाई के बारे में कम-से-कम जनता मन आस्वस्त वा। फिर और क्या चाहिए। हो सकता है कि यह केवल मरफ़ रोहन सिद्ध हो मन्कारखाने में लूटी की बाबाब। मगर उधसे क्या। जिस बात को सब जानते हैं उसे कहो। अकेली बाबाब का भी महत्व होता है।

अग्रिम सत्य बोलना गुस्से में बोलना उनका स्वभाव न था। अपनेबानी बात का भी भीट्र बनाकर कहने की उन्हें आदत थी और उसका बंध भी आठा था। लेकिन कभी-कभी ऐसा भी बत आठा है कि अग्रिम सत्य बोलना पड़ता है। मुन्क में जब माग लगी हो उस बत आदमी सिष्टाचार को देखे कि ज़ौम की विनयी को ?

वह भी ऐसा ही एक बत था। ९ जनवरी १९२४ के उसी खत में मुंशीजी ने लिखा था —

मुझ तो इस बत मकी बराबरान की मुकहकुक पाकिसी फ़नेपटा कर रही है। उनके बयानत में जो हूरतमिद इन्ताब हो रहे हैं, उसको बसमी मुदि समझता हूँ और बही मुदि देर-या हो सकती है।

दूसरी तरफ़ हिन्दुओं की बहास पर बेपनाह गुस्सा उनके दिरु में सुलग रहा था। इसी दिमायी कैफ़ियत में उम्होंने बिफरकर इहलुरिबास में लिखा —

● हिन्दू-मुसलिम एकता के बारे में इस बत मुसलमान कौम के दड़ लोगों ने बार-बार की उतेजना के बाबजूद जो बच्छी रबिज मन्थिमार की है और जिस पन्मीरता और बुरदेयी का परिचय दिमा है उस पर हिन्दुओं को घमिन्दा होमा चाहिए। मज तक उम्हें यह बाबा वा कि स्वराज्य के लिए हम जितनी कुर्बानियाँ

कर सकते हैं। उतनी मुसलिम सम्प्रदाय नहीं करता। वह हिन्दोस्तान में रहकर, हिन्दोस्तान का बाना-बानी छाकर अरब और मजूम के सपन देता करता है। उसे स्वराज्य की उतनी छिक नहीं है। बितनी पैन्-इसलाम की। एक बार अब मीताना चौकट अपनी ने किसी छिछाउट के बतसे में कहा था कि अगर मुसलमान को किसी कीमी काम के लिए एक रुपया देना मंजूर हो तो वह चौबह जाने छिछाउट को दे और दो माने कापेस को इस झौठ को हिन्दू अछबापों ने बड़े छिछूट से बहुत खारा महत्व दिया और उसे अपनी बाठ के प्रमाण के रुप में पेश किया।

इस झौठ का उजाडा तो यह था कि हिन्दू महापप अपने दिल में छिछूट होते कि एक मुसलमान को जो अपना सब कुछ भारतमाता की भजर कर चुका हो इस छच्छू दोनों में भेर करने की बकरत पड़ी क्योंकि जाहिर है कि अगर हिन्दुओं ने छिछाउट के मनसे को महात्मा गांधी की ब्यापक दृष्टि में देसा होता तो मीताना साहब को यह बात कहने का कोई मीडा ही न था। अगर सच्चाई यह है कि हिन्दुओं ने कभी छिछाउट के महत्व को ही नहीं समझा और न समझने की कोशिश की बल्कि उसको छन्देह की दृष्टि से देखते रहें।

हम कहते हैं कि अगर हिन्दुओं में एक भी कितम् मुहम्मद अली या चौकट अली होता तो हिन्दू संभल और दृष्टि की इतनी गर्म-बाबापी न होती और इस इमानों में काट्टी कभी हो जाती जो इस बमनस्त्र के कारण खिखायी पड़ते हैं। अगर अठ-मोम के साथ कहना पड़ता है कि कापेस ने भी सामूहिक रुप से इन आन्दोलनों से बला-बलप रहने के बाबजूर ब्यक्तिपतरुप से उसमें शामिल होने में कुछ भी उद्य नहीं रक्ता। इतना ही नहीं एक भी छिछाउट कापेस मता ने ऐलान करके इन आन्दोलनों के छिछाउट आबाज बुझने करने का साहम नहीं किया।

आज काल हिन्दू हैं जो हिन्दू-मुसलिम एगता के लिए जी-जान से काम कर रहा हो, जो उसे हिन्दोस्तान की सबस महत्वपूर्ण समस्या समझता हो जो स्वराज्य के लिए एगता को बुनियादी बाठ समझता हो। कौम का मह दर्द यह टीम यह उदप था कि हिन्दुओं में नहीं दितायी नहीं देती। इस-नाथ हज्जार मकराना को गुड करके कौम पूर नहीं ममाते बाता अपने कथ्य पर पहुँच रूप अब स्वराज्य हासिल हो गया। हमें याद नहीं आता कि आज तक किसी हिन्दू ने बीने दक्खि अथे आब ब्यक्त किया हों, जो इस राम-अगन की जोड़ी में केव स निबालते ही रो रोकर भीबी-भीबी भापों से निरकती हुई दर्द की एक आबाज की छच्छू ब्यक्त किया है। यह है वह राष्ट्रीय आबता जो राष्ट्रीय के बेड़े पार करनी है। उतरी नया बिकारे मपाती है।

हमको यह मानने में कोई सकोच नहीं है कि इन दोनों सम्प्रदायों के कथम कथा और सन्देश और गुणा की जड़ें इतिहास में हैं। मुसलमान विजेता के हिन्दू विजित। मुसलमानों की तरफ से हिन्दुओं पर बहुत क्वाबलिमाँ हुईं और यद्यपि हिन्दुओं ने मौका हाथ आ जाने पर उनका जबाब देने में आया-पीछा नहीं किया लेकिन कुछ भिन्नाकर यह कहना ही होया कि मुसलमान बादशाहों ने सख्त से सख्त जुस्म लिये। हम यह भी मानते हैं कि मौजूदा हाफात में अजला और कुवैनी के मौलानों पर मुसलमानों की तरफ से क्वाबलिमाँ होती है और दलों में भी अक्सर मुसलमानों ही का पसंदा भारी रहता है। क्वाबालर मुसलमान जब भी अपनी पुरानी मुसलमानी के तारे बघाता है और हिन्दुओं पर हावी रहने की कोशिश करता रहता है। तबलीग के मामले में क्वाबली मुसलमानों ने की और हिन्दुओं की खोज-ख-खोज बट्टी हुई संस्था के कारण भी किसी हद तक बही है। मगर इन सारे कारनों और दलीलों और बटमाओं को तजर के सामने रखते हुए हम यह कहना चाहते हैं कि हिन्दुओं को इससे कहीं बघाया राजनीतिक धर्म से काम लेने की जरूरत है। इतिहास से उत्तराधिकार में किसी हुई बघावतें मुशकिल से मरती हैं लेकिन मरती हैं, जमर नहीं होतीं।

हिन्दुओं के त्योहारों और बुराहों के मौके पर अक्सर मुसलमानों की तरफ से यह उफाना होता है कि मसजिदों के सामने तमाज के मौके पर बाना और घादिबाले न-बबामे जायें। यह बहुत ही स्वाभाविक माँग है। घोर-मुल से निरपय ही उपासना में विघ्न पड़ता है और अगर मुसलमान इस घोर-मुल को बन्ध करने पर घोर बेंते हैं तो हिन्दुओं को चाहिए कि वह उनकी दिक्कतों करें।

अगर बर्म का आवर करना अच्छा है तो हर हालत में अच्छा है। इसके लिए किसी सत की जरूरत नहीं। अच्छा काम करनेवालों का सब अच्छा क्यूते हैं। बुनियाबी मामलों में बबने से जाबर में बट्टा कगता है, बीन-धर्म के मामल में बबने से नहीं। कोट्टी के मामले में हिन्दुओं ने शुरू से अब तक एक अन्वयपूर्ण बंध अक्षिपार किया है। हमको अक्षिपार है कि जिस जानवर को चाहें पबिन समझें लेकिन यह उम्मीद रखना कि दूसरे धर्म को माननेवाले भी उसे बीछा ही पबिन समझें सामग्राह दूसरों से सर टकराया है। गाय सारी बुनिया में जामी जाती है, उसके लिए क्या आप सारी बुनिया को बर्न मार देने के क्वाबिल समझें ?

अगर हिन्दुओं को अभी यह जानना बाकी है कि इस्लाम किसी हैवान से कहीं बघाया पबिन प्राणी है चाहे वह मोपाल की गाय हो या ईसा का गया तो उन्होंने अभी सम्पत्ता की बर्नमाला भी नहीं समझी। हिन्दोस्तान जैसे इति-प्रधान

वेष्ट के लिए पाप का होना एक बदनाम है मगर आधिक बुद्धि के अभाव में उसका और कोई महत्व नहीं है। ●

अपनी इसी विप्लवी सामाजिक बुद्धि से मुस्लीमी इस हिन्दू-मुसलम जीवतान के पीछे काम करनेवाले असली हार्थों को देख लेते हैं—

हिन्दुओं में इस बकल गम्भीर नेताओं का अभाव है। हमारा नेता बड़ होना चाहिए जो गम्भीरता से समस्याओं पर विचार करे। मगर होता यह है कि उसकी बगल शोर मचानेवालों के हिस्से में आ जाती है जो अपनी खोरदार आवाज से जनता की छिपी हुई भावनाओं को उमाड़कर उन पर अपना अधिकार जमा लिया करते हैं। वह क्रोध को दण्डित करना नहीं सिखाता रुढ़ता सिखाता है उसका प्रयत्न इसी में है। कोई आत्मी ऐसी उस्टी बुद्धि का नहीं हो सकता कि उसे इस शान्ति मीके पर दोनों सम्प्रदायों की आपसी जीव-दान के नतीज न दिखायी दें और अगर है तो हमें उसकी सम्भावना में सन्देह है। इस सन्देह की पुष्टि इस कारण से और भी होती है कि हम आन्तोन के एक करनेवाले और कार्यकर्ता अधिकतर वही लोग हैं जो राजनीतिक मामलों में हिस्सा लेने से काफ़ी काटते रहते हैं या उसमें हिस्सा लेते मो हैं तो आबरू बचाये हुए, बर्ना हिन्दू संघटन के बनारस में आयोजित जलस में जमीदार और राजाभा की इतनी बड़ी संख्या न दिखायी देती। जिसर बख़्तिय राजे-महाराजे और सेठ-महाराज ही मजूर जाते थे। उनके पीछे जलमदारों में अधिकार के लोग के जिनका पुर्वीनी पैदा पुत्तामी है जिन्हें शुरू से यह निष्कायत है कि मुसलमान सरकारी नौकरियाँ हड़प कर जात हैं और हमारा हाल पूछनेवाला कोई नहीं है जिनके लिए एक मुसलमान सक्-इंसपेक्टर या कुर्क अमीन की नियुक्ति चीन के इन्कलाब या तुर्की की क्राइ से स्वाहा बड़ी घटना है।

पुस्ता जो भीतर जबल रहा था कायद के पत्र पर उतर आया। मजूर पुस्त जो उन्हें अपनी हिन्दू विरायती का कहना था उन्होंने कह लिया। लेकिन उसमें होगा क्या है लूटार मजूरत का वह अजबहा अब भी बीने ही मुंह बाय लड़ा था और अपनी गम-भर्म जहरोली सौमों के बगुले छोड़ रहा था।

कोई और जाने या न जाने मुस्लीमी लूब जानत हैं जि मात्र राजनीतिक एकरा से और वह भी छोटी क कुछ नेताओं की स्थाय कुछ हाल-जाला मही है। प्रभाव की जड़ें बहुत गहरी हैं और उनके अनेक नाम हैं, रूप हैं, स्वर हैं। इति हाल का बटन-सा बड़ा-करबट है। वर्तमान सामाजिक जीवन के बटन में झाड़ें लगाई की साष्ट करना होगा। यह एक सच्चा संघर्ष होगा बटिन संघर्ष होगा।

केवल एकता का नाम अपने से एकता नहीं होगी उस बहर को तो मारो जो दोनों के बिनों में रिस रहा है।

निर्मम निर्भीक सत्य और न्याय — इस संघर्ष में यही दो तुम्हारे संबल होने बाकी सारे हित नेत छूट जायेंगे। लेकिन बरो मत। सच्चाई से अपनी बात कहो और पूरी बात कहा।

बदनामी से भी न डरो। वह तो मिलेगी और भरपूर मिलेगी और दोनों तरह से मिलेगी। दो हाथड़नेवालों के बीच में जानेवाले आदमी को अकसर दोनों ही के ठमाके खान पड़ते हैं। नहीं तो उसका पुरस्कार है।

भयों का विमास सही नहीं है। वह तुम्हारे बारे में क्या सोचेंगे कहेंगे इसकी भिन्ना छोड़ दो।

सत्य और केवल सत्य का आशय लेनेवाले इसी मुक्त निर्द्वन्द्व भाव से मुंशीजी ने कस्तुरिबाबू लिखा था — अगस्त १९२१ में। उसके सपते-सपते फर्मों का सहीना वा गया। दंगों का खोर बटने के बजाय बरबर बढ़ता ही जा रहा था। यहाँ तक कि सन् २४ का साल तो उन सबसे आगे बढ़ गया — दिल्ली मुसलमानापुर, जबलपुर, सखतऊ, इलाहाबाद साहबवाड़ीपुर, एक के बाद एक सभी सहरों में दंगे हुए और उनमें भी सबसे भयानक उत्तर-पश्चिम सीमांत प्रदेश में कोहाट का दंगा था ९१ सितम्बर १९२४ को जिसमें हिन्दू बुरी तरह मारे गये और हज़ारों की संख्या में अपना घर-बार छोड़कर भागने पर मजबूर हुए।

उसके कारणों को जाँच करने के लिए कांग्रेस ने गाँधीजी और मौलाना सैफुल्लाखी की एक कमेटी नियुक्त की। दोनों ने कोहाट जाकर मामले की जाँच की लेकिन उसके कारण के सम्बन्ध में उनका मत एक न हो सका।

गाँधीजी को इन दंगों से गहरा मानसिक कष्ट हो रहा था और उन्होंने उनकी पूरी जिम्मेदारी अपने ऊपर लेते हुए इसकीस दिन के जनघन की घोषणा की — जो कि काफ़ी बहुरे की बात थी क्योंकि अभी हाल ही में उनका अफेफिशियलिटिस का बहुत संकीर्ण आपरेसन हुआ था और इसी के सिद्धिसे ने उन्हें बन्ध से पूरे चार साल पहले बिना सर्जरी के से रिहा कर दिया गया था। इस जनघन की घोषणा से बेस बर्रा उठा। गाँधी जी उन दिनों दिल्ली में मौलाना सैफुल्लाखी के घर पर ही थे। इस अवसर का नाम उठाकर जम्ही दिना २१ सितम्बर से लेकर २ अक्टूबर तक दिल्ली में सब सम्प्रदायों के नेताओं की बुलाकर एकता सम्मेलन का आयोजन हुआ।

इस मुंशीजी न ३ सितम्बर १९२४ को नियम साहब को लिखा —

हिन्दू-मुसलमान प्रयादाय का सिद्धिसे जारी है। मैंने पहले ही पेचीनगोई

## कालम का सिपाही

की थी। वह हर्क-ब-हर्क सही साबित हो रही है। हिन्दू समाज सिन्धी में भी धायद समझौता न होने दे। लखनऊ में रयाद्वी हिन्दुओं की तरफ से हुई मगर बाब को सिन्धी ने मुंह न दिखाया।

इसमें एक नहीं बहुत बुरा जमाना था। चारों तरफ बये हो रहे थे और क्या हिन्दू क्या मुसलमान सबके दिमागों पर उन्ही दसों का जहर फैल रहा था। बापिस के भी तमाम लोग उसी रंग में रंगे जा रहे थे।

मालकूम घर्मा 'तबीन' ने मुजीबी को घायल करके हुए उन्ही दिना के बारे में लिखा ● एक बार वे प्रताप कार्यालय पधारे। मैं उन दिनों प्रताप का सपादन करता था। मेरे एक उप-संपादक किश्तु बिवाही मनोमाधना के थे। बाजबीय में हिन्दू-मुसलिम प्रश्न उठ आया। मेरे उप-संपादक महायम आदेश में आकर बोम इस साम्प्रदायिकता को रोकने का बुरात कोई उपाय नहीं है। इन ईंट का बनाव पत्थर से देना होगा। सभी काम बल्लेमा। प्रेमचन्दजी मुस्कराते हुए मुनते रहे। जब उन महायम की त्वेपमयी बाणी रही तो वे अत्यन्त साधारण स्वर में बोले अरे भाई इस समय मुसलमानों का मानस रोगयुक्त है। पागलों के साथ हम भी पापल बन जायें तो कैसे काम बल्लेगा? वे महायम बल साकर पूछ बैठे, क्यों साहब अगर पागल हमारे सामने पेशाब करने लगे तो हम क्या कर? प्रेमचन्दजी ने धाम्लि से कहा परा दूर हटकर खड़े हो जाओ।

— और अगर वहाँ भी जाकर वह वही हरकत करे तो?

— बघ और दूर हट जाओ।

मगर वह हजबत के हुज्जती इतने पर भी न माने बोले — और जा वहाँ भी जाकर वह वही हरकत करे?

तब मुजीबी ने कहा — बर्मा यह कैसे हो सकता है, वह मन्मानस कोई पगल बोड़े ही बामे है जो यहाँ-वहाँ सब जगह मुनता ही जायगा। ●

इन्दुरिजाल को छापने में निगम साहब को भी महीने रुपये। उसी बीच पाँच महीने में मुजीबी ने वही लमही में रह्य हुए, एगठा (और बचम) को बीना मुजीबी व सिण एक ही बीब के दो नाम या दो पहलू हैं) को एन मुगर कहानी बीडम सिगी और लिता एक नाट्य विषया नाम 'बर्बला' था। मुसलिम इतिहास और परम्परा के अगटे और नैर पहलुओं से हिन्दुओं को परिचिन बघने के लिए हजबत अली और नबी का पीठि-निर्बाह जैनी बीर्ड भी इसी समय लिखी गयी। बम्बद के सङ्गा है। आसराय करने में नहीं बनेता। अरबी पुँठि धलि लगा देनी होयी हम बा' को रोमन मं।

कर्बला की सूचना नियम चाहब को दते हुए मुंशीजी ने १७ फरवरी १९२४ को लिखा था —

मैंने इधर पाँच महीने में अपने नाबिल रंगभूमि के साथ एक ड्रामा लिखा है जिसका नाम है कर्बला। इसमें कर्बला के बाइबल पर लारीबी हूयियत को काम पर रखे हुए एक ड्रामा लिखा गया है। मैंने सब तो हिन्दी रखा है मगर जबान सरसर उर्दू है। क्याह हिन्दी पब्लिक इसकी ऊत्र न करे पर मैंने मुसलमान कैरक्टरों की जबान से फ़रीह' हिन्दी निकसमाना बेमौका समझा। नाटक इरी हफ़्ते में मठवे' में चला जायगा। मेरे ही मठवे में। इस वक्त मखरखानी कर रहा हूँ। मैं इसे सिचसिम्बार जमाना में बे हूँ तो क्या राय है? किन्सा निहायत दिरुबस्य है, निहायत धरनाक। मैंने माबुदी में कर्बला पर एक मखमून लिखा था जिसकी ऊत्र भी काड़ी हुई। कोई बखह नहीं कि उर्दू में ड्रामा मकबूळ न हो। उसमें मुझे मखमून-निगारी न करनी पड़ेगी सिर्फ़ खत' तब्दील कर देना पड़ेगा। बाद को यह सिचसिम्बार किताबी सुरत में निकल जायगा। इसका मकान रखिए कि मैंने एहतराम को कहीं मखरखाना नहीं होने दिया है। एक-एक लपख पर इस बात का खयाल रखा है कि मुसलमानों के मखहबी एहसासों को खबमा' न पहुँचे। मकसद है पोकिटिकल बाहमी' इतहास को बढाना और कुछ नहीं।

कर्बला की लड़ाई में उनको अपनी मनचाही विषयवस्तु मिल गयी। हजरत हुसेन कर्बला के मैदान में शहीद हुए थे। मुहर्रम उरी की याद और उरी का मातन है। अखर दये मुहर्रम क मीके पर हुमा करते थे और इस एक म्यम ही कहना चाहिए कि उरी मुहर्रम की विषयवस्तु में मुंशीजी को एकटा का आचार मिल गया।

नाटक की भूमिका में मुंशीजी ने लिखा था — 'कितने बेद और सज्जा की बात है कि कई सताखियों से मुसलमानों के साथ रहने पर भी अभी तक हम कोय प्राय' उनके इतिहास से अमभिन्न हैं। हिन्दू-मुसलिम बैमनस्य का एक कारण यह भी है कि हम हिन्दुओं की मुसलिम महापुरवों के सखरिचों का ज्ञान नहीं। जहाँ किसी मुसलमान बाबसाह का डिक् जाया कि हमारे सामने औरंगजेब की लखीर लिख गयी। लेकिन अच्छे और बुरे खरिख सभी समाजों में सबैब होते जाये हैं और होते रहेंगे।

दूसरी प्रेरणा यह थी कि इस कर्बला की लड़ाई में कुछ हिन्दू भी हजरत हुसेन के साथ लड़े थे। इसके बारे में मुंशीजी ने अपनी भूमिका में लिखा —

पाठक इसमें हिन्दुओं का प्रकाश करते बेकाबुर पकित होये परन्तु वह हमारी कल्पना नहीं है ऐतिहासिक घटना है। आर्य लोग वहाँ कीस और कब पहुँचे यह विचार घल्ट है। कुछ लोगों का खयाल है, महाभारत के बाद अफगानामा के बसपर वहाँ जा बस थे। कुछ लोगों का यह भी मत है वे लोग उन हिन्दुओं की सन्तान थे जिन्हें सिकन्दर वहाँ से डूँव कर स गया। कुछ हा इस बात क ऐतिहासिक प्रमाण है कि कुछ हिन्दू भी हुसेन के साथ कर्बला क संग्राम में सम्मिलित होकर शीरकपि को प्राप्त हुए थे। मानी कि बेला, आब हुम-नुम एक-दुमरे का लून बहा रहे हैं और एक दिन वह था जब हमारे पुरखों में एक साथ निरुत्तर अपना लून बहाया था !

ककिन इतने स भी बस नहीं है। स्वाधीनता-संग्राम भी उसी क साथ बुझ-मिसा है। कर्बला का मुझ भी धमपड़ था और यह स्वाधीनता का घड़ भी बर्म मुझ है। उन हुसेनी हिन्दुओं के मुँह स भारतस्तुति कराना भी मुँगीजी नहीं मूम।

मपर कित्ताब अमागी थी इयमे सन्देह नहीं। मुँगीजी ने उस अपने प्रेस में आपना मुरू कर दिया था सही लेकिन प्रेस बचारा ता लुड कीडी-कीडी को मुहताब हो रहा था। मेनदार ठकाजों क मारे नाक मे बम बिय हुए थ। आखिरकार मुँगी जी ने मजबूर होकर उसका मुआमला हुकारे आब भागब से किया छवी हुई कित्ताब कायत पर उन्हें दे दी और फिर उम्मी क वहाँ से नवंबर १९२४ में उनका प्रकाशन हुआ।

कलिए, बीसे-बीसे छप तो गयी। उन्हें म तो उनकी और भी बुरी हाकत हुई। पुस्तक क रूप में तो 'कर्बला' कायद कमी निकल भी नहीं जमाजा में धारावाहिक निकलना भी आपान नहीं हुआ — इस बार मुसलमान पाठका के मय स बीमे ही बीम पिछ्छे सास हिन्दू पाठका का मय इहुरिजाल क छपन म आप आया था। कौन जाने एक हिन्दू लेखक के इस्म स कर्बला का जिक मुसलमानों का पसन्द न आये।

बड़ी उमग स मुँगीजी ने यह नाटक लिखा था एहनपम को वहाँ मजबूरबाब नहीं होने दिया था एक-एक काब पर इस बाज का खयाल रफना था दि मुसल मानों के मजहबी एहामाउ का सखमा न पहुँच नार्मेक स्वम व अपने एव बोल्न मुँगी मुनीर हुँकर कुरैसी ने उनका लनुमा हिन्दी म बरारक गणीटर जमाना को भेजा था और यकीनन् इस उम्मीर स भेजा था कि उस भाग और लून म लियड़ हुए जमान में सब लोग उनके इस काम की दाँ देंगे। ककिन अब डूमरों की कौन रहे कुछ मुसलमान बन्दुओं न ही जिनमें जमाना दज्जर के भी कुछ साथ थ उस पर नाक-भी मिबोड़ी ता उनका औ मट्टा हो गया। जिनका टाँर बहा है होम कर्ते हाथ जलजा है।



महद तुली मग से मुसीबी ने २२ जुलाई सन् २४ को निगम साहब को लिखा —

● महदर है कर्बला न निकालिए। मेरा कोई मुहत्तान नहीं है। मैं मुफ्त का बख्शाना सर पर लेने को तैयार हूँ। मैंने हजरत हुसेन का हाल पढ़ा उनके अजीबत हुई, उनके खौफ-खहाइत ने मजबूत कर लिया। उसका नतीजा यह हुआ था। अर्गर मुसलमानों को यह भी मंजूर नहीं है कि किसी हिन्दू की खाम न इत्तम से उनके किसी मजहबी पेशवा या इमाम की महदसपई भी हो तो मैं इसके लिए मुमिन् नहीं हूँ। इस कर्ब का बजाव देना तो अिन्तु है ही हजरत महसन के नोट के मुताबिक कुछ बर्ब करना चाहता हूँ।

बाप ऊरमाटे है कि शिया हजरत यह नहीं पसन्द कर सकते कि उनके किसी मजहबी पेशवा का इमाम तैयार किया जाय। शिया हजरत अपर मजहबी पेशवा की मसनबी पढ़ते हैं अज्जाने पढ़ते है मघिमे सुनते और पढ़ते है तो उन्हें इमाम से क्या एतराब हो? क्या इसलिए कि एक हिन्दू ने लिखा है!

तापीश और तापीशी इमाम में फर्क है, बीसा बाप खुद तसमीम करते है। तापीशी इमाम खास कैरेक्टरों में तो कोई तसपीर नहीं कर सकता मगर सानबी कैरेक्टरों के तबइदुख और तमीम यहाँ तक कि तसमीक में भी उसे बायादी है। हजरत असगर की उम्र ६ माह की थी लेकिन बाब रिवायतों में ६ साल की भी लिखी हुई है। मैंने वही रिवायत बख्तियार की जो मेरे मुनाक़िह हाल थी। अपर बिन्फर्ब ऐसी रिवायत न भी हो तो हजरत असगर इस इमाम के कोई खास कैरेक्टर नहीं हैं।

यकीन की इसकाही हैसियत मुस स कहीं इयादा परत मुअर्रेखीन ने कर बी है। मैं मजबूर बा। मैंने तो सिर्फ उसकी सराबखोरी और ऐसपसन्दी का शिक्र किया है। सराबखोर बा ही। सुमझाए पाशिबीन के बाद और जितने बुलुअ हुए सब पीते थे और बड़के से पीते ब। देखिए यकीन के मुताबिक मौलाना अमीर अभी क्या ऊरमाटे हैं—

Yield was both cruel and treacherous his depraved nature knew no pity or justice His pleasures were as degrading as his companions were low and vicious. Drunken riotousness prevailed at court

- |                |          |                |         |        |
|----------------|----------|----------------|---------|--------|
| १ अंतत         | २ अडा    | ३ बलिगान-मायना | ४ मोहित | ५ सुधि |
| ६ वापइलीक      | ७ इतिहास | ८ परिवर्तन     | ९ बीब   | १ सुधि |
| ११ इतिहासकारों |          |                |         |        |

ठाटीखी हूँदियत से आपने साहस राज के तबानक' पर एतयव किया है। बयक इस्लाम रिवायत में उसका कोई बिक नहीं। मगर एक रिवायत है बा मैंने एसाबा आईना इलाहाबाद से भी है। मुमकिन है वह रिवायत सलत हो मरिन मगर मान लीबिए जेने-यास्वान' ही के लिफ ली गयी है तो इमाम ठाटीख तो नहीं है। इससे किसी ठाटीखी कैरेक्टर पर असर नहीं पड़ता। इन कैरेक्टर का मंशा है हिन्दुओं का हजरत हुसेन पर किया ही जाना। उनका बजु' भी इसीलिए हुआ है। यह इमाम ठाटीखी होन के साथ पोबिदिफस है।

अबकी हूँदियत के मुताब्दिक आपके एतयव की बसरो-बसम' ठसमीन कण्या हैं। मैंने अभी अबीब होले का बाबा नहीं किया। मुस' लोप खबरदस्ती इत्यापरदाश और से निवार' और मस्सम-मस्सम निक रिवा करता है। मैं बात को सीपी तरह सीबी अबाम में बहू देता हूँ। रंगामाबी और इत्यापरदाशी स हासिर हूँ और जब इमाम इसलिये तैयार किया गया है कि हर खास-आ-जाम हो पड़े तो अबामबापई' और भी बेमीअ हो जाती है। बहुरहाक में इमाम की इयामत के लिए मुसिर नहीं हूँ। इसलिये वह बहम मुस्तबी और खरम हो गयी। स्वाबा हुसन निबानी ने हुप्प बीठी मिसी एक हिन्दू मस्फाद ने उसकी ठाटीक की. मिऊ इसलिये कि मीबाना ने हुप्प से अपनी अकायत का इबहार किया बा। मेरा भी यही मंशा (बा)। मगर हुसन निबानी को वह आबाबी हासिक है और मुझे नहीं है तो मुझे इसका अउखोस नहीं। ●

इसी काणवी बोजों के बीजने में छापें कि न छापें इसी हैब-बीत म पूरे दो बरस निकल गये और इसे नियति का बहुत ही बुर ब्यय समझना चाहिए कि जब गो बरस बाद उसके छपने की लीबत आयी (जुलाई १९०६ से अग्रेत १९२८ तक कमरा प्रकाशित) तब तक उसकी सामयिक उपयौदिना में रसी मर अन्तर न आया बा। मारकाट के बाजार में कही मन्वी या पिदाबट का नाम न बा। क्या २५ और क्या २६ और क्या २७ और क्या

यह मई २५ की ही बात है कि गांधी जी ने कलकत के मिर्जापुर पार्क में बोलेते हुए कहा बा कि अगर लून बहाना अकरी ही हो ता फिर मनों की तरह जी सोमकर एत-दुनरे का लून बहाओ काट रेंगी मयडा-माया का, ब्यर्ब का आउम्बर है।

मार् २६ के वर भी बीसे ही लूनी कीचड़ में सजे हुए थे। ६ अग्रेत १९२६ को बाइ इयुनिन ने भारत में पणार्पण किया और जैसे कि उनके स्वापन के मिए,

५ अप्रैल को कलकत्ते में ऐसा भयानक दंगा हुआ जैसा कि मुस्क ने उसके पहले देखा न था। सैकड़ों मरे और घायल हुए। न जाने कितनी हूकारें सुनी कितने बरों को आग लगायी गयी कितनी धीरजों को हँसियों ने अपनी भूख का चारु बनाया।

सन् २७ जनवरी में इस क्रम आये निकल गया। सबसे भयानक दंगा ३ और ७ मई के बीच लाहौर में हुआ — जो कि रैमीला रसूल की अंतिम विराई थी। हाईकोर्ट ने उसके अमियुक्तों को बरी कर दिया था।

उस साल बैच भर में कुछ मिठाकर पञ्चीस ब्ये हुए, जिनमें से इस अकेले संयुक्तप्रान्त में हुए। सैकड़ों मरे, हजारों घायल हुए। लेकिन साहब यह मुंठी भी अपने बंग के एक ही आबमी हैं। हवा कितनी ही प्रतिभल बहती है उनका ओस उठना ही व्याधा उभरता है। कमाक है कि बकाबट भी नहीं माकूम होती। साल के साल

हस की मूठ नहीं पकड़ी कभी मगर जीबट उसी किसान का है जो ऊपर बंबर को जोतने का कलेजा रखता है, बरखा हो सूँधी ही भीला ही पाला ही

और अर्जुन का एकोन्मुख कल्प। ठेस लगी गहरी ठेस लगी उर्बू कर्बला को लेकर, कुछ बंदाबा हुआ कि सारी कितनी गहरी है बहर कितना बहरीला है।

मगर उससे क्या। यह भी एक अनुभव है। काम ठी जो करना है करना है। कठिन काम है टेड़ा काम है, इसीलिए ता और भी करना है। इन छोटे-छोटे सटकों से उसका क्या बनता-बिगड़ता है। जिस रास्ते को एक बार ठीक समझ कर पकड़ लिया उस पर दो फिर चलना हीगा आसौर तक वह आसान रास्ता भी नहीं है बल्की समझौतों का जैसा कि राजनीतिक नेता समझते हैं। उससे कुछ नहीं होने का कुछ भी नहीं। वह तो निर्मम सवर्ष का रास्ता है, हर मूठ के खिलाफ हर पालाब के खिलाफ सच्चाई की वह तक पहुँचने के लिए। न इसके साथ मुरीबत न उसके साथ। मन के भीतर बिप की एक मीठ है सबके। उसकी पहले काटना होगा। फिर नरे मन की रचना होगी नयी साक मिट्टी से नये साक पानी से

लेकिन यह सब तो बहुत आये की बातें हैं।

जमनी १९२२ की जनबरी-फरवरी है और स्कूल के मैनेजर महामय काशीनाथ स मुंशीजी की जनबन इपर महीनों से चल रही है। हर रोज एक न एक जिलना लड़ा रहता है। महापयजी को सबसे बड़ी टिकापत मुंशीजी से यह है कि उनका

प्रबन्ध कच्चा है, कोई ठीक से काम नहीं करता न बपरसी न मास्टर, सब अपने मन के राजा हो रहे हैं। अनुशासन का ता बने नाम-विधान ही मिल गया। उनके पास हींखने को सुबह निकालने को हरबय एक न एक कारण उपस्थित रहता। मुंशीजी बहुत बार तो सुनी खनसुनी कर जाते लेकिन कभी उन्हें बाध कुटी भी लग जाती। यह ठीक है कि मुंशीजी में वह प्रबन्ध-मदुता नहीं थी जिसका एक बच्चे हिस्सा मातहतों की डाँट-मटकार है। महाशय काशीनाथ को दूसरा कुछ भाग न था। सब तक इसी डंग से उन्होंने काम चलाया था। मुंशीजी बड़ी पान्ति से मैस-मुहब्बत से काम करने के भादी थे। मुमकिन है इसस काम में नहीं कुछ हीनापन भी था जाता हो लेकिन मुंशीजी को वह हीनापन भी मंजूर या डाँट फटकार करते रहता मंजूर नहीं था। इस तरह वो विरोधी स्वभावों के टकराव के लिए पहले रोड से जमीन मौजूब थी। ग्राइवेट स्कूल का मैनेजर अपने को महम ही स्कूल का बाबगाह समझता है। टक्करें हीन लयी। चढ़के पी का कहना है कि इन झगड़ों की सबसे बड़ी बबह महाशय काशीनाथ की मुचड़वाजी थी।

चढ़केजी एक से मारवादी विद्यालय में थे। मुंशीजी के साथ भी उन्होंने काम किया और मुंशीजी के बस जाने पर स्कूल के हेडमास्टर बने।

महाशय काशीनाथ मुंशीजी से भले गाराब हों पर मास्टर सब बहुत युग थे। मुंशीजी का सबसे दोस्ताना था इंटरबस से सब लोग उन्ही के कमरे में जमा होते और मुंशीजी दिन भर की खबरें और जाने कहीं-कहीं के बुटकने सुनाया करते। बात-झगडन बस बीठ जाता। मुमकिन है यह भी महाशयजी को बुर लगता हो क्योंकि आम तौर पर हेडमास्टर अपने मातहतों से इसमा दोस्ताना डायम करने नहीं देने जाते। चढ़केजी का कहना है कि मुंशीजी कभी किसी मास्टर के काम में दरल नहीं देने थे यहाँ तक कि मुंशाइने के लिए दरों में भी न जाने थे।

बेहद मादपी में बानासोटी में एक छोटा-सा मदान लेकर रहते थे। पुर मुँरी बाग्यार्ड पर बैठे और मुफाजातियों के लिए भी हम लकड़ी की दो-एक बुनियाँ रग छोड़ी थी।

कोई टीमगम नहीं कुर्मी की पाल नहीं — बोल जात यह बातें भी महाशय की को अच्छी न लयी हों।

बहुप्राण कारण जा भी रहा हो बोरों की अलबन अपनी जगह पर एक बटम लकड़ी की और महाशयजी की जिस हमदर्दी और सलामतदारी का बगान मुंशीजी ने हम लकड़ी पर आज समय आज से इटीब बाठ महीने पर्म किया था उमका अब नहीं नाम भी न था। और मुंशीजी ऐसे मादनों से बच

किसी को माऊ करनेवाले। अपने बिल का बुझार (इस रहस्य का उद्घाटन भी फड़के भी ने ही किया) उन्होंने त्यागी का प्रेम नाम की एक कहानी लिखकर उद्योग जिसमें महाध्वजी के एक प्रेम-काण्ड पर छिटकणी थी। बाब्रिकार साल भी पूरा नहीं होने पाया और मुंशीजी ने बहुत तंग आकर २२ फरवरी १९२२ को वहाँ से इस्तीफा दे दिया। पीछे १४ जुलाई १९२२ के अपने छठ में मुंशी जी ने बनारस से निगम साहब को लिखा — मुझे पारबाड़ी स्कूल में बिलनी तक-भीक हुई उतनी कहीं और हो ही नहीं सकती। मामूम नहीं महाध्व से मेरी क्यों बनबन हो गयी।

आठ महीने के भीतर यह सब बेक-ठमाया छलम ही मया और मुंशीजी फिर बनारस पहुँच गये। इस बार नौकरी उनके लिए जैसे पहले से रखी थी। बाब्रिकार गुरु ज्ञानमण्डल से मरिया नाम का एक मासिक निकालने से बिलका सम्पादन बाब्रिकार सम्पूर्णित्व करते थे। वह असाहयोग आन्दोलन में उम्मी बिलों पढ़ते गये और स्वाभाविक सम्पादक के रूप में प्रेमचन्द की विक्रित हो गयी। काशी उस्ताह में मरकर उन्होंने २६ अप्रैल को निगम साहब को लिखा — 'हिन्दी में आज कल मये रिवाजों की कम है। सम्बन्ध से एक निकल रहा है, दूसरा कलकते से। दोनों बड़ी-बड़ी तैयारियाँ कर रहे हैं। मन्वामीन की क्रमार्थों खेजाना मौसूम होती है। इसलिए चर्चु किलने की उरुज ख्याल ही नहीं गया।

बेहात में रहते थे। मरिया में काम करते थे। रोड शहर जाना-जाना — बीसा कि पाँच में और भी बहुत से लोग करते थे — लेकिन काम खपने मन का था और मुंशीजी सारी बकान के बाब्रिकार सुध थे। पर इसमें सम्येह नहीं कि अपने भी के बहुत से जंजाल उन्होंने एक साथ ही पाक सिमे थे। जैसे हाम में गिनती के और इतर तर मन रहा था उधर उधर में प्रेस की तैयारी ही रही थी। पुण्या पुस्तनी पर मय सब के रहने के लिए छोटा पड़ता था इसलिए यह ख्याल पैदा हुआ कि एक बैठक बन पाय ता कम से कम उठने-बैठने का सुभीता हो पाय — और फिर वही बैठक बढ़ते-बढ़ते एक पक्का तिमजिला मकान बनती जा रही थी। और उसके साथ ही मुंशीजी की परीछामियाँ भी तिमजिला होती जा रही थीं। यहाँ तक कि मकान शुरू करने के कुछ ही रोड बाह उनको अपनी उलटी समय में कायी और उन्होंने २४ जून १९२२ के अपने छठ में निगम साहब को लिखा — अगर मुझे मामूम हाथा कि हम इतर जल मुझे प्रेस लोकना पड़गा तो मैंने ठामिरे मकान में हाथ न समाया होता जिसमें अभी तक तद्वीचन भी हबार चर्क हो चुके हैं और प्लास्टीक प्रर्थ बरिख का काम बाड़ी है

अगर मझे मामूम हाथा । सरासर अपने को बोया देने की बात है। मामूम

तो हज़ारों की इस्तीफ़ा देने के रोख से वा कि जब वह प्रेस को खिंचे! दूरदस्त भी वह अपने को किसी से कम नहीं समझते। लेकिन लोग जो कुछ पट्टी पढ़ा देते हैं — उस मरीख का इतम क्या इतम! बहुधास जब ही झलकी हो ही गयी थीर मकान जब इतना बनकर बड़ा हो गया तो जैसे ही हो उसे पूरा करना ही होया। उधर प्रेस इतम जान को पड़ा था। जैसे-जैसे कुछ लड़ाई के बाण्ड बैचकर, जो उस बज्र लट्टीवे के भीर अपनी लूटटी सब पेई-पूँजी ओड़-बटोरकर इरीब चार हज़ार रुपये सबै हुए लेकिन उतना काफ़ी न था — मुझे प्रस के लिए कितनास पाँच हज़ार दरकार होंगे। प्रस बमते-बमाते एक हज़ार लग जायेंगे। प्रस को बताने के लिए एक हज़ार की किक लीर है। मैंने चार हज़ार का इन्तज़ाम कर लिया है। एक हज़ार मेरे इन्दीयी भाई साहब दे रहे हैं। अभी कम सब कम एक हज़ार की भीर बकरत है। आपके बहाँ से सात ही मिल जायें तो बीया एक छोट से सक्कड़ ईन्ड ट्रेडिङ का काम निकल जाये। यह समझ लीजिए कि प्रस तुल जाने के बाद मेरे अदायक में एक बीड़ी भी न रहेगी। इस दौब पर अपना सब कुछ रपकर किन्मत बाबमा रहा है। पैसु क्या मरीखा होता है। मैंने मुंजीजी को अपनी बगइ पर यह भी बक्रीन है कि साल के अन्तर में इस इन्तज़ाम ही जायेंगा कि पर बैठे दो-बाई ही पैसा कर सबै।

साथी बिन्दगी मही अपना देगते रहे कि चर बैठे इतना मिल जानया कि बाल-रोटी की बिन्दा से मुक्त होकर अपना तिकता-बदना कर धरुपा मेफिन सपना सपना रह गया। मगर कोई पूछे कि यह बुबा सैमने की एसी क्या बकरत थी आपकी। जब ही आपको अपनी बिताबो के लिए अदायक का भी टोट्टा नहीं था क्या बकरत थी इस तरह लीमोटी पर पयव सेकने की। मजे में अपने नाविक सिगरेट बजासियाँ और सेरा भी महीने में चालीस-सचास पै ही मरने और आप सामोची से अपने एक कोने में पड़े रहते मऊपो के सेने में न मापो क देने में। मगर नहीं विमाण का कौड़ा भी ही कोई चीज है। बहुत पुराना बीड़ा है बरलां न काट रहा है। यही-बड़ी योजनाएँ हैं बिन्दगी सचयता बमनिग्य है बम से कम बाण्ड क बले पर। बोई भी काम शुरू करने के पत्रक उसरा हिमाब पकर मपही तरह फँसाकर बैस लिया जाता है यह आप कमी नहीं वह मरने कि वह जीव मूँद कर बुर पकते हैं इस तरह के पंधा में! जी नहीं वह जीव ताणकर पदर में बूँते हैं! यही तो सास बात है मुंजीजी की। और बूँटि उतना हिमाब बिताब भाना-भाई तक पररा रहता है इसलिए आप उम्ह पर बाण ममता भी नहीं मरने उल्टे इस बात का दर रबादा है कि वह अपने बाजीपर के सेर पैस हिमाब-बिताब से गुर भाव की अकल केर हें और आप भी उतन नाम इस जुए की

फड़ पर आ बैठें। ऐसा ही कुछ बाबू रखा होगा उनके समझाने में तब तो उन्होंने अपने साथ तीन और लोगों को बसीट किया। इन्द्री भाई, बाबू बलदेव जाक ने अपनी जिनगी भर की कमाई दो-आई हजार लगा दिया। रघुपति सहाय फिराङ्ग भी दो हजार लगाकर इस खेल में घरीक हाँ गये। मुंशी महताब राम ने भी इधर-उधर से चौड़-बटोरकर डेढ़ हजार लगा दिया। हाँ नाता साहब पर, जो एक ही पाष बादमी से मुंशीजी का बाबू नहीं बचा और उन्होंने बाड़ा लीसकर उनके बारे में निगम साहब को लिखा नाता-बाना से मृतकक उम्मीद नहीं। बड़ घातिर निकले। मगर खैर, जैसे-तैसे काम धुक करन भर के पैसे तो उनके हाथ में अपने ही हैं और अब उन्होंने अपना सब कुछ बाँध पर लगाकर इरिमत आजमाने का फ़ैसला कर लिया ता फिर उन्हें कौन रोक सकता है। मुंशी श्यामरामन ने उनको समझाने की काड़ी कोशिश की कि यह काम आपके बस का नहीं है लेकिन कौन सुनता है। यही तो सबसे मजे की बात थी कि मुंशी भी अपने से ब्यादा ब्यवहार बुद्धिसंपन्न किसी को समझते ही न थे। हिसाब में कहीं बूक हो तो कहिए, वह आपकी बात मानेन मगर उसमें बूक कहीं वह तो मुंशीजी का तैयार किया हुआ हिसाब है जिधर से भी देखें उसमें गड़बड़ ही दिखायी देता। उसे भी एक गजर बाँधने का खेल ही समझिए, फर्क बस इतना है कि सबसे पहले बाबूगार खुद अपने जाड़ के असर में हैं। लिहाजा अगर बूबना है तो मुंशीजी पूव पहले बूबेंगे — मगर अपने साथ यार का भी से बूबने की पूरी तैयारी है। जोड़ा भी वही का बूबना कहीं का क्या कैसी मनहूस बात करते हो मुंशीजी तो साक ही भर बार सबको मुलाप्रा देनेवाले हैं। कोई मजाक है मुंशीजी बिबनेस करने निकले हैं, देखिए कैसे-कैसे करिबने विचसाले हैं।

इसी बीच क्या हुआ कि जुलाई के महीने में आकर उनकी मर्यादा वाली नौकरी खत्म हो गयी। ७ जुलाई १९२२ को मुंशीजी ने निगम साहब को सूचना दी 'महाँ ज्ञानमण्डल से असहबा हो गया। बाबू साहब ने स्टाक कम कर दिया है।' लेकिन मुंशीजी को बूसरी जगह काम दिखाने का बाबू साहब माली बाबू घिबप्रसाद पुत्र ने पूव खयाल रखा। काशी विद्यापीठ अभी हास ही से स्थापित हुआ था — जब कि देश में और भी कई जगह कांग्रेस की प्रेरणा और उद्योग से राष्ट्रीय विद्यालयों की स्थापना हुई थी। मुंशीजी ज्ञानमण्डल से अलग होकर सीधे विद्यापीठ पहुँच गये और उन्हें विद्यापीठ के स्कूल महकमे की हेडमास्टरी मिल गयी। देहात से आठे-आठे से काड़ी दूर पढ़ता था लेकिन खैर अब एक दिन की नौकरी भी बल बाँठा था। अब तो स्कूल का मामला था और लबरे का स्कूल पाँच में खरूर नहीं चल सकता था। लिहाजा मुंशीजी कबीरधोर पर बर रुकर खूने लय —

आया मन्मथ। कैसा एक श्याम या इस नाम में मुंजीजी के लिए! कैसी-कैसी भासाएँ लेकर प्रेम खोजा या रहा या!

नियम साहब ने मौजरी की बात पर कदाचित् यवा प्रकट कौचि थाप एक तरह ही प्रेम खोजने की तैयारी कर रहे हैं और दूसरी तरह स्कूल में मौजरी दोनों एक साथ कैसे चलेगा, ती मुंजीजी ने उसका समाधान करते हुए १४ घण्टी का किया — बिद्यापीठ में आरबी<sup>१</sup> और पर गया है। बाबू भगवानदास जी के स्कूल का हिस्सा भरे सिपुर्द कर दिया है। दकल नहीं देने। इसलिए कोई तरह का नहीं। नाममदल में भी काफ़ी धारण था। बिद्यापीठ में विमल का मौजा है और धारण भी।

प्रेम की तैयारी धोर-धोर से चल रही थी। बही सास बीज थी। घाटी भाषाएँ उसी से लयी हुई थी। उमर प्रेमाश्रम की किसी बच्ची हा रही थी — सात सवा सात में एक हज़ार प्रथिमा निकल गयी थी। मुंजीजी ने काफ़ी उल्हाह में मरकर किया — गया नाविक एक हज़ार निकल गया। अब क्रिस्मो का मजसूमा निकलनबाका है। मुझे मात्म होता है कि याम एक नाविक और बच्चा लिपिकर में आपानधीन हो सकता है। इनके अकल पर बैठे मिल आपया।

कैनी कूर मूषकनना है विमके पीछे घाटी बिन्दनी घटीब हींइता रहा! सेविन बुध भी क्या है। हर भासी तो किसी न किसी बीज के पीछे दीइता है। बच्चा ही है कि मुंजीजी जिस बीज के पीछे दीइ रहा वह पैसा न या बचिकार भी न या मूठी सामाजिक प्रतिष्ठा भी न थी बस एक मूषकनना थी। उसमें और कुछ हो न हो, कम से कम आत्मा का मोरव अलग रहता है। काम की बीड़ में जीने का उन्हें अभ्यास है। उसी में वह गुण भी रहने हैं। और आजकल काम ही काम है। दरर पर बन रहा है उधर प्रेम की तैयारी हो रही है — इसमें अलग ठेकी से चल रहा है। और क्यों न चले इसमें ठेकी से जब कि लय स्पष्ट है। सबसे पहले तो लोगों की अनजोय के लिए तैयार करना है, बाजारम मर देना है बिदेनी सता ने अनजोय की सूज से। अनजोय यानी बहिष्कार, बिदेनी बीजों का कचही-अज्ञान का सरकारी-नीतिरियों का सरकारी स्कूल नामक का कौनकों का नगीनी बीजों का। उन सब बीजों का विगरी मरद ने बिदेनी सता यहाँ पर काम है।

बच्ची बाग हो चाहे बूटी बहानियाँ आजकल हमी एक घुटी पर घुमती हैं



क्याकि शिको-विमात्र में आजकल वही मसामस मुखा करते हैं— बड़ी बेचारवी के अन्दाज में और जैसे कुछ माफी-सी मांगते हुए उन्होंने यह बात ताज साहब का लिखी थी। किस्सों में भी वही जमाकात मसकते हैं। और अबबी रसाइल<sup>१</sup> में उनकी गुंजाइश नहीं। अबबी रसाइल में जिस बात और जिस तरह ययान की इत्रवाणी है उसमें मुशीजी को मुतकल्ल बिलकस्पी नहीं है। पमीन-आसमान के कुलाबे मिसादेबामी लयाली बात और उन्हें लोड़-मोड़कर, उलझाकर, डेरों रम चढ़ाकर पेश करने का अन्दाज — इससे क्योंकर मेक ल्याये मुशीजी का अपना डग वही एक यों ही सादा पिन्नाज इस वक्त और भी रपाश सावरी क लिए कोगिफा कर रहा हो ताकि उसकी बात क्यादा से क्यादा लोगों तक पहुँच सके। इसीलिए अपने उस छत मे मुशीजी ने ताज को लिखा — आजकल साहीरी रिसाकों न लिखते हुए तबीयत हिचकिचाती है। मैं बह उवान नहीं किन सक्ता जिसका आजकल अबसर रिसाकों में नमूना नबर आता है इस रंग का उनमुर है सीबी-सी बाग को तयबीहात और इस्तबागत<sup>२</sup> में बयान करना। मैं इस रम की तक्लीद से कासिर<sup>३</sup> हूँ। ताजवर साहब भी इसी रंग के मुकस्सिद<sup>४</sup> के और मुभाऊ कौब्रिणा हजरत बविक यी इसके बिलकाबा<sup>५</sup> नबर आवे हैं। ऐसे रयीनगबीसों को मेरी स्ली-नीको तहदार क्या पसन्व जायेगी। यह महब आपका इसरार है जिसन मुसे मजबून के लिए कसम उठाने पर मजबूर किया।

मुशीजी का अपना रंग है अपनी यह है, और कही भटकान नहीं है। असह योग स्वराज्य के लिए है। उस स्वराज्य की तस्बीर बूसरे सगों के रिमात्र में साक हो या न हो गांभीजी ने भी उस चाहे चौक-मोफ ही रक्ता हो मुशीजी के मन में कोई बुनिया नहीं है — स्वराज्य का मतसब है किमान-मजदूर बनता राज कुछ बीसी ही बीज बीसी कि बोलसबिकों ने अपने यहाँ जायम की है और उसको हाथिल करने की पहापी जो शर्त है किसान और मजदूर की एकता उसका मन्तर भी हुआ आकर उनके हाथ में फूँक गयी है।

और यह असहयमग और स्वराज्य दोनों कड़ियाँ हैं उस पुराने स्वप्न की ब्यवहार से स्वप्न तक का सेतु — स्वप्न वही पुराना जो बुनिया के सब रूपियों का स्वप्न रहा है कि मनुष्य अपनी भुइताओं से ऊपर उठकर देवत्व की ओर बढ़ सके और एक ऐसा मानव समाज बने जिसमें सब बराबर है और कोई किसी का लून नहीं बूम सकता। इस स्वप्न को चाहे जिस नाम से पुकारे या मुमीजी का हमसे

१ साहित्यिक परिचामों    २ तत्व    ३ उपमाओं    ४ बपनों  
 ५ अनकरम    ६ अद्यमय    ७ अनुकरम करनेवाले    ८ प्रेमी

बहुत नहीं है। वह नाम चापद सब ठीक होंगे — और सब उतन ही उल्लूक नाम के छेरे में पड़ते ही क्यों हों वह ता छिन्नका है उसे छीस्मर देवो मरर क्या है। हाँ अगर नाम के बिना तुम्हारा काम किसी तरह नहीं चलता तो सा मैं वो नाम देता हूँ — जनतावाद साकवाद। जनता नहीं उसम ता धाला है। सनी अपने को जनता कहते हैं लेकिन जनता उसमें कहाँ है। नाम अनगढ़ हो तो क्या ऐसा होना चाहिए जिसमें किसी तरह के धोरे की गुंजाइश न रहे। लेकिन शीश का नाम दे देना ही ता काफी नहीं है उसका बिरवा लोगों के रिक्त म रौपना होगा। वह बात लोगों के सामने मानी चाहिए, बस चरित्र मान चाहिए — और उसम भी बहाँ खोने की गुंजाइश हा उसकी सफ़ाई हाती चलनी चाहिए।

मारवादी विद्यालय से असंग होने ही मुत्तीजी ने कहानी छिनी हार की बीत। उसका नायक धारदाचरण अपनी और अपन एक दोस्त की चर्चा करते हुए कहता है — हम दोनों ने ही एम ए० के लिए साम्यवाद का विषय लिया था। (अपने उत्साह में कहानीकार को इसका भी प्यार नहीं रहा कि हिन्दुस्तान के किसी विश्वविद्यालय में एम ए के लिए साम्यवाद का विषय नहीं लिया जा सकता) हम दोनों ही साम्यवादी थे। केवल के विषय में तो यह स्वाभाविक बात थी। उसका बुरा बहुत प्रतिष्ठित न था न वह समृद्धि ही थी जो हम सभी को पूरा कर देती। मैं छात्रावास का लाइब्रेरियर और रसम था। मेरी साम्यवादिता पर लोगों की कुतूहल होता था। हमारे साम्यवाद के प्रोफ़ेसर बाबू हरिदास भाटिया साम्यवाद के सिद्धान्तों के ज्ञायक थे लेकिन चापद धन की भबहेलता न कर सके थे। यह खुदकी उकरी है — वह साम्यवादी भी था जो साम्यवाद के सिद्धान्त का तो ज्ञायक है मगर धन की पूजा से छुटकारा नहीं पा सका। एमे उदानी जमा सबे बाल लोगों से जनरी राग की कुमनी है वह चाहे फिर किसी जन्मे के हा किन्ही सिद्धान्तों के माननेवाले हों।

प्रोफ़ेसर भाटिया की बेटी लज्जा ऐसी न थी वह केवल सिद्धान्त की भक्त न थी उनको व्यवहार में लाना चाहती थी। धारदाचरण उसके प्रेम का दिलचारी है लेकिन उसका मुकाब मरीच बेराब की ओर है। धारदाचरण से लज्जा दो टुक बाँटे करती है —

मैं जानती हूँ कि इस समय तुम्हें कुछ-प्रतिष्ठ और रियामन का सैगामात्र भी अनिमान नहीं है। लेकिन यह भी जानती हूँ कि तुम्हारा कालेज की चीनल छाया में पला हुआ साम्यवाद बहुत दिनों तक सामाजिक जीवन की ल और सपन को न सह सकेगा।

क्योंकि बिन्धो-बिमात्र में जाबकल वही मसायल नूचा करते हैं—बड़ी बेचारी के अन्धारे में और जैसे कुछ माफ़ी-सी माँगते हुए उन्हें वह बात ताज साहब को मिली थी। किस्ती में भी बड़ी खयालात झलकते हैं। और अरबी रसाइल में उनकी गुंजाइश नहीं। अरबी रसाइल में जिस बात और जिस तर्ज बयान की इज्जतानी है उसमें मुंशीजी को मुतसक दिक्कतस्पी गही है। जमीन-जासमान क कुन्नाबे मिस्लागेबाफी खयाली बार्जे और जन्हु ताड़-मोड़कर, ठसझाकर, डेरों रस पढ़ाकर पेश करने का अन्धारे — इससे बयोकर मेक खाये मुंशीजी का अपना बंध जहाँ एक ओं ही सादा मिन्नाज इस बकत और भी खयाला साहबी के लिए कोशिश कर रहा हो ताकि उसकी बात खयाला से खयाला भोगों तक पहुँच सके। इसीलिए अपने उस कल में मुंशीजी न ताज को लिखा — जाबकल साहीरी रिस्सालों में लिखते हुए लक्षित हिक्कियारी है। मैं वह खयाल नहीं मिल सकता जिसका जाबकल अक्सर रिस्सालों में नमूना नजर आता है इस रग का उनमुर है सीधी-सी बात को लसबीहात और इस्तभारात में बयान करना। मैं इस रग की लकलीबे न काखिर हैं। ताजबद साहब भी इसी रग के मुद्दिलिये थ और मुजाफ कीबिएगा हजरत वेदिये भी इसके दिक्कतार्ज नजर आते हैं। ऐसे रगानबीसों को मरी कस्ती-स्त्रीकी तह्दीर क्या पसन्द आदनी। यह महज आपका इसरार है जिसन मुझे 'मसबुत' के लिए कसम उठाने पर मजबूर किया।

मुंशीजी का अपना रग है अपनी राह है, और कहीं भटकाव नहीं है। असह याप स्वराज्य के लिए है। उस स्वराज्य की लखीर दूसरे सायो के बिमाय में साफ हो जा न हो गाधीजी ने भी उस बाहि गोस-मोस ही रक्ता हो मुंशीजी के मन में कोई दुबिधा नहीं है—स्वराज्य का मतलब है किस्सान-मजबूर बनना राज कुछ बीसी ही बीज जैसे कि बोलेवेबिकों ने अपने यहाँ कायम की है, और उसको हानिस करने की पहली जो बात है, किस्सान और मजबूर की एकता उमका मस्तर भी हवा आकर उनके कान में पटक गयी है।

और यह असहयोग और स्वराज्य दोनों बड़ियाँ हैं उस पुराने स्वप्न की अजबहार में स्वप्न तक का सेतु — स्वप्न वही पुराना जो बुनिया के मज अदियों का स्वप्न रहा है कि मनुष्य अपनी इच्छाओं से ऊपर उठकर देवत्व की ओर बढ़ सके और एक पैसा मानव समाज बने जिसमें सब बराबर हैं और कोई किसी का लुत नहीं खूस सकता। इस स्वप्न को चाहे जिस नाम से पुकार लो मुंशीजी का इसम

१ साहित्यिक पत्रिकाओं २ ताल ३ उपमाओं ४ बपकों  
५ अनुकरण ६ अगमर्थ ७ अनुकरण करनेवाले ८ प्रेमी

बहुत नहीं है। वह नाम चायद सब ठीक होंगे— और सब उतन ही शक्ति नाम के फेर में पड़ते ही क्यों हो वह तो छिपका है उसे छीसकर देखो अन्तर क्या है। हाँ अगर नाम के बिना तुम्हारा काम किसी तरह नहीं चलता तो जो मैं दो नाम देता हूँ— जनतावाद लोकवाद। जनता नहीं उमम का घोटा है। सभी अपने की जनता कहते हैं लेकिन जनता उसमें कहाँ है। नाम मतगड़ हो तो क्या ऐसा होना चाहिए जिसमें किसी तरह के घोसे की गुंजाइश न रहे। लेकिन चीन को नाम देना ही तो काउंटी नहीं है उसका बिरबा लोगों के विल म अपना होगा। वह बातें लोगों के सामने आनी चाहिए बस जरूरत यान चाहिए— और उसमें भी जहाँ जोट की गुंजाइश हो— सही सफाई हाथी बछनी चाहिए।

मारवाडी विद्यालय से अलग होने ही मुचीजी म कहानी लिखी हार की थीत। उसका नायक धारदाचरण अपनी और अपने एक दोस्त की चर्चा करते हुए कहता है— हम दोनों न ही एम ए के लिए साम्यवाद का विषय लिया था। (अपने उत्साह म कहानीकार को इसका भी ध्यान नहीं रहा कि हिन्दुस्तान के किसी विरबविद्यालय में एम ए के लिए साम्यवाद का विषय नहीं लिया जा सकता) हम दोनों ही साम्यवादी थे। केराब के विषय में तो यह स्वाभाविक बात थी। उसका कुछ बहुत प्रतिष्ठित न था न वह समृद्धि ही थी जा हम कमी का पूरा कर देती। मैं छात्रदान का ताल्लुकदार और रूम था। मेरी साम्यवादिता पर लोगों को बुनूहल होता था। हमारे साम्यवाद के प्रोफेसर बाबू हरिप्रसाद भाटिया साम्यवाद के सिद्धान्त के ज्ञायक थे लेकिन धायन बन की मकहफना मकर सचन थे। यह चुटकी पकरी है— वह साम्यवादी भी क्या जा साम्यवाद के सिद्धान्तों का तो ज्ञायक है मगर बन की पूजा से छुटकारा नहीं पा सका। एम उबानी जमा खर्च बाने लोगों से उनकी सहा की दुष्मनी है वह चाहे फिर किसी काम न हा किन्ही सिद्धान्तों के माननेवाले हों।

प्रोफेसर भाटिया की बेटी लज्जा एसी न थी वह केवल सिद्धान्तों की मकहफ न थी उनका व्यवहार में साना आहती थी। धारदाचरण उमक प्रेम का भित्तारी है लेकिन उसका मुकाब गरीब बेराव की ओर है। धारदाचरण से लज्जा दो टुक बातें करती है—

मैं जानती हूँ कि इस समय तुम्हें बुल-मनिष्ठ और गियामन का लेगमात्र भी अभिमान नहीं है। लेकिन यह भी जानती हूँ कि तुम्हारा काम ही पीठक छाया में पला हुआ साम्यवाद बहुत दिनों तक सामाजिक जीवन की मृ और सफ्ट को न महु सकेगा।

इसके बचान में शारदाचरण कहता है— बिन कार्यों से मेरा साम्यवाद स्रुत हो जायया क्या वह तुम्हारे साम्यवाद की जीवा लोकेगा ?

कज्जा साहस के साथ उत्तर देती है— हाँ मुझे पूरा विश्वास है कि मुझ पर उनका बरा भी असर न होया। मेरे घर में कभी रिपासत नहीं रही और कुल की अवस्था तुम मञ्जीमति जानते हो। मझे वह दिन नहीं भूखा है जब मेरी माता भीनित थीं और बाबूजी ध्याखू बने रात को प्राइवेट द्यूशन करके घर आते थे।

कहानी कमजोर है आदर्शवादी हंय से उसका समापन होता है, शारदाचरण कुछ रोड एक जमीर लड़की के प्रेम में भटक-भटकाकर बाहिरकार त्याग और सेवा की इस मूर्ति कज्जा के पास लौट आता है। मुंजीजी के क्रोध में त्याग और सेवा प्रेम के ही पर्यायवाची शब्द हैं। इससे स्पष्टा वह कुछ नहीं जानते और न उन्हें जानने की कभी कोशिश की। वह मञ्जी उनके लिए बनजाती है न प्रेम के प्रसंग जीवन में आये और न मुंजीजी अपने क्रिस्ते-कहानियों में कभी हंय से उन्हें निना ही पाये।

संध्या माटक जो उन्होंने कानपुर में ही शुरू कर दिया था उस पर बराबर काम चल रहा था। १६ जून १९२२ के अपने सत में उन्होंने नियम साहब को लिखा था— आजकल एक ग्रामा क्रिस्ते में और अपने घर की ठानीर में ऐसा मसकल है कि कोई क्रिस्ते लिखने का मौका न पा सका। लेकिन यह बात कुछ ठीक नहीं मालूम पड़ती क्योंकि जुलाई के महीने मे उनकी दो बहुत छोटी और बहुत खूबसूरत कहानियाँ छपी एक का नाम था विम्बस और दूसरी का स्वत्वरत्ना।

विम्बस गाँवों में चलनेवाली देवार प्रवा के बिरछ मुंजीजी की शापवाणी है। किसान जब जगह-जगह उसके बिरछ सिर उठाने भी लगा है। यह एक नयी वास्तविकता है जो मुंजीजी के इस गहरे विश्वास के साथ मिलाकर कि एरीब की बाह में कुछ मञ्जीकिक सक्रि होती है यहाँ एक बहुत ही सजीव कहानी बन गयी है जिसमें मुम की बड़का है—

बिना बनारस में बीर नाम का एक गाँव है। वहाँ एक बिन्दा बुद्धा सन्तानहीन सोकिन रहती थी जिसका मुनगी नाम था। उसके पास एक बुर भी बनीन न थी और न रहने का घर ही था। उसके जीवन का सहाय केवल एक भाइ था। गाँव के लोग प्रायः एक बेजा बनीना या सतु पर निर्बाह करते ही हैं इसलिये मुनगी के भाइ पर नित्य भीड़ लनी रहती थी। लेकिन जब एक-दूसरी या पूषमासी के दिन प्रमानुमार भाइ न जकता या गाँव के जमीदार बरिठ उदयभानु पाण्डे के दाने नूतने पड़ते उस दिन उसे भूजे ही सो रहना पड़ता था।

वह पंखिली के बाँध में खड़ी थी इसलिए उन्हें उससे सभी प्रकार की बेगार सम का पूरा अधिकार था। इसे अन्याय नहीं कहा जा सकता। अन्याय केवल इतना था कि बेगार सूखी छेदों से। उसकी धारणा थी कि जब खाने ही को रिबा नया तो बेगार खैरी। विश्वास को पूरा अधिकार है कि बीलों को दिन भर ओतने के बाद शाम को बूटों से मूखा बाँध है। यदि वह ऐसा नहीं करता तो यह उसकी दया कृपा नहीं है, केवल अपनी हितचिन्ता है। पंखिली को इसकी बहुत चिन्ता न थी क्योंकि एक तो भुनपी दो-एक दिन भुली खूने से मर नहीं सकती थी और अगर मर भी जाती तो उसकी अगह बुराया योंत्र बड़ी आसानी से बनाया जा सकता था।

यह कुछ इस मुम की ही बात है कि भुनपी के मसे से भी आबाद पत्ने कयी है— पंखिली कीन मेरी रोटियाँ बका देते हैं। बीन मेरे आंग्र पोछ देते हैं। अपना रकत असाठी हूँ तक कही बागा मिकला है। लेकिन जब दमा खोपड़ी पर शबार खूते हैं, इसीलिए न कि उनकी चार अमूल बख्ती से मेरा निस्तार हो रहा है। क्या इतनी-सी पमीन का इतना मोल है? ऐसे कितने ही दुखद गाँव में बिकाम पड़े हैं कितनी ही बछरियाँ उजड़ी पड़ी हुई हैं। वहाँ तो बेमर नहीं उपजती फिर मुसी पर क्या यह आठो पहर पीस खूती है।

आश्रितकार पंखिली उससे भिड़ पाते हैं। जब बुढ़िया के कुछ पुर्माचितक उसकी समसाते हैं कि जाकर किसी दूसरे गाँव में क्यों नहीं बस जाती। बुढ़िया किसी तरह इस पर राजी नहीं होती— इस गाँव में उसने अपने अदिन के पचास वर्ष काटे थे। यहाँ के एक-एक पेड़-पत्तों से उसे प्रेम हो गया था। जीवन के सुम पुस इसी गाँव में बीने थे। दूसरे गाँव के सुम से यहाँ का दृश भी प्यारा था।

मत्तक यह कि वह नहीं जाती और फिर एक रोज़ उमीनार के मुँह जाकर उसकी माइ काय डाकरी है। बुढ़िया फिर बनाती है और फिर उसे लोहरकर फेंक दिया जाता है। पंखिली से क-क-क उसकी हुजबत-सकलर हाठी है और जब पंखिली भी उसे सोनगा डाइकर निकस जाने के लिए कहत है तो वह बुढ़िया भुनगी (नाम भी खैरा चुना है!) बिफरकर कहती है— क्या डाइकर निकस जाऊँ? बागद साल पेत जातने से अतामी कातलकार हा जाता है। मैं तो इम सं पड़े में बड़ी हो गयी। मेरे हास-समुर और उनक बाप-बापे इमी शोपड़े में खूँ। अब इसे कमराब बने छोड़कर और कोई मुझसे नहीं से सकता।

जब पंखिली भी उसकी बतिया के डेर में जाब लगवा देत है। भुनपी अपने माइ के पास उदासीन भाव से लड़ी यह संकारहन देखती खनी है और फिर एकाएक उत अम्भिभुंड में बुर पड़ती है। भुनपी तो जैसे मर ही जाती है पर उठी माग में ताप गाँव जलकर रात ही जाता है।

उम्माद में उसे तुच्छ समझकर कुछ न बोले। जब क्या था टामी के पी बाएँ हो गये। वह मरकर नहीं जीते जी स्वर्ग पा गया।

थोड़े ही दिनों में पौष्टिक पदार्थों के संवन से टामी की चेष्टा हा कुछ और हो गयी। उसका शरीर तेजस्वी और मुसपट्टि हो गया। अब वह छोटे-मोटे जीवों पर स्वयं हाथ साफ करने लगा। बंजर के जंतु अब चले और उसे वहाँ से भगा देने का यत्न करने लगे। टामी ने एक नयी भास ली। वह कमी किसी पशु से कहता तुम्हारा प्रजापति जंतु तुम्हें मार डालने की तैयारी कर रहा है, कमी किसी से कहता प्रजापति तुमको गाली देता था। बंजर के जंतु उसके चक्रों में आकर आपस में कड़ जाते और टामी की चाँदी हो जाती। अंत में यहाँ तक गीबत पहुँची कि बड़े-बड़े जंतुओं का नाम हो गया। छोटे-छोटे पशुओं को उससे मुकाबला करने का साहस न होता था। उसकी उन्नति और शक्ति देखकर उन्हें ऐसा प्रतीत होने लगा मानों यह विभिन्न जीव आकाश से हमारे ऊपर शायन करने के लिए भेजा गया है। टामी भी अब अपनी सिकारवाजी के और दिशाकर उनकी इस भ्रान्ति को पुष्ट किया करता था। बड़े पक्ष से कहा — परमात्मा ने मुझे तुम्हारे ऊपर राज्य करने के लिए भेजा है। यह ईश्वर की इच्छा है। तुम आराम से अपने घर में पड़े रहो। मैं तुमसे कुछ न बोसूँगा केवल तुम्हारी सेवा करने के पुरस्कारस्वरूप तुममें से एकाध का सिकार कर लिया करूँगा। बाकिर मेरे भी ठा पेट है बिना बाहार के कैसे जीवित रहूँगा और कैसे तुम्हारी रक्षा करूँगा ?

टामी को अब कोई चिन्ता भी थी यह कि इस देश में मेरा कोई मुहूर्त न उठ सके हो। वह निरर्थक समझ और संशय रहने लगा। जन के पशुओं से कहता — ईश्वर न करे कि तुम किसी दूसरे घासक के पक्ष में फँस जाओ। वह तुम्हें पीस डालेगा। मैं तुम्हारा हिर्षी हूँ मर्दान तुम्हारी शुभकामना में मग्न रहूँगा। किसी दूसरे से वह बाधा मत लो। पशु एक स्वर में कहते — जब तक हम जियेंगे आप ही के अधीन रहेंगे।

बाकिरकार यह हुआ कि टामी को शान भर भी प्राप्त से बैठना दुर्लभ हो गया। वह रात-रात और दिन-दिन भर नहीं क किनारे इधर से उधर चक्कर लगाया करता। बीड़ते-बीड़ते हीपन लगता बदन हो जाता उपरचित को प्राप्त न मिलती। कहीं कहीं पशु न कुछ जाये।

अंत में सप्तम दिन अमाया टामी अधिरार-चिन्ता से घृष्ट जंघर और सिद्धि होकर परसीक सिपाया। जन का कोई पशु उसक निश्चय न गया। किसी के उसकी चर्चा तक न की किसी ने उसकी काय पर आँसू तक न बहाये। कई दिनों

तक उस पर गिद्ध और कौए मँडराते रहे, अंत में अस्थिपत्रों के सिवा और कुछ न रह गया। ●

एक-एक कहानी को इस समय इसम से निकल रही है उसका संबंध किसी न किसी रूप में स्वराज्य के आंदोलन से है। जल्दा सिपाही अपनी एक भी मोती छपाव नहीं करता। चक्रमा में बिदेही कपड़ों की दुकान पर करना बैठा हुआ है, दुसाइस में छपाव की दुकान पर। बीड़म में भी यही सब स्वराज्य पचा है— बड़े काट ने पांभी बाबा से यह कहा और गांधी बाबा ने यह पचाव लिया। अभी आप लोग क्या देखते हैं आगे देखिएया क्या-क्या गुरु लिखते हैं। पूरे पचाव हजार पचाव एक जाने को तैयार बैठे हुए हैं। पांभीजी ने आज्ञा दी है कि हिन्दुओं में झूठघात का भेद न रहे नहीं तो देश को और भी अदिन देखने पड़ेंगे। जिस आदमी को बीड़म का लकड़ किया गया है उसका बीड़मपन यही है कि वह एक एक सच्चा कुले विमल का निडर आदमी है सब का सब और मूठ को मूठ कहता है दाड़ी-बोटी की हिमाइत से पाक है और किसी की इल्हई खालने से उसे डार नहीं है। मुसलमान है लेकिन उसके भीतर इतनी रवाशरी है कि वह माय की दुर्बानी के खिलाफ बाबेला मचाता है और अपने घर में हुई दुर्बानी का प्रायश्चित्त इस तरह करता है कि अपनी सबारी का घोड़ा बेचकर तीन सौ अक्षीरा को खाना खिलाता है और तब से जब भी नमाइया को गाएँ लिये जाते देखता है तो झीमव देकर उन्हें सरीद करता है। इस तरह वह अब तक इस गायों की जान बचा चुका है। इतना ही नहीं यह भी उसका बीड़मपन ही है कि जहाँ हमारे शीतल के बन्दे रात-दिन हिंसा-ब-विनाश तण्ड-नुनमान ठेड़ी-मन्दी के सिबाव और कई बिक नहीं करते वहाँ यह गुवा का बन्दा जिन्दगी को इसके अलावा भी कुछ समझता है। वह अछबार मँगाता है स्मर्ता फण्ड में रुपये भजना चाहता है खिलायत फण्ड की मन्द करना अपना कर्ब समझता है। इतना ही नहीं खिलायत का बालटियर भी है। ऐसा आन्मी बीड़म नहीं ता और क्या है। मगर 'बाप आप ऐसे बीड़म मुस्' म और रयास होते। —बसाबाधर कहता है— आज मुँ मात्म हुआ कि बीड़म देवताभा को कहा जाता है।

बहानी के रूप में यह पुष्पावर्क अपने भीतर बँडे हुए एक बीड़म आदमी को भी है— कुछ बीसी ही चीज जैसी बोध और मरने के बाद बजानिर्मा भी अल्प लड़े होकर मुँ अपने से बागचीत ताकि अपने इरादे में कमजोरी न भाव। प्रेस छोड़ना भी तो एक बीड़मपन ही था। (बाद के एक खत में २ अगस्त १९२४ को, उद्गाने निगम माह्व को लिखा भी, वह बुरा बस्त था जब मेरे मर में यह



उन्माद में उसे तुम्हें समझकर कुछ न बोलता। अब क्या था टामी के पी बाखू हो गये। वह मरकर नहीं बीठे बी स्वयं पा गया।

बोड़े ही दिनों में पीटिक पदार्थों के सेवन से टामी की बेज्जा हा कुछ और हो गयी। उसका शरीर ठैबस्वी और मुर्गगठित हो गया। अब वह छोटे-मोटे चीर्षों पर स्वयं हाथ धाफ करले लगा। जगल के जंतु अब चौके और उसे बहूँ से भया देने का यत्न करने लगे। टामी ने एक नवी जास बनी। वह कमी किसी पशु से कहता तुम्हाण फ़र्ला सभु तुम्हें मार बासन की तैयारी कर रहा है, कमी किसी से कहता फ़र्ला तुमको यामी देता था। जंगल के जंतु उसके बकमे में बाफ़र आपस में झड़ जाते और टामी की चाँदी हो जाती। अंत में महाँ एक नीचठ पहुँची कि बड़े-बड़े जन्तुओं का नाश हो गया। छोटे-छोटे पशुओं को उससे मुकाबला करने का साहस न होता था। उसकी उन्नति और शक्ति देखकर उन्हें ऐसा प्रदीत होने लगा मानों यह विचित्र बीब आकाश से हमारे ऊपर सासन करन के लिए भेजा गया है। टामी भी अब अपनी शिकारबाजी क औहर दिखाकर उसकी इस भ्रान्ति को पुष्ट किया करता था। बड़े पर्व से कहा — परमात्मा ने मुझे तुम्हारे ऊपर राज्य करने के लिए भेजा है। यह ईश्वर की इच्छा है। तुम माराम से अपने घर में पड़े रहो। मैं तुमसे कुछ न बोर्नुया केवल तुम्हारी सेवा करने क पुरस्कारस्वरूप तुमसे से एकाध का टिकार कर लिया करूँगा। बाखिर मेरे भी ती पेट है बिना आहार क कैसे जीवित रहूँगा और कैसे तुम्हारी रसा करूँगा ?

टामी को अब कोई चिन्ता थी ती यह कि इस बेम में भेठ कोई मुर्ह न उठ बाड़ा हो। वह नित्य सजग और सजस्व रहने लगा। बल के पशुओं से कहता — ईश्वर न करे कि तुम किसी दूसरे सायक के पंजे में जैसे जाओ। वह तुम्हें पीम बाकेगा। मैं तुम्हारा द्वितीय हूँ सर्वैव तुम्हारी पुमकामना में मन्न रहता हूँ। किसी दूसरे से मह भाशा मत रखा। पशु एक स्वर में कहते — अब तक हम त्रियेमे आप ही के अधीन रह्ये।

बाखिरकार यह हुआ कि टामी को लग भर भी घान्ति से बीटना दुर्लभ हो गया। वह उत्र-पठ और दिन-दिन भर नदी के किनारे इधर से उधर चक्कर लगाया करता। दीइस-बीइत हाँफने लगता बेबम हो जाता नपरचित्त की घान्ति न मिळती। कही कही पशु न भुस भाये।

अंत में सातवें दिन अभागा टामी अचिकार-चिन्ता से इरत जबर और विचिंत होकर परजोक सिपारा। बल का कोई पशु उसक निचट न गया। किसी ने उसकी चर्चा तक न की किसी ने उसकी मारा पर जाँसू तक न बहाये। कई दिनों

वह उस पर विद्व और कीर्ण मँडपते रहे, मंत्र में अस्विपंजरो के सिवा और कुछ न रह गया। ●

एक-एक कहानी जो इस समय कर्म से निकल रही है उसका संबंध किसी न किसी रूप में स्वराज्य के आंदोलन से है। अच्छा सिपाही अपनी एक भी बोली छपाव नहीं करता। बकमा ये विदेशी कपड़ों की दुकान पर बरमा बैठा हुआ है दुकानहस में प्रणव की दुकान पर। बीड़म में भी मही सब स्वराज्य-वर्षा है— बड़े साट में पांभी बाबा से बहू कहा और बांभी बाबा ने यह जबाब दिया। अभी आप लोग क्या देखते हैं। बाये देखिएया क्या-क्या बूल लिखते हैं। पूरे पचास हजार बवान जेल जाने को तैयार बैठे हुए हैं। पांभीजी ने भावा दी है कि हिन्दुओं में छूतछात का भेद न रहे नहीं तो देश को और भी अदिन देखने पड़ेंगे। जिस आदमी को बीड़म का कर्म दिया गया है उसका बीड़मपन मही है कि वह एक एक सच्चा कुसे दिमाय का मित्र आदमी है, सब को सब और मूठ को मूठ कहता है बाड़ी-बोटी की हिमाकत से पाक है और किसी की कर्झी कोमने से उसे मार नहीं है। मुसलमान है लेकिन उसके भीतर इतनी रबाघापी है कि वह पाप की कुर्बानी के खिलाफ पाबेला मचलता है और अपने घर में हुई कुर्बानी का श्रावणित इस तरह करता है कि अपनी सघापी का बोड़ा बेचकर तीम सी फ्रंट्रीयो को लाना लिखाटा है और तब से बच भी कताइयो को पाये किये जाते देखता है तो डीमठ देकर उम्हें खरीव लेता है। इस तरह वह सब तक सब भायों की जान बचा चुका है। इतना ही नहीं यह भी उसका बीड़मपन ही है कि जहाँ दुगरे बीमठ के बन्दे रात-दिन हिस्साव-फिटाम, मध्य-मुकसान ठेकी-मन्ही के सिवाय और कोई शिक नहीं करते जहाँ यह मुदा का बन्दा जिनगी को इसके अकावा भी कुछ समझता है। वह मजबूर मँगाटा है, स्मर्ना कष्य मे रुपये भेजना चाहता है खिलाफत फ्रण्ट की मदद करता अपना फ्रव समझता है। इतना ही नहीं खिलाफत का बार्मटियर भी है। एसा आदमी बीड़म नहीं तो और क्या है। मगर 'बास आप ऐसे बीड़म मुस्क मे और स्वादा होने। — कपाबाबक चहता है— आज मुझे माफ़ज हुआ कि बीड़म देवताओं को कहा जाता है।

कहानी के रूप में वह पुष्पावलि अपने भीतर बैठे हुए एक बीड़म आदमी को भी है— कुछ बैसी ही बीड़म वीसी बोम और मरने के बाद कहानियाँ भी बरमप राई होकर मूर अपने से बात्रभीत ताकि अपने इरादे में कमजोरी न आये। प्रेम योगिता भी तो एक बीड़मपन ही था। (बाद के एक खत में २ अपरत १९२४ को, उम्होंने निमम माहूब की लिखा भी वह बुरा बस्त या अब मेरे नर मे यह

सीबाए-आम समाया।) पैस से भेंट नहीं और भगवान जाने कमी होगी भी या नहीं लेकिन हांसटें इतनी कि आदमी पागल हो जाय! और यह तमाम सरबरे किसलिए? क्या इसीलिए कि बाक-रोटी का सहारा हो जाय? उसके तो और भी पचास रास्ते हैं। तो फिर क्या इसलिये कि वीर्य कमायी जाय आनीर खड़ी की जाय? उसकी मुंशीजी को न तो हबस है और न मुंशीजी इतने नायाब हैं कि यह समझे कि ऐसे टूटपूजिये प्रेस से आगीर खड़ी की जा सकती है। अबक बात यह है कि प्रेस देससेबा के लिए लड़ा किया जा रहा है बहुत पुराना सपना है वह उनका लेकिन मुंशीजी इस बात को अपने मुंह से बहना नहीं चाहते और कहना तो दूर की बात है अपने ठाँव स्वीकार भी नहीं करना चाहते। इसीलिये बात को दूर सरफ़ से छा-छोपकर बिजनेस की शकल में देस करते हैं लेकिन वह नुब की बोझा देने की एक कोशिश से ब्यादा कुछ नहीं है। सब बात इतनी ही है कि अब वह किसी की गुलामी नहीं करना चाहते आजाद होकर घर बैठना चाहते हैं सिक्कना-बड़ना चाहते हैं। प्रेस हो जायगा तो मेरी भी तमक-रोटी की सुरत हो जायगी गाँव के दस बीस लोगों की परबरेष का सिलसिला हो जायगा और फिर खज्जबार निकलने सस्ती-सस्ती किताबें निकलेंगी लोगों में आपुठि पैदा होगी और भगवान जाने क्या-क्या होगा जो सब बीड़मपने की बातें हैं! अभी पहले प्रेस तो लड़ा हो। नुवा जाने किस कयामत के दिन लड़ा हीवा!

प्रेस का सामान कुछ कलकत्ते से आ रहा है टाइप मशीन से आ रहा है मशीन बिलामत से बक चुकी है मगर अब तक उसका कही पता नहीं! एक-दो परी-घामी हैं पूरा बफ़्तर है परीशानिया का। मकान जो बन रहा है वह अलग एक पी का जंवाल है। मशीन में आग पीला इसी को कहते हैं।

होते-होते फरवरी १९२३ की १७ तारीख आ मयी तक प्रेस नहीं आया। मितंबर के महीने में बुइरफ के पास ख्ये रबाना दिबे पये बे। ४ अस्तुबर को बबाब और रसीब आ ही मयी थी। मालूम हुआ वा उसने दो मशीनें रबाना की हैं। दोनों इंसोर्ड थीं। लेकिन ठगसे अब तक कोई उबर नहीं। १ फरवरी को मायूस होकर फिर यादबिहानी की बयी है। बेत कब तक प्युंकी है। टाइप मशीन जमा कर लिया है और जमा करता जाता है। लेकिन इस तूकानी इन्तजार के बाइस' हीमका परत हुआ जाता है। रुपये की तो कोई कमी नहीं है। साढ़े छ हजार की रकम हाथ में है। हई मेरा मकान तैयार हो गया और होनी न उमे आबाद भी कर दिया जायगा।

सिद्धि प्रसन्न भी अंधकार में लटक रहा था। और साक पूरा होने का रहा था।

बाहिरकार २२ अप्रैल १९२३ के अपने सत्र में उन्होंने लिखा —

आज प्रसन्न के लिए मकान तय हो गया। मशीन का मया। टाइप ब्लॉक, कढ़ी के बेल बंदीर पत्रक गये। उम्मीद है कि इस मई के महीने में प्रसन्न मुकम्मल तौर पर काम करने के काबिल हो जायगा। अब डिफरेंस दायित्व करना शुरू किया है। सामग्री को दायित्व कर चुका। अभी तक नाम मही तयबीज कर रहा। साहित्य प्रसन्न चरखती प्रसन्न मसार प्रसन्न बंदीर नाम जहल म है। आप भी कोई नाम तयबीज कीजिए क्योंकि नामों के इनकाब म आपको बमाल है।

गुबह का मुगीजी ने यह सत्र लिखा और नाम की बाक से निम्न साहब का एक छोट्टा-सा कांड निकाला — उनका एक बच्चा जाता रहा।

साक भर पहले उनके यहाँ एक लुगी का मौका मया था उनकी लकड़ी की गादी थी। अपने समय का काम मुगीजी उसमें घरीक न हो सका व और बाड को अपने नाम बमहयोगी रम में एक हल्की-नी आपति मी उन्होंने उठवी थी ३१ मई म २२ के अपने सत्र में —

मेरी बहनमीबी थी कि इस लुगी म घरीक न हो सका। एखराब मिर्क एक है आपन अंधकार हुबनाम की बाबत माहक की। बरा फयदा। क्या अभी आपने गोहरतयब अमीलाबाद सनीमनु बंदीरक का बाकने मही देन? एसी हालत में अब हमनबाई बेपीअ है त्बाह हमने अपना जिनता ही जाती मया क्यों न होता हो।

और उसके बाद साक भी म बीजने पाया कि बचारे की यह घरीक हम उठना पड़ा। उन्हें पता था बचक का घाब कैसा होता है। एम हो बत माग्मी दोस्त का सहाय इतना है — जिसके कम पर मिर रखकर वह बिना मिशक रो मके आ उसके हम को बांड सन जिनता एन इमान के लिए हमारे का मम बांडना मुमकिन है। मालमपुर्की के लिए कहे मय रग्गी लखों में उठ घन काम मही बमला, उल बिच मालम होली है।

मुगीजी कहीं दामबाज म व बिन्दमी में उन्होंने बाज कम दोस्त बमाये स्पेस जो बा-बार थ बहु मुगीजी के बिन्दुल अपने थे मये। उनका हुन-दद मगीजी का अपना दुग-दर्र का और मुगी म बाहे बहु एन बार घरीक न मी हों अस्पर नहीं हीने थ मपर एम में घरीक हंत के लिए मये पीब बीइने थ। मुगी पा ने उमा दम जैव अपने शोख के कापने हुए हारों और मग्गहाने हुए पैरों की माराय देन हुए लिखा —

कल नुबह एक लठ लिखा। घाम को मापका काई मिला जिसे पढ़ कर निहायत सदमा हुआ। बीमारियाँ और परेशानियाँ तो जिन्दगी का खास्ता हैं लेकिन बच्चे की हृद्यतात्मक मीठ एक बिलधिकन 'हायसा' है और बर्बाद करने का खतर कोई ठीक है तो यही कि बुनिया को एक ठमासापाह या बेक का मैदान समझ लिया जाय। बेक के मैदान में बही पक्ष ठीक का मुत्सहक होता है, जो बीठ से फूकता नहीं और हार में रेंदा नहीं। जीठे तब भी लकता है और हार तब भी लेकता है। हम सबके सब लिखाही हैं मगर लेकना नहीं जानते। एक बाजी जीती एक मोर जीता हिय हिय हुरे के गारों से बासमान बूब उद्य टोपियाँ बासमान में उछकने लगी नुब गये कि यह जीठ वायमी प्रतह की गारेंटी नहीं है मुमकिन है कि बुरी बाजी में हार हो। जकाहाबा हारे तो पस्तहिम्मती पर कमर बाँध ली रोये किसी को धक्के बिये प्रतल बेक और ऐसे पस्त हो गये मोया फिर जीठ की सूरत देखना नसीब न होगी। ऐसे मोछे तंगमबर जादगी की मैदान में लड़ होने का भी मजाब नहीं। उसके लिए गोसप शरीक है और क्रिके विक्रम। बस यही उसकी जिन्दगी की कायनात है। हम क्यों खयाल करें कि हमसे जिदगी ने बेबखर्ची की? बुझा का धिकबा क्यों करें? क्यों इत खयाल से मसूह हों कि बुनिया हमारी नेमतों से भुटी वाली को हमारे सामने से बीठे लेती है? क्यों इत क्रिक से मुतबहिद्य हों कि कसबाक हमारे ऊपर छापा मारने की ताक में है? जिन्दगी को इस मुकतए निपाह से बेकना अपने इस्तीकाने-कम्ब से हारब मोना है। बाब बोलों तरह एक ही है। कसबाक ने छापा मारा तो नवा हार में सारे मर की दीकत को बीठे तो नवा? ककं किठं बहु है कि एक जब है और दूसरा अस्तियार। कसबाक खबरदस्ती भाक पर हाब बढ़ाता है लेकिन हार खबरदस्ती नहीं जाती। बेक में घरीक होकर हम पुर हार और जीठ को बुलाते हैं। कसबाक के हाथों लटे जाना जिन्दगी का मामूखी हादसा नहीं है लेकिन सेक में हारना और जीठना मामूखी बात है। जो बेक न घरीक होगा बहु खपूबी जानता है कि हार और जीठ दोनों ही सामन आवेपी। इसलिए उसे हार ब मामूखी नहीं होती जीठ से पूका नहीं समता। हमारा काम तो सिर्फ लेकना है, कुछ बिल कगन-कर लेकना पूब भी छोड़कर लेकना अपने को हार से इस तरह बचाला पोया हम कौनन की दीकत लो बीठे लेकिन हारने के बाद पस्तनी खान के बाद करें

- |           |               |                 |              |
|-----------|---------------|-----------------|--------------|
| १ बिरोपता | २ हृदयबिदारक  | ३ कुर्बटना      | ४ अविठारी    |
| ५ छठी तरह | ६ अँचेरा कोना | ७ पेट की चिन्ता | ८ कुन पूबी   |
| ९ कुली    | १० परीघाब     | ११ हृदय की घाबि | १२ तीनों कोक |

साइकल खड़ा ही जाता चाहिए और फिर साम ठोककर हुरीस से बहना चाहिए कि एक बार और !

खिलाड़ी बनकर मापको बाउई इनीमान होया। मैं छुट इस मेनार' पर पूरा उतकीया या कही मगर कम से कम बबके पीछे किसी मुकसान पर इतना रज न होगा जितना आज से बंद साम उखल हो सकता था। मैं अब धायद न करूँया कि हाय जिन्दगी बकारल गयी, कुछ न किया जिन्दगी खेल्ने के लिए मिली थी, खेल्ने में जोताही की। आप मुमसे ख्यादा सके हैं। हार और जीत दोनों देली हैं। आप बीस खिलाड़ी के लिए तारुबए-तकदीर की बकरल गही। कोई गॉल्फ और पोलो खेलता है कोई कबड्डी खेलता है। बाठ एक ही है। हार और जीत दोनों ही मैदानों में हैं। कबड्डी खेलनेवाले को जीत की खुशी कुछ कम नहीं होती। इस हार का घम न कीजिए। आपने खूद ही न किया होगा। आप मुमसे मरगाफ' हैं। मैं ५ या ६ तक कामपुर धानेवाला हूँ •

जमाने हस्ती लिखी जा रही है। दुनिया सर का मैदान है। रफनुमि। समरनुमि। दोनों एक ही बात है। और बिट्टी में मूरदास की आत्मा ही नहीं बोल रही है घग्ग भी बही है। जो ही, ये सच्चे घग्ग हैं रिक्त से निबल हुए घग्ग हैं और रिक्त को रिक्त से उछ होती है। कुछ घग्गों को अपने भीतर सट अनुमति की सज्जाई का साध्य न पाता धायर सिक्क भी न पाता ये घग्ग एने अब सर बर, एक तरह की बन्दोखता है उनमें बहिमी जिसे खूबस आदमी कुछ का कुछ समझ ना सकता है। लेकिन बही ता मुचीजी की छाम अपनी बात है। तरल भावुकता से उनको बबरलह' होती है। उनका आरस घायद बहु पत्थर है जिनकी पारदर्शी तरकता उसके हृदयदेय में ही रहती है और ऊपर पत्थर का लाल रहता है। ठान माहूब को एक बार उम्होंने लिखा था—'मैं तितरेबर को मैतुक्ति देराना चाहता हूँ। इल्नाय मशन को लिखा था—'बैपला साहित्य को मैं बहुत पसन्द नहीं कर पाता। उनमें खी-नुब अधिक है। निपम माहूब को लिखा था—'पापराता हिम मेरे अंदर घायद है ही नहीं।

एक ही बात है जिसे तीन तरह से कहा गया है और वह बात अकेले साहित्य की नहीं है पूरे आदमी की है उनके मिशन की है—और कम से कम प्रेम्बर के यहाँ वह दोनों बीजें एक हैं। खुद अपने बटे के मरने पर अभी तीन पाक पहुँके चाहेंगे लिखा था—'तकदीर ने तो अपनी दानिस्त में मज मजा बी होपी लेकिन मैं गुन हूँ कि जिन्हों का आमा बोस नर से दूर हो गया।

होमी चाहिए। उसका बसबग अपना परिवार का उसके साथ था। सरब कि इसी हिस-बीस में महीने-बीस रोड का बसब निकल गया। लेकिन बसब में मिया की इच्छा ही सबसे ऊपर रही और तब पाया कि २ जुलाई से प्रेस का काम शुरू होना — लेकिन क्या शुरू हुआ और क्या किसी का जियरा होगा जो ऐसे काम में हाथ डाले !

१८ जुलाई को मुंशीजी ने निमग साहब को सिखा —

● २० से प्रेस का काम शुरू होना। मगर खासी हाथ। मरे पाठ अब कुछ नहीं रहा। कुछ आठ हजार का ठकमीना किया गया था। मैं ५० खापर खर्च कर चुका। अब कहीं से छाऊँ। दोस्तों को तकलीफ़ देने के सिवा और कहीं पाऊँ। ४ एक साहब से सिये। अगर आप ३ दे सकें तो एक महीने के लिए कुछ तर हलका हो जाये। एक महीने में गालिबगु कुछ आमदनी हो ही बाबधी। शायद उठ बसब तब बाबू रघुपत सहाय का मौजा फ़ोरेस्ट ही जाये। उसके बाद ही वह मुझे रुपये अदा करलेबास है। मैंने तो आप पर बार न डालने के लिए इतना भी सिखा था कि आप माहवार सौ रुपये दे दें तो मैं मकान के किराये से मुक़ददात हो जाऊँ।

आपकी तरबुदात का बंदाबा कर रहा हूँ। जानता हूँ कि मकान की तरमीम में काफ़ी रकम खर्च करना पड़ेगी। अगर मेरा मकान भी तो अभी पूरा नहीं हुआ सिर्फ़ मूखर करने के इबाबिल हो गया है। अभी एक हजार और जगें तो मुकम्मल हो। उसे मैंने क्यादा इस्तीफ़ा के पीछे के लिए टाल दिया है। और क्या खर्च करूँ।

अब सबबूर हो गया हूँ। अगर आपने इमबाब न की तो फिर इर्ब सेना पड़ना। इसके सिवा और कोई चारा नहीं है। मरे सामने साहब की आप जानते हैं। मेरी सबबूरी का बंदाबा यह सब इस्से कर सकते हैं कि मैंने उस बरए खुदा से मदद माँगन से भी पूरेब न किया हालाँकि कहीं क्या दिखना या अबाब तब न जाया। ●

क्या शुरू सारी कैई-मुबी प्रेस सज़ा करने में ही उड़ गयी अब उसे चलाने के लिए एक कीड़ी हाथ में नहीं। मकान के किराये तक के लिए इसने मीब उसने इर्ब के। यह प्रेस के डब न चलने की मूरत न थी और न वह बला। बाबू महतान राय के लिए प्रेस की मैनेजरी नहीं थीब न थी। लेकिन अब तक इमबाब कालब उम्हेंल कर्मचारिया स काम सेना ही समझा था। दूसरी जिम्मेदारियों के लिए दूसरे लोग रहते थे। अब प्रेस की सारी जिम्मेदारी उम्हीं पर आ पड़ी थी जो कि एक नहीं थीब थी। काम लामो उसे पूरा करके हा फिर उसके बिल की बसूरी करो फिर उसका हिमाब रगो। पुर ही सब करो। क्यादा बाबनी एग्ने की पाम में

मुपत कहीं। सब टनटन पोपाक मामला बा। अपना कर्ष ठक उसी मे मे निकासना पढ़ा बा। और फिर हिसाब के मामले में बहु कच्चे भी ये— बाबजूद इसके कि उन्होंने बुकरीपिंग का इम्तहान पास किया था। लेकिन बुकरीपिंग का इम्तहान पास करना एक बात है और हिसाब रखना दूसरी। अगर स काम भी कमी। और छोटे प्रसों में एक प्रस और बुक गया था नाम उसक लिए कहीं गया था। वैसे की कमी। काम की कमी। चाटे पर चाटा होता रहा। और जैन-जैत चाटा होता रहा बीच-बीच सामान्यारो में मनबन बढ़ती गयी और बीरे-बीरे यह नीबत का गयी कि उन्हें अपनी पूंजी की चिन्ता लगाने लयी और यह टिक हुई कि अपना पैसा लेकर निबल जाने में ही अब खरियत है।

प्रम को कुछ अभी एक साल भी पूरा नहीं हुआ था और सब मामला पपटा पुड़ाने लये थे। २८ जून १९२४ को मुसीजी ने नियम साहब को लिखा—

मेरे प्रस की हालत अच्छी नहीं। साल भर पुरे ही दय नत्र और मूर को दफिनार कोई छ ली दये का पाटा है। नाथबुबकारी से एसे आपसिजों क काम हाब में लिय गये जिनके पास कुछ न था। अब उनस दया बगूल हुंआ मुक्ति है। मुम लौऊ है कि मेरे बड़े भाई साहब जिनक को ह्जार को ली पचास रुपये लय हुए हैं तक-निबन पर मामला हा जारिये। इकर बड़ी मरणाब दय में भी इन्हें लेकर इतने ही रुपये लगाय य। उन पर मरणाब के मूर का ठहरा हो रहा है। बहु भी अपने रुपये की बानसी की टिक में हैं। अर में ली अपने रुपये की बापसी पर इसघर कच्चे ली मतीजा मामूल है। नाथ मामूल इसके बाद दय की इबारत उड़ गयी है लेकिन उमे जोड़ केना इतना मुमकिल नहीं है।

बेचकर उमके पैस सामान्यार में तजमीम कर देन होंगे। मामला बिककुल दमी ठरछ बड़ रहा है।

दम रोड बाइ ८ जुलाई को उन्होंने लिखा—

इपर का माह में यहाँ की हालत बरन खराब हो गयी है। भाई साहब अब अपने रुपये की बानसी पर मुक्ति हो रहे हैं। टाल-मटाल कर रहा है। बाप यह है कि उन्होंने इकर बार ल ली दय विमाला का इब निय। उन पर ल दो रुपये नीबड़ा माहवार मूर मिल रहा है। अब उ्ह प्रम में दया पेंमाना मोजिन मामूल होता है। अर कट्टा है कि दया बापस नहीं हो सकना लो कट्टे है प्रम जोड़ दो। हम लोपो में उ्ह मऊे की उम्मीद बिलानर (और इन काम में और है जो मुसीजी म बाजी ल जा सक।) उनम सब को ह्जार लय मिय थे। उम्मी-



भी मफे की थी (सौलहो जाने!) लछार उम्मीद के तिकाऊ हुआ। (हैं! बाटा हुआ! बहु कैसे!) चोकि मेरी ही तहरीक से उन्होंने रुपये दिये वे इस्मिफ़ बहु मुझी को बिम्बेदार ठहराते हैं। (कितनी बेजा बात है!)

मगर नहीं इतने से ही बस नहीं है इस मूठीबत की बास्ताग का —

माई साहब के लडाजों ने मूख बहुत मन्वेगामाक कर दी है। उनके रुपये मवा करके मैं बिलकुल तिहीवस्त हो जाऊंगा। प्रेस रह जायगा। वह बका तो अच्छा है बर्ना खुदा हाकिम। एक और लसारे की मूख निकल आयी (घाम् इतनी काशी न थी!) मार्च में एक काण्ड काटने की मशीन मन्नास से मंगायी थी। पाँच सौ रुपये बिन्दी के दे दिये। माल ममी लापता है।

घरज कि मुंठीजी बुरे फंसि हैं इस बार।

पचौस रोड बाव फिर लिखा —

प्रेस मुझ इस कदर परीचाल कर रहा है कि मैं तप जा गया हूँ। वह कुछ बस्त का बब मेरे घर में यह सीवाए काम समाना। आपकी लिखत में बकायादारों की यह प्रेहरिस्त जो इस बस्त मेरे सामने रखी हुई है हरसाल कर रहा हूँ। बेकिए। मेरी परेघानियों का सही बंधावा माप कर सक्ये। २२७२ बक्रमा पड़े हुए हैं और इसके बसूल होने में थमी न थाने कितनी देर है। इपर मुझ पर ५० टाइप के ८ काण्ड के और २ किरामा मकान के सवार हैं। मैं ती मुठउर्रिक रखम न जाने कब पाऊंगा पर मेरे लडाजोंवाले कब बिन लेने देते हैं। वो कितारें खुद मापा थीं मगर उम्मीद के तिकाऊ ममी तक एक कितार भी तैयार नहीं हुई। मैंने सोचा था कि सितम्बर-अक्तूबर तक बीनों कितारें तैयार हो जायेंगी। बकाया बसूल हो जायगा। कितारें बिक जायेंगी। रुपये की किस्मत 'एअ' हो जायगी मगर बहु मारे मंमूबे परीचाल हो गये। न कितारें तैयार हुई और न बकाया बसूल हुआ बल्कि हुर महीने में कुछ न कुछ बढ़ता ही गया। लमी कोघिन कर रहा हूँ कि किसी बुद्धिसेर से मुबामला करके यह सब छपी हुई बिस्से नामत पर देकर अपने लडाजदारों को बदा कर दूँ। बकायादारों से रकता-रकता बसूल होता रहेगा। हाजीकि इतने से कम बज कम ५ 'बैड डेट' में बने जायेंगे। दर बसल मैंने यह संमद मोल निकर अपनी पाल आइत मे फँसायी। नहीं तो मेरे जाने भर को बहुत काशी था। इस तरह में तिकरपी काम भी नहीं होता।

१ प्रेरणा २ बिम्बाजनक ३ लाली हाप ४ प्रेषित ५ पृष्ठकर  
६ कपट ७ हुर ८ तिकर-बितर

एनी हासला में बाबू महाराज राय से भी कुछ अनबन हुए बिना न रही। यो कि यह भी मज है कि दारों भाई एक दूसरे का बहान लिहाज करने में। लेकिन परिस्थितियाँ कुछ ऐसी बँडव की कि उनका बीच एक बीवार-सो लिचती भा रही थी। एक को दूसरे से पिचापों की आ कमी तो कलम की नाक पर उतर जाती और अस्तर दिनों के भीतर चुनड़ता रहती। दोनों अपनी-अपनी अगह ठीक में लेकिन आमय बड़े हाकर देखो तो उनम से कोई भी सोमही माने ठीक नहीं था। सबसे बड़ी मज्जाई यह थी कि होना खाली हाथ में और परिस्थिति की बिचपटा से संभावित हो रहें थे।

हाने-होते यह नीबत पहुँची कि मुसीबी ने कपनऊ से बाबू महाराज राय को बिना कि प्रेम बंद कर दो और जिनका जितना निकलता ही दे-केकर यह टटा बत्रम कटो। इसके अबाव में बाबू महाराज राय ने शायद लिखा कि प्रस का बण करना तो उसके हक में और भी बुरा होया। सारे का साथ रुपया बूझ जायगा। क्यों न हममें से एक उसको पूरी तरह अपने हाथ में लेकर चलाये और अगर आप मंजूर करें तो मैं उस लेने की ठीपार हूँ।

इसका जबाब देते हुए मुसीबी ने लिखा—

प्रस के मुताबिक तुमने जो तजवीज की वह मुझे बत्रम पसद है। मैं भी यही चाहता हूँ कि प्रेम एक आदमी का हो जाय। मैंने तुममें जो कहा था कि प्रेम बंद कर दो, उसके माने भी यही थे कि मैं साह के रुपये को मुसीबत के अंतर्गत समझकर कुछ अमी दे देता और कुछ बाव को और प्रेम का काम जाते रहता। देखने का इरादा तो उस हालत में था जब मैं भी आइयाइया कर लूँ। उममें पहले कहा। लेकिन अब बुँकि तुमने मुझे इसकी जपना कर लेन का इरादा किया है बत्रम मज्जी बाव है। मैं बड़ी धनी से तुम्हें इसकी सलाह देना हूँ। लेकिन साहशरी के रुपये का क्या होया? इसके बारे में मुसीबी ने लिखा—

अब यह देया कि तुम्हें अगस्त तक जितने रुपय का इंतजाम करना पड़या। भाई साहब की अमल २२५ - मू २३०—२५२ रना। रपुर्ति घहाय की अमल २००० - मू २००० का १८०—मू २१८ । २०० - २१८०—मू ४०० । क्या तुममें ४०० का इंतजाम का किया है? मारु-साहब बनाने की बकरत है। मैं साह भर तक रुपये का इंतजाम कर लता हूँ। योया पायसाक कुला में मू ४५०० - १०५ (तीन साह का मू) यानी ५१०० रुपये देने बँडि। यानी तुम्हें ४०० + ५१००—१८०५ का इंतजाम करने की पकरत है। मेरा गुमार अभी न कटी। तब भी ४००० का इंतजाम ता करना ही पड़ेगा। अगस्त तक तुम इसका इंतजाम का करने हा ली कटो और अगर

किसी न तुम्हें मदद देने का यों ही बापबा कर लिखा है तो उसके बोख में न जाओ।

मैं इसके लिए भी तैयार हूँ कि तुम बलदेव भैया के रुपये मय सूब के बापस कर दो। इस तरह प्रेस में हम और तुम रह जायेंगे। रघुपतिहाय का रुपया दस्तावेजी कर लिया जाय और उन्हें बाखू जाने तकड़ा सूब हम सोय देते रहें। लेकिन उस हाकत में हममें से कोई भी तमब्याह न सेगा। बाम हम नी करेगे काम तुम भी करोये। हम अगर तुब बाम न करेये तो अपनी तरफ से एक माबमी रख सेये जो प्रूफ देनेगा और पण्डर का काम—मुलाजिमों की हाकिमी बगैरू हिसाब-किताब रसेगा। अगर यह सूरत पर्सव न हो तो तुम सबको बरहवा करके प्रस बपना कर को। लेकिन जब तक रुपये मिलने की पूरी उम्मीद न हो बायबों पर न टालो।

बाबू महताब राय प्रेस तो सेना बाहूँ से लेनिंग सासेदारों को देने के लिए बतने स्पए कहीं से लाते। एक बार इसके लिए भी हमारी मरी कि कहीं से ऊँच लेकर इन हिस्तेदारों का चुकता करें लेकिन फिर हिम्मत नहीं पकी। अब फिर इसक सिबा और क्या सूरत भी बि प्रम को बेच दिया जाय। उस समय मुंजी जी ने प्रस्ताव किया कि बाजार में प्रेस का जो बाम कपता हो वह मैं देकर उसका बपना कर लूँ। उसक बबाब म बाबू महताबराय ने लिखा — बाजार में जब बेचना ही है तो जो बाम सगे मैं ही क्या न देकर से लूँ बाप ही क्यों सेये। जो बाजार में बीमन लगे उनमें से सबका बाणी देकर सब कोय तकसीम कर लें और प्रेस मैं क्योंकि मैं बैराजपार हूँ।

मबालक का यह एच नया पहलू का त्रिसे मुंजीजी ने घायब सोचा भी न था। तिमलाकर उनहान बबाब दिया — प्रेस तुम ला या मैं लूँ? जा ख्यावा से प्यारद कीमत दे रही उनके सेने का अस्तियार रखता है। अगर मैं सबसे प्यारा रूपा मैं लूँया तुम दोये तुम सोने कोई तीसरा देया तीसरा सेगा। अगर तुम बैराजपार हो तो मैं कौन बारोजगार हूँ। तुम मीरबाम माबमी ही कलकता-बम्बई की हबा ला सकते हो, मैं ता इस इबिल भी नहीं हूँ। और। बतलाओ कि तुम प्रेस की ख्यादा मे ख्यादा क्या बीमन दे सकते हो। अगर मैं उसस ख्यादा रूपा तो मैं लूँगा बर्ना तुम।

बाबू महताब राय ने उनके छत का बबाब देते हुए लिखा —  
 बाप ही बगाएए बाप क्या सेये। अगर मैं पहले बता दूँ तो क्या मुझे और बड़ने का हज हाया? क्या हमारी और भागकी बोली पर खाल्या है कि और लोगों को भी राय ली जायेगी?  
 मुंजीजी ने उस पर नोट लिखा —

हैं ही बोली है। आखिरी बस्त तक सबको बचने का अतिशयार है। तुम जो कुछ कहो उसमे मैं बड़या फिर तुम बड़ना फिर मैं बड़ूंगा फिर तुम बड़ना। बम जहाँ तक कोई जाये न बड़ सके वहीँ खारना है।

और फिर भीखामी बोली बोली जाने लगी।

बाबू महताब राम ने छलम लिखी	१०
मुंघीजी ने आगे बढ़कर लिखा	१५०
महताब राम जाने बड़े	७०
मुंघीजी और भी जाये बड़े	७५०
महताब राम ने और हिम्मत की	७७५
मुंघीजी भला कैसे पीछे रहते	७८०
महताब राम ने और धोर माय	७९
मुंघीजी कहाँ बचनेवाले के	८०
इसी तरह बोली बड़ती रही।	

आखिरी वाली बाबू महताब राम ने दी १४०

मुंघीजी तो पहले ही मन में बार बके के हुरगिज हुरगिज प्रेस क हाथ से जाने न हुआ मरी ही बोली ऊपर रहेमी प्रेस में ही लया। ऐसे के साथ कोई जहाँ तक बसता। मुंघीजी ने एक ली खया बड़ाकर कहा १५० और उसी पर ताड़ हो गयी। प्रेस मुंघीजी का ही गया। जो बीज जूए की तरह मुक की गयी की उसका जूए जैसा ही यह अंत हुआ। प्रेस से बीज छुड़ाने का वह एक मीजा मिला का वह भी हाथ से निकल गया और मुंघीजी ने दुबारा वह छटगम माल लिया।

कई बरन बाद इस बचावकी का बिक करते हुए मुंघीजी ने १ जून सन् ३१ को यह दर्द भरा गुल लिखा जिसे पढ़कर रोना भी आता है। ईसी भी —

● कल भाई माहब से बालबीत हा रही थी। उनसे मुझे यह मानम बरक कुछ हैमी भी आयी कुछ ताज्जुब भी हुआ कि तुम अभी तक उस लखड़ी इएल को जो आज से छ-सात साल पहले मेरे यहाँ से और तुम्हारे दरमियाल हुआ था तमनगुरु की तरह महपूज रहे हुए मुझमे जाने खये के लिए एक खया मीकड़ा ख्याज की उम्मीद रखते हो।

बिन बल हमारे और तुम्हारे दरमियाल वह लखड़ी होइ हुई थी न तुम्हारे पाल खब न और न मेरे पाल। तुमने भी ऊपर मेरा हाथका गलती नहीं करता १४० की बंली ब ली थी। क्या तुज वह खचने ही कि उस बस्त ऊपर में १४० पर राखी हो खाना तो तुम मेरे और रघुपत सहाय के दिग्मे के खये इसी परने मे अरा बर देने ? हुरगिज नहीं। न तुम अरा बर खचने के और न मैं ही इस बाबिल

या कि तुम्हारे १९ रुपये जो इसी पत्ते से भरा हुआ भरा कर देता। मनीषा यह बता कि प्रस तुम्हारी ही निगरानी में रहता और जिना उन्हें काम चलता या उसी तरह चलता रहता। मेरा मंगा प्रस को अपनी निगरानी में लेकर उससे मज्र करने का था। मुझे यकीन था कि मैं मज्र कर सकूँगा। इन खयालों के बारे में बस ही मैंने तुम्हारे हाथ से इंतजाम किया। इतना तुम भी जानते हो और मैं भी जानता हूँ कि उस वक्त भी बाजार में प्रस की कीमत इतनी किसी तरह से न लग सकती थी।

अगर यह मान लिया जाय कि तुम रुपये भरा कर देते और तुम्हारे पास उस वक्त ६ हजार रुपये मौजूद थे (हालांकि यह वर मुमकिन मामूला है) तब भी तुमने प्रस के केने और बेने की जो फर्क देण की थी और जिसकी बिना पर मैंने तुम्हारे रुपये चुका देने का इरादा किया था वह सही नहीं निकली। उसकी ब्यादातर खर्चों ऐसी थी जो बमूल न हो सकती थी और न बमूल हुईं। और कई रकमें उनमें से ऐसी छूट गयी थीं जो और न बमूल हुईं। अगर नाबमूलसुवा रुपये तुम्हारे नाम बाक हूँ और जो जायब मुस तुम्हारे जमान के लिए देन पड़ ता तुम्हारा हिस्सा ही जायब हो जायगा। इसलिए मुझे ताज्जुब होता है कि तुम बिना कानून या इंसान से अपन रुपये के मूर के इस्तेमाल का अज्ञान हो रहा है कि तुम्हें प्रेस में फँसने और रुपया जमान का अज्ञान हो रहा है। यह सब खा है। भाई साहब का भी हो रहा है। रुपयतमहाय को भी हो रहा है। सबक सब सर पर हाम बरे रा रहे हैं। लेकिन तुमने कम से कम प्रेस से दो साल तन्बाह तो की। ब्यादा से ब्यादा तुम्हारा मूर का मुजमान हुआ जो माठ जाने सैकड़ा के हिसाब से छ साल का ७० रुपया होता है। मेरे मुजमान का अंदाजा करो। मैंने दो साल तक प्रेस से एक पाई लिये बरैर काम किया और अपना कम से कम पाँच सौ रुपया इसमें और कयाया जो हिसाब में मौजूद है। उसका बार से मात्र एक मैंने हजारों रुपये का काम प्रेस का दिया। तुम अपनी जिताबें प्रेस में छपवायी। मात्र भी अपनी जिताबों की बिनी से प्रेस चला रहा हूँ। इस तरह मुझे ता बलाबा मूर के कोई ५ का मुजमान हो चुका है और मूर भी जोड़ती है। हो जाते हैं। गोया प्रेस लासकर मैंने ७ का मुजमान उद्यम। और मैं इसे हर्क ब हर्क सही साबित कर चकता हूँ। हिसाब प्रेस में मौजूद है। तुम्हारा मुजमान तो सिर्फ मूर का हुआ है रुपयतमहाय को भी इतना ही मजमान हुआ। अगर अभी तक सबर से बर्बात किये जाते हैं। भाई साहब भी प्रेस की हालत में बर्बात है और सामोम है। सब समझ रहे हैं कि प्रेस खीरना यकती थी और अगर तर्जरीर में होंगे तो मिलते बर्ना दूब गये। मैं अपनी जिन्मेदारी को समझकर अब भी हर

उसका मुकाम उठता हुआ उसे कामयाब बनाने की क्रिफ न पड़ा हुआ है। बार-बार बीड़-बीड़ बाठा है। हिसाब-किताब देखता है। क्योंकि मेरे दिल से लगी हुई है कि किसी तरह गजब हो और हिस्सेदारों को कुछ दे सकें। मैंने अगर बेईमानी की होती और कुछ खा गया होता तो हिस्सेदारों को मुझसे बापुमानी होती। लेकिन मैंने तो प्रेस से पान तक नहीं खाया। मेरा कान्यस बिलकुल साफ है। जब तक मेरी बिन्दगी है मैं अपना मुकाम उठता हुआ प्रेस के लिए बाग बैठा रहूँगा और कामयाब होना तकदीर में लिखा है तो कामयाब हूँगा।

तुम्हें मुकाम पहुँचाकर या तकलीफ़ में देकर मुझे मसूरत नहीं होती और न हो सकती है। तुम्हें झुंझाल देकर मुझे लुगी होयी और उसका अदावा तुम समझ न कर सको। अगर मैं इस आशिक होता कि तुम्हारी अदावा हमदाव कर सकता तो इतना बरेग न करता। लेकिन मुझे इस प्रस में बिल्कुल मुश्किल बना बासा। किताबों से मुझे भी कुछ भिन्न जाता था वह अब प्रस की गजब हो रहा है। अब मेरा इरादा है कि कलकत्ता से आकर फिर प्रेस में बट्टू और जिस तरह भी हो सके उधें कामयाब बनाऊँ। तुम चाहो तो अब भी इस काम में मन्दाव दे सकते हो।

या तुम्हारे सवाल में प्रेस से और जो कुछ तुम्हें अपने हिस्से में मिलना चाहिए वह ले लो। मेरे पास प्रेस की हार एक बीड़ का बीजक रखा हुआ है। इस बीजक को देखकर दो हजार की बीजें निकाल लो। बीजें बेचकर पुरानी ही पयी हैं अगर उनका बज्र मैंने नहीं उठाना। न तुमने उठाना। यह समझ लो कि बारबार ये मज्र मुकाम दोनों होता है और इसमें मुकाम हुआ। तुम्हारे दो हजार रुपये हम बात तुम्हारे पास होते तो तुम उससे एक छोटा साइज पुरा प्रेस लोकर सकते थे। मेरे साथे चार हजार मेरे पास होते तो मैं उससे अच्छा प्रस लोकर सकता था। अगर हमने और तुमने बैंक में रख दिये होते तो तुम्हें अब तक एक हजार के ऊपर मुँस मिल गया होता और मुझे भी दो-अड़ार्ड हजार मिल गये होते। मैंने लो और हजारों का मुकाम उठाना उससे बच गया होता। लेकिन अब इन बातों को पार करके पढ़ाने से क्या हागिल। अब तो मेरे की डोल बनाना ही पड़ेगा। मैं तो इस प्रेस के पीछे बरबाद हो गया।

बहना होगा कि मशीनी के एके की डल बनायी और ली तोड़कर बनायी लेकिन अभी उनको यह समझना बाड़ी था कि दुनिया में कुछ बाप लेंस भी है जो बेबल भीष्म-प्रतिभा के बल पर पुर नहीं लिये जा सकते। प्रस बनाना भी उनम में एक है। पत्ती हुई डोल की बहुत ही रुईन बोलनी थी, गर्दन कटी जा रही थी लेकिन करते अब तक वह जस बनाते रहे—इतनी-सी बात उनको समझ में न आयी कि डल को पाने से निजाकर पेंसा भी जा सकता है! मरबाव का सवाल

३१४

बाम। क्या कहेंगे सोम प्रेस बकाय नहीं बका! जैसे कोई बड़ा पुनाह हो यह। नहीं बका नहीं बका गौन-सी ऐसी बात है इसमें। लेकिन हर किसान की तरह मरबाद का कीड़ा जो उसके दिमाग में घुसा हुआ है।

भाबिर एक दिन उनको भी अपनी गलती का एहसास हुआ जैसे कि पहले कभी नहीं हुआ था लेकिन तब तक बिम्बगी की सौत मुक बायी थी। १४ फरवरी सन् २४ को उन्होंने जैनर को लिखा —

साठी बिपत्ति की बड़ तो यह प्रेस है। न जाने किस बुरी साइत में उसकी बुनियाद पड़ी थी। १ हजार रुपये ११ साल की मेहनत और परीशानियाँ बकार्य ही गयीं। इसी प्रेस के पीछे कितने मित्रों से बुरा बना कितनों से बायबा खिलाफ़ी की कियता बहुमुम्य समय जो लिखने-पढ़ने में कटता बेकार मूक देखने में कटा। मेरी बिम्बगी की यह सबसे बड़ी गलती है।

लेकिन यह सब तो बनी बरतों आने की बातें हैं। बनी तो मुझे भी अपने प्रेस के मबान पर निहाल है और वहाँ से प्राप्ति की छटा निरल रहे हैं— मेरा माने से है कि उससे बेहतर बगाह बनारस में नहीं है। बिलकुल टाउन हल और पाष के मससिल। बमरे के दरबाजे कोल बीबिए और पार्क का सुन्ड बर बैठे उठाइए। यह बात और है कि उसका किराया देने के लिए गाँठ में पैसे नहीं हैं हिंसम तबीयत परीयान और भूमलायी दुर्द-सी रखती है।

१ बड़ा

२ कया हुआ

३ पास

चार महीने मर्यादा की सीढ़ी, फिर सात मर कापी विद्यापीठ। वर में बस्तर है। घर-देहात एक किये बैठे हैं। तथा मरान बन रहा है सो अलग से। वह भी कुछ न कुछ बस्त लाता ही है। और फिर उन सब पर भारी प्रेम का लटपट। एक-को नहीं पूरी एक लैनडोरी। दम मारने की गुवाहा नहीं है।

इसमें थोड़ा मुग्ध हो गया है इन सब बातों में। इससे बड़ी सजा मुगीजी के लिए डूमरी नहीं है। कोई तकलीफ तकलीफ नहीं है अब तक इसमें चल रहा है अच्छी तरह। इसमें इनके ही मन पर भारी-सी चपन लगती है। उसमें नाश नहीं होना चाहिए।

साधारण विद्यालय से इन्टीया बने के पन्ह-उभर रोड पढ़न ही बीटीबीरा का नाम है। बुद्धा का और गांधीजी आन्दोलन को स्वयंसे करने की घोषणा कर चुके थे। मुनीजी के मामले जन-आगरा की अन्ती एक लकी बीजना है जिसे इस मामलिक उलट-पेरे से कुछ भी नहीं स्पेना-नेमा।

१४ जूबरी १ २० के अपने लन में मुगीजी ने सात साहब की लिखा था कि आदरल सुद भी एक इनाम लिखने की कोशिश कर रहा है। यह उनका नाटक मंचन था जो कि सावर उनको पढ़नी बड़ी रचना थी जो पहले हिन्दी में लिखी जा रही थी। यह नाटक जूबरी लन् २३ में प्रकाशित हुआ।

अनहूवीण आन्दोलन की वृष्टकर्मि में नाटक लिखा जा रहा है और वही मयम्पार्ले इसमें बिबिन है। यह डूमरी बिनी तरफ जाने के लिए तैयार नहीं है।

सबलमिह जमीनार पकड़ मुछवी आदमी हैं। बगार न मूद लने हैं और न धमकों की लने देने हैं। अगड़ों की निरयने के लिए पयतु-अगह पंचायतें मुलकाने लिखे हैं। उनके लिखाऊ अदेड हुक्काम को वही माम विधायन है। बचापनों के जायम होने में उन्हें अपनी मोन की पंटी बजती मुताबी बजती है। उधर सबलमिह बजने हैं—अन्तर्में सबकों के अन्धाय की घोषण है। जहाँ राजा के द्वारा उरियाह की जाती हो वहाँ मरीचों की वहाँ पैट। यह अन्तर्में नरो म्याय की अलिबेरी है। इसलिए अन्तरी है कि पंचायतें बनादी जानें। बचापनों के लिखाऊ



कोई भी दलील मुझे को बहु तैयार नहीं है। 'यह माझेप किया जाता है कि पंचायतें पंचायत ग्याज न कर सकेंगी पंच सोय मुहुरेजी करते और बहो भी सबसों की ही बीत होगी। बहुत ताड़ी धाका है जिसकी सन्ध्याई आज प्रकट हो रही है लेकिन इसका बचाव भी उही समय मुंचीजी के पाम मौजूद था — स्थायी पंच न रख जायें। अब अस्त हो बीनो पक्षा के सोय अपने-अपने पंचों को नियत कर दें।

किसानों को अगाने की तापी बातें यहाँ मौजूद हैं। जमीन्दारों की हाटी-बेमाटी पुलिस का बुस्म अमलो की बूखोरी झूठे मुकदमे और उनकी झूठी सहादतें जिनमें पचाहों को तोते की तरह उनका सबक रटाया जाता है आनातनासी के नाम पर मनमानी कूट घुसबी कहकर किसी को भी कानून के आल में प्रीम देना — सब कुछ जैसे रूप भरकर यहाँ कागज पर उतर आया है।

किसानों की एक बड़ी बीमारी है कर्ज लेना। उसके बारे में सबसिंह के छोटे भाई कंचनसिंह जो महाजनी करते हैं और जिन्हें उनके भाई का भावेम है कि पूरे किसान ने वेत में पीछे बहुरते हुए देखे और उसके वेत में चूहे कुलन लगे। कम मिया करी हकबर को इन सबों में सिद्धकते हैं —

किसान ने वेत में पीछे बहुरते हुए देखे और उसके वेत में चूहे कुलन लगे। नहीं तो चूम लेकर बरसी करने या महुने बमबाने का क्या काम इतना सब नहीं होता कि अमाज पर में आ जाय तो यह सब मसूरे बायें। मुस स्वयं का मूद बोने नबपना बोये मुनीमबी की दस्तूरी पागे इस के आठ लेकर घर बायीये लेकिन यह नहीं होता कि महीने-बो महीने एक बायें। तुम्हें तो इस बड़ी रुपये की पुन है फिरना ही समझाऊँ, ऊँच-नीच सुसाऊँ, मगर कमी न मानोये। रुपये नई तो मन ही मन गालियाँ बोये और किसी दूसरे महाजल की बिटौपी करोगे। सबसिंह पाँचवालों को मैजिक सैण्टर्न से तसबीरें भी दिखाते हैं। बड़े बूब घुलत रंग से यह दृश्य आया है —

● (पहला चित्र — कई किसानों का रेलगाड़ी में सवार होने के लिए बरतम बरका करना बैठने का स्थान न मिलना उन्हें रहना एक कुली का बमह के लिए घुस देना उसका इनको एक मालगाड़ी में बैठा देना। एक स्त्री का कूट जाना और रोना। गाई का पाड़ी का न रोकना।)

हकबर — बेचारों की कैसी दुर्गति हो रही है। जो कात-भूमे चलते लगे। सब मार खा रहे हैं।

फतू — यहाँ भी पूज गिये बिना नहीं चलता। बिताया दिया घूम उतर से। कात-भूमे पाये जमसी कई पिलती नहीं। बड़ा बन्धेर है।

(दूसरा चित्र — गाँव का पटवारी ग्राट पर बसना गीने बैठा है। कई किसान आस-पाम गड़े हैं। पटवारी ममी से मासाना नबर बसूक कर रहा है।)

हकूमर—काला का पेट तो फूल के कृप्या हो गया है। बुटिया इतनी बड़ी है वैसे बैल की पपहिया!

फतू—इतने आदमी खड़े गिड़गिड़ा रहे हैं पर सिर नहीं उठाते मानो कहीं क राजा है! जबड़ा पेट पर हाथ धरकर मट गया। पेट बफर रहा है बीछ गही जाता। बुटिया बजाकर दिखाता है कि भेंट कामो। देखो एक किसान कम्मर से खया निकालता है। माहूम होता है बीमार रहा है, बदन पर मिर्चई भी गही है, बाहू तो छाती के हाड़ मिन मो। बाहू मुड़ी बी। खया फेंक दिया मुँह फर किया अब बाठ न करेवे। जैसे बँदरिया कूट जाती है और बन्दर की और पीठ फेरकर बैठ जाती है। बैचारा किसान कैसा हाथ बड़कर मना रहा है, पेट दिखाकर बहता है। भोजन का ठिकाना गही लेकिन साला साहब कब मुनते हैं।

हकूमर—बड़ी मलाकाटू जात है।

(तीसरा चित्र—धानेदार साहब गाँव में एक बाट पर बैठे हैं। चोरी के मास की लज्जतील कर रहे हैं। कई कालखेदुल बर्री पतन हुए खड़े हैं। पत्तों में लानातलाशी हो रही है। घर की सब चीजें देखी जा रही हैं। जो चीज बिचको पकन्द जाती है उका मिया है। बीछो के बदन पर के गहने भी उतरवा लिये जाते हैं।)

फतू—इन जाकिमों से लुबा बचाये।

एक किसान—आये हैं अपने पेट भरन। बहाना कर दिया कि चोरी के मास का पता कमाने आये हैं।

फतू—अस्ला मियाँ का इहूर भी इन पर गही पिच्छा। देरों बैचारे की लामातलाशी हो रही है।

हकूमर—लामातलाशी काहे की है, मूट है। उस पर लोप करते हैं कि पुनम तुम्हारे जान-मास की रक्षण करती है। \*

बचावत की भाव लीने म भड़क रही है, जैसे बहू बही जाण ओरों के लीने में भी भड़का वे। अब तक किसान जिन्हें नही करेगा इस देख में कुछ बही हापा।

अपनी तरक से नमक-मिर्च लमाने की कार्र उकरछ गही है बस एक बड़ा-छा बार्ना उठाकर उनके सामने रख देना है—देख लो इसमें अच्छी तरह अपनी लसबीर। बुटिया सलामी पुछनी बातों को मार करती हुई राजे-बरी से बहरी है—

बरी तुम्हारे गिलान में अब मेरा पेट म भरिया। मर पेट मच्छा था अब अपने बा पल्ले भर ली मिसत्रा था। अब ली पेट ही नही मरता। चार पलेपी

बनाब पीसकर जात पर से उठती थी। चार पैसे की रोटियाँ पकाकर बिके से निकलती थी। अब बहुरें आती हैं तो बूझ के सामने जाते उनको ताप बढ़ाती हैं, बकरी पर बैठते ही सिर में पीरा होने लगती है। खान को ठा मिला नहीं बन-भूटा कहीं से आब। न खाने उपज ही नहीं हाती कि कोई बो के पाता है। बीस मन का बीजा उतरता था। बीस रुपये भी हाब में आ जाते थे तो पछई बीजों की जाड़ी द्वार पर बँध जाती थी। अब देखने को रुपये तो बहुत मिलते हैं पर जोले की तरह देखते-देखते यल जाते हैं।

यह सब ठेठ किसान हैं जो आपस में अपन बुझ-बर्झ की बातें कर रहे हैं। उन्हीं के बीच एक ठेठ किसान और भी है जो बीछ हुआ सबके काम में कुछ मंतर पूँछता रहता है। उसने एक रोब हल की मठ नहीं पकड़ी पर वह सोकहों जाने किसान है। लोग उनसे देस का हाल पूछते हैं, मुंघीजी उनसे उन्हीं का हाल पूछते हैं बिघा-कपयत क लिए दूर निकल जाते हैं लौटते समय रास्ते में किसी चाचा-काप केत की मड़ पर बैठकर कुछ स्त्री बर्बा भी हो केती है कुछ सूजे-बूजे का ह कुछ देस-मुनिया का हाल। पुरबट पर बैठकर बातचीत और भी बंन से होती या-दोस्त भी उनक जो है किसानो में ही। अक्सर घाम को निकल जाते हैं उस तरफ़। फिर नीम या मड़ुबा की छाया में लटिया पर बैठकर बटों बातचीत होती है, जब तक बर से बुलावा नहीं जाता। मुंघीजी लुर कम बोलते हैं। बात छेड़कर गुपचाप बैठे मुनते रहते हैं।

सबकसिंह 'बिमाबेसी' नाम का कोई घम पड़ रहे हैं जितमें यह बात किसी है— हम सभी जनसत्तात्मक राज्य के योग्य नहीं हैं कचापि नहीं हैं। अमरीका कास बसिधी अमरीका आदि देसा न बड़े समारोह स इसकी ब्यबस्था की पर उनमे से किसी को भी सफलता नहीं हुई। वहाँ अब भी घन और सपतिबालों के ही हाथो म अधिकार है। प्रजा अपन प्रतिनिधि निरनी ही सावधानी से क्यों न चुने पर बन्ध म सत्ता निन-गिनाये जादमिया क ही हाथो में बनी जाती है। सामाजिक और राजनीतिक ब्यबस्था ही ऐसी दूषित है कि जनता का अधिकार मुट्टी भर जादमिया के बचवर्ती हा गया है। जनता इसकी निर्बल इतनी अचल है कि इन राजिशाही पुस्या के सामने सिर नहीं उठ्य मरती। जादमी ब्यबस्था यह है कि नब के अधिकार बराबर हों कोई जमीदार बनकर कोई महान बनकर जनता पर रोब न जमा सके। यह ऊँच-नीच का दूषित भद उठ जाये।

बोलचालिक जालि का बीज मुमीजी के मन में यहूरे जापर बीछ है। अब से

तीन बरस पहलें मुंगीजी ने निपम साहब को जो यह बात लिखी थी कि 'अब मैं कृषि-कृषि बोलबोलिस्त जमुकों का कामका हो गया हूँ वह कोई लखिन उबास नहीं था। उसकी मोटी-मोटी बातें मुंगीजी के मन में गहरे समा गयी हैं।

कुछ बातें आपस में बातें कर रहे हैं। एक कहता है—

बुकरम क्या हमी करते हैं यही बुकरम का समाज कर रहा है। सड़की रोजगार का नाम से डाका मारते हैं, अमले भूस के नाम से डाका मारते हैं, बकीस मेहनताना का नाम से डाका मारता है। पर उन डकैतों का महसूब नहीं है, हुवा बाड़ियों पर सैर करते फिरते हैं, पेचबाम लपाये मलमली गड़ियों पर पढ़ रहा है। सब उनका आदर करते हैं, सरकार उन्हें बड़ी-बड़ी पदबिमा देती है। हमी भांगों पर बिधाता की गियाह क्यों इतनी बड़ी होती है?

दुमरा जबाब देता है—

काम करने का ठप है। वह साम पड़े-लिभे हैं इसलिए हमने बनुर है बुकरम भी करते हैं और भीज भी उड़ाते हैं। बड़ी पत्थर मन्दिर में पुजता है और बड़ी गालियों में लपाया जाता है।

मुंगीजी ने वर्तमान समाज-स्थिति में पूरी तरह विद्रोह कर दिया है। हमने स्वराज्यवादियों के मन में स्वराज्य की तम्बीर मल साऊन हा, इस आदमी के मन में आदि की तरह साऊन है। उतक लिये स्वराज्य का मतलब है हम अस्यापूरुण समाजस्थिति में आमुल परिवर्तन—अंग्रेजी अमलधारी से मुक्ति केवल उतकी पहली कड़ी है। उतने मात्र से सम्पुष्ट ही जानेबाला जीव वह नहीं है—अब कि स्थिति यह है कि अंग्रेजी पराधीनता से सम्पूर्ण मुक्ति की बात सोचनेबाने भी अभी हैच में कम ही है। उतने आने की समाज-रचना तो बहुत दूर की बात है। इस आदमी का अलग अपना अपना है अलग अपना रास्ता। स्वराज्य का मतलब सब अपना-अपने ढंग में समझते-समझते हैं, ता फिर मुंगीजी ही क्या इस अधिकार से बचिन रहे। यही उनकी सारी कागिग है—जगता की जगामी उन मानव अधिकारों के लिए जिन्हें तुम मार्य समझत हो, स्यापूरुण समझत हो ताकि स्वराज्य के नाम में अब भी वह लिन आये जो पमरमी अम्बाद बीज लोणा का न पकड़ाई जा सके।

स्वाधीनता का सपना बल रहा था। क्या हुआ या अभी कुछ दिना न बन्द था। बल फिर होया। यह तो बस्तु ही है। उम मद्राम में मकबा लिखा लेना है किमम जैम बल पड़े। मुंगीजी अपने कर्म के जोर में उमम लिखा लेने हैं। इन मद्राम के आ सैदिक हैं आचारण किमान मेहनतका उनका जगामा उनकी बुद्धि को बिबेक की, पीरप को—यह भी तो एक जगती बात है और गारन मकम

बकरी । वह कुछ प्रेमचन्द हैं जो नाटक के रोप होते-होते हठपर के मुँह से इन पार्श्वों में हुनारे पौध को कलकारते हैं—

जिस आधमी के दिम में इतना अपमान होने पर भी श्रेय न आये मरने मारने पर तैयार न हो जाये उसका नून न लीकने लगे वह मर नहीं हिचका है। हुमारी इतनी दुर्गत क्यों हो रही है? जिसे देखो वही तुम्हें चार गालियाँ मुलाता है ठीकर मारता है। क्या बहुलकार, क्या जमीदार सभी कुलों से नीच समझते हैं। इसका कारण यही है कि हम बेहया ही गये हैं अपनी जमड़ी को प्यार करने लगे हैं। हममें भी नीरख होती अपने मान-अपमान का विचार होता तो मजाम यी कि कोई हमें ठिगड़ी धाँकों से बेस छत्रता। दूसरे देघों में मुमते हैं गालियों पर छाग मारने-मरने को तैयार हो जाते हैं। वहाँ कोई किसी का पाठी नहीं दे सक्तता। यहाँ क्या है काठ खाते हैं भूते खाते हैं, धिनीनी पालियाँ मुमते हैं धर्म का नाम अपनी धाँकों से बरतते हैं, पर कामों पर पूँ नहीं रेंपती जन चार भी गर्म नहीं होता जमड़ी के पीछे सब तरह की दुर्गत सह्ये हैं। जान इतनी प्यारी हो गयी है। मैं ऐसे जीने स मीत को हवार बजें अच्छा समझता हूँ। बस यही समझ को कि जो आधमी प्राण को बितना ही प्यार समझता है, वह उतना ही नीच है।

प्रेस और नये मकान में से कोई अनौ राडा नहीं हुआ है। हर रीड एक नया जमेला सामने आता है। इस समये उनका कितना-मकना अपने हिसाब से काशी कम हो गया है कैकिम में कम नहीं है। एक बर्तन के करीब कहानियाँ (जिनमें से अधिकाँग मुराबी कहानियाँ हैं) और एक बड़ा मुराबी नाटक, सब इसी और में इन्हीं जमेलों के बीच लिखे हैं। जिने बिना उन्हें बैन भी तो नहीं मिलता। एक दिन का भी नागा उन्हें बहुर माकूम होता है, एक जारी-सी बस जाती है कसेजे पर। उम रीड उन्हें कुछ अच्छा मही कणठा और तबीयत अस्लापी हुई रहती है। छोटी-छोटी-सी बानों पर जिन्हें पों हँसकर टाल देने की उमरी बाधत है मुँसका बफ्त है। हाँ कलम अच्छा रूँ तो फिर सब ठीक है।

ताहम बफ्त तो इन सब संभटा में जाता ही का और अपने हिसाब के उन्हेंने काशी काम नहीं किया वा। प्रेषाधम - प्रेषा काई उपम्याम अब तक जा जाना चाहिए वा। डॉ बरल से ऊपर ही गया वा उमकी पूरा किये। इपर कुछ दिनों मे एक अका अकसर रिजायी पढ़ता है। उसने बेहरे-मीह? बीक-बास में कुछ साम बाड है। उसे बेगटर एक उपम्याम की अणरेगा मन में बन रही है। बड़ा उपम्याम होवा।

१ अक्टूबर १९२२ को मुन्शीजी व निपम साहू की किता —

प्रेम का सादान कुछ कलकल में मँपवाया। टाइप का भार्डर २ दिया है  
 मकर मंगल अभी तक नहीं मिली। प्रेम गुलाबी और मैं बर बँटा। जाना  
 साहू तपतीऊँ करने हुए है। उनके आनन्दान में आनगी जग गुरु हा गयी।  
 भाई-बन्धों व उनकी तनहासुयी' न बर्दास्त हा लकी। अब बटवारे का मसला  
 दरपेय है। मेरे मकान में हस्त्य हो रहा है। अमाष्टमी करीब आ रही है।  
 मुसम्मम इराण है कि इस तालीक में आपसे मुलाक़ात करूँ। डिप्टी का  
 एगवार नहीं। रसम मुलाक़ात कायम रहे तो बेहतर। आप तो कन्व है। गीर  
 प्याम कृपे पर बीजे जाते हैं कुमाँ नहीं बीडा आता। बारिग न नाक में दम कर  
 दिया। प्रम्प को भी मुहमास पहुँचा। और फिर कह सबसे बड़ी छबर जो उन्ह  
 अपने सोप्य को देनी है — आपकी यह मुनकर मुन्शी होगी कि प्रेमाथम की ?  
 कितने निकल गयी। अब हमारे एडीगत की रीयायी है।

तरीपत में ऐसा उमार आया इस मकर से कि मुन्शीजी ने उमी रोड बिपुल  
 उली रोड १ अक्टूबर १९२२ को बीयात हस्ती (रसमूमि) पर नाम गुरु कर  
 दिया।

✓  
 १ अक्टूबर सन् २२ को सिकाना शुरू हुआ और १ अप्रैल सन् २४ को एग-  
 भूमि का सर्वे मशीन खोजने इस्ती के नाम से छत्रम हुआ।

कोई इसे गुप्त माने जाहे होय सामयिकता मुंशीजी क कृती मन की प्रमाण  
 कृति है। मुंशीजी वर्तमान में भीते है और वर्तमान के लिए ही भिन्नते हैं। इसी-  
 लिए कि उन्हें भविष्य की चिन्ता है। वर्तमान को फलसंगकर भविष्य में नहीं पहुँचा  
 जा सकता। वर्तमान को छोड़ते ही भविष्य की स्थिति आकाशवेस की हो जाती है  
 जो कभी नहीं पकृती। वर्तमान ही भविष्य का आधार है, उसकी खाद-मिट्टी  
 और भविष्य ही वर्तमान की सहज दिशा है उसका गंतव्य। काल सनातन है  
 जलन है — वैसे ही वैसे मनुष्य और उसका सुख-दुःख। वह तो एक निरन्तर बहती  
 हुई धारा है जापि स वनन्त को — तुम भी मर्पावित हो बिना स काल से भर  
 जो उससे अंजुली और सूर्य को नमस्कार कर पुन मर्पावित कर दो उच रुना न  
 प्रबाह को खान्त मन स अपचल मन से वीरा हो उन्हीं कहरों पर अपना भी  
 एक छोटा-ना लिया पहुँच जायगा तुम्हारा वैदेश भविष्य-वेकता की। इतनी  
 ही तुम्हारी प्रतिभुवि है और इतनी ही तुम्हारी शक्ति इससे अधिक का काम  
 न करे। वह अपमृत्यु का मार्ग है। वर्तमान से पराहमुख होकर कोई कासजयी  
 नहीं हुआ। अंगीकार करा जीवन को जैसा वह तुम्हें मिला है उत्तर को उन  
 प्रश्नों का जो तुम न तुम्हारे सामने रखते हैं प्रश्न स्याय-अव्याय के सुन्दर-असुन्दर  
 के रोप की चिन्ता मत करो। जीवन रंगभूमि है जिसमें हम सब अपनी छाटी-  
 सी भूमिका खेलने के लिए आये हैं। दर्दका से हरदम हर्षव्यति की अपेक्षा क्यों,  
 वह तो जा होगा भाटक के अन्त में होगा। जीवन समर-भूमि है। तुम भी एक  
 छोटे स सैनिक हो। सैनिक की दृष्टि बसल अपने समर पर होती है। जिस हरदम  
 पहक की साससा पेर रहती है और जियका मत हर समय उसी के भाव-भाव की  
 बड़ा-अपटी मे लपटा रहता है वह तो छट्टेबाज है जा भूल से चर आ गया है।  
 उसे चाहिए कि यहाँ स जला जाय। यह जगह अच्छी नहीं है। यहाँ ता जो मिसज  
 है मरने क बार निकला है।

यह नहीं कि मुंजीबी कर्म में पैसा की कल्पना नहीं है। है और गुरु है।  
 सकिम द्विगु बहु नहीं है इतना छाया हेतु केन्द्र कोई जिये भी हैन। उनही एकि  
 विजयी ही सीमित क्यों न हो, बहु ऐसा कुछ करता चाहते हैं जो उन्हें यह सतोप  
 दे सके कि यह अन्न ही मीठर बकर मही सते खो बकि योय दिना एकि भर  
 देना के सब-आगरम में ✓

यह विस्मा गुरु करने के बाद महीने पुरुष में ही आनेशन एका का और  
 पापी की ए एका में लिए जस में बास दिव गय य। किताब एका हीन-होने पापी की  
 एका दिने गये य मही (मानी एडिज बीमापी के कारण) एकि हासठ इनको कभी  
 क्या बकली। आशाकन एका पदा रहा। एकी का दौर बक रहा था। उनी  
 का एक नतीजा ये बहु तमाम रिगु-सुगन्धि दये को कनी से भाव दिव परा-बहु  
 देन भर में नइकन रहने य। और उमका दूमरा नतीजा य जिन प्रोडोशन को  
छोकर कौडिलो में बाकिल हाते की बार लोपो का प्रकाश। चितर-मशास  
 और मोतीनास नरक इस प्रकृति के मेना ये। इनी आमार पर काप्रमजनी के दो  
 एक हो दय य — गो-प्रेरम जो पापी की के माय उनी पुगने जनमका और उन  
 आशोशम के रामे पर बलता चाहने य और प्रो-प्रेरम जो बहने य कि उस  
 पुगने रामे को बानने री, उनको छाडने री उमका / हम कौमिगो म बार  
 मीठर से चोत करनी चाहिए। बापेय के यया अधिबेज (१९२) म एकी बार  
 यह प्रकृति सगठिन कर म गियायी थी। गापी की उम काय एक मे य और  
 आनेशन तो पैम कृष्ण महीम पहले ही उम हीं बुझा य। गगा से रिन्की एकी रिन्की  
 म कातोनाश अधिबेज तक आते-आते इन दो प्रेरम की त्रिगुने पीछ मानी  
 स्वराज्य पाटी भी बना लो यी ताउन बराबर बाकी एनी यी और मो-प्रेर  
 बापेय मीं पर रीठ लपटी या एकी यी कि कत कौमिगु-प्रका का विरीय म करे।

✓ गापी की एक शब्द एक क दुरु में जेक से ए और बर्ह में मुठ ठा पर बारर ए  
 तो चितर-जमराम और मोतीनास नरक बरी बकर उनमे गिये। कौमिगु तक  
 उन लोपो की बाउबीज हई, बहन मुन्दर हई और एन लोपो ने पूर्य बाणिग की  
 कि गापीकी का ममपम और बाकीरज उमका बापेय का दिव माय। बह तो  
 रीठ मही दिना और उस बाउबीज के बार बनो पापो म बरनी-बनी रिन्की का  
 स्पटीनास करते हुए लम्बे-लम्बे बान गिये। केकिन गापीको ने एन बाउबीज  
 मे इतना बारर भाग लिया विशेष का एका जिन तक है देना की मानी इस ममप  
की बन रही है। एन्कि करते बान म उगहन जहाँ एक ठाक बान मोनिब  
 गिर य की बाउ बरी बरी रिन्की और बाकोनाश के बाउय एकाका का म-पन  
 करते हुए यह भी बरा कि स्वर्जनों की मुाड हं कर आना म न करते की ए



देना ही ठीक है और गो-बैजस को चाहिए कि उनके सम्बन्ध में कोई कुर्बाना अपने मन में न बाने दें। वस्तुतः बांधीजी स्वयं पूरी सहायमुत्तिधीलता से खुले मन से इस प्रयोग का निष्कर्ष देना चाहते थे और जैसे-जैसे उन्होंने उसको समझ होते देखा (जैसे कि बंगाल की असंबन्धी में बितरजन बास की पार्टी का बहुमत में पहुँच जाना) जैसे-जैसे उन्होंने उसका संस्कार भी लिया और जल्दी ही वह समझ भी जाया कि बांधीजी अनौपचारिक ढंग से उन्हें कौंसिल में काम करने वाले काप्रेनी कहकर पुकारने लगे। यह कहने की जरूरत नहीं है कि बितरजन बास और मोतीराम नेहूक जैसे लोग कौंसिल-प्रवेश की बात स्वाधीनता मान्योपन के बृहतर परिप्रेक्ष्य में ही कहते थे इस दृष्टि से कि हमकी जनता के जोर से बारासभा में भी पहुँचना चाहिए और वहाँ पर सरकार की निकृष्ट नीतियों का डटकर विरोध करना चाहिए, इससे हमारे काम का समय और जहाँ अनुपात में हमारी शक्ति बढ़ेगी लेकिन इसमें भी कोई सन्देह नहीं है कि इस कार्यक्रम में लक्ष्यवाधियों के पुनः नामे व सिए भी बहुत अर्थकाय था।

मुसीबी बड़े ध्यान से सब कुछ देख-सुन रहे थे लेकिन उनका अपना ही रस था। मुंबई दमानरायन निगम के सवाल का जबाब देते हुए उन्होंने १७ फरवरी १९२३ को जब कि वह काशी विद्यापीठ में हेडमास्टर थे लिखा था—

आपने मुझसे पूछा मैं किस पार्टी में हूँ। मैं किसी पार्टी में भी नहीं हूँ। इसलिए कि दोनों में से कोई पार्टी कुछ समझी काम नहीं कर रही है। मैं तो उस मानेवाली पार्टी का मम्बर हूँ जो कोठहुद्रास की सिपाही छात्रीय को अपना बस्तूर उक्त-अमल बनाये। स्वराज्य-विकास पार्टी की आनिब से जो कांस्टीच्यूसन निकला है उससे अलबत्ता मुझे कुन्नी इतप्रग्रह है। मगर ताजुब नहीं है कि यह एक पार्टी से क्या निकला। मरे लयास में दोनों ही पार्टियाँ इस मुकामके में मुतश्रिक हैं।

फिनी जपह पर सहमत भी हैं किसी पार्टी से लेकिन अपने क पूरी तरह उसका गिनन के लिए तैयार नहीं हैं क्योंकि मैं तो उस मानेवाली पार्टी का मम्बर हूँ जो कोठहुद्रास की सिपाही छात्रीय को अपना बस्तूर उक्त-अमल बनाये यानी जो छोट स गों (निम्न श्रेणी) की राजनीतिक गिरा को अपनी कार्यप्रवाही बनाये। अबामुद्रास छन्द से जो कि एक बसता हुआ शब्द है और जिसका अर्थ 'जन साधारण है उन्हें अपना अभिप्राय पूरी तरह स्पष्ट हाता नहीं जान पड़ता इस लिए वह अपना एक छन्द गड़ते हैं कोठहुद्रास जो कही कोण में नहीं है।

अपनी शक्तिमत्, देश-वास के अनुसार, उन्होंने बराबर यही किया है और सासकर इपर जबम आजादी की सड़ाई न इस नप मैशन में रर रगा है। क्या नहीं सिखा है उन्होंने इन तीन बार बरनों में— सिए लिने है पत्रों की टिप्पणियाँ

मित्री है अमहयोग की कहानियाँ सिन्धी हैं वैम्पेट लिखकर साधारण लोगों को साधारण ढंग से स्वराज के प्रयत्न समझाव है, प्रमाथम-वैसा उपन्यास लिखा है जिसमें आनेवाये आंदोलन के प्रारूप के साथ-साथ उसका आये की इज्जती करवर्ते भी है। सप्राम-वैसा नाटक लिखा है जिसमें इस आंदोलन के गीब में प्रवेश करने की शैली-शायती तयबीर है और अपनी मारकाट की माग को ठग करने के लिए कर्बला की छद्म में एक पड़ा पामी लकर भी बोड़े हैं जब वैसी बहरत हुई है, कभी आत्मस्य नहीं किया प्रमाद नहीं किया। बहु तो मिपाही है वेग के ऐसे मिपाही जिस एक साथ विठन ही मोर्कों पर लक्ष्मा पड़ता है।

आंदोलन दाहू है के पहले सामा का विभागी तौर पर उस बीज के लिए तैयार करना था। आन्दोलन शुरू हो गया तो उनकी हिम्मत और उनका आग बढ़ाना था। और अब जब कि आन्दोलन पिन्हाल ठग पड़ा हुआ था और लोग पर एक मुन्नी-सी छापी हुई थी एनी बीज की बहरत की जो उनकी इस मुन्नी को ताड़े और एक बार फिर उमम प्राप्त का मकार करे। सकिण उच्छान-वैसा नहीं अधिक यन्मीर बरतल पर। ऐसा एक सान जिमम बार-बार मजीबती पादी जा सके। बहरत हापी उमका। आशारी की लड़ाई एक दिन की बीज नहीं होनी लम्बी बीज होती है। ठग-ठग के उछार-बडाव आते हैं इस मीगन में। जीन का मुंह एक ही बार देपना लमीर हुआ है। उसका बुरत न आने बिडनी बार हाह हुआ है। हाह पर हाह हुती है। तो भी हिम्मत नहीं खूनी चाहिए, नहीं ता नर्के गया। हारने म बुवाई नहीं है। मरु में हाह-बीज ता लपी ही खनी है। हाकर बंड रहत म बुगर्न है। लकिन इसक लिए मन की पाड़ी-नी साधना अपेक्षित है तमी बिल को म्पिउप्रम बोपी-वैसी बहु छाति मिगती है। सार्मनिपना का बाडा-आ नंबर उनक लिए जरूरी है। सकिण आरामूमि के लिए बहु लीन-मी मुाधिक बीज है यहाँ की तो मिटी ही ऐसी है।

भैरो अपनी बीबी मुमापी को बहुत मारता-पीटता है। एक बार मुमापी जब बहुत रंग आ जाती है तो मूरदाज के पास आकर मरत लती है। लीग उसकी ठग-ठग से उछाने-समबाते हैं बरतौय करत की भी कोरिंग करते हैं सकिण मूरदाज बटल खता है। मुमापी अपनी हज्जा में आपी है अरती हज्जा म ही जायगी और बह जाता चाहे ता आज नहीं जाय लेकिन इस ठग नहीं। मगर भैरो की ता इसम काज बटती है। बाविर एक रोख भैरो मूरदाज की शोनी में जाय लगा देता है और मोरड़ी जलकर छग हो जाती है। मूरदाज का जो भीग मांगकर आना देत बनाना है अपनी शतरुई क जल जाने का दुग नहीं है मुमापी के बेमहाप हो जाने का दुग है, और बह रोने लग जाता है।

● सहसा वह चौंभ पड़ा। किसी बार से जाबाब आयी — तुम खेल में रोते हो।  
मिट्ठ्या बीसू के घर से रोता बरग माता या चायद बीसू ने मारा बा। इस

पर बीसू उसे बिड़ा रहा या — खेल में रोते हो।  
मूरदास बहाँ तो गैराध्य खानि बिन्दा और सोम के अपार बरम में सते  
हाथ पकड़कर फिन्तारे पर लड़ा कर दिया। बाहू। मैं ता खेल में रोता हूँ। फिन्तनी  
बरी बात है। सच्चे गिफ्तारी कमी रात नहीं बाबी पर बाबी हावले है, चोट  
पर चोट खाते हैं मरक पर मरक सहल है पर मैदान में बटे रहते हैं, उनको  
स्पोरियों पर दक नहीं पड़ते। खेल में राता केसा। खेल हँसते के लिए, विस बह  
काने क लिए है रोने क लिए नहीं।  
मूरदास उठ घड़ा हुआ और बिजय-मय की तरंग में राल के डेर को दानो हापों  
से टङ्गने लगा।

एक भण म मिट्ठ्या बीसू और मुहल्ले के बीसा लड़के जाकर इस मम्म-सूय  
के आठ मोर बना हो गय और मार प्रस्ता के मूरदास को परेजान कर दिया।  
उसे रास फरत देलकर सबा की चेक हाब भाया। रास की बर्पा हीने बयी।  
यम के यम में सारी राख विलर गयी भूमि पर बेबर काना मिघान रू यया।

मिट्ठ्या में पूछा — द बा बर हम रहने कहाँ?

मूरदास — दूसरा घर बनायेंगे।

मिट्ठ्या — और कार्र फिर आग लगा दे ?

मूरदास — ती फिर बनायेंगे।

मिट्ठ्या — और फिर लगा है ?

मूरदास — ता हम भी फिर बनायेंगे।

मिट्ठ्या — और जो कोई हुआर बार लगा दे ?

मूरदास — ता हम हुआर बार बनायेंगे।

बासका को सख्याबा से बिजय रथि हल्ला है। मिट्ठ्या ने फिर पूछा — और  
जो कार्र ती लाय बार लगा दे ?

मूरदास ने उसी याकाबिन सरलता से उत्तर दिया — ता हम भी ती लाय  
बार बनायेंगे। ●

यह द बर्षों की बातचीत है जिनम मे एक बुड्डा है और उम बच्चे का  
बादा है, जन्मा है मिगमया है मय है मन्निम उर परा हटावर ती बेग्री इतिहास  
बोल रहा है उसर बंठ ग। जिनती बार उजड़ा यह देष और फिर बना फिर  
बना जमी जादमी क बसकूते या यह बान बह रहा है। यह हमारी अग्रय मात्मा

बोळ रही है, उसका नातिकारी संन्य बोळ रहा है। इस क्षण समय को भोगा है एसी ही प्रतिज्ञा की।

और यह प्रतिज्ञा मात्र उच्छ्वास नहीं है उसके पीछे एक गम्भीर जीवनदर्श है जो एक दिन की उपस्थिति नहीं जीवन की गहरी पीड़ा को मसकर हान भाग हुआ रहा है। भले प्रमथन में मूरदास की बनारस की गलिया म घूमते देता हा लेकिन उसके भी पहले वह कुछ उनके मन की गलियों में घूम रहा था इमीति तो बाहर जब देखा ता पहचानते देर नहीं लगी बर्ना बितने ही तो अपने घूमने रहन है यक्षियों में और बाबाये में और सनी तो देखन है उन्हें। अपने मानस व की बाया व यह उही की जीवन-पीड़ा बाळ रही है उन्हीं का जीवन शाय। सग्य और मूर्ति के बीच बीबार इह गयी है। मगर और ब्रह्म एक हो गया है। अपने हृदय के रक्त स प्रेमचन्द ने मूरदास की रचना की है जिस अर्थ में अब तक किसी की रचना नहीं की। मूरदास की उस अस्तिपिबर बीमड़ देह म स्थिति हृदय प्रमथन का है। ग्याय-अन्याय सग्य प्रमथन मुन्दर-बमुन्दर—जीवन की मारी मामासा का मूरदास के माध्यम से प्रमथुत है प्रमथन की मरनी है। रंगभूमि प्रेमचन्द की मात्र एक ही जीवन उपस्थिति का महावाक्य है और उसम मूर्तान ही प्रमथन है। वह एक आदर्श स्याप्रही है लेकिन राजनीतिक माग्नेयन व सीमित अर्थ म नहीं जीवन की एक समग्र दृष्टि के स्थानक अभिप्राय में। और किसी क लिए हा न हा प्रेमचन्द के लिए स्याप्रह का अभिप्राय यही है जीवन के कुछ सगतन मूल्य—वया क्षमा पछेतरार, प्रेम बिनय अपरिपृष्ट निर्भय सग्य लिष्ठा भन्याय का प्रविहार—बिनकी सुखता उनकी अपनी प्रकृति और सस्तर में गुरु हंती है और द्यस्तय को अपने माय ओड़ती हुई गापी तक माती है। उनही हर कहानी इहा सन्मृतिवों की घुरी पर घूमती है और स्याप्रह उन मबबा निबोड़ है। उरता एक धराउत बह भी है कुछ राजनीति का और बह भी महत्वपूर्ण है स्थिति कसरार के माते मुनीवी की उमम कम प्रपात्रन है क्वाति यही उनको भूमि घूमती है, मकुय का चरित्र और उन चरित्र का निर्माण। इनी अर्थ में उन्हें स्याप्रह का घटा किया है और अन्याय नाय से प्ररु किया है। लेकिन उनके चित्रण म अनेक पार, जहाँ जीवन की परत कच्ची रही है यह आदर्श ही-यात्-द्वैतान-म लम है। मगर रंगभूमि की बाण और है। जहाँ जीवन की उमरी पर मबभुत है और मूरदास के माध्यम म उम्कान बहूत गदरे रंगभूमि का गगाय के क्षम उम आग्ना का चरितार्थ किया है।

जीवन की समन्वय से निरन्तर कर्म के रूप में घट्ट करना ही उमी का एक मोग है। मन को बग्न गति मिाती है उमने। आदमी बग्न हुना महसूस

कहता है कोई बौध नहीं रहता मन पर। अपना नाम भी लगाकर करो और  
 कुछ छो। भाग्य की नींव साथी भी खोसकर हूँगे। परिणाम की चिन्ता न  
 करो। भी लगाकर लेलो जब तक हम में हम है जब तक साथ बरती है और  
 फिर एक रोज़ बड़े जामो दुनिया का खेल-तमाशा तो यों ही चलता रहना।  
 बरखा आया है। चलता जायगा। आदमी का बच्चा बेकार ही बोमै करता है  
 परेधानियों की पठरी। टिटिहरी के बारे में कहा जाता है कि वह पैर उभर  
 करके सोती है घायब इसलिए कि आसमान अगर गिरे तो वह रोक से। आदमी  
 का भी वही हाल है। चार दिन के लिए खाता है लेकिन छन मर बैन से नहीं  
 बैठता। कहीं यह ती कही वह। पूछो क्या होता है उसल विषय इस कि  
 आदमी खुद अपनी जिन्दगी पहाड़ कर से। उदा-उदा-सी बातों पर सगरे बेकार  
 का जल्मा-मृदना बेकार की बड़ा-ऊपरी नाच-लसोट सारी जिन्दगी इसी में बीत  
 जाती है। कोई हद है इस महमकपन की। मगर नहीं सीप इसी को जिन्दगी  
 समसते है, इसी हर बरत की बापाबापी का। मजा कोई पूछे इन खरक क  
 माते से जिन्दगी में यों ही क्या कम कुछ है जो तुम यह एक और बोने  
 सते हा।

हैसा खुब जार से हेमो ताकि ये बायल छैट जायें। उसमे भी काम नहीं चलता।  
 बहरे पर सुनियो बकनी जा रही है कमपनी क बाफ तेजी से सफेद हा रह है।  
 मगर तो भी अपनी नाशिय मे बसर क्या रह। वही तक अपना जोर चलता है  
 जिन्दगी को रंग से पीने की तदबीन बरनी चाहिए। यह क्या कि हृषियार  
 बाक बिये। यह मरौं ना बय नहीं है। मरौं का बय वह है जो मूरदास में मावार  
 हो उठ्य है— उसकी जिन्दगी म और उसकी मीत में। उसकी आत्मा के तब से  
 जाना-बोना प्रकाशित है। एक जगह पर मूरदास कहता है—

हमारी बड़ी मूक यही है कि खेल का खेल भी तरह नहीं खेलते। तस में  
 बायली बरके कोन जीत ही जाय तो क्या हाप जायेगा। मजमा ता इस तरह चाहिए  
 कि निगाह जीत पर रहे पर हार से पबराये नहीं ईमान का न छोड़े। जीतकर  
 इतना न इतराय कि अब कनी हार हांपी ही नहीं। यह हार-जीत तो जिन्दगी के  
 साब है।

बनार्क की गली से जाहत होकर मूरदास अम्पनाक में पड़ा है। रानी राजकी  
 उनको देखन जाती है और पूछती है पीड़ा बहुत हा रही है? तो मूरदास जबाब  
 देता है— कुछ बच्य नहीं है। घेसले-जसते फिर पड़ा हूँ चाट जा गयी है बरखा  
 हो जाईया।  
 राजा महानुमार भी जितसे मूरदास की मुय टबकर रही है मिनाजपुनी

के लिए पहुँचते हैं और कहते हैं—मूरदास मैं तुमसे अपनी मूर्तों की क्षमा माँगे आया हूँ

मूरदास उन्हें भी यही जबाब देता है—सरकार, एसी बात न कहिए। आप राजा हैं, मैं रंक हूँ। आपने जो कुछ किया दुमरा की भलाई के विचार से किया। मैंने जो कुछ किया अपना परम समझकर किया। हम तो सब मसलने हैं जीत-हार मयदान का हाथ है। वह जैसा उचित जानने हैं करते हैं। बस भीयत ठीक हानी चाहिए।

इस पर राजा साहब कहते हैं—मूरदास नीमठ को कौन देखा है। मैंने सबके प्रजाहित ही पर निवाह रखती पर आज सारे मगर में एक भी ऐसा प्राणी नहीं है जो मुझे खाटा भीष स्वार्थी धर्मही पापिष्ठ न समझता है। और तो क्या मेरी सहपत्नी भी मुझसे घृणा कर रही है

कैसा मजाक है, राजा साहब मूरदास की मित्राभुषी के लिए धाये हैं और हाता उसका उम्दा ही है मरपड़ मूरदास गामाई तुलसीदास की बागी म उनरी मित्राभुषी करता है—इसकी चिन्ता न कीजिए। हानि-लाभ जीवन-मरण जस-जपजस बिधि के हाथ है हम तो पाली मदान म जेम्न के लिए बनाये गये हैं। सभी खिलाड़ी मज लगाकर मरठ हैं सभी चाहते हैं कि हमारी जीत हो मरिन जीत एक ही की होती है तो क्या हारनेवाय हमसे हिम्मत हार जाते हैं? वे फिर खेकते हैं फिर हार जाते हैं तो फिर खेकते हैं। कभी न कभी तो उनरी जीत होती हो है। नहीं नहीं राजा साहब निरपरा हाता विमर्शिया के पसे क बिगड़ है। अबकी हार हुई तो फिर कभी जीत होती।

राजा साहब को सबसे ज्यादा दुःख अपनी बदनामी का है। उसके बारे में मूरदास कहता है—सरकार, मरनामी और बदनामा बहुत में आरमिया के हुम्ना मजाने से नहीं जाती। लम्बी बेवनामी अपने मन में होती है। मरपड़ अपना मन बोले कि मैंने जो कुछ किया बड़ी मुझ करना चाहिए वा इसके मित्रा बाँट दुमरी बात करना मेरे लिए उचित न था तो बड़ी बेवनामी है।

यह भुगीमो के मजल बिदवान काय रहे हैं जिनके बनन म म जाने दिगना समय लया है जिन तक पहुँचने म मत्र का न जाने कसी-कैसी भाँगिया न हाकर जाना पड़ा है।

लौंगिया के रिता जात सयक जिगृहिने अपने बारताने के लिए मूर की उमीन पर रीज लगाया जा कि तारे मपड़ की अड़ बना मगगाउ म मूरदास को देगल के लिए पहुँचने है। जात के पहले उनक मन में मज्ज भी है जाने कि म जापे मूरदास को कुछ तो नहीं लमगा उनका जाना। लेकिन उनही बेंटी जब उन्हें

हम खोर से वास्मन्त करती है उसके हृदय में ड्रेप और मास्मिन्त की संय तर्क नहीं है तो फिर वह पट्टेब ही जाते हैं। वो ही एक बातों के बार वह करने हैं, नहीं नहीं सुरदास ऐसी बातें न करो तुम बहुत अस्य अच्छे हो जाओगे। इसके जबाब में सुरदास हँसकर कहता है — अब बीकर क्या करेगा। इस समय मरेंगा तो बेकूश पाऊंगा फिर न जाने क्या हो। जैसे खेठ कटने का एक समय होता है। एक जाने पर खेठ न कटे ता मात्र सड़ जायगा मेरी भी बड़ी दशा होगी। मैं भी कई खादमियों को जानता हूँ जो मात्र छ दस बरस पहले मरते तो खेठ उनका जस पाते मात्र उनकी निम्न हो रही है। इसके बाद सेवक कहते हैं, मेरे हाथों तुम्हारा बड़ा अहित हुआ। इसलिए मुझे क्षमा करना। उसको भी सुरदास नहीं जबाब देता है जो रि उसने राजा साहब को दिया था —

मरा तो आपने कोई अहित नहीं किया मुझसे और आपने दुःखमनी ही कौन भी थी। हम और आप जानने-जानने की पाकियों में खेले। आपने भरसक खोर लगाया मैंने भी भरसक खोर लगाया। जिसको पीतना का पीता जिसको हागना था हाग। बिजाबियों में बैर नहीं होता। मुने आपसे कोई शिकायत नहीं।

साकिया बँटी देगा करती है और उसकी समझ में आता है कि कित्त की शान्ति ही शान्तिविक सौख्य है। इस शान्ति का स्रोत कहाँ है?

सुरदास के उसी जीवनदर्शन में जिस पर छापी पुस्तक छूटी हुई है। वह कित्तना स्मारा मुंशीजी का अपना जीवन-दर्शन है यह उस एत से बाहिर है जो उन्हीं दिनों ठीक उन्हीं दिनों मुंशीजी ने निजम साहब के बच्चे की मीठ पर उनक गान मंत्रा या मन्त्र तर्क सुरदास के हैं।

एक दिन की उपलक्ष्य मही है यह जीवनवृष्टि। साठ का का मन्त्रा अब भी नहीं गरी जमानो की दहलीज पर पर रखते-रखते पिता बस बसे। जिम्मेदारियों का मट्टर गर गर — पिता की जिम्मेदारियों जो उत्तराधिकार में मिली थी और गुद अपनी एक सबम ब' जिम्मेदारी वह जुमा जिसमें पिताजी बेबारे की गर्दन पँथा गय थे — एक पृष्ठ बरसकक बेमेल बीबी। सबका पेट पालने के लिए नि रात बाम्बू के बीर की तरह पुन रहना। रोड-रोड के सास-बूट न हागे हाँठा-निष्पत्ति। और इस सबक बीर अपना लिपुने-गुन का नाम जो जलप एक बड़ा ही पगाई की जिसमें निजनी ही दार दम पूर-पूर जाता था। यहीर बिसवृत्त दूना हुआ था जलप।

मुंशीजी ने आजपातर रैग लिया है, जिन्दा रहने की दूमरी को तर्बीर नहीं है। न एक जाल्मी के लिए न एक जीम के लिए।



१९२४





वेच में इस वक्र का मुँदी छापी हुई है उसको दूर करने का रास्ता नहीं है जिसे मूरदास अपने जीवन में खरितार्थ करता है।

विपत्ती अपनी बीबी पर मुस्तैदी से लड़ा अपना काम कर रहा है। जब बीबी बीब की पकड़ हो वह हाथिर है।

प्रस्तुत शप और भविष्य यथार्थ और स्वप्न उसके लिए अविभाग्य हैं। उक्त एन साध ही दोनों की रक्षा करना है।

मूरदास के पास अपने बाप-दागों के वक्र की कुछ जमीन है जिसे उसने अपने शौच के मरिचियों से चरने के लिए छोड़ दिया है। मिस्टर जान सारक को अपना विपरीत का कारखाना खोलने के लिए जमीन चाहिए और उनके दौड़ मूरदास की जमीन पर लगे हैं। बड़े-बड़े लोग बनी-मानी लोग मूरदास को समझाने के लिए आते हैं, मारण देते हैं, डराते-ममकाते हैं लेकिन मूरदास किसी तरह अपनी जमीन देने पर राजी नहीं होता। फिर वह जमीन बड़े-बड़े हक्करी से खरिया हाथिर की जाती है। विपत्ती का कारखाना खरा हो जाता है। फिर उन काम के घरों पर काम आती है क्योंकि कारखाने के मजदूरों को खाने के लिए जगह चाहिए। सारी बहानी इमी मूमि के संपर्क को लेकर है— संपर्क जो बालबिब मूमि के दुबड़े को लेकर भी है और प्रतीक भी है एक बहुतर मध्य वर। इसी संपर्क में गाँव की छोटी-सी राजनीति की लबीब पुष्टमूमि में मूरदास एक बटक संपादही के रूप में सामने आता है। साधारण ही मानी एक निरर विपत्ती और उच्चतर मानव।

जमीन कारखाने के लिए न देने के अनेक कारण मूरदास के पास हैं अतिम संपर्क बड़ा जगद वर है जिसे वह राजा साहब प्यारी की बात के जबाब में देना करता है।

राजा साहब कहते हैं —जब यह भी तो सोचो कि इन कारखाने में लौहों को बना जगद होगा। हजारों मजदूर मिस्त्री बानू मुगी लहाए, बर्न आकर आकार हा-आर्ये, एक-एक ही बानी हो जायेगी बनिया की नवी-नवी दुजाने गुरु जायेगी, मास-गाम के रिचार्जों को अपनी माग भाजी मकर घर न जाना पड़ेगा यही गरी काम निक जायेगा। कुँबड़ गटिक गाने घोरी दर्जी सभी को काम होगा। क्या तुम इन पुष्प के भापी न बनोगे?

मूरदास कहता है —मरवार बहू टिन कहते हैं मुम्मे की रीजन उकर पड़ जायेगी राजगाठी छोड़ो को फायदा भी मुब हावा। अतिम जगद वर टैजक बोड़ी बनी दाड़ी-दाउब वर परवार भी ता बड़ जाया बसिगी भी ता आतर दम जायेगी परन्तु आमी हमारी दू-बिन्दों को सुरेय रिजता अथरम हावा। दिवान के रिमान अपना काम छोड़कर मरघ के साध में लौहें, घाँ बुटी-

बुरी बातें सीखें और अपने बुरे आचरण अपने गाँव में फैला दें। दिहालों की कड़कियाँ बहुतें मजबूती करने माँवों की और यहाँ पैस के मोम में अपना चरम बिना देंगी। यही रीतक शाहूँ में है। बही रीतक यहाँ हो जायनी। भगवान न करें यहाँ वह रीतक हो। सरकार मुने इस कुकरम और अपरम से बचावें। यह माप पाप मेर सिर पड़ेमा।

ताहम वह फिरस्ता नहीं है भावनी है—बहुत मेक बहुत मज्जा बहुत निडर, निरीह निम्पूह लेकिन भादमी। यह भादमी की कमबोर्कि है जो उसे भावनी बनाती है और उसी की हमको जरूरत है, हवा में उड़नेवाला प्रीरता केकर हम क्या करवें। उससे न तो हमारा सगाव ही हो पाता है और न उतका कोई असर ही हमारा दिर पर पड़ता है। मूरदास ऐसा नहीं है, वह ठा एक बिसकुल मामूली इंसान है जैसे जिबगी की राह में मिल जामा करते हैं ठीकरे की तरह मेकिन हाव मे सेकर करीब से बेलो पर साइ-गोउकर, बरा ठपठकर, तो पजा बलठा है कि वह ठीकरा नहीं हीरा है। मुशीजी को ऐसे हीरों की ही उबान के पहली बाद, और वह मन का इतम माये कि मुशीजी संग्राम नाटक लिखने देते ठा बही दोनों न जान कहीं से हकपर और फरू मियाँ का रूप परकर बसे बाये। ऐसा बड़ा और ऐसी अनामी बमक-दमक का हीरा तो रंगभूमि में जाकर ही मिला और यो ही जिबगी की राह में—एक अथा जितयना। एकदम काल निक बरिब की मूट्टि करना मुशीजी का स्वभाव नहीं है भापार बालबिक होना चाहिए, उस पर बाहे फिर कल्पना का रज कितना ही बढ़ाया बाये। इमीलिए मुशीजी अपने बरिब तीस जीवन से भेते हैं फिर उसे अपने मन क भीतर परने है और फिर अपनी खराब पर बढ़ाते हैं। कोयला कमी कोयला ही रह जाना बनवे—बिम रासायनिक प्रक्रिया से कभी पमी पाकर कोयले के परमाणुओं का संघटन बरकरार हीरे का रूप ले लेता है, यह अभी रह्य ही है। लेकिन वह जो भी हो मुशीजी को अपने बरिबों के तयाम में भाकाम-मुमुन तोड़ने की बरोडा राह में पड़े हुए कोयले और ठीकरे को बीन लेना पपाता अच्छा मालूम होता है। बहुत जमाने से मुशीजी को तपास यी ऐसे ही एक बरिब की जो प्ररिता भी हो और इंसान भी जा भावम के बड़े का याम मुम है।

गाँवबाका की दुष्टता निपुङ्गता से शुरुव हाकर मूरदास जमीन बब देन का बिचार करता है। एक बाबाजी उमका यह बिचार छड़वाने के लिए उने जिन और बैराग्य का उपदेन देते हैं। मूरदास बिडर उतक बहता है—बाबाजी,

जब तक भयवान की दया न होगी भक्ति और वैराग्य किसी पर मन न जमेगा। इस बड़ी मेरा हुन्य रो रहा है उसमें उपदेश और मान की बातें नहीं पहुँच सकती। गौरी लकड़ी तराश पर नहीं चढ़ती।

और फिर मन में कहता है—यह भी मुझे जो मान का उपदेश करते हैं। दीनों पर उपदेश का नी दाँब चलता है, माटों को कोई उपदेश नहीं करता। वहाँ तो आकर ठठुंगमुहाली करन लगते हैं। मुझे जान निम्नान चले हैं। दोनों पून मोहन मिल जाता है न! एक दिन न मिले तो सारा मान निकल जाय।

और उसी आशेष में अपने रास्ते पर आगे बढ़ जाता है।

लेकिन वहाँ पहुँचकर जब बात कहने का वक्त आता है तो पसा फँस जाता है—

सज्जा अत्यन्त निर्लज्ज होती है। मतिम काल में भी जब हम समझते हैं कि उसकी उसकी सानि चक रही है वह सहसा चैतन्य हो जाती है। तादिर मन्त्री की बातें सुनते ही मुरदास की लज्जा उद्व्य मारती हुई बाहर निकल आयी। बोला—मियाँ साहब वह जमीन तो बाप-बापों की निसानी है मला में उम बय या पट्टा कैसे कर सकता हूँ। मैंने उसे घरम-काज के लिए संकल्प कर दिया है। हिस्सापो की बातें भी जैसे चमकने लगती हैं इस मुकाम पर आकर।

बात इतनी ही नहीं है कि वह जमीन मुरे के बाप-बापों की निसानी है। यह भी नहीं कि वहाँ पडएँ करती हैं जिनके लिए फिर चरम को जगह न रहेगी। बाग इससे रपादा बड़ी है। मुरदास इन नवी बाँधी के मुहाबले में अपनी पुणनी जीवन प्रणामी की रक्षा कर रहा है। बुढ़ियाँ उसमें न हों एसी बात नहीं है। लेकिन उनक बाह भी मुरदास को वह बीज बचाने के योग्य लगती है क्योंकि उसमें प्रेम है माईपाप है सरलता है नेकी है—जो सब कुछ न रह जायेगा हम नवी व्यवस्था में। आरमी आदमी के बीच आरमीपता के संबंध मिल जायंग और मने दमाएँ भोषी हो जायेंगी। फिर कोई किसी के दुग-दर में घटीक न होया मब को बस अपनी ही अपनी पड़ी रहेगी। क्योंकि आरमी आरमी न रह जायगा बस एक पुर्जा मनीन बा। और फिर मुभा गरब जोरी बदमागी। उर्मन के उस दुगड के रूप में मुरदास एक दुनिया को बचाने की कोशिश कर रहा है। बलु और प्रनीक एक दूसरे में गो पये हैं।

मतिम जमीन ता निकल ही जाती है कोई बचा नती सकता उमका।

वह पुणनी दुनिया मर रही है। इतिहास का ऐसा ही आदेश है। एक नवी दुनिया का वेगरीमा मड रहा है। पूंजीपतियो की दुनिया। सबका उममे डर है। मब उसमे परिणान है। लेकिन मितकर उमका सामना करने की बलि या डप

उतके पास नहीं है। मूरदास अकेला भादनी है जो इस काम में उन्हें रास्ता दिखा सकता है। अचिन्त पंटे भर तक संबाइल हुई पर मूरदास के पास कोई न था। साम की मुई ठेके पर झटती है। एू बल में जाता हूँ यही हुआ किया।

आश्चर्यकार भैरो अकेले मूरे के पास जाता है तो मूरदास ऐसी कठिन उपा-  
 चीनता से जिसमें कुर्बानी की मौल्य अपना घर बना चुकी है कहता है—  
 मेरी क्या पुछते हो जमीन की बहु निकल ही यमी शोपड़ी के बहुत मिले  
 तो दो-चार रुपये मिल जायेंगे। मिले तो क्या और न मिले तो क्या। अब तक कोई  
 न बोझा पड़ा रहेगा। कोई हाथ पकड़कर निकाल देया बाहर जा बैठूँगा। वहाँ  
 से उठा देया फिर जा बैठूँगा। वही जन्म लिया है वही मरनेया। बाप-मायों की  
 पत्नीम जो भी अब इतनी निसानी रहे यमी है, इसे न छोड़ूँगा। इसके साथ ही  
 थाप नी मर जाऊँगा।

धीरे-धीरे हम बयानुमि की ओर बढ़ रहे हैं। पुक्ति वहाँ बरा बासती है।  
 दूसरे तमाम बर गिरा दिये जाते हैं लेकिन मूरदास अपने शोपड़ से नहीं हटा  
 और बकाक जो मोटी सजा का प्रतीक है जैसे भी हो उसको हटाने की इयम या  
 भुका है। गोस्ती बलन की पूरी तैयारी है लेकिन अभी एक ऐसी घटना घटित होती  
 है जो पुक्ति के इतिहास में एक नूतन युग की मूषमा से रही थी। सिाही गोस्ती  
 बलान से इनकार कर रहे हैं और बहुत जमीन पर पटक देते हैं। पता नहीं तब तक  
 ऐसी कोई घटना देश में नहीं हुई थी या नहीं लेकिन कुछ बरस बाद पेशावर में  
 गड़बाजी सेनिकों की एक टाली में ऐसा ही किया जा और अपनी जान पर खेतर  
 किया था। प्रेमचंद ने अपनी भविष्यश्रुता बाँकों से सायब कुछ बरस पूर्व ही  
 इस चीज को देखा किया था। पुक्ति गोस्ती बलान से इनकार करती है और मूरदास ?  
 वह इस म्युह के मध्य में शोपड़े के द्वार पर खिर मुकाने बैठ हुआ या माने  
 येमें आरामबल और शांत तेज की सजीव मूर्ति हो। सासाए गोस्ती  
 यही धायर कहना भी चाहते हैं मूदीनी। अपनी सहज मानकी दुर्बलताओं  
 मनेत मूरदास का सीपा-माया सरल निस्पृह निर्भीक सम्पनिष्ठ ईतलि स्य प्रम-  
 पद का अपना है और उशात स्वल्प गापीजी का — अपनी समस्त सद्गुतियों  
 की सबस उदात्त अभिव्यक्ति क रूप में ही उन्हाल सदा से गापीजी को अपने हृदय  
 के भासन पर बिटाया है और कुछ अजब नहीं कि मूरदास का चिबन करते समय  
 उमठ मन की आँशों में आये गापीजी बराबर रहे हों। मूरदास के मन में बहु टिप्पणी  
 महात्मा राष्ट्रीय व्यक्तित्व की उद्गमना कर रहे हैं इसका कुछ संवेत जिनय की  
 बाप में भी मिलता है जो कहता है — गुन्हारी शोपड़ी नहीं यह हमारा गापीजी  
 है। हम इस पर पाबड़े बन्ने देकर शांत नहीं रहे सकते।

सजाई जाय भड़की है। अबकी बार गालों मुसा गेय है।

गिरे हुए मकानों की जगह नैकड़ों छामशामिनी लड़ी है और उनक चारों ओर मोरल सड़ बककर लगा रहे हैं। मिडी की गति नहीं है कि प्रथम प्रयोग कर सक। हवायें भारती माननास छोड़े हैं माना क्रिया विज्ञान अनिनय का देवन के लिए दम्भनन बुद्धाकार छोड़े हों। मध्य में मूरवास का मोनन सम्मभ क समय निवत था। मूरवास मोड क सानन सगी लिये छोड़ा था मनो मूरवास नाक का भारन करन का सड़ा है। इस छोटीसी प्रतीकामक लार्न म मूरवास भारन सन्नाग्रही है और निषय ही उस पर गापीजी की छा है। वैन-वैन प्रतीकों क माध्यम से मुगीजी ने मूरवास का प्रस्तुत किया है उस नम जनुान को बस निष्ठा है। एक बपह पर उस के लिए बहा गया है एना सान होना या कि को बसुर्हन मूननी बेदता यतन उपासना क बीष सड़ा है।

न पानका में सोन की लहर ठकी स बीड़ रही है वह हिंसा पर दत्त सान पकत है उस समय मूरवास उनसे कहता है— भाइयो का लोग मान-मान पर आये। यहाँ जना होकर हाकिमों का पिड़ाने से क्या प्रयास? मरी मीठ यादेगी तो आप लोग सड़ रहेंगे और मैं मर जाऊँ। मौन न भाकी ता मैं तारा क मंह म बपनर निबल जाऊँगा। आप लय बासुब में नेरी सहाता करन नहीं माने मूमभ दुसमनी करन भाय है। हाकिमों के मन में पीड़ के मन में पुमिस क मन म जा रहा और परम का सपाठ जाता उसे भाय लोग न जमा हाबर जेय बना दिया है। मैं हाकिमों को दिना बना कि एक वीन मंधा भायमी एन प्रैर को वीने पीठ हटा देना है तन का मुंह बीच बंद कर देना है तबबार की पार वीने मोड देता है। मैं परम के दर से लड़ना चाहता था

पर बिगड़स गापीजी को दाना है।

भातिर लोपी मूरवास क कपे में सगी सिर लक दना सत प्रवह होने लगा। मीरो उस सँनस म सबा वह भूमि पर फिर पड़ा। आगल पगुल का प्रविहार न कर सबा।

कैरिन मधमुब क्या मूरवास का अत पतारन म सबा? बरता का भूमिना में मुगीजी ने लिना था— सबा की सार सपा दुगान्त सगकों क सिर पर्याप्त नहीं। उसरी बिबि पर हम जोर नहीं करन सन् उसरी मीठि विर पर अननिय हुन है सबा की साक की सबा हर सन्त उसरी बिबि होगी है। दुगान्त सगकों में लोह और हर्ष क भाबा का विबि क म मन्ना हो जना है। हम साक का सबा सगले सबा क मीठु सगल है तिनु का मीठु बरना के नहीं बिबि के हाथ है। दुगान्त सतन आनदविगत की सपा है और

आत्मबलिवान कबक कदना की वस्तु नहीं गौरव की भी वस्तु है। एक ही समय आत्मबलिवान की ये दोनों कषार्पें किसी वरीं एक मात्क के रूप में और एक कषा के रूप में—एक मैदान में हजरत हुसेन की नैतिक विजय हुई और दूसरे मैदान में सूरदास की। कौन था जिसने अज्ञा के दो फूस नहीं चढ़ाये। दुश्मनों तक का सिर झुक गया। जिन्होंने इस कड़ाई में सूरदास का धाक छोड़ दिया था उन्हीं में से एक ठाकुरबीर-जैसे आदमी ने भी कहा—अंधा आगमजानी था। जानता था कि एक दिन यह पुतलीवर हमको बनबास देगा। जान तक पैवाई पर अपनी बनीत न बी

गाँववासे तो रोते ही ये प्रसिद्ध राष्ट्रसेवी गंगुमी से जब सोक्रिया ने सरल पाव से कहा— क्या अब कुछ नहीं हा सकता डाक्टर साहब? तो गंगुमी ने जवाब दिया—

● बहुत कुछ हो सकता है मिस सोक्रिया। हम यमराज को परास्त कर देगा। ऐसे प्राणियों का यथार्थ जीवन तो मृत्यु के पीछे ही होता है जब वह पंचभूतों के संस्कार से रहित हो जाता है। सूरदास जमी नहीं मरेया बहुत दिनों तक नहीं मरेया। हम सब मर जायगा कोई कस कोई परसों पर सूरदास तो अमर हो गया उसने तो काल को जीत लिया। जमी तक उसका जीवन पंचभूतों के संस्कार से सीमित था। अब वह प्रसारित होगा समस्त भ्रान्त को समस्त देश को जागृति प्रदान करेया हम कर्मण्यता का बीरता का आदर्श बतावेया। यह सूरदास की मृत्यु नहीं है सोश्री यह उसके जीवन-ज्योति का विकास है। हम तो ऐसा ही समझता है।

यह कहकर डाक्टर गंगुमी ने जेब से एक घीघी निशानी और उसमें से कई बुँदें सूरदास का मूँह गोफकर पिका थी। तत्काल उसका अस्तर बिघापी दिया। सूरदास के दिवर्भं मूलमडस पर हलकी-हलकी मुर्ती दौड़ गयी। उसने जालें पोक बी इधर-उधर अनिमप बुट्टि से दिखकर ईसा और प्रामोफोन की-नी इविम बैठी हुई नीरन भाबाड से बोला—बस बस अब मुझे क्यों मारते हो। तुम पीते मैं हारा। यह बाबी तुम्हारे हाक रही मुझसे श्रेष्ठ नहीं बना। तुम मंने हुए लिताड़ी हा बम नहीं जल्दवा गिलादियों का मिलाकर लेकते हा और तुम्हारा जल्हाह भी लूज है। हमारा बम जल्द जागा है, हाँफने लगते हैं और दिवादियों को मिलाकर नहीं चलने भागस में सयड़त है गाभी-यलोज मार-पीट करते हैं कोई किसी की नहीं मानता। तुम लेकन में निजुन हा हम बनाड़ी हैं। बस इतना ही करक है। तासियाँ क्या बजाने हो यह तो जीतनेवालों का परम नहीं! तुम्हारा परम तो है हमारी पीठ टोंकना। हम हारे ता क्या मैदान से भाप तो नहीं रोबे

तो नहीं घोंपनी तो नहीं की। फिर अपने उद्यम न लेने दो हात-हाथकर तुम्हीं से गेल्या खींचने और एक न एक दिन हमारी जीत हापी करर होना।

अपनी बेहोमी में भी यही एतें हुए सिपाही पैशात से बसा गया।

बहु मापु न का महात्मा न का दबडा न का धरिदता न का। एष पुन धरिदता न प्राप्ति या चिन्ताओं और बाधाओं से धिय हुआ जिनमें अबहुन भी ये और गुण भी। मुन कम से अबहुन बगल। कोष लाभ मोह महार पुन केवल एक या स्वायत्तिय मध्यमकिय परीक्षाए, एवं या उछरा या नाम चाते ग्य लीजिए। अस्याय दलकर उधन न एहा बाडा या अनीति उमक लिए अमल भी।

इसी से भाषा ने उम मात्र जिया, आदर दिया मूर्ति बनाकर पूजा।

बाँझी छिटकी हुई थी और गुंभ ग्योप्या म (यह गुंभ ग्योप्या भी गायद बेदेमात्रम मान से आयी है!) मृगम की मूर्ति एक हाथ में लाली टकनी हुई और दूसरा हाथ किसी अज्ञान राजा के मानने पैसाये लड़ी थी—बही दुर्बल धरिद या ईकलिते निकली हुई कमर देही मूय पर दीनता और सरलता लयी हुई मायाय मृगम मानुम होना या। या मायाय पाँची मूर्तिचित्त चित्त क बाधार पर?

बहु ऐसा मानुम होता या मानो कोई स्वयंमोक वा भित्तुक देवताया म संसार के कस्याय का बरदान माँप एहा है।

यही रंगभूमि की मुख्य कहानी है और इस नाटक का सूत्रार मृगम है। इसके माध्यम से इसरी अस्तिचित्त में जन-आरोपन की इस राजनीति को प्रस्तुत किया गया है जिसका सूत्रार गाथा है। यह आदालत इस समय बरान सा पड़ा है फिर से उसमें प्राण का संचार हो टिग म बहु बिरबा लामता उद, उनी के लिए स्वयं के संपन्न की यह क्या है। बरान के समान ही यही भी अस्तिचित्त का माध्यम किया गया है। एक से धर्मिक मध्य है दूसरे में लाली भूमि पर, लाल बावरे में स्वयं का संपन्न है ललित दोनों का बास्तचित्त अस्तिचित्त हैग का बहुरार स्वाधीनता संघाम है जो अस्तिचित्त के अस्तिचित्त के हस्तारण का प्रान नहीं बलिय मीत्रिक मूया का प्रान है और एक समय जीवन प्रयापी का प्रान है चित्त के दा स्तर है बुझनी परल धार्मिक जीवन-अवस्था में जो कुछ मूल्यवान है उसरी रसा और नवी का निर्माण, इस प्रकार कि यह लाली मनाउन अस्या को गीय बिना बिराव के बने आगलों को अन्न भीतर अस्तिचित्त बन मर।

रंगभूमि के प्रकामित होने पर जब अक्षय उगाप्याय में बगल मोलित हा से अस्तिचित्तों के बीजमितीय मदीकरणों का समावेश करके बाँझ-बाँझ



के सहारे यह सिद्ध करना चाहता कि रंगमूमि बीकरे के बैमिटी प्रेसर की मदद है, उस समय प्रेमचंद ने उनके इस आरोप का खंडन करते हुए बीर बाणों के साथ साथ यह भी लिखा था कि रंगमूमि मुख्यतः राजनीतिक उपन्यास है जब कि बैमिटी प्रेसर एक सामाजिक उपन्यास है।

छोफिया और विनय कुंभर मरत सिंह और डाक्टर वंगुली को लेकर बो उप-कथा है उसकी पृष्ठभूमि उस समय की वास्तविक राजनीति है। राजनीति का मुख्य संपर्क इस समय दो प्रकृतियों क बीच है— प्रो-बेजर्स और प्रो-बेजर्स। इन दो मुख्य प्रकृतियों की अनेकानेक शाखाएँ और उपशाखाएँ हैं। इस रंगमूमि के सब पात्रों का अलग-अलग रूप-रंग है।

विनय के पिता कुंभर मरत सिंह कहते हैं—  
मैंने घट कर लिया है कि साम्याधिकारियों से कोई संपर्क न रखूँगा। हाकिमों की इपादृष्टि शांत या अज्ञात रूप से हम लोगों को आत्मसेवी और निर्दुस बना देती है।

कुंभर साहब के बामाद इंद्रु के पति राजा साहब बंठारी कहते हैं—  
मैं एक राज्य का अधीन हूँ और स्वभावतः मेरी सहानुभूति सरकार के साथ है। जनबाव और साम्यवाद को सम्पत्ति से डर है। मैं उस समय तक साम्यवादियों का साथ न दूँगा जब तक मत में यह निश्चय न कर लूँ कि अपनी सम्पत्ति त्याग दूँगा। मैं उन लोगों को घूँस और पाखंडी समझता हूँ जो अपनी सम्पत्ति को बचाने के लिए साम्य की दुहाई देते फिरते हैं। अपने कमरे से पकड़ें हटा देना और सारे बरत पहन केना ही साम्यवाद नहीं है।  
डाक्टर वंगुली को अंग्रेजों से वैधानियता से बड़ी-बड़ी मांगें हैं लेकिन एक समय जाता है कि उनकी माँगें पुरानी हैं और अच्छी तरह पुरानी हैं। मिलाएँ ठीक जब एक बार उन्हें कौंसिल की उनकी स्पीच पर बघाई देते हैं तो वह करते हैं—

हो अगर वहाँ मापन करना प्रश्न करना बहुत करना काम है ता आप हमारा जितना बड़ाई करना चाहता है करें पर मैं उसे काम नहीं समझता यह तो पापी मारना है। हमारा ता अब वहाँ मन नहीं लगता। पहले तो सब मापनी एक नहीं होता और कमी हो भी गया तो गवर्नमेण्ट हमारा प्रस्ताव स्वीकृत कर देता है। हमारा महानत लक्ष्य हो जाता है। यह तो सभकों का लोक है। हमने नये बानून से बड़ी माँग भी पर तीन-चार साल उमरा अनुभव करके देना दिया कि इसमें कुछ नहीं हाता। हम जहाँ तक था वहीं अब भी है। मिस्त्रों का गर्व बढ़ता जाता है, उस पर बोर्ड बना करे तो सरकार बोलना है जागतो तेना मरी

कहता चाहिए। बजट बनाने लगता है ता हूँ एक ब्राह्मण में दो-चार लाख स्यादा लिख देता है। हम कौंसिल में जब ओर देना है तो हमारा बाप रुपये के लिए वही फालतू रुपया निकाल देता है। मँबर चुपी के मार फल जाता है — हम जीत गया हम जीत गया ! पृष्ठो तुम क्या जीत गया ? तुम क्या जीतेगा ? तुम्हारे पास जीतने का साधन ही नहीं है, तुम कैसे जीत सक्ता है ? कार्डिनल कुछ नहीं कर सकता एक पत्ती तक नहीं तोड़ सकता। जो बादमी कार्डिनल को बना सकता है वही उसको बिगाड़ भी सकता है। भयवान जियाला है तो भयवान ही मारता है। कार्डिनल को सरकार बनाता है और वह सरकार की मट्टी में है। जब जाति द्वारा कार्डिनल बनेगा तब उससे देश का सम्मान होगा यह सब जानता है। पर कुछ न करने से कुछ करते रहना अच्छा है।

कार्डिनल को गोरी सत्ता का एक स्तम्भ है एक जगह वह मुजंगता है — मण्डल जाति भारत को अर्धन काल तक भयम साम्राज्य का भय बनाये रखता चानी है। कॅम्बेजिट हो या लिबरल रेडिकल हो या सेक्टर मेजरलिम्स हा या सोसलिस्ट हम विषय न सभी एक ही मान्यता का पावन करते हैं। आधिपत्य स्थापन करने की बल्लु नहीं है। संसार का इतिहास केवल इसी एक शब्द 'आधिपत्य' पर समाप्त हो जाता है। हम सब के तब — मैं सब हूँ — साम्राज्य वाली हैं। अंतर केवल इन नीति में है जो भिन्न-भिन्न बल इन जाति पर आधिपत्य जमाये स्थापन के लिए प्रयत्न करती हैं। कोई कन्ट्रोल मान्यता का उपासक है कोई महासमुद्रि का कोई बिचनी-बुपड़ी बातों में काम निकालने का।

बम्बई की बातों से नाराज होकर जब एक बार उन्हें मध्या-मनन से बाहर निकालने के लिए पुलिस बुलायी जाती है ता उनका और भी बहुर माहुरय होता है और वह भी सभा में गरजकर बहने हैं —

आज पण्डित के मुने खुद करना चाहते हैं इसलिए कि आगमें धर्म और न्याय का बल नहीं है। आज मेरे दिल से यह बिचारा उठ गया जो यन चानीम बपों स जना हुआ का कि बर्धमेष्ट हमारे ऊपर म्याय बल से शासन करना चाहती है। आज उस न्याय-बल की बर्धन राम ली, हुआयी आंगा से बर्धन उठ गया और हम बर्धनमेष्ट को उमर नन आबरमहीन रूप में देख रहे हैं। जब हम स्थापित गियायी है रहा है कि केवल हमको पीगकर तल निकालने के लिए, हमारा अन्तिम विद्योने के लिए हमारी सम्पत्ता और हमारे समुदाय की हानि करने के लिए हमको बर्धनराज तक बचरी का बिल बनाय स्थापन के लिए हमारे ऊपर राज्य दिया जा रहा है।

हुँकर भल सिद्ध भी परिष्कारात्मक बादमी है ऐतिहासिक विद्यागारी है, विधिभ

है, उपासीन है। संयुजी उनके उस्टे है—आधाबाबी और बयंठ। कार्सेविक से उनका मोह मंग हुआ तो और कुछ करना चाहते है अधिक सतेज। लेकिन कुंजर साहब उसमें भी उनका साथ नहीं दे पाते तो गंगुली उसाहने के घब्रों में उनसे बहुत तैज बाते कहते है। इसमें मुंशीजी की भी आबाब मिथी हुई है—

धाह। वो कुंजर बिनय सिंह का मृत्यु भी आपके इस बेड़ी को नहीं तोड़ सता। हम समझा था आप निर्दम हो गया होगा पर देखता हूँ ती वह बेड़ी क्यों का क्यों आपके पैरों म पड़ा हुआ है। जब तक हम इस बेड़ी को न तोड़ सकेया हमारा काम कमी पूरा नहीं हो सकता। अब तो आपको मामूम हो गया होगा कि हम आपदावसाओं को क्यों निकम्मा समझता है, बनी उन पर बरोसा नहीं करता। वह तो आपदाव का मुसाम है। वह बनी सच्चाई का सड़ाई नहीं सड़ सकता। जो सिपाही सोने का ईट गर्दन में बाँधकर सड़ने वाले वह कमी सड़ नहीं सकता। उसको अपने ईट का चिन्ता लगा रहेगा। अब तक हमको कुछ सक बा तो अब बिसबास हा गया कि आपदाववाला आदमी हमारा मदद करन के बरस उस्त्य हमको मुकसाम पहुँचाता है।

बिस कठिन नियता की बानी से राष्ट्रीय आन्दोलन इस समय कुंजर रहा है उसकी कैसी निर्मम पर कैसी सच्ची तस्वीर कुंजर भएत सिंह के माध्यम से पेश की गयी है—

कुंजर भएत सिंह अब फिर बिसासमय जीवन व्यतीत कर रहे हैं, फिर वही पीर और धिंकार है, वही अमीरों के बॉबके वही रईसों के आडम्बर, वही अट बाट। उनके धार्मिक विश्वास की जड़ें उखड़ गयी हैं। इस जीवन से परे अब उनके सिपु अनस्त शून्य और अनस्त आकाश के अतिरिक्त और कुछ नहीं है। लौट बहार है, परलोक भी अघार है, जब तक चिन्तनी है हँस-सैलकर काट हो। मरने के पीछे क्या होगा कौन जानता है। संसार सदा इसी भाँति रहा है और इसी भाँति रहेगा उसकी मुम्बबस्था न किसी से हुई है और न होगी। बड़े-बड़े शानी बड़े बड़े तस्बेता अहि-मुनि मर गये और कोई इस रहस्य का पार न पा सका। हम जीवमान हैं और हमारा काम केबस जीना है। देवमन्त्रि बिरबमन्त्रि लेगा पपीपकार, यह सब बजोसला है।

उनकी पत्नी रानी आशुबी बिलकुल अपने पति की उस्टी है एक सच्ची और माठा वैसी औरमाठाबा की कहानियों से राजस्थान का इतिहास भएत पड़ा है। बिनय उनकी भाँषों का ताए है लेकिन उसके मरन पर उनकी भाँषों से एा भाँषु नहीं निकलता—

उनी की भाँषों में जाँगु न ये मुग पर पाक का बिल्ल न बा। उनगी

बीरों में यंत्र का मंत्र टापा हुआ या मूत्र पर विषय की माया झटक रही थी। सोझी को यत्ने से तपाती हुई बाकी — क्यों रोती हो बेटो ? विषय के लिए ? बीरों की मृत्यु पर बाँसू नहीं बहाय जाते उत्सव के घम माने जाते हैं। मुझे उसके मरने का दुःख नहीं है। दुःख होता अगर वह आज प्राण बचाकर भागता। यह तो मेरी विरसंचित्त अभिलाषा थी बहुत ही पुरानी जब मैं मुबती की बीर और राजपूतों तथा राजपूतानियों के आत्मसमर्पण की कथाएँ पढ़ा करती थी। उसी समय मेरे मन में यह कामना अंकुरित हुई थी कि ईश्वर मुझे भी कोई ऐसा ही पुत्र देता जो उसी बीरों की भाँति मृत्यु से घैलता जो अपना जीवन देग और जाति-हित के लिए हवन कर देता जो अपने बुरे का मुन उज्ज्वल करता। मेरी वह कामना पूरी हो गयी। आज मैं एक बीर पुत्र की जननी हूँ। क्यों रोती हो ? हमसे उसकी आत्मा को क्या होगा। तुमसे तो बर्मप्रत्य पड़े हैं। मनुष्य कभी मरता है ? जीव तो अमर है। उसे तो परमात्मा भी नहीं मार सकता। मृत्यु तो केवल पुनर्जीवन की सूचना है एक उज्ज्वल जीवन-भाग। विषय फिर समार में बापेया उछली कौत्ति और भी चलेगी। जिस मृत्यु पर घरवाले रोवें वह भी कोई मृत्यु है। वह तो एहिमा रपड़ना है। बीर मृत्यु नहीं है जिस पर बेपाने रोवें और घरवाले आनन्द मनावें।

विषय सोचिया प्रभुमेवक नयी पीढ़ी के लोग हैं। वह देग के लिए बड़ा कुछ काम करना चाहते हैं। उनके रान में यमी भी है। लेकिन देग की राजनीति इस समय ठंडी पड़ी है। कम कौत्तियों की बन्धुनाएँ और कुछ सेवा-समिति क काम। इतनी ही इस समय की कुछ राजनीति है। सिहाडा विषय और प्रभुमेवरु दोनों अपना घाट आज केजर सेवा-समिति में सम्मिलित हुये हैं। लेकिन उमका मनुष्य पुपन हासी में है जिन्हें यवादा जोग के दर पायम होता है। सिहाडा टकराव वीन होता है।

जवाहरलाल नेहरू अपनी आत्मकथा में लिखते हैं—

बोरातादा कथिम में जो कि दिसम्बर १९२३ में हुई थी मुन घाम निष्-  
 चणी थी क्योंकि वही पर एक अगिक भारतीय स्वयमेवक मण्डल हिन्दुस्तानी  
 सेवा दल की बीर पड़ी। अगणनामक बापो और अल जाने के लिए पट्टे श्री स्वयं-  
 सेवर संघटना की बोर्ड कमी न की लेकिन उनमे अनुपाठन नहीं था एवमुक्तता  
 नहीं थी। दापार हाजीर के मय म यह विचार जाना कि एक अनुपातमक  
 अगिक भारतीय मंगल होना चाहिए जो बापय की देगरेग में राष्ट्रीय काम करे।  
 इस काम में सहाय देने के लिए उन्होने मुझे आपर सिहा और मीने गयी मे मृत्यु  
 निमा क्योंकि मुन भी पर बीर पमंद थी। दाप्राज बोरोतादा मे हूँ। बार मे

हमें यह देखकर बड़ा आश्चर्य हुआ कि कांग्रेस के नेताओं में भी कितने ही थे जो सेबावख के कट्टर विरोधी थे। कुछ लोग कहते थे कि यह एक अचरन्ताक मोड़ है क्योंकि इसका मतलब होगा कांग्रेस के भीतर सैनिक तत्व का समावेश करना।

बांगाने हस्ती' पहली अप्रैल १९२४ को तैयार हुई और कुछ जबरन नहीं कि नये और पुराने लोग के इसी तरह की तरह मुसीबी का इशारा हो और यह भी साफ है कि उनकी हमदर्दी नये लोग के साथ है जिसका प्रतिनिधित्व उस समय अवाहरमाल नेहरू कर रहे थे और कम या ज्यादा बहुत बरत बाव तक गये। याद रखने की जरूरत है कि भारतीय राजनीति में अवाहरमाल का उदय उन्हीं दिनों हुआ था और बड़ी ध्यान-दान के साथ हुआ था। उत्तर भारत के किसानों की जागृति का श्रेय वही तक उन्हीं को है और उन्हीं दिनों ठीक उन्हीं दिनों इस काम की शुरुआत हुई थी। गाँव-गाँव बहू भूमते फिरे थे और बावबूद इसके कि उनकी शिक्षा-बीसा बिकरुस बूते डम की थी हाल में ही बिलावत से लीं थे और अंधेबिमत उनमें कष्ट-कष्टकर मरी थी उनके सन्ने सुखाह ने बोड़े ही दिनों में उन्हें जनता का सर्वोच्च बना दिया था। यह भी उनकी विराट लोकप्रियता का ही एक छोटा-सा संकेत था कि सन् २४ में जब बेतबंभु भितरजनबास और बिट्टर भाई पटेस क्रमशः कलकत्ता और बम्बई ने कांग्रेसिता के मयर से सबयुक्त अवाहरमाल इलाहाबाद की म्युनिसिपैलिटी के बेयरमैन थे। यह सब उन्हीं दिनों की बात है जब कि रंगमूमि लिखी जा रही थी और यह ताज्जुब की बात न होंगी अगर बिगत के खरिज में अवाहरमाल नेहरू की छाया हो बीसी ही बीसी कि मुसीबी ने खुद अपने एक पत्र में स्वीकार किया है, साजिमा के खरिज में ऐसी बेसेष्ट की छाया है। उन्होंने तो ऐसी बेसेष्ट को सोकिया का असक वतलामा है लेकिन बहू छावर स्वास्ती है क्योंकि पूरा खरिज किसी का भी नहीं है केवल छायाएँ उतर आयी हैं—जो कि स्वामाधिक भी था क्योंकि वही राजनीतिक आनास के नसत्र थे और मुसीबी स्पष्ट मन से राजनीतिक उपन्यास लिख रहे थे। मुरदास के रूप में बापीबी की उदमावना सिद्ध है। बाप-बैते बुँभर भरत सिंह और बिगत के रूप में मोलीलाल और अवाहरमाल नेहरू का संकेत र्भोपयर मिलता है। ऐसा ही एक संकेत और भी है। बिगत सेबावख के एक जत्ते कं साम राजस्थान जाता है। देखी रियासतों की बीसी हालत थी वहाँ जनता ने बीच निसी तरह का कोई नाम करना राजशाह से कम नहीं समझा जाता और नतीजा होता है कि बिगत पकड़कर बैल में डाल दिया जाता है। यही बीच अवाहरमाल के साथ इन्हीं दिनों हुई—जब कि बर पंजाब की एक रियासत नामा में मये थीर वहाँ पकड़ लिख गय। महाराजा पटि याला और महाराजा नामा में एक असं से साम्बानी शपड़ा बना जा रहा था और

उस मस्ये का बहाना बनाकर सरकार ने नामा रियासत को अपने कब्जे में ले लिया और रियासत का प्रकल्प करने के लिए एक अखिल हाकिम को वहाँ पर भेज दिया। नामा के लोग अपने महाराजा के मही से उठारे जाने पर यों ही क्षुब्ध थे जब उस अखिल हाकिम ने जैतो नामक स्थान पर सिक्कों के एक वार्षिक उत्सव पर रोक लगा दी तो सिक्कों का आन्दोलन शुरू हो गया और अराजकियों के प्रत्येक पर जल्द पड़े जाने लगे। जवाहरलाल को स्थिति का अध्ययन करने के लिए कापड़ की ओर स वहाँ भेजा गया और वह पहुँचते ही विरफ्तार कर लिये गये। 'फिर अपनी विह्वल' के लिए उन्हें जो-जो पापड़ बेलने पड़े उसकी सारी कहानी उन्होंने अपनी आत्मकथा में लिखी है। वह तो वैन दूट मये क्योंकि ऊपर से बहुत जोर पडा मगर उनके साथ के लोगों को छोड़ते हो गयी। रियासती जनता की हालत की ओर से कापड़ अब तक बिलकुल बेतबरे थी और गौरी रियासतों में प्रजासत्ता की स्थापना में इसके बाद भी दस-बाह्र बरस का समय लगा लेकिन इसमें संदेह नहीं कि जवाहरलाल नेहरू के निजी अनुभव ने ओर से सबका ध्यान अपनी तरफ लीखा। मुँगीजी ने विषय के माध्यम से हिंदी रियासतों का टाकर उठाया। हो सकता है कि वह एक बिलकुल आरक्षिक संयोग हो लेकिन शूँकि यह पटना भी ठीक उसी समय यानी १९२३ के अक्टूबर-दिसंबर की है इसलिए ऐसा समझ में आता है कि हो सकता है इसकी भी कुछ छाया मुँगीजी के माध्यम पर हो। उसी तरह संभव है मुँगीजी के मित्र डाक्टर गंगुली में वैद्यक्य चित्तदेव दास की आत्मा हो। केरलपु स्वराज पार्टी के संस्थापक और नेता थे। कौशिकों में आकर सरकार का विरोध करने की नीति के प्रवर्तक वही थे। बंगाल की असेंबली में उड़ी का बहुमन का ओर वही अपने दस के सर्वमान्य नेता थे। उनका वही रूप डाक्टर गंगुली में उतर आया है। उस राजनीति से अंततः गंगुली को जो निराशा होनी है उसमें भी चित्त देव दास के जीवन के दोष पूर्व की कुछ मूल्य है। योत्रीणात् नेहरू को लिये गये उनके अंतिम दिना के पत्र और कटौतपुर की उनकी अंतिम बरगुना दोनों ही से उनके मन की वेदना स्पष्ट है, बदला इस राजनीति की सर्वना के बोध की ओर वेदना माने अनेक सहायियों के प-शोम की।

मुँगीजी की राजनीति मोक्षमयी है— जनता के दुःख-दर जनता की सवे दताओं और जनता के सपने की राजनीति दशाधीनताप्रमियों के मरण उत्तराधिकार प्रबुद्ध बर्ष की राजनीति जो इस बात को समझता है कि उसकी गरिब का साथ साधारण जनता में ही है। जो उसके जितना ही पात्र है उमड़े पाँव उतने ही मजदूर हैं और जो भ्रान्त ही दूर है उमड़े पाँव उतने ही कमजोर। यह बात भी आरम्भिक यमी है कि मूल्य क्या कुराना को रंगर है और बत अंधा बजार ही उमरा मारक

है। दूसरे सब उसका अनुगमन करनेवाले हैं। राजनीति का मतसब मुंशीजी के लिए आत्म-बलिदान है, और सही या असत पत्रे-लिखे सफेदपोश छात्रों की आत्म-बलिदान की क्षमता के बारे में उनका सबेह बहुत पुराना है।

सूरदास उनकी इसी आस्था और विनय इसी अनास्था का प्रतीक है। सूरदास मजबूती के साथ भव एक मैदान में डटा रहता है और फिर वहीं सेठ रहता है। कहीं उसके पैर नहीं डगमगाते। विनय के पैरों को डगमगाने के लिए बस बहाना चाहिए। राजस्थान में रियासत के बागी सोक्रिया को उड़ा के भाते हैं। विनय के सारे सिद्धान्त सारे आदर्श हवा हो जाते हैं और वह बहककर पासक बर्ष से मिल जाता है और जनता के दमन में इतने मनोयोग से युक्ति का हाथ बँटाने लगता है कि उनसे भी दो बाँस भागे निकल जाता है। पोंडेपुर की कड़ाई जिस समय चल रही है उस समय वह कुछ कायरताबध अपने घर में बुझका बैठा रहता है। सोक्रिया तक को उसका वह बख्त बनाने लगता है और पहर के लोग तो जैसे उसकी गिस्ती उड़ाते ही हैं। उस दिन वह एक समय ही था कि वह बटनास्थल पर आ पहुँचता है। आसपास कुछ लोग उस पर बोली-भाबाजे करते हैं जिससे उसको इतनी आत्ममानि होती है कि वह आवेस मं आकर अपने को गोली मार लेता है। मौत उसकी नायका पर पर्दा ही नहीं आसती एक हद तक उसे भी देती है। सेक्रिया एक हद तक ही।

एक और अनास्था मन में बर बरती आ रही है—ईश्वर मं। कारण उसार में अनीति का साम्राज्य। उक्रिया कहती है —

दीसतबासों पर अजाब भी नहीं पड़ता। उसका बार भी इरीषों ही पर होता है। हमारे बच्चे रोड ही नजर और आसेब की अपे में जाते रहने हैं पर आज तक कभी नहीं सुना कि किसी अंग्रेज के बच्चे को नजर लगी हो।

मुंशीजी इसका भाव्य करते हैं—

धर्म का मुख्य स्तंभ मम है। अनिष्ट की शका को दूर कर डीबिए, फिर तीर्थ-यात्रा पूजा-पाठ स्नान-स्नान रोडा-नमाज किसी का विधान भी न रहेगा। मसजिदें सारी नजर आवेयी और मंदिर बीयन।

धर्म का दूसरा स्तंभ वह है जिसके बारे में जान सक्क कहता है —

क्या तुम समझते हो कि मैं और मुम-जैस हजारों आरमी जो नित्य बिरब जाते हैं भजन गाते हैं आर्ने बंद करके ईश-शार्पना करते हैं धर्मानुयाग में दूबे हुए हैं? कदापि नहीं। अगर अब तक तुम्हें नहीं माफूम है तो अब माफूम हो जाना चाहिए कि धर्म केवल स्वार्थ-संपन्न है ।

जहाँ धर्म से व्यापार में सहायता मिलती है वहाँ धर्म प्राप्त है और वहाँ धर्म

व्यापार के बाड़े बाठा है, वहाँ स्वाग्य। बिद भी मेरी बीर पट भी मेरी। जान सेकक ताहिर मली से कहुवा है—

धर्म और व्यापार को एक तख्त में ठीकना मुर्खता है। धर्म धर्म है व्यापार व्यापार। परस्पर कोई संबंध नहीं। संसार में जीवित रहने के लिए किसी व्यापार की जरूरत है, धर्म की नहीं। धर्म तो व्यापार का विगाह है। वह पनापीगा ही को घोभा देता है। लुप्त आपको समार्ई है सबकाज मिले पर मे काल्पु रूप्य हों तो ममाज पमिए, हज कीजिए, मसजिद बनबाइए कुएँ मुरबाइए। ठब मजहह है। छात्री पेट घूरा का नाम सेना पाप है।

बीर ठब धर्मभीर ताहिर मली कहला है—

इकबालवालों से बजाव भी कोपवा है। घूरा का कहुर गरीबों ही पर विरवा है।

देवी रियासतों की अंधेरपरी का जिवकी तरफ मनी निची वा ध्यान नहीं पाला नकया यह है—

कोटी कीजिए, बाके शक्ति, बरों मे आप बनाइए, घरीबों वा ममा काटिए कोई आपने न बोलेया। बस धर्मकारियों की मुदली गर्म करते रहिए। दिन-राते गुन कीजिए वा पुनिव की पूजा कर कीजिए, आप बेगाग पूर जायबि आपक बरते कोई बकपूर फरीसी पर सुटका दिया जायया। कोई अगिमा नहीं मुबता। कीन पुने सभी एक ही बीसी के बट्टे-बट्टे हैं। यही समझ लीजिए कि हिमर जलुओं वा एक मोल है सब के सब मिलकर बिकार करते हैं और मिल्-जुल्कर खाते हैं। राजा है वह फाट का उल्कू

यह एक रियासत क बासी के मुंह से निकली हुई बात है। अब मुनिग गुर वीवान साहब बिलय स क्या कहते हैं—

रियासतों को आप सरकार की हरमनरा समगिण हम मक इम हम्ममग क इप्पी ग्वाबामरा है। हम निची की प्रमरसुप्य दृष्टि को इपर उठन न बेंय। कोई मतबला नबाल इपर बन्म रानन वा साग्य नहीं कर सगता। मगर एया हा वा हज अपने पय के अयोम्य समसे जायें। हमारा रमीला बाग्गाह दग्जानुमार ममोबिनीर के लिए कभी-कभी यहाँ बदार्यन बगता है। हरमवग के तोय माण्य उन निन जय जाते हैं। आप जानत हैं बेयमां की मापी मनोबामनाएँ उबरी छरि मायुपी हाब-भाब और बनाव-सिपार पर ही निभर होगी है मही तो रमीला बाग्गाह उनकी भाग भाग उठाकर भी न देग। हमारा रमील बाग्गाह पूर्तिन गम रम के प्रमी है। उमाय हुम है हि बयमा वा बरभाभुवम पुबीय हो भुंगर पुबीय हो, पीति-नोति पुबीय हो उनकी जीणें लजवागुच हां पविम की बकगता उनमं



म आने पाके उसकी गति मरघसों की गति की भाँति मन्त्र ही परिवर्तन की अस्मिताओं की भाँति उच्छ्वसी-सूखती न बसों के ही परिवारिकाएँ हों के ही हरम की दापोपा के ही हृष्टी मुलाम के ही जैसी चहारबीबाटी जिसके अन्तर बिड़िया भी पर म मार सके। आपने इस हरमसरा में बुध जाने का हुम्नाह्व किया है, यह हमारे रसीले बाबसाह को एक आँख नहीं माठा और आप अकेले नहीं हैं आपके साथ समाजसेवकों का एक पत्ता है। गाबिरसाही हुक्म है कि बिठनी अस्वी हो सके यह अत्पा हरमसरा से दूर हटा दिया जाय। यह देखिए पोलिटिकल रीजिस्ट्रार के आपके सहयोगियों के हर्मों की गाबा कित्त भेजी है। कोई कोटे में हृपकों की समार्य बनाता फिरता है, कोई बीकानेर में बेगार की अड़ खोदने पर उत्पर हो रहा है, कोई मारवाड़ में रियासत के उम कपे का विरोध कर रहा है जो परमरा से बमूब होते चले जाये है। आप सोम साम्यवाद का उँका बजाते फिरते हैं। आपका कबन है प्राणी मात्र को जाने-गहनने और शान्ति से जीवन स्वीकृत करने का समान स्वत्व है। इस हरमसरा में इन सिद्धांतों और विचारों का प्रचार करके आप हमारी सरकार को मानुमान कर देंगे और उसकी आँखें फिर पपी दो हमारा संसार में कहीं ठिकाना नहीं है। हम आपको अपने प्रेमकुंज में धाम न लगामे देंगे।

मुंदीजी ने सजग आँखों से जीवन की रंगभूमि को देखा है— प्रेसा मुद्द से भी और नैपथ्य से भी— और उन्हें खुब पता है कहीं क्या बेक हो रहा है मगर देगनेबाके की निगाह बिलकुल उसकी अपनी है। जिस आवमी ने अपने बिबेक की बसिबदी पर ग्योछाबर हो जाने को ही जीवन की सबसे बड़ी शिधि माना है और कमी किसी चीज को मान्यता केवल इसलिए नहीं दी कि उस पर समाज की प्रशंसित मान्यता का ठप्पा मया हुआ है, बही सोझिया के मुँह से जीवन का ऐसा बिरोही आदर्श प्रस्तुत कर सकता था— मुझे उस बस्तु से भूषा है जिसे लोग सचक जीवन करते हैं। सचक जीवन पर्याय है सुमामर, अत्याचार और पूर्णता का। मैं जिन महारमाजी को संसार में सर्वश्रेष्ठ समझती हूँ, उनके जीवन सक्रम न ब। सांघारिक दृष्टि से वे लोच साधारण मनुष्यों से भी गये-मुबरे के किन्होंने कष्ट सेके निर्बागित हुए पन्धरों से मार गये कोसे गये और अन्त में संसार में उन्हें बिना भाँगु की एक बूँद मिराये बिरा कर दिया

जय से होउ सँमासा मुँदीजी ने इमी तरह अपनी जिन्दगी को जिदा ब और उरादा निबोड़ था यह उपन्यास जो पूरे अड़ बरस की मेटमन के बाद पहली अर्धन १९२४ को उँपार हुआ— जिस बीच प्रेस भी प्यौठी की तरह गले में बड़ा हुआ था। बसा-बसा उर्मियों की दृश प्रेस से और बसा हुआ। प्रेस मुक्तने देर नहीं और

नीकटी की उबास होने लगी। तभी एक रोज मजकुरिन्दोर प्रेस एम्बनऊ के बाबू बिचननायण भार्गव का एक तार मुंशीजी को मिला। काम के लिए ही बुलाया था लेकिन मुंशीजी ने जाने के पहले कुछ बातों की सफाई कर देने की शर्त से कुछ बिट्टी-बपाती की। लेकिन उधर से बह तो पठा नहीं क्यों बिलकुल सौंठ हो गये। बाखिरदार मुंशीजी ने २६ सितम्बर १९२३ को काशी दुली होकर निगम सार्व को लिखा —

बाबू बिचननायण भार्गव के यहाँ से अम्ने-बेरे-बहुत के मुतासिफ़ कोर्द छत नहीं आया। मैंने खुद दो बार लिखा पर ओझे मशरूद। समझ गया बह भी एक रईयाना उबास था। यह है हमारे सुख्ख की तरुधुन-मिजाजी — उन का जबाब तक मसूर नहीं और ठकन था बखरिए तार।

निरादा भी हुई, शक्काहट भी। मगर सैर। इसी का नाम बिन्दपी है। प्रेस के बारे में १७ फरवरी १९२४ को उन्होंने लिखा था — प्रेस बस रहा है। अभी मज्जा तो नहीं हो रहा है मगर अपना धर्ष आप सह छता है। साले-बाखिर' तक मुमकिन है कि कुछ मज्जा भी होने लगे। छपारी पुग्गण पकाने में मुंशीजी का जबाब नहीं है।

अपने ही ऊमर एक मीठी चुटकी लेते हुए मुंशीजी ने इन छत में यह भी लिखा था कि 'मई नाम' इमरोज-शरी में होनेवासी है। अपनी हिमाकत पर अश्वीस करवा हूँ और ऊहे, दरबेदा बरजान दरबेदा के मिसदान' अपने किये पर नाबिर्' और मुतासिफ़' हूँ।

यह नयी भागव एक लड़की थी जो ८ मार्च को पैदा हुई। रामदाह पैदा हुई, कि जीस शिकं दुख देने के लिए। कुछ तीन महीने बिना रही और त्रिम रोज तीन महीने पूरे हुए हम दुनिया स खलसत हो गयी। अघेद उध में आकर यह एक बूच दाग मगा सीने पर। माँ-बाप दोनों कसेबा घामकर रह गये। बाप ने ता पीरो-सैसे मल भी लिया माँ बिलकुल दूर मयीं।

५ जून १९२४ को मुंशीजी ने अपने दोग्द निगम सार्व को अपने ग्रम की यह शस्वान गुमायी —

मेरी छोटी लड़की जो ८ मार्च को पैदा हुई थी २८ की घाम को वस्त और बुगार में मुपठिता हुई। मैं समझता था छारिबी विभावत है, रखा हो आपयी

१ बिचारधीन बिगप २ घरीधों ३ शपरीपन ४ बप के अंन  
 ५ मान-कन ६ मिगारी का मुस्मा अपनी जान पर ७ अनुगार ८ ९  
 एगियत और क्षुप १ ऊगरी

कलकत्ता में रहने का मुद्दीबी के लिए यह पड़ना अकसर था और यह झूठ उतकी भा रहा था — सरदार और चक्रवर्त और शमाशंकर नसीम का कलकत्ता पानी भी मुभात्रिक था। सेहत अच्छी थी। इत्तम खोरो के साथ चल रहा था।

सितंबर २४ में पहुँचे नवम्बर में कर्बला निकल गयी। बनबरी आते आते रंभूमि निकल आयी और निकलते ही चारों तरफ उसका घोर मच गया। सत माने सवे रेल छपने लगे। इसी जगहों में एक अंग्रेजी सत देहरादून स पंडित बमरनाथ झा का था —

मैंने उसका एक-एक शब्द पढ़ा है और आपकी बिलयन रचनात्मक प्रतिभा का अर्थ पढ़ने से भी स्फारा बड़ा प्रबंधक हो गया हूँ। मुरदास को अपना नायक बनाना अत्यन्त साहस का काम था लेकिन उसका चरित्र भी आपने कैसा सुन्दर टीका है। रंभूमि आधुनिक हिन्दी का एक धीरक-पंथ बनेगी।

सेस लिपिनेवालों में इस बार भी रामदास गौड़ सबसे पहले लोगों में थे। दूब जो खोसकर उन्होंने टारीक की थी। माधुषी ही में सेत छपा — जिसके अनौपचारिक संपादक मुंशीजी ही थे। महीने भर बाद नयातम म्यास का लेप छपा। वह भी इसी रंग में। अपनी टारीक किसे बुरी समझती है। मुंशीजी को भी नहीं। और यह बात पूरी तरह सच नहीं है जो उन्होंने अपने ३ जून १९१ के लत में बनारसीदास जी का लिखी थी कि घन या मर की साससा मुझे नहीं रही।

घन की साससा नहीं रही सबमुच नहीं रही कभी नहीं रही। यद्यपि साससा रही और सूब रही — यह बात और है कि उस यद्य को पाने के लिए उन्होंने बिस्वमी में न कभी कोई बड़ा काम किया और न अपने बिस्वाओं के साथ किसी तरह का कोई समझौता किया। छपवाई से नियंत्रण अपने रास्ते पर चलने रहे। कुछ लोग अवर साथ ही सिन्धे तो क्या कहने, बर्ना अकेले ही चले रहे। लेकिन उसका मतलब यह नहीं है कि निन्दा-स्तुति की जार न वह बिलयन थे — और न इस तरह का कोई पापण्ड उन्होंने रखा। किन्ती भी साधारण व्यक्ति की तरह अपनी टारीक उन्हें अच्छी समझती थी और अपनी बुराई, बुरी। बीनय

होते उदासीन होते तो अपनी छोटी से छोटी आसोचना के प्रति इतने सतर्क न होते।

दिसंबर १९२४ की मापुसी में कर्बला की आसोचना करते हुए रामचन्द्र टण्डन ने यह संका प्रकट की थी कि उस नाटक में हिन्दू पात्र क्यों भाव गये। उन्होंने सिखा कि हिन्दू पात्रों के समावेश से न हिन्दुओं को प्रसन्नता होगी न मुसलमानों को दुःख। इसलिए हिन्दू पात्र न भावे जाते तो कोई हानि न होती।

मुंसीजी ने इस संका का उत्तर देते हुए अवगत महीने ही सिखा —

यह ड्रामा एतिहासिक है और इतिहास से यह पता चलता है कि कर्बला के संघाम में कुछ हिन्दू योद्धाओं ने भी हजरत हुसैन का पक्ष लेकर प्राणोत्सर्ग किये थे अतः उन पात्रों का बहिष्कार करना किसी भी भक्तिमत्त न होता। उन्हीं यह बात कि उनके समावेश से हिन्दू और मुसलमान दोनों में से एक को भी प्रसन्नता न होगी इसके लिए लेखक क्यों क्रूरवान् टट्टाया जाय ?

यह आपत्ति रचनाकार के मन से अधिक एतन्ना की उस भूमि पर ही माया करती है या कि नाटक का प्राय और उसकी रचना का मध्य है, इसलिए, समझ है मुंसीजी ने उसका अभाव देने में अतिरिक्त उत्पन्ना दिखाया है। लेकिन इतनी ही बात नहीं है। टंडनजी ने अपनी आसोचना में मुंसीजी के इस दावे को उलट बताया था कि कर्बला को लेकर दूसरा कोई नाटक नहीं सिखा गया। मुंसीजी ने वे पंक्तियाँ साफ़ उद्धृत कीं। इससे भी पता चलता है कि मुंसीजी को अपनी मार्ग बुवाई की कार्य परबाह रहती थी। सन् ३२ में एक बार ऐसा कुछ प्रसंग हुआ कि बनाव्तीदास जनुबेरी पर एक महाकाव्य ने गुरु कमरकर की ओर उठाया जिसने जनुबेरीजी बहुत दुःखी और दुःख हुए। उस समय जनुबेरीजी को समझाने हुए मुंसीजी ने १४ नवम्बर ३२ के अपने पत्र में सिखा था —

एक समय था कि किसी की एक मुद्राण्डि चार से मेरी जिन्नी ही रातों की नींद हारम हो जाती थी। लेकिन अब मैं उस मन्त्रिक को पार कर भाया हूँ और अपने भाव को स्वाश अच्छी तरह समझता हूँ।

उम्र के भाव-भाष प्रीति भी बढ़ी और उनी प्रीति ने बहू-नी आसोचना की मरहोना करने का गुरुमन्त्र लिया। लेकिन बहू दिन कभी न भाया और भाष्य मा भी नहीं करता — जब कि अपने यम का विस्तार उन्हें अच्छा न लगा हो और भाष्यत बुध न लगा हो। यह बात और है कि यम के पीछे बहू दौरे नहीं और बहूना को लेकर विचार करने नहीं बैठे — क्योंकि उन दोनों से बड़ी पीड़ा थी गुरु अपना काम किये पीछे जाने अन्त-कर्म का बल है जैसा कि उन्होंने १४ नवम्बर १ ३२ को जनुबेरीजी को सिखा था 'अपना अन्त-कर्म निर्वृत हो फिर प्रारंभ बुध नहा जाति'।

बहरहाल दिन अच्छे बूट रहे थे यानी कन्नड लूब सेबी से बस रहा था। इतनी सेबी से कि सितंबर २४ से सितंबर २५ तक के एक साल में मुंबईजी ने न सिर्फ जपूरे कामाकल्प का उपाय कर लिया था बल्कि रामचन्द्र टण्डन के कहने पर, उन्हीं की प्रति केन्द्र, अनाथोस फ्रांस की अमर कृति बापस का हिन्दी रूपांतर भी कर डाला और जैसे यह भी काफ़ी न हो रखतनाथ सरसाव के प्रमानण आबाद का संश्लेष हिन्दी रूपांतर आबाद बचा भी कर डाला जो पुन एक हबार पशों का है। और छोटी कहानियाँ जो सिध्दी सो सब पसए में।

यहीनाम अच्छी साइत में पर ऐ जैसे थ कन्नडक पहुँचत ही वा ऊँचे पावे की कहानियाँ कन्नड से निकलीं — इतराज के गिमाही और सबा सेर नेहूँ और इरीब छ महीन घाद सम्मता का रहस्य ।

सबा सेर पहुँ पाँशों में होनेवाली महाजनी मूर की (जिसे और भी बार पाँद मग आते हैं जब कि महाजन बाह्य हो।) एव बहुत ही भयानक मूर कहानी है जिसे इतने सारे भिबास में पेश किया गया है, इतने सहज अनलंघ्य रूप से कि वह मूरता और भी उमर आती है।

सीबा-साबा, चौपास में बहे पानबासे पिन्से की तरह कहानी शुरू होती है —

● किसी गाँव में चंकर नाम का एक कुुरवी किसान रहता था। सीबा-साबा मरीब आरामी का अपने नाम से काम न किसी के सेने में न देने में। कन्नड-यंजा न जानता था

एक दिन सन्ध्या समय एक महारामा ने आकर उसके द्वार पर जेरा पयाबा। पीतस्वी मूर्ति की पीठावर गसे में पटा सिर पर, पीतल का कर्मंडल हाथ में टाढ़ाई पैर में ऐनक बाँधों पर, संपूर्ण बेस उन महारामाओं का-सा था जो रईसों के प्रामाणों में तपस्या हुआगादियों पर बैसबाओं की परिचया और भोगसिद्धि प्राप्त करने के लिए रबिंकर भाजन करते हैं। घर में जो का बाटा था वह समूँ जैसे गिमाता। प्राचीन काल में जो का बाहे जो महत्व रहा हो पर वर्तमान युग में जो का भोजन सिद्ध पुरणों के लिए दुष्ग्राह्य होता है। बड़ी पिन्डा हुई महारामाजी को क्या गिमाई। बापिर निश्चय किया कि कहीं से नेहूँ का बाटा उबार लाऊँ, पर गाँव मर में नेहूँ का बाटा न मिला। सौभाग्य से पाँच कै बिज महाराम के यहाँ जोड़े से मिल गये। उनसे सबा सेर नेहूँ उपाद लिया और रनी से कहा कि पीत है। महारामा ने भाजन किया लंबी तानकर छोये। प्राप्तकाल बापीबाँद देकर जन्मी राह की। ●

मगर उनका बापीबाँद चंकर को ऐसा लगा कि बिज महाराम ने चुरबाव सात साल तक उस सबा सेर कनाब को बँडे की बँडि सेकर एक रोड बह गिनाब

काड़ा कर दिया जो धंकर को निमग्न गया। उसने विपरीत के यहाँ बीच बर्य तक मुझानी करने के बाद इस अमार संसार से प्रत्याज किया

सवा सिर यहाँ ने कैसे यह सब जाहू कर दिखाया मही तो इन सच्ची प्रठ-नहानी का अमानक रस है।

मम्यता का रहस्य' वर्तमान सामाजिक जीवन पर एक हुपी आत्मा का कठोर ध्यस्य है जिसमें एक मून के मुकबमे में रिखत लेनेवाले जब माहब जिनकी गिनती सम्य लोगों में है एक गरीब किसान को जो अपने कई दिन के भूले बीनों की बेदना से मर्माहत होकर उनके लिए किसी व सत से बोड़ी-मी बरी काट माता है छ महीने की सस्त बँद का हुषम मुनाते है। जिससे किस्मापो गरीबा निका म्ता है कि सम्यता केवल हुनर के साथ ऐव करने का नाम है। आप बुर स बुर काम करे लेकिन अगर आप उस पर पर्दा बाध सबने है तो आप मम्य है सख्त है, जेटिलमैत है। अगर आप न यह मिच्छन मही हो तो आप असम्य है, संवार है बदनाम है।

गठरंज के पिताड़ी पिर्दा साहब और मीर माहब का कौन मही जानना म्बाबी अमाने का बिलासिता के रंग में डूबा हुआ लगनऊ विनम साधार हो उछ है—

छाटे-बड़े अमीर-मरीच ममी बिलासिता में डूबे हुए थे। कोई मृस्य और गार की मजलिस सजाता था तो कोई अग्रिम की पिनक ही के मजे लेता था। मनी की बाँगों में बिलासिता का मर छाया हुआ था। संसार में क्या हा रहा है इसकी किसी को खबर न थी। बटेर सब रहे हैं। तीतरों की लड़ाई के लिए पामी बरी जा रही है। कहीं बीमर बिछी हुई है। पी बाच्छ का शोर मचा हुआ है। मही गठरंज का धंर संशाम छिड़ा हुआ है। पत्रा से लेकर रंग तक इनो पुन में मस्त प। यहाँ तक कि कुत्तों को पैस मिलते तो वे रौटियाँ न लेकर अग्रिम साने या मरक पीने

यह लगनऊ मुनीजी का जाना-बहुषाणा है। इसके पहले वह यहाँ कमी आन मही लेकिन इसका जोना-जोना मकी-ममी, उनकी होगी हुई है। मरगार के माप उम्होने जी भर के मीर की है। यहाँ की बालबास यहाँ का खन-अन यहाँ के रीति-रिवाज — कुछ भी उनके लिए अनजाना मही है। मरगार ने जिन तरह उमी न बूबरर उमी का होकर, लगनऊ की रंगीन तमपीर धीधी है उमी वच्छ मुनीजी के उस तमपीर को देगा भी है और उस मुजरे अमाने की रीतियों का ध्यात करके

की बहुत बार मसौदा भी उठ्य है। लेकिन जब वह बात कुछ पुष्टी हो गयी है, बरत आगे बढ़ जाया है और जिस ऊँचर असन्मिमत का रंग सेक हुआ है उसी ऊँचर सम्मानियत का रंग फीका पड़ा है। जब वह कुछ निस्तंभ होकर भी उस कलनऊ को देख सकता है और तब उसे लपता है कि कलनऊ की जो दुर्घट मरीजी दौर में जाकर हुई, जिस तरह मन्दायी का चारमा हुआ उसके असावा उन हामात में दूसरा कुछ हो भी न सकता था—अपना समाज खुद जो ओतसा हो गया था भीतर से। सिहावा जो बात सरदार ने अनकही छोड़ दी थी या जिसे वह सकना सरदार के लिए अपने बक्त में मुमकिन न था उस मुसीबी ने कलनऊ में क्रम रपते ही अपनी इस कहानी में कहा—सरदर के हाथों बाबशाह्य के तबाह होने की कहानी। इपर देश की राजनीतिक बसा अयंकर हाती जा रही थी। कम्पनी की प्रीजें कलनऊ की तरह बड़ी बकी माती थी। शहर म हलकल मची हुई थी। लोग बास-बन्धों को लेकर देहातों में भाग रहे थे पर हमारे दोनों तिसादियों को इसकी बरा भी छिक न थी।

जाखिरकार ये लोग अपनी सरदर की बाजी में ही खूबे रहते हैं और कलनऊ पर कम्पनी का कब्जा हो जाता है मन्दाब बाजिद मसी पकड़कर ले जाते जाते हैं। मिर्जा साहब और मीर साहब के काम पर खू नही रेंगती। लेकिन फिर एक दिन वेस ही वेस में दोनों में बतबदाव हो जाता है बाना कमार से कलवार निकाल लेते हैं, पैतरे बरसते हैं, कलवारें बमकती हैं, छपाक्य की आबाब जाती है बाना बोर लाकर गिरते हैं और वहीं तकप-तकपकर मर जाते हैं।

बाथों तरह छपाटा छपाया हुआ था। लौकहर की दूटी हुई मेहराबों गिरी हुई बीबारें इन बाथों को देखती और सिर मुनती थी।

उसी पतन के युग का एक सुन्दर मामिक बिज है यह अपन माप में संपूण बैदाकालातीत अपने मनोबैज्ञानिक बिबध में। ध्यान भी नहीं जाता कि उसके पीछे कोई सामयिक बापह भी है बिरोपठ इसलिए कि वह एक बीते युग की कहानी है। यही पर धाता है। अगर वह युग मचमुच बीत गया हुना तो बापर उसकी कहानी का लवास भी न जाता कम न कम मुसीबी को—बीना नहीं है इर्नाकिण यह कहानी नहीं जा रही है और इनी में उसकी अन्याकिण है।

मुसीबी के लिए इतिहास बोरा इतिहास यानी अनीत की बानी नहीं है। होना जिसके लिए होगा। बाटा के लिए होता है। मुसीबी के लिए नहीं जो वह उनका बहुत प्रिय बिषय है। लेकिन उसका मन्व भी इनी में है कि उनम बतमान के लिए कुछ रोसनी मिलती है।

एक बार का बिब है सन् ११ के नवम्बर महीने का। मुसीबी एक माहियिब

समारोह के सिधमिसे में बटने पहुँचे। वहाँ लोगों ने मोचा कि मुसीबी को म्यूजियम भी बिराहाना चाहिए, देखने इच्छित थीं। समारोह के कर्मा-कर्त्रा बरागिबिसोर उन दिन को पार करत हुए निकले हैं— बोगहर को पटना म्यूजियम देने के लिए हम लोग बस पड़े। मीर्मबाल और मुक्तकाल के विलासन मूर्तिनी बनने तिसके बरबर सब नियत। वह बम्बो की तरह उन चीजों का देखते जा रहे थे। कौतूहल उन्हें कुछ होता था पर कोई छान निकलसी उठने नहीं गिरापी। हाँ अब स्वाम्य विमाय की ओर गये और बिहार के मीमा का मिट्टी का बना हुआ स्केच (माडल) देना तो रम गये। बोल-धीलो की पारिवारिक मतिमा को भी बड़े गौर से देखने लगे और बोले— हम इन बमस्याओ को भार प्मान देना चाहिए। इन बमसी लोगों को सम्य बनाना चाहिए। हजार बर्ष पहले की मिट्टी में मारी हुई चीजों से हमें क्या लाभ? हम तो वर्तमान की रक्षा का प्रयत्न करना चाहिए।

उत्तर के बिलाड़ी के मन भी यही बात है। मराठी जमाने की पत्नी के दौर की यह बहानी जो छिरी जा रही है सितम्बर-अक्तूबर १९२४ में जबकि भारतीय राजनीति भी ऐसी ही पत्ती के एक लगे हीन में गुजर रही है जब कि लोगों में जती तरह राजनीतिक भावों का अफ-पतन हो गया है सब अपने-अपने लैल-समारो में राग-राग में लिप्त हैं देस की चिन्ता किसी को नहीं है राजनीति गतरंज की बिलान होकर रह गयी है जिस पर सब लोग सारे दल और गिरोह अपनी-अपनी चालें चलने में लगे हुए हैं हिन्दू मुसलमान को भीचा गिराया चाहता है मुसलमान हिन्दू को जब देना चाहता है अठोंबनों में म्युनिमिर्निपिटी में यहाँ बड़ी सब जगह सीटा के लिए गोटियाँ बँटायी जा रही हैं गोरदियो के लिए हीना मपटी हो रही है— और कम्पनी बहादुर का पीपी उत्तमउ का गिरजा नियत तरह बतना बसा जा रहा है हमरी चिन्ता को रिक्त ही नहीं!

मुसीबी को बहरहाल है और बहूत है। निन-रात यही एक दिन उनके मन पर किसी बानी बटा की तरह छाया छाती है और विमाय जमी की उपेड़बुन में लमा रहता है। आन्वी के हायां आरमी का लुन बहे यह कुछ कम भवानक बात नहीं है केवल जतन में ही बस नहीं है। आन्वी की तहरीक इमी आरमी गन लखर में हमेसा के लिए दूरी जा रही है बस बस जाय।

और हम गिराव बम्बल को क्या करें जो एक बल में एक ही पन्थ पर हीना बानना है? बिदे की एक टांग कुछ भी बान हो बर म्यु-किरक एक न एक लोबा हम परल से मान ही जाता है।

बैत कि इमी बारागन्य के। इन निना उमो पर लेखी में बाम हा रहा है। कोई भीमा सम्बन्ध हम प्रयत्न से उसे नहीं है। केवल जनता की मन्त म



ता है स्वराज्य से तो है। तो फिर इस सवाल से कैसे न हो लखी-बिपटी जो है  
 मगर बाते एक-दूगरे से कोई अलग करना भी चाहे तो कैसे करे।  
 मिहाना कायाकल्प में उनके मन की यह तस्वीर इस रूप में कागज पर  
 उतर जाती है—

आपने के हिन्दुओं और मुसलमानों में आये दिन बूतियाँ बलती रहती थीं।  
 जरा-जरा सी बात पर दोनों दलों के सिरफिरे जमा हो जाते और दो-चार के अंग  
 भंग हा जाता। कहीं बतिये ने डंडी मार बी और मुसलमानों ने उसकी डूकान पर  
 पाबा कर दिया कहीं कित्ती चुकते में कित्ती हिन्दू का बड़ा छ लिया और मोहल्ले  
 में प्रौढवादी हो गयी। एक मुहल्ले में मोहन ने खीम का कनकौमा लट लिया और  
 इसी बात पर मुहल्ले भर के हिन्दुओं के पर लट गये दूसरे मुहल्ले में दो दुतों की  
 लड़ाई पर सैकड़ों आवमी पायल हुए क्योंकि एक सोहन का बूता या दूसरा सईब  
 का। निज के रमड़े-सपड़े साम्प्रदायिक मसाम के छेब में पीष लाये जाते थे  
 दोनों ही दल मजहब के लसे में पूर थे। मुसलमानों ने मजहब गोले हिन्दू लैने  
 बाँपने लये। मुबइ को ल्याबा साहब हाकिम जिला को सलाम करने जाते थे  
 को बाडू यजोदानन्दन। दोनों देवताओं के माय्य जाये। जहाँ कुते निरोपासना  
 किया करते वहाँ पुजारी जी की भाँग बूटने लगी। मसजिदों के दिन फिरे, मस्काओं  
 ने मजहबीलों को बेबख़श कर दिया। वहाँ माँइ पुगाकी करता या वहाँ पीर साहब  
 को हँडिया चढ़ी। हिन्दुओं ने महाबीर दल बनाया मुसलमानों ने बली गाल  
 लबाया। छत्रुछारे में ईस्वर कीर्तन की जगह नविया की मिल्दा होती थी मस-  
 जिदों में नमाज की जगह देवताओं की दुर्गत। ल्याबा साहब ने प्रतबा दिया—  
 जो मुसलमान किसी हिन्दू औरत को निकाल से जाय उसे एक हजार हज्रों का सबाब  
 होमा। यजोदानन्दन ने कासी के पंडितों की ब्यवस्था सँपायी कि एक मुसलमान  
 वा बच एक लाख गौदानों से बोट है  
 यह कुछ बस्त है। हिन्दू अपने संमठन में लये हैं मुसलमान अपनी तडीर  
 में। आये दिन माय की बुर्जानी क सवाल पर, या बाजे-यात्रे को लेकर जाती  
 नमाज के सगड़ होते रहते हैं। इस्लामियत और रवाशारी की एक बात मुनने  
 के लिए कोई तैयार नहीं है। एसी बात बतलेबाबा बचकऊ या पायल समसा  
 जाता है। एमे ही एक बीइम की कहानी उग्हने हो-टीरन बरत पहने मिनी की  
 बीर उमता कुछ असर हुआ ही न हुआ हो बीइम थी अपना बीइमपन छोड़ने के  
 लिये तैयार नहीं है। मंटीजी ने फिर बैम ही एक बीइम की बरानी लिनी—  
 हिमा परलोभर्म ।  
 उपर कायाकल्प में यजोदानन्दन की पत्नी बायेरबटी (जिन मुंजीरी

पहले अपने पति से ममान ही हिन्दू समुदाय में लॉन्गने की बात मोषकर फिर विचार बदल दिया) इसी तरह की खाशायी की बात करती है — नियम ममजानी रही इन लपटा म न पड़ी। न मुमलमानों के लिए दुनिया में कोई बुराप ठीर भिदाता है, न हिन्दुआ के लिए। दोनों इसी देस में रह्ये और इसी देस में मर्ये। फिर आपस में क्यो लड़ने-मर्ये हो क्यो एक-दूसरे की निगल आन पर तुम हुए हो? न तुम्हारे नियमों के नियमों जार्ये न उनके नियमों तुम निगले जाओगे। मिसजुलकर रही उन्हें बड़ होकर रहने को तुम छोटे ही होकर रह्यो। मपर मरी कीन मुमजा है।

टीक तो है कीन इस कान कान देता है ऐसी सब बाता पर। यतो यजोण मन्दन और खाजा महमुद एक बल्ल लंपोटिय पार बे। रोमा में शीन काटी रोगी थी। सेवा समिति में साय-साय काम कर्ये बे। लोदा-ममान के मल में लोयो हुई बच्ची महम्मदा को उम्ही बला ने बचाया या बा फिर यजोणमन्दन के घर में पर्यी और बड़ी हुई। और फिर वह ममाबम की रात जैसा बुप मंत्रेय दिन माना कि खाजा साहब ने मुद यह जनबा दिया — जो मुमलमान किमी हिन्दू औरत को निकाल ले जाय उसे एक हजार हुजो का सबाब होया।

और इस जनबे पर मबम पहले अमक किया लु उनक बेटे ने महम्मदा को बकावर।

खाजा साहब को इसबा पता नहीं है। उन्हें भिके इनका मालूम है कि मुग्गे महम्मदा का उड़ा ले मन। लेकिन इसकन उर मुमान भी नहीं है कि यह सब उनके बेटे की हारत है और लड़की बही और नहीं मुद उमक बन में ई है।

यजोणमन्दन के गुन और महम्मदा के उड़ान जाने से खाजा साहब की एक खबरेंग सटका समता है और वह यजोणमन्दन की कान क सिगहाने बैठकर गेने है और बहने है —

गुदा पबाह है मीने इयेया इस्तहाद की कोणिया की। अब मी मेरा यह ईमान है कि इस्तहाद ही से इस कानमीक कीन की मजान होगी। यजोण मी इस्तहाद का उठना ही जामी या जिनता मी। याय मूममे मी यजोण। लरिन गुदा जाने बर कीन-मी ताउन की जो हन शानों को बरमरेजंय रागो को। हन दोनों जिन में मेक करना चाहने के पर हमारी मरी के निभाउ बाई मी ताउन हमको लड़ती रहती थी।

बह गैबी ताउन और बोई लही मयडी हुकन है जिमका उल्ल मीपा हंजा है इन दोनों के बागसी गुद-गच्छर मे।

इसी दिना, मार्च-अप्रैल १९२५ में उनकी एक बहानी ली — मरिदर

और मसजिद। उसके माफक बीबरी इतरतजरी भी इसी तरह क एक सच्चे  
 भाजाव-घयाक हिम्मतवर भारती हैं—

झरसी और जरसी के झालिम ने सरा ने बड़े पाबन्द, मूर को हुराम सप-  
 सते पाँचो बरत की तमाब मया करते ठीसों रोडे रखते और नित्य कुरान की  
 तलाबत (पाठ) करते थे। मगर धार्मिक संकीर्षता कहीं छू तक नहीं गयी थी।  
 प्रातःकाल संगान्नान करना उनका नित्य का नियम था। पानी बरस पासा पड़े  
 पर पाँच बजे बह कोस मर बलबूर संगान्नान पर बबस्म पहुँच जाते। झौंटे बकल  
 अपनी बीबी की मुपह्वी संगान्नान से भर लेते और हुमेया संगान्नान पीते। उनका  
 सारा घर, भीतर से बाहर तक सातबें दिन गऊ के गोबर से लीपा जाता था।  
 इतना ही नहीं उनका यहाँ बीबी में एक पबिखत बाधुँ मास दुर्पा पाठ भी किया  
 करते थे। उबर मुसलमान फकीरों का लागा बाबर्शीखान में पकड़ा था और कोई  
 नौ सवा सी जाइमी नित्य एक दस्तारखान पर लाते थे। उनकी रियासत में  
 ब्याह क लिए सरकारी जंगल से जिनगी ककड़ी बाड़े काट ले। बीबरी साहब से  
 पूछन की उलगत न थी। हिन्दू जसामियों की बरात में उनकी जोर से कोई  
 न कोई बकर गरीक होना था। शबेद के रूपे बँबे हुए थे। लडकियों के बिबाह में  
 कम्पागत के रूपे मुकरर थे। उनको हाथी-घोड़े तम्बू-सामियाग पासकी  
 नामकी फर्म-जामिम पदे-बैबर, बीबी के महकिली मामान उनके यहाँ छ बिना  
 किसी दि इत के मिल जात थे। माँगने मर की बेर रहती थी।  
 उसी महीन एक और कहानी उनके कलम से निकली — मुक्तिपन ।  
 बाऊदयाल नाम के एक काफ़ी कठोर, बेमुरीबत महाजन की कहानी जो हिन्दवी  
 मर के लिए एक मुसलमान के एहसासमन्त्र हो जाने हैं बयाकि उमन अपनी माय  
 पाँच रूपे कम पर उनका हाथ बेचना कबूल किया लेकिन कसाइया को देना नहीं।  
 त्वाजा महमूद बीबरी इतरत अली बाऊदयाल सब पर बाइसीबार का महप  
 रंग चढ़ा हुआ है। लेकिन इनके लिए मुतीजी का रती मर गझाई देन की उरतत  
 नहीं है। बड़ी ता उनका माय अपना रंग है इसमें बुकिषा बीनी। वर्तमान के  
 भेँधेरे का इस भाओर-बाय के सिवा और बीने बाट ही सरुते हो मुज ?  
 हरिहरनाथ नाम के एक गुमनाम मये लेपक की मतीजी ने एक बार (अयेजी  
 म) सिगा पा —

मुजनात्मक मन को मुजम करना चाहिए — जिनका ? बरिनों का उद्  
 धाटित करने के लिए परिनिर्णयों का। तबपुत्रको जाणाबादी भावना ने लिउमा  
 चाहिए। उनका जाणाबाद सक्कदक होना चाहिए, ऐसा कि डूमरों में भी बह उनी

मायना का संभार कर सके। मेरे विचार में माहिल्य का उच्चतम लक्ष्य उन्नयन है ऊपर उठना। हमारे मयापचार को भी यह बात नजर न झोमक न करनी चाहिए। मैं ठा तुम्हें मनुष्यों को मृष्टि करते देखना चाहूँगा — निर्भय ईमानदार, स्वयम्भवा मनुष्य हिम्मत से काम करनेवाले साहसी मनुष्य जिनके भाव्य अर्थ हैं। बल का उदाहरण यही है।

यह उन मनु ३ की जतवटी का है एकिन यह विरहाम हिम्मी मर का है।

दुःख न उनकी तबीयत का यही रंग था और इस बल भी जब कि नजर को बिलबिलसाती हुई बुर में सब कुछ मुक्तना जा रहा था मुर्गीजी कछोटा बापि पुत्रवान धीर-गभीर मन में उन कभी धरनी में बलना हल बना यह प भीष भीष को रह प म्याप के बिकरु न प्रम और मोहार्द के — जो किमी दिन पपमे पपमे ! उन्हें माय्य मुद यह दिन देखना समीक न हो मयर उममे क्या। मुन क्या बबक फल की प्राप्ति म है ? कर्म में स्वत कोई मुन नहीं ? जिनकी बार बहा करते प बहु मने बल्ला मे — Virtue is its own reward (तेरी मुद मय्य इनाम है)

बह भीष मिरी हुई है मुगीजी की म-रम म और बहु चाहते हैं कि उनके बल्लों में भी इसी तरह निर जाय। इमन दरो समीक जत बल्लो क किए उनके पाम दूमरी मही है। मरुतना की सोम बहु मही देना चाहते। जिन काज का बुनिया मरुतना कही है उतम उन्हें रिमी मरुतन है। मने बल्ला के बारे म एमी हो कुछ बात उम्हान ३ जून १९३ क एन में बनारसीमम बनुरेमी की सिगी थी —

मुझे मने बालों लफ़्तों क विषय म कोई मरुतना मही है। यही चाहता है कि क ईमानदार, मरुके और दक इयदे के हो। किनामी समी मुगामी मरुतन में मुने पुना है

इस एन के पांच बरम बाद की एन घटना की चर्चा उनही घनरपी मे की है —

● मैं बनारम में थी। मेरी बगती का टींग बल्ला जग में जक गया। — मके बारे बरन म मरुतम पुना हुआ था बरदे भी लप्ते ही थे। मेरा टींग बल्ला बनु उमे मही बाहर वा गया। क उम बल्ल को उने एन मे बाना थापों का पैठ बना कर मरुतना। — म मय्य बाबूजी मेरे पाम नीउे व। लफ़ता बाका — मरुमी इस कुछ मय्य को हो। उम बल्ल का बरन देगारर मेरे तो सोने मड़ हा एन। मैं बटी कि बगी इमे पकरा न लय जाय मही तो मारा बरन लरुतन हो मरुतना।

बसू का उस बच्चे पर प्रेम देखकर उसकी आँखें भर आयीं। मुझसे बोल—  
 बत्की या न इसे कुछ खाने को। मैंने उसे मिठाई और फल दिये और बत्की—  
 इस कैसे पहुँचायाये? बच्चा लगते ही ता इसका शरीर रंग जाया।

बसू— मैं इसे मासानी से पहुँचा आऊँगा। उस बच्चे को लेकर वह उठी  
 तरह नीचे पहुँचा आया। आप बोलें— यह सबका बड़ा इलाजाल मालूम होता  
 है। भला उसे वह कैसे आया! मेरी भी हिम्मत उसे खाने की न होती। मैं तो  
 थोटा कमरे को जाता। भयवान इसे जीवित रखे। तुम देखना सबका बिना

भी तो बहुत था। मैं ही उसे छू सकती थी। ●

बड़ी खुशी हुई थी उनको उस रोज आँखें भर आयी थीं— जो इंसानियत  
 ईश्वरी फिरेली थी और बहरी पा जाती थीं पक्षकों से उठाकर धीने में रख लेती थीं!  
 गृहस्थ के बोलने से सत्य का मन लेकिन वह सत्य नहीं था दुनिया से मुँह मोड़  
 कर जमल की राह लेता है। वह तो प्यार करते हैं दुनिया को मसी-कुरी जैसी  
 भी है। लगाव है लेकिन अपने लिए साथ अपने लिए कुछ भी नहीं निस्संय-मा  
 एक लगाव अगर ऐसी कोई चीज मुमकिन हो  
 और बही दुनिया आज चलकर राग हुई जा रही थी। बरसों से यह आपसी  
 मारकाट का सिलसिला चल रहा था और बत्की जल होने का कहीं कोई इलाज  
 बिलामी न देता था।

हवा बेतरह बिगड़ी हुई थी लेकिन मुँगीजी मुस्तीरी से अपना काम किये जा  
 रहे थे। उनके लिए कहीं अकेलापन न था। नैक काम में इस्मान कभी अकेला  
 नहीं होता। इसका मुँगीजी को पुराना अम्पास है— इन अकेलेपन का जो  
 अकेलापन नहीं है। बहुत बार ऐसे मौके आये हैं जब केवल उनकी भाग्ना से  
 उनका साथ दिया है— और वह निर्मम अपने रास्ते पर चल पड़े हैं। उन्हें पता  
 है कि वह ताकत बिना बही होती है या अपने भीतर में जाती है। मताग्ना क  
 गले में यह मुँगीजी की आबाज है— आत्मा कुछ न कुछ जरूर कहती है अगर  
 उससे पूछा जाय। कोई माने या न माने वह उनका सन्तुष्य है।

मानता न मानता तो आप की बात है, अगर बीच आत्मा में कुछ ही नहीं  
 कुछ भी। क्या होया पूछकर, जरूर कुछ जल्दी-मुन्दी बात बहोती। उन रास्ते  
 बल्लो जिस पर सब चल रहे हैं! बही सचमता का रास्ता है। आत्मा का  
 रास्ता कौटों का रास्ता है। उस पर पायल चलते हैं। और-भीरे उनकी भाग्ना  
 भी फिर मुँगी हा जाती है बही असल मौत है।

तभी तो मुँगीजी बगबर उसका तनवार भी तरह परवर पर रगड़ने रहते  
 हैं। तनवार की ही तरह उमरा भी पानी नहीं तक है जब तक कि वह लड़ाई

के मैदान में है — बमर से खोलकर आपने उसे लुंजी पर टोंगा नहीं कि उसका पानी उतारा।

अब से इरीब पन्द्रह बरस पहले किन्म्यान्सि का देगा क नाम से उम्हाने को कहानी लिखी थी वह सत्य और ध्याय के पक्ष में उठनेवासी इसी तमवार की कहानी थी जिसे आत्मा या अन्तःकरण भी कहते हैं।

आत्मा नहीं निवेक नहीं उसको जिन्दा रखने के लिए बरफ है कि बरफर संघर्ष करता रहे, असत्य से अविचार से अपने ही मन की संशुचित मूर्तियों से

स्वामी अज्ञानन्द क लिए मुंशीजी के हृदय में सच्ची भद्रा है — उनका देव प्रेम के लिए, माहस के लिए, आयबलिशन के लिए, उन स्वामी अज्ञानन्द क लिए जिन्होंने रौल्ट एक्ट के बिना में गोपों की सपीना के आगे अपना सीना खोल दिया था

लेकिन फिर समय के फेर म पड़कर वही स्वामी अज्ञानन्द हिन्दू सगटम और पुष्टि आन्दोलन में छो गये। उनमें मुंशीजी को रसी भर मरानुमति नहीं है। लेकिन भावर का भाव तब भी मन में रहा। वही जो एक मुमराह पर सच्चे और साहसी आदमी के लिए हमारे दिल म हागा है। तो भी बाठ बरस गयी थी और कुछ अजब नहीं कि कामाचल्य के मगोदानन्द क पोछे हम्पी-नी एक छाया अज्ञानन्द की हो।

सन् २६ में अब रशीर नाम के एक शीखान मुमलमान ने जिहा के अन्ने जोग में स्वामी जी का सम कर दिया तो सारा देव एक बार काँद गया।

पुष्टि ममाचार नामक आपममाजी पत्र क अज्ञानन्द बलिगत अंश में मुंशीजी के एक छाटे लेख में स्वामी जी को इस तरह बरती अज्ञानि बलिग की —

पां तो स्वामीजी प्राचीन आर्य आन्दों क पूर्णरूप से प्रवर्धक क पर मेरे विचार में राष्ट्रीय शिक्षा के पुनरुत्थान में उम्होंने जो काम किया है उसकी कोई बचीर नहीं मिलती। ऐसे युग म जब अल्प बाडापी बीजों की तरह बिदा भी बिबरी है वह स्वामी जी ही का विमाप का तिमन प्राचीन गुरुकुल प्रथा में भारत के उदार का तत्व समता। बौद्धिज्ञान तर गुरुकुल प्रथा खीबिग रही। मुस्लिम युग में यह प्रथा कष्ट हा लपी और उमक कष्ट होते ही राष्ट्र-नीता का लंगर उपाड़ गया। बर्ष और आपम जो आर्-मसूवि क लगभ म अपना अमकी इन मोहर काय-नाथ के रूप में आ पत्र और गरए बरनपाटी अरमन्स देट के बर्षों में मी-मम और कायप्रथ का स्थान छैन दिया।

ठीक बात है आदर माण की जयह आदर-माण आलोचना की जयह पर आलोचना

बैठे कि स्वामीजी की एक पुस्तक पर मिलते समय मुंशीजी ने बोदक कहा — स्वामीजी ने हिन्दुओं और मुसलमानों के आपस क झगड़े की मुस्तसर टापीक लिखी है। झगड़े हमेया होते रहे है। हिन्दुओं की बीडों और जैतियों से खूब कड़ाइयाँ हुई। मुसलमानों की बीडों से बीडों की बीडों ने हिन्दुओं की हिन्दुओं से। गरज जातिगत और धर्मगत कड़ाइयाँ परम्परा न होती चली आ रही है। मगर कातिध यह होनी चाहिए कि हम उन झगड़ों को मूस जायें न कि गये मुवें उभाइ-उकाइकर बिरोध की जाग और मड़काते र्हे

इसी तरह काम-काज में बूझे हुए दिन गुजर रहे थे कि मीमियाँ जा पहुँची और निगम साहब ने सोलम बकने का प्रस्ताव किया। उसके जबाब में मुंशीजी ने लिखा —

मैं बच कमी इस किम्म का इयाया करता हूँ तो मुझे फ्रील बरबालों का खपाल माता है कि मैं तो बहाँ तकरीह करूँ और यह बेचारे यहाँ पड़े सड़ा करें। उबदीस की जकरत किसको नहीं महमूस होनी लेकिन जो गुबमुस्तार हूँ वह जपना इयाया पूरा कर लेते हैं जो मोहताज है वह दिन से सोचकर र्ख जाते हैं। इनी ग्रयास से रक जाता हूँ। कुतबे भर को लेके जाना मयिकल। इसलिये यहीं पड़ा र्हुँया। उस का एक पर्वा और दो-तीन पैसे की राबाना बर्क मीसम की तकलीक के लिए काडी है।

यह कोई एक दिन की बात न थी उनक लिए। पहल भी और बार की भी पक-बच ऐसा कोई मौका माया मुंशीजी बतरा गये। जैसे कि उस बार कोई उ-मास साक बाद सन् ११ १२ में जब बीनेग्रजुमार ने एक बार बहुत बाहा या कि मुंशीजी उनक माय मायिनिकेनम बसें। उन बत में मुंशीजी ने यही बात कहा थी। बोके — मैं ता बहाँ उम स्वग की वीर करूँ यहाँ बर के सोन तकमीक में दिन काटे, क्या यह मेरे लिए ठीक है? और गर को से बर्क इतना पैसा कहा है। और बीनेग्र महाकबि ग्बीग्रताय ता मयनी रचनाओं द्वारा यहाँ भी हसें प्राप्त हैं। क्या बहाँ मैं उन्हें बधिक पाडेया?

बीनेग्र इतनी जामानी से छोड़नबाक न थ बाक — पात्तिनिकेनम को बबि बार हा सक्ता है कि वह आपको चाह आपने बम ऐम क्रिये है टि आप मनहूर हों। तब आप कर्मपय से बच नहीं मात्र। बलिय न। मेरिन मुंशीजी इनने पर भी राकी नहीं हुए, बाक — हाँ बीनेग्र यह सब ठीक है। केरिन मैं अपन यहीं पड़ा हूँ तुम जाओ।

पं० बनारसीदास अनुबेदी ने भी बीमियों ही बार मुंगीजी को बसकते बुनाया पीर छात छोर पर रखीन्नाय से बिलाने के लिए, लेकिन मुंगीजी बरनी जगह से नहीं हिले। एक बड़ा बनारसीनाम जी ने उन्हें माय-मय की चिन्ता से भी मुक्त करता चाहा लिखा —

माय बबन भाए और मेरे माय छरिए। हमे बडा मुन होगा। बिनाय मारत का संपाक भायक लिए लाना पकायया। सम्मत्र है भायको उमकी पकयी हुई मीची-मारी चीजे बहुत न भावे लेकिन इतना जरूर है कि उनको पोछे मन्की यज्ञा हामी वा हांसां या मार्बजतिक रमोईमणे में मरी मिक सक्ती। मैं नहीं कार्यालय में रहता हूँ। हृपया अपन भाई की सूचना दें। भायके लिफ्ट की व्यवस्था में मामानी से कर सक्ता हूँ उमकी चिन्ता में बीबिए हृपया। बाइबाये बाक्यांत की अच्छी तरह देखाकिन भी कर दिया गया है — इ मां बापर अबाउट इट प्लीज।

अनुबेदी जी ने घायब और कमी निरावेशनी बाज मियो की बिनके उबाव में मुंगी जी ने १३ फरवरी १९३३ क भारत अग्रेजी पत्र में लिखा था — मैं कल्पता जाने का पीरार हूँ जब भी भाय पाई। ऐसा कोई सबनर होता चाहिए। तमागीन की तरह भाता और दूसरों से यह उम्मीद करता कि इमहा गर्ब बहु दर्जिल बनें बेहुरा बाज है। जब ऐसा कोई सबनर भायेया, मार मुने बर्त पावेन मरनीक। जामा हा तो पन्नी क माय और समक हो तो बच्चे भी बर्त नहीं जाता।

मनु १५ में यौन मागूची जाराम से भाग्य भाया उस समय एक बार किन बनारसीनाम जी ने बरन जोर लगाया कि मुंगीजी मान्निनिबेनत जावे। लेकिन मुंगीजी टम से मय से हट, बही बिह की एक टोण — मारवा बाई बिना। पन्द्या। बाग कि मैं भी मागूची क भावन मुन मरना लेकिन बडा बर्त मरबूर हूँ। परिवार का रैन छां मरी मरप्या है। लड़के इगाहाबाइ म है और मैं भी बणा जालेगो मरी पनी बिना भयेवा और अमहाय अनुभव कोगी। अगल मैं उमरी भी अपने माय से भाई ता गर्ब कच्चे क बिग अच्छी घामी ररम हाय में होनी चाहिए। इमकिन मरी अच्छा है कि मैं अपने घर से पका हूँ पने की तमी का गिहार ता न बपना पन्ना।

इसके कुछ ही मरीन परत हमारसीनाम डिबेरी ने २६ मार्च को लिखा था —

● उस दिन प बनारसीनाम जी ने माय गकेश में बिबने मंग था। बागों ही बाता बर्तमान हिन्ने मन्त्रिय के सम्बन्ध में बर्त बनी। तैम मरमणे पर भागा नाम सबन पहुँचे जाना है। उस दिन भी जाके रबिन माहिप की बर्त



बड़ी देर तक चालती रही। हम सोचों की इच्छा थी कि नववर्ष के अवसर पर आप जैसे आदरणीय साहित्यिकों को निमंत्रित करें और गुस्तेब से परिचय करावें। गुस्तेब ने हम सोचों के विचार का उत्साह के साथ स्वागत किया। इसीलिए हम लोगों ने निश्चय किया कि स्वामीय हिन्दी समाज का बापिकोस्तब नववर्ष (१४ वर्ष १९१५) को मनाया जाय। उस दिन गुस्तेब का प्रबन्ध होता है। उसके पहले दिन भी जिस दिन बर्ष समाप्त होता है, उनका ब्याप्तान होता है। कुछ और भी समारोह रहता है। गुस्तेब और आप्रम की ओर से निमंत्रण तो मनासमय चायेगा ही इसके पहले ही हम हिन्दी समाज की ओर से आपको निमंत्रित करते हैं। इस बार आप बहर पधारें। हमारे आग्रहपूर्वक निमंत्रण को आप बखीकार न करें। आपको गुस्तेब से मिठाकर हम गर्व अनुभव करते।

आपके साहित्य ने हिन्दी को समृद्ध किया है और हिन्दी-भाषियों को बुनिया में मुँह दिखाने सायक। इसीलिए आपके समुद्र किया है और हिन्दी-भाषियों को बुनिया करते हैं। जब हम रंगभूमि या कर्मभूमि को दूसरों को बिलाले हैं तो मन ही मन सर्वपूर्वक पूछा करते हैं—है तुम्हारे पास ऐसी कोई चीज। और इस प्रकार का गर्व करते समय हमें प्रेमचंद नामक किसी जगत अपरिचित व्यक्ति की याद भी नहीं रहती—मानो सब कुछ हमारी ही इति है। याव जस व्यक्ति को पत्र लिखते समय उसकी अनुमति के बिना उसके सर्व्वर्ष यश को स्थापन कर देने के अपराध के लिए जो हम क्षमा नहीं माँगत वह भी सर्व्व का ही एक दूसरा बच है।

आपकी याद का इससे बड़ा प्रमाण हम क्या दे सकते हैं ?  
 कहने की आवश्यकता नहीं कि इस पत्र से मुंजीजी भीतर ही भीतर आत्मार और इच्छता से भर उठ हूँगी जीवन के दोष पूर्व में ऐसा अशुद्ध स्नेह कहीं से तो मिठा! लेकिन ता भी मने नहीं या यों कहें कि जा नहीं सक। किसी एक काय से नहीं कई कारणों से। कुछ समानीपता कुछ मानामय कुछ सर्व्वक और कुछ वह बात त्रिचकी और जैनप्रभुमार ने सचेत किया है—

बड़े पाठों से कही अधिक उन्हें छोटी-सी सचार्द पूर्वी थी। जहाँ जिनगी भी नहीं प्रेमचन्द जी की निपाह थी। जहाँ विनाया या जगम लिए प्रेम चंद के मन में उत्सुकता तक न थी। कुतुबमीनार, नई मेडरेरियट विविदाय कौशल चन्दर्म् यह अपबा वह महानुप इनकी बेरामे-जानने की साठमा उनकी प्रभुति न न थी।

बात १९२५ की गमियों में होतम जाने से उठी थी और कहां की कहां पहुँच नयी। शरत कि मुंजीजी न कहीं जाय न मने बुपचाय एक काने में बैठे हुए अपमान काम करते रहे और जिनगी के दिन बाटते गह। जिनगी का मनासब मरे लि

हमेशा एक ही रहा है— काम काम काम। जब मैं सरकारी नौकरी में था तब भी अपना साग बस्त में छाहिल्य को ही देता था। मुझे काम करने में मजा माता है।— इन्धनाभ मदान का उन्हुंमि ७ दिसम्बर ३५ को बवाई से लिखा था।

दूसरी किछी चीज में न तो उन्हुं मजा मिलता था और न उसके लिए उनके पास बस्त ही था। जैनिक को बड़ी हूँरानी हुई थी जब मुंजीजी ने सन् ३३ की अपनी लिस्ती-भावा के समय उनको बतलाया था कि अपनी जिन्दगी में यह पन्नी बार यह दिस्ती भाव है। इन्धनाभ-बावन साल की उम्र में पहली बार उन्हुंमि दिस्ती का संहू देसा। और फिर उतनी ही हूँरानी जैनिक को यह जानकर हुई थी कि उस प्रभाव के बहु सात दिन सतकी जिन्दगी के पहले सात दिन है (बीमारी के दिनों के बलावा) अब कि उन्हुंमि कुछ नहीं लिखा।

ऊपर से देखने पर अत लगे लेकिन बोलो दो अल्प चीजें नहीं एक ही चीज के दो पहलू हैं। मा तो बुम ही फिर लो या काम ही कर लो। कुछ काम बानो को एक साथ निभा से जाते हैं। मुंजीजी उनम नहीं व न स्वभाव से और न अपनी सांसारिक स्थिति से सिहावा उन्हुंमि छामोसी से लक कोने म बैठकर बराबर और अनबक काम करने की जिदगी ही अपना लिए बुम ली थी और जिदगी गुर करते समय ही बुम भी थी जिससे फिर कभी इबर उबर नहीं हुए। जैसा कि उन्ही सत में उन्हुंमि इन्धनाभ मदान की लिखा था—

मैं रोने रोनों के समान निपमित रूप से काम करने में विद्वाम करता हूँ।

बुनाई-अगस्त आने-आते हड़ बरस से कुछ काम समय में ही वायाफल समाप्त हो गया। किताब शुरू करने में उसको कार्मिक तैयारी में जो समय लगे लगे लेकिन किसना अब शुरू होता था तो फिर कलम बिना रने चलता था और बहुत तेज चलता था। समाधान की रबानी ने घाय इन्धन की रबानी भी बढ़ी जमी जाली थी कि जैसे बोलों में होइ हो। और यह उपायान की रबानी पर के घोट-गुम या मिलनेवालों के आने-जाने से इतनेवाली चीज नहीं थी। नतीज थी जिदगी म ऐसा काम ही हुआ कि उनके पास अपना एक छान कमरा हा किममें काम से काम काम के बस्त लड़कों की बुद्ध न होनी हो। अलवर यह हाश कि मुंजीजी मटवैये-मि घुंन पर अपनी छोटी-नी इन्धना इरक के सामने बैठ काम करने होने और आत-पात बरब ऊबम करते होने। हा, गौर र्दान होने पर बरब बन्दे से बैठकर मया दिय जाते। मपर उमरी नौबत काम ही जाली। कभी हम सिन-मिरे से बरब की पढ़ने के लिए पास ही विद्वान भी लिखा जाता। तब उनको

पढ़ाई तो जो होती वह होती या न होती सोर इतई बन्द हो जाता। मुनीजी फिली लड़के को सवाल दे देते किमी को मुन्दर बघारों में कुछ नपक करने के लिए। बच्चे अपना काम करते करते वह अपना काम करते करते बीच-बीच में इधर भी कुछ ध्यान दे देते। इससे उनका असर ध्यान नहीं बैठता था। बिघारों की जैसे एक बर्पा-सी होती रहती उसी को समेटने में वह लगे रहते। मूजन के स्तर पर जो अपना जीना या उसका सिद्धमिमा इन चीजों से नहीं टूटता था। बराबर ऐसी ही हालातों में काम करने के कारण सायर यही उनका स्वभाव हो गया था — या इसी तरह उन्होंने अपने मन को साब किया था।

मिलने-जुलनेवालों के लिए कोई समय निश्चित नहीं था। कुछ दोस्ता में मुनीजी को सुसाया भी कि अच्छा ही अगर आप कोई समय निश्चित कर दें बर्ना काम में बिग्न पड़ता होगा। लेकिन मुनीजी को यह राय पसन्द न आयी। बहने यह बड़ा साहसी मुससे न हागी। कोई मरे पाछ जाता है तो कुछ स्नह सेकर ही जाता है। मैं उसको टेस नहीं कगा सकता। काम तो बिल्की के साब है। कुछ बड़ा साहसी मुससे न हागी। लेकिन मुनीजी सब के साब उसी मुहम्बत से मिलते — यवारा लाठिर-बाठिर में ता न पडते लेकिन ही पाठ सब को वेस होता। बाहर से पुकार होती और कोई लड़का बस-बीच मिलन में पाठ सेकर पहुँच जाता। मुनीजी बहुत इत्मीनान के साथ होस्कर बकमबान में रख देते परमा उठारकर एक किनारे बेस्क पर रख देते और बाठबीठ में हँसी-कहकहाँ में इस ऊबर उनके साब तें जाते कि एक बार उस माबमी को सायर यह बोया भी हो जाता कि मुनीजी किनी से बालने-बठियाने के लिए तरस रहे थे। लेकिन वह सोला ही था क्योंकि उबर उस माबमी की पीठ फिली और इबर परमा मुनीजी की नाक पर और होल्कर हाथ में पहुँच जाता और अमूरा बापय तिस जयह पर बटे उेरु पडे पहल छट गया था बही म फिर उठा लिया जाता और कसम रापर, लपर बलने लपता जैसे कोई ब्याबात पडा ही न हा। बहुत सबा हुवा पुन्ता हाय का उर्बू हिन्दी अडकी तीनों बबानों में जैसा कि एक रबोपनम मुनी का हाता बाहिए। मानियों की तरह बुने हुए छोटे-छोटे साफ अडर। बहुत गुनाउन किलते थे और अपने बच्चों की भी बराबर इसकी नसीहत करते थे। और सायर इमी उपान में परउधेनन के दुमन थे। बिल्की में सायर एव ही बार उन्होंने एक परउधेनन तरीया था बहुत मन्ता-सा और वह भी बालर की छाटी-माटी उबरतो के लिए, उस बगान में जब कि बहु फिम बपनी में बबई गये थे। बर्ना बराबर होन्डर से किलने थे और किमी भी बापय पर लिगरी थे। इन मामले में वह किनी उनस्तु के

निकार नहीं थे — कि नहीं कागज़ लेगा हो इतना चिन्ता या हम काम रग का और रोगनाई हम रंग की

समयका का काम पूरा हो गया था और अब किसी भी रोज़ बनामस लीज जाना था लेकिन तभी एक छोटी-सी बकाबट भा मयी। तब ही ग्योना बेकर बुसायी हुई एक लक्ष्मीप, अपन प्रति उनकी सागरबाही का मनीबद, एक पुरानी स्लीपर की एक कौम की बरबत जिस मुसीबी अक्सर सोड़ से प्यर स टाककर अपने मन का सघोष कर लिया करते थे कि नयी स्लीपर की बकरत नहीं है। मगर जो अपना काम करती र्ही। और आखिर बहु दिन आया कि १२ अगस्त १९२५ को मुसीबी ने निगम साहब को लिखा —

५ ठारीख ऐ पैर में कबक पड़ मयी। कार दिन मध्य बर्ष और जल्द और टीस थी पाँचवें दिन हाबटर से मत्तर लिया। दाहिने पाँव की बापी एड़ी का बमड़ा काट दिया गया। ४ को यहाँ से जाने का इरादा था लेकिन अब सायद बत्रह दिन तक न जा मर्गा।

दुर्भाग्यवश मुंशीजी की पान्हुक्तिपिया उनके हाथ के सिधे हुए मसौदे अक्षर गुम हो गये हैं। उनकी सँभासकर रखने की छिन्न मुंशीजी खुद हो क्या ही करते जिन्हें पत्रिकाओं में छपी हुई अपनी कहानियों तक का ठीक पता नहीं रहता था कठलन एतना ठा डूर की बात है। देखिए उनका यह लठ जो उन्होंने ५ अगस्त १९२५ को लखनऊ से निबन्ध साहब का सिखा था—

पंजाब का एक पत्रिकाकार मेरी कहानियों का मजबूत छापा करना चाहता है। मुझे बाव नहीं आता कि प्रेमबलीजी के बाव मेरी कौन-कौन कहानियाँ कहाँ कहाँ छपायी हुई। अब कहानियाँ तो लाहौर के हजाराबास्ता में निकली थीं एक हुमायूँ में छपायी हुई थी एक हृदयदे निकली जो मुझे बाव है। मुमकिन है एकाध और निकली हो जिसकी मुझे इस बात बाव नहीं। छापद भीबहारबास्तों में हो का ठरबा किया था। पंजाबी बखबाठे में भी मुमकिन है और कुछ कहानियों के तर्जुमे कर बाले हों। क्या आप इत मजबूत-परीछी के जमा करने में मेरी कुछ मदद कर सकते हैं? हजाराबास्ता का मुकम्मल प्रदरस आपके यहाँ है? हुमायूँ है? भीबहार है? हृदयदे भी है या नहीं? आबाव में तो कोई कहानी नहीं निकली?

किर इन्वर मोसैफ से पूछ रहे हैं कि जैसे यह अपनी नहीं किती और की चीजों का किफ हो! ऐसे आदमी से जम्मीब करना ही बेकार है कि वह कुछ भी सँभासकर रख सकता है। किताबें पत्र-पत्रिकाएँ, सिद्दी-नबी कुछ भी नहीं। कहानी लिखी और भेज दी यहाँ भेजनी है। छप यमी पीछे भा गये। पढ़नेबाले में पड़ भी। लिखनेबाले में छुटी पायी। किर जने कोई परबाह नहीं। किताब छपने की जब नीबल जायेनी तब ही तब देवी जायगी इतना-उतना बरबाबा एतएतदामा जायगा। बबाब दिया और सिद्दी फइकर पेंक दी। कौन बरे जखवे उनको और यहाँ-वहाँ बीजा किर, छालाबरोछों की बिजगी बाव यहाँ



2222



तो बच नहीं। लिहाजा एक मुग़ खोड़ों का सेनासज्ज वा जायों ही नहीं था जिन्दगी के हाकान ने उस पर और रस बना दिया। बाबापदा डायरी निजमा भी सायद ऐसा ही एक मुग़ है। इसलिए मुगीजी ने उस बगड़े में भी अपने को पाक रखा। डायरी उही अस्वर सेजिन वह जरा दूरे तरह की डायरी थी जिसमें अमर बीच-बीच में कपाबोज़ चार छः पंक्तिमा में टंके हुए हैं तो उनका साथ ही ग़ाल का घोरी का बहार का शिमाज नो टका हुआ है वहीं अमर कुछ कहानियों या मन्मादगीय लिप्यणियों के लिए प्रस्तावित विषयों की सूची है तो उसके साथ ही बीमे को पाकिमो के प्रीमियम का लखा खोया भी है। यानी सब कुछ है सिवाय डायरी के। वह निकट एक मोटबुक है एक बहीगाता जिसमें वह सब बायें दर्ज कर ली जाती है जिन्हें मुगीजी याद रखना बकरी समझते हैं—उन्हें अपनी याददास्त पर बिलकुल मरोमा नहीं है।

उनके हाथ के सिने हुए मसौने होय तो यनीमन उनम मुगीजी के रिमाय क कारखान पर कायी रोनी पन्ती। मगर वह तो सब किफ़ दये। संयोप से छिपकत कुछ खोड़ें बच गयी हैं।

१० मई १९२५ को मुगाजी न सगलऊ से जब कि कायाकल्प पर काम अभी चल ही रहा था अपने मुबन मित्र और संबंधो एजेरबर प्रताप सिंह को अपने एक अंधेरी छत में लिया था—

येरा मतलब यह नहीं था कि तुम कहना में काम न लो। कहना निष्पय ही सबसे खाना महत्व रखती है लेकिन मैं जो बात कहना चाहता था वह यह थी कि अगर निरीक्षण करना का सागी हो तो इसमें तुम्हारी रचना में और भी जान ला जायेगी। तुम मुद देखोये कि जीवन से सिने गये खरिज अफिर बालविक होने हैं।

यह बुरर से कहने की ही बात न थी, मुगीजी मुग़ यही कच्छ प। यहाँ तक कि बहुत बार अपनी याददास्त के लिए क्या न खरिज न जाये उस सदेह प्यस्ति का नाम भी लिख देन प जिसका खरिज उन्हें खरिज करता है। जैसे कि कायाकल्प की पाण्डुलिपि के पहले ही पन्ने पर लिखा हुआ है—

Bibhuda is Yagyannarain Upadhyaya—crafty parumonious, selfish but serviceful, tactful

Vishal Singh is Bechan Lal—simple, honest, wanting in moral courage

Kalyan Singh is Chandrika Prasad—speaking in the presence of superiors, cannot manage household suspicious.



Chakradhar is D Prasad—very shy learned, principled  
The new Rani's father is Nana—perfectly selfish, dishonest,  
unscrupulous, drunkard hopes to build his fortune with his  
daughter

Chakradhar's father—flatterer kind generous, milk  
simplehearted.

● विभूदा यज्ञारायण उपाध्याय हैं—बालाक कंसूत स्वामी लेकिन  
सिवायरायण व्यवहारकुशल।  
विशालसिंह वैचनमाल हैं—सीधे-साधे, ईमानदार, सचिन नैतिक साहस

से धूम्य।  
कल्याण सिंह चन्द्रिकाप्रसाद हैं—अपने से बड़ों बफसरों के सामने उनकी  
जी हुजुरी में जगा हुआ पृष्ठप्रथम नहीं कर सक्ता शक्की।

बक्यार डी प्रसाद हैं—बहुत मकोबी विद्याम सिद्धांत का पक्का।  
नवी रानी के पिता (अर्थात् मनोरमा के पिता हरि शैबक—अ ) नामा हैं—  
मोलहा जामा स्वामी ईरमान पगबी सडनी क बरिये अपनी विष्मल बनाने  
की उम्मीद रखते हैं।

बखबर, बक्यार क पिता—बापसम मेक उबार, मुसायम सीधे-साधे। ●  
कोई शक्की नहीं कि बरिब सबके सब रहें या इनक नाम बड़ी रहे या गुल  
बही रहें। सिपने के बीगन में सब कुछ बबल ना सक्ता है। मसलन विभूदा  
या विभूदा प्रसाद नाम का कोई पात्र अब उपन्यास में नहीं है लेकिन पाठ्युक्ति  
में एक जगह लिखा हुआ है—

The Pandit (Vibhuda Prasad) and his wife both turn  
Hindu Sangrathankars.

(परिग्रह विभूदाप्रसाद और उनकी पत्नी सोमा हिन्दू सगठनकार बन जाने  
हैं।)

इसमें कुछ संदेह मिलता है कि यादव विभूदाप्रसाद का नाम बरसवर  
१ संभवत बही जिनमे मुनीश्री का परिचय काशी विधायीठ में हुआ था।  
२ संभवत बार्मिक स्वतः गारंगपुर के हज्जामस्टर साहब। ३ इस नाम का  
कोई बरिब अब नहीं है। ४ तीन-तीन माँ के पिता जो काशी दिनों तक लेनी  
ही दिनी जायशाह के निकमिक में काशी जाइ-ओर रुमाने रहे—बीर यादव  
जन्म में कुछ सफर भी हुए।

यद्योदानन्दन कर दिया गया है और नाम बदलने के साथ-साथ उनका चरित्र भी काफी बदल गया है क्योंकि यद्योदानन्दन न तो मक्कार भादमी है न बहुत स्वार्थी न बहुत कंजूस। सिगठे-सिगठे चरित्र कुछ का कुछ हा गया। लेकिन ता भी एक वास्तविक व्यापार का कहीं पर होना उमीद से एक ऐसा लगाव है जो सिगठेवाले को सपारा भटकने या बीम मुंह दिरल से बचाता है।

बिमुदा के बारे में एक और स्थान पर मुंजीजी ने टीका—

Bibhuda is a Persian-read man. Knows very little Sanskrit.

His dialogue must be of an educated musalman

(बिमुदा अरबीकी भादमी है। बहुत कम संस्कृत जानता है। उसकी बातचीत पढ़े-लिखे मुसलमान-जैसी होनी चाहिए।)

चक्रधर के बारे में—

Chakradhar always seeks God in man.

(चक्रधर सग भादमी में ईश्वर को खोजता है।)

ये वास्तविक सेगन से पहले पुस्तक की मान्य-मूटि के मनेन है— उहरी तैयारियाँ बिब को स्पष्ट रूप से अपने मन में अहित करने के लिए।

बहानी ता जैम छोटी बीब है उसके लिए ता कई बाग मुझी और दा बार पंक्तियो में बचा-बीब टोक लिया किम फिर इमीनान न बहानी का रूप दिया जायगा। लेकिन उपन्यास बड़ी बीब है। उसके लिए तैयारी भी उमी पैमाने पर होती थी।

बचानक पुरा लिए लिया जाता था परिष्कृत बना लिये जान व पात्र पात्रियों की पंक्ति उनके चार्तिनिक दिखरल समेत अहित ही जाती थी— और सायद अस्ती न लिगल की मुदिधा के बागन बहु सब नाम स्यागतर अदेजी में ही जाना था।

लिगले समय बचानक परिष्कृतों का विभाजन पात्र-पात्रियों के नाम गाम रूप-गुण सब कुछ काफी बस भी जा मरते थे। ता भी एक मोटा बीबा तैयार रहने से उम्ह निरुपण ही अपन काम में सफलियत होती होगी।

सिगठे-सिगठे का बिचार मन में जाया तो उमे हम उम्ह टोक लिया और फिर यथाप्यत बचा में रिरोया—

Trial and troubles mould the human character they make heroes of men. Power and authority is the curse of humanity Even the highest fall a victim to power and lose their character

Chakradhar rose morally while struggling for existence. His fall began when he came in power

(भाबनाइनें मुसीबतें भाबनी का खरिब बनाती हैं। उन्हीं से भाबनी में साइस और बृद्धता आती है।

शक्ति प्रभुता मानवता का अभिवाप है। जैसे से जैसे लोग भी उसके धिक्कार हो जाते हैं और उनके खरिब का नाम हो जाता है। जीवन के लिए संघर्ष करते हुए शकपर का नैतिक उत्थान हुआ। प्रभुता पाते ही उसका पतन शुरू हुआ।)

नायद यही वह असक्त कायाकल्प है जिसकी बार कयारार अपने पाठक का ध्यान आकर्षित करता बाहुता है। शकपर का कायाकल्प विमालमिह का बायाकल्प मानसिक कायाकल्प

भौतिक कायाकल्प की जो उपकया रानी देवमिबा के इर्द-गिर्द बसती है वह बास्तब में उपन्यास का केवल एक अनुपंग है। जितना कम स्पान मुसीबी ने अपनी कृति में उसे दिया है उससे भी यही कथता है। हो सकता है कि उसका धनि बेच केवल एक प्रतीक के रूप में किया गया हो यह दिखाने के लिए कि जब तक प्रेम से बासना का पूरी तरह सौप नहीं हो जाता तब तक धानि नहीं है, मुक्ति नहीं है और भावना जगम-जगमान्तर तक उसी बासना के सँबर में पड़ी बककर जाती रहेगी

कैकिन यह भी हो सकता है कि इसके पीछे पुनर्जन्म इत्यादि में मुसीबी का बिस्वास हो क्योंकि इसका प्रमाण मिलता है कि अपने गोरखपुर प्रवास के दिनों में मुसीबी किटाक के बड़े भारी गनपत सहाय से महाम इस्बासकी बातिबर काज लखबीटर बनेरह की किटावें लाकर काप्री पड़ा करते थे। जो भी बात है, सम्पूर्ण कबालक की जो टीपन मिलती है उसमें इस प्रसंग के बारे में इतना ही है—

Rani is rejuvenated. She forgets her previous birth, who she was how she got rejuvenation. Raj Kumar begins to decline from the same day Rani afraid to approach him. Struggle. In the end Rani loses her balance. Passion overcomes her. She approaches Raj Kumar. A love scene. The next day Raj Kumar seized by a fatal sickness, dies. Rani again sinks into self-gratification. She builds her Ranghala. She again leads a life of flippancy

Raj Kumar takes his birth in Kuar Vishal Singh's house from Ahalya. When the boy grows into a lad he starts a tour through India. He reaches Telari, sees the Rani, memories begin to revive. Rani making approaches.

(रानी का कायावस्व हो जाता है। वह अपने विद्वान् जन्म की मूल जाती है वह कौम की जैसे उसका कायावस्व हुआ। राजकुमार का गरीर उसी दिन से गिरने लगता है। रानी को उसके पास जाते हर मामल हाता है। सपर्यं। अन्त में रानी अपना अनुष्ठान खो बैठती है। बासना पूरी तरह उसे अपने बप से कर लेती है। वह राजकुमार के पास जाती है। प्रेम का एक दृश्य। अगले दिन राजकुमार एक सांघातिक राग में विस्फोट होकर मर जाता है। रानी फिर मोम विभास में पड़ जाती है। वह अपनी रंगराना बनवाती है। पुनः बचस का मोद प्रमाद का जीवन व्यतीत करने लगती है।

राजकुमार कर्मर विद्याल सिंह के घर में अहस्या के गर्भ से जन्म लेता है। रीतियों की अकम्पा का पट्टन पर वह भारत का भ्रमण करता है। वह ठेकाली पहुँचता है रानी को देखता है पुरानी दाबें हरी हाल मगती हैं। रानी उस पर प्रम-बाध बनाती है।)

एक छोटी कथा के रूप में रानी ईश्वरिया-बाये प्रेम का जो भी महत्व हा इतना स्पष्ट है कि कथाकार को मुख्य प्रयोजन उमस मही है और आस्था भी चिठनी है पुनर्जन्म के सिद्धांतों में निश्चय के साथ बहना बटिन है विषय-बचपर की इस विभासा के लक्ष्य में —

ईश्वर ने एसी सृष्टि की रचना ही क्यों की जहाँ इतना स्वायं द्वेय और अस्वाय है? क्या एसी पृथ्वी न बन सकती थी जहाँ सभी मनुष्य सभी जातियाँ प्रेम और मानन्द के साथ संसार में रहती? यह कौन-सा इमाज है कि बार्द का दुनिया के मजे उड़ाए बार्द बचरे गाये एक जाति दूगरी का रक्त बूमे और मूँटा पर ताउ के दूसरी कुचनी जाय और जाने-जाने का सरये! ऐसा अस्वायमय संसार ईश्वर की सृष्टि नहीं हा सरता। पूर्व-संस्कार का सिद्धान्त हाय मान्य होता है जो सागो ने दुनिया और दुर्बनों के जागू पाछन के लिए पड़ किया है।

मुसीबतों को अमल प्रयोजन अपने ममात्र की कथा में है उमक स्वाय-अस्वाय और हाय-मच से जिनकी बहानी वह बचपर मनोरमा अहस्या विद्याल सिं मशी बचपर लीगी और यशोशान्दण और महमू के माध्यम में बहने है।

एक सामानिक यथार्थ यह है कि का की राजनीति विद्याल है — विरान हमने कि घाड़-बटन जान कैबा ममिति का बल रहा है और बाकी का बीगिया

में पहुँच जान की उछलकूट है जिसे मुँगीजी को रती मर हमदर्दी नहीं है, हाँ उसके तमाम खतरों पर उनकी निगाह डरकर है सता-नाम जो खरिज का बिनाश कर देता है—जिसे मुँगीजी ने पहले ही अपनी डायरी में टांक लिया है। वन का मद्य प्रभुता का मद्य

वही अरुण जो जनता का जाना-माना सेवक है जनता जिसके हाथों पर पावती है अपने बेटे के राजकुमार बनने पर, एक मन्हीं-सी बात पर, बेबाब की बात पर, मन्ना सिंह के माई को ऐसा मार देता है कि वह उसी जगह डो हो जाता है।

पीछे उनकी भी ओल लुल्टी है—

जाज उन्हें अनुभव हुआ कि रिपासत की वू कितने गुप्त और असहित रूप से उनमें समाती जाती है कितने गुप्त और असहित रूप से उनकी मनुष्यता खण्डित और सिद्धान्त का हास हो रहा है।

रंगमूमि का बिनय भी समाज की इसी खेनी का व्यक्ति था। वैसा ही जड़ेजी पद्म-सिखा मञ्जु-वीरा जनमयी अरुण भी है। वह भी पूरी तरह बिनय के ही शौच में वसा है। भार्य की बातें बहुत बड़ी-बड़ी समल में कब्जा।

जो अरुण राजा बिप्रास सिंह से कहता है—

हीन प्रजा के रूप से राजतिलक भयाला किनी राजा के लिए मंगलकारी नहीं हो सकता। प्रजा का मागीर्बाद ही राज्य की सबसे बड़ी शक्ति है। जब या तो राजा प्रजा का सबक होगा या होगा ही नहीं।

किशानों पर दोसी बनने देखकर जिस अरुण के मन में यह बिचार आया था— राज्य पशुबल का प्रयोजन रूप है। वह नाबु नहीं है जिसका बल पर्ये है वह विद्वान नहीं है जिसका बल तर्क है वह सिपाही है जो डंडे के जोर से अपना स्वार्थ सिद्ध करता है।

वही अरुण हल्की-सी उत्तेजना पर एक आरमी की हत्या कर डालता है जैसे ही जैसे रंगमूमि में हाथुओं हाथ मौफिया के अपहरण में उत्तेजित होकर बिनय राज्य के अपिचारियों में मिल जाता है और फिर अपने भत्याचारों में उती जनता को पीम डालना है जिसकी पहले उसने सेवा की थी

अमल कापाकरूप यह है।

बाहर बाहर अरुण ने राजमदन की और देना। अमल्य निष्कृतियों और दरीकों में बिजनों का दिव्य प्रकाश दिखायी दे रहा था। उन्हें वह दिव्य मन्त्र मह्य नेत्रोंवाले पिशाच की भाँति जान पड़ा जिनने उनका सर्वनाश कर

दिया था। उन्हें ऐसा जान पड़ा कि वह मरी और देखकर हँस रहा है और कह रहा है क्या तुम समझते हो कि तुम्हारे बस जान म यहाँ किसी को सुन होपा? इसकी चिन्ता न करो यहाँ यही बहार खमी यों ही खेत की बमी बनेगी तुम्हारे लिए कोई सा बर जाँगू भी न बहावेगा। जा लोग मेरे आशय म माने हैं उनका मैं कायाकल्प कर देना हूँ उनको आत्मा को महाविद्या की मार में मुखा देना हूँ।

धन और प्रभुता के म से मनुष्य का जो कायाकल्प होता है उसी की यह कहानी है। धन का मर अहम्त्या के मंगाय का कारण बनता है। अरम बेड को राजसा मिलने क सोम मे वह खचपर क मास नहीं जानी और कबाकार बनता है— अरम धन-म ने अहम्त्या की बुद्धि पर पनी न डाक दिया होना तो आज उमे क्यों यह दित देना पटना? दरिद्र खचर भी सुखी होनी। माह न उमका मरनाय बन दिया।

इही किसी की वह जान है जो गिबरायो देवी ने लिखी है—

मनु २४ का जमाना था। आज लखनऊ मे था। रममूमि छर रही थी। अरमबर रियासत के राजा माहब की बिगडी लेखर पाँच-छ मखन भाये। राजा माहब मे अपन पाम खन क लिए बुसाया था। ४ खने प्रतिमान मर माटर और बंगला बेने की लिखा था।

मुगीजी मे बडे गिष्ट, विनीन भाब म इनकार कर दिया। निरखप करने मे उन्हें किसी तरह की कोई दुबिया नहीं हुई।

लेखिन एक गायरन भी तो उनके ममीर म मिथी हूँ थी। बिगडा उन संगों की बीरग लीगकर मुगीजी फौरन पर के मीगर पन्ने और पनी के मन को पतन के लिए कुछ इतर बंग की बात करने लगे पर जब उम्हरे भी बटन जोर के मास बही राय बी तिम पर मुगीजी पहने ही अमन कर चुके क तो मगीजी हँस पडे और मब जान गोप बी।

रममूमि छर रही थी कायाकल्प किया जा रहा था। एम ही एक प्रमग मे अहम्त्या मे खचपर ल बरा— अमीरों का एम्मान बभी न लेना बहिष्ट, बभी-बभी उमर बने मे अनी आत्मा तक बबनी पानी है।

और फिर एन दित बरी अहम्त्या अमान और अमरगिन १५ मे दिर हूँ राजमाता के पर क नीरव का उमयोग करने के लिए अनी आत्मा को बंध देनी है। बकरर बीगरी हाजर अनी आत्मा को बचा लेना बाटना है बीने ही जैम बिमय मे अमहम्त्या बरक अनी गार्डि हूँ आत्मा का दित मे पा लेने का पय किया था।

कमिन् मुन्दीजी भी जानते हैं कि यह कार्य रास्ता कोई मंजिल नहीं है, यह तो मैदान छोड़कर भाग जाना है।

यूहन्स आथम को मुन्दीजी सब आयमों में झेठ मानते हैं, इसलिए यही समझना चाहिए कि जब वह किमी का बैराम्य का रास्ता पर इतने दिखते हैं ता उनका उद्देश्य उस शरिफ का मान बढ़ाना नहीं होता। कर्मलेख यह है जहाँ मन्नाइया-बुपाइयों में लिपटा हुआ साधारण आरमी जीता है मरता है काम करता है। जो कुछ बनना है बिगाड़ना है यहीं पर बनना-बिपड़ना है इसी साधारण आरमी के हाथों। कर सकते हो तो इसक भीतर ताकत पैदा करो कज़ीरी बाना पहल के से क्या होगा।

मुन्दी बयबर यही बात अपन बेटे से कहते हैं।

लेकिन सन्धार यह है कि उस साधारण आरमी की तरफ से सब बेखबर है। उम छोटे आरमी की परबाह किमी को नहीं है। अब से वा बरख पहले भिकावत क लहजे में उम्होन या बात कही थी वह अब भी ठाम्ना-मापा उतनी ही गही है— आपने मुसम पूछा मैं किस पार्टी में हूँ। मैं किमी पार्टी में भी नहीं हूँ। इसलिए कि दोनों में से कोई पार्टी कुछ अपनी काम नहीं कर रही है। मैं तो उम आनेवासी पार्टी का मेम्बर हूँ जो कोतहुमास (छोटे आरमियों) की निवासी तालीम को अपना बस्तूर-उक-अमस बनाये। यह काटी रजिग नहीं है इसक पीछे एक गहरी मनाम्बा है। इन पैसवास बेकिन्कर, अंग्रेजी पड़े-लिखों और उनकी राजनीति के प्रति इस अनाम्पा का इति हास बहुत पुपता है और छोटना तो दूर, वह बराबर बढ़ती ही सयी और समय समय पर उसका विस्फोट भी होता रहा।

—वेधे कि सन् ३ के आन्दोलन क समय जब कि अपन २३ अप्रैल १९३० के पत्र में उन्होंने बेहद पीसवर नियम साहब का लिखा —

● इस पीके पर माप जाहिर हुआ कि अगर दो प्री सरी अंग्रेजी-बोबा अमहाब तहरीक के साथ है तो अद्वानब प्री सरी उसके मुन्नाकिऊ है। क़ीमी एतबार में मुनिबानिदिया और स्वरा पर जितना रुपया खर्च हुआ वह क़रीबन जाया हो गया। यह सोग सरकार क आरमी हुए, बीम के नहीं है। गैर-अंग्रेजी-बो कारोबारी और पेगबर ठबक़ा ही में इस तहरीक में जान शायी है। गैर-अंग्रेजी-बो कारोबारी आरमियों के भरोंमे मूल्य बैठा रह तो मापर इयामन तर उस आबादी लमीब न होगी।

जब मान्य है और इसके लिए सबूत और दलील की जरूरत नहीं कि सरकार कोई निष्कर्ष उस बन्ध तक नहीं करती जब तक कि उसे यह पचीन न हो जाय कि इस तहरीर के पीछे किन्ती ताकत है, ता तात्वीमबाजता जमान का उमम किनारे रहता कितना दिग्भ्रान्त है। कानून-यथा ठकीक-नेता प्रायेण और सरकारी मुसाबिमान, इन सबने जितनी मुसामाना खेहनिपत का सबूत दिया है उसही मुझे उम्मीद न थी। वह तबका अपनी खीगियन पवर्मेण्ट का इतरार प्रयत्न करने में समझता है। वह एक समझे के लिए भी अपनी आसाइन और बुगियातककी को उपमोस नहीं कर सकता। उस उसका दीन और ईमान है। वह या तो आबादी चाहता ही नहीं या उसके लिए कौमठ न देकर दूसरो पर तबिया करना ही अपनी मान के मुनासिब समझता है या वह इस ग्यास में मयन है कि जाय ही जाय आबादी मिल आयगी। कायय व बीने मन्त्र म वह उससे छाइफ रहा कायेव के बीरे सानी ' में भी उसही यही हाकठ रही। वह सचिह देन रहा है कि जो कुछ उसे मिला और जिसे अब वह अपना हर समझता है वह दूसरो के ईमान व कुर्बानी का नतीजा है। फिर भी वह इस ईसार व कुर्बानी में गरीर नग होता। यही bowditch क्रिया है और मही मातर फिर को वार फिर का दुपमन बना देता है। ●

बड़ा भयकर बिस्फोट है यह। लेकिन जब बिस्फोट नहीं मी हुआ तब भी यह बनावसा भीतर ही भीतर घुमड़ती और मपना उहर मोलनी गही। मुपीजी को सायन एन भी इस पुष्ठ बार्डबार्ड का कुछ पना नहीं है लेकिन बाव कुछ उकर है कि एक तरफ तो मपीजी अपने आन्धकार का रय विनय और बजपर जैम कोया पर याड़ा से याड़ा करके जमे जाते हैं और दूसरी तरफ कुछ है जो उनको भीतर ही भीतर सोलपना कर देता है—नतीजा, एक बजान आमी गिज्ञान बघारनेवाली एक मपीन Prig जैसा कि एव मुपीजी ने बजबर क बारे में एक बज्य बाव भीत के विनसिसे में समबाद्र टण्डन से कहा था। ही सजना है कि मुपीजी ने जात-बुझकर हमी बप में उनका चित्रण किया हो, लेकिन उनसे ग्यास मन्मानता इसकी है कि मुपीजी सखे मम से पूर मन से उन्हें हमी आन्धकारो रय में रंगार रंग करना चाहते हैं लेकिन कोई समबान हाय प्रानर उम लगीर का बोर

- १ निष्क सोइनेबासा    २ बरीक    ३ हाजरा    ४ मौसरो    ५ बय  
 ६ प्रमूख    ७ सुग-मुबिया    ८ भूख नहीं सरना    ९ दरया    १० मयनी  
 ११ हुमरे बीर    १२ प्रयत्न    १३ त्वाय    १४ मन्तनिहीन Have-not  
 १५ मन्तनिबान, Haves



बिगाड़ देता है, रंग सब घुस जाते हैं और उनके नीचे से एक फीका और बेजान मादमी झाँकने लगता है। वह हाथ जो यह जादू करता है अनजान रहा जाता है, इसलिए और भी कि वह हाथ खुद उन्हीं का है लेकिन हाँ उसका पहचानवाली ताकत मन का वह ऊपरी स्तर नहीं है जो आत्मा की सृष्टि करता है बल्कि वह नीतरी स्तर है जहाँ जीवन के कड़वे अनुभव धीरे-धीरे, लेकिन निरन्तर, अपना पहलू मोलते रहे हैं। मूर्तिकार मूर्ति बनाना चाहता है कुछ — बन जाती है कुछ ।

पञ्चमी सितंबर १९२५ को मुन्शीजी बखारम लोटे और उसके कुछ ही पहीने बाद कामाकम्प और बहकार मुन्शीजी के अपने प्रेम से प्रकाशित हुए। मगर किनाबे आपने क सिए बाँठ में वीमे तो वे नहीं और प्रेम की हालत वैसी ही थी वैसी मुन्शीजी छोड़कर गये न। किहाका कुछ तो इन घायक छ कि प्रेम के लिए काम बगबर मिलता रहेगा और कुछ यह कि किताबें छाने का महाराज हो जायगा उन्हें एक माकदार आन्नी से अपनी किताबों तक पर आये-सामे का इकरारनामा किया — काबग जमही और बरके में मुनाक का बापा हिस्ता। बरम-जे बरम यह इकरारनामा बना और इस बीच आबबनिक एम्बमाता के नाम से चार-छ किताबें भी छपी। और बम। सेफिन वीर जीम भी हो किनाब छप ता जाती थी। उर्दू का हाल तो और भी बुरा था।

यहाँ था अब तक नागए माठिपठ (दंभाभम) और चावाने हन्तो (रंगमूमि) का भी प्रकाश न हुआ था — और प्रकाश तो दूर की बात है, उनके उर्दू मन्दिरे भी ठंमार न थे। जिसे बोको ही पहले उर्दू में गये व सेफिन उनकी हिन्दी करने समय बहुत कुछ रर-बरत हो गया था और मुन्शीजी को मन्नी गयी थीका से इनकी परमन न थी कि उन पुरानी चीजों का मन्दिरे ठीक कर त बंने। चौवान हन्ती के इमरे नाग की मूनिफा में उर्दूने किया —

बयबे रंगमूमि पहले उर्दू ही में लिगी यदी भी मगर उनका उर्दू एडीमन हिन्दी एडीमन हो जाने के लीमरे तक गारा हो रहा है। हिन्दी एडीमन ठंमार करने पाग उर्दू मन्दिरे में इनकी तरमीम हो यदी कि यह इन हालत में प्रेम के वाचिन न था। इनके अमाका कई अबबाब हिन्दी में और बड़ा दिने गये। उर्दू दुबारा मन्दिरे में पामिक करना उबरी था। इनलिग पाग उर्दू मन्दिरे हिन्दी मन बर के मुनाबिक बरक दुबारा किया पा। ये करने बरमचर्वा मुन्नी दूक बाग बर्वा मेहर हकमापी का बेहर मन्तून है कि उर्दूने इन बात का करने जिम्मे किया

इन काम के मुबाबदे को मेहर मेहर पाए से मुन्शीजी की पाड़ी-की

बेसुल्छी भी हुई लेकिन और, जैसा कि उनके १२ अगस्त १९२५ के पत्र से बाहिर है, मुंशीजी ने 'रंगभूमि' का ससक्रियता पार ली पर कर दिया। जब इरादा है गोष्प आश्रित्य भी भव खु, छलम हो जाये। मेरे लख किये न होगी। दाख इसाबत छापने को तैयार है। क्या कहिए उर्वु की इस सर्वबाबापी को। बीगाने हस्ती १९२७ में और गोष्प आश्रित्य १९२८ में देर-सबेर दोनों ही किठारें सुष पुरा करके छप तो यही सेकिल उनका मुआबबा मुंशीजी को घायब उतना भी नहीं बचा बितना उन्होंने मसबियों की मकस करबाई सेहर साहब को दिया बा।

हूँ मस मिला लेकिन उसमें भी लंपी मारनवाले अपनी इरकत से बाब न जाये।

एक सज्जन से जिन्होंने रंगभूमि पर और मुंशीजी के संपूर्व कृतित्व पर कीचड़ उछासना अपने पीछन का लक्ष्य बना लिया बा। उनका नाम अबब उपा ध्याय बा। बहु गणित के बाबमी ने और इन लेखों से जो उन्होंने 'रंगभूमि' की कपालकिया करने के उद्देश्य से लिखे यह भी स्पष्ट है कि उन्हें अपने गणित का अपब हो गया बा। समपदेबता ने उन्हें बिपुपक बना दिया है लेकिन इससे कनि इन कार कर सकता है कि रंगभूमि पर बिपुपक की उछलक उसकी कलाबाबिया भी अपनी जगह रखती है।

बार-बार इन महापय ने इसम कापी है कि बा कुछ भी बहु लिख रहे है बहु उनके सन्ने स्वतत्र डेपरहित बिचार हैं लेकिन तो भी बिस्वास नहीं होगा कुछ तो इतकिए भी कि बार-बार इस बीचकी इसम जाने की पकरत पड़ रही है। लेकिन इतनी ही बात नहीं है। बिच तरह यह हमछा दिया गया और बिच बड़े पैमाने पर यह मोर्चेबन्दी हुई उससे गुमान होता है कि पकर कुछ बाल में कासा है। बुलाई १९२९ में दिसंबर १९२९, बरबर छ महीने तक इन महापय ने सरस्वती में अपना राब गाया — एक लेख यह सिद्ध करने के लिए कि रंगभूमि बीकरे क बीनिटी प्रेयर की मकस है और दूसरा लेख यह सिद्ध करने के लिए कि प्रमाथम टास्यटाय के रिखरेषमत की मकस है। लेकिन पद इतने से उतना भी नहीं भरा तो उन्होंने बनारस के समासोचक में और अन्य कुछ पत्रों में वही अपने नाम से और वही छप नाम से अपना यह बमियाज जारी रक्का और जब इनने से भी पेट नहीं भरा तो कुछ ही समय बाब 'कायाकस्य' के निरल्लने पर उनको भी समेट लिया और यह दिखाने की कोशिश की कि कायाकस्य हास केम के इटर्मल सिटी की मकस है। जहाँ पुर नहीं लिख बने वहाँ दूगरों से किगवाने में भी पीछे नहीं रहे। इनकी मट्टी प्रेरणा के बिना साहित्य के स्वाभ्य की ऐनी

बिन्दा कम ही रूप में जाती है। समय में नहीं जाता कि इन द्वेष का कारण क्या हो सकता है विशेषतः जब वह गणित की दुनिया के मातामी से और माहित्य से उन्हें कम ही प्रयास था। लेकिन बिना कि पठित दुबारेवास मार्ग से माध्यम हुआ आशा के लिए कुछ कारण उन महागाय के पास था। उन्हीं दिनों जब कि मुनी प्रेमचंद साहित्यिक सप्ताहकार के रूप में गंगा पुस्तकमाला में काम कर रहे थे और रंगभूमि छप रही थी भी सबसे उपाध्याय अपना एक उपन्यास लेकर मुनीजी के पास पहुँचे गंगा पुस्तकमाला से छानने के लिए। मुनीजी ने उसे पढ़कर सम्झौता कर दिया। एक नये महत्काराणी सेलक के लिए ताल्ल होने का यह कुछ कम कारण नहीं था।

पहले तो उन्हें रवीन्द्रनाथ की भाषा की फिरफिरी पर बिनिये फेवर का प्रभाव दिखायी दिया फिर रंगभूमि पर बिनिये फेवर और भाषा की फिरफिरी दोनों का। इसके बाद तो फिर उन महागाय ने अपनी बात मिला करने के लिए जो-जा शक्ति प्राणायाम किया वह देखने योग्य है। सबसे पहले तो उन्होंने यही मानने से इनकार कर दिया कि रंगभूमि का नायक मूरदास है। बन्धुन मूरदास ही हिन्दी-साहित्य का रंगभूमि की सबसे बड़ी देन है और बटुनो ने इसको कहा भी — उस समय भी और बात थी। लेकिन इन महागाय को यह बात नहीं दिखायी थी और उन्होंने इसी और इति दोनों के बखतब की अवहेलना करते हुए लिया —

इसमें सन्देह नहीं कि प्रेमचंदजी ने मूरदास को ही रंगभूमि का नायक स्वीकार किया है। पर बाद निबन्धना सुष्ठु न बिनिये का इसका मानन स्वीकार किया है प्रमाण भी दिया तो कम आरमी का जो कम से कम साहित्य मर्मत के रूप में नहीं जाना जाता।

रंगभूमि का नायक चाहे जो हो इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है कि बिनिये और सोशिया ही रंगभूमि की जान है। मुझे इस बात का पूर्ण विश्वास है कि रंगभूमि के लेखे भी कुछ पढ़नेवाले मिलेंगे जो इसके बेजल बिनिये तथा सोशिया के ही अंग पढ़ेंगे और गप माय छोड़ देंगे। कौन जाने ऐसी कोई मनपसना तो सब तक नहीं हुई लेकिन जहाँ तक पना चलता है सबसे उपाध्याय जी का यह विश्वास बाकी भ्रम पूर्व और निराधार है। आ भी हो, उन्हें तो अपनी बात मिला करनी थी और इसके लिए वह हर तरह की मनमानी ठीक-मसौद करने के लिए बमर बने हुए थे। क्या बार ने अपनी पुस्तक को जो नाम दिया उर्दू और हिन्दी दोनों ही सम्करणों में उसका माध्य भी मूरदास के बलिष्ठ और जीवन-वर्गन में ही मिलना है लेकिन बिनिये कायों कर द्वेष की माड़ी बड़ी हो उन्हें बमर नायक बाकी भी न निबन्धना देनी

कोई आश्चर्य नहीं। पर हुआ इस बात का है कि शूरदास को रंगभूमि से निर्वासित कर देने के बाद उसका जो सौँडहूँ बच्चा उसकी समानता भी बेचारे उपाध्याय की बैनिटी फ़ेयर से नहीं सिद्ध कर सके। हाँ कीचड़ उछालने का श्रेय जरूर उनके हाथ लगा। अब उपाध्यायजी इस दुनिया में नहीं हैं और मुसीबी भी सिवार चुके हैं लेकिन रंगभूमि है और बैनिटी फ़ेयर भी है और जो भी चाहे दोनों को मिटा कर देना सकता है। मगर उससे क्या उपाध्यायजी के इन बीजबपिठीय समीकरणों को देखकर बिस्तुतः वह मना जाता है जो बाजीगर को मँह में से गोधे पर पोसा भिकाऊरी देखकर—

- बैनिटी फ़ेयर का जार्ज आसबर्न —रंगभूमि का बिनय
- जर्वात् जार्ज आसबर्न —बिनय
- और भी संक्षेप में आसबर्न —बिनय ●

या

- बिनय —आसबर्न + शबिन का बहुत कम भाग
- सोफ़िया —अमीकिया + रेबेका का बहुत कम अंश
- इन्दु —रेबेका का बहुत कम अंश
- शूरदास —जान सेबक —अमीकिया का पिता
- महेन्द्रकुमार —राहन + जोसेफ
- शांगुडी —सरपिट
- रानी जान्हवी —आसबर्न के पिता के चाठीय उच्च विचारों का स्वरूप ●

या प्रेमाश्रम को रिजर्वेशन की छाया सिद्ध करते हुए यह बीजबपिठीय समीकरण —

- मेहनूइन्द्र — (जानसंकर + प्रेमसंकर + मायासंकर)  $\times \frac{1}{2}$
- परम्यु अमिकतर — मेहनूइन्द्र का कुछ हिस्सा — जानसंकर
- जानसंकर — (मेहनूइन्द्र + कीजेरेटर + जोतदुक + मोबाइरोइ + छिमम्यत)  $\times \frac{1}{2}$
- प्रेमसंकर — (मेहनूइन्द्र + क्रिस्टसाइ + मबातइ)  $\times \frac{1}{2}$  ●
- मायासंकर — (मेहनूइन्द्र + एक विद्यार्थी)  $\times \frac{1}{2}$  ●

यह सब तमाशा देखकर हमी भी मानी है रोना भी जाना है कि इन पागलानों की बकबात को कभी सम्झीर आभाषना भी मममा गया था। सम्झीर आका बना जानकर ही तो पूरे छ महीन तक यह बीड एक अकेल मास्वती म छानी रही और व्यापक चर्चा का विषय बनी? चर्चा करनेवाले या तो खुद भी इतने अज्ञान थे कि उन्हें हम प्रजाप में कुछ सार दिखायी पडा या इतने बुद्धि प्रमी कि एक बनी हुई प्रतिष्ठा पर बीचड़ उछाला जाने बखबर उन्हें उसमें रम दिन रहा था। जो भी जान ही इसमें न तो उनकी मुग्धि का परिचय मिलना है न बिबेक का। कुछ अज्ञान नहीं कि इन संगठित अभियान के पीछे कुछ सोचा का दृश्य रहा हो। हम अभागे देश की आज भी जा हासल है उसका देखने हुए यह भी अज्ञान की बात न हापी अगर इसके मूल में आनिबाद का विषय भी बाम करता रहा है।

इसे विदिति का एक ब्यय ही कहना चाहिए कि जिस समय प्रेमाधम का रिडरेवान की छाया निड करने का यह मन् हो रहा था उसी दिना रिडरेवान के लेखक टास्मटाप क देश में प्रमाधम का अनुबा हुआ था। और ताप बही बनी म अज्ञान हीनवाली प्रेमचर की पहली दिनाद थी।

कहना न होया कि इन गरमी म सुगीरी के मन को दापन पोडा परुषी — जिनकी हम बात में नहीं कि उन पर ऐसा बुद्धि आक्रमण किया गया उठती हम बात में कि उसका विरोध में कोई प्रतिबाद का स्वर क्या नहीं उठे। आग्रिकार सुगीरी को गद ही अपना मर्वाडा की रसा करने क लिए मद्रज हाता पडा। उस समय कुछ मिर्षों में रिहायती स्वर में उनमें रहा भी कि बाद हम बहर्षा का सवाल म ही क्यों माने है। कहना आमान है लेकिन जब कोई आउमी तरीकन मुंह पर गापी है रहा हा और बार-बार दे रहा हो और बार आनिमा के मानन है रहा हा और बार बार आनी उन कालिया का मडा में रह हा और उनमें म एक भी माई का माल लमान हो जो उनकी हिमायत में पडा हुकर उन गापी केनेवाल में पूछे कि आग्रिकर क्या तुम यह सब बाही-उबाही बक रहे हा उस बल भी अपने उठत का बनाव रखता जिनो परिदत का हा काम है और सुगीरी इतिहास नहीं ब। दरप ही अपना का भापी बनना कौन जाना? दूरात बोई बालुता या सुगीरी क खुद रहने में ही गामा थी लेकिन जब बाई नहीं जाना तो सुगीरी का खुद बालना पडा और बही ताप ठीक भी था। उन बल खुद रहन का मद्रज यह भी लगया जा सकता था कि सुगीरी का पहल बमबार है इतिहास खुद है बोरी दक्षी मरी है इतिहास मूत्र म बात मरी निरक रही है। एमी हापन म सुगीरी मना बम खुद रहन। और वही बात उठने समकण टपन में बही, बरबा रम भाउ मंडाद म — दूरात बोई कुछ कगना भी तो नहीं!

चारों तरफ से बौछारें पड़ रही थीं — रंगमूमि बैनिटी केयर की मकल है, प्रेमायन रिबरेकशन की मकल है, कायाकस्य इटनस सिटी की मकल है, बिस्वास नाम की कहानी इटनस सिटी की छाया है, आनूपज नाम की कहानी हार्डी की एक कहानी की मकल है, हँसी नाम का लेख जो जमाना में मुंशीजी के नाम से छपा था मराठी के एक लेख का अनुबाव है।

एक साज ही इतनी सब चोर्टे वरबस कुछ बूझ ही सकेत करती है। लेकिन जिसके मन में चार नहीं है, वह क्यों बरने लगा। मुंशीजी ने साज को जांच क्या साझ-साझ सारी बातें सिधीं। सार्व १९८२ वि के समालोचक में प्रेमचन्द्रजी की प्रेम-खीला का उत्तर देत हुए उन्होंने लिखा —

कई साल हुए नागरी प्रचारिणी पत्रिका में किसी मराठी लेख के माबार पर एक हिन्दी लेख प्रकाशित हुआ। मुझे यह लेख बहुत अच्छा मालूम हुआ। मैंने उसका टूटा-भूटा अनुबाव उर्दू में करके जमाना में हँसी के नाम से छपा दिया। जमाना के संपादक को उसके अनुबाव होने की इतना भी वे री। मेरा अभिप्राय यह कदापि नहीं था कि मैं उस मराठी या हिन्दी लेखक के यत्न का अनहरण करूं। इस तरह तोच-सोच करने से कीर्ति नहीं मिलती। कीर्ति बहुत ही दुर्लभ वस्तु है और मैं इतना बड़ा मन्त्रबुद्धि नहीं हूँ कि इपर उपर से तन्मि करके अपनी कीर्ति बढ़ाने का प्रयत्न करूं। हँसी नामक लेख भी मैंने छिपाकर नहीं किया। छिपाने की जरूरत ही नहीं थी। जिस महीने में मूक लेख हिन्दी में प्रकाशित हुआ उसके बाद एक ही महीने बाद, उसका अनुबाव उर्दू की सर्वोत्तम पत्रिका में हो गया। मैं इतना उस वक्त भी जानता था कि जमाना का हिन्दी पाठको में काफी प्रचार है। इसलिए अगर उर्दू लेख में मूक का हवाला नहीं दिया गया तो यह Omaklon कहा जा सकता है अपहरण नहीं।

मुंशीजी को नीचा दिलास के लिए कैसे-कैसे बड़े मुर्दे उखाड़े जा रहे हैं — यह पूरे बाउड बरस पुरानी सन् १४ के आठमिफ दिना की बात है जो यरुबयक फिर जवान हो गयी है। सयोग से इस प्रसंग के दो छत अब भी मौजूद हैं जो मुंशीजी न जमाना के एडीटर को लिखे थे। पहले छत में जिस पर तारीख नहीं है मुंशीजी ने लिखा था —

हँसी पर एक मजमून हस्त कायदा खानए छिद्रमत है। मजमून नामुद्माल है। अभी असल मजमून ही पूरा नहीं पाया हुआ। जब वह पूरा हो जाये तो उसका उसका दूराप हिस्सा भेज दूँ।

दुसर छत में जो २ मई १ १४ का है उन्होंने लिखा —

हँसी का बडियः जखर लिगुंगा। नागरी प्रचारिणी पत्रिका में वह सिलसिला

अभी खत्म नहीं हुआ। अगर अब हरेक मंजर म दो-तीन सदा मे जाया नहीं निकलते। पूरा निकल जाये तो जमाना के पाँच-छ मजरा का समाप्ता हो जाय। मीने ठकुमा नहीं किया है सिद्धं कलम मे किया है।

● लेख क भाव भाषा और टीसी से बिलिग होगा है कि किसी म्यूमी

कहने मे लिया है विमल मेरे कोई रचना पड़ी ही नहीं। उनमे मेरा भाषण है कि इसका एक बार रीम रगकर रगभूमि पड़ जाइए। विमले बैदिनी फ्रेजर और रगभूमि बाता की मीर की है बहु कमी ऐसी बेनुकी बात लिख हो नहीं सक्ता। बैदिनी फ्रेजर साममान पर हो, रंगभूमि अमीन पर पर है बहु रगभूमि। उहा प्रेमाथम पर रिखरेकान का प्रभाव। इसक विषय में यही कहना है कि अमी मीने रिखरेकान नहीं पड़ा है और अगर बिना उनके पडे ही प्रेमाथम म रिखरेकान के भाव मा पय है तो यह मेरे लिए गौरव की बात है। अमी विमल उहा का बहन कुछ किरण और मेरे भाषा और विचारों मे उषकटोकि क लेखको जैसी बहन-मी बाउं भावेंगी। भाषा मा अच्छा पुस्तक बनोगे यही मेरी किसी पुस्तक मे मिलनी चुकती बात उम्मी। कायप यही है कि मैं कान फाट जीवन मे लग्या हूँ पुस्तका से नहीं और जीवन मा संसार म एक है।

समानाचार के भाग २ मख्या ३ म गुनाब महाराज म रगभूमि की बर्षा करने हुए किया है कि इसपर बैदिनी फ्रेजर का कुछ प्रभाव है। हा सक्ता है।

लेकिन मीने बैदिनी फ्रेजर स्यू ? ३ में पठा या और रगभूमि म्यू १९२४ म लिगी इससे बैदिनी फ्रेजर क भाषा का इनने लिमें पन म मबिग उना मुनिम है, विमल क मेरे लिए बराबि मेरी मेमोरी अच्छी मती। जो बीब मँजिर है बहु मौलिक रहेंगी। उसकी मौलिकता को कोई सिदा नहीं सक्ता। विमल रचना पर बरसां भाष सोड़ी मी है और बनेने का गुन बगया ग्या है उमे माव को रसितनाहीम भाषाक सिग मती सक्ता। ● म्यू म फेया लिया गया है मुगीयो को लेकिन उन्ट कोई फरकहट नहीं है हा दुग है। अगर उम दग क माप माप भाष-मीरक भी है और भाष-मि-बास। फिर का डर। मुगीयो बरकग को सोइ-नाइकर निरम जाये है।

● मा गुं जाम्पास-म-माट बहू-ना उन्द नहीं है। मी इसम या तरत म ति मीने इस उगापि की बनी अनिताया नहीं की।

समान कब क इसी अत्र म बानु इकरानासकी म मेरी भाभूमि कमत



कहानी के प्लॉट का टामस हार्बी के एक गल्प से सावुस्प दिखाया है। हाँ सावुस्प अबतक है। टामस हार्बी को जो बात सूझ सकती है, वह किसी दूसरे लेखक को क्या नहीं सूझ सकती? कहानी के प्लॉट में कोई ऐसी विस्मयलता नहीं है जो हिन्दी के लेखक के लिए असुझ हो। हार्बी भी आदमी ही था कोई देवता न था। और फिर ऐसी बटनाएँ जब हम निरय ही जीवन में भिन्नती हैं तो हमें क्या कुत्ते ने काटा है जो टामस हार्बी से उधार लेने जाते। ●

और फिर पल्ले-बल्ले मुन्नीजी ने रहा कसा—

महाँ मुझे एक भ्रम का निवारण करना जरूरी मामूम होता है। जब हम अपने किसी सहकर्मी को अपने से जाने बड़ते देखते हैं तो संभवतः मन में एक कुदरेद-सी होती है। उसे किसी तरह की बुराई की इच्छा होती है। शायद कुछ माग समझते हों कि यह बुराई का बीड़ा हमसे बाजी मारे लिये जाता है और हम पीछे रहे जाते हैं, इसे किसी तरह रोकना चाहिए। उन महाजनों से मेरा निश्चय है कि यह अमागा बुराई का बीड़ा नहीं पुपता चुराएँ है। तीन साल और हों ता पूरे पचास का हो जाय। उस क्रम बिसते हुए तीस वर्ष हो गये।

इन्ही दिनों सुधा के आस्विन १ ५ तुलसी संवत् के अरु मे सिद्धीमुख नाम के राजम ने एक लेख लिखकर यह दिखाया था कि विरवास की विरवास कहानी हाल केन क उपायस इटर्नल सिटी की छाया है। श्री अक्षय उपाध्याय पहले से कह रहे थे कि कायाकल्प इटर्नल सिटी पर आयापित है। इन दोनों बातों को एक हा में समेटते हुए मुन्नीजी ने सुधा-संपादक दुलारेसाह मायब क नाम एक बिट्टी लिखी या लिखीमुख क लेख क अंत में प्रकाशित हुई। उधमे मुन्नीजी ने लिखा था—

● हमारे मित्र पं अक्षय उपाध्याय तो कायाकल्प को इटर्नल सिटी पर आयापित बता रहे हैं। मि लिखीमुख ने उनको बहुत अच्छा जबाब दे दिया। मैं अपने सभी मित्रों से कह चुका हूँ कि 'विरवास' लेखक हाल केन क 'इटर्नल सिटी' क उस अर्थ की छाया है या वह पुस्तक पढ़ने क बाद मेरे हृदय पर अभिपत हो गया। मैंने पहले बार में यह कहानी लिखी थी। वही से वह प्रेम प्रसाद में आयी। मैंने प्रकाशक को अपने पत्र में स्पष्ट लिख दिया था कि यह कहानी 'इटर्नल सिटी' की बिट्टी छाया है। अतः प्रायः सभी मित्रों से कह चुका हूँ। विषय की जरूरत न थी और न है। मेरे प्लॉट में 'इटर्नल सिटी' से बहुत कुछ परिवर्तन हुआ गया है, इसलिए मैं अपनी भक्तों और कोटाहियों को हाल केन जैसे संसार प्रसिद्ध लेखक क लसे मड़ना उचित न समझता।

इटर्नल सिटी प्रसिद्ध पुस्तक है। हिन्दी में उसका अनुबाव हुआ चुका है।

अनुवाद हा बुकन क बाद मीने कहानी लिखी है। भीष्मपदत भी पामीराम न ही मुझसे इन पुस्तक की प्रशंसा की थी। अपना अनुवाद भी गुताया था। उन्हीं से पुस्तक मँगकर मैं साया था। ऐसी रंगा में मोटी बुद्धि का आदमी भी समझ सकता है कि मैं बिज संसार की घोषा बना नहीं चाहता था। जिस हद तक मैं खणी हूँ, उस हद तक मैं सिव बुका। कौन ऐसा आदमी होगा या हिन्दी में छापी हुई किताब से मिलती-जुलती कहानी लिखे और यह समझे कि वह मौलिक समझी जायगी। फिर भी मरी कहानी में बहुत कुछ अंग में है। चाहे वह रैपम म टाट का जाइ ही क्यों न हो। ●

लौर, मुंघीजी इन सब कीचड़बाजी से काउरी बराग बचकर निकल आये — दो-एक मझे आ लग गये व उन्हें बग्न मे भी बाछा। पीछे छो कुछ आचारों उनकी हिमायत में भी मुनामी की जिससे उनके भाँयू कुछ पँछे। एये ही एर पत्र का उन्पत्त इतजवापूर्वक करत हुए मुंघीजी ने अपने बोस्त सेहर हबगामी साहब को मित्रा —

मुकरमी मुजी एजबहापुर साहब का सत्र भी बेता। उसकीन हुई। आप साहबान का प्रयास विष्मूलक पुस्तक है। इलाहाबाद म एक बाह्यण पार्टी है। मजब उपाध्यायजी उसक हाथ में कठपुतली बने हुए हैं। उन्पटांग बाग कहकर मुझे बदनाम कर रहे हैं। रपमूमि और बैनिटी फ्रेयर में जर्त मर भी मुनासिबत नहीं है। और प्रेमायम को रिजरेक्शन के ममानिक' बतलाना ता हूँ दर्ज बँहूणगी है। मैंने आज तक रिजरेक्शन पढ़ा भी नहीं हाकिंजि उसकी टारीऊ बहुत मुग बुका हूँ। ऐसी ममानिक' जैसी उपाध्यायजी रिजलाते हैं कटीब-कटीब सभी किताबा में है। आप क्तरमाते है कि बैनिटी फ्रेयर में एक आदमी प्रकत-सकत अंधेजी बोल्ता है इसी से रंगमूमि में एक बयाबी बाबू साने गये। इन दास्य को यह भी लबर नहीं कि बंभासी बाबू क्यों साने गय उनके बजुद का मंजा क्या है। एमीसिया को आप सोक्रिया स मिस्त है। हास कि सक्रिया का असल मिसेज एनी डैसेट है।

इसमें एक नहीं कि अगर इस टोपी-उछाल-आंदोलन का उद्देश्य मुंघीजी के बिस का बुलाना का तो इसमें उसे पूरी सफलता मिली। बाकी तो वह मूठ की इमाज भी ही कै बिग ठहरती। साल छ महीने में ही वह पयी और अगर कही कोई छोटी-मोटी बुर्जा बच रही थी तो वह उस रोज बह गयी बिच रोज अगल ही साल हिन्दुस्थानी एकेडमी ने रंगमूमि को वर्ष की सर्वश्रेष्ठ इति का पुरस्कार दिया।

कहानी के प्लॉट का टामस हार्बी के एक गल्प से सादृश्य दिखाया है। हाँ स  
 अबल्य है। टामस हार्बी को जो बात सूझ सकती है वह किसी बुरे लय-  
 क्या नहीं सूझ सकती? कहानी के प्लॉट में कोई ऐसी विचलनता नहीं  
 हिंदी के लेखक के लिए असुझ हो। हार्बी नी आपसी ही वा कोई बरता -  
 और फिर ऐसी घटनाएँ जब हमें मित्य ही जीवन में मिलती हैं तो हमें न  
 में काटा है वा टामस हार्बी से उधार लेन पात। ●

और फिर बल्लै-बमाते मुचीजी ने रखा क्या—

यहाँ मुझे एक भ्रम का निवारण करना जरूरी मामूम होता है।  
 अपन किसी सहवर्गी को अपन घ भागे बड़ते देखत हैं तो संभवतः  
 बुरदम-सी होती है। उसे किसी तरह नीचा दिखाने की इच्छा होती है।  
 लोग समझत हों कि यह कक वा लौंडा हमसे बाजी मारे लिये जाता  
 पीछे रहे जाते हैं, इसे किसी तरह रोकना चाहिए। उन महापयों से न  
 है कि यह अभागा बल का लौंडा नहीं पुपना खुर्यट है। तीन साल  
 पुर पचास का हो जाम। उसे इत्तम जिसत हुए तीस बर्ष हो गय।

इन्ही दिनों, मुषा के मास्विन १ ५ तुकसी संवत् के अंक में  
 के सञ्जन ने एट लख छिपकर यह दिखाया वा कि प्रमर्ष की वि-  
 हास केन के उपन्यास इटर्नल सिटी की छाया है। यी अबब उ  
 स यह रू म कि कायाकल्प इटर्नल सिटी पर आपाठि है।  
 को एक ह। में समरत हुए मुचीजी न मुषा-संपादक दुमारेलाक माप-  
 बिट्टी सिधी वा सिनीमुख के लय के अंत में प्रकाशित हुई। -  
 लिखा वा—

● हमार मित्र प अबब उपाध्याय तो कायाकल्प की इटर्नल  
 रिता बठा रहे हैं। मि सिनीमुख में उनकी बहुत बच्छा जब  
 अपने सभी मित्रों से कह चुका है कि बिरबास केबल हास केन  
 क उस अघ की छाया है जो यह पुस्तक पढ़ने के बाद मेरे हृदय प  
 मने पहले बार में यह कहानी लिखी थी। वहाँ स यह प्रम  
 मने प्रकाशक का अपने पत्र में स्पष्ट लिता दिया था कि यह क  
 की बिदूत छाया है। अपने प्राय सभी मित्रों से यह चुका है।  
 न थी और न है। मर प्लॉट में इटर्नल सिटी से बहुत कुछ  
 इसलिये मने अपनी मसों और कागाहियों का हास केन पैठ  
 न गले मरुता उचित न समता।

इटर्नल सिटी प्रसिद्ध पुस्तक है। हिन्दी में उषा

मगर तैर यह सब तो लगा ही रहा है। बुल करने से कोई शयरा नहीं। कौन है जिसकी बरगोई करनेवाला नहीं है। यही दुनिया का तमाचा है। मुझिया कर अपने घर बैठो और काम करा। कहते हो जिसे जो कुछ कहना हो। मच्छा होता कि इतना भी न उलझते। लेकिन कैसे। आदमी सब कुछ सह सकता है इराज पर, ईमान पर चोट नहीं सही जाती। छोड़ो भी जो हुआ सा हुआ। भाये की शिक करो।

इसके कई बयों से सहजक इलाहाबाद से आ- निकाल रहे थे— महिलाओं की पत्रिका के रूप में— और उनका बराबर तहाडा खुला था कि मुंशीजी औरतों की हिम्मी से सम्बन्ध रखनेवाली बननी बेहतर है कहानियाँ उन्हीं को हैं। मामूरप कहानी माबुटी म छोटी तो उसके छोटे ही सहजक ने २५ अगस्त १९२३ को उलाहने का एक पत्र लिखा—

मुझे आपने एक जकरी बात कही है। वह यह कि माबुटी की तुम्हारी संख्या में मामूरप पाँचक आपकी जो कहानी छोटी है उसे फिर वहाँ न देखकर आप और मं मंरे होते तो हमसे बिलेप उपचार की संभावना थी। यह सब है कि मैं आपको उतना पुरस्कार न दे सकता जो आपको माबुटी से मिलना होगा। मही छोटा पर मेरा खयाल है उपयोगिता प्रचार की दृष्टि से भी बाद ८ मही छोटा पर मेरा खयाल है उपयोगिता की दृष्टि से बाहे आ- की मोड़ी ही प्रतियाँ ही छोटी हों यह कहानी इसके लिए बहुत मीरू थी।”

बहुत ठेक व्यवहारखुलाक आदमी का और मही उसने मुंशीजी की कसबोर मस परकी थी। बात मुंशीजी को रूप गनी और उन्हींने फिर बरसों नाये जीवन की कहानियाँ “माशगर बाद में ही लिखीं। दैते को सेकर सोड़ा-बहुत मसमुदाक भी जब-जब हुआ। लेकिन यह बात मुंशीजी के मन में मच्छी तरह जम गयी थी कि ऐसी कहानियों के लिए बाद ही सभम मच्छा मामूम है—जिनके लिए वह कहानियाँ लिखी जाती हैं उनके हाथ में पहुँचती तो हैं। और वायद प्रेमचन्द को औरतों तक पहुँचाने में बाद का भी मच्छा खासा हाथ रहा है।

मुंशीजी के मरने पर उपाध्यायजी जो उस समय पेरिस में गणित का अध्ययन कर रहे थे अपने मित्र ब्रह्मपूरुषानन्द को लिखा—

‘इस दुःखद समाचार ने मेरे हृदय को मय ढाका में रो उठा क्योंकि मेरे हृदय में एक कसक रह गयी। मैंने प्रेमचंद के सब प्रयत्नों का अध्ययन किया था और मैं भसी-भाँति उनके मृत्यों से परिचित था। वास्तव में हिन्दी भाषा का एक स्वप्न टूट गया हिन्दी का सर्वश्रेष्ठ कहानी लेखक उठ गया आज हमारे उपन्यास सम्राट का देहावसान हो गया। परन्तु उसकी अमर कृति की ध्वजा सदा फहराती रहेगी। मैं आज निस्संकोच भाव से कह रहा हूँ कि अपनी लेखनी के द्वारा आज तक हिन्दी का कोई भी दूसरा लेखक प्रेमचंद की तरह प्रतिष्ठ नहीं हा सका। भाषा प्रेमचंद की बासी-सी बन गयी थी। उसे वैसे चाहते थे मचाते थे। मानव हृदय का ज्ञान भी उन्हें बहुत था। मेरा पूर्ण विश्वास है कि उनकी कृतियों में अमर साहित्य की सामग्री है।

यह परचाताप का स्वर है अपने ही भुग्न बंधन-करण के शमन के लिए। बहुत शुद्ध हृदय से निकला हुआ भी हो सकता है लेकिन व्यक्त है सब। उस समय तो जो भाव समना था वह कम ही गया।

मगर खैर यह सब तो ठमा ही रहता है। बुल्ल करने से कोई शय्यता नहीं। कौन है जिसकी बन्गोई करनेवाले नहीं हैं। यही बुनिया का तमासा है। मुझिया-कर अपने घर बैठे और काम करो। कहने दो जिसे या कुछ कहना हो। मच्छा होगा कि इतना भी न उलझते। भक्ति कैसे। आरमी सब कुछ सह सकता है इरजत पर, ईमान पर चोट नहीं सही जाती। छाड़ो भी जो हुमा सो हुमा। आप की क्रिक करो।

इपर कई बयों से सत्यम इसाहाबाद से चाँद निकाल रहें हैं—महिकामों की पत्रिका के रूप में—और उनका बराबर ठाढ़ा चला जा कि मुसीबी औरतों की जिन्दगी से सम्बन्ध रखनवाली अपनी बहतीयन कहानियाँ उन्हीं को दें। आमूपण कहानी माधुरी में छपी तो उसके छपते ही सङ्गल मे २५ अगस्त १९२१ को उलाहने का एक पत्र लिखा—

मुझे आपसे एक खरूरी बात कहनी है। वह यह कि माधुरी की तुमरी संस्था में आमूपण धीरे-धीरे आपकी जो कहानी छपी है उसे यदि वहाँ न देखकर आप चाँद में भेजे होते तो इसने विशेष उपकार की संभावना थी। यह सब है कि मैं आपको उतना पुरस्कार नई सकता जो आपको माधुरी से मिलता होगा। प्रचार की दृष्टि से भी चाँद ८ मही छपता पर मेरा खयाल है उपयोग की दृष्टि से चाँद की सोझी सी प्रतियाँ ही छपनी हों यह कहानी इसके लिए बहुत मौजू थी।

बहुत ठेक ब्यवहार-दुखल आरमी का और यहाँ उसने मुसीबी की कमजोर नस पकड़ी थी। बात मुसीबी को लम गयी और उन्हीं फिर बरसों मारी जीवन की कहानियाँ 'माधुरी' चाँद में ही लिपी। जैसे को लेकर थोड़ा-बहुत मनमुटाब भी खर-खर हुआ। लेकिन यह बात मुसीबी के मन में मच्छी तरह जम गयी थी कि ऐसी कहानियों के लिए 'चाँद' ही सबसे अच्छा माध्यम है—जिसे लिए वह कहानियाँ मिली जाती हैं। उतक हाप में पहुँचती तो हैं। और चापद प्रेमचन्द को औरतों तक पहुँचाने में 'चाँद' का भी मच्छा खासा हाप रहा है।

बहरहाल मुंशीजी लखनऊ के अपने पहलू आवास-प्रवास के बाद पहली वित्त म्बर १९२५ को बनारस पहुँचे और नवम्बर के महीने से निर्मला कम्पन चाँद में निश्चलने लगे। साक भर बार चाँद प्रेस से ही पहली बार १९२७ के आरम्भ में वह पुस्तक के रूप में प्रकाशित हुई। तब तक उसे चाँद के द्वारा महिमाओं में इतनी अवर्द्धत लोकप्रियता मिल चुकी थी कि अपने के साक भर के अन्तर उठका संस्करण समाप्त हो गया।

और इसमें एक नहीं कि औरत की जिन्दगी का बर्द बिल तरह इस किताब में निबुद्धकर आ गया है। बीसा मुंशीजी की और किसी किताब में मुमकिन न हुआ न भाग न पीछे। समाज के पालिम डकोसके केन-वेन की महसुसे बेबा की बेबा रमी और निपट अकेसापन अनमेक ब्याह की गुलियाँ बर गुलियाँ — सब कुछ बीसे जाग पड़ा बोस उठा इस किताब में।

देखिए, निर्मला के ब्याह की तैयारियाँ हो रही हैं —

बाबू उदयमानुभाऊ का मकान बाजार बना हुआ है। बरामते में सुमार के हपीड़े और कमरे में बर्तों की सुइयाँ बक रही हैं। सामने नीम के नीब बड़ई बार पाइयाँ बना रहा है। धपरैक से हलवाई के लिए भट्ठा खोला गया है। मेहमानों के लिए अलग एक मकान ठीक किया गया है। मह प्रबन्ध किया जा रहा है कि हरेक मेहमान के लिए एक-एक चारपाई, एक-एक कुर्सी और एक-एक मेज हो। हर तीन मेहमानों के लिए एक-एक कहार रखन की ठबबीब हो रही है। अभी बारात आने से एक महीन की देर है लेकिन तैयारियाँ अभी से हो रही हैं। बारातियों का एसा सत्कार किया जाय कि किसी को खाना हिछान का मीका न मिले। वे कोम भी माह करें कि किसी के मही बारात में गवे थे। एक पूरा मकान बर्तनों से भरा हुआ है। चाय के सेट हैं नास्ते की उपरियाँ चाँद छोटे पिछास। जो लोग नित्य साट पर पड़े हुनका पीठ रहत थे बड़ी उत्तरता से काम में लगे हुए हैं। वहाँ एक आदमी को जाना होता है पाँच बीड़ते हैं। काम कम होना है, हुस्सड़ अधिक।

बड़ा बत्साह है बाबू साहब के दिव में लेकिन उनकी बीबी कस्याबी इसमें पूरी तरह उनके साथ नहीं है। उसे बुनिया का ठनुर्बा रयादा है। कहती है—  
 जब से ब्रह्मा ने सृष्टि रची तब से आज तक कभी बरातियों को कोई प्रसन्न नहीं रहा सचा। उगँ दोष निकालने और निन्दा करन का कार्र न कोई अबसर मिल ही पाता है। जिस अपन पर सूची रोदियाँ भी मयस्सर नहीं वह भी बारात में में आकर तानाशाह बन बैठता है। ठक गुणबुहार नहीं। साबुन टक सेर का पाने नहीं से बटोर लाये बहार बाव नहीं मुनसे साकटेनें पुर्मा दिनी है, बुसियों में राट

मम हूँ चारपाइयाँ डीली हूँ, जनबासे की बमह हुआबार नहीं। अगर यह मौका न मिला तो और कोई ऐब निकाल लिये जानिये। भई, यह ठेस तो रंडियों के लगाने छावण है हमें तो धारा ठेस चाहिए। जनाब ने यह साबुन नहीं भेजा है अपनी बमीरी की धान रितावी है, मानों हमने छाबुन देला ही नहीं। ये कहार नहीं बमभूत है जब दैयिए धिर पर सवार। लासटेमें ऐसी भेजी है कि जालें बमकने छपती हैं, अगर बस-नाथ दिन इस रोतानी में बैठना पड़े तो जालें पूट जायें। जनबासा क्या है बमाने का भाव्य है जिस पर चारों तरफ से लोके आते रहते हैं।

धिर भी मेरी पट भी मेरी। उसी का नाम बापटी है।

बहुरहास बाबू उपममानुसाल के उत्साह का ठिकाना नहीं है। लेकिन उन्हें पता नहीं है कि बिधि उनमें सिध्द कैसा प्रबंध रच रही है। बाबूसाहब एक गुडे के हाथ जिसको उन्होंने कभी सजा दी भी मारे जाते हैं। और जमके मरते ही उनके घरवालों की दुनिया बदल जाती है। जहाँ माठों पहर कचहरी-सी लगी रहती थी वहाँ अब साक उड़ती है। वह मेला ही उठ गया। जब लिकानेवाला ही न रहा तो जानेवाले जैसे पड़े रहते। बीरे-बीरे एक महीने के अन्तर सभी भाबे भरीने बिधा हो गये। जिनका बाबा या कि हम पानी की जगह जून बहानेवाला मं है वे ऐसा सरपट भागे कि पीछे फिरकर भी न देखा।

लड़ने-शले धिर जैसे पीछे रहते उन्होंने भी जालें फेर लीं। स्थिति के अन्तर को न समझते ऐसे भोके वह भी न थे। परा मुसाहिबा हो लड़ने के बाप का — ठेठ कायस्थ आदमी लुट्टि, सबीस जैसे कि मुधीजी ने अपनी बिरादरी में न जाने कितने दैने होने —

● बाबू माऊचन्द बीवानजाने के सामने आरामकुर्ची पर तग-बड़ंग लेटे हुए हुकठा पी रहे थे। बहुत ही स्वूल ऊँचे छद के आदमी थे। ऐसा मामूम होता था कि काला बैब है या कोई हब्दी अजीका से पकड़कर आया है। धिर से पैर तक एक ही रंग था — काला। आपकी घर्मी बहुत घटाती थी। दो आदमी सड़े पंखा मल रहे थे उस पर भी पछीने का तार बैबा हुआ था। आप आबकारी के विभाग में एक ऊँचे जोहदे पर थे। पाँच ही रुपये बेतन मिलता था। ठेकेदारों से जूब रिखत सेठ थे। ठेकेदार घराब के नाम पानी बेबे चौबीसों बटि बुकान लुनी रहे आपकी लुघ रजना काड़ी था। धारा कानून आपकी लुधी थी। जैसे पक्का मुसलमान पाँच बार नमाज पढ़ता है, जैसे ही आप भी पाँच बार घराब पीते थे।

बाबू साहब ने पंथि भी को देखते ही दुर्घी से उठकर कहा—अस्बाह आप



हैं। माइए माइए, धम्य भाग! बरे कोई है। कहीं चले गये सब के सब भगड़ू गुरदीन छकौड़ी मबानी रामगुलाम कोई है? क्या सब के सब मर गये? चलो रामगुलाम मबानी छकौड़ी गुरदीन भगड़ू। कोई नहीं बाकता सब मर गये।

तीन चार मिनट के बाद एक काना आत्मी सांसता हुआ आकर बोला— सगकार, इतना की नौकरी हमार कीन न होई। कहीं तक उचार-बाड़ी से भी साईं। मांगत मांगत बेपर होइ गयेन।

भाऊ० — बको मत आकर कुर्सी लाओ। अब कोई काम करने को कहा गया तो रोने लगता है। कहिए पंडित जी वहाँ सब कुसक है।

पंडित जी — क्या कुसक बड़ों बाबूजी अब कुसक कहीं। सारा घर मिट्टी में मिल गया।

इतने में कहार न एक टूटा हुआ पीड़ का सन्तूक लाकर रख दिया और बोला — कुर्सी-मेज हमारे उलझे माहीं उलझ है।

भाऊ — अब और कैसे मिट्टी में मिलेगा। इससे बड़ी और तीन विपत्ति पड़ेगी। बाबू उदयभानुलाल ध मेरी पुरानी वास्ती थी। आरमी नहीं हीरा था। क्या दिल था क्या हिम्मत थी (बाँसे पोंछकर) मेरा तो जैसे वाहिना हाथ ही बट गया। सामे बैठा हूँ तो और मुँह में नहीं जाता। उनकी मूरत माँकों के सामने लड़ी रहती है। मुँह बूठा करके उठ जाता हूँ। किसी काम में दिल नहीं लगता। माई के मरने का रंज भी इससे कम ही होता। आदमी नहीं हीरा था। ●

कितनी देगी है मुंशीजी ने यह कपल सीखा अपने समाज में जो बालकूल के रूप में निबुड़कर यहाँ आयी है। फिर नजर उठायी है उभर मिली है यह चीज। जीवन के एक अंग का जिन्दगी भर का अनुभव है यह जो एक बरस की तरह हुए हा गया है इस क्षण में — सड़क नभे पाँच पड़ने जा सकते हैं चौका-बर्तन भी अपने हाथ से किया जा सकता है, बरत-भूटा लाकर निर्बाह किया जा सकता है शोरपड़े में दिन बाने जा सकते हैं लेकिन यकती बन्दा घर में नहीं बैठायी जा सकती।

आखिरकार निर्मला का बही सपना सब होता है जो किसी दिन उसन देसा था — सामने एक मरी सहूँ मार रही है और वह नदी के किनारे नाव की घाट बैग नहीं है। सपना का समय है। जैसे-जैसे किसी भयंकर अन्ध की भाँति बढ़ता चला जाता है। वह मोर बिस्ता में पड़ी हुई है कि कैसे यह नदी पार होगी जैसे पर पहुँचनी। रो रही है कि रात न हो जाय मही तो मैं जेनेनी यहाँ बैठे रहूँगी। एकाएक उस एक सुन्दर नीका घाट की ओर जाती दिगयी देती है। वह गुगी से उछल पड़ती है और ज्योंही नाव घाट पर आती है वह उस पर चढ़ने के लिए बढ़ती

है और ज्योंही नाब क पटरे पर पैर रखना चाहती है उसका मस्साह बाल उठता है—तैरे लिए यहाँ जगह नहीं है! वह मस्साह की लुत्तामर करती है उसके पैरों पड़ती है रोती है लेकिन वह कहे जाता है—तैरे लिए यहाँ जगह नहीं है। एक खण में नाब खुस जाती है। वह पिस्तान-बिस्तानकर रोने लगती है कि इतने में कहीं से आवाज आती है— ठहरो ठहरो वह नाब तुम्हारे लिए नहीं है। मैं जाता हूँ मेरी नाब पर बैठ जाओ। मैं उस पार पहुँचा हुआ। वह मयमीत होकर इधर-उधर देखती है कि यह आवाज कहीं से आयी। पाड़ी देर के बाद एक छोटी-सी डोयी आती बिज्यायी देती है। उसमें न पान है न पत्तवार न मस्तुक। पैन फटा हुआ है तलत दूटे हुए, नाब न पानी मरा हुआ है और एक भादमी उसमें पानी उलीच रहा है। वह उच कहती है—यह तो दूटी है यह कैसे पार छेमी? मस्साह कहता है—तुम्हारे लिए यही भेजी गई है आकर बैठ जाओ। और निर्मला की घावी मजबूरन एक पचास बरस के तुहाम् बर बाबू तोतापम से करनी पड़ती है। बाँका सवार बूब लूहू टट्टू पर सवार हुना कब पसन्द करेगा। निर्मला की बधा उसी बाँके सवार की-सी थी। लेकिन बूसय उपाय भी तो न था।

पर मैं बड़े-बड़े लड़के हैं, जिनमें से एक सबसे बड़ा खुर निर्मला की उम्र का है—और एक भरब मनद है जिसे निर्मला प्युटी आज नहीं मुहाठी पानी कि प्रलय का हर सामान मौजूद है।

● रकिमनी बेबी का स्वभाव सारे संसार से निराला था यह पता लगाता कठिन था कि वह किस बात से खुप होती थी और किस बात से नापब एक बार जिस बात से खुप हो जाती थी दूसरी बार उसी बात से जस जाती थी। अगर निर्मला अपने कमरे में बैठी रहती तो कहती कि न जाने कहीं की मनहूसिन है, अगर वह कोठ पर चढ़ जाती या महारियों से बातें करती तो छाठी पीटने लगती— न आज है न घरम तिगोड़ी ने हुआ भूल पायी! अब क्या कुछ दिनों न बाजार भावैगी।

निर्मला को लड़कों का बटोरपन अच्छा न लगता था। कभी-कभी पैस देने से इन्कार कर देती। रकिमनी को अपने बाम्बाप सर करन का अवसर मिल जाता—अब तो माधकिल हुई हैं लड़के काहे को जियेगे। बिना माँ के बच्चे को कौन पूछे। रपयो की मिठाइयाँ ला जाते थे अब बेंके बेंके को तरसते हैं।

निर्मला अगर चिड़कर किसी दिन बिना कुछ पूछे-ठाछे पैसे दे देती तो बेबी भी उसकी बूसरी ही आलोचना करती—इन्हें क्या लड़के मरें या जियें। इनकी बला से। माँ के बिना कौन समझाये कि बैटा बहुत मिठाइयाँ मल जाओ। आमी-गयी तो मेरे सिर पायनी इन्हें क्या। ●

प्रत्येक कि एक दोपारी तकबार भी जो हर एक काट करती थी।  
उपर अंधेड़ डब हुए तातापम को डिक्र है कि जबत भीभी को क्योंकर तुम  
रखें। दोन्नों से समाह-मजबिरा होता है ता एक साहब एक मस्तीर मुन्ना बत  
काते हैं—

रंगीसिपन का स्वाँग रबो यह बीला-जामा कोट पैंको तंजेब की बस्त मचकन  
हो चुपटबार पाजामा नके मे सोने की खंभीर जड़ी हुई, सिर पर बयपुटी साज्र  
बैया हुआ बाँलों में सुर्मा और बालों में हिला का टैस पड़ा हुआ। तोंद का पिचकना  
भी बरूटी है। दोहरा कमरबन्द बाँयो। पाठ तकलीफ तो होगी पर मचकन  
सब उठेगी। खिबाब मैं का बूंगा। सी-मचास गजमें याद कर लो और मीरे  
मीके से घेर पड़ो। बाँलों में रंग मच हो। ऐसा मालूम हो कि तुम्हें दीम और  
भुनिया की कोई फिक्र नहीं है बस जो कुछ है श्रियतमा ही है। खर्चीमरीं और  
माहस के काम करने का मौका हुँडते रहो। राठ को शूठमूठ घोर करो— चोर  
चोर— और तकबार केकर मकेके पिक पड़ो। हाँ जरा मौका देक लेना ऐसा  
म हाँ कि सचमुच कोई चोर या बाप और तुम उसके पीछे दौड़ो मही तो सारी  
कलई लुस जायगी और मूल्य में उलस बनाये। उम बरत तो खर्चीमरीं इमी में  
है कि हम साथे पड़े रहा जिसमें बहु समझ कि तुम्हें खबर ही न हुई लेकिन  
ज्योंही चोर भाग लड़ा हो तुम भी उलसकर बाहर निकलो और तकबार सेबर  
बहो? कही? कही दौड़ो।

निर्मला के दिक् पर यह सब स्वाँग फिटना भारी मुजबला है बहु तो मजम  
बात है इफिल तातापम ने गुर अपने दिक् के भीतर जो चोर है, उसका भी  
तो कोई खबाब हम मुन्ना के पास मही है। भाविरकर उगहें अपने ही डेटे और  
निर्मला पर एक हा जाता है। घर की बरबारी के लिए फिर और क्या सामान  
बाहिए।

इतनी सखी मामिम पासकर औरता के दिक् का मानेवासी कहानी मुंचीवी  
में इमरी नहीं किनी। पढ़नेवाले बहक उठे, रो-रो पड़े। कैसा डरकना आईना  
उगहेंने सामान के मानने उठाकर रख दिया था। हर रोड जो इनके बनमल ब्याह  
होन हैं वैधे की मजबूरी मे खबाब लड़की बहने के मये बाप दी जानी है कैतो  
उमरा क्या ह्म होता है। कैतने सब है कलना बाई नहीं। मुंचीवी ने बहु  
लिया और बहन डूबरार बहा। सखबाई और व्याप इन छोड़कर मुंचीवी का बूतल  
परम नहीं है। और इन पम में मरोनन के लिए बड़ी जगज मही है। अब मे बरीब  
गाल ही भर पढ़त उगहन मुठ नाम की एक बहानी किनी थी जिसमें उगहेंने  
पली की मोर से भात एत इरीवी रिनेनार की खबर ली थी रिगहन अपनी

बीबी के मरने पर अपनी एक बहुत ही छोटी सामी से घायी बन भी थी — जो उन्हीं के घर में पककर बड़ी हुई थी और जिसे उन्होंने पोट में लिखाया था। मंजीबी का इलाहाबाद में उनके यहाँ बचपन का आना-जाना था लेकिन वह और बात है।

निर्मला की भ्राताचारण लोकप्रियता ने चाँद के सम्पादक को प्रेरित किया कि वह मुन्शीजी से फिर कोई धारावाहिक उपन्यास इसी तरह का ले। मुन्शीजी का भी दिल बड़ा हुआ था और फिर वहाँ रोड कुर्मी सोपाने और पानी पीने की हालत हो वहाँ आमदनी की यह एक मूख्य भी जिसे हृद्य से जाने न दिया जा सकता था। नवम्बर के महीने में निर्मला का सिलसिला खरप हुआ और बीच का एक महीना छोड़कर जनवरी १९२७ से एक बुरा उपन्यास छपना शुरू हो गया। इसका नाम प्रथिया था। इसी बस्ती में एक बिलकुल नयी और ताजा चीज बनती भी ली लीये। लिहाजा मुन्शीजी ने अपने बीस साल पुराने दिवसे प्रेमा को ही बुलाय लिखने की ठानी। विधवा-विवाह की समस्या भी महिलाओं की पश्चिमा के लिए अत्यन्त उपयुक्त। चरित्र भी सब बही रहे। हूँ कमानरु में कुछ मन्तर बरकर था मया। वह छत्तीस बरस के नीबवान और सैतानिस बरस के अयेइ का बन्तर था। उन मुन्शीजी को पुर अपने दूसरे ब्याह की पड़ी थी — किनी विधवा स्त्री से। लिहाजा अमृतचय पहुँचे पूर्वा से ब्याह कर लेते हैं — जिस पर कि हाल ही में वैश्य का पोक पड़ा है। पीछे एक बड़े विधिबन्धे, बामुसी-निधिस्त्री बटनाचक में इबर पूर्वा मारी जाती है, उबर प्रेमा के पति वाननाथ मारे जाते हैं और इस तरह मीवान साऊ ही जाने पर दोनों पुछने प्रेमी अमृतचय और प्रेमा विवाह-मूक में सरा के लिए बंध जाते हैं। यहाँ वह सब कुछ नहीं है। दृष्टि प्रौढ़ हो चुकी है। बाम्पत्य में ही समाधान पा लेनेवाला मन अब नहीं है। जीवन उससे प्यादा पटिक है। अब विधवा-आश्रम बनता है। पूर्वा उसमें जाकर रहने लगती है। लेकिन दोनों को समालान्तर रीखाओं की तरह रहते हैं जो किसी विन्दु पर आपस में नहीं मिलतीं। उबर प्रेमा पीकनती स्त्री की तरह दाननाथ के साथ अपने बाम्पत्य का निबिड़ करते हुए दिन गुजार रही है। जैसा कि जीवन का कर्म है।

अभी वह नया सिलसिला शुरू ही हुआ था कि ८ फरवरी १९२७ को मुन्शीजी के पाठ बाबू विद्यन नाययन मायैव का मुकौबा आया। माबुटी की एबीटीरी के लिए, बैचन हो ली सया महीला। बंधा क्या मपि दो बाँधे।

उन दिनों मुन्शीजी आकषा बेबी पर रहते थे। मलिकबिका का रास्ता पड़ता था। दिन रात रामनाम सत्य है। घरबाओं का पीला मुहाक था। उर था कहीं बन्धे की भी मारे दूरघर के विस्तर से न लय आय। लिहाजा अब अब मुन्शी

जी के सख्तनऊ जाने का सवाल पैदा हुआ तो इस घर में रहना असम्भव हो गया। सबको लेकर जाने में यह मुस्लिम थी कि बड़ा लड़का स्कूल में पढ़ता था साल खराब होता। बुनाये लड़के को बाहर ही में एक गुजरती बकील दस्त के पर रखकर और बाकी सबको लपही पहुँचाकर मुसीबी हफ्ते भर में सख्तनऊ पहुँच गये और १५ टाटील से काम सँभाल लिया। मकान इस बार उन्होंने मारबाड़ी गली में लिया। उसी हाते में मुसीबी के घर से सगा हुआ रामतीर्थ पम्पिकेयन सींग का बफ़्टर था। बाल-बच्चे पुर्कार में बनारस से जाये और सख्तनऊ की छः साल की जित्नी मुक हुई—जिनमें से पाँच मुक्त की जित्नी के बहुत पूछनी साल रहे।

सेबिन इस बड़े तूफ़ान से कुछ महीने पहले एक छोटा-सा तूफ़ान मुंबई की खिन्ची में भी आया। घोर तो इस तूफ़ान का भी कम न था मगर टॉप टॉप किस बासी बड़ी का उबास हुआर रह गया।

खिन्चा यह हुआ कि मुंबई की मोटेराम घास्त्री के नाम से एक कहानी लिखी जो जनवरी १९२८ की मासुची में छपी। इसमें उन्होंने एक बामी कबाली बीच की खिन्ची उड़ायी थी— अपनी बीचकी जमाने के लिए वह कैसी-कैसी माया रचवा है और पीछे भंडा फूटने पर उसकी कैसी-कैसी दुर्गत होती है।

सादर रोड पर गंगा पुस्तकनाका के पास ही बिछकूक पास वहाँ मुंबई में अपने पिछले प्रवास में साक भर रहे थे एक पब्लिश घालिग्राम घास्त्री बीच की दुकान थी। यह तो मयबान ही जान (और कुर मुंबई) कि उन्होंने इन्ही बीच की कर खाका खीचा था या किसी और का या किसी का भी नहीं। बहुरालक पब्लिश घालिग्राम घास्त्री को पूरा यकीन हो गया था कर दिया गया कि हो न हो मोटेराम घास्त्री आप ही हैं और आप ही को उलील करने के लिए यह कहानी लिखी गयी है। घास्त्रीजी ने कुर ही अपने इस्तगसे में लिखा था कि मेरे कई दिनों में मेरा ध्यान इस कहानी की ओर उस समय आकर्षित किया जब मैं बीमार था और मुझे बताया कि इससे तुम्हें भी बड़ी खिन्च हुई है। परंतु कि कुर-कुर भर लोगो ने घास्त्रीजी को। कोई पटरनी धाम किसी की पीठ में कुर लमे हमें तो अपने तमाचे से मउकब है कब कब भिक्ता है ऐसा फीजट का तमाचा बेचने को। बंपल की र्पारियाँ पूर जोर-घोर से होने लपीं। पहल-बान मल-धका जान सभा। मबाहियाँ-माधियाँ बनने लपीं। उबर से मबाहों की जो मुंबई देह हुई उसमें बड़े-बड़े लोगो के नाम थे—पं बुलारेलाख मार्गब पं रूपनारयण पाल्णेय पं बडीगाध भट्ट, पं मल्लारीन धुल्ल पं बाग्यारत टामुर। बाहर से बिम मबाहों को बुछाने की बात थी उनमें पं पयसिंह धर्मा और रत्नाकरजी भी थे। जहाँ इतनी बड़ी-बड़ी तोंसे साथ हों वहाँ फिर कैसा मामा पीछा। घास्त्रीजी ने फौरन स्थानीय फौरन मबालत में मासुची के धम्पारकों

पर मानहानि का दावा ठोक दिया। मजिस्ट्रेट ने इसकासा बापर होने पर जाधे की क से माधुरी-सम्पावकों को पाँच-पाँच घों के जमानती बार्दों के धरिये उम्ब किया। मधर इसक पहूके कि सरकारी कर्मचारी बार्द केकर उनके पास जाये माधुरी के संपावकमय स्वयं अधास्त में सपस्थित हो गय — और अपने कानूनी सभाहकारों के निर्देश पर, जिनमें दो बकील थे और एक बैरिस्टर, उन्होंने एक वक्तास्त पेश की। और उसी ने सब खेक बिगाड़ दिया। समझौता होकर मामला रख-रख हो गया। खेर कम नहीं पाया।

लेकिन यह वर्जास्त देखन से तास्मक रहती है —

● मज्म दवर्जास्त मुबारिका १२।४।२८ मिनजानिव बाबू प्रेमचन्द व पंडित कृष्ण बिहारी मिश्र मुकदमा नं १४९, शाकिधाम बनाम कृष्णबिहारी मिश्र व प्रेमचन्द हस्ते बडा ५।१९ वाजीपत हिन्द मुनकसमा १२।४।२८ मुजिध स्टेसन हुजरतगंज समदास्त सिटी मजिस्ट्रेट अकनक।

मुखबिमान बजरिये इस वर्जास्त के निहायत अयब से बाहिर करते हैं —

१) यह कि जनवरी १९२८ की माधुरी के ८३२ समायत ८३५ सप्रहस्त पर मोटेराम दास्त्री माम से जो मजमून छपा है वह इस इरादे से लिखा गया था कि किसी नीमहकीम का साका लीखा जाय। इस मजमून को मुखबिमान नं २ ने मौजूदा जमाने के नीमहकीमों की हजो करने के लिए लिखा था।

२) यह कि मजमून हाजा के धरिये से मुस्तगीस क हजो करने का इरादा मुखबिमान नम्बर २ का न था।

३) यह कि मुखबिमान नं १ व मुखबिमान नं २ दोनों पंडित शाकिधाम दास्त्री को एक धरीष्ठ आदमी समझते हैं जो इम्म बैदक व संस्कृत व हिन्दी के आलिम हैं। मुखबिमान इतई यह महीं समझते हैं और न उनको यह ज्वाहिम है कि वह जीने कुछ हैं उमक जमाना और किसी मुस्त में उनका साका लीखा जाय।

४) यह कि बालों मुखबिमान इन बक्यात की मज्जी तरह से मुन्गहिर करत के लिए तैयार है जिससे मुस्तगीस के दिमाग में अपर निगी तरह का धक हो ता वह रज्ज हो जाय।

५) यह कि मुखबिमान हुजूर को मजीन दिजाने हैं कि यह मजमून मुस्त गीम के ऊपर नहीं लिखा गया। लेकिन अपर उसका खवाल है कि यह उमी के लिए लिखा गया है और मुखबिमान ने साह भी में उमके दिम को चोट पहुँचाई है ता मुखबिमान को बाहई अग्रघास है, हामाकि वह इस बात को नहीं लखनीम करते हैं कि मुस्तगीम का एसा योजना सही है ●

कही पढ़क नहीं है। हाँ घण्टाघरने इपबंध टुकड़े उतर है (जिन्हें हमने रेखांकित कर दिया है) त्रिनवा बुद्ध भी मतसब हा सकता है।

और इसम एक नहीं कि जब मुंशीजी बोपे नुस्ते की रु से उन बाण्यग को मन्गी तरह मुठहिर करने पर भावे ता उसस 'मुस्त्रगीस क रिमाघ मे अघर किसी तरह का एक सा तो बहु ख्य हो गया।

पहला काम मुंशीजी ने इस सिलसिले में यह किया कि जिस कहानी क छापने पर यह हंगामा खड़ा हुआ था उस उन्होंने बुबाघ छाप दिया और इस टिप्पणी के काम जो किसी घण्टाघरी बन्ध के मुंह बिड़ाने वैसी है से लपक क बडा कला पा सिकायत करत। अब देता हूँ लाने मर को।

इसी निर्वोप कहानी के सम्बन्ध में पण्डित पालिग्राम घास्त्री को यह भ्रम हुआ था कि यह उन पर लिखी गयी है। उन्होंने इस कहानी को लेकर माबुची सम्पादकों पर कौमदारी अशक्त में बाबा भी बायर किया था पर जब संवादकों में अशक्त को विरवास रिताया कि यह एक कुसित्त मंड पर ब्यन्ध प्रहसन मात्र है — घास्त्री जी से इसका कोई सम्बन्ध नहीं है — तो ये संतुष्ट हो गये और अब उनका यह बिश्वास है कि कहानी उनको लक्ष्य करके नहीं लिखी गयी है।

सरल कि जो लोग पिछली बार कहानी पढ़ने से रह गये थे उन्होंने भी अब पढ़ ली। छीछाबेहर में कोई कमी क्यों रह जाय। केरिज असक्त मंडे की बीड तो है सारकी का बहु लोक था इस तमाम घण्टाघर के गिर्ब लिपटा हुआ है — बुद्ध वैसी ही बीड वैसी एक बार बचपन में हुई थी जब बेल में उन्होंने बाँस की खपाबी से रामू का कात काट लिया था और जब उसकी माँ उसाहना लेकर इनकी माँ के पास आयी थी और इनक अपन कात लिखने की बापी आयी थी तो आपने बहुत ही मोतेपन से कहा था — हम तो नाऊ नाऊ लेस रहे व। या जब आपकी बोटी के लिए बड़े मारि साहब पिट रहे थे और आप बड़े सरल निष्पाप भाव से प्रेमपूर्वक गुड़ का भोज लगा रहे थे।

यह घण्टाघर बनाव क लून में घुल गयी थी और अस्मर उनकी कहानियों में घूट पड़ती है। और यों तो हस्की-मुस्की ओटें मीडा-महस बेलकर समी पर हो जाती हैं लेकिन जब कुछ छात्र बीडपाठी करनी होती हैं तो मोटेपम घास्त्री को याद किया जाता है और फिर उन्हें खुब ही मजा ले-लेकर सिधेडा जाता है।

इन पण्डित मोटेपम घास्त्री का इतिहास बताते हुए (जह भी थापर इन बाण्यग को मन्गी तरह से मुठहिर करने की गरज से।) मुंशीजी ने माबुची में लिखा —

● मुंशी प्रेमचन्द जी के उपन्यासों और कहानियों में एक पात्र मोटेपम घास्त्री



नाम के हैं। हूँसी-मजाक का आशय लेकर ही इस पात्र की सृष्टि हुई है। पिकनिक पेर्स पढ़कर ही मुंशीजी ने इस पात्र की कल्पना की है। जैसे सर राजर की कारकीर्मी पात्र की सृष्टि करके ऐडिसन व अंग्रेजी के उपन्यास-जगत में हास्यभाव बहायी है वैसे ही हिन्दी में प्रेमचन्दजी के माटेरम घास्त्री कोर्पा को हँसाते हैं।

● इस पात्र की सृष्टि पहले पहल सन् १९१२ में मुंशीजी के लिखे एक उर्दू उपन्यास में हुई। ( जलबए ईसार जो इरीय दस साल बाद बरवान' के नाम से हिंदी में छपा। — अ ) फिर ये बीरे-बीरे हिन्दी-साहित्य में भी पहुँचे। इन्हीं महापत्र की बबीस्त मामुरी पर मानहानि का दावा तक बाध हुआ। ये बड़े हजरत हैं। हिन्दी में मनुष्य का परम मम नाम की कहानी में इनका पहले पहल १९२ में दर्शन हुआ फिर 'सत्याग्रह' कहानी में १९२३ में ये साक्षात् रूप से मामुरी में पधारते और बड़े रंग स्याये। आपने १९२६ में 'सरस्वती पत्रिका पर भी कृपा की और 'निमन्त्रण' कहानी में अपने दिव्य दर्शन दिये। १९२७ में प्रेम-प्रतिभा नाम की एक पुस्तक निकली इसमें गुरुमंत्र नाम की एक कहानी है। इसमें भी मोटेरमजी की बीकी शोकी है। फिर चाँद कार्यालय से निर्मला पुस्तक निकली। इसमें भी मोटेरम जी घास्त्री की व्यवहारकुशलता का दर्शन मिला। आपके सखनऊ पधारने का सुम-संवाद पहले-पहल इमी प्रन्ध में है। सखनऊ आपके मन भावा इतिहास साक्षात् मोटेरम घास्त्री के नाम से आप सखनऊ पहुँचे और यहाँ पहुँचते से बँचक करने लगे। मामुरी ने दादा आपकी सुस्थाति लखनऊ में खूब हुई। हाल ही में साहित्य समाजोच्चक में आपके जीवन-चरित्र का एक पटल और भी बिसमादी पड़ा है। आपकी सुकीर्ति की वधाएँ अब बहुत व्यापक हो गयी हैं इसलिये सम्भव है शीघ्र ही किठी विनायकाय पुस्तक में आपके दिव्य चरित्र का बजत बिस्तर क साज पढ़ने को मिले। मोटेरम जी कारकीर्मी पेदू घत एवं अपने आंतक और यद्योविस्तार के इच्छुक बिलकामी पढ़ते हैं। आप व्याख्याता भी हैं सीडर भी बनना चाहते हैं और धर्माचार्य एवं साहित्यवेत्ता भी हैं। इधर पिछले दिना से बँचक का भी आपन अभ्यास किया है। अपनी स्त्री सीमा से आपकी प्रायः गप लड़ा करती है। 'मनुष्य का परम मम' में जब हमने आपको पहले पहल देखा तो जाना कि आप खूब खोटा रानेवाले संगीतप्रेमी व्याख्याता अथवा नम्बर के घुंटे एवं बहर्गत पेदू हैं। फिर सत्याग्रह में आपने पेदू स्वभाव का तो पता चला ही पर आपने सीडरपत्र का भी हाल मापन हुआ। प्रायः सर्वत्र आप अपने प्रयत्नों में अमरपत्र रहते हैं। अमरपत्रता आपकी विापना है। लखनऊ में आपकी बँचक कृति का जो चित्रण माटेरम घास्त्री नाम से बिलग बंध की मामुरी में छपा वह बहुत रंग लाया। सखनऊ के कई बीचों का बोला हुआ कि

मोटेराम हमी है। हमारे परिचित बंध भी यथा प्रमाद जी शास्त्री कीतरि तो एट नि हैंनी-महाक सं कहने लगे बेरिगा इम कहना की बरन-नी बाने मुस पर बसनी होती है। मीने हटिआर मे मध्याहनी की है। मी माहिस्वाचार्य होन क बाग्य अलरारपास भी जानना है और मोरो शास्त्री मे मीने बनती बेटक मी लक्षमक मे प्रारम्भ की है। पर जब उनको यह बात बतसायी यमी कि मध्याहनी तो स्थानीय बरानकुड बंध अनागित्री एव प रामभाउयन जी मे भी की है एव मध्याह्नपास के माना और उस विषय पर लेख लिखबबाल प गयनागयन बाबदेमी प्रजाबिध भी है तो वे हुंमने लगे। इन मनुष्यों मे बायुर्वेद-महल-प्रतिपाद लेख भी लिखे हैं। और, यहाँ तक तो विमोद की बात रही पर बायुर्विक बेद है कि प माहिधाम शास्त्री सबमुख कहानी को अपने ऊपर समझ बैठे और आकर अशास्त्र का द्वार सज्जयाया। और, अब तो उनको भी विरबास हो गया है कि हम मोटेराम नहीं हैं। इपर स्थानीय माणाहिष पन 'बटिक' मे मोटेराम की कलाप मे अपने मूलपर छोड़ हैं। गावर यह उनका विषय पना लपा सके। मुगी प्रेमबन्ध जो मोटेराम पर बायीक निगाह रखते हैं •

कासी बन्धाय ले-लेकर मोगीजी यह कहानी यह रहे हैं— और क्यों न कहें अब ता बेहाप निकल आय। लेकिन अब कि मुहुरना इकलाम के सामन या और उन्हें पता न था कि मैं किम करबट बैठता है उस बात भी मुगीजी को हम लेक में मका ही म्याग आ रहा था बाबयुव कल्पन की बरनब म जा जान के पोंडे से बरने के। अब एक बात बुपी की— बामबाह इम बीर मे कृष्ण बाह्यम महाह्यम मगडे का कय से किया था। उबर स गबारा की जो मची पेग हुई थी जब पर एक अबर बालने सं मत बात छात्र ही जाती है— बीस सब रोग मा मूटे हैं इन बाह्यम-शही का मान-मर्दन करन के लिए। यह एक बुपी बीर की स्वाकि बाति-उप पैमान के लिए उन्होंने मोटेराम या दूनरे किमी बरिब की मूटि नहीं की इसका विरबास उनक मन में था। अठे बाह्यम बरिबों की भी उनके यहाँ कमी नहीं है— और न बालबाब ऊँची मुंगाजी लोगों की कमी है। बात उन्हें इमान की कहनी है, बात-पाठ म उकजने से बीस बनया। लेकिन ही उन बात के कहने में किम पर बोट बायेपी, यह तो बायेपी, उतमे बर्नन का कोई उपाय नहीं है। मपनी निजी विनयी में मुंगीजी से क्या मुरीबनबाला बाबनी मिलना मुकिळ है लेकिन बिबते बरत यह किसी का सया नहीं है। समाज में जो धन्याप है, रीप-बकोसने है, ऊँच-नीच और छुट-अछुन है, उनकी तह में पहुँचना बरपी है।

समाज का यह विषय किसे किना? आज भी समाज को मुबारके के रास्ते में सबसे बड़ी बाधा कौन है? जिसके चलते हिन्दू-समाज में नापी की यह हीन

बचा है? किसके अन्याय से पीड़ित होकर करोड़ों हिन्दू मुसलमान हो गये? बिना हाथ-पैर हिराये बूसरे की कमाई पर हल्का पूरी जीमनेवालों की यह जो बन्धी-हिन्दी साधू-महारमाओं के रूप में पुन की तरह हमारे समान का था रही है वह कौन लोग हैं? बंड-नमंडल लेकर सरक-विरवासी बनना को ठगनामे कौन है?

मुंशीजी इतिहास और समाजशास्त्र के विद्यार्थी हैं और इन सब प्रश्नों का उन्हें एक ही उत्तर मिलता है — ब्राह्मण बेवता। इन्हीं ब्राह्मण बेवता ने आज हिन्दू समाज को इस बधा को पहुँचाया है और अमर समय रहते इसका उपचार न किया गया तो भगवान भी हिन्दू समाज को रखातक में जान से नहीं बचा सकते। इसलिए ब्रिटीशों के सामने उपाड़कर रखो। यह ब्राह्मण वह नहीं है जो ज्ञान का आगार वा बिनय की मूर्ति वा सरल वा सत्यवादी वा निस्पृह वा जो निर्जन एकान्त में बैठा तप करता वा जिसे पठन-पाठन और यज्ञ-याग के सिवा दूसरी किसी चीज से प्रयोजन न था। यह ब्राह्मण वह नहीं है यह टकेपंथी पंडा-पुरोहित साधू-महात्मा और इस तरह मोटेराम का जन्म हुआ सन् ११ १२ में लेकिन बीसा कि हम बेल चुके हैं उसके भी साठ-आठ बरस पहले मुंशीजी की पहली प्राप्त कथाहनि 'बेवस्यान रहस्य' में सन् १ में ही मुंशीजी का फुटार उन बुराचारी-म्यमिचारी पंडों-पुरोहितों पर गिर चुका था। पहले का परोपकारी ब्राह्मण आज ब्रिज नर्य में और ब्रिज सीमा तक परोपजीवी बन गया है और बूसरे की गाड़ी कमाई पर रबड़ी-मसाई आभता है वह सच्चे ब्राह्मण के पद से गिरा हुआ है, पणित है और उसका पर्वा प्रणय करना इमाऊ का लकाबा है।

सन् १९ १ में मुंशीजी ने अपने एक लेख 'सरर और सरगार' में लिखा था — बुद्धिमान जानते हैं कि बुराइयों की रोक-बाम के लिए कोई बीजार इतना कारगर और असरदार नहीं है जितना की मछीस का फोड़ा और सरगार में बड़ी बैरहमी से ऐसे छोड़े लगाये हैं। मसलन रेवेन्यू एजेन्ट और सकारबरम जो मछीस का निपाना बनाय गये हैं उससे सिर्फ बकीलों की बहुतायत और उनकी बैकरी का साबा उड़ना उद्दिष्ट है। डिपेन्स में भी मजदूर बज्रज के पदों में बकीला की सब छबर की है। मगर सरगार की बपड़क डिग्रीसी डिपेन्स के गम्भीर ब्यंग्य में अधिक प्रभावशाली है।

इन्हीं सरगार और डिपेन्स में इलाक़ लेकर मुंशीजी ने पणित मोटेराम की सृष्टि की और कटीब पञ्चीस साल तक अपने बमेत्रे से लगाये गता। यह भी मारु है कि मुंशीजी ने सरगार के बंग की ही अपने मिजाज के रवादा कटीब पाया और उसी मिट्टी और पानी में मोटेराम की मूर्त बनायी।

बहुत के ठकावड़े से मयी-मयी बावें नी सीटे-राम में जुड़ जाती है, लेकिन एक बात सब में समान है—उनकी भयपटी कृति ।  
 देखिए भयपटी कृति के मोग्मर्ब बाबाजी लोगों की कती लिस्वी इस छोटे से बूटकले में उफ़ाई है—

● रामचन महीर के द्वार पर एक सामु जाकर बोला—बच्चा ठेर कल्याण हो कुछ सामु पर धडा कर ।  
 रामचन ने जाकर स्त्री से कहा—सामु द्वार पर आये हैं, उन्हें कुछ दे दो ।

स्त्री बर्तन मात्र रही की और इस घोर विपदा में मग्न थी कि आज मोग्मर्ब क्या बनेगा घर में अनाज का एक दाना भी न बा । बैठ का महीना था लेकिन यहाँ दोपहर ही को अँधेरा छा गया था । उपर सारी की सारी सल्लिहान से उठ नयी । आधी महाजन ने से सी आधी जमीन्दार के प्यारो ने बचूस की भूषा बैचा तो बैच के ब्यापारी से गला धूटा बस बोड़ी-सी पाठ अपने हिस्से में आयी । उसी को पीट-पीटकर एक मग भर दाना निकाला था । किसी तरह बैठ का महीना पार हुआ सब आगे क्या होगा । ●

ऐसे में आश्रय के मारे वह बाबाजी पहुँच जाते हैं और किसान की सरस आस्तिकता जब कोई और उपाय नहीं सूझता तो बेबताओं के लिए जो बोझ-घा अँधीया निकालकर रखा है उची में से एक कटोरा आटा ले जाकर बाबाजी की सोखी में डाल देता है ।

● महारामा ने आटा लेकर कहा—बच्चा जब तो सामु आज यही खेवे ।  
 कुछ बोड़ी-सी दाल दे तो सामु का भोग लग जय ।

रामचन ने फिर जाकर स्त्री से कहा । संयोग से दाल घर में थी । रामचन ने दाल नमक उपले जुटा दिने फिर दुर्रै से पानी सींच लाया । सामु ने बड़ी विधि से बाटियाँ बनायी दाल पकायी और आकू शोली से से निकालकर मुरठा बनाया । जब सब सामयी तैयार हो गयी तो रामचन स बोले—बच्चा मगवान ने भोग के लिए कौड़ी भर धी चाहिए । रसोई पकित न होगी तो भोग कैसे जयेगा ।

रामचन—बाबाजी भी तो घर में न होगा ।  
 सामु—बच्चा मगवान का दिया ठेरे पास बहुत है । ऐसी बात न कह ।

रामचन—महारामा मेरे माम-भैंस कुछ नहीं है, बी कहीं से होगा ।

सामु—बच्चा भयवान के मग्गार में सब कुछ है, जाकर मालकिन से कह दो ।  
 रामचन ने जाकर स्त्री से कहा—बी माँगते हैं । माँगने को मीच पर भी बिना और नहीं बँसता ।

स्त्री—तो इसी शक में से बोड़ी सेकर बनिये के यहाँ से का हो। अब सब क्रिया है तो इतने के लिए उन्हें गाएज क्यों करतै हो।

धी आ गया। साबुजी ने ठकुरजी की पिंढी निकाली घंटी बजायी और भोग समाने बैठे। सब ठनकर खाया फिर पेट पर हाथ फेरतै हुए द्वार पर सेट गये। वाली बटुली और कलकुसी रामभन घर में भाँजने के लिए उठर के गया।

उस रात रामभन के घर बूझा नहीं बचा वाली शक पकाकर ही पी सी। ●

३ फ़रवरी १९२८ को साइमन कमीशन में हिन्दुस्तान की बरती पर पैर रखा-  
 और बंगारे बिछे हुए पाये । श्रीमन्नेस उसी दिन एक बेसाम्यापी हुइताक से हुमा ।  
 फिर तो कमीशन वहाँ-वहाँ गया वहाँ-वहाँ उसे जनता के इसी रोपानक का सामना  
 करना पड़ा । हर जगह लोगों की खबर पर वही एक बात था—'साइमन यो बैक  
 यो बैक साइमन' को बसिलित कंठे से निकलकर 'साइमन खबर गोबर साइमन'  
 बन जाता था । इस हज़ार, पचास हज़ार पचास हज़ार कठों से निकलकर यही  
 स्वाप्यवाची हवा में भूँक रही थी । सुमनेवालों को स्वभावतः बहु अच्छी नहीं लगी  
 और उन्होंने उसको बन्द करने के लिए कड़ी भाठी और कड़ी बोली का सहारा  
 लिया । बम्बई कलकत्ता दिल्ली मद्रास सब जगह एक ही फिस्सा था । बैचारों  
 का सोना-जायना हृयम हो गया । हर जगह हर तरफ़ उन्हें वही मीढ़ें लख जाती  
 और वही सोर कारों में बजता रहता । नीब में जी एक परबर छा सीने पर बसा  
 रहता । दिल्ली का ही कठीण्य तो है वह जिसका बिक्र जवाहरलाक ने अपनी  
 आरमकथा में किया है । कमीशन के मेम्बर एक रीज बेस्टर्न होटक में तो रहे  
 थे । रात के सन्नाटे में उनकी नींद बकबक उचट गयी । बेपनाह शोर मच रहा  
 था । पहुँच गये हृयमवादे, यहाँ भी पहुँच गये । अब चायद रात को सोना जी  
 मयस्सर न होगा ।

मगर वही ये तो महूब सिमार य ओ इस बस्त सब एक साथ हुआ हुआ कर  
 रहे थे ।

ओ हो सरकार बहादुर को अब मज़ीम हो गया था कि इन्हे का सहाय किन्हे  
 बिना काम न चलेगा । बावदाह सलामत की तरफ़ से यह कमीशन जाया है,  
 उसके साथ ऐसा बेहूदा सलूक । सबक देना पड़ेगा इन बहूगियों को किसी और  
 बजह से नहीं तो सिर्फ़ अपनी नाक बचाने के लिए ।

सिहाका कमीशन अब लाहौर पहुँचा और वहाँ भी हज़ारों लोगों ने सलाह  
 आनपठायक के नेतृत्व में कमीशन का बैसा ही खबरबस्त स्वाप्य किना तो इन्हे  
 ना जोहर बिचलाना बचती हो गया । कूब कसकर आठियों बरसायी गयी और

एक बोधीसे गोरे सार्जेंट ने आये बढ़कर लासाबी के सीमे पर अपने बेटन से ऐसा तुला हुआ बार किया कि वह फिर उसके बाव पपावा दिव न बरु सके ।

बुद्धे आबनी बे । कमबोर बे । जाना ही बा । चले मवे । केकिन बहु बार जो उस गोरे सार्जेंट ने किया था वह सिर्फ लासाबी पर नहीं क्रौम की इज्जत क्रौम की वैरत पर भी था । हमें इतना गिरा हुआ समझ किया है हम मरदुरों ने ! हमारा बून क्या बून नहीं पानी है । एक सफ़टा-सा छा मया सारे मुम्क में फिर एक वालिमि तिबमिसाहट

कुछ ही रोज़ बाव किसी हिन्दुस्तानी ने उस गोरे सार्जेंट को अपनी थोली का निसाना बना दिया । लेकिन उठने से वह आम क्या बुझती ।

वह ता बोड़ी-सी उस रोज़ बुझी जिस रोज़ भगतसिंह ने बरसेबसी में बम फेंका । बम पहले भी बहुत फेंके गये थे बाव को भी बहुत फेंके गये और देश के रहनेवालों ने उनके रास्ते को ठीक समझा हो या न समझा हो उन बहादुरों को जो इस तरह अपनी जिन्दगी के साथ खेलते थे घटा के फूल चकाने में उन्होंने कभी जोताही नहीं की । लेकिन सारे उत्तर भारत में जो मान भगतसिंह को मिसा वह और किसी को न मिसा जिस तरह उसका नाम बन्धे-बन्ध की जवान पर चढ़ गया किसी और का न चढ़ा । किसी को स्मृति को इस तरह मानों की भाका में गँबकर लोगों ने अपनी छाती से नहीं लगाया । इसलिए नहीं कि भगतसिंह की जान जान की दुसर की जान जान न थी इसलिए कि इसके पीछे सासा लाजपत राय की हत्या भी और भगतसिंह ने इस तरह जैसे उनकी हत्या का बदला किया था बेम की लाज रनी थी । भगतसिंह प्रतीक बन गया था बेम के अधिमान का साहम का

जिसको कुचककर मोरी सत्ता साइमन कमीशन का रास्ता समनम करना चाहती थी ।

और इबार उमक ही मकाबसे में बाग की अपराधेय बिहोही आत्मा एक बार फिर अपने को पहचान रही थी मगदित हो रही थी ।

लाहौर से कमीशन सपनऊ पहुँचा । वहाँ भी सब जगह मस्जिदों में बाइरतों में परो के जन्दर और तुमे मैदानों में औरत-मई बन्धे-बन्ध-जवान सब की जवान पर वही एक मूत-जगाबम मंत्र था—साइमन को बैक ।

हुनूमत भी अब हर बीड के लिए तैयार थी—बारों तरफ़ पीरक और पुइसबार मियाही लाठी बंदूक किसी बीड की कमी न थी पूरमूर लडाई के मैदान का नमना था । सिपाहियों को मनमथ अधिकार दे दिए गए थे पाहे जा करे नहीं कोई सुनबायी न थी ।

साहम दुररों पाहटों की तरह सपनऊ के रहनेवाले भी अपने दरारों में मजदूर

बे। साइमन कमीशन आया और उसकी आबमगत यहाँ भी उसी जान-बाज से हुई। लाठी भी बली जुमूम पर घोड़े भी शीकाय गये सर भी फटे लखिन लोगों के हीमले पलन न हुए। जबाहरसाह नेहक को साठिया का पत्रका तमुर्का यही हुआ और मोकिन्-बस्सम पंग तो सारी उम्र उस दिन की याद को मगजे की घबक में टाने रहे। लखिन लोगों का बमश्रम बही था एक ज्वार था जिममें सब बह रहे थे।

यहाँ तक कि लखनऊवाले अपनी बार्बाइयो को मकाज का बह हम्मा-सा पूरा देने में भी बाक न भाये जा कि उनकी छाम बीज है।

इसरबाग म मकप के कुछ बड़े तास्मुरेबाग ने साइमन कमीशन की एक घानशर पार्टी दे रखी थी। दाहर के तमाम बड़-बड़ लाय समीर उमठ आमजित थे। पुलिस ने बखी तरहू माणेबन्दी कर रखी थी ताकि पार्टी पर भी न मार सके और यज्ञ विविबन् मम्पन्न हा आये। आसपास की सड़कों तक पर जाने की लोगों को मनाही थी।

और इन तरहू इन किलेबंदी के मीशन मरकाटी तैरएवाहो की महकिल ममें थी— कि बखानक सोया की लखर ऊपर जा उठी तो बह बरा देखते हैं कि आममान में मतमिश्र गम्बारे और पनगे उज रखी है (कनबीया का पहर ही छटप लखनऊ) और उम मब मं एक तुमछस्सा सगा हुआ है, साइमन गो बैक!

मूह का मका बिमड़ गया कुछ लोगों का बेकिम दाहर सारा हुँय रहा था और उन हुँसतेबालों में मुनी प्रेमचन्द्र भी थे जो उन दिनों में २ डिसेंबर पर पाठक जी के लाल मदान में रहते थे। सारा पाठक उनकी भाँपों के आये हो रहा था। कमी कमी जोध भी आ बाता था मगर बह बस एक बगती उबाल था और मंदात्री मध्य बरुप अपने गोठे में पड़े रहे। अपनी ताकत का पता उन्हें हा म हो अपनी कमजोरी का पता खूब था। पैसा कि जब से कटीब छ मास बाद इन गाप मदान को लिले हुए अपने एक लठ में उन्हीं बहा था— नहीं मैं कनी बैल नहीं गया। मैं कर्मभोग का भावमी नहीं हूँ। मेरी रचनाओं में कई बार सलाकों बुधित किया है। सब के पास अभिव्यक्ति का अपना माध्यम होता है। लखिन बह पूरी बात नहीं है। परिस्थिति की बिबगता भी कोइ बीज होती है। कच्ची पूह म्पी है। मुद ही कमानबाले हैं काम बिदे बिना हो रोख भी खाने का डिजाल नहीं है। ऐसे में यही ठीक है कि ऐली के बैल की तरहू नुन रखी और लिल-गुकर बिगना कुछ कर मको, करी। बुरा भी क्या है सब काम मबके करके के नहीं होते। जिमने जो बन सके बही उछरा काम है।

लखिन क्रौम की बिन्दपी में देश भी मौजे आ जाते हैं जब ये सब बाने म्म



को समझाने की बलीमें जान पड़ने लगती है। जैसे-जैसे आन्दोलन में तेजी आ रही थी जैसे-जैसे संकल्प-विकल्प की ये स्थितियाँ अधिक-अधिक सामने आने लगी थी और तब पति-माली में अक्सर इस बात को लेकर बहस छिड़ती कि कौन जेल जाये और कौन घर को संभाले। इस पर दोनों एकमत थे कि एक न एक को जेल जाना जरूर चाहिए। सब क्यों संभोग जा रहे हैं तो क्या हमी सबसे छिट्टी सबसे गये-बीठे हैं। बाक-बच्च सभी के हैं। सबकी अपनी-अपनी मजबूरियाँ हैं। जैसे-जैसे लोग किलने हैं। क्या-क्या हमी जैसे भोग है, अक्रेमस्त घर में मूनी भूमि नहीं। मगर तब भी जा रहे हैं। घर में कोई बड़ा सड़का होता तो उसी को जेल भेजकर अपना कोटा पूरा कर देत। वह भी बात नहीं है। जाना हमी दो में से एक को है। मुसीबी को टिबरानी जाने न देना चाहती — घर का क्या होगा अस्सी रुपये महीने का भी तो डौल नहीं है और फिर इनकी सेहत क्या जेल जाने की है। न जाने क्या काठ-कबाड़ खाने को हैं बीमार आरामी जैसे जैसे तो जान बची है अभी रखता है परहेजी खाना बड़ी घायल ही फिर पर का मुँह देखना मसीब हो।

घरक कि इसी जैसे-जैसे में बेचारे पड़े थे और उधर मुस्त तेजी सं एक नय संपर्प की ओर आ रहा था।

और संदीबी की जिन्दगी अपने उसी जैसे-जैसे रास्त पर बनी आ रही थी — घर से नरही माचुटी बपतर, और नरही से घर। दम दम जाना पाँच-छ बस छोड़ना और वहाँ सारे दिन माचुटी के मजबाबा और भी दुनिया भर क अदम बगड़म काम (सयोग सं एक डायरी में व कुछ टीपमें दिख गयी हैं, ठीक उन्ही गिता की जब साइमन कमीशन आया हुआ था।) —

• ११ अरबरी — घरेलू-वर्गित की पाण्डुलिपि पढ़ी और उस पर रिपोर्ट दी।

मैनुअल प्रामर का एक इन्तहार लिखा।

माचुटी सिरीज के लिए एक प्रस्ताव तैयार किया।

सिरी कौहसार के दो पन्ने तर्जुमा किए।

१२ अरबरी — इतबार।

१३ अरबरी — इरीज तीन पेज ब्यान्डर किया। विचार-दाग को 'बीजर' के लिए लठ किया। बुक-रिपा के लिए कुछ इन्तहारो को छोड़ा। पूरक में काँटा के कुछ पन्नों का सघावन किया। भारत क्या कौमुदी के चित्र ब्याक डिगट मेक की भेजे।

१४ अरबरी — पूरक में काँटा के १५ पृष्ठों का संतोषन किया। बोट

सार के २ पन्नों का ब्यान्डर किया।

१५ फरवरी — एक में काटा के १६ पुष्ठा का असाधन किया। साह बेटी में भेजने के लिए बेटी बितावे आ गयी थी। टेम्प्ट बुक कमेटी के पास भजने के लयाक से उनकी विपयवस्तु देखी।

१८ फरवरी — सारे दिन उन्ही पुस्तकालयापयोर्मी पुस्तको को दयन म लया र्खा। चौन्ह थी। उनकी विपयवस्तु पयनी थी और उनका सारा ठपार करना था।

२४ फरवरी — २ देव पूज में काटा का असाधन किया।

कड़कियो के उपयोग की कई पुस्तका का साधन देन हुए थी पी साई को छत्र लिखा। बहामिया के साथ ब्याक लयाकर भारत क्या कौमुनी प्रस को सी। ●

उन्ही सब अट-पटींग कामा को देखकर आ मुजीबी पर लाव दिय गय थ और जिन्हे बहु सर मुजाव डोठे बस रह थ मिर्जा मुहम्मद अस्करी आ उनके साथ बही नबलविघोर प्रेस म काम करत थे अक्सर मजाक म बहा करते थ — देखिए बुइसीक का घोड़ा इकक और लाय थ जुने तो कैसा बनया। मेजिन जब उन्ही टेम्प्टबुको की उर्दू पर लखर बासन के लिए अस्करी साहब से बहा गया तो मुजीबी ने भी मीजा लाकर रखा बसा — मिर्जा साहब अब पूट स जोड़ी हो गयी।

टेम्प्टबुके ठपार करना ही नहीं उनका काम म लगवान का काम भी मुजीबी के मुजुर्ब कर लिया गया था और इकक सिलसिले म शरीब की अक्सर बुमरे गहरों की लाक छाननी पड़नी थी कमी बनारस तो कमी कानपुर, कमी पटना तो कमी मीनाडाक — और यह सब मापूरी के सम्पादकीय काम के अलावा। लकिन मुजीबी के बेहरे पर गिबन न थी। अस्करी साहब लिखन हैं — मीने उनको बो-नील बरग के बीगन में हमगा हँवमुक पामा। उनका बेहरा हमेगा लिखा र्खा था। कमी मुम्मा उनके बेहर पर न देला। कमी-कमी में उनस मजाक में बहना था कि क्यों साहब क्या अ पका कमी मुम्मा नहीं भाठा? क्या आप घर में भी कमी मुम्मा नहीं करत? इस पर बहु हमसा हँव देन थ। गा मापूरी का दफ्तर एक कमर में कोठ पर था मयर मुजी साहब की और मापूरी के स्टाक के कुछ साया की बैठक मेर कमरे म लय हुए एक कमरे में होनी थी। मुंठी साहब की जिम्दारिबी नेकी और हँमो-पन म उनके तमाम साथी जो कमरे म बैठे थे देख द्युग थ। उनक इहकहा की भावाक म कमरा सूज जाता था और एक रागनी-नी पैक जाती थी। जब मैं अपनी दिताव नबानिर लिख र्खा था तो उसके लतीक कमी-कमी उनको भी मुनाठा था। एक मर्तबा मीने एक मुम रिबन का लतीक्य मुनापा जो बजान बेते बसत दूर मापना जाता था और जब

उससे पूछ गया कि यह क्या हरकत है तो उसने खवास दिया कि अपने खवास की आबाद में भी मुनना चाहता हूँ कि दूर से बँसी मामूम होती है। इस छीक्रे को मुनकर मुँडी साहब इतना हँसे कि आँसों में आँसू आ गये।

निर्मला धारावाहिक रूप से चाँद में मिथककर बेहद कामयाब हुई थी फिर प्रतिज्ञा निकली तो उतनी कामयाब नहीं हुई, और जब एबन की ठैपाठी हो रही थी। निम्न मध्यम वर्ग का साहज जीवन उसी की साहज कबाएँ, उन्हीं के नैतिक-सामाजिक प्रश्न। जब एक नया अग्नि-स्फार उठ रहा था जिसका सम्पर्क बेतना को रचना को एक नया संस्कार, एक नयी विद्या देगा। अभी तो वही रात्र की दिनचर्या बफ़्तर और घर, और सबेरे-शाम कुछ क्लिप्तान-पढ़ना न कहीं जाना न कहीं आना न कोई सास मस-मुलाकात। बस वही दो-चार दोस्त थे। उन्हीं के साथ उठ-बैठ बैठ थे।

एक ठी जैसे घर में ही थे — हरिमन्दन मट्ट उमकी पत्नी और सास-बेइ सास की उतनी बच्ची कुमुम जिसे मुँडीजी बहुत चाहते थे। उठी घर से भये हुए बराबर के हिस्से में मर सोम रहते थे और उनसे घरोपा होने में बरा भी देर न लगी। बहुत भले बेहद मुहुरमती सोम थे और तब जिस वास्ती की सुक़्राठ हुए वह आज तक उसी तरह चिन्ता है और किसी भी गून के रिस्ते से क्यावा मजबूत साबित हुई। हरिमन्दन घर के बाकी बच्चों की तरह मुँडीजी को बाबूजी कहते थे उतनी पत्नी अम्माजी की बहू थी और कुमुम घर भर का गिज़ाना थी। उठी माक हरिमन्दन ने मैडिकल कासेज से प्रथम श्रेणी म प्रथम स्थान पाकर एम बी० बी० एम पाम किया था और उन्हें हाउस सर्जन बनाया गया था।

दुमरे एक हकीम साहब थे। हकीम उनका माम था वेसे से वह चित्रकार थे। पहले मुबा क स्टाफ आर्टिस्ट हा गये थे। बीस की तरह सँडे और गलने-से मादमी थे और बीमा ही मुता हुआ लया-सा दुबाका-मगमा चहरा था। अँगों में बड़ी नर्ती बड़ी पुमाबट थी। मुँडीजी पर जान दते थे और मुँडीजी भी उन्हें बेहद चाहते थे। तग भोगी का पात्रामा मषजन तुर्नी टोनी — बजा-जना स हकीम साहब ठे मुगदमान थे। गीज-जमाज के भी छापर काफी पाबन्द थे। मैडिन हैल है कि मजबूती गगरिमी या कट्टरपन उन्हें छू भी नहीं गया था। उनका मजहूज अपनी जगह पर था और मजबूती के साथ था अग्नि उगम भी बड़ा जो इन्मानियत का मजहूज है, उगव लिय भी उनके कान बहरे न थे और म रँगों में उन्हें कोई बँर दिगायी पढ़ना था। भी गज पर उनका घर था अस्मर नाम को पसे अग्नि। बच्चे भी उनके बहुत गुन रखते थे — हापी-मोड़ा डैट-अम्बर जब जो बनवाना हा जाकर बना म आधी।

तीसरे एक निगम साहब म बुधाराकर निगम। उनमें भी यही दस-तीन साल की मुकाबला थी लेकिन इतन ही दिनों में बोला की चुन सूब बैठ गयी थी। पुराने बिबुर थे। जबानी में ही पत्नी-विद्योप हो गया था लेकिन बुधारा साहब नहीं किया और म वायद कोई सम्मान ही थी। विन्दुल मकले रहने थे। बहुत ही गैर बहुत ही मीठे, बहुत ही मममगर भागी थे। माबला रंग था ममोला कद मामूली छपूरा बिस्म। इन्वहार्ड सादगी से रहते थे न पान की छत थी न सिगरेट थी। वही बुबिली कासेज में पडाते थे। लादून रोड पर मकान था। मुंगीजी मन्मर उनके यहाँ पहुँच जाते थे। दोनों में यह जो दोस्ती थी उसके लिए निगम साहब का साहित्यपरिच होना जरूरी नहीं था पर वह साहित्यपरिच थे और उनके माय बैठकर साहित्यवर्षा करना मुंगीजी को बहुत अच्छा लगता था।

जहाँ के यहाँ कमी-कमी बेदार साहब और बा-एक और मिशों को लेकर मन्मन्मि ममती। बेदार कुछ बजाने के लिए नव-कविजोर प्रेम में गौर मी हो मय थे और टेन्सटबुक कमेटियों म मन्मरी म यहाँ हाजिरी बजाने के लिए मुंगीजी म माय शीरी पर भी निकलत थे। शौकीन रैपीली तबीयत के मावमी थे बा को पण्डा बाना पहल मिया पर उस बकन तो काफ़ी मनी पीनबामे थे। इजसे टूटी फगी कहने म मपर पीने में वह बड़े से बड़े पापर म टक्कर से सकते थे। अपने और दूसरों के बहुत से बार उनकी माय से मिहाजा महुकिल जम जाती और मुंगीजी नी कमी-ममार उनमें शरीक हो लेते। इनमें वह बाठ वहाँ जो बीस-बाईस बरस पहले मुंगी बयानपायन नियम के बर पर कागपुर में उन सोहबतों म बी बिनकी रीतज मुंगी मोबतपज मबर और मुंगी दुवमिहाय सकर -जैसे सोपों की बाठ से थी। वह रय मब सब उड़ गये थे ममा उतर गया था उम इम बबी पी परी-पानिया बड गयी थी मगर और, अपना एक मजा तो उनमें था ही।

सब तो दूर की बात है, मुंगीजी को पीने का अच्छा भी न था लेकिन सोहबत में बैठने पर कमी-कमी सयाम भार ही जाप बीपी हो जाती और मुंगीजी मा मा करते हुए भी पेग को पेग चढ़ा जाते। ऐसी ही एक सोहबत में एक रोड मुंगीजी को रात भर पहुँचने में काफ़ी देर हो गयी। दरवाजा बन्द हो चुका था और पत्नी माम स ही सग छपेटे सोपी-जामती-मोपी पड़ी थी दोनों कानों में फुड़िया निकली हुई थीं। उनकी छोड़कर घर में बम बच्चे थे — बड़ी बटी और उसके दोनो छोटे भाई। उनकी भी बात लग पयी होपी। परब कि मुंगीजी को दरवाजा मुकबान म काफ़ी मुककिक हुई और दरवाजा खुलते ही मुंगीजी बच्चा पर बरस पड़े। ममा बग हुआ था।

मा सर लपेट पड़ी थी काम में बोड़ी-सी मकद उनको भी पड़ी। बटी को

बुझकर उन्होंने पूछा — बैठी घर में कोई कुत्ता बुरा आया है क्या? बैठी ने कहा — कुत्ता नहीं है अम्मा बाबू जी हैं हमको बुरा की बियाड़ रहे हैं। गायब पीकर आये हैं। मुँह से बबबू आ रही है।

यह सुनकर तो अम्मा की आँखें कपार पर चढ़ गयीं और वह उठने को हुई कि धाकर उध अम्मी तरह खरी-खोटी सुनाये लेकिन बैठी ने रोक दिया और वह भी न जाने क्या सोचकर रुक पयीं चाकर मुँह से मोड़ ली और करबट बरसकर फिर सो गयीं।

अगले दिन सबेर होने के छाय मुँगीजी की आगत-मआगत हुई और कसकर हुई। मया तो रात को ही उठर चुका था अब उस मय का सुमार भी हिरन हो गया। मुँगीजी ने कान पकड़ा कि अब फिर कमी ऐसी आम्मी नहीं करेगा।

एक पखबाय भी नहीं बीतने पाया था कि फिर वही आम्मी कर बैठे दोस्तों की महुकिस में वहाँ खयाल रहता है ऐसे सब बावों का और अब फिर वही बन्द दरबाजा सामने था और मुँगीजी दस्तक दे रहे थे और दरबाजा बन्द का बन्द था। सिद्धान्त-मरिठ पत्नी ने उन्हें सबक देने का फैसला कर लिया था — बायें वही मरदुनों के वहाँ बिनकी संगत में बैठकर

उनका बस बसता तो मुँगीजी को गायब वह रात बाहर सड़क पर ही मुजा-रनी पड़ जाती लेकिन खेरियत हुई कि अम्मा की मामी उन विनों आयी हुई थी उन्होंने अपनी मनव की मुनी बनसुनी करके दरबाजा खोल दिया। रात को मुँगीजी को तीन-चार डी भी हुई (या तो खयाल ही मये ये बावों-बावों में या मदे मे कतई बर्बास्त न थी) लेकिन पत्नी पास नहीं पटकी। हूँ अगले रोज फकार उन्होंने गूब कसकर सुनायी। मुँगीजी कान बचाय सुनते रहे और इस बार जो उगहाने क्रम आयी तो फिर छायब कमी आक पयी का मुँह नहीं मयाया।

छाहमन कमीवन को सकर देर में जो कुछ हुआ था वह तो था पहलवाना का अगाड़े में उतरकर मिटटी लेकर एक-दुमरे से हाव मिआन जैगा था असम कुरती दुरू होने में अभी बोड़ी बेर थी। हिनुम्हानी पहलवान का जी बेतरह पक गया था और गौरा पहलवान अपनी तावत के मरो में बुर घमण्ड से सिर उठाप सड़ा था और जोर-जोर से उग्रनी मासिग बस रही थी।

इन्हीं दिनों की बात है। पाड़े के दिन थे। गायब बड़े काट की सबायी आयी थी। एक रोज मुँगीजी ने बघर से सीकर कहा — आज सगरुड में गोर् वालीस हजार खया आतिबाजी और रोगनी में खर्च होना।

पत्नी बोली — किमको अन्नतु पैसा मिला है वा इन कवर बेरहमी से लर्ब कर रहा है ?

मुंठीजी ने कहा — लर्ब कौन कर रहा है ? मैं पूछता हूँ जसोगी देखने ? चाहो तो बच्चा को लेती चलो सब को रिस्तमा दा।

पत्नी ने पूछा — भाप बर्से ?

मुंठीजी बोले — हाँ क्यों नहीं पत्नीगा परीबों का परपूर्ण तमासा देना जायगा

पत्नी का समाधान न हुआ। उन्होंने पूछा कि माण्डिर इस सब के लिए पैसा कहाँ से आता है।

मुंठीजी ने कहा — जो राजे-महापते हर साल यहाँ आते हैं वे कुछ न कुछ इसीलिए यहाँ रगतें जाते हैं कि जब-जब बाइसराय और मुकरम यहाँ पमारें तो वह उनके स्वागत में लर्ब हो। और जो कमी पड़ती है वह तुम्हारे यहाँ के कास्टकारों से बसूल की जाती है ! उन परीबा के लून की कमाई कड़ा-पास की तरह माण्डिरबाड़ी में फँक दी जाती है। जिन मुस्क के आन्नी की कमाई भीमठ छः पैसे रोड हो उस मुस्क के किसी को क्या हक है कि एक-एक गहर में चामीध-चामीध और पचास-पचास हजार रुपया माण्डिरबाड़ी में फँका जाय ? जहाँ पर तन इकन को कपड़ा न हो दोनों जून बकी रोटियाँ भी न मिलें उस मुस्क के हम बेरहमी से पैसा फँका जाय और इसलिए कि बाइसराय साहब खुश होयें और इन मोटे आरमियों को खिताब दें !

और मन्नाक तो देखिए कि इन्हीं दिनों खुद मुंठीजी को रामबहादुरी का खिताब देने का एक चुफना मन्बर्नर मैल्कम हेली की तरफ से छोड़ा गया ! किसी बोस्त के मार्फत गबर्नर साहब को यह ज्वाहिर छर सीठाराम ने मुंठीजी तक पहुँचायी लेकिन मुंठीजी ने बड़ी गर्मी से यह कहकर इनकार कर दिया कि मैं तो जनता की रामबहादुरी का भूया हूँ।

लेकिन अभी तो हम माण्डिरबाड़ी का तमासा देखने जाने की बात कर रहे थे।

इसी बातचीत की री में उनकी पत्नी ने पूछा — जब स्वयम्प हो जायगा तब क्या चूसना बन्व हो जायगा। मुंठीजी ने जबाब दिया — चूसा तो बोहा-बहुत हर जयहू जाता है। यही सायद दुनिया का नियम हो गया है कि कमजोर को घहूँडार चूसे। हाँ वस है जहाँ पर कि बड़ों को मार-मारकर बुरस्त कर दिया गया अब वहाँ परीबों को आनन्द है। सायद यहाँ भी कुछ दिनों के बाद वस जैता ही हो। पत्नी ने धँका की — तो क्या कसबास यहाँ भी आर्ये ? मुंठीजी ने

प्रकाशित करवाने की युक्ति करिये। उनकी राय में यह कहानी मास्टरपीस है। •

ताराचंद राय साहब को भी मंत्र कहानी के अन्त पर आपत्ति थी। १७ अक्टूबर १९२८ को बनारसीदास चतुर्वेदी ने लिखा—

“ताराचंद राय को आपकी मंत्र कहानी बहुत अच्छी लगी लेकिन उनकी राय है कि कहानी एक बिल्कुल तमाशु का भी रबादार न हुआ पर सत्म हो बानी चाहिए।

यह सब मन की कृषी के लिए अममोस सामान था लेकिन एक लापरवाही थी और उससे भी क्या एक लकीरामान जो पीछे से दामन पकड़कर खींचता रहता था। मुंशीजी बुप्पी साबे बैठे रहे। न उन्होंने अपनी तस्वीर चित्रकारी न अपना जीवन-कृत लिखा और न किताबें ही जर्मनी भिजवायीं। बाकिरकार २७ नवम्बर १९२८ को ताराचन्द राय ने लिखा— पंडित बनारसीदास चतुर्वेदी ने एक बार मुझको लिखा था कि उन्होंने आपसे अपनी दूर पुस्तक की एक-एक प्रति मुझको भेजने का अनुरोध किया है। मुझे धेर है कि अब तक आपने मुझको कुछ खबर नहीं दी। मैं यह कहने की जरूरत नहीं समझता कि आप आधुनिक युग के सबसे महान हिन्दी लेखक हैं। आपने आज के पीछे-आपने हिन्दुस्तान को बांधी ही है। आपने हमारी मातृभूमि की जीवन-मरण की समस्याओं पर अपनी विराट् मनीषा का आलोक फेंका है। फिर अपने बारे में लिखा—

— मैं अभी-अभी बीसबेडन से लौटा हूँ जहाँ मुझे एक बड़े हाल में पन्द्रह सौ श्रोताओं के आगे भारतीय संस्कृति पर बोझने के लिए आमंत्रित किया गया था। बीसबेडन जर्मनी के प्रतिष्ठित स्वास्थ्य केन्द्रों में से है। मुझे आपको यह बतसात हुए हुए होता है कि मेरा व्याख्यान बहुत सफल रहा। दिसम्बर में मैंने राइनलैंड में बोझने के लिए आमंत्रित किया गया है।

यह क्या छोटी बात है कि ऐसे अच्छे-अच्छे लोग मेरी कहानियों को दूर देशों में पढ़ा रहे हैं? और न मुंशीजी मैं यह पापण्ड ही था कि भीतर-भीतर तो बूझकर दुप्या हो जाते और बाहर से दिगबाते कि पीते कुछ हुआ ही नहीं। मन्वरवाल का लखे विलमे के कुछ ही राइ बार २० अगस्त को मुंशीजी ने अपने अन्तरंग रागा विदपूजन की को त्रिकसे उन्हें दाह का भय न था लिखा— आपको यह सुनकर आनन्द होगा कि मेरी कई कहानियों के जापानी भाषा में अनुबाद प्रकाशित हुए हैं और वहाँ की सर्वप्रथम पत्रिका में प्रकाशित हुए हैं। जापानी जनता ने उनका वही सम्मान किया है जो टाम्पटाय और पैगोव की कहानियों का करने है। पत्रों में गूह चर्चा रही।

युव सम्भारनाम को उन्होंने लिखा — आपने मेरे बारे में जो सीहार्दपूर्ण बातें कही हैं उनसे मैं बहुत पौरुषान्वित हुआ हूँ। किसी लेखक के लिए सुधीयों की प्रशंसा से अधिक काम्य वस्तु और क्या हो सकती है। जापानी जनता से परिचित करवा जाना मैं अपने लिए सम्मान की बात समझूँगा पर मुझ मम है कि जीवन का मैत्र विभजन उन्हें न भायेगा। अन्त जापान को देने के लिए एक बरीब हिन्दी लेखक के पास क्या है।

बिच्छटी-पत्री का सिद्धसिद्धा फिर साक पर कुछ डीकत रहा। ३ सितम्बर १९०९ को मुंबईजी ने दायद सम्भारनाम की आपत्ति का समाधान करते हुए लिखा — इधर साबुये और बिराला भारत में मेरी जो कहानियाँ छपी हैं उनमें से कोई आपकी अच्छी लगी? हो सकता है कि उनकी उद्देश्यतामकता आपको अच्छी न लगे लेकिन जब तक हिन्दुस्तान विदेशी मुद्र के नीचे पड़ा करतू रहा है वह कला के उच्चतम सिद्धांतों पर नहीं पहुँच सकता। यहीं पर एक मुत्तम बेश और एक आजाद बेश के साहित्य में अन्तर का जाता है। हमारी सामाजिक और राजनीतिक स्थितियाँ हमको विषय करती हैं कि हम जब भी मौज्जा पायें कुछ लिखा दें। भाषना जितनी ही प्रबल होती है रचना उतनी ही सिद्धा-मरक हो जाती है। मौजवान लेखक इस मामले में सबसे बड़े पापी हैं। अपने मुक्कोचित जसाह में वे कला के सिद्धांत धूक जाते हैं। वे क्षम्य नहीं हैं क्या?

और फिर ५ दिसम्बर १९२९ को सम्भारनाम ने लिखा —

● जापान के लोग आपकी रचनाओं के बड़े प्रशंसक हैं। खेद यही है कि उन्हें आपकी रचनाएँ अपनी भाषा में पढ़ने के लिए काफ़ी नहीं मिलती।

डा. टैमोर इस साक से बार-बार आये थे अमेरिका जाते हुए और अमेरिका से लौटते हुए। मैं प्रायः हर रोज उनके साथ रहा क्योंकि वह सदा से मेरे ऊपर असाधारण रूप से कृपातु रहे हैं। लेकिन, मेरी कुछ बुद्धि में, जापान में आपकी रचनाओं का मान डा. टैमोर की रचनाओं से अधिक होता। पहली बात तो यह है कि जापानियों ने मुझे का सिद्धा बहुत कुछ पना है और वे उनके सिद्ध कुछ पाना चाहते हैं और फिर आप में अपनी एक बात बात है जो हिन्दुस्तान के दूसरे किसी लेखक के पास नहीं है और जो जापानियों के स्वभाव को सतत दौर पर जाती है। ●



कमय उपाय्याम की उच्छम्कूद, फिर कुछ और महानुमाओं की पैठरेबाबियाँ करीब सास भर तक और फिर पीड़ित मोनेराम सास्वी की अनमूनी लड़ाई—  
 तरह कि इस ब्राह्मणशेही का बंध करने के लिए कुछ उद्य नहीं रक्षा गया।  
 लेकिन वह भी एक ही नीमड़ सक्तजान आरमी का जो न तो मारा ही था वका  
 इस म्यूहु-रचना से और न जिसने एक दिन के लिए अपने रास्ते से इपर-उपर होना  
 स्वीकार किया।

बाकिर जब कोई उपाय न पसा तो एक बंभाकी ब्राह्मण-कुमार ने किसी  
 अज्ञात बीबी प्रेरणा से मुंसीजी को धारित देने का बीड़ा उठवाया। इस ब्राह्मण  
 कुमार का नाम था इच्छुकुमार मुक्तोपाय्याय। दुबभा-सा आरमी लीबसा  
 रंग मंभा मुँह बड़ी-बड़ी आँखें अंग्रेजी बैच एक अजब ससोतापन का केहरे  
 पर जो बेलते ही आँखों में लुब जाता था। बेइन्तहा सिगरेट पीता था। होंठ  
 काले पड़ गये थे। पाटा था। हारमोनियम बजाता था। कबिताएँ गुनाता  
 था।

मुंसीजी दुनिया देने हुए आरमी थे। तमाम तरह के लोगों से उनका सावका  
 पड़ता रहता था। जिस्से-कहाती मिलना उनका काम था। आरमी के दिल के  
 भीतर उनकी पैठ थी।

इच्छुकुमार मुक्तोपाय्याय बड़े मझे में उनकी दिरी कहानी का मापक हो  
 सकता था— मगवान ने उसे सिरखा ही था क्या की पानता के लिए। लेकिन  
 वास्तविक जीवन में सप्टा और सृष्टि की भूमिकाएँ बरक गयी थीं। कदाही होनी  
 तो मुंसीजी चाहे जैसे इस पान का नचाठें लेकिन कहानी मही थी इसलिए वह पान  
 मुंसीजी को चाहे जैसे नचा रहा था। पहले उसने मुंसीजी के दिल में रंध मचायी  
 फिर उनके घर में।

एक न एक तरह की कमजोरी हर इन्सान के दिल में होती है और उमी ने  
 दिखाव से कोई एक बीब से भिन्न होता है कोई दूसरे। और दुनिया को रंधियों  
 पर नचाते-पाना बकाहार बही है जो हर आरमी की कमजोरी को पामना है।

मुंशीजी को मनु को भी उसने सूझ ही पड़ना। मामी-गामी मिलनेबास हैं इन्सान के दुम-बर्दे की बात करते हैं, यानी कि बर्देमन्द दिल तो होगा ही होगा उसी बर्दे को जगाने की जरूरत है। लेकिन बाब ऐसा सटीक बँटना चाहिए कि चित्त पिरें मुंशीजी! लिहाजा बम्बई से बिट्ठी-पत्री का सिलसिला मुक हुआ। मुंशीजी कलकत्ता में और उनकी बहानियों का प्रेमी उन बहानियों से अपने दुखी पीड़ित जीवन में शक्ति और प्रेरणा प्राप्त करनेवाला यह आदर्शवादी मयसूबक जो किसी शीमल पर अपने सिद्धांतों के साथ समझौता नहीं करता चाहता वह बम्बई में!

मुंशीजी को बिदिठ्याँ सँभालकर रखने की आरत न थी, जबाब देते थे और उत्तरित बिट्ठी बिन्दी-बिन्नी करके रही की टोकरी में। लेकिन श्रीमान् से इन श्रीमान् कृष्णकुमार मुखोपाध्याय की कुछ बिदिठ्याँ मुंशीजी के काण्डों में बिच बरीं।

समी पत्र नहीं हैं। शुरु के ही कुछ पत्र नहीं हैं। जिसके बर्तार कहना मुश्किल है कि साहबजारे ने बँगली जैसे पत्रजी भी जो बाब को इस तरह पहुँचा पढ़ना। तो भी काफ़ी शुरु का एक पत्र है जिसमें एक हज़ार मील दूर बैठे हुए इस शरीर प्रतिमाशाही दुनिया के सजाय हुए मीत्रवान ने निहायत टूटी-पूटी बाबू भंगीजी में अपनी श्रम की दास्तान लिखी थी। जैसे न होती मुंशीजी को हमदर्दी ऐसे एक मीत्रवान से। और जो भारती आपकी बीजे पढ़कर ही अपने पैरों पर सड़े होना चीख रहा है, उससे कैसे कोई किनाराकप हो जाय। यह प्रकृत बात है इसानियत से भिपी हुई बात है

कृष्णकुमार ने २८ अगस्त १९२८ को प्रथमीर नामक पत्र के पैत्र पर लिखा —

आपका स्नेहपूर्ण पत्र और तुलसीदास की पांडुलिपि मिली। आपकी शुभ कामनाओं के लिए मैं हृदय से आपको धन्यवाद देता हूँ। मैं एक ही दो रोज में आपकी इच्छानुसार मानुषी के बिद्येपांक के लिए लेख भेजूंगा। मैं पत्रिकाओं में लेख लिखता रहूँगा। मैं जानता हूँ कि साहित्यिक क्षेत्र में प्रतिष्ठा पाने का यही रास्ता है।

मित्रवर, मैं दुखी आदमी हूँ। मेरे कष्टों को समझनेवाला दुनिया में कोई नहीं है। आपकी मजूता से आज मैं आपको अपने पिछले जीवन के बारे में बताना चाहता हूँ। मेरे भीतर जो कुछ अच्छा या बुरा है (उसकी मुझे परवाह नहीं है) उसे आज आपको बतलाये बिना मेरा भी नहीं मानता। साझकर आपको क्योंकि दुनिया में मेरे पिता की बोम्ब है और उल्ट छोटी-सी मोट्टी के आप मुकुट मयि है। मैंने आपको कभी देखा नहीं है मगर पता नहीं क्यों आपकी तरह ऐसी

दिली कसिब महसूस करता हूँ। कभी-कभी मेरा दिल सबमुझ तकपठा है कि आपके आभिन्न में पहुँच जाऊँ। और भी स्पष्ट व्याख्या करें तो यह एक तरह का प्रेम है और साथ ही असीम आदर, जिन्होंने अपनी जाहू की ओर से मुझे बाँध दिया है। आज मैं अपना दिल हल्का करना चाहता हूँ और अपने सीने के बोझ का कुछ हिस्सा उस आदमी को देना चाहता हूँ जिसका मैं सबसे ब्यावा आदर करता हूँ।

साऊ झाँसा-मट्टी का बात है—बिस्कुस क्रिस्से-कहानी के रंग में रंगा हुआ जैसे किन्होंने ही सत मुंशीजी ने अपने क्रिस्सों में बकत बाहर निकले हूँगे। किन्हि मुंशीजी पूरी तरह उसके बकमे में आ गये। अपनी रचना के पाठक के प्रति किन्होंने बासे के मन में घामद कुछ साथ कमबोरी होती है। मुंशीजी पर बड़ों कच्ची का गया छा गया।

बर्ना कर्पोकर यज्ञीन कर सिमा उन्हेनि इस कहानी पर जो मुकूर्जी ने अपने बारे में लिख भेजी थी—

मेरे पिता मध्यमार्थ के एक नमर के बोटी के डाक्टरों में हैं। उनकी आम दनी बहुत अच्छी है और मैं उनका अकेला बेटा हूँ। मेरे एक चाचा भी हैं जो अच्छे खासे पैसेबासे भी हैं और निस्तंतान हैं। मैं जब छोटा-सा था तभी से वह और उनकी पत्नी मुझे बहुत प्यार करती रहीं और मैं जैसे-जैसे बड़ा हुआ मेरे लिए उनका प्यार भी बढ़ता गया। चाचा का मेरे प्रति यह प्यार देखकर सबको बिस्वास हो गया कि वह अपनी बहुत धन-संपत्ति मुझे यहीमत कर आवेंगे।

मेरे चाचा का एक मकान कसकते में था जहाँ मैं वस साऊ की उम्र से उनके साथ रहता था। उस घर से लगा हुआ घर ईस्ट इण्डियन रेल्वे के एक टिकट केकर महालय का था। हमारे और उनके परिवार में बहुत अच्छे संबंध थे। इन महालय की माग कीजिए कि उनका नाम भी अ—है, एक बड़ी सुन्दर कन्या थी जो उस वकत जब कि यह कहानी शुरू होती है सिर्फ पाँच साल की थी।

इसी तरह पूरी मनगर्भत कहानी की तीन टाइप किये हुए पत्रों में। पता नहीं मुंशीजी ने इसे मुकूर्जी के जीवन की सच्ची कहानी समझा या ताड़ गये कि बनायी हुई धारणा है। जो भी हो उन्हें एक बनी-बनायी कहानी मिल गयी और उन्होंने इसके झूठ-सच की क्या-कितना बिना किये बिना प्रीरम उते प्योँ का त्योँ लिख मारा विप्रोही के नाम से।

यह तो मुंशीजी का तुरत दान महादस्यान हुआ मगर मुकूर्जी असल अपनी देसबन्दी में था। छठों का सिलसिला बना रहा—कवि-सबे छत प्यार और भक्ति में रहे हुए, और पाड़ी-सी जाननी कविता और दर्शन की। जाल बायी पना बना या रहा था। १५ जनवरी १ २९ के रात में उगने मिरा—

आप जो कहते हैं, शायद ठीक ही हो। लेकिन पता नहीं वह कीमती चीज है जो कभी-कभी आदमी को भगवान में बिश्वास करने के लिए मजबूर कर देती है। काम कि मैं नास्तिक हो सकता मगर मैं मजबूर हूँ। जिन मुसीबतों के बीच से मैं गुजर रहा हूँ वह मुझे नास्तिक बना देती हैं। लेकिन जब मैं इसके बारे में सोचता हूँ तो कोई भी समझाकर मेरी बुद्धि को डंक देती है, और जगत् में उसी की पीठ होती है। मैं हैरान रहता हूँ कि अधिकतर आदमी क्यों सदा इतने डूरी रहते हैं। जीवन कभी सुखान्त नहीं हो सकता। उसमें अगर बुझाव है तो कठिनी ही है। अगर प्रयत्न है तो असफलता और पराजय भी है। मैं रोमांस और मर्यादा का विचित्र संमिश्रण हूँ। और इस पर मेरा कोई बख नहीं है। जब तो वह है कि न तो कोई पूरी तरह रोमांसवादी हो सकता है न पूरी तरह मर्यादावादी। सफ़्त पियर से बड़ा कोई मर्यादावादी नहीं है जिसका कहना या कि आत्मन्द और धोक के जाने-माने से जिन्दगी की चारर बुनी हुई है और एक के बिना दूसरे का अस्तित्व असम्भव है।

सब कहें आपको चिट्ठी लिखने में मुझे इतना आनन्द आता है—लेकिन आप इसे किस प्रकार ग्रहण करते हैं, मैं निश्चयपूर्वक नहीं कह सकता। मेरे विचार भी सब मूर्ततापूर्वक हो सकते हैं—लेकिन क्या मुझों के पास अपने आनन्द नहीं होते? मुझे बस सहानुभूति चाहिए। आप मेरे बारे में बहुत अच्छे कोई विचार न रखें। मैं बड़ा पापी हूँ। मेरे भीतर वीरता है। मुझ अपना एक बेबकूब रोसल जमाल कीजिए और सब आपका सोचना सही होना। मुझे अपना तारी जमाल कीजिए और सब आप मेरे साथ नैकी करें। मुझे एक ऐसा आदमी जमान कीजिए जो भैंरी रस्त में जो गया है, जिसे रास्ता बिचाने की और मरह की जबाब है। मुझे जान से और बुद्धि की जमान-दमक से बुरा है। मुझे सहानुभूति चाहिए। कोई बात नहीं अगर आप मुझसे प्यार नहीं करते लेकिन हमदर्दी मुझे आपको बेनी ही होगी।

कुछ आत्म-प्रकाशना कुछ बुद्धिवादी की बेदर्दी का रोगा कुछ काव्य और दर्शन-वर्षा—

किसी शार्पनिक ने एक बार कहा था कि हम जीते नहीं सिर्फ सपना देखते हैं। कुछ लोग क्या-सा सपना देखते हैं कुछ लोग कम। मैं पहली धेपी में जाता हूँ क्योंकि पीछे फिरकर अपनी जिन्दगी पर मजबूत आँकड़ों में कह सकता हूँ कि वह एक सुन्दर सपना रही है। काय कि मैं सदा बच्चा बना रहता और जान के पास से मैरा परिचय भी न हुआ होता। बच्चों की प्रकृतिसूत्री मुझे पागल कर देती है, जब भी मैं इस चीज के बारे में सोचता हूँ। मुझ माद आता है, मनासोल

फ्रांस में किसी जगह उनके बारे में ऐसी कुछ बात लिखी है— सारी प्रकृति धर्मन के समान उनकी आँखों में प्रतिबिम्बित रहती है, ऐसी एक बहुमूल्य पवित्रता से कि दुनिया में कुछ भी उनके लिए मन्दा नहीं है, कूड़े की टोकरी भी नहीं। इसी लिए वो बहु प्रशंसा की ऐसी व्यक्ति जमलकुत आँखों से पातबोमी की पतियों प्याज के छिन्कों और रंग के की बुम को निहारते बिस्वामी पड़ते हैं एक जगह कीमियावरी है जो प्रकृति को बपास्तारित करके स्वर्ग बना देती है।

क्याता है कि नियति के सक्ति से सरस्वती जाकर उसके इकलम की मोक पर बैठ गयी है और वह मनमाने ही खुद मुंशीजी का परिचय देने लगा है! उकर उनमें भी यच्चे का यह गुण है, तमी तो उन्हें कूड़े की टोकरी में भी प्रतिभा की मंजूपा दिखायी देने लपती है।

उसकी तो सैर बाठ न कहो वह मुंशीजी की पुरानी कमबोटी है। आँचें बिछाये बीठे रहते हैं कि कब कोई प्रतिभावान बिस्वामी पड़े और वह उसका स्वागत करें। खुद बहुत पापड़ बेठे हैं इवलिए और भी साबधान रहते हैं कि कोई प्रतिभा समय से पहचानी न जाने के कारण बुन्हला न जाय।

मुकूर्जी पहुँचा हुआ सिखाड़ी है। उसने मुंशीजी की इस कमबोटी को अच्छी तरह पकड़ लिया है, यही वह मस है जिसको दवाने से काम सपेगा।

सेक्सपियर, बजिक मनावोल फ्रांस— किसका हवाला उन बस-बस पत्रों के तर्कों में नहीं है।

बिन देते ही मुंशीजी के मन में उस नीबवान की पूरी तस्वीर दिख गयी है। अच्छे पान्दान का सड़का है। बाप पैसेवाले हैं। बापाम से बिन्दगी बसर कर सकता था। लेकिन एक मादर्स की छातिर अपने का मिटाये दे रहा है। कौन है जिसने जवानी में मुहम्बत नहीं की लेकिन फितने हैं जिनमें इतनी हिम्मत हो, इतना वैदिक बल हो कि अपने बड़ों से आँसे मिलकर कह सकें— मैं अमुक सड़की से प्रेम करता हूँ और मैं चाहता हूँ कि माप मेरा प्याह उसी से कर्य बें। नहीं मुझे अभीर पचने की सड़की नहीं चाहिए, उसकी घन-दीलत नहीं चाहिए। मैं तो इसी सड़की से प्रेम करता हूँ और इसी के साथ गुनी रह सकता हूँ। क्या हुआ जो उसका बाप परीन है और छोड़े नहीं गिन सकता। क्या बीजत ही सब कुछ है? इमानियत कुछ भी नहीं? और जब वह गुराटि नहीं राखी हुए तो सब कुछ छोड़-छाड़कर भाग गया हुआ। उस मुलामी की बेड़ी से अच्छा है यह दर-ब-दर की टोकरें लाना! सबके बूठे की नीब नहीं है पर जियरा चाहिए इनके लिए! पना-कित्ता भी अच्छा-गारा है। इबारत में कल्पापन है लेकिन सोचने-विचारने का मादा है प्रतिभा का बंगुर है

तभी कोई छ महीने बाद एक रोज बमारस से रात माया, जहाँ उन दिनों यीमान् अपने छर्म की तरफ से मिस्त्रिये की सच्चाई के तिलसिले म रह रहे थे —

हाँ इन दिनों मैं एक जपम्यास तिल रहा हूँ। नाम अभी मही सूछा। इसरा विषय आजकल के रोमांच हूँ और बोझ-सा बिक मझूर बायोल्पन का है। मैंने इतरे ही पत्रे लिख लिखे हैं कोई पचास पत्रे और लिपने हूँ। मैं उसे बापके पास भेज सकता हूँ बरतें कि आपका बत बह बहुत म घामे। लेकिन इतना मैं यकीन के साथ कह सकता हूँ कि आपका हाथ लगने से कितना सँपर आयणी इसमें कोई एक नहीं।

बात असल में यह है कि मेरे लिए अपनी साहित्यिक प्रवृत्ति को जीवित रखना बहुत कठिन है, जब तक कि मैं बिजनेस साइल में हूँ। पिछले कुछ महीनों में मुझे मही अनुर्बा हुआ है। कात कि मैं किसी दूसरी अधिक अनुकूल काइल में काम कर सकता! मगर और जब तक कि और कुछ मही है, मैं अपनी सारी एक्ति इसी काम में लगाऊँगा। बाइरेक्टर लोय मच्छे हैं। दूसरी परीघाली बह है कि मेरी एक तिहाई तनस्वाह कपड़ों की बेंट बड़ जाती है। अपने छर्म के प्रति मिथि की हैबिबल से मुझे तरह-तरह क नूट पहलने पड़ते हैं, मागिम घूट, बाइलिप घूट बघैरू बघैरू बर्ना मैं डिपार्टमेण्टों के मप्रखरों का प्यान अपनी और आकषित नहीं कर सकता जिसका मयबक होगा कि मेरे छर्म को आइंर नहीं मिलेगा। यह सबमुब बड़ी मयामक बात है। हाँ मेरे घरीर को लूक किफनी कुराक बिक रही है लेकिन मेरी आत्मा मूली है। कैंटी बिस्बयी है कि जब मेरी आत्मा तुल रहती है तो घरीर मूला रहता है और जब घरीर तुल रहता है तो आत्मा मूली है। कैंसे समझाई आपको। मेरी बिस्बयी में मजे तो हैं पर तो भी मैं खुशी हूँ क्योंकि मजे तो जैसे से मिलते हैं मगर मुल आत्मा से। जब मैं बिग नर की कड़ी मसकठ के बाब अपने क्वाटैर को लौटता हूँ मेरा बिस्तर, मेरी बंधीरें मुझे काटवी है। मेरा तुला कमउ फिती बनबान सैतान की तरह मुस पर मोलियों की बीछार करता है और मैं इर के मारे क्रापकर मन ही मन बिस्ता छठता हूँ—ऐसा क्यों? ऐसा क्यों? और मुझे अपने बाठाबरन के अनबाग होठों से जपाब मिछता है—मेरी आत्मा मूली है!

इसी तरह लत मम्बा होता जाता है बाल बना होता जाता है। ये मुंसीबी के अपने मग की बतें हैं जो मुखोपाभ्याय मोशाइ के मुखारबिन्द से निकल रही है। बवाबा कहने की बकल नहीं है। मुंसीबी को पूब पया है आत्मा की इत मूल का। इमीमिण ती इतनी हमबरी है—और इसीलिए तो मुखोपाभ्याय मोशाइ ने कुजक बँध की तरह बबूक भाड़ी-बाग से और सब छोड़कर यह बुलवी

एक पकड़ी है। बेचारा कृष्णा! कहां होना चाहिए था शरीर को और कहां साकर पटकना तबकीर ने। कहां मिस्टर की सफाई और कहां सपन्यास का क्लिष्टता है कोई जोड़ बोलों में। कैसा तड़प रहा है। आत्मा मरी नहीं है अभी तो तड़प रहा है, बर्ना वीरों को देखो बस अपने हकने-माँके से घराब है।

बाबू वह जो सिर पर चढ़कर बोले। और फिर बंगाल का बाबू — छड़ी घुमायी और आवमी भेड़ बना।

भूमिका पूरी हो गयी थी अब असह्य कितनाब शुरू होगी।

उसमें भी देर नहीं लगी। कुछ ही रोज बाप मुंशीजी की बात मिला। कृष्णा ने सिखा था कि मैं अपनी इस नौकरी से बहुत तप आ गया हूँ संयोग से दूसरी नौकरी मुझे मिल भी रही है। तनक्याह तो कम ही मिलेगी सिर्फ़ ही रुपये मगर मैं इससे क्यावा कुछ खूँगा। छत एक ही है, ही रुपये की जमानत बेनी है जो मेरे पास नहीं है।

मुंशीजी ने घर में आकर पत्नी से कहा और इतनी अच्छी तरह उसकी बकासत की कि पत्नी भी भी पिपल गयी — ही क्या भेज देने से अगर किसी को अपने मन की नौकरी मिलती है

गरज कि बेचारी गयी और काट-कसर करके जोड़ गये अपने ही रुपये उठा लयी जिन्हें मुंशीजी ने प्रीरत तार से बन्दई भिज दिया।

रपया पावे ही कृष्णाजी सततज आ पमके — बोरिया-बड़िया सेकर। सामान काप्टी छट-बाट का था बिसका गैर्बई मुंशीजी पर बाबिब असरहुवा। एक दिन ही अठिवि महाशय घर पर रहे लेकिन घर छोटा था और घर में जकान सड़की थी और दुनिया की खबान किसने पकड़ी है पत्नी ने अबसे रोख मुंशीजी से कहा कि इन्हें बड़ी और ठहराने का बन्दोबस्त करो। मुंशीजी के पास जगह और कहां रखती थी मुंशोपाभ्याय मोसाह अबसे रोख मुंशीजी के लर्बे पर एक होटल में पहुँच गये। अब न वह जाज जाने का नाम लेते हैं न कस। रू रहे हैं वा रही रहे हैं। ऐसे नब तक चलता। मुंशीजी को बात सजने लगी कैरिन मुरीबत ने खबान पकड़ रखी थी कहे तो बीसे कहे। बारे उनको बर्ना स हटाकर अजितपुरमार बोस के यहाँ रखने का इन्तजाम हुआ। अजित बिसका घर का नाम बूझे या बराबर मुंशीजी के यहाँ आया जाया करता था। घर के छत्री लोग उसे बहुत चाहते थे। बहुत मेक आदमी था बहुत शरीर घर में बूझे मो थी और एक छोटा मारि। किनी बर्क्याप में नाम करता था अपने पर्सने की कमाई गाठा था। उसकी इतनी समारि कहां थी कि जिनी को अपने घर में ठहरा सजना मगर 'बाबूजी (घर के बर्षों की तरह वह भी उन्हें बाबूजी बटता था) की पात बीसे टाफ़ा।

और छुप्याजी बुड़ी के घर पहुँच गये और उस बेचारे को भी थोट दी। किसी को घरीबी पर तरस खाने का वहाँ क्या खवास।

मगर वह तो कम्बो खिल्लाड़ी था उतने सु जी क्या भगता। और फिर अपनी घादी की ठीयाठी मी तो करनी थी। पटने की कोई लड़की थी अमिया नाम की। उसी से सपनी-अपी थी। मगर गहने-रूपड़े मी तो कुछ चाहिए। सिहाबा इपर उमर की बातें बगानर मुँचीजी से बोटी-छिने उन्ही के नाम में उसने इस-उस सुनार से बजाव से बाझी थीं लीं।

लेकिन यह सब तो कल्ला बाद में म सिर्फ़ बेटी की घारी के बाद जो कि उसी साल पमी में हुई, बरिफ़ लुब छुप्या की शादी के बाद जिसमें मुँचीजी लीये के पिता की हँसियत से घरीक हुए। अपनी और से काझी मेंट-लौछाठ लेकर पठन गये और आपसमाजी रीठि से बिधिबत् अपने इस नये बेटे का बिबाह सम्पन्न कराके लीये।

महीने भर बाद कल्लनऊ लौटने पर घारी घालें एक-एक करके घुलने लयी। सबसे पहले तो बजाव और सुनार के लडावे आना शुरू हुए। (अपने ठगे घामे का यह फिस्मा मुँचीजी ने इपोरघात में लिखा है) बीबी के कान लखे हुए, यह कँठे लडावे बेटी की घारी के लिए तो मीने जो कुछ खरीदा उसका पैसा कब का चुका दिया गया उचार-बाड़ी मुझे यों ही तापसम्ब है। और फिर घारी का सामान मीने कल्लनऊ में खरीदा ही कितना मेरी खरीदारी तो यथाघाठर बनारस में हुई है। फिर यह लडावा किस चीज का? तब यह बात पुरी कि यह सब मुँचीजी के इस नये बेटे की करतूत थी। और अब मुँचीजी ने कि सेप के मारे उनकी बाँसों अपनी बीबी के सामने न उठती थी। और, जिसका जो देना था वह तो देना ही था और मुँचीजी महीनों तक बीबी की भाँति बचाकर बाहर ही बाहर लेखों और कहानियों की अपनी फूटकर बामबनी से यह खपना करते रहे। बाद में उनकी जायरी में यह एकमें इस तरह मुल्लोपाध्याय भोज्याइ के साथ में बर्ज हुई, घायद बाक्यवत के रोव उमसे हिसाव करने के लिए। —

- १०० खपना ठार से बग्गई
- २९ खपना होटल का खर्च
- ३ खपना सऊर खर्च जो देना गया
- २ खपना बुड़ी को
- ४ खपना समारि के लिए
- ३ खपना चूड़ियों के लिए
- २० खपना सऊर खर्च



- २५ खया बेक से वगारस बैक की इलाहाबाद शाखा पर  
 २ खया (किस काम के लिए छाक पका नहीं जाता)  
 ३ खया छाड़ी और म्माउख के लिए  
 और इसके बाद  
 २ खया विवा करने के लिए बिबाई !

तो वहाँ मुंघीजी खुद ही इतना सब कर रहे थे वहाँ अगर उसने भी अपनी तरफ से थोड़ा-बहुत कर लिया तो ऐसा कौन-सा बड़ा गुनाह किया। मुंघीजी को इसका कोई खास दुख न था। दुख की ऐसी बात भी क्या थी। मुंघीजी ने खुद ही तो लिखा है कि ठाने से ठमा जाना बेहतर है। लेकिन हाँ ठमे बुरे गये थे और जब भी इसका जिक्र आता मुंघीजी कुछ हँप जाते। बाद में तो उस आदमी के बारे में और भी बातें खुसीं— कि वह आदमी नम्बरी जाकिया था और बूखे छाहरों में भी उसने इस किस्म की हरकत की थी और पुकिठ उसके पीछे लगी हुई थी कि वह लड़की जिससे मुंघीजी ने अपने हृत्वा की छावी करायी थी मयायी हुई या कुछ इसी तरह की म्पकी थी। यह बादवाली बात मुंघीजी के लिए खतरा माक भी हो सकती थी। एकाप बार पुकिठ तहजीकत के लिए आयी थी। लेकिन इन बेचारे को क्या पता था— वह तो ऐसा उड़पू हुमा कि फिर उसकी घुस भी मुंघीजी को नहीं भिठी। हाँ बस एक गुमनाम बिरा ठारीख का खत ओकिया राड भागरा से आया। (अगर अंग्रेजी में लिखा हुआ ओकिया' असल में ओकिया है तो यह खुद काफ़ी दिखवस्य बात है क्योंकि ओकिया का जन्म हिन्दी कोष में लिया गया है—खिख पुस्य संत महात्मा पहुँचा हुआ प्रकीर।)

खत में लिखा था—

प्रिय भाई साहब

आपने बहुत धोखा खाया है लेकिन तब भी आपके दिख के किसी नर्म कोने में मेरे लिए थोड़ी-सी जगह हामी। (इतने व्यारे छाध्यों में धायद ही किसी ने किसी के जले पर नमक छिड़का हो!— म )

मैं अपने को सुधारने की कोशिश कर रहा हूँ और जो बहुत परीक्षण हूँ मेरा खयाल है, सुधार लूँगा।

कृपया मेरा पता-ठिकाना किसी को मत बतसाइया बर्ना मैं बर्पाद हो जाऊँगा।

मैं बटुतों का खेनदार हूँ और कुछ खया इकट्ठा करने की पूरी कोशिश में हूँ। मैं जानता हूँ आप मेरा पकीन नहीं करेंगे लेकिन मेरे पास गिबाय

इस मुबारिक के और क्या बात है। उम्मीद की इसी एक किरण के सहारे  
साबर नमस्कार

भापका  
पापी

जो बोझ-बहुत मुस्सा मुंघीजी के लिये मैं इस आरमी के खिलाफ रहा होया उसे भी इस आखिरी रकडे मे जो शासा और उनका दिल एक बार फिर उसकी तरफ से गर्म हो गया और घायब यही बजह है कि जहाँ मुंघीजी ने हजारों खत पत्रकर फेंक दिये वहाँ ये बोझे से उमजबूम खत बचाकर रख लिये। इसी से कुछ मिछठी-नुस्ती कहली इस क्रिस्ते से सात-आठ बरस पहले की है जिसे मुंघीजी ने आपबीती में बयान किया है। आपबीती सन् २१ २२ की कहानी है कलपुर की और उसके नायक या ससनायक चिबनायकण नाम के एक महापय है जो कहानी में आकर उमापठिमापयण हो गये हैं। बहुत रस से-  
● प्राय अधिकांश साहित्यवेदियों के जीवन में एक ऐसा समय आता है

जब पाठकपण उनके पास आजापूर्ण पत्र भेजने लगते हैं। कोई उनकी रचनाएँ भी की प्रशंसा करता है, कोई उनके सद्बिचारों पर मुग्ध हो जाता है। लेखक को भी कुछ दिनों से यह सौमन्य प्राप्त है। ऐसे पत्रों को पढ़कर उसका हृदय फिटना पद्गद हो जाता है, इसे किसी साहित्यसेवी ही से पूछना चाहिए। अपने फटे कंबल पर बैठ जाता वह पत्र और आरामवीर्य की लहरों में डूबा जाता है। मूक जाता है कि पत्र को पीसी लकड़ी से भोजन पकाने के कारण छिद्र में फिटना बर्ब हो रहा था खटमसों और मच्छरों ने पत्र भर जैसे भीड़ हृदय कर ही थी। पिछले साक घायन के महीने में मुझे एक ऐसा ही पत्र मिला। उसमें मेरी कुछ रचनाओं की दिख खोलकर बात ही गयी थी।

पत्र-भेपक यहोदय स्वयं एक अच्छे कवि थे। मैं उनकी कविताएँ पत्रिकाओं में बखतर देखा करता था। यह पत्र पढ़कर पूछा मैं क्याया। उसी बख्त बजाब लिखने बैठ। उस तरप में जो कुछ लिख गया इस समय याद नहीं। इतना बकर याद है कि पत्र आदि से अन्त तक प्रेम के उद्गारों से भर हुआ था। मीने कमी कविता नहीं की और न कोई सघकाम्य ही लिखा पर भापा को बितना संभार सक्या था उठना संभार। यहाँ तक कि जब पत्र समाप्त करके दुवाप पत्र तो कविता का आनन्द आया। साय पत्र भाब-साहित्य से पूर्व था। पाँचवें दिन कवि यहोदय का हृदय पत्र मा पहुँचा। यह पहले पत्र से भी कहीं अधिक मर्मस्पर्शी

या। प्यारे भैया कहकर मुझे संबोधित किया गया था मेरी रचनाओं की सूची और प्रकाशकों के नाम-ठिकाने पूछे गये थे। अंत में यह धुम-समाचार था कि मेरी पत्नी जी को आपके ज्वर बढ़ी थ्यडा है। वह बड़ प्रेम से आपकी रचनाओं को पढ़ती है। बड़ी पूछ रही है कि आपका विवाह कहाँ हुआ है आपकी संतानें कितनी हैं तथा आपका कोई फोटो भी है? हो तो कृपया भेज दीजिए। मेरी पम्पभूमि और बंगाली का पता भी पूछा गया था।

यह पढ़ना ही अबसर था कि मुझ किसी महिला के मुख से बाहे वह प्रतिनिधि द्वारा ही क्यों न हो अपनी प्रशंसा सुनने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। घरर का मना छा गया। अन्य है भगवान्! अय रमनियाँ भी मेरे इत्य की सराहना करने लयीं। मैंने तुरन्त उत्तर लिखा। जिसने कर्मप्रिय राज मेरी स्मृति के कोप में ये सब छर्च कर दिये। मैथी और बंगुल से साठ पत्र मरा हुआ था। अपनी बंगाली का बर्नम किया। कदापि मेरे पूबजों का एसा कीर्तितान किसी भाट ने भी न किया हागा। मेरे बादा एक जमीन्दार के कारिये के मैंने उम्हें एक बड़ी रियासत का मैनेजर बतलाया। अपने पिता को जो एक राजर म कर्क के उस बपतर का प्रचामाप्यस बना दिया। और कास्तकारी को जमीन्दायी बना देना तो मापारज बाठ थी। अपनी रचनाओं की संस्था तो न बड़ा सफा पर उनके महल बाहर और प्रचार वा उत्सेस ऐसे शायों में किया जो गम्ना की जोर से अपने गर्ब को छिपाते हैं। बीन नहीं जानता कि बहुधा तुच्छ का बर्न उतसे विपरित होता है और बीन के माने कुछ और ही समसे जाते हैं। गण्ट रूप मे अपनी बड़ाई करना उच्छूयसता है मगर साकेतिक शायों मे आप इसी काम को बड़ी जायगी से पूरा कर सक्ते हैं। खैर, मेरा पत्र समाप्त हो गया और तत्पय इसके बाद की जमापतिनायाय का प्रवेश रंगमंच पर हुआ —

दयामबर्न गाटा बीन मुँह पर बैचक के दाग्र नंगा सिर, माल नैबारे हुए, सिर्फ गाधी कमीड पले में पूलों की एक मामा वीर में फुलबूट और हाब में एक मालीनी पुस्तक। घरर कि पूरा जाकर का हुनिया था। परिचय और बुचानरीम के बाद पर पढ़ने बाजार मे मोजन येवबाया छिर बाते होने सगी। उम्हने मुझे जानी बई कबिनाएँ सुनायी। कबिनाएँ तो मेरी समन में गार न भायी पर मैंने तारीफे के पुस बाँप दिये। मूम-मूममर बाद-बाह करन स्या वँस मुगसे बड़कर काय्यरगिन्न संगा मँ न होमा। संस्था को हम रामलीला देखने गये। मौनर उम्हें फिर मोजन कराया। जब उम्हने बताया बुतान्त सुनाना मुह किया। दम समय बह अपनी पत्नी को मैने के निर

बानपुर जा रहे हैं। उनका मकाम बानपुर ही में है। उनका विचार है कि एक मासिक पत्रिका निकालें। उनकी कविताओं के लिए एक प्रकाशक एक हजार रुपये देता है। बानपुर में उनकी जमीन्दागी भी है। पर वह साहित्यिक जीवन व्यतीत करना चाहते हैं। जमीन्दागी से उन्हें घृणा है। आपी रात तक बानों होती रहीं। अब उनमें से अधिकांश मार नहीं हैं। हाँ इतना मात्र है कि हम दोनों ने मिछकर अपने भावी जीवन का एक कामकर्म तैयार कर लिया था। मैं अपने माय को सपट्टा था कि भगवान ने बँडे-बिदय ऐना मक्का मित्र भेज दिया। भावी रात बीग गयी तो सोये। उन्हें दूसरे दिन आठ बजे की गाड़ी से जाना था। मैं जब सोकर उठ तब सात बज चुके थे। उमापति जी मुँह हाथ धोने तैयार बैठे थे। बोले— अब माना बीरिंग। लौटते समय इधर ही से आऊँगा। इस समय बापको कुछ बप्ट दे रहा हूँ। समा कीजिएगा। मैं कल बका तो प्रात बाल के बार बजे थे। २ बजे रात मे पड़ा जाग रहा था कि कहीं मीन न मा जान। बल्कि मैं ममसिए कि छापी रात बागना पड़ा क्योंकि पतने की चिन्ता लगी हुई थी। रात्री में बैठ तो सपकियाँ जाने लयीं। कोट उठारकर रख दिया और पट गया। गुरुल नींद आ गयी। मुण्ठमराप न नींद लुमी। कोट धापक' नीके-ऊपार चारों तरफ देला कहीं पजा नहीं। समझ गया किसी महापय ने उठा दिया। सोने की सबा मिक गयी। कोट मे पचास रुपये सर्क के लिए रखे थे वे भी उसके साथ उड़ गये। भाप मुने पचास रुपये हैं। पत्नी को दीके स लामा है, कुछ बजड़े बरौए ले जाने पड़ये। फिर समुपक में सीकड़ों तरह के गैग-जोग लपते हैं। इन्तम इन्तम पर रुपये सर्क होते हैं। न सर्क कीजिए तो हूँसी हो। मैं इधर से लौटूँगा तो देना चाहेगा।

लौट तो वह उधर से उकर लेरिन एक नया ही डिस्का लेकर और अपना लौटाना तो पूर रहा उस्टे पचीस रुपये और मुड़ ले गये!

इस तरह ठपे जाने के छोटे-बड़े डिस्के बहुत बार होतें वे और हर बार वह बड़े भाँप बोलकर ठपे जाते थे। लेकिन हर बार उनकी जान पर बनती थी उस बप्ट अब कि उन्हें पत्नी के सामने आकर हाथ फैलाना पड़ता जो एक नैक बीबी थी तरह रुपये तो कहीं न कहीं से पैदा करके उकर ले लेतीं लेकिन दो-बार खरी-पौटी मुगाने से भी बाज न मारीं। दोनों के संबंध की यह कुछ मक्का-सी खरपटी-नी तिकल-नी मिठास जिसमें धापद इसीलिए कुछ और रगाय ठहुरक है, उनके घुन में कुछ पपी पी और इसीलिए फिर वह चाहे लौपी हो चाहे बनिया उन सब के पीछे उनकी बनती पत्नी बैठी हुई नजर आती है जो एक साथ ही कोमल भी है और कठोर भी। कितने प्यारे, कोमल मामिक रूप से यह बीज भंग कहानी

बायी है, कि जैसे हबारों इन्हींमें यकनयक जपमगा उठें। और यह सब उस एक नाम का समलकार है जो भगत और उसकी घरवासी के गहरे प्यार का लीला-मीठा स्वाद एक पत्र के लिए हमारी बबाम पर भी रख देता है।

भगत का बेटा मर जाता है क्योंकि डाक्टर बड़बा एक घाम अपनी टैनिश नहीं छोड़ सकते। उन्हीं डाक्टर बड़बा के लड़के को सीप काटता है और भगत पाक साइ-फूंक करके उसका प्राण बचाता है लेकिन एक बिलम तमापू का भी रबावा नहीं होता। पारों और भगत की तलाश हा रही थी और भगत सपका हुआ। बसा या रहा था कि बुझिया के उठने से पहले मर पहुँच जाऊँ नहीं इस ब सुनायेमी।





लड़की सपानी हुई या नहीं हुई, यह बीच हमारे यहाँ बहुत कुछ इस पर भी निर्भर होती है कि उसे स्कूल-बायेंक की शिक्षा मिल रही है या नहीं। जो लड़की पढ़ रही है उसके माँ-ब्याह के बारे में समाज भी स्वारा चिन्तित नहीं होता। लेकिन जिन लड़की के साथ ऐसी कोई श्रृंख नहीं है उसका पन्द्रह-सोलह की उम्र तक पहुँचने ही समाज उसके ब्याह को लेकर अस्त-भर चंचल हो उठता है। कहने वाले कहने लगे जाते हैं कि अजुब मे सपानी लड़की बिनब्याही घर में बाल रही है। लड़की में नहीं कोई ऐश तो नहीं है जो उसका ब्याह नहीं होता। सद्गुहस्य की इसम चिन्ता का कारण यही बाबाल समाज है।

मुंसीजी की बेटों के साथ भी यही बात थी। स्कूल-मालम की पढ़ाई का सुयोग उसको नहीं मिला—या नहीं दिया गया। कुछ रोड लखनऊ के भार्य महिना विद्यालय में गयी मगर फिर वहाँ से भी डम छुड़ा लिया गया।

आज वहाँ अनपढ़ लड़की पर उँपकियाँ उठनी हैं, बामिन-वैनालिस साल पहले पकी मिली लड़की पर उठ्य करती थीं। लड़की को पढ़ाना अपने माप में एक बालि थी।

मुंसीजी भी गामर इन बालि के लिए तैयार न थे। यह टीक है कि उनसे बीबन की परिस्वितियाँ काधी अम्यवस्वित रही। बेटा महोबे में पैरा हुई थी। बस्ती में वह बहुत ही छोटी थी। गोरखपुर में नी छोटी ही थी और जब कुछ-कुछ इन उम्र को पहुँची कि घर में ककहरा और बाएरबाड़ी पढ़ाने से स्वारा कुछ पढ़ाने की बात खोबी जा सकनी तनी मुंसीजी का गोरखपुर का भावसना छूट गया।

सरकारी नौकरी से इस्तीफ़ा देते समय मुंसीजी ने सोबा का कि धानि से घर बैठे सिखींगे-मउपे देससबा करेबे। लेकिन शुरू से ही टरीबी ने पैर में जो बककर बाँध दिया था वह बक भी नहीं छूटा। तंपरसती भी बनी रही और दर दर का मटनना भी बना रहा। बानपुर, बनारस और लखनऊ, किमी बयह बम कर रहना नहीं हो सका। बनारस में बहुत बार सहर छोड़कर देहात में रहना



पड़ा जहाँ से लड़की को घाहुर भेजकर पढ़ाना संभव न था। जो कुछ इय्याताम या आमूलगी मिली वह सन्तुष्ट में। बेटों की पढ़ाई, या दोनों अपनी बहन से छोटे से बड़ी शुरू हुई लेकिन बेटों की पढ़ाई शुरू करने के लिए एक एक प्यारा देर हो सकी थी। जामे मन से कुछ कोशिश करके हुई लेकिन जामे मन से ही। किस्सा कोशाह बहु पढ़ नहीं सकी और बून्हा पकड़े बैठी रही जो कि घर की सवानी लड़की का काम है। मौ उन दिनों बरखबर बीमार रहती थी संभव है बेटों को स्कूल से हटाकर घर के काम-काज में लगाये रखने का यह भी एक कारण हो।

इन सब के बाद भी यह मानना बज्जिन है कि बेटों को ठीक से शिक्षा का सुपाग म देने क पीछे और भी कोई कारण नहीं था। यहाँ तक प्रमाण मिलता है— जिसमें उनकी इमी काल की सिखी हुई शान्ति-वैसी बहानियों का प्रभाव भी है— उसका बड़ा कारण यह था कि पढ़ी-लिखी लड़कियों की तरफ से उनके मन में कहीं यह खोर था कि लड़कियाँ पढ़-लिखकर गृहस्त्री क काम की नहीं रह जाती वितली बनकर यहाँ-वहाँ घूमते रहने म ही उसका ही मयता है। अगर इससे अलग भी कोई बात उनके मन में थी तो वह कमखोर की और चारों तरफ एक पिछड़ा हुआ समाज था या लड़कियों की पढ़ाई को अच्छी निगाह म नहीं देना था। सिहाबा बेटों घर क सीख और घर क बाहुर समाज क पिछड़ान का सिबाहुर ही और मामूली हिन्दी म स्यादा कुछ न पढ़ सकी।

बब उसके प्याह का मयल्ल दयेध था। उन दिनों मुंजी प्रेमचर कालज में नंबर २ हिबेट राड क मजान में रहते थ जिसम बाबरुल बाबर पाठक का होमियोपैथिक दवाघाता है। नीप मकाम-माक्ति रहने थ बड़ी पाठक माहब और ऊपर के बा हिम्सा म विपयेबार। एक म मुंजीजी और दूसर में हुग्मिन्दन या बावटर मड्ट जिसका जिक्र ऊपर था हुआ है।

मुंजीजी ने एब रोड उतने कहा। उन्हाज मागर जिन के अपने एड महपाटी प्रमुदवास से बहा। प्रमुदवास मे जो गुर विवाहित थ अपने एब छोटे मीनर माँ का सभत दिया।

मुंजीजी ने फौरन उसी पन पर बराबरकाल साहब को छन निगा म बा क बट बहताई थ बीग पर बा मागा काम-नाज दगने थ। पन कुछ इन प्रकार था— मैं बनाम क पाम एा बेगन का खनेबाला बावनी ही बिगरी की एब प्यक्ति हूँ। बनाम म बार मील दूर बाबमगड़ रोड पर एब मीब है कम्ही मीबा मडबई बही मेरा मजान है। इन दिना मापुगी बावनीय म मयान क बा काम करक बावनीबिबा बना रहा हूँ। मैं नामाजिब बयाबाबाँ म मजान हुमा एक प्यक्ति हूँ। इस समय मेरे मायन एब मम्भीर समस्या अपनी लड़की की

घासी की है। मुझे ऐसा लगता है कि आपके सहयोग से यह मुक्तम सकती है। मेरे कई रिश्तेदार य पी में फँके हुए हैं। मैं चाहता हूँ कि आप चिरञ्जीव नामदेव प्रसाद के लिए मेरा प्रस्ताव स्वीकार करें। मेरे विषय में और जो कुछ जानना चाहें लिखिए, यहाँ उत्तर दूँगा।

यह सब पाकर दयारामलाल साहब ने औरतों के लिए यह बातें के लिए उचित या प्रमुदयलाल साहब का एक सत यह मायम करन के लिए लिखा कि क्या यह बही मद्यहुर उपन्यासकार प्रेमचंद हैं। प्रमुदयलाल साहब ने जबाब दिया कि जी हाँ यह बही मद्यहुर मुधी प्रेमचंद हैं।

तब फिर दयारामलाल साहब ने कुछ इन विनम्र किन्तु अनुभवसिद्ध शब्दों में मुधी प्रेमचन्द के सत का जबाब दिया—आपका पत्र मिठा। एसा पत्र तो सीमाव्य उदय से ही प्राप्त होता है। आपने अपना पूरा परिचय नहीं दिया है पर मुझे पता चल चुका है। मूरत को बिचल सेकर नहीं देला जाता।

आप ही की तरह मुझ पर भी यह एक महान उत्तरदायित्व है और जससे मुझ उबार सत के लिए आपका सहयोग भी उतना ही आवश्यक है।

यह अवश्य बता देना चाहता हूँ कि यह बेहात है सामाजिक कुपैतिषा का अभाव यहाँ भी नहीं है यद्यपि मुझे और अनुमानत मरी सास साहबा को भी इसकी पनाबा परबाह नहीं है। ता भी इस पर के इतिहास उचरी प्रसिद्ध और मर्षाश के प्रकाश में मेरे कर्तव्यवाहन में कुछ बिचोपताएँ रहनी और मुझे आता है कि आप जसकी सुविधा मुझे दिये। अतः मुझे पहल से मालम हो जाना चाहिए कि घासी में आप कितना खप करना चाहते हैं और उस खर्च का कितना हिस्सा ऐसा होगा जिससे मुझे व्यावहारिक सहायता मिल सकेगी। और यह भी स्पष्ट कर देना चाहता हूँ कि यह किसी रईस का घर नहीं है। साधारण खनीशारी परिवार है और सड़का अपन घर का आप मालिक है। हाँ दाक-रोगी का सुख उसे अवश्य प्राप्त है।

बावजीत का शिकसिका धुक्-धुमा। चिट्ठियाँ बीड़ने लगी। फिर बाबू दसरत लाल अपने एक अन्तरंग सखा के साथ किसी बहाने से मलनऊ भी पहुँच पय और बाता-बातों में लड़की को देखने की इच्छा भी व्यस्त की।

मुधीजी अन्दर पये। पत्नी से कहा कि यह सोम लड़की देखना चाहते हैं। पत्नी ने कहा—ठीक है यह काम लड़की देखना चाहते हैं तो हम काम दिखायेंगे लेकिन घर पर नहीं दिखायेंगे। फिर जब मुधीजी उठकर बाहर जाने लगे तो जसकी पत्नी ने स्त्री की सहज व्यवहार-बुद्धि से पूछा—यरे उन लोगों का मुँह बूँद भी कुछ भीछ करोवे कि यों ही

पर मैं उस समय और कोई न था इसलिए मुंशीजी खुद ही गये और पाठ के एक हफ्ताई के यहाँ से मिठाई ले आये।

मूँह मीठा होना के बाद यह तक पाया कि अपने रोज होपहर की तीन बजे आप लोग अजायबखर पहुँच जाइएगा हम लोग भी लड़की को लेकर पहुँच जायेंगे। वहाँ हम लीप आपस में पुराने मुसाफ़ातियों-जैसी बातें करेंगे और फिर वहाँ से बनारसीबाग बरौंये चिडियाघर, और सब देख-दासकर साय-साय पर लौटेंगे। इतनी देर में आपको काफ़ी मौज़ा लड़की को देखने और समझने का मिल जायगा।

सब कुछ हुआ और जैसे कि इस बातचीत में वोड़ी-सी बदमज़मी भी एक बकरी चीख़ हो, वह भी हुई। लड़का खुद लड़की को देखे इस बात को लेकर। मुंशीजी न उसके लिए इतई इन्कार कर दिया और दो-एक ठेक चिट्ठियों का विनिमय भी हुआ। जागिर बाबू दरमखाल ही को मुकना पड़ा और ठान इस पर टूटी कि लड़के की माँ और बहन बाहर लड़की को रोग लें।

लेकिन जिस चीख़ ने मुंशीजी का मन अपने होतेबाहे बामाद की तरफ़ बहुत मर्म बना दिया था वह थी उनकी एक भिठठी जिनकी मकल दरमखाल साहब ने भेजी थी—घाही मुसे मंजूर है। इसका ख़याल रहे कि जिन घर में येरी घाही हो वह घर दिवासिया न किया जाय। घाही-भ्याइ एक दिन का रिफ़ा नहीं हमारा-उनका यह तीन पुस्तों का रिफ़ा होगा। इसलिए आप उनको दिवासिया न कीजिएगा।

ख़ान्दाम भी कोई ऐसा-जैसा नहीं था। बामुदेब के पिता मुंशी बख़ामी प्रसाद इन्सा मराठीपुर, जिमा जालीन मू पी के रहनेवाले थे। दो साल की अवस्था में ही उनके पिता की मृत्यु हो गयी। तब उनके मामा जो मीठा कपुरा जिला छिन्दवाड़ा सी पी० के रहनेवाले थे उनको अपने साथ लिवा ले गये और वहीं उनकी शास्ता-बीसा हुई। शासन-ब्यवस्था उन दिनों की बहुत अस्त-व्यस्त थी। उनके मामा कुछ लोगों की रायज़ा से एक इत्स के मुकदम में कान दिये गये और कालेपानी की सज़ा पा गये। फिर मुंशी बख़ामीप्रसाद की घाही देखरी जिमा घामर, के लाला ममूखाल की इकलौती लड़की से हुई। संयोग की बात कि लाला ममूखाल १८७७ के कुछ बाद जब कि वह लाला की बन्नी पर गये हुए न मार वाले गये। अब घर में उनकी देवा के सिवा और कोई न था हम ख़याल से मुंशी बख़ामीप्रसाद का देखरी दुपुन लिया गया। देखरी के अलावा और भी पाँच-छ माँब उनकी मिस्किन में थे। मुंशी बख़ामीप्रसाद ही उन सब का इंतज़ाम करते रहे और बिगामान भी आयरार उन्हीं का मिली।

मुंशी भवानी प्रसाद बड़े धार्मिक व्यक्ति थे। सबेरे चार बजे उठकर स्नान करते थे और गाय की पूजा करते थे। फिर मंदिर जाकर पुजाटी की पूजा करते थे और उसके उपरान्त श्री देव मुरलीधर की पूजा करते थे जिनके नाम पर देवरी का इस्वा बहुत पहले से चल रहा था।

बहू म्युनिशिपलिटी के उप-सभापति थे आगरेटी मजिस्ट्रेट थे चार्मस ऐक्ट से मुस्तसना थे यानी उनको हुपियार रखने की आज्ञा दी थी। सेम-वेन में बहू बहुत साफ़ थे और अपने व्यक्तित्व और शिष्ट व्यवहार के कारण जनता के बीच और सरकारी सेवो में उनका एक-सा मान था। अर्द्ध-सरकारी पत्र व्यवहार में देवरी के पब्लिकर के नाम से उनका उल्लेख होता था और जनता उन्हें सरकार कहकर पुकारती थी। यह उनके पद से अधिक उनके व्यक्तित्व का ही सम्मान था।

धर्मप्रचार में उनकी बड़ी रुचि थी। इसी प्रसंग में बहू अक्सर उस समय के बड़े-बड़े विद्वानों जैसे पं. व्यास प्रसाद मिश्र पं. दीनदयाल शशीभरण स्वामी हंसबहादुर झाड़ि को बुलाकर उनके व्याख्यान कराया करते थे। कट्टर धनाढ्य धर्मोन्मी होने के नाते उन्होंने सत्याम प्रकाश के संडन में एक पुस्तक भी लिखी — ब्रह्मसूत्र-सत-विश्राम्य। इसी तरह ही एक पुस्तक उन्होंने और लिखी — भास्करामास विचारण। उनके पुस्तकालय में चारों बेश अठारहों पुण्य उ शास्त्र और उनकी अनेक टीकाएँ, महाभारत बास्मीकि रामायण निर्भय-सिन्धु और धर्म सिन्धु आदि पुस्तकें दूर-दूर से भेगाकर एकत्र की गयी थीं।

सन् १९५५ में बंगमय आन्दोलन के समय जो राजनीतिक कहर उठी उसने उनको भी अपने साथ लपेट लिया। उस आन्दोलन के साप-साधन वैसे कि विदित हैं स्वदेशी या आन्दोलन विदेशी वस्तुओं के बहिष्कार का आन्दोलन मध्य-निवेश और विदेशी चीनी के परित्याग का आन्दोलन भी बीरे-बीरे उठ खड़ा हुआ।

जब यह चीज कुछ बढ़ पकड़ने लगी तो अनेक अधिकारियों के काम बड़े हुए। उनकी तहकीकात शुरू हुई और उनका सबसे पहला बाद, वैसे कि उचित ही था मुंशी भवानीप्रसाद पर हुआ। उनके विरुद्ध सबसे बड़ा प्रमाण दूधकी के हीर-माल पुत्र द्वारा प्रकाशित विलायती चीनी से धर्मनाश होता है नामक पुस्तक की जिसकी पुरत पर इस आशय की कुछ बात छपी थी कि हम देवरी के मुंशी भवानी प्रसाद का साबुबाह करते हैं जिन्होंने प्रचारार्थ इस पुस्तक की १ प्रतियाँ भेजी। इसी प्रकार उन्होंने लोकमान्य तिलक की लिखी हुई स्वदेशी और शायफाट भी बड़ी संख्या में भेजवायी और लोगों में बाँटी। सभी सुनते हैं कि लोकमान्य तिलक से उनका पत्रव्यवहार भी हुआ जिसमें अधिकतर राजनीतिक

और भासिक प्रस्ता की बर्बा रखा करती थी। पर की तलाशी में पुलिस को कोम-  
मान्य सिद्ध के कुछ पत्र भी मिले थे।

मुकदमे की दूसरी पेशी देवरी स १६ मील दूर एक निर्बल स्थान में रानी  
गयी — ताकि सोय वहाँ न पहुँच सकें और कोई बलवा न हो। वहाँ उनसे बार्ड  
हजार रुपये मकद की जमानत माँगी गयी — और सोयों को बड़ा आश्चर्य हुआ  
जबकि वहाँ से तीस मील दूर रहनेवाले एक मुदत ने जो और बहुत से तमासाद्यों  
के साथ वहाँ छोड़ा था जमानत की इतनी बड़ी रकम देना मंजूर किया। लेकिन  
किन्ती बजह से जमानत उस वकत नहीं ली गयी और बाद का अपील करने पर  
जमानत की रकम घटकर दो हजार रह गयी। यह जमानत एक सास के लिए  
देनी पड़ी और यह एक साल का समय देवरी से बाहर रहकर पुराना पड़ा।

इस प्रसंग की अपील जयपुर के सेरम जज के यहाँ ली गयी पर जमानत  
बहाल रही और मल में जुद्धिल कमिन्तर के यहाँ अपील हुई। जुद्धिल कमि  
स्तर स्टीवेन्स नाम का एक आविधि आरपी था। उसने बड़ी हिम्मत से काम  
लिया जो ऐसे एक मुकदमे में जो कि सायद प्रांत का पहला राजशाह का मुकदमा  
था और जिसकी जड़ें इतनी दूर-दूर तक पहुँचती थी कि उतने नासिक और माण्डने  
की जिलों में साकामान्य तिरुफ तक की यथाही रिपोर्ट ली गयी मुकदमे की अपील  
मंजूर की और उसे इच्छत के साथ बरी करत हुए अपन प्रसंग में लिगा — यह  
बड़े मेद की बात है कि यह मुनी-मुजानी बागों क साधार पर इनके धर्मवीर  
न्यायपरामर्श और धर्मार्थम व्यक्त का इतना स्वादा छत्राया और परीक्षण किया गया।

यह स्टीवेन्स की सरकारी जिम्मेरी का आखिरी मुकदमा था। इसके बाद ही  
वह यहाँ से चला गया।

स्टीवेन्स के प्रसंग से सरकार काफ़ी मुनासिब में पड़ गयी उसे बहुत नीचा  
देगना पड़ा और उसने अपन मुँह की लाज बचान के लिये स मिस्टर जारपेट  
को जो सेटिलमेण्ट कमिन्तर में मुनी भवानी प्रसाद के नाम राजीनाम का वीरान  
सेवर भेजा। राजीनाम की एक धर्म यह थी कि देवरी के किन्ती प्रमुख स्थान पर  
छाही दरबार की साधार के तौर पर एक चकुरा बनवा दिया जाय। उनसे  
एक में मुनी भवानीप्रसाद के तमाम अग्निपात्र और हृदियार उन्हें बायस है  
देने का बायस दरबार की तरफ से किया गया। जारपेट गाह में उनको गम  
साया कि यह एक मुनसरा योरा है इनको हाथ में न जाने दीजिए।

दमक जवाब में मुनी भवानीप्रसाद ने बही बात बती जिगारी उतम भाग  
की जा सरती थी। उग्रान करा — मैं भाग्यवती आरपी हूँ। की गये की मानी

टरी से मीने अपनी जिनगी शुरू की थी और भाम्य के ही बछ पर जान में इतनी बड़ी सरकार का विरोधी स्वीकार किया गया और भाम्य के ही मरोसे इस बाधोप और दुर्बला से मुक्त हुआ। अब मुझे कुछ नहीं चाहिए, आप अपना राजीनामा वापस ले लें।

अब क्या बचा जानने-समझने को। दो-चार व्यावहारिक बातें हुईं और घाबी तै हो गयी।

बाघत बनारस के स्टेशन पर सबेरे आठ बजे पहुँची। वहाँ से पाँच मील दूर समझी जाना था। रास्ता लघब। ईंट के मट्टेवालों की हवा से सड़क में तमाम गहबे ही गहबे। मूला ई ठो घुस्सा बारिश है ठो कीचड़—मानी इक्का-बाबी के फँसाने का और हिचकोलों का बंदोबस्त दोनों हाकलों में अच्छा। घहर से बचने में ही बेर हो गयी थी कमही पहुँचते-पहुँचते घाम हो गयी। जनबासा स्लूम में दिया गया था।

बारबार हुआ। बघाते भी फँके गये वैसे भी लुटाये गये। लेकिन सब कुछ मुँधीजी के बड़े भाई बसदेव काठ ने किया। बारपूजा नी मुँधीजी ने न की।

बारबार के बाद अब बाघत जनबासे गयी तो उनकी पत्नी ने कहा—बार पूजा आपको करनी चाहिए थी। उन्होंने जबाब दिया—मुझसे ये रस्में न होंगी। पत्नी ने कहा—कम्यापान तो आखिर आपको ही करना होगा?

उन्होंने कहा—कम्यापान कैसा? बेजान बीड़ दान में ही जाती है। बाग बार बीड़ों में तो गाय ही बी जा सकती है। फिर लड़की का बाग कैसा? यह सब मुझे पसन्द नहीं।

आखिर अब रात को घाबी हुई और कम्यापान का अबसर आया तो मुँधीजी ठकर अपनी जगह से नहीं आये। बहुत समझाया गया मगर न माने। आखिर बार डाक्टर मट्ट जाकर उनको जबर्दस्ती गोद में उठ्य लाये और मण्डप में बैठ्य गे। ठो भी कम्यापान किया लड़की की माँ ने ही मुँधीजी मूर्तिबत् बैठे रहे।

बेटी को छोड़ी करके पति-पत्नी दोनों ही कुछ हल्का अनुभव कर रहे थे। इस बार मकान अमीनुद्दीन पार्क में मिला। छ. मास लगभग रहे और छ. मकान बदले। दो महीने यहीं की छुट्टियों का (अब कि सब लग्गी बले जाते थे) किराया मुक्त में क्यों रहे।

२ सितम्बर १९२९ के अपने छठ में मुशीजी ने दयानन्दपन निगम को लिखा — 'जब मैं अमीनुद्दीन पार्क में रहता हूँ। मकान का नम्बर कहीं नहीं मिलता। हाँ यहाँ की दुकान पर पूछने से पता चल सकता है। बिन्दुल नापेस के बस्तर से मुकद्दिक' मेरा मकान इसी कारन में है। दरवाजा अडक' से है। मेरे मकान के टीक नीचे पत्र सोईस मशीन की एन्जनी है। चिरीजीलाल पारचाक्रपण. भी नहीं रहता है। उससे पूछने से पता चल जायेगा। यह तो मकान हुआ अब पर की हासल — मैं सनीपर को मानेवाला था मगर उसके एक रोज कस्त ही से घर में लीप मरीच हो गये। मुम्बू की बालिका के दाँतों में दर्द और बुगार, बेटी की रँगली में फूँसी जो बिमहरी बहकाती है और निहायत दर्द पैदा करनेवाली होती है और मुम्बू की मामी को बगार और पेचिम। एक बटी की रँगली चिरवा पी। अब दर्द कम है। मुम्बू की माँ के दाँतों का दर्द अभी बदस्तूर है हाँ बुगार बन्द हुआ। अब बाल निकलना बने की मलाह है। और मुम्बू की मामी का बुगार भी साबिक दस्तूर है।

देउ टैडी से एक नये संग्राम की ओर बढ़ रहा था। पिछले साल सादरन अमीनन के बल्ल से जो उमार आया था वह बचकर बड़ा ही जा रहा था। मुक्क समाज में अलग एक ज्वार दिगायी पड़ रहा था जगह-जगह उनकी मूच सीमें और छात्र फेडरेशन बायम हो रहे थे और ऊपर मद्रहूरों में एक नयी संघर्ष-बिगना पी। उनकी हासल की जाँच करन के लिए निहायत से एक मरफाटी अमीनन क्विटेस अमीनन आया हुआ था और बायनली नेताओं के अन्तर में मद्रहूर उमका

बायकाट कर रहे थे। जैसे ही प्रेस चारे मुस्क ने पिछले साल साइमन कमीशन का बायकाट किया था। मगर इतनी ही बात न थी। लड़ाई के बार के कुछ साल तक तो उद्योगपतियों के लिए बड़ी कुसाहाली के बिना रहे तापकर हिन्दुस्तानी और हिन्दुस्तान में पूंजी लगाकर काम करनेवाले ब्रिटिश उद्योगपतियों के लिए बिकरे उद्योग-बन्धों का जन्म ही आधुनिक वर्षों में महापुत्र के समय हुआ। लेकिन लड़ाई के इन साल बाद अब साथी इतिहा में भयानक मन्दी आती हुई थी और मुमकिन न था कि हिन्दुस्तान उसकी रुपैट में आन से बचा रहता। जैसे भी हो इन मन्दी का सामना करना था और इसका एक ही तरीका उनको साकूम बा— मजदूरों की मर्दन और दबाओ काम के घंटे बढ़ाओ, पगार कम करो।

लेकिन मजदूर भी अब काम रहा था अपने अधिकारों के लिए मोर्चा लेना भील रहा था। भाव यहाँ ता तक बहो बराबर मजदूरों की हठालों हीनी एली थी — और इन्ही लड़ाइयों की आस म तपकर जंगम मजदूरों के बड़े तयवे संघठन बन गये थे जैसे बी० आई० पी० रेलबमन्स युनियन बम्बई के श्रमालक मजदूरों का उधरस्त संघठन मिरनी कामगार युनियन। बंगाल जून् मिस्त्र जमशेदपुर आपरन वर्क कोई इन सरगमियां से खाली न था।

मगर सरकार भी अब सामोपी बैठी थी — मार्च के महीने में बेरा भर क बड़े-बड़े कामपत्री मजदूर नेता पकड़ लिये गये और मरठ पर्यन्त बस के नाम से उन पर मुकदमा चलना शुरू हो गया। यह एक बड़ा राजनीतिक केस था दुनिया भर में उसकी वर्षों की स्पेसार्स के संपादक हूचिचन और ब्रिटिश कम्युनिस्ट ईडले जैसे दो-एक संघेद कमिपुक्त भी उसमें शामिल थे कोई बम बँकने का मामला न था — सोचने विचारनेवालां का उसने बहुत खोर से शकशाप

यह भी एक संयोग ही था कि मुंघीजी उन दिनों वास्तवर्षी के नाटक र्दा इक का अनुबाध हिन्दुस्तानी एजेन्सी के लिए कर रहे थे जो इसी पूंजी और श्रम के संघर्ष की कहानी है। उनका अपना तथा उपन्यास चलन उन्हीं नितों कभी शुरू हुआ था और धीमे-धीमे चल रहा था। सोचक रिश्तर्य में उनकी जान बचती थी। उसने बड़ी प्रस्था एक ही थी — शांताही की लड़ाई। उसके लिए जमीन तैयार हो रही थी और बड़ी आन-आन से तैयार हो रही थी लेकिन लड़ाई अभी शुरू न हुई थी। ठीक बही हाल मुंघीजी का था वह भी आनेवाले संघर्ष के लिए तैयार हो रहे थे और इन बीच अपने हमेसा के रंग में एक तथा कियेवा शुरू कर दिया था — बीबी को घरने का जम्पाद मियां जयिं खली के बुधाम।

यवन कुठवे ही यह दुस्य सामने आया है—

●बरखाप के दिन है, सावन का महीना। आकाश में मुनहुँ पधारें छापी



हुई है। यह-यहकर रिमजिम बर्पा होने लगाती है। अभी तीसरा पहर है पर ऐसा मामूम हो रहा है शाम ही गयी। जामों के बाघों में मुला पड़ा हुआ है। कड़कियाँ भी झुक रही हैं और उनकी माँएँ भी। दो-चार झुस रही हैं, दो-चार मुला रही हैं। कोई बजली गाने लगाती है कोई बाखूमाछा

इसी समय एक बिसाठी भाकर झूले के पास गड़ा हो गया। उसे बेसठे ही झुला पस्य हो गया। छाती-बड़ी सखो ने भाकर उसे घेर लिया। बिसाठी न अपना तन्तुक छोडा और चमकती चमकती बीजें तिराण्डर दिखाने लगा। कण्ठे मोतिया के गहने थे कण्ठे सैन और मोटे रंगीन मोठे गूबगूछ गुड़ियाँ और बुड़ियाँ के गहने बज्जा के लट्ट और मुनमुने। किसी न कोई बीज ली किसी ने कोई बीज। एक बड़ी-बड़ी भायोबासी बालिका ने वह बीज पस्य की जो उन चमकती हुई बीजाँ में सबसे सुन्दर थी। वह खीरोखी रंग का एक चन्द्रहार था। माँ स बोली — बम्मा मैं हार लूँगी।

माँ न बिसाठी से पूछा — बाबा यह डार कितने का है ?

बिसाठी ने हार को बमाक से पछटे हुए कहा — गरीब तो बीस जाने की है, माफकिन जो बाहें दे दें।

माँ ने कहा — यह तो बड़ा मँहमा है। चार दिन में इसकी चमक-चमक छाती रहेगी।

बिसाठी ने मार्मिक भाव से गिर हिलाकर कहा — बहू भी चार दिन में तो बिटिया को बमली चन्द्रहार मिल जायगा। ●

जहर का बीज रोप दिया गया। इसी बीज में से पैड़ निकल्यमा।

इस लड़की की ऐसी क्वि जैसे बनी ?

दीनदयाल जब बभी प्रयाग जाते तो ब सगा क लिए कोई न कोई कामूगण उकर लाते। उसी व्यावहारिक बुद्धि में यह बिचार ही न आता था कि पालना बिसी और बीज न बबिक प्रसन्न हो सरती है। बुड़िया और गिलीने वह ब्यर्ब समाने थे इसलिए जानना भाभूरचो से ही लेखनी थी यही उठके गिलीने य। वह बिलीर का डार जो उसने बिसाठी ने दिया था अब उनका मबमे प्यार गिलीना था।

घन्नाचक्र में त्रिप ब्यक्ति के बर्पा गर इन बामना को पूर्ण का बोग पढ़ेराका है जानना का पनि इमार से साक से बह बेकार था। छलरक गिलीना सैर-गतादे बग्गा और माँ और छाने माँमें पर रोप जमाग। बोल्याँ की बनीग छीक पूरा होना गदा था। बिसी का बेस्यर योग बिना और नाम को हुना गाने निरुप

पये। किसी का पैसागू पहल किया किसी की घड़ी कलाई पर बाँध ली। कनी बनारसी पैमान में निकले कनी सरानवी पैमान में।

दुईबेड़ी के लिए जमीन बनी-बनायी तैयार है — एक तरफ यहाँ का पावरप्लान और दूसरी तरफ अपनी हिसियान को छिपाने की बढाकर दिवाने की कोसिया पास बीमापी मुसीबी के अपने बग की सबसे ज्यादा जानलेवा

कितनी तकलीफ, कितनी बुरीबत की बड़ इस एक चीज में है, और कितना मुबारक दिन होगा जब जब इसकी जड़ खोदकर फेंकी जा सकेगी — लेकिन अब बहुत मही है, खोदकर फेंकना इतना आसान न होगा। कितनी तरह कितने रास्ता से कितने रूपों में वह भाकर बादमी को बरगमाती है। सारी का उमाधा भी ताँ ऐसी ही चीज है भाग जानान की आबरू के नाम पर, हित-नेत टोले-यकाम बाबी के आने नाऊ न कटाने के नाम पर अयहूँसाई से बचने के नाम पर, अपनी मूली रईसी का सिक्का जमाने के नाम पर कर्ज लेकर यह सब नाटक करते हैं लेकिन कौन समझाये जब अरस के मारा को और कितने ठाव है समझने की! कुएँ में मीन पड़ी है।

नाटक उस बस्त पास होता है जब रसिक समान उसे पसन्द कर केता है। बापट का नाटक उस बस्त पास होता है जब यह बरुटे आदमी उसे पसन्द कर केता है। नाटक की परीसा चार-पाँच बच्चे तक होती च्यती है बापट के नाटक की परीसा के लिए केवल इतने ही मिनटों का समय होता है। सारी सजा बट सारी दौड़बुप और टीसारी का निपटाए पाँच मिनटों में हो जाता है। अगर सबसे मूँह से बाह बाह निकल गया तो उमाधा पास नहीं केत ! सवा मेहनत फिक, सब अकारण। उमाधा का उमाधा पास ही पया। सहर में यह टीसने बजें में जाता पाँच में बज्जब बजें में जाता। कोई बाबी की बी पी पी पी सुमकर मन्त हा रहा वा कोई मोटर को आँखे फाड़-फाड़कर बेल रहा बट कुछ लोग फुल-कारियों के टक्के बेखकर नाट-सोट भाते थे। आतिशबाडी सबके मनोरंजन ना केत थी। हुआइवाँ जब सत्र से ऊपर जाती और आकाश में लाल हरे, नीले, पीले कुमकुमे-से बिदार भाते और जब बलिषी छूटती और उनमें नाचते हुए मोर निकल भाते तो लोग मंत्रमुग्ध-से हो भाते थे। बाह, क्या कापीगरी है!

बड़ावा जाने का सीन बैसिए —

● इस बजें सहवा फिर जाने बजने लये। माफूम हुमा कि बड़ावा या रहा है। बापट में हरेक रसम बकि की जाट मरा होयी है। दुसहा कलेवा करने या रहा है जाने बजने लये। समनी मिल्ने या रहा है, जाने बजने लये। बड़ाव ज्योड़ी प्युँबा बर में हकबल मच गयी। बड़ी सनी इस कला के विरोध में। यदी

ने गहने बनवाने के औरतों ने पहने से सभी आसोचना करते लगे। बूहेवन्ती कितनी सुन्दर है कोई दस तोसे की होमी! बाह! ताड़े म्यारह तोसे स रती भर भी कम निकल आय तो कुछ हार जाऊँ। यह देखवहीं तो देखो क्या हाय की लच्छई है! बी बाहूटा है, नाटीवर के हाय बूम खँ। यह भी बाहू तोसे से कम न होगा। बाह! कमी देखा भी है सोलह तोसे से कम निकल आवे तो मुँह न दिखाऊँ। हाँ मास उतना बोखा नहीं है। यह गंगत तो देखो बिल्कुल पक्की बुझाई है। कितना बाटीक काम है कि बीस नहीं ट्ठरती। कैंता बमक रहा है सच्च नगीने है, झूटे नगीनों में यह बाब कहीं! बीज तो यह गुमूबन्ध है कितने खूबमूरत पूस है! और उनके बीच से हीरे कैसे बमक रह है!

इस गौलाकार बमपट के पीछे भैंरे में आखा और आटांला की मूर्ति-सी आख्या भी लड़ी थी। और सब महनों के नाम कान में आते से बन्धहार का नाम न था। उसकी छाठी पकबब कर रही थी। बन्धहार नहीं है क्या? धायर सब के नीचे हो। जब माकूम हो क्या बन्धहार नहीं है, ता उसक कलेजे पर बोट सी लप गयी। माकूम हुआ वेह में रक्त की एक बुँद भी नहीं है। मानों उस मूच्छा का आयोगी। वह झालसा जो साठ बर्ष हुए उसके हृदय में अंबुरित हुई थी जो इस समय पुण और पल्लव से लयी लड़ी थी उस पर बज्रपात हो गया। वह हर-भट लहकहाता मा पीदा पल क्या — केवल उसकी राग रह गयी।

मयर नहीं बबराने की ऐसी कोई बात नहीं है — स्त्री को अपने पुरपार्य का भरोसा करना चाहिए।

आख्या की एक सहेली छहमादी बहनी है — महीं यह बात नहीं है जम्नी आपह करने से सब कुछ हो सकता है। सात-ममुर का बार-बार माव रिताती रहना। बहमाई जी स दो-बार दिन लठे राने स ना बहुत कुछ काम निकल मरता है। बम यही समय भों कि भरवाल रैन न सैन पाव यह बाग हरदम उनच ध्यान में रहे उन्हें मासम ही आय कि बिना बन्धहार बनाम गुमल नहीं। गुम क्या भी डीन्नी परी और बाय बिपड़ा।

जहाँ रकमीति क ऐमे-सेमे बिबदाय अनुमवी परामांवाता हों वहाँ किना प्रौह हीन में फिर क्या देर! और किता प्रौह ही जाता है — सेदिन पति देवता को घर न निर्वागिन करके जलनामे की देहवी पर पतुंवाबब।

उपन्याय त्रिम रंग में शुरू हुआ या धायर उसी रंग में गम भी हों जाता। सेदिन हो नहीं मरता जहाँ जिनों देरठ पद्वयन केम बब पड़ा।

उबन का उलगडें पूरे का पूरा बालिवागियों क गिमाठ पुनिन के लठे केम की दागान है। इस लच्छ के झूठे बम पुनिन ने परन भी बटन बनावे

के आये दिन बसाती रहती थी यही बंवा का उसका लेकिन वह कुछ और ही चीज थी। २० मार्च १९२९ तक जब कि इस घर में ठाकुरियाँ और लोगों की बर-पकड़ हुई, 'बन' घायर आये से कुछ कम ही लिया गया था— और घर के आगे से यथा हिस्स पर अवर उस कैस की छाया हाँ ता यह कुछ अवरज की बात न होगी क्योंकि वह एक ऐसा कैस था जिसने लारी दुनिया में वहलका बचा दिया था। लेकिन उसका भी कमल निमित्त ही मानता चाहिए— सपूर्ण फल ही ऐसा था। आकादी की लहरें हल्के-हल्के उठने लगी थीं क्रांतिकारियों की सरपयियाँ— कहीं कहीं अरेज हाकिम का बम और कहीं बम का बड़ाका— कायरी बड़ी हुई थी पुलिस का बबर रूप नित मये डंप से उद्घाटित हो रहा था।

सादमन कमीशन के उपसंहार के रूप में साउथ्स-बम और ल हीर पदपत्र केम की सुझमात पिछले साल की बातें थी।

नया साल मेरठ पदपत्र केम से शुरू हुआ।

८ अप्रैल १९२९ को भयत सिंह और बटुकेश्वर दत्त ने दिल्ली असेम्बली में बम फेंका।

१३ सितम्बर १९२९ को अतीमदास की मृत्यु लाहौर जेल में १४ दिन की भूत-हडवाक के हुई।

२८ सितम्बर १९२९ को वहीं कलकत्ता में ए. आई. सी. सी. की बैठक हुई जिसमें कांग्रेस के अगले कदमी अविभेदन के मनोनीत अम्मल यादवीजी ने अपना नाम बापस लेकर बनावहरसाल का नाम प्रस्तावित किया।

११ अक्टूबर १९२९ को बड़े लाठ अविन ने बिलामत से लीटकर इयतेश्वर की मयी कैबर सरकार की इच्छानुसार भारत के राजनीतिक मुबारों के संबंध में एक महत्वपूर्ण बक्तव्य दिया।

२३ दिसम्बर १९२९ को यादवी-अविन मिनन हुआ और सरकार की पुपनी बुरंगी नीति की झूई कुलना शुरू हुई।

३१ दिसम्बर १९२९ को बायू बने राठ कांग्रेस ने लाहौर में पूरा स्वराज्य का प्रस्ताव स्वीकार किया। जानेवाली २६ जनवरी पूर्ण स्वराज्य दिवस घोषित हुआ— देश की बहुमुख स्वामीता के लिए सामूहिक प्रतिज्ञा का दिन।

राज्य की बात होती अगर मुंशीजी का भिन्नता इस अवर्षित हसनक का अतर न कैठा— और अतर उसने मिया बालन-अगतन लिया। एक अच्छे सिपरी के सभे हुए हाथों का काम है इतकिय जोड़ का पता नहीं चलता मगर और से बेखो तो लवन के पूर्वाई और उत्तराई में जोड़ है। दोनों का रंग दोनों की हवा दोनों की बू-बास— सब कुछ अलग है। रमानाक के इच्छाहावाद से

सागर कर कसफता पहुँचते ही दुनिया बदल जाती है। सामाजिक स्थितियों की काई और पर्दे और घुंघराल में छिपते हुए मयों और औरतों की टोली पीछे छूट जाती है और आबादी के कड़ाई में अपने दो हीलहार बेटों की भेंट चढ़ा देनेवाले देवीदीन का तेरस्वी बेहूष उमरकर सामने आ जाता है। सत्य और अक्षय न्याय और अक्षय के सचर्य में आत्मा के नये चिह्नर दिखायी पड़ते हैं। आत्मा एक नरी ही आत्मा है, और जिस में जैसे कि जिसमें मं पुस्तिक का गया नाच हो रहा है— सामाजिक उपन्यास राजनीतिक उपन्यास बन जाता है।

५ दिसम्बर १९२९ को सम्बरवाल ने जापान से अपने एक पत्रे लत में लिखा था—

बेचार पंजाब जो अभी कुछ रोड पहले प्रकृति की ऐसी बुरी मार सह चुका है अब अपने को पुलिस अत्याचारी के आठक-राज्य में पाता है। यह बीड़ पंजाब में ही या यों कई कि हिन्दुस्तान में ही मुमकिन है कि पुलिस अंडर ट्रायल बँदियों को मार-मारकर सूरसहाम कर दे और उसका बाल भी बाँका न हो।

'पुलिस ने जैसा बाताबरण तैयार कर दिया है उससे यही मतीका निकालना पड़ता है कि बाइसराय ने जो चीपबा की है और सेबर सरकार ने हिन्दास्तान के लिए डामिनियम मन्नेमेण की जो उम्मीदें दिखायी हैं वह जनता की आँकां म बूक झारने और राष्ट्रीय कार्यकर्ताओं के बीच पूर बायड की एक और कामिग के अलावा कुछ नहीं है। बड़े रोव की बात है कि जहाँ एक मार साध मुस्सम ममार जाय रहा है वहाँ हिन्दोस्तान के मुसलमान अपने देन के बिरयी दानकर के हाथ का निमोना बन हुए हैं और अपनी सम्मिजित मानूमि के स्वराज्य की मीन आगे बडन के रास्य में राइ अटका रहे हैं।

मुँदीनी ने लत के इस टुकड़े के जबाब में लिखा था—

आपका पत्र मिली होगी कि इन साठ काप्रेस ने एक इरम और आगे बढ़ाया और पूर्ण स्वराज्य का निरखय किया। इन प्रस्य पर बड़ा मतभेद है। माइनेट मध्यममार्गी लोप इतल आगे तक जाना नहीं चाहत और तख राजनीति इगमे कम की बात गुनने के लिए तैयार नहीं हैं। मेरा गयास है कि पूर्ण स्वराज्य इगलैन्ड के मन्गडी गाम्माग्यबाव का अच्छा पबाव है। डामिनियम राटय पाण की टट्टी है। एक बीड़ जो मं ममत नहीं पाता वह है जापन का कीसिल-अट्टिपार का निरखय। जहाँ मं अपने बून भर जो कुछ तासा-मासा मिळ हम न लेना चाहिए। कीसिल को प्रमति-बिरोधी बिपान बनान का बीज क्यों बा? माइनेट एमा मूह का बीर ता नहीं है कि हम मने में उगहें और भी बा-ग्व मगन वराज्य करमे दे मरें।

अपने इसी जल में सम्भरवाना मे यह भी सिद्ध था —

जापान की जनता हिन्दोस्तान की और स वैसी उदासीन नहीं है वैया कि जापको जापान टाइम्स देखने से स्या होया। जापानी भाषा के पत्रों में बराबर हिन्दोस्तान के बारे में डेरो चीजें निकरती रहती है, और वही पर मसल महत्व जापानी भाषा के पत्रों का ही है अंग्रेजी के पत्र तो केवल विदेशी निवासियों के लिए छपते हैं और उनका प्रचार बहुत सीमित है क्योंकि जापानी उनकी खास बरबाद नहीं करते। जापानी भाषा के पत्र बहुत ही शक्तिशाली हैं और उनमें से कुछ तो ऐसे हैं जो दुनिया के किसी पत्र से टक्कर ले सकते हैं। हर जापानी दो-एक पत्र मंगाया है, चाहे वह पुस्तिसर्जन ही चाहे सड़क की सड़कई करनेवाला मेहरार।

महात्मा गांधी का माम यहाँ बच्चा-बच्चा जानता है। यहाँ पर उनकी जितनी इज्जत है उतनी आर के दूसरे किसी हिन्दोस्तानी या योरोपियन की शायर न होनी। अगर वह कभी यहाँ जायें तो साधारण जगत उनसे दर्शन या हस्ताक्षर के लिए पागल हो जायगी। बड़े अज्ञानों की बात है कि भारतीय नेता कभी जापान नहीं जाते हमेशा बोरोप और अमेरिका क बन्दर उघाते रहते हैं। जापानियों के लिए हिन्दोस्तान को जानना-समझना बहुत मुश्किल है जब तक कि हमारे भारतीय वहाँ भाँजे नहीं और दिन जोलकर उनसे बात नहीं करते।

बीर फ़िर अंत में — मैं चापसे अनुरोध करूँगा कि आप उस समय से प्रेरणा लेकर, जो हमारे बुधक-बुधकियाँ अपनी पदबलि मातृभूमि की मुक्ति के लिए कर रहे हैं, कुछ कहानियाँ रेसप्रेस के बिपत्र को लेकर लिखें।

यह भी कोई कहन की बात है, और सो भी मुँजीबी स ? यही तो उन्होंने किया है सारी ज़िन्गी — और अब फिर वह मड़ी आ रही है जब कि संपूर्ण जगतमा सब ओर से समेटकर इनी एक बिन्दु पर केंद्रित कर देनी होनी। यम की सहाय वृत्ति नहीं है संपर्न की परिस्थितियाँ जमी को और भी रेखांकित कर देती हैं। १ सितम्बर १९२९ को उन्होंने बिनोदशंकर व्यास को लिखा — 'मेरे बिचार में सभी के बिचार में साहित्य के रील लख्य है—परिष्कृति मनोरंजन और उद्घाटन। लेकिन मनोरंजन और उद्घाटन भी उसी परिष्कृति के अन्तर्गत आ जाते हैं क्योंकि केवल का मनोरंजन केवल जाँडों या लफ्फालों का मनोरंजन नहीं होता जसम परिष्कार का भाव छिपा रहता है। जसका उद्घाटन भी परिष्कृति का उद्देश्य सामने रखकर ही होता है। हम युव्य मनोमाओं को इसलिए नहीं बसति कि हमें उनकी शारीरिक बिबेचना करनी है बल्कि इसलिए कि हम सुन्दर को आकर्षक और असुन्दर को हेय दिखाना चाहते हैं।

२२ जनवरी १९३ को एक ठोस लेखक को उम्हने मिला—

“युवक को आजाबादी मन से लिखना चाहिए, उसकी भासाबासिता संक्रमक होनी चाहिए, जिसमें कि वह दूरतों में भी उसी भावना का संचार कर सके। मेरे बिचार में साहित्य का सबसे ऊँचा ठोस लेख्य दूरतों को उठाता उभर करता है। हमारे पर्यायवाची को भी यह बात भूलनी न चाहिए। किताब अच्छा हो कि आप 'मनुष्यों की सृष्टि कटें, निर्नीव' सच्चे स्वाधीन मनुष्य हीमनेमन् साहसी मनुष्य ऊँचे धारतों बाळ मनुष्य। इस वक्त ऐसे ही आरमियों की उभरत है। तीन दिन बाद २६ जनवरी को माघ वेस आजाबी की प्रतिज्ञा लेना— और फिर हर साळ लेना रहेना जब तक कि आजाबी मिस नहीं जाती। बाहिर है कि इस वक्त ऐसे ही आरमियों की उभरत है।

इसी बात को कहानी के चिन्म पर बाळते हुए मुंसी जी ने दो रोड बाव २४ जनवरी का बिनीबसकर प्यास को मिला— 'मैं जो चाहता हूँ वह यह है कि कहानियों के प्यास जीवन से किय जाय और जीवन की समस्याओं को हम करे।

कहानी स कबिता का काम लेना मुझे नहीं प्येबता। गद्यकाव्य हूबय के तारों पर थोट करता है कहानी से अधिक क्योंकि बहता थोट करने के लिए ही लिखा जाता है। केकिन उसकी थोट उस सगीत की ध्वनि के सजुम है जा एक बार काम में पड़कर एक थुटकी लेकर प्रायब हो जाती है। कहानी थापकी जीला के सामने थरिथों को वेस्तते हुए बिघाती है।

भाषना के चिन्म के रचना के स्तर पर राष्ट्रीय जीवन की आंधियों के समाप बचकर उनका लय रहे हैं केकिन बाहिर में कुछ पता नहीं चलता दिनचर्या में कोई अस्तर नहीं पड़ता वही पर स दस्तद, दस्तर में पर— और एक काम म बैठकर सिपाना-पड़ना।

इसी दिन, मन् २९ के बिनी महीने में उनका परिचय एक ऐसे व्यक्ति ने हुआ जा एक तरफ बचिमे का बच्छा काम करनेवाला बा तो दुनरी तरफ प्रतिज्ञा मगमन कपाकार। उस व्यक्ति का नाम जैनप्रभुमार था। दोनों सं बय का बड़ा अन्तर था केकिन मुगीजी के लिए उसका बोई महबूब न था और यांही एक कहानी को लेकर जा परिचय का मून स्थापित हुआ था उसने अनमित स्वभाव के बावजूद माण बरन् के भीतर-भीतर एक मच्छी और गदरी मीठी का रूप स लिया जिसमें दोनों और एक-ना भावण वा रहे पा। इसकी कहानी गुर जैनप्रभुमार की खानी मुनिए—

● मन् २ जाने जाने में बरन्माय् कुछ मिया बैठा। इन जाने दुम्नाहन पर मैं पहल-महल ता बहुत ही मनुचिन हुआ। पर बिपि पर विमता बन। जब गुता पर

यह आनिष्कार प्रकट हुआ कि मैं लिखता हूँ तब यह ज्ञान भी मुझ पर कि नहीं प्रेमचंद जो पूरी-राममूमि को अपने भीतर से प्रकट कर सकते हैं, कल्पवृक्ष से निकलने वाली 'माधुरी' के संपादक हैं। सो कुछ दिनों बाद एक रचना बड़ी हिम्मत बांधकर बाक से मैंने उन्हें भेज दी। लिख दिया कि यह संपादक के लिए नहीं है प्रेमचंद के लिए है। छापे में जाने योग्य तो मैं ही सकता नहीं पर लेखक प्रेमचंद उन पंक्तियों को एक निवाह देब सके और मुझे कुछ बता सकें तो मैं अपने को बन्ध मानूंगा। कुछ दिनों के बाद वह रचना ठीक-ठीक तौर पर लौट आयी। साम एक काई भी मिला जिस पर छापा हुआ था कि यह रचना प्रेमचंद के साहस बापस लौ जायी है। यह मेरे दुस्ताहस के योग्य ही था फिर भी मन कुछ बैठने-धा गया। मैं सब अपनी कहानी को अभी एक बार फिर पढ़ गया। आखिरी स्थिति समाप्त करके उसे बौटता हूँ कि पीठ पर फिरी लाल स्याही में अंग्रेजी में लिखा है—पूछो कि यह अंग्रेजी से अनुबाद तो नहीं है। जाने किस अर्थक्य पद्यति से यह प्रतीति उस समय मेरे मन में अचानक रूप से मर गयी कि हो न हो यह प्रेमचंद की के साथ है, जन्हीं के इत्साधार है। उस समय मैं एक ही भाव भागी इतजता में महा उद्य मेरा मन तो एक प्रकार से मुर्दा ही बसा था लेकिन इस छोटे से बाक्य ने मुझे 'सबोवन दिया। तब से मैं पूरा समझ गया हूँ कि 'सच्ची सहानुभूति का एक कण भी कितना प्रोणदायक होता है और हृदय को निर्मल रचना अपने आप में कितना बड़ा उपकार है। ॥

कुछ दिनों बाद एक और कहानी मैंने उन्हें भेजी। पहली कहानी का कोई उत्सव नहीं किया। यह फिर लिख दिया कि लेखक प्रेमचंद की उस पर सम्मति पाऊँ, नहीं अभीष्ट है अपने समय तो वह होगी ही नहीं। उत्तर में मुझे एक काई मिला। उसमें बा-तीस पंक्तियों से अधिक न थी। स्वयं प्रेमचंद की ये लिखा था—प्रिय महोदय दो (मा लीन) महीने में 'माधुरी' का विशेषांक निकलनेवाला है। आपकी कहानी उसके लिए चुन ली गयी है।

इस पत्र पर मैं विस्मित होकर रह गया। पत्र में प्रीत्याह्न का अर्थाई का प्रपंचा का एक शब्द भी नहीं था। लेकिन जो कुछ था वह ऐसे प्रोत्साहनों से मारी था। प्रेमचंद की सच्ची-प्रकृति की शक्ति पहली ही बार मुझे उस पत्र में मिल गयी। वह कितने सद्भावनाशील थे उतने ही उन सद्भावनाओं के प्रदर्शन में संकोपी थे। मैकी हो तो कर देना पर कहता नहीं—यह उनकी भावत हो गयी थी। मैंने उस पत्र को कई बार पढ़ा था और मैं बंग रह गया था कि यह व्यक्ति कौन हो सकता है जो एक अनजान लड़के के प्रति इतनी बड़ी दया का उपकार का काम कर सकता है, फिर भी उसका दलिक भी श्रेय देना नहीं चाहता। अथर उस पत्र के



साय कृपानाथ से भरे बाण्य भी होते तो क्या बेबा था। लेकिन प्रेमचंद बहु व्यक्ति था वो उनसे ऊँचा था। उसने कभी जाना ही नहीं कि उसने कभी उपकार किया है या कर सकता है। नेकी उससे होती थी उसे नेकी करने की जरूरत न थी।

लेकिन मैं तो सब बच्चा था न अपने को छपा देखने को उठानका था। लिखा — अगर बहु कहानी अपने योग्य हैं तो बनते अंक में ही छाया दीजिए। विशेषांक के लिए और भेज दिया।

उत्तर आया — त्रिप महोदय किताब का चुका है कि बहु कहानी विशेषांक के लिए चुन ली गयी है, उधरी में छपेगी।

इस उत्तर पर मैं उसके केसक की ममताहीन सद्भावना पर बलिष्ठ होकर रज गया। अब भी मैं उसको यादकर विस्मय से भर जाता हूँ। मुझे कामुम होता है कि प्रेमचंद जी की सबस प्रतिष्ठ विशेषता यही है। यही साहित्य में लिपी और पत्नी है। उनके साहित्य की रप-रग में सद्भावना व्याप्त है। लेकिन भावुकता में बहु सद्भावना फिती भी स्वल पर बच्ची या उबली नहीं हो गयी। बहु अपने में समायी हुई है छसक-छसक नहीं पड़ती। प्रेमचंद का साहित्य इतीकिए पर्याप्त कोमल न होने पर ठोस है और सरा है।

मुलाकात की कहानी कुछ कम बिलचल्य नहीं है —

कुम्भ के मैले पर इबाहाबाव जाता हुआ। वहाँ प्रेमचंदजी का पबाब भी बिल गया। सिता था — ममीगुरीला पार्क के पास काल मदान है। लीण्टे बरत आयो ही। बरत मायो।

सन् ३० की पनबरी थी। लासे जाड़े न। बनारस से गाड़ी बनमऊ राग के कोई चार बज ही जा पहुँची थी। अंपेय था और पील थी कुछ कम न थी। ऐसे बरत ममीगुरीला पार्क के पाठवासा काल मदान हाँ मिस बायया ही पर मुनकिन है अमुकिया भी कुछ हा। लेकिन दर-असल या परीगाली उठानी बड़ी उसक लिए मैं बिलकुल तैपार न था।

पाँच बजे के लगभग ममीगुरीला पार्क की सड़क के बीचोबीच जा पड़ा हा गया हूँ सामान छामने निरंन एक बूकान के तख्तों पर गया है। इबा-दुबा घरील आधमी टहलने के लिए जा-जा रहे हैं। मैं लगभग प्रणेट से घुलता हूँ — जी माऊ कीप्रिया। प्रेमचंदजी का मकाल आप बरतला सफने हैं? नबरीत ही नही है। जी हाँ प्रेमचंद।

उठी लड़क पर ही मुझे उ बज भाये। माडे उ भी बरने लये। तब तब दरंनों मज्जनों को मीने शया बिया। लगभग सभी को मीने अपने अनुनगमान वा लाय बनाया था लेकिन मेरे सामने में ममी मे आने वा निरड अनमयं प्रबट रिया।

बायपास मकान कम न बे और काल भी कम न बे। और वहाँ में बाड़ा बा वहाँ से प्रेमचंदजी का मकान मुश्किल से बीस पत्र निकला केदिम उस रोज सम्भ्राण्त भेजी से प्रेमचंदजी तक के उस बीस पत्र के दुर्लभ्य अन्तर को लिखने में कायरी देर लगी। और क्या इसे एक संयोग ही कहूँ कि अन्त में जिस व्यक्ति के नेतृत्व का सहाय वामकर में उन बीस पत्रों को पारकर प्रेमचंदजी के घर पर आ कता वह बुल-सीस की दृष्टि से समाज का उच्छिष्ट ही था ?

क्या। जो सज्जन अन्तर बढ़े वे उनकी बड़ी पत्नी मूर्छे की पाँच स्वयेवाली लाल इमली की बादर जोड़े वे जो कायरी पुछनी और चिकनी की बाकों में जाये जाकर मांने को कुछ डँक-सा किया था और मांभा छोटा मामूम देता था। फिर अस्वत से छोटा प्रतीत हुआ। मामूली बोटी पहले वे जो बुटनों से उठ गीने तक आ गयी थी। मैंने जान लिया कि प्रेमचंद मही हैं। इस परिधान से बचने का अनकाय न था। पर उनको ही प्रेमचंद जानकर मेरे मन को कुछ मुक्त उस समय नहीं हुआ। क्या बीते जी प्रेमचंद इनको ही मानता होगा ? प्रेमचंद के नाम पर यह सामने बाड़ा व्यक्ति इतना साधारण इतना स्वल्प इतना देहावी मामूम हुआ कि इतने में उस व्यक्ति ने फिर कहा— बाबो मार, आ बाबो। मैं एक हाथ से बस उठ्य जीने पर जो चढ़ने लगा कि उस व्यक्ति ने छटपट

बाकर उस बस को अपने हाथ में लेना आहा।  
 पर सुम्पबस्थित नहीं था। बापन में पानी निबड़ेस्य फैला था। बीजें भी ठीक अपने-अपने स्थान पर महीं थी। पर पहली निपाह ही यह जो कुछ दीक्षा बीच सका। जाने तो मेरी निपाह इन बाकों को देखने के लिए खाली ही नहीं रही।

सब काम छोड़कर प्रेमचंदजी मुझे लेकर बैठ गये। साथ बज गये साड़े साथ बज गये बाठ होने जाये बाकों का सिद्धसिखा टूटा ही न था। इस बीच मैं बहुत कुछ मूल गया। मूल गया कि यह प्रेमचंद है हिन्दी के साहित्य सम्राट हैं। यह भी मूल गया कि मैं उसी साहित्य के टट पर मौनक बाड़ा अनजान बाकक हूँ। यह भी मूल गया कि क्षण भर पहले इस व्यक्ति की मुद्रा पर मेरे मन में अतीति अनास्था उत्पन्न हुई थी।

उस व्यक्ति की बाहरी अनाकर्षकता उस क्षण से जाने किस प्रकार मुझे अपने आप में सार्पक वस्तु बाग पड़ने लगी। उनके व्यक्तित्व का बहुत कुछ आकर्षण उसी अ-कामक आनन्दन में था।  
 इस अर्थ बाकर प्रेमचंद की मेरी अपनी कास्वतिक मूर्तियाँ जो अतिथय

छटामपी और प्रियदर्शन भी एकदम बहकर बुर-बुर हो गयीं और मुझे तनिक भी दुःख नहीं होने पाया ।

मैं यह देखाकर विस्मित हुआ कि आधुनिक साहित्य की प्रवृत्तियों से वह कितने धनिष्ठ रूप में अवगत हैं। योरोपीय साहित्य में जानने योग्य उन्होंने जाना है। जानकर ही नहीं छोड़ दिया उस भीतर से पहचाना भी है और फिर परखा और ठीका है। वह अपने प्रति सचेत है, Consistent है, स्वनिष्ठ है।

मैंने कहा — बंगाली साहित्य हृदय को अधिक छूता है — इससे आप सहमत हैं? तो इसका कारण क्या है?

प्रेमचन्द्री ने कहा — सहमत तो हूँ। कारण उसमें स्त्री भावना अधिक है। मुझमें वह काफ़ी नहीं है।

सुमकर मैं उनकी ओर देख उठा। पूछा — स्त्रीत्व है इसी से वह साहित्य हृदय को अधिक छूता है?

बोके — हाँ तो। वह अमह-बगह स्मरणशील हो जाता है। स्मृति में भावना की तरलता अधिक होती है, संकल्प में भावना का काठिन्य अधिक होता है विधायकता के लिए दोनों चाहिए—

बहते-बहते उनकी आँखें मुझसे पार कहीं देखने लगी थीं। उस समय उन आँखों की सुर्खी एकदम गायब होकर उनमें एक प्रकार की पारदर्शिता भर गयी थी मानों अब उनकी आँखों के सामने जो हा स्वप्न हो। उनकी बाणी में एक प्रकार की भीषी कातरता बजने लगी। वह स्वर मानो उच्छ्वास में निवेदन करता हो कि मैं कह तो रहा हूँ पर जानता मैं भी कुछ नहीं हूँ। धर्य तो धर्य है तुम उन पर मत रबना। उनका अघोचर में जो भाव ध्वनित होना हो उसी में पहुँचकर जा पाओगे पाओगे। वही पहुँचो हम-तुम पर रको नहीं। राह में जो बाधा है लाँचते बाँधो लाँचते बाँधो उल्लिखित होने में ही बाधा की मार्ककता है।

बोस — जैनेन्द्र मुझे कुछ ठीक नहीं मानूम। मैं बंगाली नहीं हूँ। वे लोग मायुक्त हैं। भावुकता से जहाँ पहुँच सकते हैं वहाँ मैं ही पहुँच नहीं। मुझमें उतनी देन नहीं? ज्ञान से जहाँ नहीं पहुँचा जाता वहाँ भी भावना से पहुँचा जाता है। वहाँ भावना से ही पहुँचा जाता है। लेकिन जैनेन्द्र में सोचता हूँ वाठिन्य भी चाहिए।

बहकर प्रेमचन्द्र जैसे बच्चा की भाँति लज्जित हा उठे। उनकी मूर्ते इतनी बनी थी कि बेहद। उनमें सचेत भास तब भी रहे होगे। फिर भी मैं कहता हूँ वह कम्पा की भाँति लज्जा में बिर पय। बोके — जैनेन्द्र रबीन्द्र दानू दोनों महान् हैं। पर हिन्दी के लिए क्या वही रास्ता है? मेरे लिए तो वह राह नहीं ही है।

उनकी बाजी में उस समय स्वीकारोक्ति ही बजती मुझे सुन पड़ी। यद्यपि की तो वहाँ समाजना ही न थी।

बाजों का सिलसिला अभी और भी चलता लेकिन भीतर से खबर आयी कि जमी डाक्टर के यहाँ से दवा तक लाकर नहीं रखी गयी है। ऐसा हो क्या रहा है! दिन कितना बड़ गया क्या इसकी भी खबर नहीं है?

प्रेमचंद अमायाचित भाव से उठ खड़े हुए। बोले — बच दवा से माऊं, जेनेन्द्र। इसी बाजों में कुछ सवाल ही न रहा।

कहकर इतन धार से कूहकहा लगाकर हुंसे कि छत के कोनों में लगे मकड़ी के जाले हिल उठे। मैंने इतनी ज़ुलो हुईसी जीवन में धायद ही कभी सुनी थी।

गांधीजी ने बाइसराय को जो छत २ मार्च को लिखा था उसका बहुत ही ठप्पा बहुत ही खला मौकरमाहिपत से जरा हुआ खबाब उबर से आया — हमें बड़ा खेप है कि मि गांधी एक ऐसा पत्ते अपनाते की सोच रहे हैं जिससे स्पष्ट रूप से कानून का उल्लंघन होगा और सार्वजनिक शान्ति के लिए संकट उपस्थित होगा

गांधीजी ने खबाब दिया — मुटने टेककर मैंने रोटी मारी थी और मसे पत्थर मिला। अंग्रेज जाति केवल शक्ति की भाषा समझती है। बाइसराय के खबाब से मुझे कोई छात्रुब नहीं हुआ। वह ज़ोम एक ही सार्वजनिक शान्ति जानती है और वह सार्वजनिक कायपार की शान्ति है। हिन्दुस्तान एक बिघट्ट क्रीडखाना है। मैं इस (अंग्रेजी) कानून को मानने से इन्कार करता हूँ और इस अनिर्धार्य निर्विकल्प शान्ति की संतप्त एकरसता को भंग करना अपना पुनीत कर्तव्य समझता हूँ जिससे राष्ट्र का हृदय भीतर ही भीतर घुटा जा रहा है।

महाभारत बारम्भ होनेवाला है। कुरुक्षेत्र में से गईं आमने-सामने लड़ी हैं। रमभेरी बजने की देर है।

मुंसीजी भी अपने घर के एक कोने में बैठे हुए इसी महाभारत की अपनी तैयारियों में लगे हैं। मुस्क की कलम के सिपाहियों की कुछ कम बकरत नहीं है। वह इकलम के सिपाही हैं। मकजर ने कहा है जब तोप मुजा बल हो मकजार निकालो। बात मजाक में कही गयी है मगर मजाक नहीं है।

सन् २९ अरम और ३ शुरू होते-होते उन्हीं बाजों तरह थोड़ा बीड़ा दिये कि वह 'हुंसे' के नाम से एक साहित्यिक-राजनीतिक मासिकपत्र निकालने जा रहे हैं।

१२ अरबरी १९३ की निगम साहब को लिखा — "मैं फागुन मारी गये धाल से एक हिन्दी रिवाला 'हुंसे' निकालने जा रहा हूँ। १४ सुप्रहात काहंगा और

बयाबातर अफ़सानों से तास्मुक़ रहेगा । हे तो हिमाक़त ही बदे सर बहुत और नफ़र कुछ नहीं केकिन हिमाक़त करने को भी चाहता है । बिन्दयी हिमाक़तों में मुबर गयी एक और सही ।”

यानी कि मुंठीजी अपनी तैयारियों में किसी से पीछे रह जानेबासे बसामी नहीं है । गांधीजी की डीडी यात्रा २५ मार्च को शुरू हुई । मुंठीजी उसके पन्द्रह रोज़ पहले ही अपना मार्च का बंक लेकर, मैदान में आ बटे थे ।

इस की नीति की घोषणा करते हुए उन्होंने लिखा —

● इस के लिए यह परम सीमाय्य की बात है कि उसका ज़म ऐसे घुम बबसर पर हुआ है जब भारत में एक नये युग का आवमन हो रहा है जब भारत परधीमता की बेड़ियों से निकलने के लिए तड़पने लगा है । इस तिथि की यादगार एक दिन देव में कोई बिद्यालू रूप धारण करेगी ।

कहते हैं जब भी रामचन्द्र जी समुद्र पर पुल बांध रहे थे उस बन्त छोटे छोटे पशु-पक्षियों ने मिट्टी सज-साकर समुद्र के पाटने में मन्द बी थी । इस समय वेस में उससे नहीं बिकट संभाम छिड़ा हुआ है । भारत ने सान्तिमय समर की भेरी बजा दी है । इस भी मानसरोवर की शक्ति छोड़कर, अपनी गन्ही-सी शोंब में चुटकी भर मिट्टी लिये हुए समुद्र पाटने — जात्रागी की जग में पीप देने — बसा है । समुद्र का बिस्तार देखकर उसकी हिम्मत घू रही है लेकिन सम-शक्ति ने उसका दिक्क मजबूत कर दिया है ।

न डामिनियन मींगे से मिलेगा न स्वराज्य । जो दक्षिण डामिनियन छीनकर ले सकती है, वह स्वराज्य भी ले सकती है । इंग्लैण्ड के लिए बोलों समान हैं । डामिनियन स्टेटस में गोममेड काण्ड्रेस का उलसाबा है । इसलिये वह भारत को इस उलसाबा में डालकर भारत पर बहुत दिनों तक राज्य कर सकता है । फिर उममें किस्तों की गुंजाइश है । और किस्तों की अबधि एक हजार बपीं तक बढ़ाई जा सकती है । इसलिये इंग्लैण्ड का डामिनियन स्टेटस के नाम से न पबढ़ाना समान में जाता है । स्वराज्य में किस्तों की गुंजाइश नहीं न मासमज का उलसाबा है । इसलिये वह स्वराज्य के नाम से बाना पर हाथ रगता है । किन्तु हमारे ही भाइयों में इस प्रश्न पर क्यों मतभेद है । हमका रहस्य भासागी न समान में नहीं जाता । वे हमने बममज ता हैं नही कि इंग्लैण्ड की इस बालू को न समझे हों । अनुमान यही हुला है कि इन बालू का समसकर भी वे डामिनियन के पंग में हैं । इनका कुछ और ज़ापर है । डामिनियन पध को प्रीर में बेगिएं तो उममें हमारे राजे

महजने हमारे जमीन्दार, हमारे जमीनानी भाई ही क्यावा नबर माते हैं। क्या इसका यह कारण है कि वे समझते हैं कि स्वराज्य की रक्षा में उन्हें बहुत कुछ बबरकर रहना पड़ेगा ? स्वराज्य में सबदूरों और किसानों की भाषाज इतनी निर्दल न रहेगी ? क्या यह लोप उस भाषाज के भय से परपण रहे है ? हमें तो ऐसा ही जान पड़ता है। यह अपने न्ति में समत रहे है कि उनके हितों की रखा अंग्रेजी सामन ही से हो सकती है। स्वराज्य कभी उन्हें गरीबों की कुचलने और उनका रक्त बूधने न देगा। स्वराज्य गरीबों की भाषाज है जोनिनियन गरीबों की कलाई पर मोटे होनेवालों की। •

सभी स्वाधीनता चाहनेवालों का सम्मिश्रित ध्यायेकन है यह लेकिन स्वाधीनता का अर्थ सबके लिए एक नहीं है। सबके असय-अलग विषय हैं अलग-अलग परिदृश्यमार् हैं। समान बात सब में एक ही है — विदेशी शासता से मुक्ति। उसके बाद सबको घूट है, जैसे चाहे जिस ओर चाहे के बडे। मुंशीजी के पास भी अपनी उसबीर है, उसी को उन्हें रखना है देश के सामने और बुढाना है देशवालों के लिए नैतिक-मानसिक आहार जिस पर आजादी के नैतिक पलते हैं और रक्तबीज की कहानी सच होती है।

महात्माजी के पत्र के बारे में मुंशीजी ने लिखा —

• महात्माजी ने बाइसराज्य को जो पत्र लिखा है उसे अस्टीनेटम कहना उस पत्र क महत्व को मिटाना है। यह एक सच्चे आत्मदर्शी हृदय के उद्गार हैं। उसमें एक भी ऐसा शब्द नहीं है जिसमें माक्रिम्य क्रोध द्वेष या कटुता की संघ हो। महात्मा याजी ने स्पष्ट कह दिया है कि हम पर के लिए अधिकार के लिए जो दिन-दिन चाहते हम स्वराज्य चाहते हैं उन मूयि बेइबात आदर्शियों के लिए जो दिन-दिन दलित होने जा रहे हैं। अपर मात्र सभी अंग्रेज अजस्रों की जगह हिन्दोस्तानी हो जायें तब भी हम स्वराज्य से उठने ही बूर रहेंगे जितने इस बकन हैं। इनाप उद्देश्य तो सभी पूरा होगा जब हमारी दलित श्रुयित बलहीन जनता की रक्षा कुछ सुबरेपी। अगर हमारे ही देश में हमारे ही कुछ ऐसे भाई हैं जिन्हें इन विवेदन में कोई नयी बात कोई नया सन्देश नहीं नबर आता। यह अब भी यही रट लगाये जा रहे हैं कि महात्मा जी भाग से वेक रहे हैं, समाज की जड़ खोदनेवाली शक्तियों को उतार रहे हैं। जिन्हें अंग्रेजों के साथ मिलकर प्रजा को सूटते हुए अपना स्वार्थ मिज करने का बबरकर प्राप्त है वे इसके सिवा और कह ही नया सकते हैं। वे अपना स्वार्थ देखते हैं, अपनी प्रभुता का सिक्का जमते देखना चाहते हैं। उनके स्वराज्य में गरीबों को, सबदूरों को किसानों को त्याग नहीं है, त्याग है केवल अपने लिए। अपर जिस व्यक्ति के हृदय में गरीबों की दिन-दिन गिरती हुई रक्षा

बिनाकर ज्वाला-सी उठती रहती है, जो उनकी भूक बेचना देख-देकर तड़प रहा है वह किसी ऐसे स्वराज्य की कल्पना से संतुष्ट नहीं हो सकता जिसमें कुछ ऊँचे दर्जे के आश्रमियों का हित हो और प्रजा की बचा ज्यों की त्यों बनी रहे। हमारी सड़ाई केवल अग्रज सत्ताधारियों से नहीं हिन्दुस्तानी सत्ताधारियों से भी है। हमें इस क्लेश नबर भा रहे हैं कि यह दोनों सत्ताधारी इस अधार्मिक संग्राम में आपस में मित्र भावों और प्रजा को बचाने की इस आन्दोलन को बुचलने की कोसिस करेंगे •

मुघलीबी पुराने बानी हैं। राष्ट्रीय आन्दोलन के जोशीले तिरपाही हैं—इस्लम के तिरपाही—लेकिन अपने साधने-विचारने पर किसी तरह की ईद या पामन्दी उन्हें मंजूर नहीं है। हमेशा सबसे दो इन्तज भाये रहते हैं। कोई एम नहीं अगर आज लोग उस तरह से नहीं सोचते या सोचते डरते हैं—कल के रोड सोचेंगे उसकी हिम्मत घुसेगी।

और इस तरह वह अपनी चौकी सँभालकर बैठ जाते हैं योगी की तरह अपना ध्यान सब ओर से समेटकर प्रस्तुत संघर्ष पर केन्द्रित कर लेते हैं और इस्लम तैजी से दीड़ने लगता है। हर महीने एक कहानी और एक-बा सेन्त्र कभी दो कहानियाँ भी (जुकूस समर-यात्रा पत्नी से पति सराब की बूकान मीक) और मयन कोष से तिलमिलते हुए संपादकीय

नये उपवास की चौपचा भी पहले ही अक में जा गयी थी (कि वह अगले अंक से पारभाहिक प्रकाशित होगा) सेवित काम की उस बीद में वह संभव नहीं हुआ बस कबानक और खरिनों का एक हल्का-सा प्राक्य समर-यात्रा कहानी में अपनी शक्त दिगाकर रह गया कर्मभूमि स्थिते की पड़ी जायी तब जब एक ओर संघर्ष तेज हुआ उसकी दास्त कुछ और साऊ हुई और बूमरी ओर प्रेम की जमानत और परती की गिरफ्तारी से कर्मभूमि पर क भीतर घुस आयी।

सेवित बा अभी कुछ भाव की बात है।

२५ मार्च का साधीजी ने डाँडी-यात्रा शुरू की और ६ अप्रैल को वही मगड बिजारे नमक घटोगमा और नमक बताना शुरू हुआ—जो बि मारे देस क किंग आन्दोलन शुरू करने का संकेत था। जयह-जयह नमक बनने लगा सराब और बिदगी कपड़ा की दुकानों पर बग्गा दिया जाने लगा।

मुघलीबी ने ७ अप्रैल को निमम नाहूब को लिखा— इस नमक में गलतजान में डाल रना है। इस्तीफाने-कन्व परजत हो रहा है।

इसके अन्तर्गत में भारत के सारे नियम माहक ने कहीं गायब यह लिख दिया कि नमक-आन्दोलन बेबका छड़ा गया है। फिर वगैरे वा मुर्दाबी ने फौरन पकटकर २३ अप्रैल १९३० के अपने छत्र में रखा गया—

नमक की आप कम्प-अड-बस्त' ख्याल करते हैं। जिस तरह मीन हमारा इन्क-अड-बस्त होती है साहूकार का तशाबा हमारा इन्क-अड-बस्त होता है उन्ही तरह ऐम सार काम जिनमे हमें मासी वा बस्ती मुकसान का भ्रिगा हो इन्क-अड-बस्त मालूम होने है। इस तहरीक की कबुलियत ही बतना रही है कि यह इन्क-अड-बस्त नहीं है।

जीर फिर हंतबानी में लिखा—

'पहले किसी की समझ में न आया कि महात्मा जी क्या करन जा रहे हैं। मजाक भी उड़ाया गया। एक पब्लर ने अपने मगामरी टटटुमीं को बसा करके अपने दिल क फोले फोड़े हुए इन सधाम को दुःखमन प्रहसन बतलाया। गवर्नर साहब को क्या मालूम था कि यह दुःखमन प्रहसन वा मप्ताह ही में मजाकरी वा एक प्रकण्ड प्रबाह सिद्ध हो जायवा जिनो नीकरपाही की छापी संपठिन पाकि भी न रोक सकेयी। वह सब क्रिया गया वा एमी परिस्थितिया में स्वच्छाकारी घामन किया करता है। हमारे नेता चुन-चुनकर जल भंड दिये मम अग्रजों को मये-मये अविचार दिये गये बाइनपाय न भी अपने स्वर्जित अस्त्र निकाल लिये पही तक कि इन लुधीर ममी में बेबगामीं को परंतसिलरों से दो-एक बार उतरकर नीचे आना पड़ा वा भारत के इतिहास में अनहोमी बाउ थी— लेकिन स्वराज्य सेना के इन्क आम ही बड़ जाते हैं। जैसे बकल हार जाते हैं तो पीठ काठने लगते हैं वही हाल नीकरपाही का हो रहा है। वही जिहवी जनता पर बडों जीर गोलियों की बीछार हो रही है वही जनता में पूट डालने की कोशिश हो रही है। डिप्लों पर रोक लगायी जा रही है। ठार की खबरों का सेन्सर हो रहा है। न कोई कानून है न कानूना न भीति न धर्म। बस जिनर बैलिण्ड, कबड्डीमों, एक बबराये हुए मादमी की बीसताहट। मयर हम इन बाजों की सिद्धायत नहीं करते। इन्ही अस्पत्नों से तो हमारी विजय है। सधियात मीन के बिहू है। हम वा महात्माजी की मूस-बूस के कायल हैं। जो बात की खुन की कथम काजबाज की न जान कहीं से ममक-कर बीर निकाला कि उसने देखे-देखे सेना में आप बपा दी। अंधेरी राज्य के पहले भारत में यह कर कभी न लगाया गया था। आज भी दुनिया मर में भारत ही एक ऐसा देश है जहाँ नमक पर कर लगाया



देकर आबा-सी उठती रहती है, जो उसकी मूक बेदना बेद-बैतकर तड़प रहा है वह किसी ऐसे स्वराज्य की कल्पना से संतुष्ट नहीं हो सकता जिसमें कुछ ऊँचे दर्जे के आत्मियों का हित हो और प्रजा की दगा णों की स्वों बनी रहे। हमारी लड़ाई केवल अंधज सत्ताधारियों से नहीं हिन्दुस्तानी सत्ताधारियों से भी है। हमें ऐसे लक्षण नजर आ रहे हैं कि यह लोगों सत्ताधारी इस अनाधिक संग्राम में आपस में मिस जायेंगे और प्रजा को बचाने की इस आन्दोलन को कृचरने की कोशिश करेंगे •

मुंशीजी पुणन बागी हैं। राष्ट्रीय आन्दोलन के जोशीले सिपाही हैं—इस्लाम के सिपाही—सेकिन अपने सोचने-बिचारने पर किसी तरह की डीर या पाबन्दी उन्हें मंजूर नहीं है। हमसा सबसे दो इस्लाम आये रहते हैं। कोई शक नहीं अजर आज भोग उस तरह से नहीं सोचते या सोचते उरठ हैं—कल के रोज सोचने उसकी हिम्मत पुष्पी।

और इस तरह वह अपनी जीकी सँभालकर बैठ जाते हैं, योगी की तरह अपना ध्यान सब ओर से समटकर प्रस्तुत सपर्य पर केन्द्रित कर लेते हैं और इस्लाम तैजी से दीनने समता है। हर महीने एक कहानी और एन-बी सेन कभी दो कहानियाँ भी (बुलस समर-यात्रा पत्नी से पनि दरार की दूकान मीक) और सयन श्राप से विरमिलाते हुए संपादकीय

नये उपन्यास की घोषणा भी पहले ही अक में आ गयी थी (कि वह अगल अंक से धारावाहिक प्रकाशित होगा) सेकिन काम की उम भीड़ में वह संभव नहीं हुआ बम कपालक और चरित्रों का एक हल्का-सा प्रारूप समर-यात्रा कहानी में अपनी असक दिवाकर रह गया कममूमि सिखने की पड़ी आयी तब जब एक और गणप ठेज हुआ उसकी शक कुछ और साक हुई और बुरारी और प्रेम की बमानत और परती की गिरफ्तारी में कर्ममूमि घर के भीतर बुन आयी।

लविन बा बनी कुछ आम की बात है।

२५ मार्च का गांधीजी ने डोडी-यात्रा गुरु की और ६ अप्रील को वहीं समुद्र बिमाने लमक बटोरना और लमक बनाना शुरू हुआ— जो कि गारे देग के लिए आन्दोलन गुरु करन का नभेग था। जगह-जगह लमक बनने लया दरार और बिदेगी बपड़ों की दूकानों पर घरना दिया जाने लया।

मुंशीजी ने ७ अप्रील को निगम मादक का सिगा— इस समय में गलजान में डाल रना है। इमीताने-जम्ब एउमन हो रहा है।

इसके जवाब में आऊन के मारे निगम साहब ने कहीं धायद बह स्थित दिया कि नमक-आन्दोलन बेबकत छोड़ा गया है। फिर क्या था मुंशीजी ने पौरुष पकटकर २३ अप्रैल १९३० के अपने छत में रहा क्या —

नमक को माप इन्क-अब-बस्त' लयास करते हैं। जिस तरह मीठ हमेशा इन्क-अब-बस्त होती है साहूकार का तलाबा हमेशा इन्क-अब-बस्त होता है वसी तरह ऐसे सारे काम जिनमें हमें माफी या बख्शी मुक़द़ान का भिन्ना हो इन्क-अब-बस्त मासम होते हैं। इस तहरीक' की कबूलियत' ही बतला रही है कि यह इन्क-अब-बस्त नहीं है।

और फिर हंसवापी में लिखा —

'पहले किसी की समझ में न आया कि महारमा जी क्या करने जा रहे हैं। मन्नाड भी उड़ाया गया। एक बर्बर ने अपने पद्यामरी टट्टियों को जमा करके अपने दिक् के कंधेसे फोड़ते हुए इस सप्रास की दुःखमय प्रहसन बतसाया। बर्बर साहब को क्या भासूम था कि यह दुःखमय प्रहसन दो सप्ताह ही में आजादी का एक प्रचण्ड प्रवाह तिरछ हो जायगा जिसे लीकरघाही की सारी संयजित धक्ति भी न रोक सकयी। यह सब किया गया जो ऐसी परिस्थितियों में स्वेच्छाचारी शासन किया करता है। हमारे नेता चुन चुनकर जेक जेक दिये गये अष्टशरों को भये-जप भबिकार दिये गये बाइसराय ने भी अपने स्वरसित जलन निकाल दिये वहाँ तक कि इन सू और गर्मी में बेबताओं को पर्वतधिसरों से दो-एक बार उतरकर नीचे माना पड़ा जो भारत के इतिहास में अनहोनी बात थी — लेकिन स्वराज्य सेना के क्रम आने ही बड़े बात है। जैसे बच्चे हार जाते हैं तो दाँत काटने लगते हैं वही हाल लीकरघाही का हो रहा है। नहीं निहत्थी जनता पर बंदों और योद्धियों की बीछार हो रही है, कहीं जनता में फूट डामने की कोशिश हो रही है। फिलमों पर रोक लगायी जा रही है। तार की खबरों का सेन्सर हो रहा है। न कीर्त कानून है न कायदा न नीति न धर्म। इस जिवर हेतिए, लम्बकधोर्षों एक बबरामे हुए आदमी की बीछताहट। मगर हम इन बातों की गिकायत नहीं करते। हमें अन्य धों से तो हमारी बिजय है। सन्निपात मीठ के चिह्न है। हम तो महारमाजी की मूल-भूत के कायब हैं। जो बात की खुदा की कसम साजबाब की। न जाने कहीं से नमक-कण खोज निकाला कि उबने देकते-देकते देश में माय क्या दी। अंग्रेजी राज्य के पहले भारत में यह कर कमी न लयाया गया था। आज भी दुनिया भर में भारत ही एक ऐसा देश है जहाँ नमक पर कर लगाया

जाता है। मुसलिम स्मृतिकारों ने तो नमक हवा और पानी पर कर लगाना निषिद्ध बतलाया है पर हम १५० वर्षों से यह कर देते आये हैं और मजा यह कि जिस बस्तु पर वो खाना मन लागत भाये उस पर बीस जाने मन कर लिया जाता है

सबसे बड़ी बात यह है कि इस कर को सामूहिक रूप से जिहायत आमानी से छोड़ा जा सकता है। एसा कोई मू-आम नहीं जहाँ सोनी मिट्टी न हो और दाहर या गाँव दोनों ही जगहों के आवसी बड़ी संख्या में जमा होकर इसे छोड़ सकते हैं और सरकारी नमक को बाजार से निकाल बाहर कर सकते हैं।

नमक के इन तूफानी दिनों में मुंशीजी अभीमूहीबा पार्क में रहे। घर से सजा हुआ काँग्रेस का दफ्तर था। यानी आन्दोलन का हेडक्वार्टर। और सामने अभी महीबा पार्क। दाहर के सारे जम्म बही आकर छाम होठ पे और दूर शाम एक न एक मीटिंग का आयोजन रूठा था। वहीं पर नमक बनता वहीं पर बिदही कपड़ों की होसी जलती। कितनों ही को मुंशीजी ने अपने हाथ से दाहर का कुर्ता-टोनी पहलाकर, पाग का बीड़ा देकर और उनकी पत्नी के माथे पर ठिठक लगाकर मामन पार्क में नमक बनाने के लिए भेजा।

आन्दोलन के बुन्दरे पहलकों पर भी निगाह डालते हुए मुंशीजी ने लिखा —  
 'कहा जा रहा है, और लिखा जा रहा है कि मुसलमान इस आन्दोलन में बाँधस के साथ नहीं हैं। मुसलमान पैता जखदार बन-बनकर डूँद हों मार सायें कितनी ही काँग्रेस कमेटियों के प्रनाम और मंत्री हों लेकिन फिर भी यह कहा जाता है कि मुसलमान काँग्रेस के साथ नहीं हैं। मामूम नहीं यह यह कह-कहकर किसे धोखा देना चाहते हैं। हाँ हम यह मानने को तैयार हैं कि हमारे गाम यह दर माहयाम जिनकी संख्या इस्वर की दया से अंग्रेजों की अर्थात् शृषा होने पर भी बहुत ज्यादा नहीं बगाड़ हमारे साथ नहीं है। मगर जहाँ माहूष नहीं है वहाँ उध माहूष भी तो नहीं है। यों बहिर कि यह उन लोगों का आन्दायन है जो अपने सारे सरतों का मोचन एकमात्र खराय्य हीको समझते हैं जो गरीब हैं भूने हैं दखिन हैं वा जो पैरल से भग्न हुआ हैगाभिनाम से चमरना हुआ दृश्य रगते हैं और यह देगाजर जिनका गून गोपने लगता है कि कोई दुमरा हमारे ऊपर गामन बने। जममें न हिम्नू की बंद है न मुसलमान की।

इसी दिनों मुंशीजी की पत्नीजान एक मुसलमान मुनजमान नबपुराह में हुई जो कायम का नाम करता था। इन अचानक मुसाजान ने धीरे-धीरे बग्न अचड़ी दाम्नी का एक ल लिपा और भागाऊ हुमेन बराबर पर जाने लग। अगली इस पदमी मुसाजान के बारे में यह लिखते हैं —

“बिन्दुन अचानक अर्धन १ ३ की एक गाम लगनऊ काँग्रेस के दफ्तर में

उससे मेरी मुलाकात हुई। मैं किसी छोटे-मोटे काम से वहाँ गया था एकाएक मेरे दिल में ख्याल आया कि किसी से सख्तेबाले गाने का मतलब पूछना चाहिए। मार्च करते वक़्त मैं भी अपने साथ के दूसरे बाल्टियरों के साथ उसकी याता यात किन्तु उसका मतलब मैं कुछ न समझता था हिन्दी की मेरी जानकारी नहीं के बराबर थी। वहाँ पर जो लोग थे उनमें से क्याशतर मुझसे कुछ बहुत ख्याल लायक न थे। तभी किसी ने कहा 'बल्लो प्रेमचंदजी से पूछें और यह कहकर एक भारमी की ओर मुझ को धरन की बाती-कुर्ता-टोपी पहने कुछ घों ही से फटीयर लोगों के साथ चुपचाप एक बेंच पर बैठ गया। मैंने पहले भी उसको देखा था जब कभी घाम को मुझे वहाँ इतर में जाने का मौका आया था — बैसे मैं अक्सर वहाँ आना बचा पाता था और अपने हस्के यानी नलास और चौक में बना रहता था — लेकिन कभी कोई पास ध्यान नहीं दिया था। उसके बेहरे-मोहरे कपड़े-सत्ते किसी में कोई लास बात न थी और फिर वह बहुत धामोघ और बीन हीन-सा भावनी था। मैंने कभी उसे बड़े लोगों से बातें करते नहीं देखा वह तो अपने ही जैसे बीन-हीन अति साधारण लोगों के साथ बस एक बेंच पर बैठ रहता था कि जैसे वहाँ पर बैठने और लोगों की बातचीत सुनने के अलावा उसे और किसी चीज़ से कोई मतलब न हो। इन सारी बातों से वह भावनी इतना साधारण इतना अ-विशेष जान पड़ता था कि प्रेमचंद जी नाम का भी तत्काल मेरे मन पर कोई असर नहीं हुआ। मुझे कुछ बेर लगी उनको पहचानने में।

अपनी इच्छाओं आकांक्षाओं के बारे में अपने मन की जाती देते हुए उन्होंने इन्हीं दिनों अपने मित्र बनारसीदास बतुबंदी को लिखा था —

मेरी आकांक्षाएँ कुछ नहीं हैं। इस समय तो सबसे बड़ी आकांक्षा यही है कि हम स्वराज्य-संघाम में बिजयी हों। जन या यरा की लाकसा मुझे नहीं रही। याने भर को मिल ही जाता है। मोटर और बँगले की मुझे हवस नहीं। हाँ यह जरूर चाहता हूँ कि बो-बार जैसी कोटि की पुस्तकें लिपू पर उनका उद्देश्य भी स्वराज्य-बिजय ही है। मुझे अपने दोनों लडकों के विषय में कोई बड़ी लाकसा नहीं है। यही चाहता हूँ कि वह मानदार, सच्चे और पक्के इरादे के हों। बिलासी बनी जुदादरी सज्जान से मुझे बुना है। मैं दालि से बैठना भी नहीं चाहता। साहित्य और स्वराज के लिए कुछ न कुछ करते रहना चाहता हूँ। हाँ योगे दास और ठोका भर थी और मामूली कपड़े मयस्सर होते रहे।

आम्बोलन दिनींदिन बोर पकड़ता था रहा है। मुंजीजी भी अपनी चौकी समाके बैठे हैं। उनके हाथ में भी एक मजबूत हथियार है सांस्कृतिक अस्त्र पुटी

सोच पड़ापड़ा गिरने सगे और हमारे अफसर कोय मुस हो-होकर ताकिया बजाने सगे। बाह क्या बहापुरी है, क्या दिसिफिन है •

हुकमत के लिए इसको पचा पाता मुस्लिम या अगले महीन प्रेस से एक हजार की जमानत मांग ली गयी। अब तक चार मक निकसे ये और पाँचवें मक के चार प्रमें छपे थे। जमानत हंग से नहीं प्रेस से मांगी गयी थी इसलिए मुंजीबी न चाहा कि दूसरे किसी प्रेस में छपाने का प्रबन्ध कर सें लेकिन कोई प्रेस तैयार न हुआ यहाँ तक कि वह अपूरा मक भी पूरा नहीं किया जा सका।

जमानत तत्काल होने के अगले ही रोज मुंजीबी ने निगम छाह्व की लिखा — प्रेम ऐक्ट का चार मुझ पर भी हो ही गया। एक हजार की जमानत तत्काल हुई है। कल बमारस जा रहा हूँ। जमानत देकर रिमाता हव निकालना तो मुझे खतरनाक मालूम होता है। मैं तो सीपता हूँ रिमाता बंद कर दूँ और इसके साथ ही प्रेम भी।

तभी जुलाई के महीने में बीस तारीख को स्वयंसेवकी नेहरू लखनऊ आयी। सीपी-सादी धरेलू स्त्री थी लेकिन संघर्ष की पुकार ने उन्हें भी पर से बाहर ला पड़ा किया। बैठा १४ मईस को ही देल जमा गया था ३० पून को प्रति भी पकड़ लिये गये फिर वह बीस पर में बन्द रही आठी। गांधीजी भी इपर कुछ महीना से टाड़ी-टाटा और बिदेगी कपड़े की दुकानों पर धरना देने के लिए विशेषण से निर्यात का आवाहन कर रहे थे। लखनऊ में अब तक निर्यात आगे नहीं आयी थी जबाहरलाल की माँ के दारे ने बीस सबको अफसोरकर जमा दिया।

और सिबरानी देवी भी जिन्हें बेटी की घापी के बाद अब अपन कंधे यों भी कुछ हस्ते लय रहे थे कोयस का साला सेकर मीनन में निकल पड़ी — लेकिन प्रति की मखर बचाकर क्याकि सेहत अच्छी न थी। मुंजीबी उभर स्फुर जाते लड़के स्वस जाते और सिबरानी देवी अपने माप की दूमरी बीरता को सेकर बापस न काम पर निकल जाती।

एक रोज जय्या मांगने-मांगते वह साथ एक बड़ी बीहड़ स्त्री के पाग जा पहुँचे। पूरी वीठान की छाया थी। बटुल बुझिया जलवाग्नि की कोई। नीरुताँ तो मालिया की उमने इन सोयाँ को एक से एक बुनी हूँ और वीसा पर नहीं। लेकिन निबरानी देवी ने भी बिद परद की कि हमने कुछ लिये बिना हम न जायें। सब औरते परमा देकर बैठ गयी। मांगिर अब बुझिया सब कुछ बगै हार गयी और इन बीरताँ ने टहन का नाथ न किया तो उमने नीमहर एक इतमी पेंदी — जा पाग ही मानी में जा गिरी। अब कोई उमे बगै से निराने नहीं। लेकिन छोड़ा भी बीम

जाय उस मेहनत—धीर हिम्मत—की कमाई को। आखिरकार इकट्ठी निकली और सिपायों की बहु टोली पाठी-बनाठी वहाँ से बिदा हुई।

लेकिन वहाँ बड़ा पीटा बड़ा महाना तजुर्बा भी होता था—जैसे कि सेडी बजीर हुसैन के यहाँ। ठीकी हबेसी सर का खिताब—एकाएक हिम्मत न पकटी किन्ती को उनके यहाँ जाने की। आखिर एक रोज सिबराणी देवी ने हिम्मत की—

जरे, फाँसी तो बड़ा न देगी बहुत करेगी कुछ न देगी जाने में क्या बुराई है। और वह लोप गये। सेडी बजीर हुसैन न घायर कभी देखा होगा या कुछ मूना होगा सिबराणी देवी स पूछ बैठी—बहन भाप भाज वहाँ निकल पड़ी? सिबराणी देवी ने जबाब दिया—जैसे बने निकले बिना बहन? सब लोग अगर घर में

सेडी बजीर हुसैन ने उन्हें चुमना नहीं पूछ करने दिया बोली भाप जरा मरे माप भाए और अन्दर अपने कमरे में ले गयी जहाँ एक चर्पा रखा था और दोनों मृत की मुर्दियाँ पड़ी थी।

होने-होते महिला बाँटियरों की सख्या साठ से साठ ही पर पहुँची बाजापदा महिला आश्रम की स्थापना हुई जिसने दरदस के वीरकानूनी क़ारर दिये जाने के बाद उसके एक गुले सयठ के रूप में काम किया जब तक कि मुँ उस पर भी रोब नहीं लग गयी और सिबराणी देवी जो अपने विमान अफ़ज़द दबम स्वभाव के कारण इस बीच अपनी स्वयंसेविकाओं में काफ़ी लोकप्रिय हा चुकी थी अपनी टोली की कप्तान बनायी गयी। मुँसीजी ने उस बहुत मोहनबाळ लक़ेना से बिनकी मुँसीजी राह के सब काफ़िल नेताओं से ज़्यादा इरबत करते थे घायर कहा भी कि यह तो ठीक नहीं हुआ यह तो उनकी जेल भेजना की तैयारी है और उनका शरीर इस योग्य नहीं है

आखिर नवम्बर की ९ तारीख को वह विरैटिय करते हुए पकड़ ली गयी। मुँसीजी चार-पाँच रोज के लिए कहीं गये हुए थे—घायर बनारस।

११ तारीख के अपने सत में उन्होंने राजेसर बाबू (काहू जी) को इनकी खबर देते हुए सिखा—

तुम्हारी मौसी \* तारीख को एक बिन्धी कपड़े की डूकान पर विरैटिय करते हुए पकड़ ली गयी। मैं जब उनसे जेल में सिखा और हमेजा की तरह प्रसन्न पाया। उन्हान हम लोगों की पछाड़ दिया और मैं जब अपनी ही बाँधों में छोटा लग रहा हूँ। उनकी इरबत मेरी बाँधों में ही मुना बड़ गयी। लेकिन अब जब तक कि वह भाकर मुझे मुक्त नहीं कर देतीं मुझे गृहस्थी का बोस उठाना पड़ेगा।

२४ को उनका प्रैसला हुआ। वो महीने की सजा हुई। मुँसीजी ने अपने दिन बीनेत्र को सिखा—

इसपर पन्द्रह दिन से इसी में परीक्षाएँ रूहा। मैं जाने का इरादा ही कर रहा था पर उन्होंने खुद जाकर मेरा रास्ता बन्द कर दिया।

१२ नवम्बर से गोसमेज कार्यक्रम ही रही थी। मुंशीजी को जसमें कोई छान बिसबस्ती न थी — बस इतनी कि समझौता अगर ही तो इरादा के साथ हो वर्ना अपने घर लौट आओ।

तब तक प्रेस आइनेस उठ चुका था और तीन चार महीने का घोडा समाने के बाद मुंशीजी फिर नवम्बर के महीने में उसी पुरानी आन-बान के साथ अपने मोर्चे पर आ डटे। आन्दोलन का भाटा अब तक धुक हो गया था और लोगों में मुर्दनी छा जमी थी। मुंशीजी का हीसला अब भी उसी बुखरी पर था। न उन्होंने नेताओं के साथ कहने पर आनन-फ़ानन स्वराज्य हासिल करने की बात पर विचार किया था और न इसीलिए अब उन्हें अपने भीतर बिची तरह की पस्ती मामूम होती थी। यह तो लंबी बीमारी की तरह एक लंबी लड़ाई है — और लंबी बीमारियों का उन्हें पुराना तजुर्बा था।

चार महीने की घामोटी के बाद फिर अपने मोर्चे पर लौटन पर पहली बकरी थीज इन महीनों का लम्बा-जोला करना था और मुंशीजी ने स्वराज्य संघाम में किसकी बिजय ही रही है धीरे-धीरे से ऊपर-नीच दारों-बायें सब तरफ से लोगों के मन के खोर को अपनी शक्ति भर बाहर परेड़ते हुए बिधा —

हम चारों ओर अपनी बिजय के सदाब दिमायी देते हैं और हम इनी तरह खेव में डटे रहेंगे तो निस्सन्देह हमारी मर्जाकामना पूरी होंगी। जब राज मस्था अपन ही बनाये हुए कामूना को पीछेछे रखना शुरू करे तो उगकी बला उस पागल की-सी समझनी चाहिए जो साथ ही अपनी देह को बाँगी से काटना है, साथ ही अपना मांस मोचता है। ऐसा प्राणी बहुत दिन जीवित नहीं रह सकता। उसकी जिन्दी का पैमाना लखरेज ही चुका है। आगिर इन बिसेव कामूनों का क्या परिणाम हुमा? बही जो होता स्वाभाविय था। पिचिंग को सरकार में बन्द करना चाहा था। पिनेटिम का दिन-दिन जोर बढ़ना आ रहा है। समाचार पत्रों के बन्द करने में बेमक सरकार को मजबूत हुई सेविम जानून तोंडवर माइवनीगटाइल पर छपनेवाले पत्रों में ती लागको की नाव ही तराग मी। आन्दोलन का जोर सी मुता बढ़ गया। इसमें भी सरकार को मजबूत नहीं बिरी। बही मारी परमना बगराप है बही लखरी का ब्यचार करना बगराप है। लार्ड अरबिन अगर मागटना की इन टिप्पणतों का गगन करने है तो वह बगुनगी है अगर मागन्द करने है और कुछ नहीं बोल सता तो बमबोग। अगर हम न

उमने कोई सिखाया है न उनके मानहों से। आपको डर बनाना मुबारक हमें डरे वाला मुबारक।

कमीशरों का बय काप्रेस से बिल्कुल फिरेट था। लेकिन अगर उसे किसी तरह सीपका न भाया जा सकता तो गाँवों में आन्दोलन को बचन तारन पहुँचनी। मुम बुर्रों से उन्हें डरई उम्मी न थी। बुर्रा तोडा राम राम नहीं पड़ना। लेकिन बचान पीड़ी न उम्मी थी और भरपूर उम्मीर थी। तिहाबा बुर्रों का कडाइन हुए, बम-कमकर लगाइने हुए और मरी पीड़ी को घेरत दिमाते हुए, बोग दिमाते हुए मुनीत्री न बीम ही बेबइव जैसे भाप में कलम डुबाकर लिखा अगर तुम क्षमिय हो —

●उा मयन क्षत्रिय बम को पालो। क्या हम तुम्हें बतावें कि क्षत्रिय बम क्या है? यह तुम मुझे कहीं प्यारा जानते हो। यह बर्म बनने सम्कारों के रूप में लेकर तुमन जग्य किया है। बलस के बचन को कोई वीरता सिखाता है या मिह के बालक की गिकार करन की गिमा देनी हुंती है? क्या हम नौबवान क्षत्रिया स बहें मात्र तुम्हाग बर्म क्या है? तुम्हारे बुर्रुयों ने क्षिम तरह बनने बर्म का पाकन किया था? क्या मरीबां को पीमकर, किमानो का मया बबाकर छोटी-छोटी नौकरियों के लिए अन्मरों की बीषट पर माक रगड़-रगड़कर, बच-भी रिजायत क लिए नीच से नीच गुणामर करक उपाधि और परबी क लिए अधिकारिया के सामने मन्वा टेककर ही उम्होंने बम का पाकन किया था? कभी नहीं। ब सत्य की रखा में जानें लड़ा देने से। मजाक न थी कि उनके बेबने कोई बलवान क्षिमी बुर्क को बबा से। उमका लून पी जाते। बीन की पुकार मुनकर उनक लून में बीज बा जाता था। हुकड़ की हुकड़ी बेबकर बीनों में लून उतर जाता था। उनकी बीरता अक्षरों के लिए गिकार बेताने या उनको लुप्त करने के लिए पोको बेतने तक रिजर्व न थी।

क्या तुम भी उसी नीति को पालोगे जो अक्षरों के स्वायत में मरीबां के पैने उड़ाती है, जो बीनों के रक्त से बनीरों और विधेयत अधिकारियों की शक्ति करती है? नहीं जो सोप बूड़ हो मये है जिनमें जाण नहीं जान नहीं मान नहीं बिनकी मरों में बनी तक मबाबां के जमान की भायमउबनी और ऐघररम्पी मरी हुई है, उनको सक्षामिया करन का सक्षरें किलाने को अधिकिया वेज करने या क्षान-क्षानों और बीरों की नाउबरकारिया करने से, मपर तुम नौबवानों से हय यह भासा नहीं रखते क्योंकि तुमने उस युग में जग्य किया है जब पूषी के हरेक भाप में मुलानी की बेड़ियां टूट रही हैं। परम्परा के बन्धन डीपे हों रहे हैं। अन्धान एङियां रपड़ रहा है। सत्य और स्याय की बिजय हो रही है। तुम्हारी बीनों के सामन



संसार में क्या-क्या तबदीलियाँ हो गयीं तुम नहीं जानते? रूम की जारघाही मिट गयी ईरान की कबकुलाही मिट गयी तुर्की की साहमाही मिट गयी चीन की खाकानी मिट गयी जर्मनी की ईमरलाही मिट गयी यहाँ तक कि स्पेन ने भी स्वाधीनता की संघर्ष की। मगर भारत कहाँ है? वहीं जहाँ बा। चीन दुस्ती बरिख। इसीलिए कि धर्मियों ने धर्म का पालन करना छोड़ दिया। क्या तुम जबान होकर भी जसी बूढ़ी लूसन कज्जास्पद कायरता से मरी हुई, लुघामद में बूधी हुई नीति का पालन करोगे? कभी नहीं। तुम मय युग के मामनेबा हो तुम जबान हो सबय हो सभी नीच स्वार्थ ने तुम्हें अपने रंग में नहीं रेंगा अभी तुम्हारी कभर ने झुकना नहीं सीखा तुम्हारे सिर ने सिबरे करना नहीं सीखा तुममे जोर है।●

मुंशीजी ने १२ जनवरी १९३१ को जैनेन्द्र को लिखा — हाँ पत्नी भी जा तो गयी मगर घायब फिर आवें। अभी उन्हें सतोप नहीं। साय स्वगम्य एक बार ही में ल सेयी क्रिस्तों में नहीं चाहती।

बाहर अब हलचल न थी यों कहने को आन्दोलन अभी चल रहा था। अब न हुआ मे वह गर्मी थी और न मार्च का वह दौर, न वह मीटिङ्ग न वह जुलूम न वह होसियाँ बिलासती कपड़ों की न वह नमक के बड़ाहे न वह बरने टारब की कुचालों पर न वह पुलिस की डंडेबाजी का सभी कुछ मगर जाने का सूर बैस हुआ पड़ गया था।

बड़े जोग बड़ी उमंग बड़ी कुर्बानियों के बीच बीठा था यह साल जो अभी गुजरना था — मगर क्या हासिल ? सब कुछ तो बीसे का बीसा था वहाँ पहुँच हम ? अब तक जोग का जखन था ये सबाल नीच कही सब पड़े थे। अब जोग उतर रहा था तो ये सबाल उठ रहे थे। यह ठीक है कि हमने एक बार गोरमाही को हिला दिया। यह भी ठीक है कि हमारे अन्दर थोड़ा-सा यह आत्मविश्वास था कि हमारी मिट्टी पोसी नहीं है, मुयमुयी नहीं है उसमें जान है बीबट है बरत पड़न पर हम अनुशासन में बंध सकते हैं जान पर खेचकर लाठी-गोली का सामना कर सकते हैं। यह कुछ कम उपलब्धि नहीं है। इसीलिए तो मन में निरोगा जैमी निरोगा न थी। लेकिन थोड़ी परतहिम्माती खर थी — क्योंकि एगी कोई चीज न थी जिसे हम हाथ में लेकर वह सकते यह देखो हमन यह चीज अपने खून की कीमत देकर पायी है।

२९ जनवरी १९३१ पूर्ण स्वराज्य दिवस की पहली बर्यायों के दिन गांधीजी बाबाहरलाक और दूसरे बड़े नेता छोड़े पये। मोतीलाल नेहरू मृत्युघम्या पर थे। गांधीजी बम्बई से सीधे इलाहाबाद आये। मोतीलाल जी के दिन पूरे हो चुके थे। १ फरवरी को उनका बेहान्त हो गया। गोलमज काफेस के लोग भी उम्हीं दिनों लौट रहे थे। जितने मुँह उतनी बातें। लेकिन असल बात एक न कहता था — कि बस जूना हाथ लगा एक गोलमेज के चारों तरफ, योल गोल

याँचीजी ने जबिन को पत्र भेजा और उसके कुछ रोज बाद समझौते की बात थीत का सम्झा मिलसिसा बसा। महीने भर बाद और बड़ी यात्रा के पहले भेजे गये जन्टीमटम वाले पत्र के ठीक एक साल बाद जब ५ मार्च को सविप्रम टीपार हुआ और कुछ रोज बाद उस नाप्रस के कपची अखिबेदान के सामने पेश किया गया तो बड़े-बड़े रिमागों की बड़ी-बड़ी बकालत के बाद ही नाग उसका सर पर समझ सके।

हंगामी और साथ ही गया। यह ठहरकर बम सेने का बक्त है अपने मन के भीतर शक्ति का— क्योंकि अभी फिर उठकर चलना है।

जनवरी के महीने में मुचीजी ने मानसिक पराधीनता पर लिखा—

● हम वैहिक पराधीनता से मुक्त होना तो चाहते हैं पर मानसिक पराधीनता में अपने आपको स्वेच्छा से जकड़ते जा रहे हैं।

कलमर (सम्पत्ता या परिप्लुति) एक व्यापक शब्द है। हमारे धार्मिक विचार, हमारी सामाजिक कर्तव्य हमारे राजनीतिक सिद्धान्त हमारी भाषा और साहित्य हमारा रहन-सहन हमारे आचार-व्यवहार, सब हमारे कलमर के अंग हैं पर आज हम कितनी बेबरी से उसी कलमर की जड़ काट रहे हैं। भाषा ही को ले लीजिए। दफ्तरो में तो हमें अंग्रेजी में काम करना ही पड़ता है पर उस भाषा की सत्ता के हम ऐसे भय हो गये हैं कि निजी विदित्तियों में घर की भाषा हीत में भी उसी भाषा का आशय लेते हैं। स्त्रो पुत्र का अंग्रेजी में पत्र लिखती है पिता पुत्र को अंग्रेजी में पत्र लिखता है। जो मित्र मिलते हैं तो अंग्रेजी में बार्तालाप करते हैं कोई सभा होती है ता अंग्रेजी में। जायरी अंग्रेजी में लिखी जाती है। बाह! क्या भाषा है। क्या लोब है! कितनी धार्मिकता है विचारों को व्यक्त करने की कितनी शक्ति शब्द मन्हार कितना विद्यालय साहित्य कितना बहुमुख्य कितना परिप्लुत कविता कितनी मर्मस्पर्शिणी गद्य कितना अपवीचक! जिसे देगो अंग्रेजी उचान पर कर्तु उनके नाम पर बुर्जान है।

भाषा को छाड़िए, बस-भूषा पर आइए। आप उन साहब बहादुर की शेर रहे हैं जो ह्यू-कैट सगाये शरर से इपर उपर देराते बने जा रहे हैं। यह हमारे शिन्नुल्गानी मूरोगियन है। रास्ते से हट जाओ साहब बहादुर जाने हैं। साहब का सम्झा करो आज पूरे साहब बहादुर हैं! मुझ से आज निर से पाँच तक गुमान नजर जाने हैं जो आनी बुनामी का उमी बेगामी में प्रदर्शन कर रहे हैं जैसे कोई वेग्या आज हाव-भाव का। आज हम आत्मबल अवश्य है, बड़ अँबे टरें का भाषा शीरब आज लोकरमज की टुकरब देने हैं। लेकिन उनी आत्मवीरक क पुत्रे ने

बहिए कि जरा घाम को बिना फ्रेस्ट्रैप लगाये किसी अंग्रेजी कपड़ में चला जाय तो उसके हाथ-पाँव पूरक जायेंगे खुन ठण्डा हो जायगा बेहतर ठक हो जायगा। इसलिए कि उसका आत्मगीर्ण केवल अपने भाइयों पर रोब उमाने के लिए है उसमें सार का नाम नहीं। वह जिस समाज में मिळना चाहता है उसकी छोटी से छोटी इच्छियों की भी बबहेसना नहीं कर सकता। जनता को वह समझता है हमारा कर ही क्या देगी यह कुछ खड़े ही क्या और माउज रह तो क्या यह हमारा कुछ बना-बिगाड़ नहीं सकती। जिसमें कुछ बनने-बिगड़ने का भय है उनके सामन वह भीनी बिस्वी बन जाता है। अपने एक मित्र साहब बहादुर से मैंने पूछा — तुम इस ठाट से क्यों रहते हो? तो बड़े शार्मिक भाव से बोले — इसलिए कि अंग्रेजों से मिलन जाता हूँ तो जूते बाहर नहीं उतारने पड़ते। जो लोग अचकन और टोनी पहनकर जाते हैं उन्हें जूते उतार देन पड़ते हैं। मैं कहता हूँ जो स्वार्थ सेकर अंग्रेजों से मिलने नहीं जाते वह अचकन नहीं मिर्बाई भी पहन हों तो उन्हें जूते उतारने की जरूरत नहीं और जो स्वार्थ सेकर जाते हैं वह किसी बेग में हों जनकी आत्मा बची रहती है। एक दूसरे मित्र से यही प्रश्न किया तो बोले — इससे सफर करने में बड़ा सुनीता होगा है जनता समझती है यह कोई साहब है मेरे अन्धे से नहीं आती। एक और साहब से कहा — अंग्रेजी कपड़े पहनने से बेह में बड़ी खुस्ती और फूर्ति आ जाती है। गरज कोय तरह-तरह की इत्तियों से आरका समाधान कर बेगे। मैं पूछता हूँ — क्यों साहब क्या साठी चली और फूर्ति अंग्रेजी कपड़ा न ही है? क्या यह कोई विकिम्माती चीज है कि बदन पर आयी और आपकी बेह में स्फूर्ति बीड़ी! ●

मार्च में कांग्रेस का अधिवेशन होने जा रहा था कच्छी में। मुंबयी का इरादा उसके लिए जाने का था लेकिन सरकार तो बुरी खबरें पर तुली थी। एक तरफ तो याँबीजी के साथ अकिन की बहू महीने भर की बाउचीत और माधी अकिन पैर और दूसरी तरफ इतना भी नहीं कि बेग की मावनाओं का याँबीजी और कांग्रेस के आग्रह का खयाल करके भगत सिंह की फौसी मसूज कर ही आती। ही इतना आस्थासन अकिन ने अकर दिया कि अगर आप चाहें तो फौसी कांग्रेस अधिवेशन के बाँ ह। उस समय याँबीजी ने अपने अपूर्व नैतिक बल का परिचय देते हुए कहा कि अगर फौसी होनी ही है तो अधिवेशन न पहुँचे हों, ताकि किसी का किसी तरह का खोला न रहे बाद को कोई रोगी न उठा सके सब सुखा खोल हों, समझते को अगर कांग्रेस महासभा की स्वीकृति मिलनी है तो वह इस तय्य को दबा-छिपाकर नहीं उसके होते हुए मिलेगी — या नहीं मिलेगी। जो भी हो बोलेयड़ी के लिए यहाँ जयज नहीं है।

बीर २४ मार्च १९३१ को ममउसिह, राजगुरु और सुब्रह्मण्य को फाँसी दे दी गयी। उसी रोज मुसीजी ने निगम साहब को लिखा —

कराची का इरादा था मगर आज ममउसिह की फाँसी ने हिम्मत तोड़ दी। अब किस उम्मीद पर जाऊँ। वहाँ गांधी का मजबूत उद्देश्य कांग्रेस और बिस्मिलेदार, पोरिणपसल<sup>१</sup> तबके के हाथ में आ जायगी और हम लोगों के लिए उनमें जगह नहीं है। आइया क्या तबके अमल अस्तिपार करना पड़े कह नहीं सकता मगर डिप्लोमाक बिल बैठ गया है और मुस्तकबिल<sup>२</sup> बिलकुल ठारक<sup>३</sup> नजर आता है। इमर बनारस मिर्जापुर, आगरे में जो हालात हुए उनसे चर्चनेमेष्ट का हीयला बढ़ेगा। यही मरा इपास<sup>४</sup> है। मगर इससे उपाया हिमाकउ कोई गबर्नमेण्ट नहीं कर सकती थी। तीन भागियों की सजा में तबदीली करके गबर्नमेण्ट कितना अच्छा असर पैदा कर सकती थी। पर उसके तबके अमल ने अब साबित कर दिया कि ठानीकडम्ब<sup>५</sup> उसने अभी तक नहीं किया और अब भी बहु अपनी उसी इदीम पैरिबिस्मेशासना रबिष<sup>६</sup> पर कायम है।

ममउ सिह की फाँसी के एक रोज पहले २३ मार्च को जैनेश्वर ने कराची से लिखा था — यहाँ बहल-महल है। नीजवानों न मीऊा देगा है, उठ खड़े हैं और गांधीजी को बैठा देना चाहते हैं। बहु जानते नहीं कि गांधी मरकर ही बैठेगा।

जैनेश्वर की बात कुछ प्रसन्न न थी मुनीजी का डर ही एकदम नाबिन हुआ। नीजवानों न उठने का एक बड़ा मतीजा तो निरुत्ता कि कांग्रेस ने मडगुरों-किमानों के बुनियादी प्रबिषारों का प्रस्ताव पास करके समाजकार की ओर एक करम उठया — लेकिन गांधीजी के नेतृत्व पर उर मी जाँच न जायी।

मुनीजी ने तो अपने तब में बनारस आगरे और मिर्जापुर के दंगों की ही तरक न्यास किया था उनके दो ही बार रोड बाइ कानपुर का हिन्दू-मस्लिम बंगा हुआ जो दन सबसे भयानक था।

मह और कुछ नहीं केवल निरुत्ता की पुनरावृत्ति थी। हर बार यही हुआ था। स्वाधीनता की लड़ाई अब तक उरार पर है ये भागली मगडे-ऊपास को बीर नर की ताइनें दबी पडी है और जैम ही माटे का बीर मुस् हुआ कि गब न जाने काने किन कौनों न निरुत्तर अपना बहरी देहता और मुनी पत्र जिये मानने आ गयी।

मगर दानों न पाड़ा अन्तर है त्रिगकी तरक इगारा करने हुए मुनीजी ने

१ उपरवी २ मकिन् ३ मपेरा ४ अनुमान ५ हृदय-परिचर्जन  
६ पुपने ७ ईन

तिपा— उस बन्धु के सभी लोगों का कारण धार्मिक या मनश्चिन् के सामने बाधा बनाना या बुझाना। इस समय जो दंगे हो रहे हैं उनका कारण राजनीतिक है। बागी में एक विदेशी कपड़ के व्यापारी की हत्या ने बाकू में आग लगायी। काणपुर में मुसलमानों को पूराने बन्द कराने की बच्चा ने पुत्रास में चित्तगढ़ी का नाम दिया। पुत्रास पहले में मीरपुर था। केवल चित्तगढ़ी को बन्धी थी। इस लुर कायेमन है। बाकू से नहीं हुयेगा मे। अमहयोग में हमारा विश्वास है लेकिन हम कहने से बाध नहीं एक सचन कि कायम में मुसलमानों का अपना महायुद्ध बनाने की ओर उतनी कागिग महा की जिननी करनी चाहिए थी। वह हिन्दू महायुद्ध प्राप्त करके ही सन्तुष्ट रह गयी। भारत में हिन्दू २२ करोड़ है। २२ करोड़ अगर कोई काम करने का निश्चय कर लें तो उन्हें कौन रोक सकता है। हिन्दुओं में हमी मनोबल ने प्रधानता प्राप्त कर ली।

पह तो अपने समझने की क्षमता से कहन की बातें हैं। सरकार से कहने की बात कहने से भी वह बाध नहीं रहे—

बुद्धि यह मानने की तैयार नहीं होती कि जो सरकार राजनीतिक आन्दोलन का दमन करने में अपनी तत्परता से काम से सकती है अपनी भाषाणी से गालिबी बलबा मरती है वह हम अबसर पर अपनी अक्षय हो गया कि उसकी उपस्थिति में रक्त की नदी बह गयी और वह कुछ न कर सकी। संभव है सरकार की इस दृष्टिक में कुछ सत्य हो कि वह इन दंगे को दबान के लिए जाये गति न रखती थी, पर साधारण जनता जिन तरीके पर पहुँची है वह यह है कि सरकारी कर्मचारियों में जान-भूतकर, केवल यह दिशा के लिए कि बीर मरवायी महायुद्ध के तुम लोग कुछ नहीं कर सकते, यहाँ तक कि तुम गालिबीरक रहे भी नहीं सकते और तुम्हें एक-दूसरे को प्याह आने में बचान के लिए एक टीपरी बक-बान धरि का रहना अनिवार्य है इस हत्याकाण्ड का रोकन की कोशिश नहीं की।

और इन दंगे के गहीर गनेछाकर विद्यार्थी को अपनी यज्ञ के पूर बढ़ाने—  
 कानपुर के इस हत्याकाण्ड में राज्य को सबसे अधिक जो भक्ति पहुँची है वह विद्यार्थी की छहान है। मुदा हुमा बन फिर मा जायगा, उम्मे हुए बर फिर आबाद हा जायेगा माताओं की योष में किंग बन्धु लेमेय—पर वह कर्मबीर भारत से सदैव के लिए उठ गया। विद्यार्थीको के जीवन की मरकना और पवित्रता गालिबक थी। इस यह ता नहीं वह सकते कि हमारी उनमें चित्तगढ़ी थी पर काण में दो-तीन बार हमें उनका धर्मों का सीनाम्न अबसर हो जाता था और उनके दर्शन में आत्मा पर आशीर्वाद का-मा जो अमर पड़ता था वह अकथनीय है। स्वाध-चिन्ता न करनी उनकी आत्मा को मलिन नहीं किया। उनका समस्त जीवन

यसमय का और बदायित् ईरबर की इच्छा थी कि उनकी मृत्यु उस यज्ञ की पूर्ण-  
हुति हो। इस बिरोह के एक मा दो दिन पहले लखनऊ काँग्रेस कमेटी के दफ्तर  
में हमें उनका दर्शन हुए थे। उनके जेल से सीजन के बाग में उनसे न मिल सका  
था। फिरने तपाक स गसे मिले।

इसपर इस बीच माधुरी दफ्तर में गड़बड़ शुरू हो गयी। पण्डित बिष्णु  
नारायण भार्गव की अज्ञातक मौत हो गयी और चूंकि उनके बेटों बेटे अभी नाबा  
किश्र थे रिपारतत कोर्ट आऊ बाईस के हाथ में बसी गयी।

१२ जनवरी को मुगीजी ने जैनेन्द्र को लिखा —

हमारे प्रोप्राइटर बाबू बिष्णुनारायण भार्गव का मारास में स्वर्गवास हो  
गया। घुड़बाई में गये प्राणा की बाजी हार गये। सब देखना है कि यहाँ कैम  
काम होता है माधुरी बसती है या बन्द होती है। मुझे तो इनके बन्धे की आशा  
गही है।

पौष हफ्ते बाप १८ फरवरी को लिखा —

माधुरी से अब भरा संबंध नहीं रहा। मैं बुद्धिपति में आ गया। आ ता  
पहल ही गया था अब पूर्णरूप स आ गया। एप्रिल तक घामर यहाँ और रतूंगा  
फिर कागी बसा जायेगा और बही देहात म बैटकर कुछ सिगता-गङ्गा रूँगा।

यों मुगीजी कभी बाबू साहब से मिलते-जुलन न थे सेकिन अब जब कि बह  
नहीं रह मुगीजी को मालूम हुआ कि उनके दिल में बाबू साहब के लिए क्या  
जगह थी और उनके बिना यहाँ रह पाना उनके लिए निरतता मुनाकिम है।

उसी महीने जमाना मं मुगीजी न एक सपन लिखाकर इस तरह अपने मन  
के आदर और स्नेह को बागी की —

●मुगी नवमविस्तार के खानदान का यह सूरज एन उग बसत डबा जब बह अपने  
पूर उदयन पर था।

स्वर्गीय मुगी बिगुन नारायण क अस्तित्व का क्या-क्या रसिम था। रतूंगा  
की सुविधा सब थी बुगइया एक भी नहीं। मुरीबत क पुनल था। किमी याथा  
को निरास करना उगहोने सीगा ही न था। किमी दासत की दिवनिहनी उमर  
बूने से बाहर थी। मुकाबिमा की तादात हबारा तक पहुँचती थी मगर कभी किमी  
को तब निगाहों से न गैता। एबल न मामल पन हुए, अयोम्यता और मुली की  
दिवायने रोड ही आनी रहनी थी मरीहल बरनीपती के बाजय भी बार-बार मामन  
आये पर हमैगा बरगुडर कर जाने थे। यह सूची उनमे कमडोगी की हर तक  
थी।

दिवंगत की अवाका अभी कुछ न थी। लखनऊ का यह विद्यार्थी छात्रान

बन्याय है। मुगी प्रयाग मारायण साहब का नेहान्त ४२ साल की उम्र में हुआ। उनका साहबबादे ने कुछ भीग बनी कर दी। यमी बीनीमबी ही साल था।

मसोवा का बरगी हुई और दुहरे जिम्म के मुन्तर आमी ये। पदमी रंग रोबनार भूटें बही-बही भांगा में मज्जना और समा की मलक। पहनावा बिलकुल सादा था। बाहर निबलते ता अथकन और खुन्त पात्रामा बन पर होता मिर पर फ्रेण कैप। बर पर कुर्ता और बीनी पहनत था। हुक और पान का पीक था।

उनका बरवार हर ताम व आम के लिए खुला रहता था — न कोई मेजने की बकरत न इतला करने की पाबन्दी। दीवानखान क मामन बराम में बैठे हुकका पी रह हैं। मित्र और कमचारी याकक और अमामी सभी भात हैं और अपनी बात कहकर चम जात हैं। मरने पकसी राउकत और मुम्बत से पेम भात हैं। मिजाज में झुठी पाग का नाम नहीं पदक की बू नहीं आइम्बर की छाया नहीं। अफ्मोम कि वह जगह हुमेगा क लिए खाली हो गयी।

२३ जुलाई को मुगीबी ने निगम साहब को लिखा — यहाँ काट भात बाई का इनबाम है। मगर अभी कोई तकलीफ नहीं हुई है। स्पेसल मैनेजर आ गये हैं। इनबाम मरिज दन्तूर है। घायर तन्त्रक्रीक होने वाली है। मगर तहरीक मामूम नहीं। मेरी ता मैनेजर साहब न मुखाफान ही नहीं हुई। न उम्होंने बुलाया न मैं गया।

२ अफ्म को लिखा — खबर है कि गियामन काँट भाऊ बाई म न निबल गयी। मरिज खबर ही खबर है। मज्जब नहीं। मरवापी कागजाने हैं। मुन्बिन है महीनों लम जायें।

२४ मिठम्बर को लिखा — मैं मैनेजर साहब ने अभी नहीं मिया। साबता है वह अफ्मरी जतान लगे तो क्या अफ्मश।

माये तिन एक न एक मरकक लपी रहती। ऐस नहीं चल सकता। यहाँ का आबशाना अब खाम होता है।

और पहली अफ्मबर को मुगीबी ने निगम साहब को लिखा —

इन लोगों ने तय कर लिया है और अब जिमी की हकतकती बेहमाजी का अपने मुकमान का खयाल इन्हें अपने इरादे में बाइ नहीं रख सकता। मुझे अफ्मोम यही है कि आपको साहब तकलीक बी। और, अभी तो यही हैं। ९ को



यहाँ से अलहबा होकर ब्रालिबन अक्टूबर मखनऊ में काटूँगा। उसने बाबू बीरी रबाहू सुद'।

ठबीमठ या ही बहुत अनमनी उचाट हो रही थी और फिर जैनेन्द्र कितनी ही बार बुला चुके थे। इस बार या कोई आया तो मुंशीजी प्रौरन बल पड़े।

दिल्ली पहुँचने की दास्तान जैनेन्द्र से सुनिए—

● एक सघेरे गमी में दीपता क्या है कि कंधे पर कम्बल धामे सरामा सरामा बसे आ रहे हैं प्रेमचंद जी। महारामा ममकानवीर जी और पं मुन्तरलाल जी भी तब घर पर थे। सुन्दर काल जी अबूतरे पर से बगून करत-करते बोले— बेगना जैनेन्द्र यह प्रेमचंद जी तो नहीं आ रहे हैं?

मैंने कहा—बही ता है।

प्रेमचंद जी के पास आने पर मैंने अखरज से पूछा—यह क्या किस्मा है न तार न बिट्ठी और भाप करिस्मे की भाँति आबिर्भूत हो पड़े!

बाबू—तार की क्या उबरत थी। बाबू आने पीते कोई प्रमत्तू है। और देखो तुम्हारे मकान का पठा बन गया कि नहीं।

मैंने कहा—यह क्या शब्द करते हैं। पहल में कुछ खबर तो दी होगी। इस तरह से तो भापको बड़ी निश्चिंत हुई होगी। गनीमत मानिए कि दिल्ली बंबई नहीं है। और ऐसे क्या भाप दिल्ली से बेहतर बाकिर्र है?

बाबू—महीं जी सोपा तुम्हारा मकान निक् ही आपगा मी बाबू आने बचाया क्यों न। और मकान मिल गया कि नहीं? बीते दिल्ली डिग्री में पट्टी मनेबा आया है।

दिल्ली में पहुँची बाबू! मैंने अबिस्वाम के भाब से कहा—आप बहते क्या है! तिम पर भाप है मग्राद'●

इस बार मुंशीजी यहाँ दग-ग्यारह दिन रह गये। और जैनी कि उनही तबी यम थी बिसतुस घर क एक आरपी होकर रहे। कोई अनकाल उन दिना पर पहुँचना तो टिमी तरह मानम न कर मरजा या कि प्रेमचंद कीत है। उनका निबाम और उटन-बैठने और रूने-महने का तरीका हम करर परेनू या कि कोई उगे अलग में पहचान ही न माना या। (जैनेन्द्र) उनही जो हुस्मिया अलग परग के बतारग म मुंशीजी क अपने मरान पर दगी थी—'यह एक निहाय गीपी-आपी बेक मे निरार के गर्म पर बैठ वे जरा न गहा या न तबिय थ न गरीबा की बहार थी और न ताइ-अनून ही निगापी देन या। बरन पर पाय

पाड़े की एक घटिया सिमाई की कमीज और बोड़ी थी और अबके बाल और किमान जैसा बेहरा बही हुनिया मही तिल्ली में जैनेन्द्र के मकान पर थी— 'खाना खाने साथ बैठते और बात में भी नीम की सीक स दौत बुरेणते हुए वे मेरे ही साथ बैठकर बात करते रहते। भरेखू बाँते — तुम कितना कमाते हो कितना अपने ऊपर खर्च करते हो कितना घर के खर्च के लिए भगवती (जैनेन्द्र की पत्नी) को देते हो और जैनेन्द्र धरम बात का उड़ाने या आर्थनिक सापरवाही के ताल में स्पेटवर पम करने की कोशिश करते तो मुणीजी गिसे के तौर पर यह कह बने कि तुमको मुद्र तो तकलीफ उठाने का हूक है लेकिन अपने बीबी-बच्चों को तकलीफ देने का हूक नहीं है। ऐसा ही था तो तुम्हें इन बचकर में ही न पड़ना चाहिए था।

और यह सिर्फ़ खजानी जमा-खर्च न था। मुणीजी को बराबर इस बात का खयाल रहता कि मेरी बजह से कोई नया बोम इस तरीक पर न पड़े। कहीं जाना माना हो तो अक्सर पीड़ा ही बस पड़ने—भरे, पूर ही कितना है मनी पहुँचे जाते हैं, तिन भर तो बैठे बैठ बात पया पट का पानो भी तो हिलना चाहिए और अगर जगह बहुत दूर हुई और इक्का-ठांगा कुछ मना हो पड़ा तो बड़ी खूब मूरती स कुछ ऐसी जूमत बैठाते कि जैनेन्द्र के दिल को ठेस पहुँचाये बगैर मा तो यह मुद्र ही कियया चुका देते या आपमबरब चुका देते।

यह बजावारी यह बरेखूपन यह सादगी जिन्दगी भर की उनकी कमाई थी। इनमें मरसक बूझ न होती। कमी कही खाना खाने जाते या किनी के घर ठहरेते तो खाना खरम होने पर बकर बो-एक बाँते खाने की तारीक में कह बत — इस लिए नहीं कि तहजीब सिखलामेवाली कितारों मे ऐसा किजा है बल्कि इसलिए कि इसने पर्व की बोट में बैठी हुई घर की स्त्री की मुस हागा। मयके बस्तों की यह बजावारी मुणीजी में कूट-कूटकर भरी थी मगर दिताबटी तहस्तुफ की शक म नहीं जो कि बूखे के लिए काफी तकलीफेह भी हो सकता है सहज कम से।

यह सहजता ही उन्हें हर बात में प्रिय थी कैसा भी भाइम्बर उनके दिल पर भारी मुद्रता था बिचारों तक का भाइम्बर।

इसका एक बच्चा चुटकुका है वह जो मुंजीजी को इती दिलो जामा में पेस माया। जैनेन्द्र कहते हैं—

● उस बस्त को बुजुर्न पर में और थ। प्रेमबंद जो को बयह उनक साव को। वे ऊँच खयाल के सोप थे और छोटीबाँते अक्सर उनके पास नहीं फरक पानो थीं। बाँते देव का और बुनिया की होजी मुबार की और उड़ार की या किसी नीति के या तत्व के मसले की। मैं उन बाँते के बीच अइसर बजवारी रहता। अम्बक ती बही रहता ही न था पास हुआ तो बस मुनता भर रह जाता था।

प्रेमचंद का भी मैंने यही हाल देखा। बात महरी हो रही है और बठमदार, लेकिन प्रेमचंद को सिर्फ सुनना है, कहने को उनके पास गोवा कुछ है ही नहीं। एक बुजुर्ग उनमें गुन्ता खमाल के थे। उनके पास सबा कुछ बचाने और सुधारने का रहता था। हर बहस में आखिरी सपरा उनका होता। पानी सही बही है जो सनका कहता है। इस तरह तीन चार रोज़ कर रहकर खासकर उन बुजुर्ग से वह बहुत कुछ इसलाह और मसीहत पाते रहे।

एक रोज़ आते-आते उन्होंने पूछा — मह, उत माहब की उम्र क्या होगी ? मैंने बताया कि मेरा अंदाज़ तो यह है।

ओसे — क्या कहते हो ?

मैंने कहा — एबाप साल से ब्यादा फ़र्क नहीं हो सकता क्योंकि मैंने एक बार तसदीक किया था।

प्रेमचन्द कहकहा लगाकर हँसे — यह गूब तब ता मार बड़े हम हैं।

जल्दा अब की कहूँगा

बही हुआ। अगली भर्तबा मंडनी बीठी और बहम गुनू हुई। प्रेमचन्द गुमने रहे। बहम में मेमबर की शकस अस्तियार की और आगिर सबक़आमोब मनीहनें फिकने लगी। प्रेमचंदजी ने मौका देग पीमे से पूछा — पत्रित औ आगरी उम्र क्या होगी ? बुजुर्ग ने अपनी उम्र बतलायी। प्रेमचंद ने कहा — बाह तब तो बड़ा आपमे मैं हूँ।

यह बात ऐम बही गयी कि बुजुर्ग को बगर् नायबाग नहीं हुर् बस्तिक पद गुग हुए, हँस आब और उमरु बाब बातचीत आपनी और घरम मनह पर हीन लगी।●

तबीयत में मिठग भी सपनेवाणी बात भी पीठी बनकर निकलनी थी। सागरी भी बेहद सारमी इतनी कि उम चाने और उम सिबाग का हेगार बहम आगान या योगा या जाना कि यह बोर्ड गैबइया भुबब है। बीना जल्दा लगा या उमा मेहम को अब से बरीब तीन साल पहले जब मुजीबी हँसने-हँसाने इलाहाबाद में एक गल्प सम्मेलन में पहुँचि अपना (सायद इबलीना) बेहद बुनन बेरुगा-मा ऊनी पतलन और बीमा ही बुनन बेहमा-मा कोट पहले (कुछ बीनी ही गबम बीनी बाबबल इतहासें में बिना मैनरोगादगद बपड़ा पहलमेवाना बीरिगायी जानी है।) और बाल बेरुगागा बिगरे हुए, गफनोगुग या बरीब काग लान बाब १ ३५ में जब वह आगिरी बाग साहीर गये और इम्पयाब मनी ठाब ने उगरे चाप पर बुलाया। मुजीबी ने सपना यी ही बनेम चाप हागी और जब बा इामीनाब ने बगुगुन ने नाब रीबक गहर मर का बरकर लगाकर टिक कर के

चिगुड़-दिगुड़े बपड़े अपनी बही मित्र की धोनी और गाड़ का कुर्ता पहने और बूत से बटे हुए बाल लिये पहुँचे तो उन्होंने देखा कि वी स ज्वर मोटरें टाड़ी हैं, एक से एक लकड़वा (घाहुर के तमाम घुरछत्र बकीस बैरिस्टर, डाक्टर, जज प्रोफेसर सब बुलाय गये थे) और बाहर जिन मुनबिमकारों में उनको देखा उन्हें यह समझने में बोड़ी बर लगी कि यह बही आवनी है जिनके सम्मान में यह आयोजन है और जिसका इतजार किया जा रहा है!

लेकिन यह केवल बहिरग है भीतर से उसका मन बिलकुल मापुनिक है मापुनिक स मापुनिक। अपनी मिट्टी से सत्सर्ज बनाय रखकर उसने योरप के नये से नये ज्ञान-विज्ञान को कला और साहित्य को देखा है समझा है और उससे पहले घादी के लतीफों और हाकिम की नज़लों ने अच्छी तरह उसके मन को रेंगा है। वह रोखी वह बुलबुलापन वह रपीगी वह हाबिरजवाबी जो अरसी की बान है मुसीबी के घुन में भी घुल गयी है।

दिस्ती की इसी यात्रा की बात है कि एक रात्र अयमबरन ने मुसीबी से पूछा कि आपकी सबसे अच्छी कशमी कौन-सी है? मुसीबी ने जवाब दिया— वह तो जमी लिखी ही नहीं पयी।

अयमबरन ने उस समय की अपनी स्मृतियों को लेकर लिखा है—

उनकी अन्तम म और मूरत में जो सिगई हम देखते हैं, उनकी बातों से ऐसा न लपटा वा। वह एक मिठासमरे आवनी के जिनके बेहूरे-मोहूरे पर चाहे बक्य की सल्टी असर कर पयी हो लेकिन रिक्त ज्यों का त्यों कल्पे बूब की तरह मधुर और स्वच्छ वा। मैं जैनेश्वर और वह मुनुबमीनार की तीर को मये। साय में बोड़ी-सी पूरियाँ थी। खाने बैठे तो सवाल हुआ कि पानी कौन लाये। मैंने कहा— जो जायेगा वह चाटे में रहेगा क्योंकि पूरियाँ कम हैं। जैनेश्वर की राय थी कि मुझे ही यह खतरा सेना चाहिए। लेकिन प्रेमचन्द ने कहा— मैं बूढ़ा आवनी हूँ मैं जाऊँ मुझ पर आप लोग जबर ही खत्म करेंगे। पानी तो उन्हें न लाने दिया गया लेकिन उनकी बात ने हमें जूब हँसाया। जब मैंने उनसे कहा कि मुनुब की काट पर चढ़ा जाये तो हूबराज जवाब देते हैं कि नीचे खड़े हुए इस साट का बड़प्पन हमारे दिनों पर है, ज्वर चढ़ने से वह कम हो जायेगा। इसी नीचे पर हमने एक छोटी खिचवाया। जब इस छोटी की काफी प्रेमचन्द को मेरी पयी तो उन्होंने लिखा— 'छोटो मिठा। मेघ मूँह टेड़ा जाया है। बना करें, नसीब ही टेड़ा है।

इसी बार की कशमी है वह भी एक कलाकार के सच्चे पुरस्कार की—

●स्वामीय हिन्दी घना की और से प्रेमचन्द जी के सम्मान में घना की वा रही

थी। उन्हें अभिलक्षणपत्र भेंट हीनैवासा था। उस वक़्त एक पत्राची सज्जन बड़े परीधान मालूम होते थे। वह कमी सभा के मंत्री के पास जाते थे कमी इनके या समके पास जाते थे। प्रेमचंद जी के पास जाने की सायब हिम्मत न होती थी। प्रेमचंद जी की उसी रात दिस्ती से जाना था। सभा का काम जल्दी हा जाता चाहिए और वह जल्दी किमा जा रहा था। प्रेमचंद जी ने अपना वक्तव्य कहने में सायब को मिनट लगाये। सभा की कार्यवाही समाप्तप्राय थी। तभी वह पत्राची सज्जन उठे और सभा के सामने हाथ जोड़कर बोले— मैं प्रेमचन्द को आज रात किसी हासत में नहीं जाने दूंगा। उनसे सायब इस मारी सभा को मैं कल अपने यहाँ आमन्त्रित करना चाहता हूँ।

सोर्गों को बड़ा विचित्र मामूम हुआ। तैयारी सब हो चुकी थी। और प्रमचंद जी का इच्छा निश्चित था। लेकिन वह सज्जन अपनी प्रार्थना से बाध न आये।

उन्होंने हाथ जोड़कर कहा कि मेरी अरदात आप सोम सुन लीजें फिर जो पाहे आप कीजिएगा। जब से अखबार में प्रेमचंद जी के यहाँ जाने की खबर पड़ी तभी से उनसे ठहरने की जगह पाने की कौशिल्य करता रहा हूँ। वह जगह नहीं मिली। अब इस सभा में मैं उनको पा सका हूँ। मैं उनकी तलाश करता हुआ दरवाज़ों की इच्छा से लज्जामऊ हो बार गया एक बार बनारस भी गया। तीनों बार वह न मिल सके। कई बारत पहले की बात है मैं कमाल से पुरख की तरफ गया था। पर भाग्य की बात कि मेरे पास जो कुछ था सब खतम हो गया। मैं पूमता-बामता स्टेयान पर आया। मुझ कुछ नुसता न था जाने क्या हीमा। सब अंधिये मामूम होता था। जब मैं हो ख्ये और कुछ वैसे बने थे। प्रेमचंद जी के अक्रमानों को मैं चीज से पता करता था। या ही टहलता हुआ स्त्रीलर की बुधान पर एक रिमाके के खेदात्त मग्बर के सज लीटन-वसटमे लया। उमम प्रेमचंद जी का एक अक्रमाना नजर आया। मैंन दपया एक गिस्ताला खरीद लिया और प्रमचंद जी की उता सब बहानी को पत्र गया। पत्रकर मेरे दिल की पगती जाती रही। हीगला गुरु गया। मैं सोटकर आया और हाग न मानने का इच्छा कर लिया। तब न मेरी तरफती ही होती गयी है और आज यहाँ आपकी खिदमत में हूँ। तभी न मैं उम मंत्र बहानी के मन्दाता प्रेमचंद जी तलाग में हूँ। अब यहाँ पा गया हूँ ना तिली तरफ छाट नहीं लखता। मेरी बीबी बीमार है वह उट-बैठ नहीं सक्ती। वह बर ने प्रमचंद जी के दरान की आस बांधे बैठी है। और फिर हाथ जोड़कर उन्होंने कहा— अब प्रेमता आप सब माहवान के हाथ है। ●

रिस्ती से लंटे लो लयं न कुछ लेना हुआ कि हम रोड के भीतर ही फिर पन्ने



Li 22

के लिए बिलुप्त योद्धा करना पड़ा। हिन्दी साहित्य परिषद् का कोई आयोजन था। केपरीकिणोर राख मंत्री थे। स्टेज पर मुंशीजी के अनुमोद स्वागत की कहानी उन्हीं के मुँह से सुनिए। यहाँ मुंशीजी दिल्ली की तरह नहीं पहुँचे से लखर देकर पहुँच रहे थे—

● १९३१ नवम्बर की २१वीं तारीख। घाम का वक्त साँझ बजे। पश्चिम से मानेशामी एक्सप्रेस पटना जंक्शन पर आती लगी हुई थी। प्रेमचंद जी भाव पटना मानेशामे से और उन्हीं के स्वागत के लिए हम लोग स्टेज पर पहुँचे हुए थे परन्तु हममें से किसी ने उन्हें देखा न था इसलिए बड़ी चिन्ता थी उन्हें कैसे पहुँचाना था। हिन्दी भाषा और साहित्य का प्रथम सम्मेलन हाल में ही निकला था। उसमें प्रेमचंद जी की एक तसवीर थी। चौड़ा मोल मुँह उभरा हुआ बलाट, बड़ी-बड़ी बगुनाकार पनी मूँछें। पोषाक भी सोझियाना थी— जैनेल का पैट पञ्जर और कोट। इसी तसवीर को संकर हम लोग स्टेज पर आये थे। रेकवाड़ी आयी और सेकड़ क्लास इतर, फर्स्ट क्लास सभी के जिम्मे हम लोगों ने देल किन्ने पर हमारे अनुमान का कोई आत्मी नजर नहीं आया। तक बड़े क्लास की बारी आयी। माड़ी का जिम्मा-जिम्मा हम लोगों ने छान डाला कहीं नहीं।

दो घंटे के बाद पञ्जाब मेल आयी। इस बार भी हम लोगों ने बड़ी उत्प्रेरता के साथ खोज की। तीन-चार साहब उठरे पर उनमें से कोई हमारी कल्पना का हमारी विज्ञान की तसवीर का प्रेमचंद न निकला।

सभी मित्र हवाय और निरन्ताह पर सीट चले। मेरी माँको तक बनेपु का पया

रुचिकार की घाम को बँटक थी और सरेरे छ बजे के करीब एक एक्सप्रेस आती थी। वस यही आखिरी आसप था। स्टेज पर ठीक बरत पर जा पहुँचा।

देन आयी, लगी और चली गयी। सँकड़ों आदमी उठरे और चढ़े पर प्रेमचंद नहीं आये नहीं आये। हम मसाफिरखाने की तरफ बढ़े। देखा लीड़ी के पास एक अक्षयपस सम्बन्ध जिमके बाल कुछ सफ़ेद हो चले थे और जो सफ़र की चकावट से कुछ झिन्न-से हो रहे थे धुमधुम कड़े हैं और कुली उनका टुक सर पर और बिलुप्त हाथ में जिन्ने पूछ रहा है— बाबु कहीं चले ?

इस मुसाफिर को कल रात ही को पंजाब मेल से उतरले देखा था तसवीर का कर बुझ—क्यों पंजाब भाप बकलक से आ रहे हैं ?

—हाँ यार्ड, बकलक से ही आ रहा हूँ।

—आप प्रेमचंद जी हैं ?

—हाँ प्रेमचंद हूँ।



स्वर उनका कुछ कठोर हो पड़ा था। मैंने प्रणाम करते हुए उनके हाथ से जैसे लहर के तन्नाल में बँधे पीतल के मोटे को से सिया और अत्यन्त म्मानि के साथ कहा — मैं केजरीकिशोर हूँ।

उनके चेहरे पर किञ्चित् भाव किञ्चित् संतोष और प्रसन्नता की रेखा एक साथ ही झलक पड़ी पर कोई लक्ष्मण उनके मुँह से न निकला। तब तक फ़िटन आ जयी

मेरा मन मर्ब से लुवी से संकोच और म्मानि से ऐसा भर गया था कि मैं यह भी न पूछ सका रास्ते में कोई तकसीऊ तो न हुई ?

तब तक वह भी कुछ स्थिर और संतुष्ट-से बीग पड़े। हिम्मत बढ़ी। पूछा — रास्ते में कोई तकसीऊ तो नहीं हुई ?

— तकसीऊ ? मैं तो रात भर इधी पसोलेप में पड़ा रहा कि रूँ या लौट जाऊँ। रात पंजाब मेस से उतरा। आप लोगों के बर्षन नहीं हुए तो मुसाफ़िरघाने में जाऊँ पड़ रहा। ठबिपत बहुत झुंझला रही थी। जब यहाँ को पूछनेवाला गही तो किसलिए ठहरेँ ! २॥ बने रात की गाड़ी से लौट बनने की इच्छा हुई। रिटर्न टिकट था ही। ज्येठफ़रम पर गया गाड़ी आ गयी पर चढ़ नहीं सका। सोचा तुम्हें दुःख होगा •

सदन में दूसरी योद्धा सभा हो रही थी। गांधीजी भी यथे से लेकिन जैसा कि मुंशीजी ने यहाँ से उनके बल्ले बरत लिया था — 'इस समय महात्माजी के सामने जो काम है वह आसान नहीं है। सदन में वह गोकमेश के चारों तरफ बैठे हुए एक-दूसरे खतुर विस्फोटकों के बीच में लड़े होंगे जिन्होंने राज्य-संपादन को जीवन-रतन बना लिया है। जहाँ अंग्रेजी सेना अमर हो गयी है वहाँ बहुधा अंग्रेजी डिप्लोमसी ने विजय पायी है।

वही हुआ। हिन्दू-मुसलमान और शूद्र-अशूद्र के सवाल लड़े कर दिये यथे बिनका हमारे पास कोई जवाब न था क्योंकि वह हमारी सच्ची कमजोरी थी। दुस्मन खबर उसका फायदा उठा रहा था तो क्या बुरा कर रहा था।

मुंशीजी यह भी खूब समझते हैं कि असल झगड़ा कितना है और किस चीज के लिए है—

सरकारी नीकरियों के लिए अभी तक चिन्तित समाज के मन में मोह है। वही मोह वही ओम इस बीमनस्य का कारण है। लेकिन अगर अभी वह समझ नहीं आया तो अब उसके आग में डेर नहीं है जब वास्तविक राष्ट्र चिन्तित समाज की संकीर्ण स्वार्थपरता के विरोध में विद्रोह करेगा। मुद्री भर पड़े-लिखे आबमियों को कोई खबिदार नहीं कि वह अपने हलके-माँके के लिए सम्पूर्ण राष्ट्र का जीवन सफ्टमय बनायें

मुंशीजी का गुस्ता अपनी जगह पर कितना ही ठीक हो उस दिन के आने में बनी काफ़ी डेर है।

गोकमेश का स्वाग खत्म हुआ तो मुंशीजी ने दिसंबर १९३१ को इंसवाणी में लिखा—

गोकमेश सभा जिस तरह पहली बार मपक्ष करके समाप्त हो गयी उसी तरह दूसरी बार भी न था करके समाप्त हो गयी। समाप्त क्यों हुई, अभी कुछ और मपक्ष होगी और यह सिलसिला शायद दो-चार साल चलेगा।

वह तो चकता रहेगा अन्ततः तक लेकिन असल मरोह की बीज है बंधा

आदिनोंकी का राज वा। पुलिस और मजिस्ट्रेटों को संघायुंय अधिकार दे दिये गये थे। जो मन आये करते थे। कहीं कोई मुनबायी न थी।

✓ २६ दिसंबर को जवाहरलाल पकड़ लिये गये। आठ रोड बाह मांपीजी और सरदार पटेल पकड़ लिये गये। उपर सीमांत गांधी अत्युक्त अफसर एां व-वार रोड के हर-फेर से उठाकर जेल में डाल दिय गये।

इस तरह सब बड़े नेताओं को जैदखाने में ठूसकर और चारों तरफ पुलिस का राज कायम करके हुकूमत अब इरानीनाम से कांग्रेस के अगले इरम पर निगाह जमाये गयी थी। जवाहरलाल ने आत्मकथा में लिखा—

राष्ट्रीय सप्ताह आया— ६ अग्रेष से १३ अग्रेष— और हमें पता था कि इसमें बहुत-सी अनहोनी बटनाएँ पढेंगी। जो कि पटी भी मकिन जहाँ तक मेरी बात है एक घटना के आग हुआरी सब घटनाएँ पीकी पड़ गयी। इलाहाबाद में मेरी माँ एक जुमूम में थी जिसे पुलिस ने रोका और फिर लाठीचार्ज किया। जुमूम टूट्टर गया तो कोई मेरी माँ के लिए एक कुर्सी ल आया। इसी पर वह जुमूम के आगे-आगे सड़क पर बैठी हुई थीं। कुछ लोग जो छाम तीर पर उनकी देग-देग कर रहे थे और जितमें मेरा सेक्रेटरी भी था गिरफ्तार करके वहाँ से हटा दिये गये और तब फिर पुलिस का चार्ज हुआ। मेरी माँ अपना गाकर कुर्सी से गिर पड़ीं और फिर बार बार बार बार उनके सर पर बैठ पड़ने लगे। सर पट गया और गून बहने लगा। वह बेहोश हो गयी और सड़क किनारे पड़ी रही जहाँ न अब कोई जुमूमबाना था न कोई जनता सबकी सफा कर दी गयी थी। कुछ देर बाद पुलिस का एक अफसर उन्हें अपनी मोटर में उठाकर आनंशभवन ले गया। उगी रात इलाहाबाद में यह अफवाह उड़ी कि मेरी माँ मर गयी। सुस मे पाबल भीड़ ने वागित और अहिंसा की गुम-गुम गोरर पुलिस पर हमला कर दिया। पुलिस ने गोनी पलायी जितमें कुछ लोग मार गये। इस सबकी सबर जब कुछ रोड के बाद मेरे पास आयी तो और सब बाने जैसे मायब ही गयी और यही एक उयाल मरे मन में बाकर बाटता था कि यदि कमजोर बुद्धी माँ पूनभरी मटर पर पेटाता पकी है और उनके सर में गून बह रहा है

उनी के बारे में मुनीजी ने निम्नलिखित १ अग्रेष १ ३२ के अने गां में निगम सादर को लिखा—

गवर्नमेण्ट की ज्वा-निवां अब माताबिन्त बर्दान्त हो गयी है। जिन जवाहरलाल की जर्द माँ के माप जितनी बिरबने की गयी। अब बागर गना मूने भी बेहवां मानम हो गयी है।

लेकिन वह भी जानते हैं कि रहना उन्हें बाहर ही है। क्या बुरा है। बाहर रहकर वह बहुत कुछ कर सकते हैं जो घेस में बैठकर नहीं कर सकते।

उसी महीने बमन की सीमा धीरे-धीरे मुंबई ने हंस में लिखा —

● कांग्रेस स्वराज्य माँगती है। सरकार स्वराज्य देने को तैयार है। तो फिर वह बमन क्यों? यह सरदारों क्यों? या तो कांग्रेस स्वराज्य नहीं कुछ और माँगती है या सरकार स्वराज्य नहीं कुछ और देना चाहती है।

कांग्रेस के स्वराज्य माँगने का क्या उद्देश्य है? क्या केवल अधिकार या अधिकार? देश में आगे आदमी बेकार पड़े हुए हैं वही में नये आविष्कारों को पेट भर भोजन नहीं मिलता वही में नये आविष्कारों को पक नहीं सकते कहीं साहूकार उनके मुँह का दूर छीन भेता है कहीं पुच्छि।

प्रजा भूखों मर रही है हमारे विभागाओं को अपने हक-भंगों में रसीभर की कमी भी स्वीकार नहीं। सब सर्व ज्यों का त्यों खर रहा है। प्रजा के पास जमान देने को कुछ न हो मगर सरकार अपना जमान बसूल करके ही छोड़ेगी पाहू किमान विक्रय का तबाह हो जाय चाहे उसकी जमीन बेदखल हो जाय उसके बर्तन-भाँड़े बिल-बनिये अनाज-मूसा सबका सब विक्रय प्रजा के रहने को सोंपड़े मयसूर नहीं सरकार को नई दिल्ली बनवाने की धुन है प्रजा को रोटियों का ठिकाना नहीं अधिकारियों को दस-बस और पाँच-पाँच हजार बेतन अवसय मिलना चाहिए। इस सरकारी नीति से कांग्रेस का आस्थाघन नहीं हो सकता और न होना चाहिए। सरकार यों तो जनता के हित-साधन का राम असापते नहीं सकती लेकिन जब उसका परिषय देने का समय आता है तो बपमें झाँकने लगती है। पोखनेज समा में भी विभागाओं को इसकी छिन्न न थी कि प्रजा की दृष्टा क्योंकर सुबायी जाय बल्कि यह छिन्न थी कि कांग्रेस की शक्ति क्योंकर टोड़ी जाय।

इस उद्देश्य को पूरा करने के लिए पूबक निर्वाचन का विधान सोच निकाला गया एक तरह से यह निर्णय कर लिया गया कि विच्छेद नीति को बरखा जाय। ●

इस विच्छेद नीति की बखिया अखड़ी तरह उभेड़ने के बाद मुंबई ने बीते ही बकते हुए सभों में लिखा —

जो कुछ यही-यही आसा थी उसका छेदरेधान ने चिरस मुक्त कर दिया। बस्य है वह मन्तिक जिसने छेदरेधान की कल्पना की। सुनने में तो ऐसा माकूम होता है कि वह विधान संयुक्त राष्ट्र अमेरिका के नमूने पर रचा जा रहा है पर वास्तव में यह केवल राष्ट्र को चिरकास तक बाधता में अकड़े रखने का एक नम ल्कारपूर्ण साधन है। राज्यों को एक विहाई बपड़े दे दी जायगी। मुसकमान

माई एक तिहाई लिये ही बैठ हैं। बाकी एक तिहाई में मछूत, रस्मि हिन्दू, ईसाई, सिख, जमींदार, व्यापारी किसान सबी और और न जाने कितने विरोधाधिकारों के लिए स्थान दिया जायगा। राष्ट्र का अंत हो गया। राजाओं के प्रतिनिधि राजमत्ता की उपासना करेंगे ही भुसकमान जिस तरह अपना कायदा देखने उभर जायेंगे। सभी दस अपनी-अपनी रखा करेंगे राष्ट्र की रखा कौन करेगा? पूरा चक्रम्यूह है।

बमभूमि इन्ही दिनों में आकर पूरी हुई—

अमरकांत की टॉपड़ी में एक सास्टेन जल रही है। पाठशाळा गुनी हुई है। पत्रह-वीम सड़के गड़े अभिमम्यु की कथा गुन रहे हैं। अमर राजा बह कथा कह रहा है। सभी सड़क कितने प्रसन्न हैं। उनके पीठ चहरे चमक रहे हैं, जिन अभिममगा रही हैं। सायर के भी अभिमम्यु जैसे पीठ, बैठ ही कठम्यपरायण होने का स्थान देर रहे हैं। उन्हें क्या मामूम एक दिन उन्हें बुयोंबनों और जपसंभों के सामने घुटने टेकने पड़ेगे माथे रगड़ने पड़ेगे कितनी घार के चक्रम्यूह से भागने की कोसिध करेंगे और भाग न सकेंगे।

घुटने क्यों टेकें भागें क्यों हम इस चक्रम्यूह का तोभे।

उसी बायेग में अपनी टिण्णी समाज करने हुए मुनीजी ने लिखा—

देश में हमेशा फ़ौजी कानून से शासन न किया जा सकेगा क्योंकि देश न शक्य खुप हाकर न देंगे और उनही बाभी में मलय का ऐसा आरक्षण है कि जनता उनका हाँके के नीच जमा होने से रुक नहीं सकती। अत्यन्त ईंगलैण्ड के शासन दा रखते हैं। एक ता राजमत्ता का मार्ग है। तलवार के जोर से प्रजा को बचाये रखा। उनका मत बटवाकर माकगुबारी समूह कर ला। यह जो कुछ माया पगीता बटाकर कमायें वह रेल डाक नमक आदि के महामूल बढ़ाकर आमदनी के टैकन के रूप में समूल कर ला। दुगरा जनगता का मार्ग है। प्रजा पर प्रजा के लिए के लिए शासन करो, राजा और प्रजा का भाव दिम न निकाल दानो मजिद हम बजा ईंगलैण्ड हम तरह की बाये मुनने का तैयार नहीं है। वह भारत में अपना आठक मनवाकर छाड़गा मार्ग भारत के कमी उसके आर्जक को न माना बा। आर्जक ता वह समझम दा भी माक न देगा बला आता है। पगने वह इसम भय भीत होता था अब भयभीत भी नहीं होता। अब जो आर्जक न उसके मन में उत्तन हाती है अब ता उगे राजनी टाट-बाट घूमपाय चमक-दमक दगतर घुमा लोपी है इतरीम तारों की गलाभिया और रणाल गाड़ियाँ और मारमगी गार्गसक उग रोह न नहीं दानो उमरे दिम में घुमा बा भाव उदाप्र करने है। बट नमवार का बेचक शासन क रूप में देगा है। उमरी गुनीम उम माती है। उमके कर्म

जाती उसने मुंह का कीर छीनकर खा जाते हैं। उसके बनाये हुए बर्मीदार उसे बेरसी से कुचकत हैं। उसकी बनायी हुई अवास्तव उसे ठबाह करती हैं। दहशत से मुपार और सहाय्य और शिवा और स्वास्थ्य और वह सभी आयोजनाएँ बिनासे राज बनता है बिनासे उसका विकास होता है लपटा है। हम बाबे से यह कहते हैं कि आज सरकार के विषय में अगर जनता से बोट स्थिया आय तो समस्त भारत में पाँच बोट भी न मिलेंगे। और जब तक हमारे विभागा भारत का धारण भारत के हित के लिए न करेंगे जब तक भारत को इंग्लैण्ड का मन्धूर समझा जायगा जब तक भारत को प्रयोपार्जन का अखाड़ा मोटी लौकरियों का क्षेत्र और इंग्लैण्ड के मांस का बाजार समझा जायगा जब तक इंसानियों की मति इंग्लैण्ड की निगाह भारत के मांस पर रहेगी उस बस्तु तक देश में न शान्ति होनी और न उन्नति। हमन सब कुछ कर सकता है पर देश का उद्धार नहीं कर सकता और जब तक देश के उद्धार का भारण सामने न हो शासन केवल लूट है और कुछ नहीं।

कोरा पर्वन-उर्वन होता तो भी शायद सरकार इसको पचा जाती लेकिन शान्त संयत शोच-संबन्धित इस क्षेत्र को जिसमें राजसत्ता की वैज्ञानिक धारण नीति का तार-तार बिखेर दिया गया था पचा पाना बहुत मुश्किल था और अपने महीने जिस समय मुंशीजी अपने मित्र पचसिंह शर्मा की अकाल मृत्यु का शोक मना रहे थे एक हजार की शमान्त का परवाना था चुना था —

“कौन जानता था कि हिन्दी-साहित्य का यह सूर्य अपने साहित्यिक जीवन के मध्याह्न में ही यों अस्त हो जायगा। पूज्य शर्माजी उन चुन के पूरे मनुष्यों में थे जो कभी बड़े नहीं होते। आपकी अकाल मृत्यु से हिन्दी साहित्य का एक स्वर्ग उठ गया। आज हम चारों ओर निगाह डौंड़ते हैं और हमें कोई ऐसा आदमी नहीं बीसता जो मुझे कहें होने के साथ ही इतना प्रकाश विद्वान् भी हो। आपमें गभीर और प्राचीन का अभूतपूर्व मेल हो गया था। क्या संस्कृत क्या हिन्दी क्या उर्दू क्या फ़ारसी आप इन सभी साहित्यों के ज्ञाता थे। अकबर मरजूम के तो आप आधिक ही कहें जा सकते हैं। मैं आपकी ख़बर से अकबर की सैन्य सौक्तियाँ सुनी हैं। आप उन पर मस्त हो जाते थे। हिन्दी में आप एक शास शैली के जन्म दता हैं — जिसमें चुल्हूसापन है, छोली है, प्रवाह है और उसके साथ ही शोभीर्य भी। उनका साहित्य उनके क़ाबू में है। वह उस पर सहस्रवार की मति सवार होते हैं। उसकी अपाम हीसी नहीं करते उसे बहकने नहीं देते। सूक्तियों के आप भण्डार थे और इसमें तो क़साम ही नहीं कि काव्यशास्त्र के आप मर्मज्ञ थे। शर्माजी बितने बड़े साहित्य-प्रेमी थे उससे कहीं बड़े मनुष्य थे। आपसे मिच्छकर कमी भी नहीं भयता था। नये लेखकों को आप वह प्रोत्साहन देते थे जो माता

अपने सटपटे वासक की बेटी है। मेरे ऊपर तो उनकी मसीम कृपा थी। सेवाएदन उपन्यास क्षेत्र में मेरा पहला प्रयास था। धर्म की वे जिस तरह रिक सोसकर उसकी बाव थी वह मैं भूल नहीं सकता। उस समय उनकी कठोर आलोचना ने मेरा अंत कर दिया होता। उसके बाद जब-जब मुझ उनसे मिलने का सुभवसर मिला इस तरह टूटकर गले लगाते थे "

कभी ऐसा भी होता है कि एक आदमी हमारे के लिए आईना बन जाता है। बहुत-सी बातों में साम्य है दोनों का। उनमें से एक और बहुत बड़ी चीज है — नयी प्रतिभा को पहचानना महाराज केना आगे से आना।

अपने हंस में उन्हें अच्छे से अच्छे बड़े से बड़े नये और पुराने सिगनेबार्सों का सहयोग मिला है।

पुरानों में सबसे बड़ा नाम प्रसाद का है जिन्होंने पहले अंक से उसमें लिगा और बराबर लिगा कहानियाँ भी लिगीं कबिताएँ भी लिगीं। हंस नाम भी उन्हीं का दिया हुआ है।

पिछले साल अमृतगुप्त को लेकर मुंशीजी की उनसे हल्की-सी बगमझपी हो गयी थी। माबुरी में उसकी आलोचना करते हुए मुंशीजी ने लिग दिया था कि प्रसाद की पड़े मुझे उठाइने में लगे रहते हैं। इस वर्ष बंदास सामने आया तो मुंशीजी की तबियत फड़क उठी और उन्होंने बड़े ठाकर से उठावा स्वागत करते हुए लिगा —

यह प्रसाद की का पहला ही उपन्यास है पर आज हिन्दी में बहुत कम ऐसे उपन्यास हैं जो हमके सामने रखे जा सके। मुझे अब तब आपसे यह विनायत थी कि आप क्यों प्राचीन बीमब का राय असापते हैं ऐसी चीजें क्यों नहीं लिगने जिनमें वर्तमान समस्याओं और मुश्किलों को सुझाया गया हो। न जाने क्यों देरी पर धारणा हो गयी है कि हम आज से दो हजार वर्ष पूर्व की बातों और समस्याओं का चित्रण महत्त्वता के साथ नहीं कर सकते। मुझे यह अममब-सा मामूम हाजा है।

सायद यह मेरी प्रेरणा का फल है कि प्रसाद की वे दस उपन्यास में समसामयिक सामाजिक समस्याओं को हल करने की अष्टा की है और मूब की है। मेरी पहली विनायत पर कुछ सोचा न मुझे गूब जाड़े हाथों लिगा था पर अब मुझ बग बठार बार्ने बहुत प्रिय लग रही है। अगर एमी ही दस-बीब कनाइँ के बाद ठंगी गुम्बर बगनु निराल आये तो मैं आज भी उनको कलम कर्म को ठपार हँ।

नये हाथों में मर्ताजी की शरते बड़ी उपन्यास अनेक है जिन पर उगा गर्ब है और जिन्हें सामने लाने का कीर्त मीठा मुंशीजी हाथ ग नहीं जाने देता। बी-ग

का रंग मुंशीजी का नहीं है, मगर उससे क्या अपना एक रंग तो है बिलकुल अछूता मौखिक सुन्दर। कौन इन्कार कर सकता है कि वैनेन्द्र में स्फूर्ति है, अपना एक सौरभ है।

वैनेन्द्र का पहला उपन्यास परछ इन्हीं दिना निकला था। उसे पढ़कर मुंशीजी ने २५ नवंबर १९३३ के अपने पत्र में लिखा था —

परछ मैंने पढ़ लिया था और पढ़कर मुग्ध हो गया था। परछ के चारों चरित्र—सत्य कट्टो बिहारी और गरिमा—सब हुए हैं। सत्य का ममीर, मानसिक सधाम। बिहारी का चरित्र उससे भी पबित्र किन्तु सरल और विनोद मय सया। कट्टो तो देवी है। मापकी रौली और चरित्र प्रदर्शन का ढंग मुझे बहुत पसन्द आया।

४ दिसम्बर को स्पेशल बेल मुजरात (पंजाब) से भेजे हुए अपने छत में वैनेन्द्र ने एक सवाल परछ को लेकर पूछा था —

अपमचरण का छत मिला कि आप परछ को प्रसाद स्कूल के अधिक निकट समझते हैं। उसका भी खूलासा मैं जानना चाहूँगा।

उसके जवाब में मुंशीजी ने १७ तारीख को लिखा —

अब आपके उस प्रश्न का जवाब कि परछ को मैं प्रसाद स्कूल के निकट क्यों समझता हूँ। मैं तो कोई स्कूल नहीं जानता आप ही ने एक बार प्रसाद-स्कूल प्रेमचर स्कूल की चर्चा की थी। वही मैंने बकर कुछ अंतर है मगर बहुअंतर कहीं है बहु मेरी धन्य में कुछ नहीं आता। मापकी रौली में स्फूर्ति सजीवता कहीं अधिक है। रिपब्लिस्ट हममें से कोई भी नहीं है। हममें से कोई भी जीवन को उसके यथार्थ रूप में नहीं दिखाता बल्कि उसके बाधित रूप में ही दिखाता है। मैं मन्म यथार्थवाद का प्रेमी भी नहीं हूँ।

उसी महीने हंस में मुंशीजी ने उस पर लिखा —

परछ है तो छोटी किताब पर हिन्दी में एक बीज है। माया इतनी सजीव रौली इतनी आकर्षक चरित्र इतना मार्मिक कि चित्त मुग्ध हो जाता है। मगर यह नहीं विवाह प्रया हमारो समझ में नहीं आयी। यदि कट्टो और बिहारी को सेवा-बत ही चारण करना था — और ऐसा प्रतीत होता है कि जीवन में बहु फिर न मिले होंगे — तो विवाह-बंधन की क्या जरूरत थी? विवाह वाचना की बीज न हो अन्तान पैदा करने की बीज न हो पर समति की बीज तो है ही ऐसी पाड़ी तो है ही जिसके दो पहिजे होते हैं। यदि रबी और पुदप को एक-दूसरे के प्रेम सहारे और सहायभूति की जरूरत न हा ता विवाह का नाम ही कौन से।

वैनेन्द्र भी से हमारो बोड़ी बेर की मुसाफत है। सीने-सादे चरचारी



आदमी हैं। हृदय में देशभक्ति और सेवा का भाव कूट-कूटकर गरा हुआ न कबि  
 ऐसे सँवारे हुए केश हैं न आँवों पर मुगहरी ऐनक न कोई टीमटाम। बुध्वाण  
 काम करनेवाले आत्मियों में हैं। पुरे सत्प्राणी। आजकल गुजरात स्पेगल जेल  
 में जेम्-जीवन पर कोई उपन्यास लिखने की सामग्री जमा कर रहे हैं।

यह साधिरी बात हम मिहामत छोटी-सी रिश्तू में भी आये बिना न रही  
 और जैसे न आती इसी ने वो मुंशीजी के हृदय को इस मये प्रतिभावाली सेगल के  
 प्रति और भी कोमल बना दिया है और सायद हल्की-सी स्पर्दा भी कही मन के  
 किसी कोन में रम बी है।

सेकित जैनेन्द्र ही क्यों नये लोगों की एक पूरी ज़ौज मुंशीजी के साथ बल रही  
 है जि एक एक-एक गिगाही को उम्हने बड़े प्यार से गुन अपने हाथों से बनाया  
 सँवारा है, उसी तरह जैसे अच्छ माथी की निगाह अपने एक-एक फूस पर रखती है  
 बिम फूस का क्या रंग है कौरी उसकी सुसब्द है वह ठीक बड़ रहा है या नहीं  
 नहीं कोई कीड़ा ता उस नहीं या रहा है

मुंशीजी वह बरमद का पेड़ नहीं है जिगक नीचे दूमरी को भी बड़ पनय नहीं  
 तागती। हर जगह अपना ही रंग अपनी ही छाया अपनी ही असुरति अपने ही  
 छप्ते होने बुटका संस्करण बनने का मोह या वासना मुंशीजी के मन में नहीं है।  
 वह तो बस एक माथी है जो हर फूस को प्यार करता है और हर फूस को उसने अपने  
 रंग में गिल्लते बड़ने गुसबू बिराखे देना चाहता है।

नय-नये मैदान मागती हुई मयी प्रतिभा की देगकर बहुत बार बड़े आदमियों  
 में एक छाटी अहमिका एक दुष्पा होप भी देगा क्या है— जो परा शक देना है  
 उनकी आँवों पर उसका तो यहाँ बिरु ही बेवार है।

१९ मार्च १९३२ के अगल लत में मुंशीजी ने बानपुर क भी सद्मुसाराण अरुणी  
 का लिगा था—

आपके बलास में यदि कुछ साहित्यिक रचि के छात्र हों तो उन्हें कुछ लिगन  
 रहने की प्रेरणा करते रहिये। मुबक बर्मी-बर्मी सुन्दर मल लिग जाने है जो हम  
 सागों के नहीं बन पड़ती। हमारी जीण अभ्यास में है। नवीनता और बिबिनता  
 तो उनका गाथ है।

छोटी बात है मबिन सायद ही सब साथ इमफा मन निरउल बय में बड़ सॉ।  
 मुंशीजी बार-बार बटन है कि आलोचक की बृष्टि उनके पाग नहीं है। न  
 होनी। बहम करने का क्या परपरा। ता भी जरा जो कुछ लिगा था रहा है उग  
 फा पर उनकी बड़ है और उगाक बाग म अपनी एक गाग और बणीग गर ५।  
 बनासनीगण बनुपेनी क एक तागत के अशाब म उरुन १ नून १ १ को लिगा था—

हिन्दी में पद्य साहित्य अभी अत्यन्त प्रारम्भिक दशा में है। कहानी लिखने-वालों में मुद्गलन कौमिल, जैनप्र बुमार, उष प्रमाद, राजेश्वरी यही नजर आते हैं। मुझे जैनप्र और उष में मीतिवत्ता और बाह्यत्व के चिह्न मिलते हैं। प्रमाद भी जो कहानियाँ भाषायमक होनी हैं गियिष्ठिस्तक नहीं। राजेश्वरी मच्छा किमलत हैं मगर बहुत कम। मुद्गलनजी की रचनाएँ सुन्दर होनी हैं पर गड़गई नहीं होती और कौमिल भी अक्षर बाध को देखकरत बना देते हैं। किमी ने अभी तक समाज के किसी विशेष अंग का विशेषरूप में अध्ययन नहीं किया। उष ने किया मगर बहक यवे। मैंने ह्मक समाज को लिया। मगर अभी कितने ही ऐसे समाज पड़े हैं जिनपर रोजगी इकलने की जरूरत है। साधुप्रो के समाज को किमी ने स्पर्श तक नहीं किया। हमारे यहाँ बल्पना की प्रधानता है मनुमुनि की नहीं। बात यह है कि अभी तक साहित्य को हम व्यवसाय के रूप में नहीं ग्रहण कर सकतें।

बा बरस बाद अनुबदीजी का फिर उनकी जिज्ञासा 'नविष्य जिनका है?' के उत्तर में मुंशीजी ने लिखा—

● माटकरकार हमारे पास बहुत ही कम हैं। रीमाटिक स्वक के प्रसार हैं बुद्धिबारी स्वक क पं लक्ष्मीनारायण मिश्र हैं हास्वरस के श्री जी पी० श्रीबास्तव हैं। इस क्षेत्र में सबसे नये भुबनेश्वर हैं जिनके एकाही माटरो का संग्रह 'कारण' अभी हाल में ही प्रकाशित हुआ है। मैरी समस्त म भुबनेश्वर सबसे अधिक प्रतिभासम्पन्न हैं सर्व एक ही हैं कि वह अपनी प्रतिभा को आसक्त्य खबानी पुताव पकान विगरेट पूकने और ह्मकबाजी क बककर में बरबार न करे। उनके पास अभिव्यक्ति की अन्धकारण यक्ति है, आस्टर बाइरु और या के रूप में। मिश्रजी को मैं पर्यद नहीं कर सका। विचार उनके पास हो सकते हैं पर उनमें यक्ति नहीं है अभिव्यक्ति का वेग नहीं है। मिछिन्द्र और ह्मिठूप्य प्रेमी हैं दोनों में माणकीय यक्ति है पर माणक की आपुनिक पकड़ नहीं है।

उपस्थासकारों में बुन्दाबनलाल बर्म, भयवतीचरण बर्मा निराळा सिवाराम धरण गुप्त प्रमाद प्रतापनारायण मिश्र आदि हैं। मैं समजता हूँ कि बुन्दाबनलाल बर्मा सबसे बड़-बड़कर हैं

कहानीकारों में पुताव करना इससे भी बयारा कठिन है— मनेय हैं चन्द्रगुप्त कमला देवी सुभद्रा उपा मिश्र लक्ष्मीचण भुबनेश्वर, बनार्जन सा अनार्दन राय नायर, अक्षय बोसा राधाशुष श्रीरेष्ठ बुमार और दूसरे बहुत-स लोग हैं

हास्वरस के लिखनेवाला मं अमपुर्नानन्द बजाड़ है जो कि वह बरत ही कम लिखत हैं।

रचनात्मकता ही मूल बस्तु है रचनात्मक प्रतिभाएँ हमारे यहाँ बहुत कम हैं। कहानीकारों में मीरान वीनेत्र के हाथ हैं।

निबन्धों में पं रामचन्द्र शुक्ल एकछत्र सम्राट् हैं

आपके मित्र बाबू प्रजमोहन वर्मा भी हँसी-मजाक में बहुत ही प्यारे किल्ले बास हैं और त्रिबदी प्रश्न में उनका 'छछ' एक मास्टरपीस था। ये कुछ बातें हैं यों ही राह चसठी-सी जिनमें आपकी क्या कुछ न मिलेगा पर (यह तो मैं आपसे पहले ही कह चुका हूँ) मैं कोई आत्माचलाबुद्धि-नाम्नन पाठन नहीं हूँ। सब तो यह है कि मुझमें तनिक भी आत्मोपनात्मक प्रतिभा नहीं है।

आपने जो विषय चुना है वह साहित्य के पूरे लोक को अपनी परिधि में लेता है लेकिन उसमें कोई नविकल्पवादी नहीं कर सकता। जिनमें आज सबसे अधिक सम्भावनाएँ दिगामी पड़ रही हैं हो सकता है कि वह बिल्कुल कुछ स्थापित हों और जो आज अति साधारण जान पड़ रहे हैं कमर जाएँ।

मुंजीनी देखते सबको हैं लेकिन उनकी असल निगाह मंजि हुए गिलाफियों पर नहीं है, उन्होंने तो अपना रास्ता पा लिया है, उनके हाथ लक्ष गये हैं उनकी बुद्धि पक चुकी है उन्हें अपने घस्टे पर जाने दो। लेकिन आ मभी इन मीरान के नये गिलाही हैं—वह अभी कुम्हार की पीली मिट्टी हैं, उन्हें अभी मड़ा जा सकता है।

मगर मुंजीनी गुद भी कभी इन तरह के बछेरे रू पुत्र हैं उन्हें पता है कि वह जन्मी निधी को पुट्टे पर हाथ नहीं लगने देता। लेकिन दोस्त की तलाश गबदो होगी है, नये सिचनेबाले को छासकर। और काष्ठ ही उठे नहीं मिलता। मिलने है कौन? अपने से छोटे बागल-बिगलित प्रगंसन या आने न बड़े रक्षपशु मीनप्रती पल्लव-मंभीर, दिगात्र महारपी

मुंजीनी उम्र में बड़े हैं तो क्या दिग्गज मताम्पी है तो क्या नबने पढ़न पढ़ योग्य आदमी है जिन्हें अपने से लीग बरग छोटे आदमी से भी गले में बाँहें टांगकर बाट करना अच्छा लगता है।

पीरेस्वर गिह एर नर क्षणक है। उन्ही जिनो उनकी कुछ कृतियाँ दपर उपर निरलना शुरू हुई थीं। मुंजीनी से उनकी एर कहानी पढ़ार उनकी निगा (दस तरह के कार्टे मुंजीनी बाड़ी दीड़ले रने ब) —

बाँर में आगरी कहानी पढ़ार मड़ा आत्म्य भाषा। नई जगह तो मन मुग्य हा गया। मैं आदमी पढ़ार म दिव्य तो नहीं टांगना बाटता निजिन कभी कभी कुछ लिगा करे तो ललान समर्पण।

बाँर मीन बाँर जिमी दूसरी कहानी से प्रगंस में निगा—

बहानी मिली। बन्धवार। पढ़ा और वी खुश हुआ। प्रीतिगंगा से बचने तो अच्छा हो। मैं खुश इस मज में मुबलिमा हूँ पर है यह बोय। फिर भी तुमने बहानी में इतना रस भर दिया है कि उसका यह बोय बरा भी नहीं लगता।

गम्भ-विष बौधने में तुम्हें बहुत कम लोभ पहुँच सकते हैं। संसार की सर्वथा बहानियाँ पढ़ते रखा करो और विपरीत तो ईश्वरीय व्यक्ति है। अभ्यास से इसे बमबाया जा सकता है लेकिन जहाँ नहीं है वहाँ पूरा पुस्तकालय पढ़ जाने से भी नहीं आता।

फिर वो महीने बाद —

“बाद तुम्हारा जंपनी का बाब पढ़कर मुन्ह हो गया। तुम यहाँ होते तो तुम्हारा हाथ खुम देता। लेकिन अब ठापीक न कहेंगा नहीं समझो पीठ टोक रहा है।”

बी ए० के एक छात्र के लिये प्रेमभंद की ये चिट्ठीयाँ बच्ची छात्र के मनको से कम न थीं। किसी ऐसी ही चिट्ठी का जिक्र करते हुए उपेक्षाक बाक ने लिखा है कि वह परी की साठी बोनहर और न जाने किसकी बोनहरें चिट्ठी केब में डाले सादिक पर बन्धर का बककर समाले और मुसकी-मुसकी गोया कि बलपर के हर बाधिये को यह सबर दते मूमने रहे ये कि यह देखो यह प्रमबन्ध का सन आया है, हाँ हाँ प्रेमभंद का पढ़कर भी तो देखो

लेकिन जिक्र ठापीक ही नहीं। २३ मार्च १९३२ के अपने खत में मुसीबी ने अरक को लिखा —

● तुमने अरेख को बिना काकी कारणों के छोड़ी करने पर आमतदा कर दिया। वह छोटी से बेवार है। बिब हित जीवन का दुख देखकर उसकी लबीपत्र और उपाधीन हो जाती है। फिर मकामक वह छोटी करने पर तैमार ही जाता है। लेकिन यह कौन कह सकता है कि बिब मियाँ-बीबी को उसने लड़ते देता था, उनका जीवन भी जीवन की पड़ती मयु अतु में इतना ही आकर्षक न रहा होगा ? तुम्हें कोई ऐसा नीम रिक्कामा चाहिए या कि बिबमें इंसान की अपना अकेलापन असह्य हो जाता या मियाँ-बीबी में जंय होने के बाबजूद भी उनमें ऐसा चारिबिक सोन्धवे होता जो इंसान को छोड़ी की लच्छ भुक्ने पर बिबस करता। मीजूवा हासत में बिम्मा convincing नहीं है।

पढ़ने के लिये लाइब्रेरी से मनोविज्ञान की एक किताब के सो स्कूली कोर्स की किताब नहीं मयी एक किताब लिखनी है *The Aspects of a Novel*, इस विषय पर अच्छी पुस्तक है। मन्सब लिंक यह है कि इंसान उदार विचारवाला हो जाय उसकी संबंदनाएँ ब्यापक हो जायें। टाबन्ट टीयोर के साहित्यिक और

दार्शनिक मिश्रण बहुत ही आसानी से हो सकता है। रोमें रोसाँ का विवेकानन्द बनकर पड़ो। उनकी गाँधी भी पढ़ने के आदि हैं। डॉक्टर रामकृष्ण की दर्शन संबंधी किताबें टासटाप का What is Art बगैर किताबें बनकर देखनी चाहिए।

तारीफ़ भी है इसका भी है हन्दी-गुस्ती नसीबत भी है, वहीं गुस्ता और मुँगाहाट भी है (जैसे कि मुबन-बदलसा पर) सकिन जो है सब वास्तविक है। इसलिये जी पर मारी नहीं पड़ता।

बहुत अच्छी सम्भावना है। उपायकी मित्रा हिन्दी की इयाँड़ी पर मारकर पाड़ी की अब ७ जून १९३३ को मुँगीजी न उन्हें सिखा —

मुने यह जानकर हर्ष हुआ कि आपकी हिन्दी से प्रेम है और आप हिन्दी साहित्य में आना चाहती हैं। मैं आपका स्वागत करने को तैयार बैठ हूँ।

मगर-गुलामी की परवरिश के साथ-साथ मानी का एक उत्तम ही अरुही काम गाइ गंगाई की गंधर्व भी है। संयोग से इन्हीं दिनों जनवरी-फरवरी १९३२ में इसका प्रसंग उठ्य हंस के आत्मकथा को लेकर। महागुस्ता की आत्मकथाएँ नहीं जिनका नाम चलन है, साधारण जनों साहित्योत्सवों समाजसचियों की आत्मकथाएँ। पंडित गन्धर्व दुमारे बाजपेयी को जो उची शक्त एम ए नाम करके भारत के सम्पादक बने थे यह बात कुछ अच्छी नहीं लगी। उन्होंने तस्माई के पूरे आदेश के साथ उनका विराय किया और बहुत ही अनजानी बातें कह पय ज। मुँगीजी को बंदरह लगी और एक अच्छा साता बगैर पाड़ा हा गया।

मुँगीजी अब ताब लाते ऐसी बातों की दिक्कत से मैदान में कर पड़े और बहुत छिड़ गयी। बाजपेयी जी के एक-एक आसप का लेकर मुँगीजी उत्तर देने लग —

● बाजपेयी जी फरमाते हैं — प्रगल्भ के सभी समीक्षा जानते हैं कि उनका मर्म बड़ा हीन था उनकी साहित्य कला को कमजोर करने में मर्म ही हुआ है यही प्रोग्रेस है।

इसका क्या जवाब दिया जा सकता है। सभी लोग कोई न कोई प्रोग्रेस करने हैं — सामाजिक नीति या बीडिक। अगर प्रोग्रेस न हो तो गंगा न साहित्य की जगह न प। या प्रोग्रेस नहीं कर सकता यह विचारगुण्य है और उसे बलम हाथ में लेने का कोई अपिहार नहीं। मैं उस प्रोग्रेस को गर्व न स्वीकार करता हूँ। मैं विचार तो उस प्रोग्रेस के आदेश से है जो मान और मन और नीति और पन-मन के बगैर दिया जाता है। जिन आत्मी ने जीवन में एक क्षण भी जिन साहित्य सम्बन्ध या गंगा में तारीफ़ होना का गुनाह म किया है,

को ज्येष्ठधर्म को सूची का तस्ता समझता हो उसको अपना डिग्रेड पीटनेवाला कहना स्याद नहीं है। ●

वाजपेयीजी ने अपने लेख में कहीं यह भी लिखा था —

यहाँ व्यक्ति के व्यक्तित्व के कोई स्वतन्त्र विषय नहीं रहे जाते उच्च साहित्य की वह भावभूमि है। यहाँ अगरिग्रह का साम्राज्य है छोटी नहीं छोपे जाते। यहाँ बाणी मौन रहती है गाथा गाने में मुख नहीं मानवी

उसका जवाब देते हुए मुसीजी ने कहा —

●यहाँ बाणी मौन रहती है वह साहित्य है? वह साहित्य नहीं घुंघापन है। साहित्य का काम भावों को अन्त-करण में अनुभव करना ही नहीं उगड़ो व्यक्त करना है। तुमघीबास ने रामायण द्वारा अपनी आत्मा को व्यक्त किया है अन्यथा मात्र उनका कोई नाम भी न जानता

इन बातों का सीधा-सादा अर्थ जो हम समझ सके है यह वह मामूम होता है कि साहित्यकारों को आत्मविज्ञान नहीं करना चाहिए। यह सभी के लिए सिद्ध है और साहित्यिक प्राथियों के लिए और भी अधिक। इसके मानने में किसी को मठभेद नहीं हो सकता। लेकिन क्या आत्मकथा और आत्मविज्ञान समान है? बोझे-बहुत अच्छे या बुरे अनुभव सभी प्राथियों के जीवन में हुआ करते हैं। जो सौंदर्य साहित्य के खूबे खूब में आकर अपना तन-मन पुलाते हैं, वह केवल आत्म विज्ञान के भूखे नहीं होते। भाव अपने दार्शनिक गाम्भीर्य के कारण उन्हें जिसना चाहे पतित समझ में पर साहित्य-खेद में जो कोई भी जाता है वह अपनी आत्मा की प्रेरणा ही से जाता है। यह दूसरी बात है कि वह परमपद को प्राप्त कर सके या न कर सके। स्कूल में सभी लड़के टी गांधी और मोससे नहीं हो जाते न सभी भारत-संपाक हो जाते हैं पर यह कहना कि वे केवल विद्याभ्यास का स्वाद रचने जाते हैं ऐसी बात है जिसका जवाब सामोसी है। हम तो कहते हैं कि एक मामूली मजदूर के जीवन में भी खोजने से कुछ ऐसी बातें मिल जायेंगी जो अमर साहित्य का विषय बन सकती हैं। केवल देखनेवाली आँस और जिसनेवाली इन्द्रम चाहिए ●

मुसीजी अपने सात्विक क्रोध के आवेस में बांधी-तुफान की तरह लिखते चले पा रहे हैं, उन्हें बायें-बायें देखने तक की पूर्वत नहीं है और न कोई लिहाज-मुटीबत हल-इनकर चोटें मार रहे हैं।

कोरी धारत्रीय बहस होती तो भी शायद मूमकिन होता बहुत खोप-खोपकर, टीक-टीककर खड्डों को बिटवना। यहाँ तो हमका हुआ है अपने और अपने ही

सांस्कृतिक निबन्ध बहुत ही आता दबों के हैं। रामें रोली का विवेकानन्द बकर पड़ी। उनकी गाँधी भी पढ़ने के काबिल है। डाक्टर दाबाकुम्जन की दर्शन संबंधी विचारों टारुस्टाय का What is Art नमैरू किताबें बकर देखनी चाहिए।

तारीक भी है इसकाह भी है हन्दी-पुस्तकी मसीह्य भी है कहीं मुस्ता और मुंसीमाहट भी है (जैसे कि मुकनेस्वरप्रसाद पर) लेकिन जो है सब बोस्ताका है। इसकिए जी पर मारी नहीं पड़ता।

बहुत सन्धी सद्भावना है। उपादेवी मित्रा हिन्दी की इपोकी पर बकर पड़ी थी जब ७ जून १९३३ को मुंसीजी ने उन्हें लिखा —

मुझे यह आनन्दरुप हमा कि आपको हिन्दी से प्रेम है और आप हिन्दी साहित्य में आना चाहती हैं। मैं आपका स्वागत करने को तैयार बीटा हूँ।

सगर-मूल पीयो की परवरिश के साथ-साथ माकी का एक उतना ही बरूरी काम माइ-संयाइ की सफाई भी है। संयोग से इन्ही दिनों बनबरी-परबरी १९३२ में इसका प्रथम उद्यम हुंज के आत्मकथाक का सेकर। महापुरुषों की आत्मकथाएँ नहीं जिनका आय बरून है, साधारण जनों साहित्यसेवियों समाजसेवियों की आत्मकथाएँ। पंडित मन्ड दुम्नारे बाजपेयी को जो उरी साम एम० ए पास करके भारत क सम्पादक बने वे यह बात कुछ अच्छी नहीं लगी। उन्होंने ठरुवाई के पूरे भावैस के साथ उसका विरोध किया और बहुत सी बनकहनी बातें कहे गये जा मुंसीजी को घेठरू लकी और एक अच्छा खासा बतेड़ा लड़ा हो गया।

मुंसीजी कब तक कठे ऐसी बातों की दिखोवान से मैदान में कब पड़े और बहुस किड़ नयी। बाजपेयी की के एक-एक आरोप को सेकर मुंसीजी उत्तर देन लगे —

● बाजपेयी जी परपाठे हैं — प्रेमचन्द के सभी समीक्षक आमतो हैं कि उनका सबसे बड़ा दोष जो उनकी साहित्य कमा को कलपित करने में समर्थ हुमा है, यही प्रोपेमेंडा है।

इसका क्या जबाब दिया जा सकता है। सभी सेगर कोई न कोई प्रोपेमेंडा करते हैं — सामाजिक नैतिक या बीडिक। अपर प्रोपेमेंडा न ही तो संगार में साहित्य की जरूरत न रहे। जो प्रोपेमेंडा नहीं कर सकता वह विचाररूप्य है और उस कसम हाथ में सेने का कोई अधिकार नहीं। मैं उस प्रोपेमेंडा को नहीं से स्वीकार करता हूँ। मेरा विरोध तो उन प्रोपेमेंडा क आक्षेप से है जो मान और मम और कीर्ति और मन-मोह के लक्ष्य किया जाता है। जिन आरोपों न जीवन में एक बार भी किसी साहित्य सम्प्रेषण का उभा में घटीक होने का बुनाइ न किया हो।

जैसे और न जाने कितने तरीक साहित्यकारों के जीवन की सारी कमाई पर, उनके समस्त जीवन-आपसों पर, निष्ठा पर, बिगूँ कौसी-कौसी हासलों में खोह-खोह और अठारह-अठारह बटे काम करने के वाद भी आगे पेट खाकर, फटे-पुराने कपड़े पहनकर, नगे पाँव रहकर, हम अपनी छाती से लगाये रहे हैं। सब कुछ भोसकर भी हमने अपनी आत्मा नहीं वेची सरकार बहादुर की छैरबहाही करके तर माल खाने और अपना घर भरने की सबीक नहीं की अमीर-उमरा के टुकड़ों पर नहीं गिरे — और न कभी किसी से नीक माँगी। न मेरे-मेरे जागे जाकर अपनी तकलीफ मायी। वह एक मोछी बात होती उससे हमारे दर्द का मूल्य पटता। हमन सात तारों में उसे अपने तिस के भीतर बंद रखा। इसी में उसकी सार्बकता भी औरव या तृप्ति का आस्वाव बा। तुम क्या जानो (कब दखा तुमने हमें कष्ट की पराभव की बड़ियों में) हम क्यों कभी-कभी सबकी मजर बजाकर अपने भीतर भाँक सेते थे वहाँ हमारे हृदय की वह रत्न-मंजूपा है जिसका हाट में कौसी मोस नहीं है। सब बरों सबसे कहने की नहीं होती लेकिन क्या हमें दर्द नहीं होता ? हम क्या पत्पर है ?

तब फिर कैसे हिम्मत पाई इस आवमी को कि इस तरह तरीहू हमको पाकी से ? सारी खिन्गी भाङ लीपकर क्या हमने बस हाप काका किया ?

मुँचीबी समझ रहे हैं कि वह सिर्फ अपने लिए नहीं अपने जैसे और भी न जाने कितने लोगों के लिए लड़ रहे हैं जो गुमनाम हैं मगर बिगूँने वहाँ खोसकर किसी बड़े आदर्श के लिए सच्चा कष्ट सहा है और जिनके पास कुछ कहने को है —

बड़े-बड़े लोगों के अनुभव बड़े-बड़े होते हैं, लेकिन जीवन में ऐसे कितने ही अक्सर आते हैं जब छोटों के अनुभव से ही हमारा कस्मान होता है। मुई की बपह ठक-बार नहीं काम से सकती। मेरा खमाल है कि मेरे घर के मेहतर के जीवन में भी कुछ ऐसे रहस्य हैं जिनसे हमें प्रकाश मिल सकता है। किसी भी मनुष्य का जीवन इतना गुच्छ नहीं है जिसमें बड़े से बड़े महत्त्वरितों के लिए भी कुछ न कुछ विचार की सामग्री न हो

यही १९१२ के दिन हैं, सतलुज के घायव आखिरी दिन। मुँचीबी यनेस मंड के पीले पिचालेबाके मकान से बठकर पास ही पेत मार्केट के घर में आ गये हैं। इनबार की बोपहर है। मुँचीबी अपने किसी बोस के साथ घाटरव सेल रहे हैं। चारपाई पर आप हैं सामने कुर्सी पर दूसरे सज्जन बीच में छोटी-सी मेज पर घाटरव की बिसास। काठ के बाड़े बीड़ाने में ड्रील और रत्न बसाने में बीनों लीम हैं। कमरे में सनाय छामा हुआ है। पोड़ी बैर बाव उस घामोरी को तोड़ी



हुई मुंशीजी की आवाज सुनायी पड़ती है—पैरल तो मैं मरने न दूंगा फीका भले फट जाव। पैरल रहेंगे तो फिर प्रीसे बत आयेगे

मुंशीजी सुव छोटे आदमी हैं और छोटे आचमिया के प्रति विरस्कार का भाव उन्हें बिस्फुल्ल सह्य नहीं।

बहरहास सेप वा मंत आठे-आठे गुस्सा ठण्डा पड़ चुका था—

मेरी तो अच्छी-बुरी जिनगी तरह फट गई, मन तो हाय न सवा हार्मानि कोचिन्न बहुत की और अब इस क्रिन् में हूँ कि कोई मीठ का पूरा रईस फैंस जाय तो अपनी कोई रचना उष समर्पण कर दूँ। लेकिन मापको अभी बहुत कुछ बरता है, बहुत कुछ चीजना है बहुत कुछ वेसना है। आदर्श बहुत अच्छी चीज है। लेकिन ससार में बड़े से बड़े आदर्शवायियों को भी कुछ न कुछ झुकना ही पड़ता है। यह न समझिए कि जो कुछ आप समझते हैं यही सत्य है, दूसरे निरे गावदी हैं। मत भेद होना स्वाभाविक है। लेकिन जिनसे मतभेद हो उन्हें मीषा न समझिए। जिसे आप मीषा समझेंगे वह आपकी पूजा न करेगा। अब गुस्सा बूक बीजिए। आपने बिमड़कर मन को ध्यान्त कर लिया मैंने आपके बिपङ्गन का आनन्द उठ्यकर मन को ध्यान्त कर लिया। आइए, हाथ मिला लें।

यह मुंशीजी की एक छाय मोहिनी जबा है (जो मवा नहीं उनका सहज स्व भाव है) जिसके आये सब डेर हो जाते हैं—वह स्वच्छ पानी वैसी पाररक्षिता सरल निरदृष्ट

पूरे सत्ताईस बरस बाद ५ फरवरी १९५९ को आनासबागी से बोझते समय इस बटना को याद करके बाजपेयीजी के मन में बस अपनी भूल की प्रतीति और मुंशीजी के प्रति तिष्कल्युय स्नेह और आबर का भाव रह गया और उसके साथ ही उन्हें याद आयी उसके भी एक बरस पहले सन् इस्लामीस की एक बटना जब उन्होंने मुंशीजी पर भारत में एक बाड़ी ठीका सेल लिखा वा जिसे पढ़कर मुंशीजी ने उनको लिखा वा—ठारीक तो बहुत से कोप करते हैं पर कमियों को बिबाने वाले नहीं मिलते। आपका मैं शुक्रनुबार हूँ, आपने कई मतों में मेरा उपकार किया। ऐसा ही अनुभव इसाचन्द्र जोशी को हुआ—

यद्यपि सामयिक पत्रों में प्रेमचंद जी की कला-संबंधी पारमा से मेरा मतभेद कुछ कड़वे रूप में व्यक्त हो चुका था पर जब मैं उनसे मिला तो उन्होंने अपनी बातों में किसी सामान्य संवेत से भी यह बात प्रकट न होने दी कि मेरे बिपारों से मतभेद होने के कारण मेरे प्रति उनके मन में किसी प्रकार का द्वेषभाव उत्पन्न हुआ है। प्रारम्भ में उन्होंने कुछ संकोच के साथ बातें बवस्य कीं पर कुछ ही बर

बाव बह ऐसे सुखे कि बोरों को ऐसा अनुभव होने लगा जैसे हम लोगों की बड़ी पुरानी मैत्री हो।

हम का यहाँ काम नहीं है शोष है प्रबल क्षयिक छोटी बातों में नहीं उनमें जहाँ कोई उनकी हस्त पर ईमान पर जीवन के गहरे विश्वासों पर जोर करता है। उस पक्ष उन्हें फिर और कुछ नहीं सुझता मुझे से बर्गपान लगत है और कनपती की रसें फूल जाती हैं। युद्ध

जो ग्यानीय है उसकी रक्षा करने में कौसी दुबिधा कैसा संकोच ?

समझने का आश्वासन प्राप्त हुआ। अब यहाँ से लंबू-बेमा जखड़ता है। समझी का मनना पर तो कहीं नहीं बना। होगी बुझ, जैसे बी होगी। अगर उनके पहले और भी कहीं हाम-वीर मार देने में क्या बुझई है।

विज्ञान सरकार की उर्दू-करण की नीति के अन्वयण इस्मानिया युनिवर्सिटी के बचीम अनुवादको का एक पुरो काम किया गया था जिसका काम धान विज्ञान की अधिक से अधिक पुस्तकों का अनुबा करना था। साय उची की तरफ उकाहना-जरा इगारा करते हुए मुंशीजी ने २३ जनवरी १९३२ के अपने पत्र में लिखा था — इराजवाद में जागको मरी बा न बाबी कुरली बाठ है। या तो उनकी माती है जो बार-बार यादगिहानी करते रह। मैं तो बूके से बिक का दिसा था। अब तक इलम और दिमाग काम करता है अब तक यम नहीं। अब बेकार हो जाऊँगा अब देखी कामपी। लीम महीने भीर बहीं हूँ। फिर मेरा बेहानी मकाम है और मैं हूँ। अब तक बीकमतमन्व न हो सका तो अब बना होऊँगा। भावपी की कमजोरी है कि अगर बेकिमी चाहता है बना कुछ छोड़कर मरे तो क्या और धामी हाव नये तो क्या।

अपना लख बतारीख २५ फरवरी बर् की एक पूरी दास्ताज है — बार कोड़े लगातार निकले। इनसे नजात न होने पायी थी कि शीतों में बर् हुआ। बाठ से फूर्त मिमी तो पेट में बर् शुरू हुआ

मैं अप्रैल में बनारस चला जाऊँगा। देहाठ में बैठकर लिटररी काम करता रहूँगा। अगर रीडरें मंजूर हो बची तो तीन साल तक कोई परीयानी न हूँगी। ऐसी उम्मीद है। क्या होगा ईस्कर जाने। अगर फीलकी मजबुत हूँ याहू के काई उर्दूमा या लालीऊ का काम माकूल मुजाबजे पर मिल जाय तो मेरे लिए हासिल करने की कोशिश क्यों नहीं करते? साल में पाँच ली का काम भी कर लूँ तो मुझे पूरा बेकिमी हो जाये। नाबिल बरीरू का बाजार बहुत ठग है। बड़ी हिम्मत सिफर हाथ पँदा हो बपी है।

मास्चबरी के डामों का उर्दूमा करके मुंशीजी ने निजम साहब को दे दिया

या लेकिन निबम साहब ने अब तक उन पर नजर डालकर उन्हें एकेडेमी के हवाले नहीं किया था। १ अप्रैल १९९२ को मुंशीजी ने उन्हें लिखा —  
 स्याल कौजिए साल मर से जामर हो गया। इस काम में मैं और बाबू हरप्रसाद सक्सेना दोनों ही सरीक थे। वह बेजारे जग में हैं। उन्होंने अपना नाम पोखीदार खाने की तस्वीर कर बी बी इसलिये मने कमी जिक नही किया। मगर मने महज उनकी खबरियात का स्याल करके उनकी हमबाब की थी। आज क़ैनाबाद जेक से उनका दर्नाक लठ आया है। इसलिये मैं फिर यादविहानी करने पर मजबूर हुआ हूँ। मगर आप इस बन्ध एक सी खये भी पेशगी बसूत कर सफ़े तो मैं उनकी बीबी को दे दूँ। वह जमी-अमी यहाँ आयी थी। मेरी हासत इस बन्ध ऐसी नहीं है कि सी खये निकाल कर दे दूँ। मैं जमी बाहर हूँ और मुझे ऐसी सरीब' बन्ध नहीं। मगर उनकी हासत हमबर्वातलभ है।

कुछ मुंशीजी की हासत कुछ कम हमबर्वातलभ नहीं। जिस रीबरबाली कुत्तेखसी मे ससमक के राम उमामाब बन्धी मे मुंशीजी को मुबतिला किया था उसका भी आखिरकार कोई मतीजा नही निकला और मुंशीजी ने लिखा —  
 मेरा हिन्दी सेट तो असम्भत हो गया। तास्कुनेवार प्रेस किताबों की छपाई का इन्तजाम न कर सका। कारकुनों में कुछ ऐसी बदमजामियाँ पैदा हो गयी कि राम साहब की कुछ न बली और उनका मुकसान भी हुआ। जनबैसर बरीरह पहलक ही से रख लिमे गये थे। एक हबार का टाइप भी आ गया था। मगर सब बरत रू गया। साने की बेटी थी। मुमस्तिक्यो' में तीन साहब थे एक बन्दा भी था। और असहाब हवा खाने पहाड़ों पर सखरीऊ के गये मैं रू गया। मैंने भी प्रेम की हासत बेबी तो चुपका हो रूया।

काउरी मजा से-सेकर कहानी कह रहे हैं — मगर वह तो उनकी तबीयत में बाधित है। अपनी मोटबुख मे न जान किस संसर्ग में उन्होने एक अगह टाँक रखा है — टेन्म आक मिबरी टोहइ इत ज्वायफुस स्टाइल राम की कहानी मजा से सेकर

मह भी एक ऐसा ही चुटकुला है। और इसी रंग में साल दो बरस पहलक उन्होंने अपनी बेहतरीन कहानियों में से एक पूस की रात लिखी थी जिसमें किसान अपनी फसल के बचकर खाक हो जान पर लुच होता है कि अपने छुट्टी हुई, अब पूस की ठिठुरती हुई रात में उस पर पहुँच तो न देना पड़ेगा।

हरि का हृद से पुनरुत्पत्ति है क्या ही जाना

बाहिरकार मई का गहना बाधा पुनरुत्पत्ति के पहले मुष्मीनी बनारस पहुँच गये और मर्मा की सृष्टियाँ हस्ते रस्यूर लमही में बीती।

बूब मोर में उठ्ये और लोटा लेकर दूर बाधन विनहवा की तरफ निकल जाते। लोटते लो लोटे में टपके हुए आम होते।

घर के सामने दो पत्थर की बेंचें थीं। जन्हीं पर बैठकर इमीतान से कुल्हा बनुवन होता।

गौकरी के मिलसिले में मुष्मीनी को काड़ी लगे-लगे जसों के लिए बाहर रह कामा पढ़ता पर यौव जाकर सबसे मूल-मिल जाने में उन्हें एक दिन का भी समय न लमवा। पिरबी-पदारथ सुंदर-बरीब, छानुर-बाबुर, स्पन-बेलावन (जिसमें वह किसी के पैया से किसी के बन्धा किसी के बन्धा) — सब बीते उनसे लिए तकपते रहे हों और देखते ही दीककर नकवार में से लेना चाहते हों।

गाँव से बाहर बेटों को जाने का रास्ता मुष्मीनी के घर के बरख से गया है और अकसर बुबह-खाम गही पत्थर की बेंच पर बैठे-बैठे मुष्मीनी की मुलाकात सबसे हो जाती। जो जपर से पुनरुत्पत्ति गही बोही बेर के लिए बैठ जाता कुछ अपनी कहता कुछ उनकी सुनता। किसकी कहीं किसनी बोल है। किसके गहाँ कब कीन बीमार है। किसके यहाँ भास्यो में बनवन चल रही है — सब कुछ उनको पता रहता और जो पता न रहता उसनी पूछताछ करके अपनी बानकारी अपट्टेड कर लेते।

फिस्तान मोहू गही होवा बहुत बाध हाता है (बर्ग बिजे कैसे ?) लेकिन उसके भीतर इस्तानियत और इमदर्दी का जो एक स्तर है, वह भी उनसे छिपा न था। घाबर गही बजह थी कि उनके मिन सब कुमियों में वे कामस्मों में बीता मिन एक न था। सभी मुकदार मुहुरिर अहममर पत्थरी के अवाकरी नोप जिनकी येह नियत में अवाकत चुन गयी थी — उनसे मुष्मीनी की बूब न बीटती ही फिस्तानो के गाले उनकी बेघेवर बिलबन्पी और राह-रस्य उनसे भी थी, लेकिन वह और बीब है।

प्रेस अपनी जसी पुरानी कड़क बाक से चल रहा था। फिस्तानी बाग उसे बंद कर देने का कामाक माता था लेकिन हर बार ठीक वालीस लोनों की रोड़ी का कामाक उस दबा देता था। हंस निकालने के पीछे बूसरी बालों के घाब-घाब प्रेस को काम देने का कामाक भी था। लेकिन हंस कोड़ में साब घामित हो रहा था।

बस बजता और वहाँ दूसरे कोम अपना-अपना बस्ता लैमाकर कचहरी की राह सेते वहाँ मुंशीजी भी किरमिच या बमड़े के बंदवार बूतों पर अपनी घर की बुकी मोठी और देहाती बटेके के हाथ का मुका हुला मटमैसा-सा कुर्दा पहनकर छाता लेकर शहर बस पड़ते। वो फसाय बड़बा पर इक्का मिच जाता ही एक सपाटी का बबन्नी कसता और वो कमी बो मीक बूर पिचनहरिया ठक पीबल उस्ता नापना पड़ जाता सो बो ही जाने में काम बस जाता।

प्रेस पहुँचकर दिन उसी सब खोरगुम में कट जाता। मशीन बड़बड़ा रही है। बड़े-से हाथ के एक कोने में मुंशीजी उमाम बेकी पूजो और दूसरे काण्ठाठ से बिरे हुए अपनी मख पर बैठे हैं। घाहक भी आ रहे हैं। मिस्सेबाके भी आ रहे हैं, कंपोजीटर और मशीनमैन भी आ रहे हैं। मुंशीजी सर उठाकर उनस बात कर सेते है और फिर उन्हीं पूजों में डूब जाते है।

उन्हीं दिनों की बात है एक रोज कैसाखनाब जी प्रेस पहुँचे। कैसाखनाब गोरखपुर के जूमिबर ट्रेनिंग कासेज (मुंशीजी के बजत के नामक स्कूल) में कई बरस ठक प्रिंसिपल रहे। एक बड़ अठाछ-बीस साल क नीजवान थे। उन्हे कोई अमिमखलपन छपाने के लिए दिया गया। अब सुनिए —

बनारस के सभी छोटे-बड़े प्रेस बंद थे। वहाँ जाता कोरु जवान मिस्सा प्रेस बन्द है। साधार निरास बूमता हुआ मैं बिसेधरपंज में सरस्वती प्रेस क सामने बामा। बेसा प्रेस बंद है पर कपाट आभे खुले हैं। अंदर झाँका एक साधारण-सा ब्यक्ति बाबी का नैसा कुर्दा-मोठी पहने बैठा था। मैंने पूछा — क्यों साहब प्रेस बंद है ?

—जी प्रेस तो बंद है पर कहिए आपका क्या काम है ?

नीजवान ने अपना काम और उसकी अहमियत बतकायी तो वह आदमी ठठाकर हँस पड़ा और बोला — आपको बिलकुल ऐन बकस पर यह काम सूझा। पहले क्यों नहीं आये ?

नीजवान ने अपनी सझाई बी — मुझे तो कक ही यह काम सीपा गया है और तमी से मैं बीड़-भाग कर रहा हूँ पर न तो कक ही कियो प्रेस ने इस काम को जेना मंजूर किया और न आज ही।

तो इसमें बबरान की ऐसी कील-बी बात है हाथ से ही बिचकर पैवार कर लीजिए।

पर अब इससे नीजवान की बिलजमई नहीं हुई तो उस आदमी ने कहा — अज्जा बबरानो नहीं, बेबता हूँ पास ही में एक कंपनीटर रहता है, अगर वह आज काम करने के लिए तैयार हो जाय ता क्या कहता। तुम थोड़ी बेर यहाँ बैठो।

यह कहकर वह माइमी कंपोडीटर को बुँडन बल दिया। भाप घटे बाद सीटा तो कंपोडीटर साप पा। पर वह छुट्टी का दिन था सनी मेले की तैयारी में अये वे और कंपोडीटर काम करने में आलाकानी कर रहा था। तब उस माइमी न बड़े प्यार और आग्रह स कहा — यह सड़का बहुत परेणाल है। अयर मात्र इसका काम न हुआ तो बनारस की बड़ी भद्र होगी।

कंपोडीटर काम मे जुग गया और वह माइमी नीजबान से बाँते करने लगा। जब पीसे बुकान का बज्र आया तो उसने जो आज बज्रकाया वह डुमरे प्रेसा के साधारण रेट से भी कम था। नीजबान न कुछ सजुबाठ हुए कहा — आज ठा छुट्टी का दिन है, आपको बुगना चार्ज लेना चाहिए

मगर वह माइमी इसके लिए राजी न हुआ और पीसे कंपोडीटर क हाप न बेंते हुए बोला — माई, जो तुम्हाए पीसा हो वह तुम स सा जो बच हुमें बे दो। असो दोनों का काम बला।

घाम हुई, प्रेम का नाम खाल हुआ और मुंजीजी कम्पनीबाय क नामबाले भीउड़े पर था सड़े हुए, एक ऐसे इसके की तलाग में जिस पर एक ही सवारी की बगह बची हा और जो छावनी की ओर जाता हो।

छावनी से यानी कचहरी से ऐसे ही किसी एक सवारीबाय बेहाउ के इस्क पर बैठकर बाये की मॉडिक तय होगी।

यानी बिल दिना वह देहाउ म होते। राहूर म रहने पर— गर्मी की छुटियाँ खाल होते ही मुंजीजी बेनिजाबाय में मकान लेकर रहन अगे वे बड़े लड़क न कबीस बालेज में साइम सेकर इन्टर में नाम लिखा बिना था, और छोटे ने दया मन्द स्वस में सातवें बजे में— सवरे जाह इस्का कर भी सें मगर घाम की यह बर्ष उन्हें बिसकुल डिग्नूल मामूम हला और वह चौक से कुछ फन-फेपेरी पान-बान लेकर पोटली को छाते के एक सिर पर लटकाकर और छाता काठी की तरह कन्पे पर रखकर बासमंठी से (जहाँ तब तक बन-अन बकि टैलों का आवा-यमन शुरू हो गया रहना) राजा दरवाजा कबूतर बाजार होते हुए घर पहुँच बाते। चौक से बालमंडी में मुसडे ही एक यती दाहिने को छूटती है। यह गारि यत यती है। इसमें दाबिक होने ही बायीं तरछ सुँबनी साहु की पुठनी और मय हर तबाक की बुकान है जिस पर प्रसाइ जी अकसर दो-बार साहित्यिक मित्रों के साथ बैठे मिलते। मुंजीजी का तो वह रास्ता ही था कभी वह भी दम-याँच मिमट बैठ सैते पान क दो-बार बीर मुँह में दाकते मय सुजबूहार जाऊयनी तम्बाकू क दो-एक चुटकुला छोड़ते और अपनी राह लपते। दो-एक बार प्रमाइ

जी ने उनके इस ठेठ देहाती हुस्मिये पर आपत्ति भी की लेकिन मुंशीजी के पास उसका एक ही जबाब था खोर का एक ट्यूका

बेनियाबास आकर मुंशीजी का एक पुजगा मियम फिर शुरू हुआ रोख सबेरे बुमगा। लखनऊ में कुछ घम नहीं पाठा था महीं पार्क में ही घर था और फिर अब उम्र भी ठेकी से डल रही थी सबेरे बुने-पामे बरीर काम चमठा गडर मही आठा था। उबर से प्रसाद जी गहमरी थी और कभी-कभी बेडव जी आ चाटे और फिर चारा जन मप्टे नर बेनियाबास के चक्कर लगाठे। बेस-बिदेस साहित्य-समाज बुनिया भर की बार्ते होती दीच-बीच में मुंशीजी का ठहाका धी रो सी गड दूर से भी गूंजता हुआ सुनायी पड़ता।

प्रसाद जी संस्कृत की परम्परा के आदमी थे मुंशीजी फ़ारसी के। दोनों के बिल्लने का रंग बिलकुल अलग था सोबने-बिचारल के डंप में भी बड़ा अंतर था इपर की उबर जमानेबासों की भी कुछ कमी न थी ताहम दोनों की दोस्ती बरबर पाड़ी होती या रही थी।

३ अक्टूबर १९३२ के अपने पत्र में मुंशीजी ने बनारसीबास को अंग्रेजी में लिखा — आपको 'कंकाळ' अच्छा नहीं लगा। मुझे खेद है। मैं उदार साहित्यिक रुचि का आदमी हूँ और आलोचना-बुद्धि मुझमें बहुत कम है। 'कंकाळ' में मुझे अच्छा आनन्द मिला। और मैं जितनाब से भी क्याया उस आदमी का प्रशंसक हूँ। वह बहुत खुसे हुए, साफ़गो आदमी है।

१४ नवम्बर १९३२ के छठ में तुबाय उन्होंने धायद कुछ भुंझकाकर लिखा —

कंकाळ आपको अच्छा नहीं लगाता मुझे अफ़सोस है बात खरम हुई। प्रसाद जी बड़े प्यारे आदमी हैं (loveable chap) अब मुझे उनको पास से देखने का मौका मिला है तो मैं पाठा हूँ कि साल भर पहले मैं उनके बारे में जो कुछ सोचता था वह उसके बिलकुल उस्टे है। ब्रह्मप्रश्नियों एक-दूसरे के करीब आने से ही दूर हो सकती हैं।

हंस अब से दो-डाई साल पहले जब निकला था उस बरत दस साल के बाद एक नया जन-आन्दोलन छिड़ने की तैयारी थी। वह आन्दोलन इबर साल छः महीने से काफ़ी ठण्डा पड़ गया था लेकिन साल के शुरू में ही तमाम नेताओं की मिश्रकारी से हवा में फिर कुछ गर्मी आ गयी थी और लगाता था कि एक मये संघर्ष के लिए जमीन तैयार हो रही है।



मानुषी से छुट्टी पाकर घर या बैठने पर अब मुषी जी के पास समय भी था और धरमि भी। वैसे नहीं था ठी क्या। देखा जायगा। और मुंशीजी जाने के साथ एक साप्ताहिक निकालने की जाइ-नोइ में सम गये।

आये दिन अठारहों से अमातत मांगी जा रही थी। १५ अगस्त १९३२ को उगहोंने अनेत्र को लिखा —

हृष पर अमातत लगी। मैंने समझा था आइनेव के साथ अमातत भी समाप्त हो जायगी। पर नया आइनेव आ गया और उसी के साथ अमातत भी बहाल कर दी गयी।

अब मैंने गवर्नमेंट को एक स्टेटमेण्ट लिखकर भेजा है। अगर अमातत उठ गयी तो पत्रिका तुरन्त ही निरुद्ध जायगी। छप कर सिक्कर तैयार रखी है। अगर आज्ञा न हो तो समस्या टेढ़ी हो जायगी। मरे पास न रुपये हैं न प्रामेसरी नोट न सिक्कोटि। किसी सं कर्ब लेना नहीं चाहता। यह गुरु साह है बार पाँच ही थी जाते कुछ रुपये हाप जाते।

लेफिम बह नहीं होना है। तो भी तथा पत्र साप्ताहिक निकालने के उनके इरादे में कोई कमजोरी नहीं है। इसी बात में यह भी सूचना है —

“इस बीच मैंने जायरन को से किया है। जायरन के बाएह अंक निकसे लेकिन साहूक संख्या दो ही से आये न बढ़ी। विज्ञापन तो ब्याध जी ने बहुत किया लेकिन किसी बजह से पत्र न बढ़ा। बह अब बन्द करने जा रहे थे। मुझसे बोले यदि आप इसे निकालना चाहें तो निकालें। मैंने उसे से लिया।”

हृष में कई हज़ार का बाटा उठा चुका है। लेकिन साप्ताहिक के प्रकीर्णन को न रोक सका। कोशिश कर रहा हूँ कि सर्व-साधारण के अनुकूल पत्र हो। इसमें भी हज़ारों का बाटा ही होगा पर कर्ब क्या यहाँ तो जीवन ही एक सम्ना पाटा है।

इसकी कहते हैं सैवोटी पर फ़ग़ देखना। पास में पैसे नहीं है एक पर्चा हज़ारों का बाटा देने के बाद बन्द होने का रहा है और आप है कि न जाने किस बर-बूते पर तुरन्त-तुरन्त उसे से बैठते हैं।

आखिरकार २२ अगस्त को यागी बात के हृषे मर बाव जागरण निकल गया और इस नये रूप में पाठकों से उसका परिचय कपते हुए मुंशीजी ने अपने साथ अम्बाब र्न लिखा —

उसका जन्म अच्छे कुक में हुआ उसका कालन-पालन भी मुयोप्य हावा में हुआ। परन्तुबाके परत नये कि यह बालक होगहार है पर साहित्य के परिमित क्षेत्र में उसका विकास जैसा होना चाहिए, वैसे न हो सकता था।

हाथ-पाँव मारनेबाधा बाधक पाऊने में कैस रहता इसलिए उसने जन्मदाताओं को ऐसे अभिभावक की षंकरत पड़ी जो बरा निपटूर हाथों से उसकी गोधमाली कर दिया करे, जो ममतामरे मासत और मिथी की बगहू मूँके बने और सजी रोटियाँ खिलाये क्योंकि संसार पहले चाहे साइन्स-मर में पके बासकों को बड़ने का अवसर देता हो जब तो समय उनके अनुकूल नहीं रहा। आज संसार में बही बाधक बाधी से बाते हैं जिन्होंने बासपन में कड़ियाँ सेली हों बसके जाये हो मूँके सोये हों बाड़ों छिटुरे हों। गमक का पीसा घूप और बर्षा का सामना क्या करेगा। वह अदृश्य पर उगा हुआ पीसा ही है जो खेठ की बलती नू मास क तीबे तुपार और मासों की मूसलाबार बर्षा में बटा लड़ा रहता है, और फलता फूलता है। हमारे ऊपर इतललाब की निगाह पड़ी। हम कह नहीं सकते हम क्यों इस काम के लिए चुने गये। हम इस काम में कुछ बहुत अभ्यस्त नहीं हैं। अभी तक केवल एक चिड़िया पायी है पर उस भी कई बार सफ्ट में डाक चुके हैं। चिकारियों के दो निघाने उस पर लब चुके हैं। पहले निघाने से तो वह किसी तरह बचा। यह दूसरा निघाना उसे से मरता है या छोड़ता है कह नहीं सकते। हम चिकारियों की चिरी-बिगती कर रहे हैं, कि मीया इस बेचारे को भबकी और जाने दो तुम्हारे पैरों पड़ते हैं। जब जो कमी तुम्हारे बाग में जावे या तुम्हारा कुछ नुकसान करे तो जो चाहे करना।

पिता हमेशा बच्चे को अपन ही साथे में बाधन की कोसिस करता है।

आगरज के सामने मुसीबी यह वादर्य रखते हैं—

बासक को निर्भीक सत्यवादी परिधमी स्वस्व आचारवानु, बिचार घीस बनाने का प्रयत्न करेंगे। हमारी यही चेष्टा होगी कि वह किसी की सुधा मद न करे, लेकिन बिनय को हाथ से न जाने दे। वह कभी-कभी कड़वी बातें भी कहगा पर सेबाभाव से। उसमें आस्था और सदा अवदम होगी पर अंध-विश्वास नहीं। उसका ध्येय होगा सत्य की खोज। वह बितंडवासी नहीं सत्य का पुकारी होगा चाहे उसे सत्य को स्वीकार करने में कितना ही अपमान हो। वह अध्रिय सत्य कहन से कमी न चुकेगा। वह केवल दूसरों के बाप न बेडेगा बल्कि अपने दोषों को स्वीकार करेगा।

वह निर्भीक होमा पर दुस्माहसी नहीं। वह सत्यवादी होमा सत्य न की मर न टलेगा पर पलपाठ से अपना काम न बचायेगा। वह बुरों में बुरा बचानों में बचान और बासकों में बासक होमा। वह जिस दृढ़ता से ग्याप का पस केमा उसनी ही दृढ़ता से अग्याप का विरोध करेगा चाहे वह रामा की ओर से ही समाज की ओर से हो अबदा धर्म की ओर से। समाज का दुष्टी और

दुर्बल अंस उसे सदा अपनी बकाएँ करतें हुए पायगा। वह कोय स्यामबानी मग्मीर और गुण्ड न रहेगा। वह मनुष्य केवल आभा ही बिन्दा है जो कमी दिख जोलकर नहीं हंसता वह हंसन की बाँसे कहेगा पुर हंसिया और दूसरो की हंसियेगा।

छिः अपने ही ऊपर खुटकी केते हुए मुंघीमी अपनी प्रतिज्ञा इस प्रकार समान्त करते हैं—

हमारे पास न समलन है न अनुभव। और धन का तो हमस पुरानी बीर है। किसी ने हिन्दी पत्रकारों का परिचय करते हुए लिखा था—यह केवल एक इन्तम और एक रीम कापड लेकर समाचारपत्र निकाल बैठता है। यह व्यंग हमारे ऊपर बलरग आपू है, पर हम

राजनीति में आजकल कासा लपटा है बस हाँ-बैँच की लड़ाई चल रही है। सरकार अपनी मेरनीति से राष्ट्र के टुकड़े-टुकड़े कर देता बाहली है और राष्ट्र अपनी आत्मा और अपनी एवता की रक्षा में लगा है। इसा में आजकल एक ही बर्षा है—साम्प्रदायिक महाभिकार। और मुंघीमी को अपनी प्रतिज्ञा के प्रति सन्ने रहकर अपने ही सप्ताह कटु मायब करना पड़ा—

● इस समय हमें बड़ी दुरवधिता और बुद्धिमत्ता से काम लेना पड़ेगा। दुनिया की निपाहे हमारी तरफ लपी हुई है। यदि हमने महाभिकारो क लिए आपस में सड़ाई ठान ली तो मार्गे हम प्रत्यक्ष रूप से सरकार की इस बलीक का समर्पन करिये कि भारत में राष्ट्रीयता का भाव नहीं है। जब मुसलमानों को कुछ भिकार मिल जाते हैं तो हमे क्या तुरन्त यह विचार होता है कि हमारे धाब अन्धाय हुआ। कारण यही है कि हम मुंह से बाहे राष्ट्रीयता की दुगई से बिल में हम सभी सम्प्रदायवादी हैं और हर एक बात को सम्प्रदाय की आँखों से देखते हैं। क्या यह सत्य नहीं है कि जब कोई साम्प्रदायिक संघा ही जाता है तो हम तुरन्त यह जानने के लिए उत्पुक हो जाते हैं कि उस घने में कितने हिन्दू हठाहत हुए और कितने मुसलमान। अगर हिन्दुओं की संख्या अधिक होगी है तो हम कितने उत्तेजित हो जाते हैं। इसके विपरीत अगर मुसलमानों की संख्या अधिक होती है तो हम आराम की साँस लेते हैं।

यह हम नहीं कहते सरकार की घोषणा निरर्थक है। उसका साम्प्रदायिक आचार ही आपतिजनक है। उसमें अन्तर-ध्वंस करके हम उसका कम नहीं बरक सकते। हिन्दुओं और सिक्का को इस-याँच जयह और निक जाने से बहु कम आपतिजनक न रहेगा। उसका समरथायत्व कैसे मिटेगा? क्या हिन्दू अबका सिक्का आन्धोजन स? इससे तो परस्पर द्वेष की भाप और प्री भङ्कणी और

राष्ट्रमातृक भावनाएँ और भी प्रबल होंगी। इसका केवल एक ही उपाय है— साम्प्रदायिक मनोवृत्ति का शमन। अब आनेवाले वरसों में हमें इसी साम्प्रदायिकता से संघाम करना है •

धूत-अधूत का अभिघाप भी उसी से जुड़ा हुआ है। और उसी ने सरकार को मौजूदा दिया है कि वह दूसरी गोलमेज सभा में अधूतों को हिन्दुओं से अलग करने की योजना सामने लाये। गांधीजी ने उस समय जोपना की थी कि अगर यह चीज की गयी तो मैं अपने प्राणों की बाजी लगाकर उसका मुकाबला करूँगा।

मात्र १९ दिसम्बर १९३२ है और कस से गांधीजी यरवदा जेल में अपना आभरण अनघन धूर कर रहे हैं। घारा वेण पग्न गया है। मुथी भी की सम्पूर्ण संज्ञा भी अब वहीं केन्द्रित है। महान तप' शीर्षक से उन्होंने लिखा—

कस यरवदा जेल में वह महान तप आरम्भ होगा जिसकी कल्पना से ही रोमांच हो जाता है। भारत की तपोभूमि में इससे पहले भी बड़ी-बड़ी तपस्वार्थ की गयी है पर राष्ट्र के लिए प्राणों की आहुति देने का सफल महात्मा गांधी ही की कौटि है। एक समय बंबई में भी राष्ट्र की रक्षा के लिए प्राणों का बलिदान किया था। हम अपनी अकर्मता के कारण उसे पीरगिक कथा समझे बैठे थे पर आज तुमने उस प्राचीन मर्यादा को उस प्राचीन आदर्श को उस प्राचीन आत्मोत्कर्ष को पुनर्जीवित कर दिया।

फिर अगले चप्ताह लिखा—

उस महान आत्मा के अनघन व्रत ने उसकी तपस्या में केवल सात दिनों में यह दिखला दिया कि वास्तव में तपस्या कितनी असम्भवी होती है। उस महान आत्मा की तपस्या ने ब्रिटेन के महान राजनीतिज्ञों के हाथ तैयार की हुई उस सुपुङ्गु दीवार को जो हिन्दू और अधूतों को अलग करने के लिए बड़े बड़े महान कौटिल्य के धीमेष्ट से तैयार की गयी थी बिभ्वस्त कर दिया।

लेकिन सामाजिक बर्तियों की दीवार उससे कहीं ज्यादा मजबूत थी। अधूतों को मन्दिर-प्रवेश का अधिकार देने के लिए हिन्दू समाज तैयार न था। ऐसे लोगों को बंतावनी बेटे हुए मुथीजी ने लिखा था—

यह मुम प्रकाश का युग है। इसमें अब अंधकार नहीं रह सकता। अब बिबस होकर युग-धर्म के अनुसार ही चलना पड़ेगा। क्या कोई भी वर्णाश्रम अपने हृदय पर हाथ रखकर कह सकता है कि वास्तव में यह सृष्टाधूत उन्हें धर्म की दृष्टि से उचित प्रतीत होती है? नहीं कोई भी यह नहीं कह सकता। एक स्वार्थ ही इसका कारण है। पर माय रह, यह इस समय का स्वार्थ बर्ष-बो बर्ष जाहे उनकी छाती को ठण्डा भले ही कर दे, पर आज वह उनकी पुरानी

स पुरानी दृष्ट से दृढ़ इतिहास को भी उखाड़ फेंकेगा। वे स्वार्थ के जिस मुन्बर खिलाईने से बन्धों की तरह निकबाड़ कर रहे हैं वह असल में बयनामाइट हैं जो उनकी सात पुस्तों को ध्वस्त कर डालेगा।

यह सब हो लेकिन वीधार अपनी जगह पर बटक थी।

दो महीने बाद जब मायी जी ने इसी मन्दिर प्रवेश को लेकर पुनः अपना आमरण अनशन ठाना तो मुंशी जी न मिला —

पड़-लिले समाज में चाहे बर्म केवल डोंग रहे गया हो और मन्दिर प्रवेश को चाहे वे एक ध्वंस-सी बात समझते हों लेकिन जनता अभी तक अपने बर्म को और अपने देवताओं को प्राणों से चिपटाये हुए है। उत्तर भारत में तो बृह देवता ऐसे भी हैं जिनके पुरोहित हमारे हरिजन भाई ही हैं। जिस माँ में जले आइए, जमारों या भरो के पुरखे में आपको किसी भीम के बृह के नीचे दस-बीस मिट्टी के बड़े-बड़े हाथी सास रेंगे हुए एक जगह रहे हुए मिलेंगे। वहीं एक तिनूक भी मड़ा होमा एक सास पताका भी पड़े स बँबी होगी। यह देवी का स्थान है। इन बबूतरे का पुजारी कोई जमार, पासी या मर होगा। बर्बबाके हिनू स्त्री पुण्य बड़ी भडा से देवी के बबूतरे पर जाते हैं बहाँ बठाये बृह-बीप फूल-माका बड़ाते हैं। जब बर्बबाके हिनूओं को हरिजनों के इन देवताओं की उपासना करने और हरिजनों को अपना पुरोहित बनाने में धर्म नहीं आती तो हम नहीं समझते कि हरिजनों के हिनू मन्दिरों में जा जाने स कौन-सा बर्बर्म हो जायगा।

कैसी बात करते हैं मुंशीजी सब आप जैसे बिबर्मी नहीं हैं। और सो भी कागी में। बर्बाधिम स्वराज्य संघ की ओर से बाकायदा इनके सिक्काऊ आरोलन बक रहा है बाइसराय की सेवा में बेपुटेवन जा रहा है और मुंशीजी लड़े उनको लककार रहे हैं—

● मंगल के दिन सन्ध्या समय काठी की सर्वभरी सड़कों पर बह बुर्य देखने में आया जो हिनू जाति के लिए सज्जाजनक ही नहीं हास्यास्पद भी था। दो बार्ड सी संस्कृत पाठशाळाओं के छात्र हाथों में लाल धण्डे किये एक जुमूम के रूप में यह हाँक लगाते जले आ रहे थे — बसूजों को मन्दिरों में जाने रेंगा पाप है।

हाँक का पहला अंश एक आरामी के मुख से निकलता था और दूसरा अंश सैकड़ों कष्टों स कोरस के रूप में निकल रहा था लेकिन उन आवाजों में उत्साह न था मक्ति न थी अनुपम न था। ऐसा जान पड़ता था जैसे कोई बीज रोनी मृत्यु-क्षया पर पड़ा हुआ कपह रहा है। जुमूम के पीछे एक जोड़ी भी जिस पर कई बाबस्वति और मार्तण्ड फूलों के हारों से रुदे, विद्या के निर्बीज मार से बने

सर्वोत्तम भाव से बैठे हुए थे। बिद्या का अविमान उन्हें पत्नी पर पाँव न रखने देता था जैसे कोई सेनापति अपने सैनिकों को पहली पंक्ति में बढ़ा करके आप सबके पीछे निश्चिन्त बैठा हुआ हो। या यों कहिए कि ये महामुम्ताब उस बरात के दूधे थे जिन्हें अपने पाँव की गरिमा जमीन पर पाँव न रखने देती थी। इस नायक मीठे पर भी जब उनके विचार में हिन्दू धर्म पर चारों ओर से आक्रमण हो रहे हैं, वे अपनी महानता को नहीं भूल सकते। इन्हें महात्मा गाँधी को देखिए। साबरमती से अहिंसा की तरफ प्रत्याग कर रहे हैं। जाके आप हैं, पीछे उनमें सिपाही हैं। अपने उत्सर्ग से अपने सैनिकों में उत्सर्ग की शक्ति का संचार करते हुए चले जा रहे हैं। इन फिज़न-आरोही मार्तण्डों में एक पुरी के श्री १८ शंकराचार्य भी थे। इस निवृत्ति की उस प्रवृत्ति से मुक्तना कीजिए। वह संसार की सबसे महान् शक्ति के सामने न्याय के बल और आत्मा के विश्वास के साथ एक जाति के उद्धार के लिए ब्रह्मचर हो रही है और यह न्याय की पीठ से कुछ लकी आत्मा की आँसुओं पर पर्दा बाधे हुए, बादि के बलिष्ठ और पीड़ित संघ को ठोकें मार रही है। फिर क्यों न धर्म का संसार में ह्रास हो क्यों न स्वनाथे धर्म को अस्तीति का भ्रम समझे क्यों न मिरवे धामे धार्य और धम को कलकित करने वाले इन स्तम्भों का समाज से बहिष्कार कर दिया जाए।

हमारे पास अंग्रेजी में ज्ञान हुआ बाइसराय के नाम एक मेमोरियल वर्ण-यम धम का बाया है। उस पर बड़े-बड़े चर्कबुझामयियों और विद्यावाचस्पतियों के हस्ताक्षर हैं। बाइसराय से प्रेरित्य की मयी है कि वह हिन्दू मन्दिरों की अस्तीति से रक्षा करें। बाहू रे मार्तण्डो क्यों न हो किन्तु दूर की सुधी है। अब भी जमर बाइसराय की बुधमूरी का परधाना न मिले तो यह आप लोगों का दुर्भाग्य है। आपकी सेवा में दूसरे व्यवस्था लेने बाया करते थे। आपका प्रथम बड़े बड़े मसकों को हल कर दिया करता था और आज आप एक धर्म के विषय की जिये बाइसराय के पास कुलों की तरह दुम हिलाठ पीड़े हुए चले जा रहे हैं। वह आपकी बिद्या कहाँ गयी? आपने आठ करोड़ हिन्दुओं को मुसलमान बना दिया। यह छ करोड़ असूत भी आप ही के विद्या-बाध के बेचे हुए हैं क्या आप हिन्दू धर्म को संचार से मिटाकर ही हम लेंगे?

क्या मन्दिरों के पुजारियों और मठों के महता से हिन्दू जाति बनी हुई है? पूजा करनेवाले भी रहेंगे या पूजा करनेवाले ही मन्दिरों का म्वादी रहेंगे?

एक वह जातिवादी हैं जो दूसरों का अपने में मिलाकर पूनी नहीं समाती। आज एक जमर मुसलमान हा बाय सारा मुसलिम समाज उत्तम म्वागत करेगा लेकिन यह मेमोरियलबाध नाम जो हिन्दू जाति के रजक होन का बाधा करते

है, यह भी नहीं कह सकते कि कोई बाहर का आदमी उनके देवताओं के दर्शन कर सके। मछुत के पास तो भाप बेपङ्क से लेते हैं, मछुत कोई मन्दिर बनाये भाप दक-दक के साथ कार्यों मन्दिर में देवता की स्थापना करेंगे तर मास कार्यों—हाँ मछुत में उसे झुमा न हो—दक्षिणा लेवे इसम कोई पाप नहीं न हीना चाहिए, लेकिन मछुत मन्दिर में नहीं जा सकता इससे देवता अपवित्र हो जायेंगे। अगर भापके देवता ऐसे निर्मल हैं कि दूसरी व स्पर्श से ही अपवित्र हो जाते हैं तो उन्हें हुमाय दूर ही से नमस्कार है।

क्या जाता है कि मछुतों की आदतें गम्भी हैं वे रोब स्नान नहीं करते निरिय कर्म करते हैं क्या बिठने सछुत हैं वे रोब स्नान करते हैं, क्या कन्दीर और अम्पोडा के ब्राह्मण रोब नहाते हैं? हमने इसी कापी में ऐसे ब्राह्मणों को देखा है जो बाड़ों म महीने में एक बार स्नान करते हैं। फिर भी वे पवित्र हैं।

फिर साराब क्या ब्राह्मण नहीं पीते? इसी कापी में हजारों मसोपी ब्राह्मण-और यह भी तिलकवाटी—निकल जायेंगे फिर भी व ब्राह्मण हैं। ब्राह्मणों के बरों में क्यारियाँ हैं, फिर भी उनके ब्राह्मण्य में बाधा नहीं आती। किन्तु मछुत निरय स्नान करता ही कितना ही भाचारवान् ही यह मन्दिरों में नहीं जा सकता। ●

मुंशीजी को कुछ घम नहीं इसका कि लोग क्या कहेग कही यह जिसकुल अनेके तो नहीं पड़ जायेंगे। उससे क्या? हुमाय अन्तःकरण निर्मल ही, असल चीज इतनी ही है। बनी पिछले ही सन्ताह १४ नवम्बर १९३२ को तो मुंशीजी ने बनारसीघाट जी को बाइस देते हुए लिखा था—

मैं इस बात से इनकार नहीं करता कि साहित्यिकों में कुछ ऐसे लोग हैं जो आपको बदनाम करते हैं लेकिन किसके बदनाम करनेवाले नहीं हैं। मैं खुद निन्दकों से बिरु हुमा हूँ जो मुझ पर खोट करने का एक भीरा हाथ से नहीं जावे वे सकते। एक नगैएसे कोलों का है जिन्हें दूसरों की बर्षों में अत्रिज कीर्ति को मटियामेट करने में मजा आता है। अगर उससे क्या? हुमाय अन्तःकरण निर्मल ही, वही मसल चीज है। जब नीयत में दुब्रहा किया जाने लपठा है तब मामला संगीम हो जाता है। यह मैं किसी तरह बर्दाश नहीं कर सकता। ईसी दिम्पनी की कुटिकों का आपको बुरा न मानना चाहिए। अगर आप अपने को इतना तुनुकमिदाज बना लेंगे तो इससे आपके निन्दकों को और सह मिलेगी। मुसकयता हुआ बैहुर लेकर उनका सामना कीजिए।

स्वित्तप्रसता एक अपने बंध की।

किसी रिक्तबके ने मुंशीजी को एक बेदुरा-नी बिदुली लिखी है। मुंशीजी वैशिशक उसे छपा देते हैं—

छायव वो हफ्ते से क्याबा हो गय हपि मीने आपके पास एक प्रार्थनापत्र मेजा बा यह भासा कर कि आप एक दुखी हूबय के उन सच्चे उम्गारों पर सच्ची सहानुभूति प्रदर्शित करके दो-चार सूँव बाँसुनों की बहायेंगे। मगर सब ब्यर्ब। मुझे बास्वाबस्वा का भ्रम बा। खिला हमीरपुर में आप गाल्किन १९१६ में आये थे और मुझे इनाम में एक किताब दी थी। तब आप ऐसे ब्यासु और सहुबय थे पर उन दिनों तो आप केबळ मनपतराय सब-डिप्टी-इंस्पेक्टर थे और हरि ब्रता के बकबक से कुछ ही दिन पहले निकलकर आये थे। आपके रिमांड में उस समय बहु समय के बपेड़े — पिता का स्वर्गवास आदि — ठाड़े होने। मगर अब जमीन-बासमान का फर्क है। कहीं एक मामूली कर्मचारी कहीं उपन्यास सझाद! एक ही आशमी की दो मूर्ते राजा भोज और भोजबा लेली! एक बात याद कर मुझे डकर बोड़ा-सा खेद होता है, क्या हिन्दी साहित्य की उन्नति इसी प्रकार होगी? यदि कोई दुखिया उपन्यास-सझाद से बिलती करे तो उन्हें बूतब बुना लेना चाहिए कि उस यही बीड (प्रार्थी) पर मजर न पड़े रंमभूमि कामाकश्य आदि की मेहरबानी से जाबो रुपय सेङ्कर बर छिमे। अब युक्तुएँ सझाते है और बेसमकत होने का बाबा करते हैं। मैं आपको स्वार्थी पापाक-हूबय और नास्तिक क्यों न कहूँ आप जैसे हबारों प्रेमबन्ध बूड में मिस बने और मिस बायेंगे।

बस इतना हाथिया मुंधीजी ने उस पर जगाया —

मेरे इस मुकक मित्र को तबतउहमी हुई है। मैं न बसपती हूँ न हबार पती न सौपती। मैं केबळ एक मजहूर हूँ उसी तरह वीसा पहले कमी बा। जब धन ही नहीं तो अमिमान कहीं से हो। अमिमान के लिए कोई आबार तो हो। मुझे अपने मित्र से सच्ची सहानुभूति है और मेरे हाथ में कोई अस्तित्मार होता तो मैं सबसे पहले उन्हें किसी पब पर आरुड कर देता। लेकिन पीर मुब यदि इसाज किसका करें?

और जैसे उनकी बात की तसदीक के लिए सरम्बती प्रेस और बानरन से वो हबार की जमानत माँग सी ययी। पूरे चार महीने बन्ध रहने के बाद हंस न जमी-जमी फिर बर्षन दिये थे कि यह बोट पड़ी और ७ दिसम्बर १९१२ को मुधीजी ने वीनेत्र को सिखा —

बहुत परेधान हुआ धाना हुआ लयनऊ पहुँचा बही बीऊ सेन्टरी (ममफोर्ड) से निकलकर कहानी का आसय समझाया। और भी अपनी लायनी के प्रमाण दिये। अब आया है जमानत संभूज हो जायगी। बर-बरा सी बात में बर्षन पर छुरी चल जाती है।



नया साक तीसरी गोलमेज समा पर बड़े बुरुबुसे अन्दाज की छीटेबाजी से शुरू हुआ —

● गोलमेज की महकिल का तीसरा दौर भी लयम हो गया लेकिन साकी ने छराब में कुछ ऐसी कारस्थानी की कि न कुछ रज जमा न शुरूर गठा। धायव ऐसे ही सीके के लिए स्वयंवाची मुकर ने यह घेर कठा बा —

बजाय में दिया पानी का एक गिमास मुसे  
समस्त सिप्या मेरे साकी ने बदहवास मुसे।

साकी ने ठीमारियाँ तो ऐसी-ऐसी की की कि पीनेवाले धायव समझे थे सौम्येन न सही जानी बाकर तो कहीं नहीं गया। बड़े-बड़े गुम सँगबाये थे जिनकी सुचबू से विमाग वाडा हो जाता बा। साऊ-मुचरी बोटलों में उनकी छाती देखकर पीनेवालों के मुँह में पानी भर-भर जाता बा। पीनाने के द्वार पर सीकणों की भीड सबी हुई थी। लोप बेकरार होकर मिघरें कर रहे थे — सिस्साह हम नी अन्दर जाने दो। बरमिबाज साकी बड़ी मुजकिलों से दरवाजा खोलता बा। पहला दौर बला। लोग मुँह फीका करके एक-दूसरे का मुँह देखने लगे मानो कह रहे हों — पार, यह तो कुछ समस्त में नहीं आती कुछ फीकी-फीकी-सी है। साकी उनका सब देखकर मुस्कराया और बोला — गुम लोप ठर्रा पीनेवाले ही इसका मजा क्या जानो। इसका मुत्त इसके फीकेपन में ही है। फिर बूखत दौर शुरू हुआ। अबकी दो-एक मीकणों ने साऊ-साऊ कह दिया — हकखत साकी यह तो कुछ है नहीं फीकी फीकी-सी लगती है। साकी ने सिइका नहीं खोरियाँ नहीं बरली सपुमाब से मुसकराकर बोला — इसके फीकेपन पर न जानो यह जो भीड है जो अपना सानी नहीं रखती। तीसरा दौर शुरू हुआ बिलमुक्त पानी। पहले दौरों दौरों में कुछ यर्मों कुछ ठेजी कुछ ठसठी बी इस दौर में तो सिखाबिय पानी। पीनेवाले ईरान होकर कमी बोटक की ओर देखते हैं कमी गुम की ओर, कमी साकी की ओर और कमी एक-दूसरे के मुँह की ओर। अगर यह पानी

ही पिछाना था तो यह महशुस सजाने की इस बोटक, कुम सुराही और प्यासे की क्या जरूरत थी। मगर पीनेवालों का गुरुर गठे भा न पठे यह तो कीर्ई कह ही नहीं सकता कि महशुस नहीं बनी और नहीं चले। छाछी के दाम बढ़े हो गये। ●

अकिन् इतने से भी नहीं मर तो बीस रोब बाह मुंछीजी ने फिर उसका मसिया पड़ा —

● गोममेव समा ने अपन तीनों पन भोगकर जीवनकीसा समाप्त कर दी। मारत को उससे पहले भी कोई आशा न थी लेकिन वह इस हर तक बंध्या होती इसका हमें खयाल न था। हम समस रहे थे पहाड़ बोसा जा रहा है तो कम से कम बुहिया तो निकसेगी ही। किठना तुम-उपक किया गया। सर साइमन बाये। महीनों उसकी हलचल रही। फिर मौकमेवों का ताता बंधा। राब-महपजे मैं-तू, ऐर-नीर-नत्पूरीरा सब जमा हुए और तीन घाल की खुदाई के बाव निकसा क्या कि कुछ नहीं। बुहिया भी निकल जाती तो कुछ तमाशा तो होता देखते कैसे शीकटी है कैसे उछलती है। लेकिन कुछ भी न हुआ। फेडरे दाम का हाथी जहाँ था वहीं बढ़ा झूम रहा है बस्कि कई इवम पीछे हट गया। बाइसराय के अस्त्रियार ज्यों के त्यों क्रीज का मामला ज्यों का त्यों माल का बिपम ज्यों का त्यों। हाँ पहाड़ सोरने से जरक बबसम निकल आयी। और उस साम्प्रदायिकता के खंदक में साप देष डूब गया। ●

यहाँ तक कि नगर का स्वराज्य भी जाता रहा। स्वय कारी की म्मुनिधि पैकिटी मुजल्ल कर दी गयी।

यह बीज काशी का किठना भयंकर अपमान है, इस स्वराज्य के युग में नागरिकता की कैसी छीछासेवर है, यह अभी काशीवासी नहीं समस रहे हैं। मुंछीजी लोगों को साबधान करते हैं — जाग नगरिया बम है जाया — और नगर-स्वराज्य की प्राचरता के संघर्ष में जी-जान से कद पड़ते हैं।

उबर मार्च के जर्मन चुनाव में हिटलर विजयी हुआ। हिटलर कौन है क्या है उसकी जीत का क्या मतलब है यह मुंछीजी से किया न था। अन्त तक वह उम्मीद खमाये रहे कि हिटलर न जीतेगा। पर वह जीत गया। मुंछीजी को भक्का लया। लेकिन ऐसे मौकों पर अक्सर उनकी व्यंग्य-सरस्वती काम उठनी है। हिटलर की नीति को बाइसराय की बढ़ती हुई तानाशाही से मिजाकर उन्होंने अपना व्यंग्य का कोड़ा जमाया —

● प्रबालगवाव बसपत्र हो गया। १५ वर्ष के बाद जब माधुम हुआ कि

यह बचनबारी बीज नहीं। हमने इसे बटा बनाया इन्हीं ने घटा बताया अब जमनी ने भी बटा बटा दिया। और आखिर में भारतवर्ष ने भी इसे बना बटा दिया। समय में मही माता बाइसराय के अचिन्तार वृद्ध जाने पर इस सिरे से उनारे तक हाथ-हाथ क्यों हो रही है। कोरू कहता है यह मुलामी का पट्टा है कोरू भारत है भारत में अंग्रेजी राज्य बनत तक उसे खुल की योजना है कोरू हांक लगाता है यह भारत का अपमान है। हम समझते हैं स्वेतपत्र की रचना में डक्टर बिबि का हाथ है। आखिर डिप्टेटरनिय को एक न एक दिन जाना ही है जब उसे टुकड़मा ही बायमा। हमारे विकारदर्शी देवता तो एक ही स्याने। उन्होंने परिषद के बंगों में जननक को दुकण दिया तो हित्युलाम में भी एक न एक दिन साबा व्यर्ष भारत में खुल-पखर क्यों हो क्यों हितकर और मुनाकिनी और स्टा किन वीरा हों। पहले ही से न डिप्टेटर बना दो। बय हमारे देवता अंग्रेज राजगी निजा के हृदय में अपने देव-बाल से घुस गये और यह व्यवस्था बनना ली। अब यही समझ लो कि बीबीदार से लेकर बाइसराय तक हमारे डिप्टेटर हैं। इनमें रोना-पीटना काहे का। हम तो कहत हैं यह कावसिल और एंग्लमी सब व्यर्ष प्यर्ष ही नहीं बिनागारी हैं। हजारों आदमी वहाँ सब काम-बधा छोडकर बिस्लाते हैं। क्या प्रपरा! सब लोड दो बाइसराय को डिप्टेटर बना दो। तब कम से कम रुपये तो बचये किनातों का बीस का हलका होमा टैक्स तो कम हो जायगा। कुछ न होमा तो इन हाथ-हाथ से तो छुट्टी मिलेगी। जमी जा मेम्बर और मिनिस्टर बने मुँहों पर ताब दे रहे हैं और बुनिया का दिक्ता रह है कि मातो बह रोच का उदार किये शक रहे हैं तब मन्त्र से नोन-लेख बचये मा कीडे पत्रा मने। कोशल बीड़ों को बीसकर लिखाने का व्यर्ष तो जनता के सिर न पड़ेगा। मुफ्त की हाथ हाथ और बाय बाय। हम तो अपना डिप्टेटर बाइसराय चाहते हैं और उसी की अय मनाते हैं! ●

पुत के पाँच पालने में हितकर ने आते ही यद्दियों पर बाबा बोल दिया। मुजीबी ने तलका उधकी खबर सेते हुए कहा—

मुरोपियन संस्कृति की तापीयें मुनते-मुनते हमारे कान पक गये। हम एशिया वाले तो मूख हैं, बर्बर हैं, असम्य हैं, लेकिन जब हम उन सम्य बर्षों की पगुना देबते हैं तो भी में भाता है कि यह उपायियाँ मूद के साथ क्यों न उन्हें लीज दी जायें। जमनी में नाबी रक ने आते ही आते यद्दियों पर बाबा बोल दिया है। यद्दियों की हुकानें लूटी जा रही हैं यद्दियों की जायदादें जम्ब की जा रही हैं, यद्दी विज्ञानों और पत्राधिकारियों का अपमान किया जा रहा है। मार-पीट, खुल-पखर होता शुरू हो गया है और यद्दियों को अर्बनी से भापने भी मही दिया-

जाता। चारों ओर मानाबन्दी हो गयी है। वह अपने प्राणों की रक्षा नहीं कर सकते। यहूदियों ने वहाँ सफ़ून्त अस्तित्वा कर ली है। कई पीढ़ियों से वहाँ रहते आये हैं। जर्मनी की जो कुछ उन्नति है उसमें उन्होंने कुछ कम भाग नहीं लिया है लेकिन अब जर्मनी में उनका किए स्थान नहीं है। प्रोफेसर आइंस्टाइन जैसे विद्वानों को केवल यहूदी होने के कारण बेश से बहिष्कृत कर दिया गया और उनकी सम्पत्ति छीन ली गयी

सन् २९ की भयानक संसारभ्रामी मन्दी ने सारी महाजनी दुनिया की बूँदें हिंसा दी हैं। उनमें आपस में प्राणघाती भाषिक संघर्ष छिड़ा हुआ है। महाजनी व्यवस्था के सिधे संकट का समय उपस्थित है। प्रजातन्त्र का मुखांटा उतार फेंको। आ जाओ अपने सिधे आत्ममक रूप में। बरूरी है। अस्तित्व-रक्षा के लिए बरूरी है। वही इस समय हो रहा है। आपान का धीनिकबाह इटली का प्रप्रिधम जर्मनी का माजीबाव इंग्लैण्ड की कठोरतर साम्राज्यबादी नीतियाँ — सब का एक ही संकेत है। अपनी व्यवस्था के संकट को टाकने क लिए सब हाथ-पैर फैला-येंगे। बिनके पास पहुँचे से बड़ा साम्राज्य है वह उसे किसी तरह अपने हाथ में लिखकने न बैसे और भी मजबूती से बढ़कर बैठ जायेंगे और बिनके पास नहीं है वह साम्राज्य-बिस्तार का आयोजन करेगे। हिटलर ने कह दिया है कि उस रहने को और जगह चाहिए। आपान ने चीन पर बाबा बोल दिया है। दुनिया क घाति खतरे में है एक मज महामारुत की तैयारी है। सींग भाङ्ग नेसन्स वाली राष्ट्र संघ का असक काम इमी शामिल की रखा करता है। लेकिन वह सरस्य राष्ट्रों क आपसी जगड़े के कारण दिन-ब-दिन नपुंसक होता जा रहा है।

लेकिन उसकी इन नपुंसकता का कारण महाजनी देशों के आपसी जगड़े ही नहीं हैं। उससे भी बड़ा कारण महाजनी दुनिया और समाजबादी रस का परस्पर संघर्ष है।

और दुनिया तेजी से आत्मघात की ओर बढ़ती रहती है। सोचने-बिचारनेवाले चिन्तित हैं और इधर साक-बेङ्क सास से योरप में एक सीज जर्नेस इम्पीरिय छिधम भी काम कर रही है जिसके पीछे रोमें रोलाँ और ज़ारी बारबुस जैसे लोग हैं। उसका एक मुखपत्र भी निकलता है, इसी नाम का जो पता नहीं कहाँ से मुशीभी के पास भी जाता है।

२८ नवंबर १९३२ को एक टिप्पणी में उन्होंने लिखा था —

सोवियट रस के पंचमाका कार्यक्रम का फल आभातीत हो रहा है। व्यावसायिक उन्नति की यह रफतार संसार के इतिहास में बिस्मयजनक है। जहाँ जनता पर जनता के हित के लिए शासन किया जाता है वहाँ ऐसी ही सफलता प्राप्त

छोड़ने को जी म चाहता था। अंत में जब मैंने जोर देकर कहा कि किसी से इस काम का बिक्रम करना मेरे पास किर्यादियों का मरना लग जायगा ता मामा मैंने स्वीकार कर लिया कि मैंने सिप्रारिया की — और जोय स की। ●

एसी ही नय हग की नयी कथावस्तु और नये गिस्त की कहानियां मुगीजी ने कई लिखी अिनम उनकी पहले की कहानिया जमा बना और मखबूती से बुना हुआ कथा का बाल नहीं है बस एक कोई लन्ही-सी बात है कोई हल्का-सा नुक्ता कोई मोही-सी मन-स्विति किसी चीज को देखने का अपना एक उग सौत्य की सत्य की कोई उड़ती-सी मलक जिसे कथातक की बहुत बिन्दा क्रिये और मोही बातचीत के अंदाज म कह दिया गया है। मुगीजी के लिए यह कोई नयी और अनहोनी बात नहीं है पहले भी उन्होंने ऐसी कहानियां लिखी हैं, पर माबताआ म एक नयी प्रीकृता जरूर आ गयी है कि जैसे यथाचं का रय और पहच हो गया हो ईट और पक गयी हो।

‘दूध का दाम’ जो तो बड़ी छूट-भूट अंध-नीच की कहानी है लकिन अब पुस्तक की अपह दिक का मसोम देनेवाले और देनवाले एक दर्द मे ल ली है मदिर-जैसी कहानी म जो आजाग की एक पीछ पी वह यहाँ दर्द की एक मीड़ बन गयी है। एक छोटी बगी मां अपने दूधपीते बच्चे को मुखा रखकर एक बाबू साहब के बच्चे को जिसकी मां को दूध नहीं उतरा दूध पिसाने पर लौकर रती आयी है। साय मर यह सिधमिला बकटा है, फिन समान क देवतापण आपत्ति करते हैं और मयिन इस काम से छुड़ा दी जाती है। आने बलकर ऐसा कुछ संयोग होता है कि यह बयिन का बच्चा मगल बनाक हो जाता है — बाप ज्येय का गिकार होता है और मां को परलाछा साड करके समय साय काट घावा है। अब मंगल उन्हीं बाबू साहब के यहाँ रहता है और उनक दुकड़ों पर पकता है।

● मकाल क सामने एक नीम का पेड़ था। इसी के नीचे मगल का डेय था। एक छटा-सा टाट का दुकड़ा दो मिट्टी क सकोरे और एक पोटी ज़ा सुरेय बाबू की उठारल थी। जाड़ा गर्मी बरसात हरेक मौसम म वह जयह एक-नी भायमदेह १ और भाय्य का बनी मंगल मुलसती हुई लू गलत हुए जाड़े और मूसलाधार बर्षा २ भी जिन्दा और पहले स कहीं स्वल्ब था। बस जसका कोई अपना या तो गाँव का एक कुत्ता दोनों एक ही साना साउं एक ही टाट पर याड ठबाना ३ भी दोनों की एक-नी थी और दोनों एक हुमने के स्वभाव को जान गये थे मयल और टामी में गहरी छलती थी। मंगल कहता — टामी माई टामी बय और खिचकर सोओ। बाबिर मैं कहीं सिन्दू? साय टाट तो हुमने घेर लिया।

टामी कूँ क करता दुम हिलाता और सिंसक जाने के बरसे और ऊपर चढ़ जाता और मंगल का मूँह चाटने लगता ।

शाम को वह एक बार रोख अपना घर देखने और थोड़ी देर रोने जाता एक दिन कई रुड़के खेल रहे थे । मंगल भी पहुँचकर घूर खड़ा हो गया क्यों रे मंगल खेसेमा ?

मंगल बोला — ता मैया कही मासिक देख लें तो मेरी चमड़ी उभेड़ बी जाय । तुम्हें क्या तुम तो भ्रम हो जामोये ।

सुरेश ने कहा — तो यहाँ कौन आटा है देखने दे ? बस हम लोग सवार सवार खेलेंगे तू थोड़ा बनेगा हम सोच तेरे ऊपर सवारी करके दीड़ार्ये ।

मंगल ने संका की — मैं बराबर थोड़ा ही रहूँगा कि सवारी भी करूँगा ? ● मंगल के मूँह से इस समय इतिहास बोल रहा है बसिष्ठ अष्टों का नया वृष्ट स्वर, बहुत दिन चढ़ी गाँठ ली उनके ऊपर ऊँची जातबालों ने ।

● यह प्रश्न टेढ़ा था । किसी ने इस पर विचार न किया था । सुरेश ने एक क्षण विचार करके कहा — तुम्हें कौन अपनी पीठ पर बिठावेगा सोच ? बाकिर तू मंगी है कि नहीं ?

मंगल भी रुड़ा हो गया । बोला — मैं कब कहता हूँ कि मैं मंगी नहीं हूँ लेकिन तुम्हें मेरी ही माँ ने अपना बूब पिकाकर पाला है । अब तक मुझे भी सवारी करने को न मिली मैं थोड़ा न बनूँगा । तुम लोग बड़ बड़ हो । आप तो मझे से सवारी कराग और मैं थोड़ा ही बना रहूँगा । ●

अधिकारों के इन बुनियाती सवाक पर झगड़ा ही जाता है और होठे-हवासे नीबल यहाँ तक पहुँचती है कि सुरेश बाबू 'छोटी साइल के इंसन' की तरह मोंगू बनाने लगते हैं ।

मंगल को बुरी तरह फटकार पड़ती है और वह ममहित होकर संकल्प करता है कि मैं अब इस घर में नहीं रहूँगा इस घर का खाना नहीं खाऊँगा । लेकिन मूल की मार बिकट होती है और वह फिर हारकर बूटी पतल चाने पहुँचता है ।

अब बाकिरी वृष्य —

● उसने पतल को ऊपर उठाकर मंगल के फँसे हुए हाथों में डाल दिया । मंगल ने उसकी आँर ऐसी आँकों से देखा जिनमें दीप्त कृतज्ञता मरी हुई थी ।

टामी भी अंबर में निरक थाया था । दोनों वहीं नीम के नीचे पतल में खाने सब ।

मंगल ने एक हाथ से टामी का सिर सहलाकर कहा — देखा देट की भाग ऐसी होती है ! यह कात की मारी हुई रोटियाँ भी न मिलती तो क्या करते ?

टामी ने दुम हिला दी ।  
 'सुरेस का बम्मा' ने पाता था ।  
 टामी ने फिर दुम हिलायी ।  
 'सोम बहते हैं दूध का दाम कोई नहीं चुका सकता और मुझे दूध का यह दाम  
 मिल रहा है ।  
 टामी न फिर दुम हिलायी । ●

हमारा समाज बर्बरता की सीमा तक कटोर है उस स्त्री के प्रति जिनका दूसरे  
 किसी पुरुष से संबंध हो जाता है । 'बालक' इस रक्तचयु बातावरण में एक नयी  
 उदारता एक नयी नोमलता एक नयी संवेदना की मूर्ति करता है ।  
 एक मीमा-बच्चा बाह्य गणु अच्छी तरह और लोकतर सब कुछ जान  
 समझकर विवाह आश्रम से निकामी हुई एक बचल 'दुलता' स्त्री से विवाह  
 करता है ।

आगिर एक दिन वह औरत गणु के घर से भी भाग जाती है । मगर गणु के  
 बहरे पर एक गिरफ्त नहीं आती । उसके बिल म रली भर मील नहीं है । और वह  
 उसकी तलाश में दर-दर की खाक छानने निरतल जाता है ।

भायने की बजह पीछे खुलती है । उसके बच्चा होनेवाला है और वह लाज के  
 सारे भाय जाती है क्योंकि वह बच्चा गणु का नहीं पादी के पहले का है ।

मगर गणु को उसे भापम अपने आलिंगन में ले लेने में कोई बाधा नहीं होती  
 और इसके लिए वह जो मुक्ति देता है वह तो स्त्री-पुरुष के संबंध की नैतिकता का  
 एक नया परतल एक नया आश्रम है —

मैंने तुमसे इसलिए विवाह नहीं किया कि तुम बेबी हो, बल्कि इसलिए कि मैं  
 तुम्हें चाहता था और नोचता था कि तुम भी मुझ चाहती हो । यह बच्चा मेरा बच्चा  
 है । मेरा अपना बच्चा है । मैंने एक बीया हुआ लेत लिया तो क्या उसकी धमक  
 को इसलिए छोड़ दूंगा कि उस किसी दूसरे के बाना था ? और बहानी कहनेवाले  
 की भाँसे न जाने क्यों भीय जाती हैं

नया विवाह' लामा इंसामल के नय विवाह की कहानी है । अनेक सलाहजी  
 ने अपनी पहली पत्नी उनक सत बच्चों की माँ को अपनी निन्दुर उपेक्षा से मारकर  
 एक बबान लड़की से जा उसकी बेटी हो सकती थी अपना नया विवाह किया है ।  
 उन्हें अपनी मुर्दा रगों म एक नयी सतमताहट, एक नयी बरपरी की बात है । लकिन  
 उन बबान लड़की के बिल से भी कोई चाह कोई उर्मय हो सकती है ।

लिए एक बंद किताब है और हमारा पुस्तक-मासिक पुस्तक-प्रधान समाज इसी में अपनी चरित्त समझता है कि वह किताब बंद रही भाये ।

नयी पत्नी के आ जाने से 'जीवन के उपभोग की जो सक्रिय दिन-दिन क्षीण होती जाती थी अब वह छीटे पाकर सजीव हो गयी थी सूखा पेड़ हरा हो गया था उसमें नयी-नयी कोंपलें फूटने लगी थीं । साक्षात् की बूझी जबानी जबानों की जबानी से भी प्रकाश हो गयी थी उसी तरह जैसे बिजली का प्रकाश चन्द्रमा के प्रकाश से वह अपने को किसी गबरू जबान से भी भर बटकर नहीं समझते और बहुत बमर्श से कहते हैं, 'जबानी का उन्न से उतना ही संबंध है जितना धर्म का आचार से स्वयं का ईमानदारी से कर्म का शृंगार से

लेकिन उनकी नबेसी दीखी ऐसा नहीं सोचती उसका क्षमा है कि जबानी का संबंध उन्न से होता है । वह किसी तरह उनकी सोझकत में खुश नहीं हो पाती उसका बिजबुसा-बुसा-सा रूपा है । साक्षात् की तरह-तरह के स्वर्ग भगते हैं तरह तरह की सीगारों काते हैं लेकिन उसके दिम की कमी नहीं छिम्ती ।

वह नकी छिम्ती है बर के जबान रघोइये जुगल की सगत में एसी कि ही । जबान खुन जबान खुन को पुकारता है ।

पातिघत हवा में नहीं रह सकता । उमको भी मिट्टी चाहिए, पानी चाहिए । बिन्दगी अपना मोल बुकावे बिना नहीं रहती । उसको मुञ्जाभोगे तो तुम्हारा मावर्ष पुब झूठा हो जायगा खोखला । रखे र्हो अपन खोखले मावर्ष चाटी उन्हें सहव लगाकर ।

और एक बिल आता है जब कुपल के मुंह से अपनी सुन्दरता का बखान सुनकर साक्षात् की नबेसी क बदन में झुरझुरी बीड़ जाती है ! और उनमें खरियों के हस्ते-से शीमे आवरण में लुमी-लुमी बावें होने लगती हैं जो अपने इसी अर्ध-मन्धीर डकेपन के कागज और भी लुमी मालूम होती हैं ।

जुगल और भी आगे बढ़कर साक्षात् की छिए कहता है — आपके साथ चम्पे हैं तो आपके बाप-से सगते हैं ।

● तुम बड़े मूहपट हो । खबरदार, जबान सम्हालकर बावें किया करो । किन्तु अप्रसन्नता का यह शीमा आवरण उसके मनोरहस्य का न छिपा सता । जुगल ने फिर उसी निर्भीकता से कहा — मरा मूंह कोई बंध कर ल महीं तो सभी महीं कहते हैं । मेरा ब्याह कोई पचाम माठ की बुझिया से कर वे तो मैं पर छोड़कर जाग जाऊँ । या तो खुब जहर खा लूँ या उसे जहर देकर मार डारूँ । फीनी ही ता होगी ।

आया उस इजिम खोब को कायम न रह सकी । जुगल ने उसकी हृदयबीणा



के तारों पर मित्रराम की ऐसी चोट मारी थी कि उसके बहुत जल कर्म पर भी मन की धाबा बाहर निकल आयी। उसने कहा — माम्प भी ता कार् भीड़ है।

— एसा माम्प आम माइ में।

— तुम्हारा ब्याह बिभी बुझिया से ही करेयी देख सता।

— तो मैं भी उहर ता मूंगा देख लीबिएया।

— क्यों, बुझिया तुम्हें अबान हरी से ज्यादा प्यार करेगी ज्यादा सेवा करेगी। तुम्हें हीब राखे पर रखगी।

— यह सब मो का काम है। बीबी बिम काम के लिए है उसी काम के लिए है।

— माखिर बीबी किस काम के लिए है ?

मोटर की धाबाब आयी। न जाने कैम आगा के सिर का बीचल डिमककर कंसे पर आ गया। उसन अन्नी से बीचल खीचकर सिर पर कर लिया और मह कट्टी हुई अर्धने कमरे की थोर सपटो कि लासा भोजन करके बस जाये ठब मामा।

कहानी का पर्ना मही फिर आता है। बाहिए भी। मगर ताज्जुब है कि मुजाजी का इकलम नहीं अठका क्या नहीं ? कैम लिख मक वह ऐसी उच्छ्रुतक कहानी

ममी तो बहरहास जीवन का सबम बड़ा सत्य यह है कि सब यही निबाह मही हो रहा है, सबई पावर आता ही हागा।

तो सिख क्यों नहीं देने सबनानी को बेचारा मरा जा रहा है बिन्नी लिख लिखकर, तार दन्नेकर

हर बार मुजाजी इसलम उठते हैं मगर —

मीर २१ मई १९३४ को उम्हने 'जागरण' को मुकामत हुए मीर का पंर पड़ा —

मक तो आठे हैं मैकने से मीर,

फिर मिलेगे मगर लुवा काया।

ममी 'जागरण' की समाप्ति को लेकर मुजाजी की सटपट बिनी-गकर ब्याम से बस ही रही थी कि सबनानी न दा रोख बाद २३ मई की लिखा —

मेरी बुष्टि से यह मुआमला बेहद जकटी है क्योंकि मीर मी कुछ कायो से बातचीत बक रही है। बहरसक मेरी बहुत स्वाहिए है कि धाप हमारे यहाँ आयें। कहानियों की संख्या से डरने की जरूरत मही है क्योंकि मैं आपस उठनी ही

सिध् एक बंद किताब है और हमारा पुस्तक-शासित पुस्तक-प्रमाण समाज इसी में अपनी औरियत समझता है कि वह किताब बंद रही आय ।

नयी पत्नी के आ जाने से 'जीवन के उपयोग की जो शक्ति दिन-दिन क्षीण होती जाती थी अब वह छीटे पाकर सजीव हो गयी थी सूखा पेड़ हरा हो गया था उसमें नयी-नयी कॉपलें फूलने लगी थी । काफ़ाजी की बूझी अबानी अबानों की अबानी से भी प्रकट हो गयी थी उसी तरह जैसे बिजली का प्रकाश बम्बरा के प्रकाश से वह अपने को किसी प्रकार अबान से जो मर बटकर नहीं समझत और बहुत बम्बरा से कहते हैं 'अबानी का उम्र से उतना ही संबंध है जितना धर्म का आचार से अपने का इमामदारी से रूम का शृंगार से

लेकिन उनकी सबसे बड़ी बीबी ऐसा नहीं सोचती उसका जयाल है कि अबानी का संबंध उम्र से होता है । वह किसी तरह उनकी सोहबत में खुश नहीं हो पाती उसका जिस बुझा-बुझा-सा रस्ता है । काफ़ाजी तरह-तरह के स्वांग मरते हैं, तरह-तरह की सीणतें मारते हैं लेकिन उसके दिर की कमी नहीं जितनी ।

वह बनी जितनी है घर के अबान रसोइये जुगल की छत में एसी कि ही । अबान जून अबान जून को पुकारता है ।

पातिप्रत हवा में नहीं रह सकता । उसको भी मिट्टी चाहिए, पानी चाहिए । बिन्दुमी अपना मोल बुकामे बिना नहीं रखती । उसको झुटकाभोगे तो तुम्हारा आर्षा खुद झूठा हो जायगा कासका । रखते रहो अपने खोलले आर्षा पाटो उन्हें महद कमाकर ।

और एक दिन आता है जब जुगल के मुँह से अपनी सुन्दरता का बखान सुनकर काफ़ाजी की सबसे के बदन में झुंझुरी बीड़ जाती है ! और उसमें संकेतों के हुस्के-स होने आबरण में लुली-लुली बातें होने लगती हैं जो अपने इसी अर्थ-गम्भीर डिकेपन के कारण और भी पूर्ण मामूम होती हैं ।

जुगल और भी आगे बढ़कर साफ़ाजी के लिए कहता है — आपके साथ पसल है वा आपके बाप-स समत हैं ।

● तुम बड़े मुँहफ़्ट हो । ठहरदार, अबान सम्राजकर बातें किया करो । बिन्दु अप्रसभता का यह शीना आबरण उसके मनोरहस्य को न छिपा सका । जुगल ने फिर उसी निर्भीकता से कहा — मेरा मुँह कोई बंद कर ल महीं ता सभी महीं कहते हैं । मेरा ब्याह कोर् पचाम साल की बुद्धिया से कर वे तो मैं बर छोड़कर भाग जाऊँ । या तो खुद बहर ता मूं या उस बहर देबर मार डालूं । परांगी ही ता होगी ।

जाना उस इतिम शोध को कायम न रख मकी । जुगल ने उसकी हृदयबीणा

### इसम का सिपाही

के तारों पर मित्रराव की एंगी चाट मारी थी कि उसके बहुत जल्य करन पर भी मन की ब्याप बाहुर निकल आयी। उसने कहा — भाव्य भी तो कोई बीड़ है।

— ऐसा भाव्य जाय माइ मे।

— तुम्हारा ब्याह किसी बुद्धिया से ही बरुंगी देत सेमा।

— तो मे भी बहुर या संगा देत भीजिएया।

— क्या बुद्धिया तुम्हे जवान हवी से ब्यापा प्यार करेगी ज्यादा सेबा करेगी। तुम्हे चीपे रास्ते पर ररामी।

— यह सब मां का काम है। बीनी जिन काम के लिए है, उही काम के लिए है।

— बापिर बीनी कित्त काम के लिए है ?

मोटर की आवाज आयी। न जाने कैय आगा के सिर का भीषस प्रिसककर कंधे पर आ गया। उसने जल्दी स भीषस खीचकर सिर पर कर लिया और यह कट्टी हुई अपन कमरे की ओर सपनी कि सामा मोजम करके चले जायें तय मागा। ● बहाली का परां मही गिर जाता है। बाहिए भी। मगर ताज्मुब है कि मुर्चाजी का इसम कही छिटका क्या नहीं ? कैम सिर सक बहु ऐसी उखट्यास कहानी

अनी ता बहुरहास जीवन का सबस बड़ा सत्य यह है कि जब यहाँ तिवाहि नहीं हो रहा है, बंबई सामय जाना ही हाया।

तो सिर क्यों नहीं लेते भवनाती की बेचार मय जा रहा है बिट्टी सिरा लिमकर, तार देजेकर

हर बार मुगीजी इसम उठाते है मगर—

बीर २१ मई १९३४ को उन्होने 'जागरण' को मुसावे हुए मीर का सेर पड़ा—

जब तो जाते है मीरदे से मीर,  
फिर मिलेगे अगर पुदा सामा।

अनी 'जागरण' की समाधि की सेकर मुगीजी की साटपट विनोदधकर ब्याव से बस ही रही थी कि भवनाती ने दो रोज बाव २३ मई को सिरा—  
मेरी पुष्टि से यह मुजामसा बहुर जल्दी है क्योंकि बीर भी कुछ लोगों से बातचीत बस रही है। बहुरकैस मरी बहुत स्वाहिय है कि आप हमारे यहाँ आयें। कहानियों की संख्या घ बनने की जरूरत नहीं है क्योंकि मैं आपसे सतनी ही

सिए एक बंद किताब है और हमारा पुरख-शासित पुरख प्रमाण समाज इसी में अपनी खेरियत समझता है कि वह किताब बंद रही जाये।

नयी पत्नी के आ जाने से जीवन के उपभोग की जो शक्ति दिन-दिन क्षीण होती जाती थी अब वह छीटे पाकर सजीव हो गयी थी सूखा पेड़ हरा हो गया था उसमें नयी-नयी कोपलें फूटने लगी थी। साछाजी की बूढ़ी जवानी जवानों की जवानी से भी प्रसर हो गयी थी उसी तरह जैसे विजली का प्रकाश अन्धकार के प्रकाश से वह अपने को किसी अवक अवान से जो मर बैठकर नहीं समझते और बहुत घमण्ड से कहते हैं, 'जवानी का उम्र से उतना ही संबंध है जितना बर्म का आचार से स्वये का ईमानदारी से रूप का शृंगार से

एक दिन उनकी नवेली बीबी ऐसा महीं सोचती उसका खयाल है कि जवानी का संबंध उम्र से होता है। वह किसी तरह उनकी सोझबत में कुछ नहीं हो पाती उसका विष बसा-बुसा-सा रहता है। कामा भी तरह-तरह के स्वांग भरते हैं तरह तरह की सीपारतें साते हैं लेकिन उसके विष की कमी नहीं मिलती।

वह कठी खिलती है पर क जवान खोइये जगस की सगठ में ऐसी कि हूँ। जवान नून जवान नून को पुकारता है।

पाठिप्रत हवा मे नहीं रह सकता। उसको भी मिट्टी चाहिए, पानी चाहिए। दिव्यी अपना मोख चुकाये विना नहीं रहती। उसको झुठनाभोगे तो तुम्हारा आवर्ष गुर झूठा हो जायगा काससा। रक्ते रहो अपन तोसक आवर्ष जागे उम्हें मइह लगाकर।

और एक दिन जाता है जब जगस के मुँह से अपनी सुन्दरता का बसान सुनकर काकाजी की नवेली के बदन में झुझुरी बीड़ जाती है। और उनमें शक्ति के हस्त-से शीते आबरण में लुली-लुली बातें होने लगती हैं जो अपने इसी अर्ध-गम्भीर डेकेपन के कारण और भी सुनी मानूम होती हैं।

जगस और भी आगे बढ़कर काकाजी के लिए कहता है — आपके साथ बसते हैं या आपके बाप-से बसते हैं।

● तुम बड़ मुँहफट हो। खबरदार, जवान सम्हालकर बातें किया करो। किन्तु अप्रसन्नता का वह शीला आबरण उसके मनोरहस्य की न छिपा सका। जगस न फिर उसी निर्भीकता से कहा — मेरा मुँह कोई बंद कर के यहीं तो सभी यही कहते हैं। मेरा ब्याह कोई पचाम साल की बुढ़िया से कर दे तो मैं पर छोड़कर भाग जाऊँ। या तो गुर जहर ला भूँ या उसे जहर देकर मार डालूँ। पर्यी ही तो होपी।

जाता उस इतिम शीप की कायम न रग मकी। जगस ने उसकी हृदयबीभा

**इन्तम का सिपाही**

के तारा पर मित्रराय की एसी बोट मारी थी कि उसके बहुत जख्म करण पर भी मन की ब्यथा बाहर निकल आयी। उसने कहा — माय्य भी तो कोई बीब है।  
 — एसा माय्य जाय भाङ्ग में।  
 — तुम्हारा म्याह किसी बुद्धिया से ही कस्मेंी देल सेना।  
 — तो मैं भी बहर ला लंगा देल लीबिएगा।  
 — क्या बुद्धिया तुम्ह जबान स्त्री से म्यादा प्यार करेगी म्यादा सेवा करेगी।

तुम्हें सीधे रास्ते पर रखगी।  
 — यह सब माँ का काम है। बीबी बिम काम के लिए है, उसी काम के लिए है।  
 — मासिर बीबी बिम काम के लिए है ?

मोटर की आवाज आयी। न जाने किस जाना के तिर का आँसु लिसफुकर कंधे पर आ गया। उसने जस्दी स आँसु लीबकर गिर पर बर सिपा और यह कहती हुई अपने कमरे की ओर लपकी कि कासा भाजन कम्के बने जायें तब जाना। ● कहानी का पर्दा यही गिर जाता है। बाहिए भी। मगर ताज्जुब है कि मुर्खोंजी का इन्तम कही टिका क्या नहीं ? किस किस सने बह ऐसी उच्छ्रुतक कहानी

जमी ता बहरहाल जीवन का सबसे बड़ा सत्य यह है कि जब यहाँ निर्बाह नहीं हो रहा है, बर्बाद घायद जाता ही होगा।  
 तो किस क्यों नहीं देते भवतानी को बेपारा मरा जा रहा है बिट्टी सिख सिखकर, तार बे-देकर  
 हर बार मुँचीजी इन्तम उठाते हैं मगर—

मीर २१ मई १९३४ को उम्होने 'जागरण' को सुजाते हुए मीर का घर पढ़ा—  
 जब तो जाते हैं मीरके से मीर,  
 फिर मिसिये अगर लुदा लाया।

जमी जागरण की समाधि को लेकर मुर्खोंजी की सटपट विनोदपंजर ब्यास से चल ही रही थी कि भवतानी ने दो रोज बाय २१ मई को किया —  
 मेरी बुट्टि से यह मुमामला बेहद बरूती है क्योंकि जीर भी कुछ लोगों से बावनीत चल रही है। बहरकैफ मेरी बहुत टबाक्षि है कि आप हमारे यहाँ आये। कहानियो की संख्या से उरने की बरूत नहीं है क्योंकि मैं आपसे उरती थी

कहानियाँ और डायलॉग जूँगा जितन की मुझे अपने प्रोडक्शन के लिए बाकई  
 बकरत होयी। औरत जबाब देने की हुपा करें ताकि मुझे अपनी स्थिति का ठीक  
 ठीक पता चले।

अब ज्यादा सोच-विचार के लिए मुजायदा न थी। मुंशी जी अपना  
 बोरिया-बकशा सैमालन समे।

दुबत को सहारा मिला। चल सड़ा हुआ। — मुंशीजी ने निमन साहब  
 को लिखा।



धर्मता मिनेगीन के साथ प्रनुबंध पर हस्ताक्षर करते हुए



शमलक्ष्मी उनिस विवाहवन की सुमन



मैं ३१ को यहाँ पहुँच गया था। तब स एक मित्र का मेहमान हूँ। कई मकान देख। ५ ) क मकान में तीन कमरे मिलते हैं। ७५) में पाँच कमरे। अभी कोई मकान ठीक नहीं किया। लेकिन आजकल में कुछ न कुछ इंतजाम कर लेना पड़ेगा। अभी मैं नहीं कह सकता कि मैं यहाँ रह भी सक्ता या नहीं। जगह बहुत अच्छी है साऊन-गुबरी सड़कें हवादार मकान लेकिन जी नहीं रमता। जैसी कहानियाँ मैं लिखता हूँ उन्हें बेसन के लिए यहाँ कोई एक्ट्रेस ही नहीं है। मरी एक कहानी यहाँ सब को अच्छी लगी लेकिन यहाँ की ऐक्टमें उसे खेल नहीं सकती। उसे लगन के लिए कोई पढ़ी-लिखी ऐक्ट्रेस रखनी पड़ेगी। मैं तो ऐसी ही कहानियाँ लिखूँगा। इन लोपों की इच्छानुसार तो लिख नहीं सकता। मुसीबी ने बर्बई पहुँचते ही पत्नी को खिला।

बेचारे यहाँ अकेले पड़े थे मयी जगह, नये लोग और बाल-बच्चे इलाहाबाद से चौदह मील दूर लहरील सोराम में अपनी मीठी के घर बँस की बची बजा रहे थे। पाकी-प्याह का मीसम का और पत्नी का इच्छा जल्दी बर्बई की आर रुक करने का नहीं जान पता था। उधर सबा सोसह जाने मूहस्थ मुसीबी को अकेलापन बुरी तरह काट रहा था। पन्द्रह रोज़ बाव उन्होंने कुछ झुंझाकर लिखा —

तुम लिखती हो कि २२ जून को शारी है और बूमरी बहन के यहाँ जो पाकी है वह २८ जून की है। मेरी समझ में नहीं आता कि ये पादियाँ उन लोगों के घर हों तो उसका ताबान अकेला मैं हूँ। मैं समझता हूँ कि तुम जुलाई से पहले जाने का समय लाम भी न लानी। अच्छा बटी और जानू आ गया है वह सुनकर मुझे खुशी हुई। तुम तो इन सबों के साथ लुग हो। इधर मैं सोचता हूँ कि एक-डेड महीने बँस बीटने। इसे समझ ही नहीं पाता हूँ। आखिर काम भी कर्से तो किटना कर्से बँस तो नहीं हूँ फिर आदमी के लिए मनोरंजन भी तो कोई पीज होती है। मग मनोरंजन तो सबस अधिक घर पर बाल-बच्चों से ही हो सकता है। मेरे लिए दूसरा कोई मनोरंजन ही नहीं है। खाना भी खान बैठता हूँ तो अच्छा नहीं मामूम होता क्याकि यहाँ साहबी छट-बाट है और साहब बलने से मेरी तबियत

पबरती है। वही होता जानू आया था उसको बेसाता। भरी तो यह समझ में नहीं आता कि जो सोच बर-बार से असम रहते होये वह कैसे रहत है। मुझे ता यह महीना डेढ़ महीना याद करके भरी नानी भरती है कि किस तरह यह दिन कटने।

उसी दिन बीतेन्द्र को उम्होल लिखा —

‘पहली को जा गया। मकान से लिया। बाहर में होटल में खाता हूँ और पढ़ा हूँ। यहाँ बुनियात दूसरी है यहाँ की कसौटी दूसरी है। मनीता समझन की कोशिश कर रहा हूँ।

फिर २४ जून को अपनी पत्नी को लिखा —

मेरा सपना है कि पहली मुझाई को तुम्हारे यहाँ पकूब बाँटें। तुम्हारे यहाँ तो काफ़ी बहक-बहक होगी और बुल्लू\* तो फ़ैल हो गया। और, कोई अफ़सोस की बात नहीं है, फ़ैल-मास तो कबा ही रहता है, फिर भी अपने बच्चों का फ़ैल होना बचना नहीं मासूम होता। रबीबा ही तो समझा देना इसकी उरी की है।

और फिर तुम भी उसको समझाते हुए लिखा —

इस फ़ैल होने की चिन्ता मत करो। मुझे तो पहले ही आर्यका थी। कमी-कमी असफलता सफलता से क्या बा फ़ैल देनेवाली होती है। अपने जीवन को समय में बाँधो कसरत करी नियमित रूप से काम करा सफल होव।

धीमे-धीमे इलाहाबाद आकर पढ़ना चाहते थे छोटा लड़का क्या कर, कुछ तय नहीं हो पा रहा था। नहीं में गया था। बम्बई में जाने का प्रयास आता था मगर बेकार-धी बात थी क्योंकि दोनों प्रान्तों का कात मिलकुल असहसा था और मुघीजी का इरादा वहाँ साल भर से क्या बा रहने का नहीं था। फिर क्या होगा बेचारा न इधर का रहगा न उधर का। सिहाबा मुघीजी की ता यही इच्छा थी कि दोनों बच्चे वहीं बनारस में रहकर ही पढ़ें कोई कड़ी आये-आय नहीं क्या प्रायशः वर्ष बढ़ाने से साल भर बाद क्या होगा कहीं से आयेगा सी इपया महीना

यही बात मुघीजी ने मिली और सिधा कि मैंने तीन कमरे का मकान ल लिया है अरुरी अर्नीबर एरीब लिया है यानी पाँच कमियाँ एक भेद नीकर अभी नहीं मिला है बारह रुपये और खाने पर मिलता है यहाँ भाठ भेर का है रूप भाठ खाने सेर, आम बेरों मिलते हैं और बहुत भीठे या जान का एक या सबा रुपये दर्जन मंड बहुत मस्ते हैं छ' खाने दर्जन।

\* बड़ा लड़का धीमे

अपने काम के बारे में लिखा —

यह एक बिलगुरु नदी बुनिया है। साहित्य से इनको बहुत कम मरोकार है। इन्हें ता। रोमाचवारी सनसनीपत्र लम्बीयें चाहिए। अपनी ब्याति को गठने में शाले बगीर में जितनी दूर तक शान्तेपटरो की इच्छा पूरी कर सर्वथा ठठनी दूर तक बर्सेना मुते करना पड़ेगा। डिम्पीयं समजौता करना ही पड़ता है। आदर्श बाद मर्होपी बीड है और बाड भोकाठ उमको दबाना पड़ता है। बम्बई की भावहवा राम न आने पेट की घराबी और बम्ब की गिजायनें भी इसी उत में आ गयी।

पड़पी जुलाई तक बिरस्ती का जगगा मुंघीजी के मन में साऊ हो गया था —

मुझे उम्मीद है कि मैं १५ जुलाई को तुम्हारे पास पहुँच जाऊँगा। बेटी को अभी बिदा न करना। मैं उसको जान साब सेना आऊँगा। बच्चा को पढ़ने के लिए मेरे लयास से प्रयास में अच्छा होगा। बच्चों का बहू नाम लिखा हैना। बहूनेलों आराम में बहू पड़ेगे। बच्चों के यहाँ माम लिगम से मैं यहाँ बँध जाऊँगा और मैं कहीं बँधना नहीं चाहता। अभी मैं यहाँ रहने का निश्चय नहीं कर सका हूँ इसलिए यहाँ सड़कों का नाम लिखाना ठीक नहीं होगा। उनका बहू रहना क्याबा ठीक है। बाब को उनकी पढ़ाई में गड़बड़ी हो जाने का डर है। तुम अपने उत में यह लिखोनी कि मैं खुद रह करक बच्चो को यहीं पढ़ाऊँ। उसके लिए मैं यह लिखता हूँ कि बच्चों को सबसे क्याबा रूपों की स्वाहिया होती है। मैं उनको भी क्या महीना देता हूँगा। वह बापम से बहू रहेगे। उनको बरकर न मेरी है न तुम्हारी।

कहन की बरकर नहीं यह मुंघीजी का बुकी हूपम बोल रहा है। बच्चों की इसाहाबाद जान की बसा बिद

बहूछाक, जुलाई काम होये-सोये गिजायनी देवी बेटी और उसके बच्चे के साथ बम्बई पहुँच बयीं और मुंघीजी की बिरस्ती जम गयी।

मगर महानगरियों की हवा में शायद कुछ जाहू होता है (मुंघीजी के लिए तो वा ही) कि माघमी काम कुछ नहीं करता मगर व्यस्त हरपम रहता है।

मोनाच पर काम बस रहा था मगर बीटा की बात से। जबर 'मखरूर बनना चुक हो गया था। बीसा कि बिमारहीन बर्नी माहूब कहते हैं, जो उन दिनों बम्बई में ही थे और मुंघीजी से अक्सर मिलते रहते थे और जिस की लखरीक उस क्रिम क निर्देवक मोहन बबनानी ने भी की 'उन क्रिम की कहानी का डाँचा कम्पनी ने तैयार किया था और उस पर बमही-मोफ्त मुंघीजी साहब ने मड़ दिया था। काफ़ी अतिवाटकीय-नी कहानी थी जिसका उरुस्य यह बसना था कि पूर्वीपति

उद्योग और उन्नत विचारों का होकर देश का जनता का कितना भला कर सकता है। बात बाई-सी मुवीजी के मन की भी नी और बहुत कुछ नहीं भी थी। यह ज्ञान बाबा तो यहाँ पहले से ठीक ही था बस मोस्ट बड़ाना बाड़ी था और उसमें मुंशीजी ने कोताही नहीं की। बायसाम में जितनी जान बाल सकत थे बाकी जितनी लेखी जा सकते थे साये। भवनामी ने भी जिनकी फिल्मी जिवन्दी शुरू हो हा रही थी खुब जी ठोड़कर काम किया एक मिक-मासिक बोसट की कपड़ा मिक में तस्कार घुट की मयी बरबर पूरी बात उस बात पर सोस। बम्बई की फिल्मी दुनिया में कोकेदान शूटिंग आज भी कम ही देखन में जाती है। स्पे में पन्द्रह आना तसबीरों आज भी पूरी की पूरी नकली सेट बनकर स्टुडियो में ही बना भी जाती है उस बकत दो हिन्दी फिल्मी के उस आरम्भिक युग म यह एक बिसकुल नयी और अनहोनी बात थी। सिद्दाबा मिक के हजारे मबदूरों समेत बह सीन बिगपट पर बहुत ही सजीब उतरे और मो बहानी काफी लभर-नी थी बाय छाग ने उसमें काफी जान फूँक दी थी। और तसबीर बब सेंसर बोर्ड क सामन पहुँची तो बम्बई क बड़े पूँजीपति और मिक-ओगर्स असासिएसन क समापति सर जीजीभाई ने जो बोर्ड क भी सदस्य थे और बहुत प्रभावशाली सदस्य थे बटकर उसका विरोध किया और तसबीर सेंसर बोर्ड से पास नहीं हो सकी। तब भवनामी और अजता सिनेटाल क दूसरे लोग ने बोर्ड क समापति और बम्बई क पुलिस कमिश्नर किन्ही मिस्टर बिससन स अपील की। मिस्टर बिससन न कुछ दुस्य काट बने क लिए कहा। कम्पनी ने उनकी सहाह पर बसल किया किन्ति तब भी बम्बई के सेंसर बोर्ड ने जिसमे बहुत से बड़े-बड़े पूँजीपति भरे थे फिल्म को पास नहीं किया।

किन्ति पञ्जाब में सेंसर बोर्ड ने फिल्म को पास कर दिया और लाहौर के इम्पीरियल सिनेमा में राम राम करक उसके बिलाय जाने की बारी आयी। बम्बई क सेंसर बाड ने फिल्म को पास नहीं किया यह बात फील ही चुकी थी। पहले ही रोड भवनामी साहब का कहना है साठ हजार मबदूर की भीड़ सिनेमा क फाटक पर जमा हुई—और साठ राड तक कुछ इमी तरह का हाल रहा फ्याक पर भीड़ की रोक-बाम के लिए पुलिस और मिसिटरी का बन्दोबस्त करना पड़ा। आतिर का पञ्जाब सरकार ने भी बबराबर उस पर रोक लगा दी।

लाहौर के बाद बह फिल्म दिल्ली में रिमीज हुई। वहाँ भी अनिष्कारी ग्रहों ने उसका पीछा नहीं छोड़ा। कोई मबदूर फिल्म के एक सीन की ही तरह किमी मिक मासिक की माटर क आज स्र मया और एक अच्छा-नामा हुंगामा रडा हो गया। मतीबा दिल्ली की प्रांतीय सरकार ने भी उस पर रोक लगा दी।

यू० पी० सी० पी० में जहाँ-तहाँ वह तस्वीर दिखायी गयी पर कुछ अर्थ के बाद जब भारत सरकार ने उस पर रोक लगा दी ता बात परत हो गयी। बाद को सन् ३७ म एक बार फिर उससे मामले को उभाड़ा गया और किसी प्रकार उसके और भी कुछ हिस्सामक दुपय काट-कट करके उसके ऊपर सगी हुई रोक हटाने का उपाय किया गया — लेकिन तब तक लोहा ठंडा पड़ चुका था और लोग दिनचर्या में चुके थे।

मगर प्रिन्स को दूसरी मजदूर घ देलनेवाले लोग भी थे और उसकी बहुत अच्छी रिश्तू अमेरिका की महादूर पत्रिका एशिया में निकली।

लेकिन यह तो जग अभी माम की बात है। अभी ता तस्वीर बन रही है और भक्तानी ने बहुत कह-सुनकर मुष्ठीजी को इसके लिए राखी कर लिया है कि वह पुर एक-बो मिनट के लिए पर्से पर भायें। मुष्ठीजी को न जाने कैसी लगती है यह बात लेकिन भक्तानी का हठ देखकर वह राखी हां बाते हैं। राठ एक ही है कि वह अपने रोड क कपड़ों में ही रहेंगे और किसी तरह का कोई मेक-अप नहीं करावेंगे। भक्तानी इसको भी मजूर कर लेते हैं — और तब मुष्ठीजी अपनी चटय बोनी और क्यूँ म करा-मी कर क लिए मिकबालो और मजदूरों के समूह में सरपंच बनकर रजठ पट पर जाते हैं।

और अगर खुद उनके कारखाने में मजदूरों ने हड़ताल कर दी। मुष्ठीजी को इस बात से बड़ी चोट लगी और उन्होंने २५ सितम्बर १९३४ को 'भारत' म सम्पादक के नाम एक बिट्टी छायाई जो खुब अपनी दरमाक कहानी बज् रणी है—

● सरस्वती प्रेस के प्रीमाइटर होने के ताते हड़ताल की कितनी जिम्म दारी मुम पर बाठी है उसे स्पष्ट करना आवश्यक है ताकि आपके पाठकों को उससे मेरे बाते में जो समझझुमी हो सक्ती है वह दूर हो जाव।

सम्बन्धी प्रेस लयातार कई घाल स काटे पर चल रहा है। पहले हस निकला और उससे तीन साल तक बराबर बाटा होता रहा। इसके बाद प्रस में काम की कमी को पूरा करने और बाति की कुछ सबा करने के लिए मीने धानरब निकालने का भार भी ले लिया और दो साल अपने समय का बहुत बड़ा भाग खर्च करके उसे चलाता रहा लेकिन उसमें भी बराबर बाटा ही रहा यहाँ तक कि प्रेस पर कोई बार हजार का खप हो गया जिसमें कर्मचारियों का देना और कायबवालों का बकाया दोनों शामिल है। फिर भी मीने हिम्मत नहीं हारी और अब अपनी बिट्टी बायिक दशा से ठय आकर मी काशी से चलने लगा

तो मैंने जायरन का सम्भावन-भार वाबू सम्पूर्णानन्द को सौंपा मगर बाटा बराबर होता रहा। मेरी पुस्तकों की बिक्री के रुपये भी प्रेस के खर्च में जाते रहे फिर भी खर्च पूरा न पड़ता था क्योंकि दूसरे पुस्तकों की बिक्री भी बट गयी है। बाबू सम्पूर्णानन्द जी के हाथों में जायरन ने सोशलिस्ट नीति की जैसी जोरदार बकायत की वह हिन्दी संसार मसीमाँति जानता है। मैं खुद सोशलिस्ट विचारों का आपसी हूँ और मेरी सारी बिक्रियी बरीबों और दलितों की बकायत करते मुबरी है। हिन्दी में जागरण एक ऐसा पत्र था जिसने बाटे की परवाह न करते हुए बीरता के साथ सोशलिज्म का प्रचार किया। जब प्रेस की आमदनी का यह हाक था तो कर्मचारियों का वेतन कहाँ से पावनी के साथ दिया जा सकता था ? मेरी बिक्रियों से जो कुछ आमदनी होती है, वह इतनी भी नहीं है कि उससे मेरा निबाह हो सकता। न मुझमें यह छल है कि बिक्रियों से अपीक करके कुछ धन संग्रह कर सकता।

मुझ ऐसी दशा में जागरण को अवश्य बन्द कर देना चाहिए था जैसा मेरे अनेक मित्रों ने कहा लेकिन दुनिया उम्मीद पर कायम है और मैं बराबर यही सोचता रहा कि शामद अब पत्र का प्रचार बढ़े। उनके पीछे कई हजार का नुकसान उठा चुकने के बाद उसे बन्द करते मोह जाता था। मेरे कई मित्रों ने प्रस की ही बन्द करने की सलाह दी क्योंकि प्रेस के बन्दन से मुक्त होकर मैं अपनी पुस्तकों और लेखों से सस्टम-सस्टम अपना निर्वाह कर सकता हूँ। कम से कम उस दशा में मुझ पर किसी का डरब तो न रहता लेकिन मुझे यही सकोच होता था कि ये पचीस-तीस आदमी बंकार होकर कहाँ जायेंगे। बला से मुझे कुछ नहीं मिलता मेहनत भी मुफ्त में करनी पड़ती है मगर इतने आदमियों की रोखी तो सगी हुई है। इस तपाल से मैं हर तरह की खारबारी उठाकर प्रेस और पत्र चलता रहा। शिक में मममता था कर्मचारियों का प्रेम का ज्ञान है ही क्या वह मेरी मजबूरी नहीं समझते ? जब उन्हें मालूम है कि मैंने आज तक प्रस न एक पीसे का काम नहीं उठया और अपनी जायज कमाई से कम से कम बस हजार रुपये प्रेस और पत्रों के पीछे फूँक दिये तो उनको मेरे नादिहृत्त होने की कोर्ष तिकामत नहीं हानी चाहिए। मैं तो उस्टे अपने को उनकी हमदर्दी का पात्र समझता था। मैं जानता हूँ कि मरीचों को समय पर वेतन न मिलने से बड़ा बल होता है लेकिन क्या वे खुद ही इस प्रेस के मालिक होते तो वे भी मेरी ही तरह सिर पीटकर न रहे जाते ? क्या उन्हें किमानी में घाटा नहीं हो रहा है और वे प्रेस की मजबूरी करक ममान नहीं मना कर रहे हैं ? कर्मबारी को मालिक से अर्शतोप तब होता है जब मालिक खुद तो आमनी हजम कर जाता है और उन्हें भूला रहता है। जब उन्हें

मास्म है कि मासिक सुद बगार में राठ-दिन पिस रहा है उसकी जेब में एक पाई भी नहीं जाती ता उनको मासिक से मिछापठ करने का कोई जामज मौका नहीं है। फिर भी इन परिस्वितियों पर जटा भी बिचार न करके प्रेस सभ ने प्रेस म हड़तास करवा बी। मीन खबर पाठ ही संभ क सभापति महोदय को सारा हाल समझा दिया लेकिन उन्हें तो अपनी गानवार फटेहू का पड़ी थी मेरी मुञ्जारियों पर क्यों ध्यान देते ? उन्हें यहाँ तक बिचार न हुआ कि इस प्रेस को साक्षिय या समाज की सेवा हा के कारण यह पाटा हो रहा है। और यही प्रेस है जो मञ्जुरा की बकासत कर रहा है और इस सिहाज से मञ्जुरा की हमदर्दों का हकदार है, ऐसी कोसित्त करें कि बहुसफल हो और पयादा एकाप्रता से उनकी बकासत कर सके। उनके सोशलिज्म में ऐसे मुच्छ विचारों के किए स्थान ही नहीं पा। यही तो सोभा-सादा लुभा हुआ सिद्धान्त था कि प्रेस ने मञ्जुरी बाड़ी सगा रकती है इसकिए हड़तास करवा हो। मैं अब भी प्रेस को बन् कर सकटा था क्याकि मैं पहले ही कई बार कह चुका हूँ कि प्रेस से मुझे कोई बाबिक काम नहीं है, बस्कि हमेसा कुछ न कुछ भर से देना पड़ता है लेकिन फिर यह खयाल करके कि इतने आदमी उसी प्रेस से कुछ न कुछ पा रहे हैं उसे बन्द कर देने से उग्री का मुकमान होगा और उन्हें अपने बाड़ी बतन क किए कई महीने का इस्तजार करना पड़ेगा प्रेस को जारी कर दिया। यह है उस खानवार बिजय का वृत्तान्त जो संभ को सरस्वती प्रस पर प्राप्त हुई है। अपने बकील का गसा षोंटना अमर बिजय है ता बराक उस बिजय हुई, क्योंकि इस सभेसे मैं जापरन बन्द हो गया। जिन मञ्जुरों के किए यह सैकड़ों का माहवार पाटा सहा रहा था अब उग्री मञ्जुरों को उस पर क्या नहीं जाती तो फिर उसका बन्द हो जाना ही बच्छा था।

रह गयीं जम्म घर्तों। वे सब बच्छी हैं और मैं हमसा से उनकी पाबन्धी करता आया हूँ। मेरे कर्मचारियों में स किसी का साहस नहीं है कि वह मेरे बिदख अप घम्ब या डौट-उपट का भासेप कर सके। मैं सुन मञ्जुर हूँ और मञ्जुरों का बोस्त हूँ। उनके साब किसी तरह का जम्पाम या सक्ती टेखकर मुझे बुख होता है। और मेरे मीनेबर ने मारपीट की थी तो कर्मचारियों को मुझसे कहना चाहिए था अमर मैं मीनेबर की तम्बीह न करता तो उनका जा भी चाहटा करते। इन घर्तों में एक भी ऐसी नहीं है जो मैं सच्चे हृदय से न मान सेता बस्कि मैं तो मञ्जुरों को भाषे महीने की पेसमी देने की घर्त भी मानता अमर कोप में खपये होते। मैं सुद चाहटा हूँ कि वह समय आये जब मञ्जुरों को (जिनमें मैं भी हूँ) कम से कम काम करके अधिक से अधिक मञ्जुरी मिले खूब छुट्टियाँ मिलें और जितनी मुञ्जिचार्एँ दी

या सके ही जायें मगर छर्त यही है कि आमपत्नी काफ़ी हो। चाटे पर बरतन-बासे उद्योग को बड़ी बड़ी सविच्छाएँ रखने पर भी बपनाम होता पड़ता है और छस पर काई भी बड़ी आसानी से सामान्यर छोह पा सकता है! •

बिस्के लिए बपना पेट काटा और सारी जित्तमी आराम नहीं जाना बड़ी कह कि तुम मेरा पेट काट रहे हो मेरा बून बूस रहे हो! बड़ी गहरी पीड़ा हुई मुंजीजी को और उसी वँस में उन्होंने दो-तीन बगह बिट्टियाँ दीं। उसक बीच रोड २९ तारीख को उन्होंने जैनेन्द्र को लिखा — मैंने सोचा तीत महीने की मजदूरी एक हजार रुपये से कम न हागी। कागजवालों के नी पा हजार देने है। क्यों न हंस और स्टाक किसी को देकर उससे रुपये से सा और सब बकाना चुकाकर प्रेस से हमेसा के लिए पिण्ड छुड़ा को। तमी दो-तीन बपह बर लिख। एक पत्र अपस भी को भी लिखा। स्टाक सेना तो सबने स्वीकार किया पर हस पर कोई न पड़ा हुआ। इस बीच में हडताल टूट गयी। एक महीने का बेतन लेकर सब काम करने आ गये।

मुंजीजी की जित्तमी का नकता बहाँ भी बड़ी पा जो बनारस में या बनारस म या कानपुर मे या गोरखपुर म — न किसी से दोस्ती न किसी से मुलाकात। मस्सा की बीज मसजिद तक। स्टूडियो गभ बर आ गये ७ फरवरी १९१९ के छत में मुंजीजी ने जैनेन्द्र को लिखा। 'सात बजे उठता हूँ। साँके भाठ बर घूम कर जाता हूँ। नास्ता करता हूँ। नी बजे मन्बहार पढ़ता हूँ। कभी बप्य भर, कभी इसस ब्यारा समय कम जाता है। कभी कोई मिस्म आ जाता है। प्यारह बर जाता है। नहा-आकर स्टूडियो जाता हूँ। कुछ काम हुआ तो बिन्द नहीं अपन्यास पड़ा। पाँच बजे लीटता हूँ। हिन्दी के पत्र-पत्रिकाओं को उलटपा-पलटपा हूँ बिट्टी-पत्तर लिखता हूँ साता हूँ और सो जाता हूँ। यही दिनचर्या है।

पत्र-मधर में बपनी ब्यबंता का आकौम बीस रहा है

नाटककार इतिहस्य प्रेमी बही शारद की हिन्दू कामोली में मुंजीजी के पत्रोली प। वह भी प्रिस्मा में कित्तम आबमाने जाये थे। मन्सर उपछप के लिए बर आत। एक रोड उन्होंने मुंजीजी से पूछा — माप कैसे आ पँसि यहाँ?

मुंजीजी ने पबाब दिया — प्रम क ऊपर कुछ कर्ब हो गया है उमी को पदान न लिए आया है। मगर तुम तुम क्यों अपने का बर्तार करने आ गये?

प्रेमी ने कहा — बी कुछ पैसा बमाकर प्रेम लगा सना चाहता हूँ।



मुंघीजी ने जोर का एक झुंझुहा लपाया और फिर कुछ उशाम होते हुए कहा —  
आज प्रेम लगाने को पैसा बमाने डिग्म कम्पनी में आवे हो — कल प्रस क कर्ज  
को अदा करन क लिए आओगे

एक बार प्रेमी जी क एक बोम्ब दिल्ली से बम्बई भाप। उनकी मुम्बरी  
ससोनी पुबनी पनी घाम थी। प्रेमी जी की कहानी पर डिग्म बन रहा था।  
वही स्टूडियो म जाकर उन्होंने प्रेमी जी स मुलाजात की। सारा दिन बड़ी दिलचस्पी  
से घुटिये देया। घाम को प्रेमचन्दजी स मिलन की इच्छाहि जाहिर की तो प्रेमी  
उनका लेकर मुंघीजी के घर पहुँचे। पानी पीतर बनी गयी। मर्दों में बातें होने  
लगी।

मिन ने कुछ इशर-उमर की बातों के बाद पूछा — मुंघीजी क्या मल बर  
की महिलाएँ डिग्मों में काम कर सकती हैं ?  
मुंघीजी ने तपाक से कहा — बयो नहीं

मिन का चेहरा मिन उठ खेचिन तमी मुंघीजी ने अपनी बात पूरी करते हुए  
कहा — लेकिन उन्हें अपनी माक अपन पर रत बानी होमी।

हर रोब स्टूडियो जाता जरूरी नहीं है लेकिन कुछ यही तबीयत का उपड़ा  
पन है कि पहुँच जाते हैं बर रहकर ही ऐसा क्या कर सँपा ! सिगरेट पीना भी  
बहुत बड़ मया है — नहीं तो बस दिन-रात में तीन बीड़ी पीते थे। अब पो ही  
धुआँ उड़ाते दापहर गुजर जाती है।

कम्पनी के लोग एक्टर बरीरह मुंघीजी की बहुत इरबज करते हैं सासकर  
परमर और मशौन यात्रिक। मगर बोड भाफ डाइरेक्टर्स में कुछ लोग काशी  
करहिमाय हैं। ठेठ पूँजीपति कला हैं न उनके पास कोई संस्कार न संस्वृति।  
कभी-कभी मुंघीजी स आद-पोरकर पूछा जाता है — प्रबु बहानी मितनी हुई ?  
कब तक पूँच होमी ? और बह बापकाय उस तसबीर का ? कुछ बेर तक तो  
मुंघीजी का संतुमम हायम रूठा है और बह बड़े पास्त भाव से जबाब दे वेग  
हैं लेकिन कभी-कभी जब बहुत पयादा छानबीन की जाने लपटी है तो मुंघीजी  
का पारा बड़ जाता है और उनके तँस या मुँसकाहट का कुछ अकन उनके चेहरे  
पर भी उतर जाता है — क्या मतलब इस जाँच-पड़ताल का ? मेरा कहना  
काशी नहीं है कि मैं प्रबु कहानी पर काम कर रहा हूँ

सब घुटिए तो उस मतलब में मुंघीजी कम्पनी क नीकर भी नहीं हैं उनका  
तो साल बर का ठेका है क्कानियाँ किलकर बने का और कियने का काम  
बर पर भी किया जा सकता है, पयादा मजगी तरह किया जा सकता है। मगर

मुंशीजी कुछ कम्पनी का काम कम्पनी में बैठकर करना पसन्द करते हैं इसी लिए तो रोड दिखा नागा पहुँच जाते हैं अपने पक्ष से। पर अपने सिद्धने के लिए है जो कि डम से हो नहीं पा रहा है।

१३ नवम्बर को मुंशीजी ने हूँबरगवाड के हसामउहीन मोरी साहब के एक फ़िस्म-संबंधी लेख पर, जिसमें उन्होंने बत-रुचि के संस्कार के लिए फ़िस्म की उपयोगिता की बात उठायी थी सेसक को बघाई देते हुए कहा —

मुझे आपके समाज से रूप-व-सफ़र इतप्रयत्न है। मगर बिन हाथों में फ़िस्म की फ़िस्मट है वह वदकिस्मती से इसे इंडस्ट्री समझ बैठे हैं। इंडस्ट्री को मझाक' और इसकाह से क्या निस्वत? वह तो एकसफ़ायत करना जानती है और यहाँ इंसान के मुकद्दसतगत' जजबात को एकसफ़ायत कर रही है। बरहना और नीमबरहना तसबीरें, इस्त-बो-सूत और जज की बारवातें मार पीट, पुत्ना और गजब और नपसानियत ही इस इंडस्ट्री के बीजार हैं और इन्हीं से वह इस्तानियत का जून कर रही है।

और २१ दिसम्बर को इम्तनाज मदान को लिखा — सिनेमा साहित्यिक आवमी के लिए ठीक जयह नहीं है। मैं इस कारन में यह सोचकर जामा था कि ब्यापिक रूप से स्वतन्त्र हो सकने की कुछ संभावनाएँ इसमें दिखायी देती थी लेकिन अब मैं देख रहा हूँ कि यह मेरा भ्रम था और अब मैं फिर साहित्य की ओर लौट रहा हूँ। सब तो यह है कि मैंने लिखना कभी बन्द नहीं किया। मैं उसे अपने जीवन का छव्य समझता हूँ। सिनेमा मेरे लिए बीसा ही है जैसी कि बक्रान्त होगी अन्तर बस इतना है कि यह अधिक स्वस्थ है।

पत्रह रोड बाव फ़िग वीनेत्र को लिखा —

“फ़िस्मी हास क्या लिखूँ। मिला यहाँ पास न हुआ। आहीर में पास हो गया और दिघाया जा रहा है। मैं बिन इतरों से भाया था उनमें एक भी पुरा होता मजर नहीं जाता। ये प्रीइमुर जिस डम की कहानियाँ बनाते जाये हैं, उसकी लीक से जो पर भी नहीं हट सकते। बनीरिटी को ये सोम एप्टस्टेनमेण्ट बीन्वू कहते हैं। मद्भुत ही में इनका विश्वास है। राजा रामी उनके मंत्रियों के पक्षपत्र नकली लड़ाई, बोसबाजी यही उनके मुख्य साधन हैं। मैंने सामा जिक कहानियाँ लिखी हैं जिन्हें सिमित समाज भी देखना चाहे, लेकिन उनको फ़िस्म बगल इन भागों को सन्देश होता है कि चले या न चले। यह सास तो

बुरा करना है ही। कर्बदार हो गया था कर्बा पना हुंगा मगर और कोई काम नहीं। उपप्यास के अतिम पृष्ठ लिगने बाकी है उधर मन ही नहीं जाता। यहाँ से छुटी पाकर अपने पुराने कूड पर जा बैई। वहाँ बस नहीं है मगर मनाप बचन्य है। यहाँ तो जान पड़ता है कि जीवन मष्ट कर रहा हूँ।

इसके अर्धी बो ही यहाँने पहले मुयीजी ने बमारमीयास का लिखा था —

यहाँ स्थिति मेरे लिए काफी अनुकूल है क्योंकि अब इस उम्र में मन बहकने का बरिया कम है। दुसरी ओर मेरा इस काइम में रहना एक का काम कर सकता है। लेकिन इसी बीच जो लड़ा हो गया था उम्मीदे बस गयी थी।

सायद इसी रिशे, बियाउहीन अर्धी साहब बनाव बरत है — बम्बई टाकीड के बाइरेकर मिस्टर हिमांशु राय जो साइट माप एगिया और कम — र्धीनी कामयाब किस्में बना चुके हैं यह चाहत थी कि मुगी साहब किमी तरह उनकी कम्पनी से सम्बन्ध हो जायें। बुनाब जब उम्मान मुनम अपनी इच्छा स्पष्ट की तो मैंने मुगी साहब से उनकी मुलाक़ात करा दी। लेकिन मुना क़ात में बहुत उम्हने बम्बई की बराब भाबहुका की बात कही और फ़रमाया कि मैं बरगला मिनटों में बभग होने के बाद बनावर आना चाहता हूँ। मुसे उमदी बाउबीज के एसा मामूँ होता था कि किस्पी काम से उमजा की उचाट हो चुका है इसलिए कि अब मिस्टर हिमांशु राय से उनसे दक़्काल की कि वह बमारस ही से उनकी कम्पनी के लिए कइानिनी लिखकर भज रिमा कर, एक ही उम्हने अपनी बसमर्भता बरतायी और अपनी बपह पर मिस्टर कम्पन की सिझरिंग कर दी।

बिम्बगी अपने इसी रंग में बनी जा रही थी। सेहत मिरती जा रही थी। पेट की लमाम पुरानी बीमारियाँ जो मैं जाने कब से गरीर में बइश जमाप बीठी थी अब फिर फिर उठाने लगी थी।

राजमीति बिलकुल ठगरी थी। २९ सितम्बर को मुयीजी ने जैनेश्र को लिखा था — यहाँ कर्बेन में आ रहे हो म? कर्बेन तो बेजान-सी चीज होती जा रही है। मगर लमाघा हो रहा ही

है। रापुमाया का बान्दोलन एक ऐसी चीज थी जो भाबकध मुयीजी की बेतना पर पूरी तरह छापी हुई थी।

† जमुना स्वक्य के एसा कम्पन बिम्बुने बम्बई टाकीड के लिए बरसो काम हिमा और भाबकध सायद मश्रास की किसी कम्पनी में है।

२७ दिसम्बर को बम्बई में ही राष्ट्रभाषा सम्मेलन के स्वागताध्यक्ष की हसियत से भाषण करते हुए मुंशीजी ने कहा —

●यह दो पैरोंवाला जीव उसी वक्त भाषणी बना जब उसने सोचना सीखा। समाज की बुनियाद भाषा है। भाषा का सीधा सम्बन्ध हमारी आत्मा से है। भाषा हमारी आत्मा का बाहरी रूप है। उसके एक-एक अक्षर में हमारी आत्मा का प्रकाश है। भाषा सबियों तक हमारा साज बेटी रखती है और बिनाने लोग हमझबान हैं उनमें एक अपनापन एक आत्मीयता एक निकटता का भाव बपाती रखती है। मनुष्य में भक्त बनानेवाला रिस्ता भाषा का है।

हमारे मुम्बई फैलाव के साथ हमें एक ऐसी भाषा की जरूरत पड़ गयी जहाँ सारे हिन्दुस्तान में समझी और बोली जाय

हम सूबे की भाषाओं के बिरोधी नहीं हैं आप उनमें बिगुनी उन्नति कर सकें करें लेकिन एक कौमी भाषा का मरकबी सहारा सिबे बगैर आपके राष्ट्र की बड़ मजबूत नहीं हो सकती। अगर हमने कौमियत की सबसे बड़ी सर्त यानी कौमी उन्नति की तरफ से कापरबाही की तो इसका अर्थ यह होगा कि आपकी कौम का बिना रखने के लिए अंग्रेजी की मरकबी हुकूमत का कायम रहना साबिबी होगा बर्ना कोई मिशानबाकी ताकत न होने के कारण हम सब बिखर जायेंगे और प्रान्तीयता और पकड़कर राष्ट्र का मका चोट देगी

इस कौमी उन्नति के रास्ते में सबसे बड़ी रुकावट अंग्रेजी है उसका मजबूत हुमा प्रचार और हममें आत्म-सम्मान की बह कमी जो गुलामी की शर्म को नहीं महसूस करती।●

अंग्रेजी की इस मायकाँस को तोड़ना होगा हिन्दुस्तान की किस्ती उन्नति से। यह उन्नति हिन्दी या हिन्दुस्तानी ही हो सकती है। नाम से मुंशीजी को कोई शयन नहीं है हिन्दी कहिए, उर्दू कहिए, हिन्दुस्तानी कहिए, कुछ भी कहिए, तत्व की बात यह है कि उमका रूप क्या होगा? यह हिन्दी उर्दू का मिसा जुका रूप होगा। ता क्यों न उगे हिन्दुस्तानी कही हिन्दुस्तान की भाषा हिन्दुस्तानी।

●एनी भाषा मपडिवाऊ हागी न मौलबिपी की। यह बाहिर है कि अमी इस तरह की भाषा में इबारात की बुस्ती और पार्श्यों के बिग्याम की बहुत थोड़ी गुंजा म है। और जिसे हिन्दी या उर्दू पर बबिफार है उसके लिए बुस्त और सत्रीकी भाषा लिपन का कालब बड़ा औरबार होना है। अगर हमें राष्ट्रभाषा का प्रचार करना है तो हमें इस कालब को दबाना पड़ेगा। हमें इबारात की बुस्ती पर नहीं बननी भाषा की सत्रीक बनान पर नास तीर से ध्यान रखना होगा। इस वक्त

ऐसी भाषा बाला और भाषा का लक्षणों जल्द बही गया-भार का बोझ मगर आसना नहीं एर उर्दू शब्द हिन्दी के बीच में इस तरह डटा मान्य होया जैसे कीर्तियों के बीच में डंस आ गया हो। कभी उर्दू के बीच में हिन्दी शब्द हलुए में आकर के इसे भी तरह मजा बिगाड़ देवे। परितर्की मिलखिसामेये और मौलवी साहब भी नाउ मिट्टीमें और चारा लण्ड में बाग मथगा कि हमारी भाषा का गला रेशा आ रहा है। कुन्द छरी में उमे बिबह किया जा रहा है। उर्दू का मिटान के लिए यह छात्रिका की गयी है हिन्दी का इबात के लिए यह मया रची गयी है। लेकिन हमें इस बाला को कनेबा मजबूत करके मरना पड़ेगा। गालभाषा केवल रईवों और ममीरां की भाषा नहीं हो सकती। उमे बिमानां और मजबूतों की भाषा बनना पड़ेगा। इसर तो हम राष्ट्र राष्ट्र का मुक मथाने हैं उधर अपनी अपनी बबानों के दरवाजा पर मपीनें बिये लगे रहने हैं कि कोई उमकी तरह भाषा न उठा मके। ●

निसर में मशाम की ठीकी हो गयी। हिन्दी प्रचार समा के बीघाल सुबम करन के लिए आमन्त्रित किया था। एक अहिन्दी प्रदेश में बाहर हिन्दी के प्रचार का सुयोग उनके मन की बीज की और मन मन भाव मथिया हिलाये बाली बान उमक निर बिलकूल दिगनी थी। निहाबा मुपीजी ने ग्योना पाकर तुल्य उम स्वीकार किया और अपनी पानी मबूधम जो प्रेमी और बम्बई हिन्दी प्रचार समा के मकरम जी क साब २७ दिसम्बर को बबई में बसकर २८ की या को मशाम जा पहुँचे। तीसरे रोज का सफ़र था मगर राष्ट्र में कोई ग्राम तकनीक नहीं हुई। प्रेमी जी अपने माय मगरक के लड़ू और पूरियां रक लाये थे। हमन सब मरूहू आय

मशाम में इन लोपों की रामनाथ गोयनका के यहाँ ठहराया गया।

पश्चिम-दाल का बलभा गोयने हान में था। मग लवाल था कि बहुत बड़ा जमभट होया मकिन मान्य हुआ कि छुट्टियों के कारण बहन से हिन्दी प्रेमी बाहर बने गन हैं। मगर लमामाद्यों की ताशर चाहे कम हो यहाँ बितने लोम में प्रायः सभी हिन्दी प्रचार से संबंध रखने थे और हिन्दी प्रचारको के इस मिगनटी दस को देखकर मन में आया और मर्ब की मुरमुदी होने लपटी थी। कुछ लोम ही कई-कई सी भाषा लप करके भाये थे और उनमें देखियों की भी आसी ताशर थी।

यहाँ भी मूंगीजी न मरने मापय में अंग्रेजी पर बनता दुल्लड़ बलान के बा उममे कहा—

●यह समझ लीजिए कि जिस दिन बान अंग्रेजी भाषा का प्रमुख लोड़ देवे और

अपनी एक झीमी भापा बना सेंगे उसी दिन आपको स्वराज्य के दर्शन हो जायेंगे।<sup>१</sup> मुझे याद नहीं आता कि कोई भी राष्ट्र विदेशी भापा के बल पर स्वाधीनता प्राप्त कर सका हो। राष्ट्र की बुनियाद राष्ट्र की भापा है। आप उसी राष्ट्रभापा के भिक्षु हैं और इस नाते आप राष्ट्र का निर्माण कर रहे हैं। आप एक बिसरी हुई कीम को मिला रहे हैं, आप हमारे बंधुत्व की सीमामों को फेंका रहे हैं, मुझे हुए भाइयों को गले मिला रहे हैं।

जीवित भापा ठो जीवित देह की तरह बराबर बनती रहती है। शुद्ध हिन्दी ठो निरपेक्ष धर्म है। जब भारत शुद्ध हिन्दू होता तो उसकी भापा शुद्ध हिन्दी होती। जब तक यहाँ मुसलमान ईसाई, पारसी अफ़ग़ानी सभी जातियाँ मौजूद हैं हमारी भापा भी व्यापक रहगी। अमर हिन्दी भापा शान्तीय रहना चाहती है और केवल हिन्दुओं की भापा रहना चाहती है, जब ठो वह मुड़ बनायी जा सकती है। उसका अय-भंग करके उसका कायाकल्प करना होमा। प्रौढ़ से वह फिर पिशु बनेगी यह असम्भव है हास्यास्पद है। यह शकत है कि फ़ारसी धर्मों से भापा कठिन हो जाती है। शुद्ध हिन्दी क ऐसे पर्वों के उवाहरण दिये जा सकते हैं जिनका अर्थ निकासना पढ़ितों के लिए भी सोहें के बने जवाना है। बड़ी धर्म सरस है जा व्यवहार में जा रहा है। इससे कोई बहस नहीं है कि वह तुर्की है वा अरबी वा पुर्तगाली। उर्दू और हिन्दी में क्यों इतना सीतिया बाह है यह मरी समझ में नहीं आता। मैं अपने अनुभव से इतना भ्रमस कह सकता हूँ कि उर्दू का राष्ट्रभापा के स्टैंडर्ड पर जाने में हमारे मुसलमान भाई हिन्दुओं से कम इष्मुक नहीं हैं। मेरा मतलब उन हिन्दू-मुसलमानों से है जो इमीयत के मतबाध है। फ़ट्टरपबिया से मेरा कोई प्रयोजन नहीं। उर्दू का और मुसलिम संस्कृति का केन्द्र बाध अभीमङ्ग है। वहाँ उर्दू और फ़ारसी के प्रोफ़ेसरों और अन्य विषयों के प्रोफ़ेसरों से मेरी जो बातचीत हुई उससे मुझे मालूम हुआ कि मौसबियाऊ भापा से वे लोग भी उठने ही बेजार हैं जितने पढ़िताऊ भापा से मैं यह भी मान लेता हूँ कि मुसलमानों का एक मिरोह हिन्दुओं से अलग रहने में ही अपना हित समझता है •

ऐसे मौसबी लोगों को मुजादिक करते हुए मुंशीजी ने अपने इस अधिकार में कि मेरा सारा जीवन उर्दू की सिक्खाई करते पुरख है और आज भी मैं जितनी उर्दू लिखता हूँ उतनी हिन्दी नहीं लिखता और कायम्य होम और बचपन में फ़ारसी

<sup>१</sup> (हिन्दी बहुत दिनों तक स्वराज्य-भापा और हिन्दी की परीभाएँ स्वराज्य-परीभापा के नाम से पुकारे जाती रहीं। यह नाम खुद राजगोपालाचारी ने दिया था।)

का अभ्यास करने के कारण उर्दू मेरे लिए जितनी स्वाभाविक है उतनी हिन्दी नहीं है। कहा—

● मैं पूछता हूँ आप हिन्दी को क्यों मर्दान-उपनी समझते हैं? क्या आपको मालूम है और नहीं है तो होना चाहिए, कि हिन्दी का सबसे पहला साधक जिसने हिन्दी का साहित्यिक बीज बोया वह अमीर खुसरो था? क्या आपको मालूम है, कम से कम पाँच सौ मुसलमान साधकों ने हिन्दी को अपनी कविता से बनी बनाया है जिनमें कई तो चोटी के साधक हैं? क्या आपको मालूम है अकबर और जहाँगीर और औरंगजेब तक हिन्दी कविता का खींच रखते थे और औरंगजेब ने ही आगों के नाम रसना-बिसास और मुबारक रखते थे? क्या आपको मालूम है आज भी हमरस और हज़ीब आसफरी जैसे कवि कभी-कभी हिन्दी में उस्ता-माखड़ाई करते हैं? क्या आपको मालूम है हिन्दी में हज़ारों दाक हज़ारों शिष्याएँ भरबी और प्रारसी से आयी हैं और समुदाय में आकर घर की देवी हो गयी हैं? अगर यह मालूम होने पर भी आप हिन्दी को उर्दू से अलग समझते हैं तो आप देश के साथ और अपने साथ बेइसार्थ करते हैं। मुझे अथवा मुसलिम दोस्तों से यह सिकायत है कि वह हिन्दी के सामग्र्य सन्धे से भी परहेज़ करते हैं। ●

यहाँ-वहाँ गोष्ठियों समाजों सोंगों से मिलने-जुलने और निष्पीकेन समूहगत और बदमाश की सैर में चार रोख दखते-देखते निकल गये। चौपबे रोख मुंशीजी का इच्छा नीचे बंवाई सौत बान का ना संकन जब मैसूर के हिन्दी प्रचारक हिस्मय जी ने वहाँ की प्राकृतिक सुपना का बजान किया तो मुंशीजी लक्ष्मण गये और छोटी साइन के तीसरे दरवाँ के डेकमठाल झरते हुए अपने रोख सनेने मैसूर पहुँचे। बड़े प्यार से लोगों ने उनका स्वागत किया और कृष्ण मन्नन नाम के एक बहुत अच्छे बहुत साऊ-मुबरे बोर्डिंग काज में ठहरवा जिसके मालिक उत्तर भारत के ही एक सज्जन थे। उनसे मिलकर मुंशीजी बहुत प्रभावित हुए, खासकर इस बात से कि आशमी चाहे तो अपने पुस्तक से क्या नहीं कर सकता। उनका बचपन यही मुनीबतों में कट्टा था ऐसी कि बारह साल की उम्र में उन्हें अपना घर छोड़कर भागना पड़ा। भागकर वह बंगलोर गये और एक होटल में शाक-बुहाक और प्याला-तखरी भोज का काम करने लगे। होते-करते यह दिन आया कि अब वह मैसूर और बंगलोर के कई हाटलों के मालिक सठ सिकप्रसाद थे।

अबई पहुँचकर मुंशीजी ने अपनी इम यात्रा के बारे में ७ फरवरी १९१५ को बीनेत्र को लिखा—

मत्राल गया था वहाँ से मैसूर और बंगलोर भी गया। अपना यात्रा-बुताप लिख रहा हूँ। कुछ गोट तो किवा नहीं। जो कुछ याद है, वही लिखता हूँ। हिन्दी

का प्रचार बढ़ रहा है यह देखकर खुशी हुई। जो लोग राष्ट्र की और कोई सेवा नहीं कर सकते वे इसी काल में मरते हैं कि वे राष्ट्रभावा चीन रहें हैं। मुझे वह प्रवेश बड़ा सुन्दर लगा। गाने-बजाने का घर-घर प्रचार है। मुहल्ले-मुहल्ले स्त्रियों के समाज हैं और प्रायः सभी में हिन्दी की क्लासें हैं। मैं बुद्ध की तरह माता पहनकर रह गया। थोड़ा न सकने की कमी उस बन्त मालूम हुई। जनता कहती है कि हिन्दी का एक बड़ा लेखक है जाने क्या-क्या मोती उगसेगा और यहाँ है कि कुछ समय में नहीं आता क्या कहें। सैर, ट्रिप अच्छा रहा। प्रेमी जी भी साथ थे। वे बेचारे भी इसी मरल में मुबतिला हैं।

अपने यात्रा-वृत्तान्त में उन्होंने मैसूर का बखान करते हुए अपने महीने लिखा—

मैसूर बड़ा ही साफ़-सुधरा सुन्दर उद्यानों से सजा हुआ रमणीक स्थान है। बिजय आइए उबर पार्क यहाँ तक कि रेलवे लाइन के किनारे भी फूलों की लाइन नजर आती है। सबके चौड़ी हैं गर्ब-गुबार से पाक औरस्ते पर बेलों और पीसों से सजे हुए स्वभाव बने हुए हैं। बिजली-सक्ति की तो यहाँ इतनी इकट्ठ है कि देहातों में भी बिजली की रोशनी है। और बेहद सस्ती। देहातों में तो केबल की खाने यूनिट।

मुंघीजी के पास समय कम था इसलिए बस मैसूर सहर से रुकी हुई और आस-पाम की चौड़ें देखना मुमकिन था वैसे चामुष्ठा पहाड़ी और उसकी चोटी पर बना हुआ मैसूर राम्य की कुम्बेबी चामुष्ठा का मन्दिर, और सहर से बस-बाण्ड मीसू ब्रूट, सेरिंगापटम मैसूर की पुरानी राजधानी हैर और टीपू की।

सेरिंगापटम से हम कृष्णराजसागर देखने आये। यह एक बहुत बड़ा सागर है जो कावेरी नदी को एक बाँध से रोककर बनाया गया है। बाँध कोई दो मीसू लंबा और जमीन से कोई १५ फीट ऊँचा होगा। चौड़ा इतना है कि उस पर मोटरें बड़ी आसानी से आ-जा सकती हैं। इस सागर से महूर निकाली गयी है जो स्वयंभू पंचम मीसू तक की भूमि की सिंचाई करती है। इसका फल यह हुआ है कि अब यहाँ पान और जल की पैदावार कसरत से होने लगी है। इसी पानी से बिजली भी निकाली जाती है। इस निर्माण में त्रिपासल क लगभग पाँच करोड़ खर्च हो गये हैं। भारत में इससे बड़ा दूसरा बाँध नहीं है। बाँध के नीचे एक रमणीक स्थान है जिसे बुन्बावन कहते हैं। वहाँ ज़ीबारों की विभिन्न लीबा बनने में आती है। एक नाली से हरिया का पानी लाकर एक बाकू महूर में बड़े बेस से प्रवाहित किया गया है। दोनों तरफ़ ज़ीबारों की छटा है जिनके पास रंग बिरंगे वीनों में बिजली का प्रकाश किया जाता है। उज्ज्वले पानी पर अब इत रंगीन प्रकाश का प्रतिबिम्ब पड़ता है तो एसा मालूम होता है, ज़ीबारों से रंगीन



पानी निकस रहा है। दूर से देखने पर इन्धनुय का-सा दूर भौंरा को मुग्ध कर देता है।

सैमूर का राजमहल भी देखने लायक है मगर यह कोई उल्लेखनीय बात नहीं •

ईने नहीं !

हिरण्य सिंगे है—

एक दिन सवेरे मैं उन्हें राजमहल और वहाँ की चिन्मकला दिखाने से गया। उन दिनों राजमहल देखने वाले वालों को राजमहल द्वारा नियत बरजा-बुस पहनाया पड़ता था—अचरन खरी का कमरबंद सैमूर की छाम अपन बग की पगड़ी। नीचे चाहे धोनी पहनो चाहे पतमन ऊपर के लिए यह पोशाक बकरी थी और बाजार में किचारे पर मिष्टी थी। धोस्तो के लिए पोशाक की कोई छे नहीं थी। सिहाबा हमने टीम पोशाकें किचाम पर सी। प्रेमचंद जी ने अचरन बड़ाकर, कमरबंद कमकर, पगड़ी मिर पर रखकर छोड़न पूछा—'क्यों मारि, यहाँ कही मारिना नहीं है?' मैंने करीब ही एक बड़ से मारि की ठाछ इगाप कर दिया। प्रेमचंद जी उसके सामने आकर लड़े हुए और पगड़ के छाम अपना बड़ बैचब हुलिया देपते ही बरवम हँस पड़े और से हँस पड़े और कभी इधर से कभी उधर से अपने को निहारकर अपनी जहाँ बच्चो-जैसी दुधी म माधते हुए बोले—'असबाह मैं किन महाराजा से कम हूँ'।

छोटी-बड़ी बहुत-सी पार्टियाँ मुंशीजी के सम्मान में आयोजित हुईं। उनमें मरिमसप्या हाई स्तर क भवन में सम्पन्न आयपानी सबसे बड़ी और महत्वपूर्ण थी। सैमूर क तमाम हिन्दी-मेमी और प्रचारक उपस्थित थे। बाब के बाब मुंशीजी ने हिन्दी में व्याख्यान दिया और फिर प्रश्नोत्तर का सिलसिला चला। इस प्रश्नोत्तर की एक बात मुझे अच्छी लख पा है। किसी ने पूछा—'बापको अपनी कहानियों में कौन-सी कहानी अधिक प्रिय है?' उन्होंने उत्तर दिया—'माँ-बाप को जैसे अपनी सभी संतानें प्यारी होती हैं वैसे ही मुझे अपनी सभी कहानियाँ प्रिय लगती हैं। जब यह पूछा गया कि जिस लख माँ-बाप को उनकी संतानों में से कोई एक सबसे ज्यादा प्यारी होती है उसी लख मापको अपनी कौन-सी कहानी सबसे ज्यादा पसंद है? तो उन्होंने तुरन्त उत्तर दिया—'बड़े बर की बेटी'—हिरण्य जी ने बतलाया।

मुंशीजी को सोना कुछ विद्वानों से विचार के लिए भी से बने। उनमें से एक क यहाँ मुंशीजी को एक अत्यन्त मनोरंजक और अत्यन्त कष्टकर स्थिति का सामना करना पड़ा। एक रोज छाम को हिरण्य मुंशीजी को प्रोडेंसर सी • वार नहीं सहे

का नाम बीबिए। वह आपकी तरह इस तरह ताकेंगे मातों आपने किसी विचित्र पशु का नाम से लिया। मैंने तो माकबीय बी पंडित बबाहरकाक बी को ऐसा खीर भी कितनों ही को देना। ये सोच कुछ जानते ही नहीं उनक साहित्य में क्या हो रहा है। मुसलमान आमतौर पर उर्बु साहित्य से परिचित होता है चाहे वह कन्नड़-तमिल-भाषी ही क्यों न हो। विभिन्न मुसलमान से मेरा मतसब है।

मुंसीबी की तबीयत बंदई से उलझ चुकी थी। अब इस दिन गिन रहे थे।

प्रीनेत्र ने मजहूर दिल्ली में देखा। पसंद न आया। मुंसीबी से सिकायत की। मुंसीबी ने अपनी सजाई बेते हुए लिखा —

● मजहूर तुम्हें पसन्द न आया। यह मैं जानता था। मैं इस अपना कह भी सकता हूँ नहीं भी कह सकता। इसके बाद एक रोमांस जा रहा है। वह भी मर नहीं है। मैं उसमें बहुत बोझा-सा हूँ। मजहूर में भी मैं इतना बोझा-सा हूँ कि नहीं के बराबर। इस्म में डायरेक्टर सब कुछ है। सेसक इस्म का बावसाह क्यों न हो यहाँ डायरेक्टर की जमकावारी है और उसके राज्य में उसकी (सेसक की — ब ) हुकूमत नहीं चल सकती। हुकूमत माने तभी वह रह सकता है। वह यह कहने का साहस नहीं रखता मैं जनरल को जानता हूँ। इसके बिरुद डायरेक्टर खोर से कहता है मैं जानता हूँ जनता क्या चाहती है, और हम जनता की इसबाह करने नहीं आये हैं। हमने व्यवसाय जोला है, जन कमाना हमारी परब है। जो खीर जनता मायेयी वह हम पेंगे। इसका बभाव यही है — अच्छा साहब हमारा सलाम बीबिए। हम घर आते है। बही मैं कर रहा हूँ। मई के बंद में बंदा कापी में उपन्यास लिख रहा होया। और कुछ मुझमें गयी कथा न सील सकने की भी शिष्ट है। इस्म में मेरे मन की सन्तोष नहीं मिला। संतोष डायरेक्टरों को भी नहीं मिलता लेकिन वे और कुछ नहीं कर सकते सब मारकर पड़े हुए हैं। मैं और कुछ कर सकता हूँ चाहे वह बेगार ही क्यों न हो इसलिये बधा जा रहा हूँ। मैं जो फ्याट सोचता हूँ उसमें आदर्शवाद धुस जाता है और कहा जाता है उसमें एक्स्टरेजमेंट वैस्यू नहीं होता। इसे मैं स्वीकार करता हूँ। मेरे लिए अपनी बही पुरानी काइन मजे की है जो चाहा लिखा ●

हस्ते भर बाद १४ फरवरी को गोरी साहब को लिखा —

मैं तो जिन्दगी में एक नया तनुर्बा हासिल करने के लिए यहाँ साठ भर के लिए आया था। मई में वह मुह्त छाय हो जायगी और मैं अपने बतन बनारस लौट जाऊँगा और हस्ते साबिक बचची मयाबिक से बकिया जिन्दगी सर्फ कर चुंगा।

१९ मार्च १ १५ को फिर अपने इन्ही नये बस्तु वाली सड़क को बर्द स अपना यह माथिरी खन लिया —

मेरा तन्त्रिणा हो गया। मैं २५ वारीय को बनारस अपने बदन जा रहा हूँ। बनारस कंपनी अपना कारोबार बंद कर रही है। मेरा क्लैम तो साल भर का था और अभी तीन महीने बाकी हैं। लेकिन मैं उनकी बरबारी में इजाजत नहीं करना चाहता

क्लैम खत्म होने से भी पहले और अपना दो हजार रुपये फेंककर मुठीवी पकड़कर बर्द से चल पड़ हुए। कही कोई नया कारखाना था मही हो यी ? चापद हुई। गिबनूनन बाबू कहते हैं कि मुठीवी ने उम्ह बतलाया।

एक रोड एकट्टा लड़कियाँ का इन्फान्ट्री लिया जा रहा था और किन्हीं डायरेक्टर माहब ने किसी लड़की के कुछ कम उमरे हुए सीने को अपने हाथ की छड़ी से छूँते हुए कुछ कहा

इस छत में तुम्हा जो उबला पड़ रहा है उनके पीछे भी तो यही बेघर्मी नहीं है—

मिनेमा में किसी हमसाह की तबस्को करना बेकार है। यह समझ भी उगी तच्छ घरमापचारों के हाथ में है बीच गणबछरोपी। इन्हें इनसे बहस नहीं कि पब्लिक के मजाक पर क्या असर पड़ता है। इन्हें तो अपने पीने से मतलब। बरहना एकस बोसाबाजी और मनों का बीछों पर हमला — यह सब उनकी मजदूरों में आमज है। पब्लिक का मजाक इतना गिर गया है कि अब तक वे मुसलिबों और हपाओडों मजदूरों नहीं उम्हें समझीर में मजा नहीं आता। मजाक की इससाह का बीदा कौन उठामे ? मिनेमा के जग्गिे मसलिबों की सारी बेहू-पियीं हमार बंदर वाजिल की जा रही है, और हम बेबस है। पब्लिक में उजीम' नहीं न मरु मो-बर्द' का इन्टिपाड' है। आप अलवारों में कितनी ही करिया' कीजिए, यह बेकार है अब ऐन्ट्रेसों और एन्ट्रेसों की उसबीरें बड़ाबड़ छे और उनके कमाक के इन्वीरे साम आर्ये तो बरों न हमार मीत्रबानों पर उसका असर हा। सार्स एक बरकते-एडवी' है मवर नामइली' के हाथों में पड़कर लामत' ही रहा है। मैंने जब पीच किया और इस धारे से निकल जाना ही मुतासिब सम मता है।

१ आमा २ ब्यबसाम ३ बधि ४ नया ५ नाच ६ बूमाबाटी  
 ७ घातक ८ निर्दय ९ परिचय १० सपना ११ मसे-कुरे १२ बिदेक  
 १३ ईश्वरीय बरदान १४ असौम्य लोगों १५ अमियाप

इस घमडी पर उठकर आये और नास्ता किया। वह नास्ता कर ही रहे थे जब नीचे से भावनी आया और बोला— हंस के लिए मीटर बीबिए।

मैं बोली— जसो एक बच्चे में बेटे हैं मीटर।

भावनी बला गया तो बोले— तुमन मुसे लिखने नहीं लिया भावनी व्यर्थ बैठे हैं।

मैं बोली— तो कौन हंस मांही जगल रहा है।

भाप हँसकर बोले— साहब हंस मांही जगलता नहीं चुगता है।

मैं बोली— हाँ साता है। जब देखो एक न एक बला अपनी जान को पाल रहे हैं। भापको भापम से रहना ही नहीं आता। मूसकर हड्डी रह गये हैं। बही मसल है बाना न बास बाहरा दिन रत ! परसा रत भर बुझार बड़ा रहा करु दिन-रात पड़े रहे, भाज जब बुझार उतरा तो बस सवेरे से हंस का बरसा लेकर बैठ घये और काम ऐसा कि जिसका कल छूटे न मूठी

भाप बोले— तुम व्यर्थ ही शोष करती हो।

— मैंने जसी दिन आपसे कह दिया था ऐसे काम से बान्ध आये इसको छोड़ो। मगर आप तो उसके पीछे हाथ धीकर पड़े हैं। मैं कहती हूँ ऐसे कामों से क्या फायदा बिनके पीछे तन-मन की आहुति बढानी पड़े ?

तब भाप मेरे शोष को शान्त करके हुए बोले— रानी तुम मूखती हो मैं इनमें कोई त्याग नहीं कर रहा हूँ न कोई तपस्या। जब कोई त्याग-तपस्या न करता हो और अपने शोष से करता हो तो उसे आहुति बढाना न कहना चाहिए। जैसे बुधारी को बुझा घटनी को शराब अश्लीमणी को अश्लीम में मजा मिला है और मगर उसको यह भीज्ञें न मिलें तो वह परेशान होता है— इसमें उसका कोई त्याग बोड़े ही है

मैं बोली— तब कहिए आपको भी मजा है।

भाप बोले— हाँ मजा है, मगर अच्छा मजा है, चायब मेरे इस मजे से किसी भावनी का प्रयदा हो आय।

मैं बोली— पहले भाप अपना प्रयदा तो कर लीबिए तुब तो मूसकर काटा हो गये हैं और दूसरों की क्रिक में खीजाने है।

तब भाप बोले— बिया हुआ है उसका काम है रोजनी करना सो बह करता है। उससे किसी का प्रयदा होता है या मुन्सान इससे उसको कोई बहल नहीं। उसमें जब तक ठेस और बली रहेगी तब तक बह अपना काम करता रहेगा। जब ठेस खरम हो जाएगी तब टण्डा हो जाएगा ●

(चिबरानी देवी)

म आत्मसत्ता का न अपने प्रति करना कुछ भी नहीं केवल निर्वेद एक स्थित प्रज्ञ कर्मयोगी का

मगर यह तो अभी श्रुत नहीं माने की बातें हैं।

४ अप्रैल १९३५ को मुंबई में इम्पूरी बंदों को अनिम लमन्टार दिया।

खैरबा रास्ते में पड़ता था। भागनमाक भी का पुराना भाग्य था। सिद्दाजा फरसा पड़ाव नहीं हुआ। भार-नाश बिल खे पूर गपसप हुई, सूब सभाएँ और गाण्डियाँ हुई, और धून धूमे-फिरे। सिबरानी बेबी लिपत्री है—

● दूसरे दिन सुबह पड़ित जी हम लोगों को अवसय भिवा से गये गरी का सिनाय था खैरबा स पदह-बीन मौस की बूटी पर बहो पंडित जी मे हम दोतां आन्दिबों का डाल पर बिडाला और धुब नी बैठ गये। हम दोनों के हाथ में एक-एक सन्तरा रखत हुए बोस — बच्छा माप लीग इसनी फीफ्टन साण्ड। हम इसी तरह से प्रोटो सेना चाहते हैं।

मैं बोली — मैं सन्तरा न लूंगी ब खाऊँगी।

माप हँसकर बोले — सारे सन्तरे, टोकरी की टोकरी इनके सामने रख दीजिए। तब ऐसा मामूम होया कि यह बेच रही है और हम लोग खरीदकर खा रहे हैं! ●

वेसखाने से छूटकर खैरी कुमी हवा में माया है और अब अपने पर बा रहा है। बहुत हलका-सा लग रहा है कि जैसे एक बोल उतर गया हो सीने पर से। सन्तरा-बन्तरा घाकर मुंबई ने बहीं पड़ी हुई एक लकड़ी में से जैसा-जैसा घुस्ती बडा बनाकर दो-बार हाथ उसके भी सर किये

और फिर वहीं से घायर, बेटी की समुपल होये सबसे मिसडे-बुछडे इलाहा बाद पहुँचे। यहाँ भी पाँच रोड रहे अपनी समुपल के रिस्तेदार से मिले हुई हुईकर एक-एक बोस से रिस्तेदार से मिले।

घनारस पहुँचते-पहुँचते अमैक का दीसरा हफ्ता हो गया। मुंबई का इरया १० ठावील को इन्वीर के हिन्दू-साहित्य सम्मेलन में जान का था — बहाँ राष्ट्र भाषा और राष्ट्रीय-साहित्य-सम्मेलन का प्रदन उल्लेखाला था और इन दिनों मुंबई के मन पर यही भूत सवार था। बकर कोई न कोई तदबीर इसकी निरुसमी बाहिए कि हिन्दुस्तान में लोगों को अपने ही देश की विविध भाषाओं में बचे जाने वाले साहित्य का परिचय हो। कितनी घमनाक बात है, बीसा कि मुंबई ने १९ जुलाई १९३५ को निबम साहब को लिखा था कि हम अंग्रेजी बाकमालों से बाकिर

हैं जमनी फॉस इंग्लैंड के अदीबों के असमाये-मरीं हमारी नोके बवान पर हैं लेकिन हिन्दोस्तान में सुबेजारी बवानों में कौन-कौन से बाकमास पड़े हुए हैं, इसकी हमें बिसकुस खबर नहीं। साहियर की एकता के बिना लोगों में एकता बोर जाने भी तो कैसे? इन्दौर में जहाँ गांधीजी के समापतिरब में सम्मेलन का खबिबेधान होने जा रहा था इस प्रस्न का कुछ मन्का समाधान निकल सकेगा इसी उम्मीन को लेकर मुंधीजी इन्दौर जाने के लिए सबमुष उत्सुक थे।

जैनेन्द्र ने सिध्या था —

मेरे ख्यास से सम्मेलन ठीक-ठीक रूप में अब की पहली बार अपने राष्ट्र माया सम्मेलन के रूप को अनुभव कर सका है। जैसे और प्रान्तीय मायाएँ हैं हिन्दी को अब वैसा ही नहीं रहना है हिन्दी अबिल राष्ट्र की होगी। यह काम गांधीजी के समापतिरब के वसे न हो तो और कैसे हो? बहरखाल मुंधीजी का इन्दौर जाना नहीं हो सका। ४ मई को उन्होंने इकाहाबाद से जैनेन्द्र को लिखा —

मैं तो इन्दौर जाते-जाते रह गया। सबसे बायदे कर किमे मे एक भी पूरा न कर सका। इस उम्मीद से कि तुमसे इन्दौर में गपघप होगी तुम्हें खत भी नहीं लिखा। जब पूरा भोजन मिलने की खासा ही तो पानी पी-पीकर क्यों मूल को दुर्बल बनाया जाय। कंकिन कुछ तो प्रेमी जी क न जाने और कुछ नस्तेबारियों में जाकर मिसने-मिलाने के कारण सारा प्रोग्राम भ्रष्ट हो गया। अब बुधु को बेचक निकल आयी है और २७ से बह पड़े हुए हैं। हम भी उसके घाब हैं।

जैनेन्द्र ने उसका जबाब देते हुए लिखा —

इन्दौर में मैंने पहली बात यह पूछी कि आप आये हैं? पता लगा नहीं आये। हाँ मुंधीजी वहाँ मिले थे। बार्से भी हुई। जो सोचा था वह तो न हुआ। उसका भी इतिहास है। एक सीधा-साधा-सा प्रस्ताव बनभ्य हुआ है। कमेटी बनी है जिसमें मुंधीजी संयोजक हैं। अब सब उन पर है।

काम का क्या बंग हो। जाने-जाने से कर्ष तो बहुत पड़ता है लेकिन पाँच आदर दिपों को मिल केना चाहिए, तब काम आने बड़ सकता है। गांधीजी मुंधीजी काउंसलकर आप और मैं ये सब लोग बर्षों में ही यथाचीन बुदिपानुसार मिल लें लेकिन यह मुंधी पर है।

‘यह भी बात हुई थी कि अपना अल्प पत्र न निकालकर आपसे हुंस ही देने के लिए कहा जाय। मैं मयसता हूँ इसमें आपके लिए भी अयुक्त कुछ नहीं है।

बन्देयारास माणिकलाय मुंशी ने टूटी-फूटी गुजरती हिन्दी में खत लिखा —

भाप तो इतोर नहीं भाये। ऐकिन भाई जैनेन्द्र प्रसाद (जैनेन्द्र कुमार—  
 ख ) आदि ने भीस के हमारी योजना को भाये बढ़ाह। इसका परिणाम एक  
 प्रस्ताव से भाया जीससे आंतरप्रान्तीय परिषद् बुलाने में सुगमता होगी।  
 अब सवाल रहा मासिक पत्र का। जैनेन्द्र कुमार ने कहा था के भाप  
 हम को इस काम में दे देवे। यदि भाप हस को इन प्रवृत्ति का मुखपत्र बना सकते  
 हों तो हमारा काम बहुत ही सरल ही जायगा। भाप मुझे सीधे लीखीयेना कि  
 इस बारे में आपकी क्या राय है। गांधीजी भी हम बात में बड़े प्रसन्न हैं और  
 अच्छा सहकार दे रेंगे एही मुझे आशा है

अंधा क्या भयि वा माँतें। मुसी प्रेमचंद का अपना स्वप्न यही था बहुत  
 पुराना स्वप्न उर्मीय की शायद अश्ली किरण इस अंधेरे ब्रह्म में।

वहाँ गांधीजी का आशीर्वाद ही गहरी सीधा सहयोग मिल रहा हो एन्टा के  
 इस नये यत्न में बहो सोचना-बिचारना बैसा। लेकिन हाँ थोड़ा मोह डकर सगला  
 का हंस किमी को देने। अब तक बहु पुरी तरह अपना का कैदी-बैसी मुर्गीबतों  
 से उद्यो पाभा था माँह जैसे न हो। सकिन उर्सी पर ओट करते हुए तो जैनेन्द्र  
 न पहले ही। मई के आखिरी दिनों में लिखा था — मेरा तो खयाल है कि मुसी  
 की स्त्रीम कुछ बने तो हस छोड़कर भाप छगिए, छूटना मात्र संतत से होगा  
 क्योंकि तब भी पत्र तो संपादन के लिहाज से आपका ही होगा।

सनेबाळे और देनेबाळे दोनों के सामने एक ही लक्ष्य था व्यवसाय की नहीं  
 गम्प भी न बी। बातें ठय होने में खयाल धर नहीं लयी और गांधी जी के आशी  
 र्वाद के साथ जुसाई में हस लिमिटेड की रजिस्ट्री हो गयी और मस्बुब से हंस  
 भारतीय साहित्य परिषद् के मुखपत्र के रूप में निकलने लगा।

पादन अभी पूरा नहीं हुआ था। बम्बई से लौटकर मुसीजी उर्सी में  
 बी-आन से जुट गये और उसको पूरा करवा ही लमही छोड़ा। सहर में मकान  
 लिया — अमस्त के महीने में। लकके दोनों इलाहाबाद में पड़ ही रहे थे और  
 मुंशीजी का खूब भी इरादा अब इलाहाबाद में ही बसने का था। ४ मई १९३५  
 को उन्होंने जैनेन्द्र को लिखा था —

मैंने इरादा किया है कि जून से हस को और प्रेस को प्रयाग लाऊँ और  
 खुद भी वहीं रहूँ। काशी में न तो काम है और न साहित्यकारों का सहयोग।  
 वही जितन है वह सभी सम्राट हैं। कोई कवि-सम्राट कोई भाषाजाना-सम्राट  
 कोई प्रहसन-सम्राट। यह औरक तो काशी ही को है कि वही सभी सम्राट मन्त्र

हूँ, मगर सभ्राटों की सभ्राटों से पढेगी? शिष्टाचार की बात और है हाथिक सहयोग की बात और। मुझे डर लग रहा है कि कहीं तुम भी सास-छ महीने में सभ्राट हो जाओ तो मेरा काम ही तमाम हो जाय। फिर तुमसे कोई सेन्स माँगने का साहस भी न कर सकूँ। इसलिये अब प्रयाग आ रहा हूँ जहाँ सभ्राट कम हैं।

मुंशीजी के बनारस से ठबू-जेमा उखाड़ने की भगत पाकर छबमऊ से कासि-वास कपूर ने वहाँ आकर बसने की बात की। जैनेन्द्र ने दिल्ली बुलाया। मुंशीजी के बड़े बेटे ने इलाहाबाद में मकान बनाने की बात की। मगर मुंशीजी न नहीं आये न गये। एक बकरी उबाळ बा जो जिस तरह आया था उसी तरह छतम भी ही गया और मुंशीजी अक्सर बनारस में जमे रहे।

यहीं इसी जमे मकान में उर्वू के मसहूर विद्वान् मुहम्मद आकिस साहब मुंशीजी से पहली बार मिले —

प्रेमचंद जी का मकान क्वींस कासेज के पीछे एक मुहस्से में था। प्रेमचंद जी जिस मकान में रहते थे वह दोमंजिसा और चासे पुठ्टा क्रिसम का था। इसके पीछे एक महाला भी था लेकिन बनारस के इस हिस्से की आबादी कुछ खयाल मुंजान न थी और आसपास की फ़िजा और माहौल में भी कुछ इस्वाती कैफियत पायी जाती थी। प्रेमचंद जी के जहाते में सखी पूस-पूसवारी कुछ न थी। मकान में कुछ ठाट या घान नजर न आती थी। प्रेमचंद जी मकान के बासाई हिस्से में रहते थे। नीचे के हिस्से में प्रेस का काम होता था जिसके सबूत के लिए टाइप के हुस्के इषर उधर देखे जा सकते थे। नीचे के हिस्से में बायब किसी तरह एक घाम रहती थी। मीने बरबाड़े पर वस्तुकी थी। दो दफ्ते कुम्भी बजाने पर एक आवमी निकला जो मुझे पीने के रास्ते से ऊपर प्रेमचंद जी के कमरे में ले गया। उनकी मुलाकात का घास बनस या दफ्तर, जिसमें कुर्चियाँ और मेज समी हुई थी। इस बसत बन्द था। उधे कमरे का पता मुझे दूसरे रोज़ लगा था जब मैं मिस क्रिस्तबोर्न और डाक्टर अलीम के साथ बोभारा उनसे मिलने गया था। इस रोज़ जिस कमरे में मरी उनसे मुलाकात हुई वह ठासा बड़ा गुला हुआ छाऊ और हवादार कमरा था। अलीम पर सफ़र चांदनी का एक पर्त बिछा हुआ था। एक कोने में एक मेवाड़ी पसंग था जिसके ऊपर एक पीकान रखा हुआ था। प्रेमचंद जी पर्त पर बैठे हुए थे और एक कापी पर हिन्दी में अपने किसी नाबिल के मसबिदे की जिसको वह पत्र उपासना चाहते थे लिख रहे थे।

मुंशीजी से अपनी बातचीत का शिक करते हुए आदिक साहब न लिया —

● शाम तीन पर बातचीत हिन्दू-मुसलमान के ताफ़क़ात के बारे में थी।



इसी जमाने में हम' में मैंने एक मजहबून हिन्दू मुसलमान रिपर जा रहे हैं ? के उनबान से लिखा था। इसी जमान में बहुत सी ठगड़ीये उर्दू के मुसलमिक मखबारों और रिमालों में छपी थीं खासकर डाक्टर अगख की ठगड़ीय जा अलीगढ़ के रिमाले मुसल में निकली थी जिसमें प्रेमचन्द जी से खास ठौर पर लिखा-यत की गयी थी कि वह उर्दू के बेहतरीन अदीब होने के बावजूद बहुत बटिन हिन्दी लिखते हैं। फिर सख्दी मूबे में हिन्दी के बारे में जा सफुसर निरला या उसबा भी ठगकिरा हुआ। गरब यह रि ऐसी ही और बहुत सी बातें मेरे और उनके सामने थीं। और एव ऐसी जवान क पीदा करने का खबाल भी था जो एक तरफ अरबी और अरसी की ठग-ठाँस से आबाज हो और दूसरी तरफ संसूत और भापा क अस्त्राज उसम बहुत खपाश न हों। मेरा कहना था कि अगर भापास का इगित लाफ्त' और फर' इस तरह बड़ा गया जैसा कि दोनों तरफ के इतिहापयन्द कोसिरा कर रहे हैं तो लाबिनग यह नतीजा निकलेगा कि हिन्दुस्तान में एव ठगदुग ठगड़ीय और खबान की जगह दा मुसलमिक ठगदुग ठगड़ीय और खबानों पीग हो जायेगी संसूतियों का इगितलाफ मुमकिन है बड़कर कीमी ठगरीक का बाहम' बन जाय और हिन्दुस्तान में एक हुकूमत और क्रीम की जगह दो मुसलमिक हुकूमतें और क्रीमें पीदा हो जायें।

प्रेमचन्द जी मौजूदा हालात पर अफसास कर रहे थे और इसकी जिम्मेदारी मजहब की प्रकृत ताबीर' पर रख रहे थे। प्रेमचन्द जी ने मुझे कहा कि मुझे रस्मी मजहब पर कोई एतकाद नहीं है पूजा-याठ और मखिरों में जाने का भी मुझे खीक नहीं। गुरु से मेरी ठबीयत का यही रंग है। बाब खोरों की ठबीयत मजहबी होती है बाब खोरों की ला-मजहबी। मैं मजहबी ठबीयत रखनेवालों को बुघ नहीं कहता लेकिन मेरी ठबीयत रस्मी मजहब की पाबंदी का बिलकुल खबार नहीं करती। उन्होंने कहा कि मेरी संसूति और ठग-मभापयत भी मिला जुला है। बस्कि मुल पर मुसलमानों की ठगड़ीय का हिन्दुओं की ठगड़ीय से खपाज अखर पड़ा है। मैंने मखराब में मियाजी से अरसी-उर्दू पढ़ी। हिन्दी से बहुत पहलू मैंने उर्दू में लिखना शुरू किया हिन्दी खबान मैंने बा' में सीखी। इस लिखलिके में देहली के रिवाल 'साफ़ी' न जो ठगड़ीय' की थी कि प्रेमचन्द जी उर्दू के लिए मखूम हो चुके हैं उसके बारे में हँसकर कहते सग कि साफ़ी के एडीटर को मैंने लिखा है कि मैं उर्दू के लिए न सिर्फ बिन्दा हूँ बल्कि खपाश खोरों से भी रहा हूँ। ●

१ बिरोक २ बटुरपपी ३ संसूति ४ सम्मता ५ फूट ६ कारण ७ ख्यात्या ८ बिन्दास ९ खल-खलन १ आसोपना

यह सब भगड़ा-ठकदार तो खिन्दगी की एक बरूरी अलामत है। बंबई से आते ही जाते मुंबीजी की एक छोटी-मोटी बहुर फ़िल्म को लेकर नरोत्तम नावर से हो गयी जो उन दिनों दिल्ली से एक सिनेमा-मत्रिका का संपादन कर रहे थे।

हुमा यह कि मुंबीजी ने इलाहाबाद के 'सिद्धक' में सिनेमा और साहित्य' धीरे-धीरे एक सेज सिखा —

● साहित्य में भावों की जो उच्चता मापा की जा प्रीकृता और स्पष्टता सुन्दरता की जो सामना होती है वह हमें वहाँ नहीं मिलती। उनका उद्देश्य केवल पैसा कमाना है, सुबिधि या सुन्दर से उन्हें कोई प्रयोजन नहीं। व्यापार व्यापार है। वहाँ अपने मछों के सिवा और किसी बात पर ध्यान करना ही बजित है। व्यापार में भावुकता आयी और व्यापार लपट हुआ। वहाँ तो जनता की रूचि पर निगाह रखनी पड़ती है और चाहे संसार का संपादन देवताओं ही के हाथों में क्यों न हो मनुष्य पर निम्न मनाबुतियों ही का राज्य होता है। अगर आप एक साज दो तमाशों की व्यवस्था करें — एक तो किसी महात्मा का व्याख्यान हो दूसरा किसी बेव्या का मन्म मृत्यु तो आप यही देखें कि महात्मा भी ती साली बुतियों को अपना मापण सुना रहे हैं और बेव्या के पञ्चाल में तिल रखने की बगल नहीं। वही भोला-भाला ईमानदार म्वाला जो अभी ठकुरखारे से भरमावृत लेकर आया है, बिना किसी शिक्षक के दूब में पानी मिला देता है। वही बाबूजी या अभी किसी कवि की एक सुक्ति पर सिर बुन रहे थे अबसर पाते ही एक बकस बिगबा स रिखरत क दो रुपये बिना किसी शिक्षक के लेकर बेब में वालिख कर लेते हैं। उपन्यासों में भी यवारा प्रचार बाके और हूत्या स मरी हुई पुस्तकों का होता है।

सिनेमा में भी वही तमाशे खूब चलते हैं जिनसे निम्न भावनाओं की बिसेप वृत्ति हो।

जिस चौक से लोग टाड़ी और शराब पीते हैं उसके आगे चौक से दूध नहीं पीते। इसकी बजा प्रोड्यूसर के पास नहीं। जब तक एक चीज की माँग है वह बाजार में आयेगी। कई उस रोक नहीं सकता। अभी वह जमाना बहुत दूर है जब सिनेमा और साहित्य का एक रूप होगा। सोरु-बिधि जब इतनी परिष्कृत हो जायेगी कि वह नीचे से आनेवाली चीजों से भूना करेगी तभी सिनेमा में साहित्य की सुबिधि लिगाई पड़ सकती है। ●

नामर न मुची जी की बातों स अधिकतर सहमत और उनके कहने क ङग से अग्रहमत होते हुए एक सेज बिट्टी लिखी जिस मुंबीजी ने अपने बिबादास्पद सेग क साज अबिकरु छापते हुए अगनी सञ्चर्य में लिखा —

● नामर जी ने हमारे सिनेमा-संघी बिचारों को ठीक माना है केवल हुमाय केनरेसाञ्च कर्मा अर्पान् सभी का एक साटी से हाकिमा उन्हें अनुचित जान पड़ता

है। क्या बेव्याभा में शरीर और भी नहीं है? लेकिन इससे बचपानुति पर जो दाग है वह नहीं मिटता।

सिनेमा की दामता से मुझे इंकार नहीं। अच्छे विचारों और आदर्शों के प्रचार में सिनेमा से बहुत ही बड़ी भूमिका निरति नहीं है मगर जैसा मापर जी सु-स्वीकार करते हैं वह कृपाओं के हाथ में है। यही तो मैं कहना चाहता हूँ। सिनेमा जिनके हाथ में है उन्हें आप कृपा कहें मैं तो उन्हें उची तरह ब्यापारी समझता हूँ जैसे कोई दूसरा ब्यापारी। और ब्यापारी का नाम जनरल का पथ प्रदर्शन करना नहीं घन नमाना है। एक फिल्म बनाने में पचास हजार से एक लाख तक बलि इससे भी ज्यादा खर्च हो जाते हैं। ब्यापारी इतना बड़ा खतरा नहीं ले सकता। गरीब का दीवाना निकल जाय

आप क्रमांते हैं सिनेमा में जानेवाले साहित्यिकों में ऐसा कौन था जिसका मुख्य उद्देश्य सिनेमा को अपने रम में रंगना रहा हो? हम लोगों से कह सकते हैं कोई भी नहीं। वहाँ का बलबाय ही ऐसा है कि बड़े से बड़ा आदर्शवादी भी जाय तो नमक की खान में नमक पतनर रह जायगा। वही लोग जो साहित्य में आदर्श की शक्ति करते हैं सिनेमा में जानेवाले ही बचपानुति का नगा नाच करवाते हैं। क्यों? यहीलिए कि वे एस बंधे में पड़ गये हैं वहाँ बिना नगा नाच नचाये घन से भेंट नहीं होती। मैं आदर्शों को लेकर गया था लेकिन मुझे मालम हुआ कि सिनेमावासों के पास बने-बनाये मुस्त्रे हैं और आप उस मुस्त्रे के बाहर नहीं जा सकते।

सिनेमा में एक्टरटेनेमेंट बिल्कुल साहित्य के इसी बंग से बिलकुल अलग है। साहित्य में यह काम शायद कृतिशयों या बिमोदों से किया जाता है। सिनेमा में वही काम नाच मारपीट पर-परकड़ मुँह पिड़ाने और जिस्म को मटकाने से किया जाता है।

रही उपयागिता की बात। इस विषय में मेरा पक्का मस है कि पराज या अपरोस रूप से सभी कला उपयागिता के सामने चुटना टेकती है। प्रोपेगेंडा बदनाम शब्द है लेकिन आज का विचारोत्पादक बलबामक स्वाम्भ्यबर्द्धक साहित्य प्रोपेगेंडा के सिवा न कुछ है, न ही सकता है न होना चाहिए, और इस तरह के प्रोपेगेंडे के लिए साहित्य से प्रभावशाली कोई सामन बह्या न नहीं रचा बना उपनिषद और बाइबिल कृपाओं से न भरे होते।

सेक्स अपील को हम हीना नहीं समझते। बुनिया उची कुरी पर कायम है सेक्स अपील की निम्दा तक होती है जब वह बिहृत रूप धारण कर देता है। मुई कपड़े में गुमती है तो हमारा तन डँकती है, लेकिन देह में पुमे तो उसे जहमी कर देगी।

हम भी सिनेमा को उसक परिरुद्ध रूप में बचने के इच्छुक हैं मगर इच्छा

मुबार तभी होया जब हमारे हाथ में अधिकार होया और सिनेमा जैसी प्रभावशाली सञ्चिधार और सञ्चयबहार की मधीन कला-मर्मज्ञों के हाथ में होयी बन कमाने के लिए नहीं जनता को आत्मी बनाने के लिए, वैसे इस में हो रहा है।●

दूसरी तड़प दुबारा श्रीनाथ सिंह से हुई।

श्रीनाथ सिंह ने बिनका पुपता बाब घायब अभी हुए था अगस्त १९२५ की सरस्वती में मुंशीजी पर चोट करते हुए एक लेख लिखा — प्रेमचंद जी की रचना-बालुरी का ममूना — और उसमें यह दिखाने की कोशिश की कि मुंशीजी ने अपनी कहानी जीवन का साप उनक उपन्यास उलझन से चुपयी है और अपनी समझ में धुर्म साबित करके ठाकुर साहब ने अपना बमान सत्त करते हुए लिखा —

दूसरों की भीजो को अपनाते समय प्रेमचंद जी उन्हें इतना महा बनाते हैं कि अर्थ वा अनर्थ हो जाता है। अपनी इस कहानी में भी चोरी के अपराध से बचने के लिए उन्होंने मेरे उपन्यास के प्लाट पार्श्व तर्कों और भावों की इतनी घीछासपर की है कि पढ़कर दुःख होता है। दूसरे की भीजों को अपनी करके जनता के सामने उपस्थित करने और इस प्रकार बाह्यबाही छूटने की बुन में वे उनमें जो परिवर्तन और परिवर्द्धन कर बेते हैं उससे उनका साप सौन्ध्य नष्ट हो जाता है और जिस सेपक का कृतिमहल बहाकर उठी बमीन पर, उठी की नीब पर, उठी मसाले से वे अपना महल बना करते हैं, उसके उद्देश्य भाव और उद्देश की हत्या हो जाती है।

मुंशीजी ने कहानी चुपयी हो या न चुपयी हो इसमें शक नहीं कि ठाकुर साहब ने साहित्यिक चोरी की यह एक नयी और अपूर्व सुबिधाजनक कसीटी क्राबम कर दी थी जिसमें चोर् भी व्यक्ति किसी भी रचना पर, चोरी का अनियोग सबा सक्ता है — जब यह कैब भी नहीं रही कि प्लाट, पार्श्व तर्कों और भावों उद्देश्य और सन्देध में समानता हा सब कुछ मिश्र होन पर भी चोरी हो सक्ती है क्योंकि बहु मिश्रता चोरी को छिपाने के लिए है। इसने बाव तो फिर कहीं ब्राम नहीं।

बहरहाल मुंशीजी जब सहनेबाले थे यह बेहूबगी। उन्होंने पण्टकर हमला किया — हस्दी की मोठबाला पंसाठी —

● एक मानमी को हस्दी की नहीं एक गौठ भिल मयी तो उसने समाना जब मैं पंसाठी हा गया। आपने बिन्दवी में स-देकर एक उपन्यास लिखा उलझन और जब उन्हें मट पहम ही गया है कि लोग उनने इस उपन्यास के आचार पर

कहानियाँ माटक ड्रामे सिपान सगे हैं। मुझे कुछ जिनों से थोनाब सिंह को ऊल-असूल बातें सुन-सुगकर यह भय होने लगा है कि उन्हें पञ्चक्रान या माली पूसिया हो गया है। मैं उससे लगता हूँ कि वह बर्बाद बर्बाद कि वह जस्टी किसी होशियार चिकित्सक से परामर्श करे वनां गायद राम और भी मयकर एप धारण कर ले। मालीपूसिया के लक्षण यही है कि उसका रोगी समझता है सांग उसका मास असबाब होये लिये जाते हैं और वह अपने कुत्ते की भाँति बटासे भूँकने लगता है।

सरस्वती में यह श्रेष्ठ सिपान का मंचा यह मालम होता है कि सरस्वती के भोसे-भाळे पाठकों के सामने उलझन की भरपेट प्रज्ञा की धाम और यह विप्राया धाय कि यह रचना इतने ऊँचे दर्जे की है कि प्रेमचंद जी ने भी इसे पढ़ा और पढ़ा ही नहीं इससे इतना प्रभावित हुए कि उसके आचार पर कहानी लिख बाली। मैं उन्हीं लेखकों की रचनाएँ पढ़ता हूँ जिनकी प्रतिभा का मैं ऊँच रहूँ या जो अपनी रचनाएँ मुझे मँट करते हैं और उन पर मेरी सम्मति माँगत हैं। ठाकुर साहब ने अपनी रचनाएँ मुझे मँट नहीं कीं और उनकी प्रतिभा का मैं कभी कायल नहीं रहा। मैं उन्हें कलाकार समझता ही नहीं। हरेक ऐसे गैरे नल्लू खैरे की रचना पढ़न क सिपू मेरे पास समय नहीं है।

जीवन का घाप और उलझन में आपने जो सादृश्य दिखाया है उसे पढ़कर हँसी आती है। अमर दोनों में यही बात है कि दोनों के हीरो शरीय विज्ञान मेहनती और संतोपी हैं, और उनकी पत्नियाँ बटुभाषिणी हैं और दोनों के उपनायक धनी व्यापारी हैं और उनकी महिमाएँ पति से असलुष्ट हैं तो मैं कहूँगा कि ठाकुर साहब ने मेरे सिवासदन से प्काट भी उड़ाया है चरित्र भी और समस्या भी।

लेकिन मैंने उलझन पढ़ा होता तब भी यह आनंद न कर सकता क्योंकि ऐसे प्रसंग आये दिन के जीवन की बातें हैं, रोज़ देखन में आती हैं और उन पर किसी सेवन की मुहर नहीं है। मगर हमारे ठाकुर साहब बेचारे इस मालीपूसिया से मजबूर हैं क्या करें। पार्क का दुस्त सिवासदन में भी है उलझन में भी नायिका को सेवासदन म भी बँच पर बैठाया गया है उलझन में भी ●

इस तरह की अलसूख बातों का सादृश्य दिखलाकर ठाकुर साहब ने मुंशीजी को चोरी का मुजरिम ठहराया और जो तत्व की बात की कहानी की आत्मा कहानी का प्राण उसके बारे में यह कहकर छुट्टी पा ली कि उसे मुंशीजी ने तोड़-भरोड़कर कुछ का कुछ कर डाला ! चोरी साबित करना जितना आसान हो जाता है इससे !

कहानी की आत्मा के बारे में मुंशी जी ने लिखा —

● जीवन का घाप में जो समस्या पेश की गयी है वह हमारे ठाकुर साहब की

कमी यों ही अपने मन से कमी मुस्देब रबीन्द्रनाथ के संकेत पर, लेकिन मुंशीजी नहीं मये तो नहीं मये।

फतुर्बेदीजी, पिछले इरिब बस साक्षात् से इस कोशिस म थे। उनकी यही समझ थी कि मुंशीजी को मुस्देब रबीन्द्रनाथ से मिलानें। इसके लिए उन्होंने कुछ भी उठा नहीं रखा। योने नोगूची छान्तिनिकेतन आये तो एक बार फिर उन्होंने जोर लगाया। थोड़ी देर का सायद मुंशीजी का आसन डोस गया लेकिन फिर भी कतर मया और ० दिसेंवर १९३५ को उन्होंने श्रीमन्त्र को सिखा —

फतुर्बेदीजी ने कश्कत बुलाया था कि आकर नोगूची जापानी कवि का मापन मुन जाओ। यहाँ नोगूची हिन्दू मुनिबसिटी आये उनका ब्याख्यान भी हो मया मगर मैं न जा सका। मज्जकी बालें मुनते और पकते उम्र बीत गयी। ईस्वर पर बिरबाम नहीं आता कैसे बड़ा होती। तुम आस्तिक्या की ओर जा रहे हो या नहीं रहे यस्कि पकते मगठ बन रहे हो मैं छन्दे से पकता नास्तिक होता जा रहा हूँ।

तीन महीने बार फिर किसी प्रसंग में छान्तिनिकेतन का निर्मन्त्र मिला। वह भी निष्फल हुआ और १८ मार्च १९३६ को मुंशीजी ने फतुर्बेदीजी को सिखा —

मैं छान्तिनिकेतन न जा सका। मेरे लिए उसमें कोई आकर्षण नहीं है। वह लोग मुझसे बिद्वत्तापूर्ण ब्याख्यान की आवाज करेये और वह मेरे बस का रोग नहीं। मैं कोई बिद्वान् आदमी नहीं हूँ। तो भी मगर वह लोग मुझे पहले से आमन्त्रित करे ता मैं आने का प्रयत्न करूँगा। तार से बी गयी एक मिनट की सूचना पर मैं तैयारी नहीं कर सकता।

वह आदवाला टुकड़ा सरासर झूठ है। कोय बहाना क्योंकि इससे साक भर पहले २६ मार्च १९३५ को हजारीप्रसाद जी द्विवेदी ने मुंशीजी को समय से काफी पहले इस प्रयत्न के साथ आमन्त्रित किया था किन्तु निष्फल —

●मंत्र मोहमहा मकार वसति सवृक्षमुष्णैर्मजन्  
 वैद्यम्यं प्रथमन् सुसज्जनमनोवाचनिभि ह्यसादयन्।  
 ध्यान्तीपुत्रान्त जनान् बिद्यन्नुविद ध्यान्तप्रियान् धोमयन्  
 चन्द्र कोश्रिपि चक्रास्त्यसावमिनक धी प्रेमचन्तु सुधी ॥

प्रेमचन्तुश्च चन्द्रश्च न कदापि समावुधी।

एक पूर्णकर्मो जित्यमपरस्तु यदा कदा ॥

माग्यचर, उम दिन पश्चिम बनारसीवास जी के साथ मुस्देब (कबिबर रबीन्द्र नाथ टापुर) ने मिलन गया था। चार्ता ही चार्ता वर्तमान हिन्दी साहित्य के संसंध में पचा बनी। ऐसे बचसर्तों पर भाषा नाम सबसे पहले आता है। उम

दिन भी आपने रच साहित्य की वर्षा बड़ी देर तक बरती रही। हम लोगों की इच्छा थी कि नववर्ष के अवसर पर आप जैसे भारतीय साहित्यिकों का निर्मित करने और गुरदेब से परिचित करायें। गुरदेब न हम लोगों का विचार का उत्साह के साथ स्वागत किया। इसीलिए हम लोगों ने निश्चिन्त किया कि स्थानीय हिन्दी समाज का वार्षिकोत्सव नव वर्ष ( १४ मई १९३५ ) को मनाया जाय। उस दिन गुरदेब का प्रवचन होता है। उसने पहले दिन भी जिस दिन वर्ष समाप्त होता है उनका व्याख्यान होता है। कुछ और भी ममारोह रहता है। गुरदेब और आयन की ओर से निर्मन्त्रण तो पचासमय जाण्णा है इसके पहले ही हम हिन्दी समाज की ओर से आपको निर्मित करते हैं। इस बार आप बकर पपाये। हमारे माग्रहपूर्व निर्मन्त्रण को आप भस्वीकार न करें। आपरो गुरदेब से मिलाकर हम गर्व अनुभव करेंगे।

आपके साहित्य में हिन्दी को समृद्ध किया है और हिन्दीभाषियों को बुनिया में मुंह दिवाने लायन। इसीलिए आपने यश को हम लोग निश्चिन्त बाँट लिया करते हैं। जब हम रंगभूमि या कमभूमि को दूसरे को दिवाते हैं तो मन ही मन सर्वपूर्वक पूछा करते हैं— है तुम्हारे पाम कोई ऐसी चीज ! और इस प्रकार का सर्व करते समय हमें प्रेमचन्द नामक किसी अज्ञात अपरिचित व्यक्ति की याद भी नहीं रहती — मानों सब कुछ हमारी ही वृत्ति है। आज उस व्यक्ति को पत्र लिखते समय उसकी अनुमति के बिना उसके सम्पूर्ण यश को स्वागत कर लेने के अपराध के लिए जो हम क्षमा नहीं माँगते वह भी यश का ही एक दूसरा रूप है।

इस निर्मन्त्रण पर भी जो भारतीय न जाये वह क्षायर किसी दुन्दुभी मिट्टी का ही बना है। और कुछ हो न हो कीर्ति के विज्ञापन का लोनी वह नहीं है।

जाने का प्रसन्न मन अपर उसके लिए कहीं है तो वहीं जहाँ उसका जाना उसने बृहत्तर जीवन-सभ्य के लिए उपयोगी है। केवल फूस मात्रा परतने के लिए बीड़ने को उसके पैर उठते ही नहीं

और सब बातों में जिन्हें मुंशीजी काम की बातें समझते हैं वह पूरी तरह मुस्तीर हैं। मुन्कराब आनन्द और सख्खाव जहीर ने जैसे ही कुछ अपने मौखिक हिन्दोस्तानी बोस्तों के साथ मिलाकर संरग में भारतीय प्रगतिशील लेखक संघ की स्थापना की मुंशीजी ने यहाँ पर उसका स्वागत करते हुए जनवरी १९३६ में लिखा —

हमें यह जानकर सच्चा आनन्द हुआ कि हमारे सुपेक्षित और विचारशील युवकों में भी साहित्य में एक नई स्फूर्ति और जागृति लाने की बुन पैदा हो गयी है। संरग में दि ईरियन प्रोपेसिब राइटर्स असोसिएसन की इसी उद्देश्य से बुनियाद

झाली गयी है और उसने जो अपना मैनिफेस्टो भेजा है उसे देखकर यह बाधा होती है कि अगर यह सभा अपने इस नये मार्ग पर जमी रही तो साहित्य में नवयुग का उदय होगा।

उस मैनिफेस्टो का कुछ अंश मुंशीजी ने वाक्यरूप में इस प्रकार दिया —

भारतीय समाज में बड़े-बड़े परिवर्तन हो रहे हैं। पुराने विचारों और विश्वासों की जड़ें हिलती जा रही हैं और एक नये समाज का जन्म हो रहा है। भारतीय साहित्यकारों का धर्म है कि वह भारतीय जीवन में पैदा होनेवाली शक्ति को राष्ट्र और रूप हैं और राष्ट्र को उन्नति के मार्ग पर चलाने में सहायक हों। भारतीय साहित्य पुरानी सम्पत्ता के मल्ट हो जाने के बाद से जीवन की यथार्थताओं से भावकर उपासना और भक्ति की धारण में जा छिपा है। नतीजा यह हुआ है कि वह निस्तेज और निष्प्राण हो गया है रूप में भी अर्थ में भी। हम भारतीय सम्पत्ता की परम्पराओं की रक्षा करते हुए, अपने देश की पुरनोन्मुख प्रवृत्तियों की बड़ी निर्ययता से वासोजना करेंगे। हमारी धारणा है कि भारत के नये साहित्य को हमारे वर्तमान जीवन के मौलिक तथ्यों का समन्वय करना चाहिए, और वह है हमारी रोटी का हमारी दखलता का हमारी सामाजिक व्यवस्था का और हमारी राजनीतिक पराधीनता का प्रश्न। तभी हम इन समस्याओं को समझ सकेंगे और तभी हममें श्रमार्थक शक्ति आएगी। वह सब कुछ जो हमें निष्क्रियता अकर्मण्यता और अंधविश्वास की ओर के पाठा है क्षेप है वह सब कुछ जो हममें समीक्षा की मनोवृत्ति लाता है, जो हमें प्रियतम कदियों को भी बुद्धि की कसीटी पर कसने के लिए प्रोत्साहित करता है, जो हमें कर्मण्य बनाता है और हममें संघटन की शक्ति लाता है, उसी को हम प्रगतिशील समझते हैं।

उसी महीने १२।१३।१४ जनवरी को युनिवर्सिटी के विद्यमानपरम हारम में हिन्दुस्तानी एकेडेमी का सम्माना बरसा हुआ। मुंशीजी भी उसमें धरिफ हुए।

सभापति बिहार के प्रसिद्ध नेता साहित्यकार और हिन्दुस्तान रिष्यु के यद्यस्वी गम्यारक भी शम्भुशानन्द सिन्हा थे। साहित्यकारों का वक्ता सम्मेलन था। उन्हें उर्दू और हिन्दी दो विभागों में कर दिया गया था। उर्दू विभाग क सत्र पीछाना अग्रुस हूँ साहब और हिन्दी विभाग के सत्र डा यंत्रानाच सा थे। दोनों विभागों में कई अच्छे-अच्छे विद्वत्ता और मधेयता और धोज से भरे हुए लेख पड़े बने मगर दोनों सम्मेलनों के अल्प-अल्प होने के कारण श्रोताओं को सारे निर्बंधों को मुनन का अवसर न मिला। और हाजि यह हुई कि उर्दू और हिन्दी के बीच में आ सीवार गड़ी होती जा रही है वह और भी ऊँची हो गयी। अमर दोनों समुदाय



मिल नहीं सकते तो न मिलें। अपनी बकली असल बजाना चाहते हैं ता बजाते पायें लेकिन क्या इसमें भी कोई बुराई है कि दोनों एक दूसरे को सुन भी नहीं सकते !

कैसी बेगुनी हालत है इन बेचारे मुसीबी की या न पूरी तरह हिन्दी के हैं न पूरी तरह उर्दू के जो बीच में खड़े हैं संगम पर

सम्भार जहीर इस बीच बिलापत से लौट आये थे और यहाँ पर इन गये आम्दादन का भीषण बनने के सिद्धसिद्ध में इमाहाबाद को ही अपना कम्प बनाकर रह रहे थे। और उनको सत्यता भी मिल्नी। हिन्दी कबिया के अगली मुमिषामन्दन पस्त ने उनको अपना पूरा सहयोग दिया। पुनिबसिटी ने भी किराऊ गारखदुपी गारख एबाइ हुनेन और महमद अमी की बजह से पैर टिकाने को जगह मिल्नी और धीरे-धीरे नाम बल निकसा। संगठन ता अमी कहीं या नहीं (सम्भार जहीर का जब ही उसका केन्द्रीय कार्यालय था।) लेकिन ही कुछ समानबर्मी लोग आपस में मिलने-बैठने लगे थे।

महमद अमी और सम्भार जहीर की पहली मुसाफात मुसीबी से इसी एनेअमी के जलमे में हुई। अपनी उन दिवसम्प मुसाफात के बारे में महमद अमी कहते हैं —

पुराने कबियों से सबब खनेबाके बहुत सय पीड़ निबब मुमते मुनन हम लोग उचता गय थे और हममें से कुछ लोग अपनी टाँपें सीधी करने के लिए और पाई सी ताजी हवा पान के लिए उन परित्राऊ बाताबरन से निकलकर बाहर बरामदे में आ गये थे। मुझे याद आता है कि उन बरत मेरे बोस्ट रपुपति सहाय किराऊ और मुंघी बयानरायन निगम नी बहू मीजुब थे। उस बरत मुंघी बयानरायन निगम के साथ मेरी पहले पहल मुसाफात हुई थी और हम लोग अंगारे नाम की अपनी किताब के बारे में बात कर रहे थे। शाम हो चली थी और म्योर सेम्पक कासेज के इसी के बरल्लों में करीब-करीब आवा मूरज उतर आया था। उसकी पीली पड़ी हुई किरपों हम लोगों के पैरों पर भाव रही थी और बढ़िया ठंडी हवा चल रही थी। उस बरत अचानक बरामदे की ओर से एक ऐसे बुबले-मठक सम्भन आते हुए दिखायी दिये जिनका कन्हा कुछ क्यादा संबा नहीं था लेकिन फिर भी वे जितने लंबे थे उसके मुताबिके में अपने बुबलेपम के कारण कुछ क्यादा लंबे मासम होत थे। उनके चेहरे से प्रसन्नता सलकती थी और आँखें कन्हापूर्व थीं और उनमें एक ऐसी कोमलता दिखायी गयी थी जो जीवन की समस्याओं पर परमीर बिचार करने और अनेक प्रकार के कन्हा सहने से उत्पन्न होती है। वे एक धरवाली और खुल पाजामा पहन हुए थे और उनकी गाँधी टोपी में से दोनो तरफ, माने और पीछे गर्दन पर निकले हुए कुछ लंबे बाल दिखायी

देते थे। उनकी बनी और बड़ी-बड़ी मूर्तों में काले बालों की अनिश्चित सपेक बाल ही क्यावा वे और उनका तीर-तरीका बहुत ही मझे आश्चर्यों का सा था। मेरे दोस्त रघुपतिप्रहाराज ने उनसे मेरा परिचय कराया। मुझे मालूम हुआ कि यही मुझे प्रेमचंद हैं। वे शूब मंडे में बुझकर बातें करते थे। और लोग शूब बुझे बिना से लुग हो-होकर उनकी बातें सुनते थे। उनके पीछे-सावे तीर-तरीकों का मुझ पर बहुत अच्छा असर पड़ा था। वे बहुत मजाकपसन्द आदमी थे और मीठे पर खीरन ही एक से एक बढ़कर मजेदार बात कहते थे और सिगरेट पीते थे। बसते हुए सूरज की पीली किरणों हम लोगों के पैरों पर खेल रही थीं। उस वक़्त मुझे स्वाभ में भी इस बात का खयाल नहीं होता था कि प्रेमचन्द जी के जीवन का सूर्य भी अब बहुत जल्दी अस्त होना चाहता है।

दो रोज़ बाद मे सब लोग प्रवृत्तिपीक लेखकों की आस्थासल का संगठन करने के विद्यसिद्धे में सज्जाव अहीर के मकान पर इकट्ठे हुए। मौलवी अब्दुल हफ और जोस मलीहाबादी भी मौजूब थे। मुंशी दयानरयन निगम तो बहुत उत्साहित न अनुभव कर रहे थे पर मुंशी प्रेमचन्द का मन उमंग से भर हुआ था और बंध के झगुट मैनिफेस्टो पर बसतलठ करते हुए मुंशीजी ने हँसकर कहा—

मैं तो छहटा बुद्धा आदमी और तुम लोग हो कि सरपत्त माग रहे हो! मैं कहाँ बीड सकता हूँ तुम्हारे साथ मेरा तो घुटना घुटना पूर जायेगा

हिन्दुस्तानी एकेडेमी का जलसा तो हो गया लेकिन हिन्दी और उर्दू को पाठ लाने का जो सपना मुंशीजी को उसमे बाँधे हुए था वह मूगबल की भाँति दूर से दूरतर सरकता जा रहा था और मुंशीजी को इसकी महरी मनोम्यया थी।

उसी पीड़ा म से ये शब्द निकले—

‘जलसा समाप्त हो जाने के बाद पत्रों में पृथक्पृथा के समर्पन में बार-बार लेख लिखे जा रहे हैं और यह सिद्ध किया जा रहा है कि उर्दू और हिन्दी अब असग-जलम रास्त पर चलकर एक दूसरे से इतनी दूर निकल गई हैं कि उनका मवीप आना असम्भव है और यह कि उनकी निकाने की कोसिध बनें ही भाषाओं की मटियामट कर वेगी। एकठाचारिषों की बार-बार चुनीसी दी जा रही है कि वे कोई ऐसी रचना करके बिगा दें जिसमें एकठा का आदर्श निमाया गया हो और वह किस्से कहानी की पुस्तक न हो बल्कि कोई एतिहासिक या शैतानिक या बार्देनिक या आलोचनात्मक इति हो। हम अपने पृथक्पृथाबादी भाइयों से बड़े मदद के साथ पूछेंगे कि अगर ऐसी कोई जवान मौजूद होनी ता हम संस्था की जरूरत ही नहीं पड़ती

यह गया साल मध्या रैर में सनीचर लेकर आया है रैर टिकते ही नहीं घर घर। जहाँ तो साहित्यिक आयोजन से माये-आय फिलते थे अब जहाँ देखा वहीं पहुँचि हुए हैं। कौन जाने यह कौन ही अदृश्य प्रेरणा है या उन्हें हर जगह खींच ले जाती है—मिल लो सबसे बेछ लो सब कुछ बाँट दो सबको जो कुछ एक जीवन की यातना में से पाया है सुख-दुःख अमूनक ज्ञान विवेक

या धायर बात इसल छोटी है, बस इतनी कि तबीयत उन जगहो म जान से भागती है जहाँ बस पूजा-पुजा है, या अपना तमाशा बनता है लेकिन जहाँ नयी पीढ है वहाँ जाने को तबीयत लुर ब लुर भागती है।

और फिर एक वयाश आकाशी भी लो है। कड़के दोनों इलाहाबाद म पड़ रहे हैं। घर में बस पति-पत्नी हैं कहीं जाने की राय बनी और दोनों जाने बच लड़े हुए।

जो लो बात रही हो गया साल मुंशीजी के रैर में सनीचर लेकर आया है।

जमी हिन्दोस्तानी एकेडमी के प्रकस से लीटे और बस रोज बार २६ बनबरी को इलाहाबाद में महिला-गल्प-लेखक सम्मेलन या जिसकी समानेबी सिबपनी देवी थीं। २८ को बनारस लीटे। ३१ को भागरे के लिए रवाना हो गये। अपने रोज भागरे पहुँचि। हरिहरमाय टम्बन के घर ठहरे। नाता-बास्ता करके छिन्ना और लाज बेसन गये। दिन में सेण्ट जॉन्स कालेज में उत्सव था। मुंशीजी को अमिनन्दनपत्र दिया गया। शाम को नागरी प्रचारिणी सभा के वार्षिक अधिेशन का समापनिल किया।

अपने दिन फतेहपुर सीकरी देखने की ठहरी और उसी रात इलाहाबाद के लिए रवाना हो गए।

यहाँ पर महादेवी बर्मा से मिलना कमी न मुक्ये। और घर आकर अपनी बापरी में टाँका महादेवी बर्मा से मिला और उनकी सुघरिल बातचीत स भी सुघ हुवा। उनका मधुर दीक-जीवन्य और उनकी निरलस हँसी बड़ी योहक है।

पत्नी अपने भाई के साथ रचना चाहती थी। उनको वही छोड़कर मुंशीजी उसी रोज बनारस चले गये। मूना घर काटे जाता था।

ऐसे ही कमी पत्नी को इलाहाबाद छोड़ जाने पर मुंशीजी ने एक रोज उदयाकर, बहुत बिम होकर उन्हें उलाहना देत हुए लिखा था—

मैं तुम्हें छोड़कर कहीं आया। मपर यहाँ तुम्हारे बिना मून-मूना लप रहा है। क्या कहीं तुम्हारी बहन की बात कैसे ब मनता। न मानने पर तुम्हें भी बुघ लगता। जिस समय पर तुम्हें उन्होंने रीका, मैं भी मसोसकर रह गया।

बेते थे। उनकी पत्नी और बड़ी-बड़ी मूर्छों में काले बालों की बनिस्वत मधेय बाळ ही क्याबा वे और उनका तीर-तरीका बहुत ही मऊ आवमियों का सा था। मेरे बोम्ब रबुपतिसहायकों ने उनसे मेरा परिचय कराया। मुझ मालूम हुआ कि यही मुंशी प्रेमचन्द हैं। वे खूब मजे में कुककर बातें करते थे। और खोम खूब खुके विक से खुप हो-होकर उनकी बातें सुनते थे। उनके सीप-सावे तीर-तरीकों का मुझ पर बहुत अच्छा असर पड़ा था। वे बहुत मजाकपसन्द आवमी थे और मीके पर फीरल ही एक स एक बड़कर मजेदार बात कहते थे और सिगरेट पीते थे। बरुते हुए मूरख की पीली किरबों हम खोवों के पीरों पर खेळ रही थी। उस वकत मुझे ख्याब में भी इस बात का ख्यास नहीं होता था कि प्रेमचन्द जी के जीवन का मूर्य भी अब बहुत अस्वी अस्त होता जाहता है।

वो रोड बाव से सब खोप प्रगतिशील लेखकों की आन्दोलन का संगठन करने के सिद्धिसे में सज्जाव खहीर के मकान पर इक्टूठा हुए। मीकनी अम्बुड हक और खोप मसीहाबादी भी मीजूब थे। मुंशी दयानराम निमम ठी बहुत उत्साहित न अनुभव कर रहे थे पर मुंशी प्रेमचन्द का मन उमंग से भरा हुआ था और संप के इापट मीनिफेस्टो पर इस्तकत करते हुए मुंशीजी ने हँसकर कहा —

मैं ती ख्हर बुद्धा आदमी और तुम खीग हो कि सरपट भाग रहे हो। मैं कहाँ बीड़ सख्या हूँ तुम्हारे खब मेरा ता बुटना बुटना फूट जायेगा

हिन्दुस्तानी एकेडेमी का अकता ठो हो गया लेकिन हिन्दी और उखू को पास खाने का जो सपना मुंशीजी को उससे बांधे हुए था वह मुकबल की भांति दूर स दूरतर सरख्या जा रहा था और मुंशीजी को इसकी पहरी भनोख्यता थी।

उनी पीड़ा में से ये द्रष्ट निकले —

'अकता समाप्त हो जाने के बाव पत्रों में वृषकता के समर्पन में बार-बार लेख लिखे जा रहे हैं और यह सिद्ध किया जा रहा है कि उर्दु और हिन्दी अब अलग-अलग रास्ते पर चलकर एक दूसरे से इतनी दूर निकल गई हैं कि उनका समीप जाना अमम्भव है और यह कि उनको मिलाने की कोशिश बीनों ही भापाकों को मटियामट कर दगी। एकतावादियों को बार-बार खुनीली बी जा रही है कि न कोई ऐनी रचना करके निपा बें जिसमें एकता का आदर्श निमाया गया हो और वह निस्स-कहानी की पुस्तक न हो बकि कोई ऐतिहासिक या बैज्ञानिक या दार्शनिक या आत्मीयनारमक इति हो। हम अपने वृषकतावादी भाइयों स बड़े अरब के साथ पूछें कि अगर ऐनी कोई ख्याल मीजूब होती तो हम संस्था की अकता ही क्यों पढ़ती

यह नया साल बज्जल पीर में सनीबर लेकर आया है। पीर टिकठ ही नहीं पर पर। वहाँ तो साहित्यिक आजीवन से भाये-भाप फिरते व अब पहाँ देखा नहीं पहुँचि हुए हैं। वीन जाने वह कौन सी अदुम्य प्रेरणा है जो उन्हें हर बयह लीब के घाटी है—मिल मो सबसे बेद लो सब कुछ बाँट दो सबको जो कुछ एक जीवन् की मातना में से पाया है कुछ-कुन मनुष्य ज्ञान विवेक

या धामद बात इसल छोटी है, बस इतनी कि लबीरत उन जगहा मे जान से भागती है जहाँ बस पूजा-पुर्जया है या अपना समाया बनता है, लेकिन जहाँ बनी पीब है वहाँ जाने को लबीरत खुद व खुद भागती है।

और फिर अब यथावा आबादी भी था है। लफ्फे दोनों इलाहाबाद म पढ़ रहे हैं। पर में बय प्रति-पत्नी है वहाँ जाने को पय बनी और दोनों बने पठ सके हुए।

जो भी बात रही हो, नवा साल मुंशीजी के पीर में सनीबर लेकर आया है। अभी हिन्दोस्तानी एकेडमी के प्रकृष से लौटे और इस रोज बार २६ अबबटी को इलाहाबाद में महिसल-मस्य-खेबक सम्मेलन का बिसकी समानेनी सिबराती देवी थीं। २८ को बनारस लौटे। ३१ को आगरे के लिए रवाना ही गये। अगले रोज आगरे पहुँचि। हरिहरनाम टप्पन के घर ठहरे। नास्ता-बास्ता करके फिला और ठाम देलने गय। दिन में सेन्ट बाम्ब कालेज में उत्सव था। मुंशीजी को अमिनन्दनपत्र दिया गया। शाम को गायरी प्रचारिणी सना के बापिक अचि बैचन का सभापतित्व दिया।

अगले दिन कोहपुर लीकरी देलने की ल्हरी और उठी पय इलाहाबाद के लिए रवाना हो गए।

यहाँ पर महादेवी बर्मा से मिलना कभी न भूलते। और घर आकर अपनी खायरी में टाँका, महादेवी बर्मा से मिलना और उनकी सुगंधित बाउर्जीय से भी खुश हुआ। उनका मधुर शील-मीठस्य और उनकी निःछल हँसी बड़ी मोहक है।

पत्नी अपने माई के साथ रुकना चाहती थी। उनको बहीं छोड़कर मुंशीजी उठी रोज बनागम चल गय। मूना घर काटे काठा था।

ऐसे ही कभी पत्नी को इलाहाबाद छोड़ जाने पर मुंशीजी न एक रोज उकठाकर, बहुत निभ होकर उन्हें उलाहना देते हुए लिखा था—

मैं तुम्हें छोड़कर जानी जाता। मगर यहाँ तुम्हारे बिना मूना-मूना लग रहा है। क्या कर्तुं तुम्हारी बहन की बात कैंसे न मानता। न मानन पर तुम्हें भी कुछ लगता। बिस समय पर तुम्हें उल्लेखि रोका, मैं भी बर्सासकर रह गया।

देते थे। उनकी बनी बनी बड़ी-बड़ी मूर्तों में काले बालों की बनिस्बत सखेय बाल ही क्या था वे और उनका ठीर-ठीरका बहुत ही भले भावनों का सा था। मेरे दोस्त रघुपतिसहामन्त्र ने उनसे मेरा परिचय कराया। मुझे भासम हुआ कि यही मुझे प्रेमचन्द हैं। वे कुछ मजे में चुम्बक बालें करते थे। और लोग खुब खुसे दिल से खुब हो-होकर उनकी बातें सुनते थे। उनके सीधे-साधे ठीर-ठीरकों का मुस पर बहुत अच्छा असर पड़ा था। वे बहुत मन्त्राकपसन्द आदमी थे और नीके पर पीरन ही एक से एक बढ़कर मन्त्रेदार बात कहते थे और सिबरेट पीते थे। बसते हुए मूरत की पीली किरणें हम लोगों के पैरों पर खेस रही थीं। उस वकत मुझे ख्याल में भी इस बात का ख्याल नहीं होता था कि प्रेमचन्द भी के जीवन का मूर्त भी अब बहुत अच्छी मस्त होना चाहता है।

दो रोख बाद में सब लोग प्रपतिधील सेलकों की आम्बोसन का समलन करने के सिमसिधे में सग्गार बाहिर के मकान पर इकट्ठे हुए। मीसबी अब्दुल हक और जीस मलीहाबादी भी मौजूद थे। मुझे ख्यानचयन निगम तो बहुत उरसाहित न अनुभव कर रहे थे पर मुझे प्रेमचन्द का मत उमंग से मरा हुआ था और संप के डापट मैनिफेस्टो पर बसखत करते हुए मुंशीजी ने हँसकर कहा —

मैं तो ठहरा बुद्धा आदमी और तुम लोग हो कि सरपट भाग रहे हो। मैं कहाँ बीड़ सकता हूँ तुम्हारे साथ मेरा तो चुलना बुलना पूट जायेगा

हिन्दुस्तानी एकेडेमी का जलसा तो हो गया लेकिन हिन्दी और उर्दू को पाठ साने का जो सपना मुंशीजी को उससे बाँधे हुए था वह भुगजल की मति दूर से दूरतर सरकता जा रहा था और मुंशीजी को इसकी गहरी मनोष्यया थी।

उसी पीड़ा में से ये शब्द निकले —

‘अससा समाप्त हो जाने के बाद पत्रों में पूषकता के समर्पन में बार-बार सेल सिधे जा रहे हैं और यह सिध त्रिया जा रहा है कि उर्दू और हिन्दी अब अलग-अलग रास्ते पर चलकर एक दूसरे से दूरी दूर निकल गई हैं कि उनका समीप आना असम्भव है और यह कि उनको मिळाने की काशिद दोनों ही भाषाओं को मटियामेट कर देनी। एफ्टाबादियों को बार-बार चुनीदी बी जा रही है कि वे कोई एती रचना बरक दिया दें जिसमें एफ्टा का आरख निमाया गया हो और वह निस्म-कहानी की पुस्तक न हो बल्कि कोई एतिहासिक या वैज्ञानिक या बार्थनिक या आलोचनात्मक इति ही। हम अपने पूषकताबादी भाइयों से बड़े अरख के साथ पूछेंगे कि अगर एसी कोई खदान मौजूद होती तो हम मस्या की उरख्त ही नहीं पढ़ती।

वह नया साल अच्छा वर में मनीषर लेकर आया है वर टिकते ही नहीं वर वर। वही तो साहित्यिक मानोमन से माये-माप टिकते व अब वहाँ बैठा वहीं पहुँचे हुए है। कौन जाने वह कौन सी अदृश्य प्ररपा है या उन्हें हर जगह तीव्र से चापी है— बिल को सबसे देख तो सब कुछ बात दो सबको जो कुछ एक जीवन की यात्रा में से पाया है सुख-दुःख अनुभव मान विवेक

या पाप कात्र इसमें छोटी है अब इतनी कि तबीयत उन जगहा म जाने से मापती है जहाँ सब पूजा-पुर्बीया है या अपना तमाशा बनता है लेकिन वहाँ मनी पीब है वहाँ जाने को तबीयत कुछ व कुछ मापती है।

और फिर अब रमाश आजादी भी तो है। लड़क दोनों इलाहाबाद म पढ़ रहे हैं। वर में अब पत्रि-पत्नी है वहाँ जाने की राय बनी और दोनों जने बल लड़े हुए।

जो भी बात रही हो नया साल मुर्गीनी के वर में मनीषर लेकर आया है। अभी हिन्दोस्तानी एकेडमी के जलस से लौटे और दस रोज बाद २६ जनवरी को इलाहाबाद में महिला-अल्प-संख्यक सम्मेलन का विमर्शी समानवी शिबिरावी देवी थी। २८ को बनारस लौटे। ३१ को आपरे के लिए रवाना हो गये। अगले रोज आपरे पहुँचे। हृदिरापा टण्डन के घर चहरे। मास्ता-बास्ता करके क्रिया और काम देखने गये। दिन में सेम्ट जाम्ब बाटेन म ठल्ल व। मुर्गीनी की अमिनन्दनरन दिया गया। याम को नागरी प्रचारिणी सभा के बादिन मदि-वेद्यन का उभापत्रिल किया।

अगले दिन फ्लोहपुर सीकरी बेगने की चहरी और उसी रात्र इलाहाबाद के लिए रवाना हो गए।

यहाँ पर महारेवी बर्मा से मिलना कमी न भूलते। और वर आकर बानी बायरी में टीका, महारेवी बर्मा से मिलता और उनकी कुसन्धि बापनीउ से भी कुछ हुआ। उनका मधुर वीत-वीक्य और उनकी निरपल हौवी बर्मा मंथक है।

पत्नी अगले माई के माय बनना चाहती थी। उदरके वही छोड़कर मुर्गीनी उसी रोज बनारस चल गये। मूना वर वाटे खाता था।

ऐसे ही कमी पत्नी की इलाहाबाद छोड़ जाने पर मंजीनी ने एक रोज उजडाकर, बहुत निद्र होकर उन्हें उलाहता देते हुए किया था—

मैं तुम्हें छोड़कर जायी आया। मगर यहाँ तुम्हारे बिना मूना-मूना लय रहा है। क्या कहीं तुम्हारी बहन की बात केंसे न मानता। न मानने पर तुम्हें भी कुछ लपता। बिश समय पर तुम्हें उम्होंने रीका में की मसावकर रह पा।

देते थे। उनकी बनी और बड़ी-बड़ी मूर्तों में काले बालों की बगिचान सफ़ेद बाल ही क्या था वे और उनका ठीर-ठरीका बहुत ही मजे जादुियों का था। मेरे दोस्त रघुपतिसहायजी ने उनसे मेरा परिचय कराया। मुझे मालूम हुआ कि यही मुंशी प्रेमचंद हैं। वे कुछ मजे में खुलकर बातें करते थे। और लोग खूब खाले बिल से खुप हो-होकर उनकी बातें सुनते थे। उनके सीबे-साबे ठीर-ठरीकों का भुस पर बहुत अच्छा असर पड़ा था। वे बहुत मञ्जरुपसन्द आदमी थे और नीके पर कौरन ही एक स एक बढ़कर मजेदार बात कहते थे और सियरेट पीते थे। डम्पते हुए मूरज की पीछी किरणें हम लोगों के पीरों पर खेल रही थी। उस वक़्त मुझे इबाब में भी इस बात का ख्याल नहीं होता था कि प्रेमचन्द जी के जीवन का सूर्य भी अब बहुत अन्दी अस्त होना चाहता है।

दो रोज़ बाद वे सब लोग प्रगतिशील लेखकों की जाम्बोजम का संगठन करने के लिलसिले में सज्जाव जहीर के मकान पर इकट्ठा हुए। मौलवी अब्दुल हक और पोष मसीहाबादी भी मौजूद थे। मुंशी बमानरायन निगम तो बहुत उत्साहित न अनुभव कर रहे थे पर मुंशी प्रेमचन्द का मन उमंग से भर हुआ था और संभ के ड्रापट मैनिफेस्टो पर हस्तखत करते हुए मुंशीजी ने हुंघकर कहा —

मैं तो ठहरा बूढ़ा आदमी और तुम लोग हो कि सरपट भाग रहे हो। मैं कहीं बीड़ सक्ता हूँ तुम्हारे साथ मेरा तो बूटना बूटना फूट जायेगा

हिन्दुस्तानी एकेडेमी का जल्सा तो हो गया लेकिन हिन्दी और उर्दू को पास लाने का जो सपना मुंशीजी को उससे बीबे हुए था वह मूनमक की भीति डूर से डूरतर सरकता जा रहा था और मुंशीजी को इसकी पहरी मनीम्बसा थी।

उसी पीड़ा में वे य क्षम निकले —

‘जल्सा समाप्त हो जाने के बाद पर्थों में पूषकटा के समर्भन में बार-बार लेल लिले जा रहे हैं और यह सिख किया जा रहा है कि उर्दू और हिन्दी अब असम-अलग रास्ते पर चलकर एक दूसरे से इसकी डूर निकल गई हैं कि उनका समीप आना असम्भव है और यह कि उनको मिलाने की कोशिस दोनों ही भाषाओं का मठिमामट कर बनी। एकतावाचियों को बार-बार चुनौती दी जा रही है कि वे काई ऐसी रचना करके दिना हैं जिसमें एकता का आदर्श निमाया गया हो और वह किस्म क्हाली की पुस्तक न हो बल्कि कोई ऐतिहासिक या बौजानिक या बार्थनिक या जामोचनात्मक कृति हो। हम अपने पूषकटावादी भाइयों स बड़े अरब के साथ पूछें कि अगर ऐनी कोई जवान मौजूद होती तो हम संस्था की जबरन ही नहीं पढ़ती



यह गया साल मच्छा पौर में सनीचर लेकर आया है, पौर टिपटे ही नहीं घर पर। कहीं तो साहित्यिक आयोजन से माने-भावे फिरते थे अब वहाँ देखा वही पहुँचे हुए हैं। कौन जाने वह कौन सी मनुष्य प्रणया है जो उन्हें हर मनुष्य चीज से बाँधी है—मिल लो सबसे देस सा सब कुछ बाँट लो सबको जो कुछ एक जीवन की वातना में से पाया है सुख-दुःख अनुभव आम विवेक

या धामय बाव इसल छोटी है, बस इतनी कि तबीयत उम बमहो में जाने से भागती है जहाँ बस पूजा-पुजैया है या अपना ठमाजा बनता है, लेकिन वहाँ नहीं पीप है वहाँ जाने को तबीयत खुद न पुर भागती है।

और फिर अब स्यादा आजादी की तो है। लड़के दोनों इलाहाबाद में पढ़ रहे हैं। घर में बस पति-पत्नी हैं, कहीं जाने की राय बनी और दोनों जाने चल बढ़े हुए।

जो भी बात रही हो गया साल मुँचीजी के पौर में सनीचर लेकर आया है। अभी हिन्दोस्तानी एकेडेमी के जलसे से लौटे और बस रोड बाव २६ जनवरी को इलाहाबाद में महिला-गल्प-लेखक सम्मेलन या जिसकी समानेनी छिबराजी देवी थी। २८ को बनारस लौटे। ३१ को बावरे के लिए रवाना हो गये। मगले रोड भापरे पहुँचे। हरिहरमाव टण्डन के घर ठहरे। नास्ता-बास्ता करके क्रिडा और ताज देखने गये। दिन में सेल्ट चाम्प कालेज में उत्सव था। मुँचीजी को अभिनन्दनपत्र दिया गया। आम को नापरी प्रचारिणी सभा के वार्षिक अभि-वेदान का समापनित्व किया।

अगले दिन फतेहपुर सीकरी देखने की ठहरी और उषी रात इलाहाबाद के लिए रवाना हो गए।

यहाँ पर महादेवी बर्मा से मिलना कमी न भूझते। और घर माकर अपनी कामरी में टाँका, महादेवी बर्मा से मिला और उनकी सुशक्त बातचीत से जो खुश हुआ। उनका मधुर सीक-सौजम्य और उनकी निरसल हँसी बड़ी मोहक है।

पत्नी अपने माई के साथ रुकना चाहती थी। उनको बड़ी छोड़कर मुँचीजी उषी रोड बनारस चले गये। सूना घर काटे जाया था।

ऐसे ही कमी पत्नी को इलाहाबाद छोड़ जाने पर मुँचीजी ने एक रोड उभलाकर, बहुत शिम होकर उन्हें सजाहमा बेते हुए लिखा था —

मैं तुम्हें छोड़कर काँची आया। मगर यहाँ तुम्हारे बिना सूना-सूना कम रहा है। क्या कहीं तुम्हारी बहन की बात कँठे न मानता। न मानने पर तुम्हें भी बुरा समता। जिस समय पर तुम्हें जम्हँनि रोका, मैं भी मसोसकर रह गया।

तुम तो अपनी बहुत के साथ वहाँ खुश होपी अगर मैं वहाँ परीखान हूँ — जैसे एक पौंसके में दो पत्नी रह रहे हों और उनमें एक के न रहने पर एक परेशान हो। तुम्हारा यही न्याय है कि तुम वहाँ मौन करो और मैं तुम्हारे नाम की माफा फेरे। तुम मेरे पाम रखी हो तो मैं भरसक कहीं बाहर जाने का नाम नहीं लेता तुम जाने का नाम नहीं लेती

मगर काम की भीड़ हर मूनेपन को मार देती है। १८ फरवरी को उन्होंने अपनी बायरी में टीका —

'हार मिठा कि रानी आ रही है और मैं उन्हें स्टेपन पर मिला। बिन का काम छठम करने के बाद मैं जागा तो एकाएक लगा कि वह कहीं रात की माफ़ी से न धापी हों। मैं बाह्र बजे रात पैदल ही भापा-भापा स्टेपन गया — सबारी नहीं मिली — पर रानी नहीं आयी।

वह अपने रोज़ आयी और उसने अपने रोज़ मुंभीजी खतरे ही इमाहाबाद के लिए रवाना हो गये — मुईम अखिरपन कामेज के जकड़े में शरीक होने के लिए। दस बजे पहुँचा। हिन्दुस्तानी एकडेमी गया। दोस्तों से मिठा। तीन बजे मिस्टर सग्बाद लहीर के यहाँ पहुँचा मगर वह युनिवर्सिटी से छीटे न थे। पाँच बजे शाम में युईंग कामेज पहुँचा। बड़ी खानदार इमारत है — जमुना किनारे कीठी लूबमूरत नजर आती है। बड़े लम्बे चौड़े मैदान उससे भरे हुए हैं। जकसा मार्टन पार्टी के बाद सात बजे शाम चुक हुआ। पीरेख्र जी बाबूयम सबसेना बोले। मैंने भी मजाकिया अंशर में कुछ कहा। सत्यजीवन बर्मा के साथ स्टेपन सीट जाया और दो बजे रात बनारस पहुँच गया।

इस खतरवाजी की बजह धायर यह भी कि अगले रोज़ बनारस में क्षत्रिय कायेज में एक कहानी प्रतिपोमिता थी। कोई बस कहानियाँ पढ़ी गयीं मगर उनमें से एक भी उल्लेखनीय नहीं। सब में यही यौन-यौन

२२ २३ को पूर्णिया में बिहार प्रान्तीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन का अधिवेशन हो रहा था। उसके लिए मुंजीजी २२ को साढ़े ग्यारह बजे टिन रवाना हुए। बीबीस घंटे का बहुत खंडा और उठानेवाला सफ़र करके अगले दिन बाह्र बजे पहुँच और मुसफ़िह से आठ-नी घंटे छहकर फिर उमी बीबीस घंटे के सफ़र के लिए रवाना ही गये! यह ही क्या गया है मुंजीजी को? मुंजीजी जो इतने यात्रा-भीड़ व यक्ययक ऐसे यात्रा-मूर बीड़े ही गये।

हिन्दुस्तानी और प्रगतिशील साहित्य का भूत मबार है आजकल सर पर। जहाँ तिम मंग से अपनी बात कह सकें

भापा की एण्टा का बरत बनाकर एक मयी अन्ध का आबाहन

जैसा कि पूनिया से लौटकर उन्होंने लिखा —

● कबिता म अयर जागृति पैदा करने की शक्ति नहीं है तो वह बेजान है। आप हालात बाँधें या तम्बी के तार या बुलबुल और इफ्तल उसम जीवन को तड़पान वाली शक्ति होनी चाहिए। प्रेमिकाओं के सामने बैठकर भाँसू बहाने का यह जमाना नहीं है। उस व्यापार में हमने कई घरियाँ या दी बिरह का रोना रोत-रोत हम कही के न रहे। अब हम एस कवि चाहिए जो हज़ारों इज्बाल की तरह हमारी मरी हुई हृदयों में जान डालें। वेलिए, इस कवि ने सेनित को युवा के सामने के आकर क्या करियाह करायी है और उसका युवा पर इतना अमर होना है कि वह अपने करिस्तों को हुकम देता है —

उड़ता मैरी दुनिया के शरीरों को जगा बा  
 काठे' उमर के दरो-बीकार हिम्मा से।  
 परमाओ मुलामों का कहु मोझे यकी से  
 कुंजिरक करोमाया' को पाही मे कड़ा से।  
 मुक्यानिये' जमदूर का आवा है जमाना,  
 या मकन कोहन तुमकी मकर भाये मिटा से।  
 बिस बेठ से देहर्मा' को मयस्सर नहीं रोझी  
 उस बेठ के हर छोसए संदुम को बला से।  
 क्यों घासिको' मसलुक" मे हायक रहे परे,  
 बीराने" कमीसा को कमीसा से उठ से। ●

१ महक २ बिड़ा ३ लुब्ध ४ धिबा ५ ६ प्रका-उम्य ७ पुषमा  
 ८ किसान ९ देहूँ की बाल १० सप्टा ११ सुष्टि १२ मडपारी १३ पिरक  
 मंदिर-मसजिद

पूजिया से लौटते ही बस रोड के अन्दर दिल्ली का प्रोग्राम बन गया। जीनेन्द्र बहुत जोर देकर बुझा रहे थे — हिन्दुस्तानी समाज कायम करने के सिद्धांतों में। और वह एक ऐसी चीज थी जिसके लिए मुंशीजी दिल्ली को क्या टिम्बकट्ट तक बीड़ते चले जा सकते थे।

होली जैसे मिलने का दिन है मेक-मिलाप का दिन। हिन्दी और उर्दू के मक-मिलाप के लिए, समय के लिए, इससे अच्छा दिन और मौन हो सकता था।

सिद्धान्त मुंशीजी मार्च की चौबीस तारीख को सियालपुरा एक्सप्रेस से दिल्ली के लिए रवाना हो गये — रास्ते में पकने के लिए हजरत राशिद-उल-खैरी की किताबों से भी। राशिद उल-खैरी बहुत कुछ मुंशीजी के अपने रंग और मिजाज के लिखने-वाले थे बड़े लिखनेवाले थे और इसी महीने उनका देहान्त हुआ था। उन पर कुछ लिखना है।

होली का दिन दरियावाज में जीनेन्द्र के मकान पर गुजर — प्रेमचन्द जी नीम की छींक से बाँध कुरेवते हुए घुप में साट पर बैठे थे। नास्ता हो चुका था और पूरी निरिचम्बता थी। बदन पर बोली के अलावा बस एक बलियान थी जिसमें उनकी दुबली और साक-सीली देह छिपती न थी। बस साढ़े गी का होना। ऐम ही समय होलीवालों का एक बस घर में अनायास घुस आया और बीसियों पिचकारियों की बार से और मुकाल से उस बस ने उनका ऐसा सम्मान किया कि एक बार तो प्रेमचन्द चौंक गये। पलक मारने में वह तो धिर से पाँच तक कई रंग के पानी से भीम चुके थे। हड़बड़ाकर उठे अग एक दने स्थिति पहचानी और फिर वह इहड़हा लगाया कि मुझे अब तक याद है। बोले — अरे भाई जीनेन्द्र हम तो मेहमान हैं!

लेकिन जब आगत टोपी ने मानेवाली टोमियों की ओर से मेहमान को किसी प्रकार का अभय का आवाहन नहीं दिया तो मुंशीजी ने कहा — तो फिर मौन बपड़े बदले। हम तो यही बैठते हैं साट पर, आये जिसका भी चाहे!

उसी रोड पाम को उहोंने आमिया मिस्त्रिया मे हिन्दुस्तानी समा का उद्घाटन किया। कायी अच्छी उपस्थिति थी। मुंशीजी के मन में बड़ा सन्तोष हुआ। अगले महीने उन्होंने हंग में लिखा—

‘हिन्दुस्तान मे गायन यह पहला मौका था कि ८ मार्च को देहली की आमिया मिस्त्रिया में देहली के उर्दू और हिन्दी के अमीबी और साहित्यकारों ने मिलकर एक हिन्दुस्तानी समा की बुनियाद डाली जिसका उद्देश्य यह होया कि वह दोनों साहित्यिकों को एक-दूसरे के समीप लाये उनके अदीबी में मूहब्बत हमदर्दी और एकता पैदा करे उन्हें एक दूसरे के बिचारों और भावों के जानने और समझने का मौका दे, और हिन्दुस्तानी भाषा का विकास का मायोजन करे। एक समय था जब इस्लाम और फन की इतनी उपनि और राजनीति में इनकी जापूति न होने पर भी आपस में बहुत कुछ मुहब्बत थी मगर जमाने ने कुछ ऐसा पकटा लाया कि हिन्दी हिन्दुओं की जवान हो गयी और उर्दू मुसलमानों की। हिन्दुओं ने उर्दू से मुंह मोड़ना शुरू किया मुसलमानों ने हिन्दी से। कलम-बकलम को कैम्प हो गये और दोनों जवाने और साहित्य राजनीति के चक्कर में पड़ गये।

हालांकि अदब को राजनीति से कोई संबंध नहीं उसका विषय तो ईस्लाम है और ईमान चाहू अपने भाषे पर कोई लिखत लपाये वह ईमान ही है, मगर यह राजनीति का घुम है और कोई उद्योग ऐसा नहीं जिस पर राजनीतिक संकीर्णता का रम न बढ़ाया जा सके। इस तरह दोनों जवाने अलग होयी जा रही हैं, और जिसस हम अपनी जवान में बेतकल्लफ बातचीत न कर सकें उनसे दिल् बनोंकर मिलेया। हिन्दी और उर्दू साहित्य बरकिस्मती से ऐसे जमाने से मुबरे जब साहित्य ने आम बिन्दगी मे नाटा तोड़-सा लिखा था और उनकी सारी ताकत बिरह और बिराप के बुझड़े रोने में कटयी थी या बहुत हुआ तो घरक की तारीफ की और दुनिया की अनित्यता पर फिनासफ़ी बजारी लेकिन दुनिया में जो साहित्य रीते-जागत है उन्होंने क्रीम की तारीख बनायी है, उनकी संस्कृति बनायी है। अमीब ही क्रीम का पचदसक होता है। उसका दिल् प्रेम की ज्योति से बरा होता है। उसम तास्सुब और तंजजमानी के लिए जगह नहीं होती

मुंशीजी के लिए यह केवल भाषा का शास्त्रीय प्रश्न नहीं है और न केवल साहित्य का यह राष्ट्र की एकता का प्रश्न है। जिस काम को राजनीति के बुरंवर नहीं कर सके, बसिक यों कहें कि जिस काम को राजनीति के बुरंवरों ने बिगाड़ने में कोई कसर नहीं उठा गयी उसको बनाने की यह एक कोशिस है जिसकी सफलता में न जाने कितनी मुक-धास्ति और बिचलता में न जाने कितना बिम्बंस और बिनाश टिपा हुआ है। इसीलिए तो मुंशीजी इत बीड के पीछे इस तरह पापल हैं—

एक काम जिसके लिए वह विशेषरूप से उपयुक्त हैं क्योंकि वह दुमापिए हैं और समझते हैं कि एक की बात दूसरे को समझा सकते हैं। यह एक बड़ा काम है राष्ट्र-निर्माणकारी काम जिसका बीड़ा मुंशीजी ने अपनी सीमित क्षमताओं से चिन्दगी के इस आखिरी दौर में उठाया है। भारतीय साहित्य परिषद् जबाब है उस शान्तीयता की भावना का जो जगह-जगह छिरे उठा रही है और हिन्दुस्तानी का आन्दोलन जबाब है भारतीय इतिहास और भारतीय समाज के उस अनोखे हिन्दू-मुस्लिम सबास का जिससे काबा काटकर निकल आना किसी तरह मुमकिन नहीं। चिन्दगी भर उसी भाषा उसी संस्कृति को मुंशीजी ने बरखा है लेकिन सतना धायद काजरी नहीं मुंडेर बड़कर गूहार अगाना भी कभी-कभी उखरी हो जाता है और इधर छाल दो बरस से मुंशीजी यही तो कर रहे हैं, पीड़े बले बात है कासे कौस यही एक बात कहने के लिए, जिसके बारे में पंडित बनारसीदास जलुबंदी को बतलाते हुए मुंशीजी ने ११ मार्च का लिखा —

इस बड़ती हुई खाई को कैसे पाटा जाय। इन राजनीतियों से कुछ भी उम्मीद करना बकार है। उनसे उदारमतस्क होने की आशा करना ही व्यर्थ है। सेनकों को ही जगुबई करनी होगी। और वे सच्चे से अधिक मित्र के रूप में जगुबई कर सकते हैं।

१ तारीख की रात को मुंशीजी बनारस लौटे तो इकाहाबाद से आया हुआ सख्त जहीर का सब उनको राह देखा रहा था। अखनक में कांग्रेस अधिवेशन के ही अबसर पर, प्रगतिशील श्रेणिक सम्मेलन करने का प्रस्ताव था और उसका समापनित्व करने के लिए मुंशीजी से अनुरोध किया गया था।

मुंशीजी ने लिखा —

●समापनित्व की बात मैं इसके योग्य नहीं। तमताबय नहीं कहता मैं अपने में कमजोरी पाता हूँ। मिस्टर कर्हूपासास मुंशी मूमसे बेहतर होंगे या डाक्टर आकिर हुमत। पंडित जवाहरलाल मेहरू तो बड़े व्यस्त होंगे नहीं वे एकत्र उपयुक्त होंगे। इस अबसर पर सभी राजनीति के मस में बुर होंगे साहित्य से धायद ही किमी को दिलचस्पी हो। लेकिन हमें कुछ न कुछ तो करना है। अगर जवाहरलाल ने दिग्दर्शी की तो अधिवेशन सफल ही जायगा।

धरे पास इस बक्त भी समापनित्व के लिए जो जगह के निर्माण पड़े हैं — एक काहीर व हिन्दी-सम्मेलन का दूसरा हैदराबाद (यकन) की हिन्दी प्रचार समाज। मैं इनकार कर रहा हूँ पर वह जोय इसपर कर रहे हैं। कहीं-कहीं प्रसाद

करें। हमारी मस्यो में जो बाहर का आत्मी समापति बने तो क्या अच्छा है। मजदूरी बर्बा में तो हूँ ही। कुछ रोना लया।

और क्या किया। मुम जरा पण्डित अमरनाथ सा को ता आजमाओ। उन्हें बहुत साहित्य से दिलबस्पी भी है और गायक से समापति होना खीतरा कर लें।

पण्डित अमरनाथ सा की लाइवरी में बराबर स्थानीय भाषा की बैठकें होती थीं और किया जाता तो गायक बहु खोजी नी हो जाते। पर उन लोग को सबसे क्या मुंशीजी का नाम आता था और बहु इतनी माननी से मुंशीजी को छोड़ने के लिए तैयार न था। सज्जाद खीर ने फिर किया फिर फिर किया। आखिरकार १९ मार्च को मुंशीजी ने ख्याम होने हुए ख्याम दिया —

अगर हमारे लिए कोई योग्य समापति मही मिलता तो मुझे को रम लीजिए। मुनाफिक यही है कि मुझे पूरे का पूरा भाष्य किया पढ़ना मेरे भाष्य में आर किन समस्याओं पर बहस चाहते हैं इनका कुछ इगारा कर दीजिए। मैं तो इतना हूँ मेरा भाष्य अक्षर से ख्याम निराकार न हो। आज ही मिल दो ताकि वहाँ जाने से पहले तैयार कर लूँ।

भारतीय साहित्य परिषद् की बैठक १४ अप्रैल को बर्बा में होने की बात की खी की तरह मुंशीजी का इगारा था लेकिन फिर बहु बैठक स्थगित हो गयी और हिन्दी साहित्य सम्मेलन के नामपुर अधिवेशन के भाष्य-साथ २४ अप्रैल को हुई।

प्रगतिशील क्लब सम्मेलन ९ १० अप्रैल को था। खयल की ना हाकल की उसके बारे में कुछ खजाना खीर का ख्याम मुनिए —

● ख्यों-ख्यों काफ्लेस का दिन निकल आता हमारी खबरबूट बढ़ती जाती। ख्यों की कमी के कारण हम अपने प्रतिनिधियों को ठहराने और उनके खान-पीने का खर्च भी न कर सकते थे। कुछ को हमने अपने मित्रों और खिखारों के यहाँ ठहराने की खबरखा की थी। बहुत से काफ्लेस के खीम में आकर टिक गये थे वहाँ एक खोपड़ी खन्द खपा के खिराय पर मिक जाती थी और खाना सस्ता था। कुछ पतिखिटी क होस्तक क खाली कमरो में ठहरे

बाहर से जानेवाले ख्यों का स्वागत खेले स्टेसन पर करना भी हमारे खल का नहीं था। खीम-खार आत्मी आखिर क्या क्या करते ? तो भी खपनी काफ्लेस के प्रधान मुंशी खेमखन्ध को स्टेसन से खेन के लिए खान का खसला हमन किया था। महमूज खिती और खाम में खये हुए थे इसलिए खीर और खीन खय किया कि हम खेनों स्टेसन पर खारखे। वहीं से खोड़ी खेर के लिए हमने एक खार भी खीम की थी।

खुबह का समय था। गाड़ी नी बने के खयमग जाने की थी। हमने खोखा कि साइं आठ बने खर से खाना खीम। हम आठ बने के खरीब बैठे खय की खे से कि

घर में एक ठगि के बाहिल होने की आनाज भायी और साथ ही साथ एक नीकर मे आकर मुझे इतिहा की कि बाहर कोई साहब मुझे बुला रहे हैं। मैं बाहर निकला तो देला प्रेमचन्द जी

लेकिन इससे पहले कि मैं कुछ कहूँ प्रेमचन्द हँसते हुए बोले—मार्द, तुम्हारा घर बड़ी मुमकिल से मिला। बड़ी बेर से इधर-उधर चक्कर लगा रहे हैं।

इतने में रबीरा भी बाहर निकल आयी और हम दोनों अपनी सजाई देने लगे। पता चला कि हमें ट्रेन के समय की सूचना प्रसन्न मिली थी। पहली अग्रील से बकन बरस गया। लेकिन अब उल्टे प्रेमचन्द जी अपनी सफ़ाई देने लगे—हो मुझे चाहिए था कि चखने से पहले तुम लोगों को तार भेज देता लेकिन मैंने सोचा क्या खबर है अगर स्टेशन पर कोई न मिला तो लौटा लेकर सीधा तुम्हारे घर चला आऊँगा

और मैं दिल मे सोच रहा था कि हमारे सम्पत्तियों के समापतियों का बड़ा धानदार स्वागत किया जाता है उन्हें ज्येष्ठपद पर हार पहनाये जाते हैं उनके बुझस निकलते हैं और उनकी जय-जयकार होती है और एक हमारे समापति मुझे प्रेमचन्द हैं कि कुछ अपनी जेब से रस का टिकट खरीदकर चुपके से आ गये हैं स्टेशन पर स्वागत करनेवाला तो क्या राह बतानेवाला भी उन्हें कोई न मिला। एक मामूली से ठगि पर बैठकर कुछ ही बड़ी बैठकस्तुफी से सम्पत्त के मुंतजिनों के घर चले आये हैं और सिकापठ करना तो दूर की बात है उनके माथ पर एक बल नहीं पड़ा ●

नास्ते-नास्ते के बाद जहीर ने उनके भापन के बारे में पूछा तो मुंशीजी ने निकालकर दे दिया और एक खीर का इहकहा समया। जहीर ने यहाँ-वहाँ उलट-पलटन देला और कहा—जबान तो आपकी जरा सजील हो गयी है।

मुंशीजी ने दुषारा इहकहा लगाया और कहा—मैंने कहा लाओ ऐसी जबान सिन्धू कि यह लौम भी पाद करें

और फिर जरा रककर—आखिर कायसब का बेला है।

इसमें एक नहीं कि बहु कासी परिष्ठ उर्दू थी जो गैर उर्दूवा लोगों के कम ही पस्के पड़ी होगी और ठीक ही था कि उन्होंने इसक लिए मुंशीजी की बचड़ी खबर ली।

अहमद अभी मज्जार जहीर, अशुक्त हक जोग मनीहाबारी किराण गोरख-पुरी एजाब हुमेन—इस तहरीक के मिसमिते में अब तक मुंशीजी का उठना बैठना बिट्टी-मनी इन्ही लोगों से हुई थी और साथ ही कुछ एना लयाक उनक दिल में बैठ गया था कि यह उर्दू लेखक का सम्पत्त होने जा रहा है। फिर



क्या या सुनीली प्राग्मी के रंग में डूबी हुई, परिष्कृत-परिष्कारित उर्धु में अपना अभिमापन तिगकर ले गये।

मगर बाँते जो नहीं वह बहन माया बहुत साऊ, बहुत सच्ची और बड़े जोष और बड़ी गर्मी के माप —

● माया साधन है माध्य नहीं।

निस्मदेह काव्य और साहित्य का उद्देश्य हमारी अनुभूतियों की तीव्रता को बढ़ाना है पर मनुष्य का जीवन केवल स्त्री-पुरुष प्रेम का जीवन नहीं है।

नीतिशास्त्र और साहित्यशास्त्र का लक्ष्य एक ही है — धबक उपदेश की विधि में अंतर है। नीतिशास्त्र तर्कों और उपदेशों के द्वारा बुद्धि और मन पर प्रभाव डालने का यत्न करता है साहित्य ने अपने लिए मानसिक धबकसाधों और भावों का क्षेत्र चुन लिया है

पुछने बमाने में ममात्र की लजाम सबहब के हाप में थी पुष्प-माप के ममले उसक साधन थे। अब साहित्य ने यह काम अपने जिम्मे ले लिया है और उसका साधन मौख्य प्रेम है ●

देह-दो धरे के इस व्याख्यात म साहित्य के सत्य गिब और सुन्दर टाप की ही व्याख्या की गयी थी पर यह प्रायिक या निरी वास्तवीय व्याख्या न थी — उसके एक-एक वाक्य के पीछे एक ही साहित्यकार का अपना जीवन-अनुभव बोल रहा था उसके एक-एक वाक्य में उसके हृदय का आवेग या उसकी तिष्ठत का बल था।

सौन्दर्य की खर्चा करते हुए सुनीली ने अपने ध्यानमग्न श्रोताओं से कहा —

प्रस्त यह है कि सौन्दर्य है क्या वस्तु? हमने मूरख का उगता और दूबना देखा है, अया और सग्या की सात्किमा देनी है सुन्दर सुगंधि भरे फूल देखे हैं, मीठी बोलिनी बोलनेवाली बिरिया देनी हैं, कमकलनिनादिनी नरिया देनी हैं, नाचते हुए मरन देने हैं — यही सौन्दर्य है। इन दुरीं को देखकर हमारा अंत-करण क्यों बिल उठता है? इसलिए कि इनमें रंगया ध्वनि का सामंजस्य है। बाजों का स्वरसाम्य बपवा मेक ही सपीठ की मोहकता का कारण है। हमारी रचना ही तर्कों व ममानुपात्र में संजीव से हुई है इसलिए हमारी मारना सवा उसी साम्य तथा सामंजस्य की खोज में रहती है

और अब जहाँ उसको यह भीब मिल जाती है बही रंग्ये मूरभुप उठते हैं, आँखें मीसी हो जाती हैं। बही रस है प्रकृति और पुरप का आत्किम आया की अउहीन भाषा में आत्मा और बिन्धारमा का ध्वनिक मिलन आत्मा की आत्म उपलक्ष्य और फिर बियोग और फिर माता उसी एव खोज में जिसे इन्बाक ने हम तख कहा है —

रन्धे ह्मात्त बोई बुज न्द तपित न यात्री  
 दर इन्बुम भारमीदन नंगस्त बावे पुर।  
 ब भाशिया न मदीनम जे सरखते परबाब  
 पहे बघाखे गुरुम गहे बर लवे जूमम।

(अगर तुझे जीवन के रहस्य की खोज है तो वह तुझे संनर्प के सिवा और कहीं नहीं मिलने का — सागर में जानर बिधाम करना मरी के लिए लम्बा की बात है। उठने में मुझे जो ध्यानत्व मिलता है उसके मारे मैं कभी बोरस में नहीं बैठता — कभी फूला की टहनियों पर तो कभी ली कितारे होता हूँ।)

इकबाल मुंषीजी को बेह्व पसन्द है। उन्हें जहाँ अपनी किसी बड़ी बात के लिए धनद की जरूरत होती है वह फ़ौरन इकबाल के पास दौड़ते हैं। अल्पे गति के अपने उची जीवनदर्शन को मुंषीजी ने इकबाल के शब्दों में मों रखा —

बू मौज साबे बजुदम जे सैक बेपरबास्त  
 गुमा मबर कि वरीं बहु साहिक जौयम।

(तरीक की भाँति मेरे जीवन की ली मी सहुरों की लख छ बपरबाह है यह न समझा कि मैं इस समुद्र में कितारा डूँड रहा हूँ।)

उहाम पीरप को बाणी बी —

बज वस्ते जुनुने मन बिजीक जूँ सैवे,  
 यजवई बकमल आवर, ऐ हिम्मते मरना।

(मेरे उम्मत हाथों के लिए बिजीक एक पटिया तिकार है। ऐ हिम्मते मरना क्यों न अपनी कमन्द में तु बुबा का ही फ़ौज काय ?)

और अपने स्थानिमान की ससकार मुनायी —

मदुम आबाबम जो बुना समूरम कि मर  
 मी तबां मुस्त यमक जामे पुकाणे दीपरी।

(मैं आबाब आरमी हूँ और इतना हवागार, इतना शैरतमंद हूँ कि मुझे इतरों के निपारे हुए पानी के एक प्याले से मारा जा सकता है — यानी कि मैं पानी भी बही पी सकता हूँ जिसे मैंने गुरु निपाछ हो।)

जीवन की कठोर पाठ्याणा म रहुरर गारी उन्न म जो कुछ मीजा जो कुछ पाया वह सब मुंषीजी ने निबोड़कर अपने इग ध्याप्यान में शस विपा — यकीन

जानिए, वह बड़ी ठंड सी-जाजिगा छाया थी जिसका मका उन्ही को मान्य है जो उस कलम में मौजूद थे।

यहाँ कहीं कोई छिपाव-बुराव नहीं साय-स्पेट नहीं वस निर्भीक शोषणा अपने जीवन के साथ की —

‘मुझे यह कहने में हिचक नहीं कि मैं और बीजा की तरह कला को भी उपयोगिता की तुला पर तोलता हूँ। हमें मुस्काना की कसीटी बरसनी होगी कला नाम था और अब भी है संकुचित रूप-पूजा का उसकी दृष्टि अभी इतनी व्यापक नहीं कि जीवन-समाम में सौन्दर्य का परमोत्कर्ष देल उसके लिए सौन्दर्य सुन्दर स्त्री में है — उस बच्चाप्राप्ती गरीब स्महीन स्त्री में नहीं जो बच्चे को लेन की मेड़ पर सुलाये पसीना बहा रही है। पर यह संकीर्ण दृष्टि का शोष है। अगर उसकी सौन्दर्य देखनेवाली दृष्टि में बिस्तृति या प्राय तो वह देखेगा कि रंगे हाठों और कपोलों की आड़ में अमर रूप-नर्तन और निपटुरता छिपी है तो इन मुख्याम हुए होठों और कुन्हलाये हुए गालों के जांगुमी में त्याग भडा और कष्ट सहिष्णुता है।

सत्य की सुन्दर की यह एक नयी सामंजस्यपूर्ण जीवन-संरक्षित दृष्टि है जिसकी ऐसी स्पष्ट व्याख्या साम्य पढ़नी बार इस देश की बरती पर हो रही थी।

और फिर अंत में वह बीजा जो छाया कभी मन में करकती थी लेकिन अब बरा नहीं करकती जीवन की उदात्त दृष्टि में उसे अपना शान्त समाहार मिल गया है —

जिन्हें धन-वैभव प्यार है साहित्य-मंदिर में उनके लिए स्थान नहीं है। यहाँ तो उन उपासकों की जकड़ है जिन्होंने सेवा को ही अपने जीवन की शार्बनता मान लिया हो जिनके दिल में दर्द की तड़प हो और मुहम्मद का जोश हो। अपनी इच्छा ही अपने ह्रास है। अगर हम सच्चे दिल से समाज की सेवा करेंगे तो मान, प्रतिष्ठा और प्रसिद्धि सभी हमारे पाँव चूमेंगी। फिर मान-प्रतिष्ठा की बिन्ता हमें क्यों सताये? और उसके न मिलने से हम निरास क्यों हों? सेवा में जो आध्यात्मिक आनन्द है वही हमारा पुरस्कार है — हमें समाज पर अपना बड़प्पन बताने उस पर रोब जमाने की हवास क्यों हो? घुसरो से स्वाश आचम के साथ रहने की इच्छा भी हमें क्यों सताये? इन कमीरों की श्रेणी में अपनी गिनती क्यों कराये? हम तो समाज का लक्ष्य लेकर चलनेवाले सिपाही हैं

रिश्तेदारों काय हाक में ठिक रहने को जमह न थी और सभाटा छाया हुआ था। यह एक नयी जमीन थी और एक नयी जवान।

पहली अग्रेष को मुंशीजी ने बयानरायन निगम को दिखाया —

मैंने तो इन्धर तीन माह से एक अज्ञात भी नहीं किया। वह जामिया में कलम सिखाया। इसके बाद लिखने की नीबट ही न आयी। हाँ मार, इन सवारतों के मारे परेशान हूँ। मैंने मिस्टर सन्जवब जहीर से बहुतेरा कहा भई, मुजाज करो मुझे अपना काम करने दो। मरर न माने। १० को कलमऊ, और काहीर में आर्यसमाज की बुकरी के साथ एक आर्यभाषा सम्मेलन हो रहा है वहाँ ११ को मुझे सम्मेलन का सन्ध बनना है और वहाँ जाऊँगा तो चार-पाँच दिन सम्म ही आर्ये। मैंने अपनी मजबूती किल दी है। मरर मान मये तो ठीक बर्ना वहाँ भी जाना ही पड़ेगा। मरर मुझे बोलन का सन्ध होता तो ऐसे प्योठे बड़ी बुधी से मंजूर कर लिया करता मगर यहाँ तो वह बुन ही नहीं। इसकिए जान बचाता फिरता हूँ। मुफ्त की परेशानी होती है और जिस काम से रोनी मिरुती है उसमें सम्मक पड़ता है। इरादा तो मही था कि कलमऊ से एक-दो रोज के लिए कानपुर जाऊँगा मगर अब तो कलमऊ से १ की रात को काहीर भागना पड़ेगा।”

निगम साहब बहुरसूरत कलमऊ पहुँच गये वे दोनों दोस्त मिल सिने निगम साहब ने मुंशीजी का वह सवारती बुतबा जिसन सब पर एक बाबू सा फेर दिया था उही बक्त 'जमाना' के लिए ले लिया और मुंशीजी १० की रात को काहीर चले गये।

काहीर में मुंशीजी का स्वागत बड़े जोर-शोर से हुआ। जमुतबारा बालों के मही उनको ठहराया गया। बीठियों कोय मिरुने आये दर्बनों मीठियों हुई और पहली बार मुंशीजी को इसका एहसास हुआ कि पंजाब में औरतों और मरों सबके बीच उनके पढ़नेबाल और उनके चाहनेबाले कितने हैं।

मुंशीजी ने अपने भाषण में सबसे पहले आर्यसमाज का बखान करते हुए कहा —

मैं तो आर्यसमाज को जितनी धार्मिक संस्था समझता हूँ उतनी तहजीबी (नास्तिक) संस्था भी समझता हूँ। बल्कि आप जमा करें तो मैं कहूँगा कि उसके तहजीबी कारणों उसके धार्मिक कारणों से स्वाभाविक और रौघन हैं।

हरिजनों के उद्धार में सबसे पहले आर्यसमाज ने बरम उठया। सङ्कियों की शिक्षा की जरूरत की सबसे पहले उसन समझा। बर्न-म्यबस्था का जमगत न मानकर कर्मगत तिष्ठ करने का सेहरा उसके घर है। जातिभेद-भाव और गान पान में एत-छात और बीके-भूम्हे की बाबाओं को मिटाने का दीन उही का प्राप्य है। यह टीक है कि इह्य समाज ने इस दिशा में पहल कदम ररा पर वह पोड़े

से अंग्रेजी पत्र-निम्नो तक ही रह गया। इन विचारों को जनता तक पहुँचाने का बीड़ा आर्यभट्ट ही ने उठवाया। अंधविश्वास और धर्म के नाम पर किये जाने वाले हठारों बनाबाधों की दृष्टि उभने लगी। हार्मिक युद्धों को उसमें स्थान न कर सका और अभी तक उसका जहरीला दुर्गन्ध उड़ उड़कर समाज को दूषित कर रहा है।

जिसके पितामह आर्यभट्ट ही का एक नहीं बल्की कयाकि उसमें बतते बतते कुछ नयी कृतियों से अपने को जगड़ लिया है। लेकिन वह बाप इस समय यहाँ कहने की नहीं है क्या फायदा। हर बात हर बस्त कहने की नहीं होती।

उसके उप-गर्कों में बेरो और बेदागो क गहन विषयों को जनसाधारण की सम्पत्ति बना दिया। जिन पर बिडामो और आधामों के कई-कई लीबरवाले वाले बने हुए थे। गुरुकुलायम को नया जन्म देकर आर्यभट्ट में शिक्षा को संपूर्ण बनाने का महान उद्योग किया है। संपूर्ण से मेरा आशय उस शिक्षा का है जो सद्यो पूर्ण है। जिसमें मन-बुद्धि चरित और देह सभी के विकास का बचपन मिले। वह शिक्षा जो सिर्फ बचक तक ही रह जाय बचुरी है। जिन संस्थाओं में बच्चों में समाज से पृथक् रहनेवाली मनोवृत्ति पैदा हुई का अमीर और यतीर के भेद को न सिर्फ अयम रख बल्कि और मजबूत करे, जहाँ पुरपार्य इतना कौमल बना दिया जाय कि उसमें मुपकितों का सामना करने की शक्ति न रह जाय जहाँ कला और संनन में कोई भेद न हो। उस शिक्षा का मैं अयम नहीं हूँ।

किर अपने असक विषय हिन्दी-उर्दू की एतदा पर आते हुए मुंसीजी ने कहा —

● मैं यहाँ हिन्दी भाषा की उत्पत्ति और विकास की कथा नहीं कहना चाहता वह सारी कथा भाषा-विज्ञान की शोधियों में लिखी हुई है। हमारे लिए इतना ही जानना काफी है कि आज हिन्दुस्तान के अन्ध-संनन करोड़ लोगों के सम्य व्यवहार और साहित्य की यही भाषा है। हाँ वह लिखा जाती है दो लिपियों में और उधी एतबार से हम उसे हिन्दी या उर्दू कहते हैं। पर है वह एक ही। बोलचाल में तो उसमें बहुत कथ फर्क है। हाँ लिखने में वह अर्क बड़ बाटा है।

भाषा के विकास में हमारी संस्कृति की छाप होती है और वहाँ संस्कृति में भेद होना वहाँ भाषा में भेद होना स्वाभाविक है। जिस भाषा का हम और आप व्यवहार कर रहे हैं वह हिन्दी प्रान्त की भाषा है। मुसलमानों ही ने हिन्दी प्रान्त की इत बौली को जिसको उस वक्त तक भाषा का पर न मिला था व्यवहार में लाकर उसे दरबार की भाषा बना दिया और हिन्दी के उभर और सावध

में भेद होना वहाँ भाषा में भेद होना स्वाभाविक है। जिस भाषा का हम और आप व्यवहार कर रहे हैं वह हिन्दी प्रान्त की भाषा है। मुसलमानों ही ने हिन्दी प्रान्त की इत बौली को जिसको उस वक्त तक भाषा का पर न मिला था व्यवहार में लाकर उसे दरबार की भाषा बना दिया और हिन्दी के उभर और सावध

बिना प्रार्थना में गये हिन्दी भाषा को साप सेठे पसे। उन्हीं के साथ बहु बलिष्ठ में पहुँची और उसका बचपन बलिष्ठ ही में गुजर आपको सामय भासूम होमा कि हिन्दी की सबसे पहली रचना सुखरा ने की है या मुन्कों से भी पहले लिखनी राम्यकाष्ठ में हुए—

जब मार देता मैं भर, निर की गयी चिन्ता सतर।  
 एसा नहीं कोई बजब रास्ते उस समझाय कर।  
 जब बलि से ओझल भया तड़पन लगा मेरा जिया  
 हक्का इलाही क्या किया आसू बसे भर छाम कर।  
 तँ वा हमारा मार है तुम पर हमारा प्यार है,  
 तुम बास्ती बिलियार है एक सब मिलो तुम आय कर।●

कौन कहेगा कि यह हिन्दी नहीं है मगर दुर्भाग्य से यह भीख बसी नहीं और बटनाओं का कुछ ऐसा बक बला कि एक ही भाँके पेट से पैंग होनेवाली ये दोनों बहूँ सौते बन यपीं। और यह सारी करमास प्रेर्टे बिबियम की है जिसने एक ही जवान के दो रूप मान लिये। इसमें भी उस वक्त कोई राजनीति काम कर रही थी या उस वक्त भी दोनों जवानों में काड़ी फूट आ गमा या यह हम नहीं कह सकते। लेकिन जिन हाथों ने यही की जवान के उस वक्त दो टुकड़े कर दिये उसने हमारी ज़मीनी बिन्दपी के दो टुकड़े कर दिये।

यह बरुपाब का रास्ता एक तरह सम्भूत और दूसरी तरह प्रवर्ती-बरबी की डूम-डूस का रास्ता गलत है, दोनों ही जवानों के लिए बास्तक है—

धानों तरह से इस बरुपीके का सबब सायद यही है कि हमारा पड़ा-सिखा समाज जनता से अलग-बलग होता जा रहा है और उसे इसकी खबर ही नहीं कि जनता किस तरह अपने भावों और बिपारा को बया करती है। ऐसी जवान जिसके दिगने मोर समझनेबाछ बोड़े से पड़े-सिख साय ही ही समनुई बेजान और बोलक हो जाती है। जनता का मर्म स्पष्ट करने की उन तक अपना पीषाम पहुँचाते भी उसमें कोई शक्ति नहीं रहती। वह उस तासाब की तरह है जिसके घाट संगमर्मर के बने हों जिसमें कमल फिल ही लेकिन उसका पानी बर हा। क्या उस पानी में वह मडा बहु मरुन देनबासी ताठव बहु सज्जई है या दुली हुई पारा में हाती है? ज़ीम की जवान बहु है जिस ज़ीम गमरो जिसमें ज़ीम की आत्मा हा जिसमें ज़ीम के जवान हों। अगर पर-सिख समाज की जवान ही ज़ीम की जवान है तो क्यों न हम भंवेरी को ज़ीम की जवान समझे क्योंकि मरा तजरबा है कि आज पड़ा-सिखा समाज जिस बेतजम्बुती व भंवेरी बाल सरता है और जिस रबानी के माय भंवेरी

सिग सकता है। उर्दू या हिन्दी बोल या लिख नहीं सकता। बड़े-बड़े दफ्तरो में और ऊँचे दामों में आज भी किसी को उर्दू-हिन्दी बोलने की महीनों बरसों जरूरत नहीं होती। छानखाने और बीरे भी ऐसे रहे जाते हैं जो अंग्रेजी बोलते और समझते हैं। जो लोग इस तरह की बिनदयी बसर करने के शौकीन हैं उनके लिए तो उर्दू हिन्दी-हिन्दुस्तानी का कोई मगड़ा ही नहीं। वह इतनी बुझी पर पहुँच गये हैं कि नीचे की पूल और यमी उन पर कोई असर नहीं कर सकती। वह मुजस्सक हवा में लटके रह सकते हैं। लेकिन हम सब वा हज़ार कोसिस करने पर भी वहाँ तक नहीं पहुँच सकते। हम तो इसी पूल और यमी में बीना और मरना हैं।

हवा में सटके हुए उन अंग्रेजी के शीशों को मुक़ातिब करके मुंघीजी ने इकबाल का दौर पड़ा —

वा कुना बर तहे बामे दिगर्ग मी बासी  
 दर हुवाये खमन आबाद परीदन मामाज।  
 दर जहाँ बामो-वरे सेघ कुचुदन बामोज  
 कि परीदन न तबाँ वा परते-बाले दिगर्ग।

(दूसरों के डैनों का आशय तुम कम तक कोमे ? खमन की हवा में आबाद होकर उठना सीखो। दुनिया में अपने डैने-वर्गों को कैलाश सीखो क्योंकि दूसरे के डैने-वर्गों के सहारे उठना संभव नहीं है।)

और अपने जैसे सामारण लोगों से कहा —

दिसों की दूरी मापा की दूरी का मुस्य कारण है। आपस में हेल्मेक से उस दूरी को दूर करना होगा। हम दोनों ही के लिए दोनों लिपियों का और दोनों भाषाओं का ज्ञान आवश्यक है। और जब हम बिनदयी के पत्रह साल अंग्रेजी हासिस करने में बुर्बान करते हैं तो क्या महीने दो महीने भी उस लिपि और साहित्य का ज्ञान प्राप्त करने में नहीं जया सकते जिस पर हमारी डौनी तरकीबी ही नहीं डौनी बिनदयी का बारीमचार है ?

यह एक बिनदयी का छपना है जिस मुंघीजी ने लुद अपने अमक के पीठर से पामा है और जो अपनी भाँलों के आगे दिखरा जा रहा है। कैसे बचावें उसको ?

और मुंघीजी जो बात्रा के नाम से कान पर हान रखते जाये हैं, अपने इस पक़ता के स्वप्न की रया में अब तक चम्बई, मद्रास दिसनी लाहौर, मैसूर, बेंगलूर, इकरहम्बाद, पूनिया इत-नास कहीं-कहीं की जाक नहीं जान चुके हैं

जिन प्रान्तों में गये हिन्दी भाषा को साथ लेते मय। उन्हीं के साथ वह दक्षिण में पहुँची और उसका बचपन दक्षिण ही में गुजरा। आपको शायद मालूम होगा कि हिन्दी की सबसे पहली रचना सुदरा ने की है जो मुघलों से भी पहले ब्रिटेन की राज्यकाठ में हुए—

जब मार देना नैन भर, विक्र की गयी चिन्ता उठर।  
ऐसा नहीं कोई ब्रजब राखे उस समझाय कर।  
जब मति से जोमल मया तड़पन लगा मेरा जिया  
हकडा इसाही क्या किया भासू जैसे नर साथ कर।  
तँ ता हमार यार है तुम पर हमार प्यार है,  
तुम बीस्ती बिसियार है, एक सब मिछो तुम आव कर।●

कौन कहेगा कि यह हिन्दी नहीं है मगर दुर्भाग्य से यह भीख बनी नहीं और बटनाओं का कुछ ऐसा बक बला कि एक ही माँ के पेट से पैदा होनवासी ये दोनों बहनें सीटें बन गयी। और यह सारी करमाठ फोर्ट ब्रिस्मियम की है जिसने एक ही जवान को दो रूप माग लिये। इसमें भी उस बक्त कोई राजनीति काम कर रही थी या उस बक्त भी दोनों जवानों में काफ़ी फर्क आ गया था यह हम नहीं कह सकते। लेकिन जिन हाथों ने बहनों की जवान के उस बक्त को टुकड़े कर दिये उसने हमारी डीमी जिन्दगी के दो टुकड़े कर दिये।

यह बलगाव का रास्ता एक तरफ़ संस्कृत और दूसरी तरफ़ फ़ारसी-अरबी की टैम-टैम का रास्ता बकत है, दोनों ही जवानों के लिए बातक है—

दोनों तरफ़ से इस जसगीसे का सबब साथ ही है कि हमारा पढ़ा-लिखा समाज जनता से अलग-अलग होता आ रहा है और उसे इसकी खबर ही नहीं कि जनता किस तरह अपने भाषा और विचारों को बचा करती है। ऐसी जवान जिसके लिप्यन और समझनेवाले भाड़े से पढ़े-लिखे साग ही हों मसमुई बेजाम और बीमल हो जाती है। जनता का मय स्वर्ण करने की उन तक अपना पैदागम पहुँचाने की जसमें कोई शक्ति नहीं रहती। वह उस तामाब की तरह है जिसके घाट समझने के बन हों जिसमें कमल निक हों लेकिन उसका पानी बंध हा। क्या उस पानी में वह मजा वह शक्त देनवापी ताकत वह सजाई है जो खुली हुई भाष में होती है? डीम की जवान बट है जिसे डीम नमरी जियन डीम की भारमा हो जिसमें डीम के जवान हा। अगर पढ़-लिख समाज की जवान ही डीम की जवान है तो क्यों न हम अंग्रेजों को डीम की जवान मसजे क्वाडि भरा तजरका है कि आज पढ़ा-लिखा समाज जिस बेजान-सुदरी से अंग्रेजी पाल बनता है और जिस खानी के साथ अंग्रेजी



सिग्न सबका है, उर्दू या हिन्दी बाल या तिरा नहीं सकता। बड़े-बड़े दफ्तरों में और ऊँचे शायरे में आज भी जिमी को उर्दू-हिन्दी बोलने की महीनों बरसा डक़रत नहीं होती। राजसामे और वीर भी ऐसे रये जाते हैं जो अंग्रेजी बोलत और समसते हैं। जो लोग इन तरह की डिग्नयी बन्द करन के पीरीत हैं उनके लिए तो उर्दू हिन्दी-हिन्दुस्तानी का कोई अण्डा ही नहीं। वह इतनी बुद्धी पर पहुँच गये हैं कि नीचे की पूर और यमी उन पर कोई असर नहीं कर सकती। वह मुकसक हवा में लटके रू सजते हैं। लेकिन हम सब तो हजार कोमिल करने पर भी वहाँ तक नहीं पहुँच सकते। हमें तो इमी पूर और यमी य पीना और मरना है।

हवा में लटके हुए उन अंग्रेजी के पीनाओं को मुक़ातिब करके मुजीबी ने इशबाल का घेर पड़ा —

ता कुआ दर तहे बाके दिगर्त मी बायी  
 दर हवाय चमन आबाद परीदन आमोब;  
 दर जहाँ आमो-परे खेस कुपूदन आमोब  
 कि परीदन न तबी बा परी-बाके दिगर्त।

(इसरो के डीनों का आशय तुम जब तक सोये ? चमन की हवा में आबाद होकर उड़ना मीनो। बुनिया में अपन डीने-मंस को पीरना सीनो क्योंकि दूसरे न डीने-मंस के सहारे उड़ना संभव नहीं है।)

और अपने जैसे साधारण लोगों से कहा —

दिसों की बुरी माया की बुरी का मुख्य कारण है। आपस में हेसमेक के उस बुरी को दूर करना होगा। हम दोनों ही के लिए दोनों किरियों का और दोनों मायामों का ज्ञान साबिमी है। और जब हम डिग्नयी क पन्हु सास अंग्रेजी हासिल करने में बुद्धि करते हैं तो क्या महीने वो महीने भी उस किरि और साहित्य का ज्ञान प्राप्त करने में नहीं लागा सकते जिस पर हमारी क्रीमी तरफकी है। नहीं क्रीमी डिग्नयी का दारोमगार है ?

यह एक डिग्नयी का सपना है जिस मुजीबी ने लुह अपने अमक के पीतर से पाया है और जो अपनी जानों के आगे बिखरा बा रहा है। जैसे बचार्थे समको ?

और मुजीबी का माया के नाम से कवन पर हाथ रखत बाये हैं अपने इस पकता के स्वप्न की रखा में अब तक बम्बई, मद्रास दिल्ली लाहौर, मैसूर बेंगलूर, इलाहाबाद पूषिया दूर-वास जहाँ-कहाँ की साक नहीं पाव चुके हैं

इस बार मुंबई की दस-बारह रोज बाहीर रहे और इतनों मीटिंगों में बोल कहीं प्रवृत्तिहीन साहित्य के मान्योत्सम के बारे में जिसकी सवायत करक वह चीजें बने मा रहे थे और कहीं हिन्दुस्तानी समा के बारे में जिसके वह बानी के सन्नापक थे।

एक मीटिंग में जिसके समापति बाह्यी टेकचंद के और जिसमें इन्तयाज बली ठाक और मिर्जा बशीर अहमद जैसे लोग भी मौजूद थे प्रेमचंद ने हिन्दुस्तानी मान्योत्सम के बारे में बिस्तार से बयलाया। उनकी बातों का इतना असर पड़ा था कि कहिए कुछ ऐसी छिन्ना बन गयी कि सच्चे मन से लोग बोलों बजानों की एकता की तरफ एक कदम बढ़े जिसका एक छोटा सा मगर मामिद सक्षण यह था कि उसी मीटिंग में उर्दू लेखकों ने अपने भाषण में हिन्दी शब्दों का और हिन्दी लेखकों ने उर्दू शब्दों का प्रयोग किया और चाहे यहाँ वहाँ प्रयोग में कुछ गलती भी हुई हो (जैसे कि ठाक साहब ने मुझ अपने जाने के लिए पधारत कहा और चन्द्रगुप्त बिघारसंकार न कहा इसमें पहलू कि आप बर्बास्त हों ) लेकिन उसके पीछे जो भावना काम कर रही थी उसमें कोई गलती न थी वह आदर करने की थी।

हिन्दुस्तानी समा बन गयी उसकी कार्यकारिणी भी चुन ली गयी—मगर कै किस को ?

अगर हमसे नागपुर में कांग्रेस अधिवेशन हो रहा था और उसी मौक़ पर हिन्दी साहित्य सम्मेलन और भारतीय साहित्य परिषद् के अधिवेशन भी रहे मये थे।

२४ अग्रेक अक्टू १६ का सबरे ली बज नागपुर मुनिबसिटी के कन्वेंशन हॉल में भारतीय साहित्य परिषद् का पहला (और अंतिम) अधिवेशन घोषीजी की अध्यक्षता में शुरू हुआ। पं जवाहर लाल नेहरू सम्मेलन के समापति बाबू राजश्र प्रसाद सरकार बस्सम भार्द पटेल सेंट जमनालाल बजाज चक्रवर्ती राजगोपालाचारी पुरुषोत्तमदास जी टण्डन कर्हीवासाळ भागिदलाल मुंशी कन्भुका गांधी भीमत्री कमलाबाई किये मुंशी प्रेमचंद (जा साहीर स दासब सीप माने हुए आये थे) मौलाना अब्दुल हक काका कालसकर श्रीमन्त्रकुमार, भागिदलाल चतुर्वेदी जयचाम बिघारसंकार, चंकरराव देव—साहित्य और राजनीति की दुनिया के एक स एव बढ़े दिग्गज बैठे थे।

—घोषीजी ने अपने ठाग हकके-पुसके परेहू बंदाब में कहना शुरू किया—  
गर मैंने जा किया है उन व्याख्यात कहा जाय ता वह आरका छता हुआ

बाँटा या चुका है उस भाप पत्र ही लेंगे। कलम साहब ने कहा है कि हमारा मजसद बेहतरियों में वेनसेवा का प्रचार करता है और मित्र-मित्र प्रान्तों में जो साहित्य पैदा हो रहा है उसका प्रचार अन्य प्रान्तों में करता है। इसका अर्थ यह है कि मरेलू परिभाषा हमें प्रकटित करना है इसलिए अपन मरेलू समापति को मुझे यहाँ बैठा बिठा है। मुझे मामूम नहीं है कि मुझे जिसने समापति चुन लिया। मेरा साहित्यिकों में क्या स्वाग हो सकता है? मुझे हिन्दी साहित्य का तो क्या पुजारी साहित्य का भी अच्छा ज्ञान नहीं है। कुछ लोगों ने कहा है और मैं भी मानता हूँ कि मुझे पुजारी ब्याकरण तक का पुरा ज्ञान नहीं है तब मैं यहाँ क्यों आया? मुझे काका साहब और मुसीजी (कन्हैयालाल मुषी) यहाँ काने हैं। मुसीजी ने मुझे बताया कि भाप ही से यह काम हो सकेगा क्योंकि साहित्यिक तो बड़े-बड़े सिद्ध-से हैं। वे अपने पित्रक में सुरक्षित हैं। अगर वे इच्छते हो कार्य तो बड़ भी पढ़ें। इसलिए उनसे से किसी को नियुक्त करने से कोई काम नहीं है भापही उनको एकत्रित कर सकते हैं। मैं तो 'महात्मा ही रहा। उन्होंने मान लिया कि महात्मा से सब कुछ हो सकता है

लोगों का ऐसा मानना कुछ गलत नहीं था लेकिन निरति या परिस्थिति का कुछ ऐसा व्यप्य रहा कि उन्हीं के भीमुख से एक ऐसी बात सामने आयी जिसने रुझाई का मुखपाठ किया— और जिससे कुछ ही महीने में भारतीय साहित्य परिषद् हमेशा के लिए उभरा हो गया।

हुआ यह कि उसी रोज उसी हाल में जब विषय-निर्वाचनी की बैठक हुई तो उसमें (पण्डित जवाहरलाल भी मौजूब थे) सबसे पहले बड़ी देर तक इसी बात पर चर्चा होती रही कि परिषद् की कार्यबाई का माध्यम कौन-सी भाषा हो। याँपी पी ने कहा कि यह भाषा 'हिन्दी या हिन्दुस्तानी' इस नाम से ही पहचानी जाय। केवल हिन्दी कहने से संस्कृत धर्मों से परी हुई हिन्दी का ही बोध होता है और हिन्दुस्तानी से मरजी-अरसी धर्मोंवाली उर्दू का बोध होता है। इसलिए 'हिन्दी या हिन्दुस्तानी' इस पद का प्रयोग परिषद् के माध्यम के लिए किया जाय।

याँपीजी तो अपनी बात कहकर उठ पड़े लेकिन समझा चलता ही था और वह समझा विषय-निर्वाचनी तक ही सीमित न रहा अपने रोज सुले बबिनेशन में भी पहुँचा। समझा क्या था?

प्रेमचंद के शब्दों में—

● हिन्दी शब्द से उर्दू को उतनी ही चिड़ है जितनी उर्दू से हिन्दी को है। और यह वेद केवल नाम का नहीं है। हिन्दी जिन रूप में लिखी जा रही है, उनमें संस्कृत के शब्द बैठकस्तुछ आते हैं। उर्दू जिन रूप में लिखी जाती है उसमें फारसी

इस बार मुंबई की दस-बारह रोड साहीर रहे और दर्जनों मीटिंगों में बोले कहीं प्रगतिशील साहित्य के आन्दोलन के बारे में जिसकी सहायता करके वह सीधे चले जा रहे थे और कहीं हिन्दुस्तानी समाज के बारे में जिसके बहु बानी व सत्साधक थे।

एक मीटिंग में जिसके सभापति बस्ती टेकचंद थे और जिसमें इन्तयाज अली शाह और मिर्जा बकीर अहमद जैसे लोग भी मौजूद थे प्रेमचंद ने हिन्दुस्तानी आन्दोलन के बारे में विस्तार से बतलाया। उनकी बातों का इतना असर पड़ा था यों कहिए कुछ ऐसी छिन्ना बन गयी कि सच्चे मन से लोग दोनों खानों की एकता की तरफ एक कदम बढ़े जिसका एक छोटा सा मसल मामिला बसण यह था कि उसी मीटिंग में उर्दू लेखकों ने अपने सभापति में हिन्दी शब्दों का और हिन्दी लेखकों ने उर्दू शब्दों का प्रयोग किया और चाहे यहाँ वहाँ प्रयोग में कुछ शकती थी हुई हो (जैसे कि शाह साहब ने खुद अपने भाषे के लिए पयारा कहा और बन्दुपुत्र विद्यासंसार ने कहा इसका पहले कि आप बर्तास हो ) लेकिन उसके पीछे का भावना काम कर रही थी उसमें कोई शकती न थी वह आदर करने की चीज थी।

हिन्दुस्तानी समाज बन गयी उसकी कार्यकारिणी भी चुन ली गयी—मगर कै दिन को ?

अपने हाथे नागपुर में कांग्रेस अधिवेशन ही रहा था और उसी मौक़ पर हिन्दी साहित्य सम्मेलन और भारतीय साहित्य परिषद् के अधिवेशन भी रहे थे व व।

२४ अगस्त ३६ का सत्रे की बज नागपुर युनिवर्सिटी के कम्पोज़िशन हाल में भारतीय साहित्य परिषद् का पहला (और अंतिम) अधिवेशन मुंबई की अध्यक्षता में शुरू हुआ। व जवाहर लाल नेहरू सम्मेलन के सभापति बाबू राजेन्द्र प्रसाद अख़्तर बसन्त मोहन पटेल सैठ जमनालाल बजाज चबबर्ती राजगोपालाचारी पुष्पलालमहाराज जी टण्डन काट्टियालाल मानिरफ़ाल मुंबई कस्तूरबा गांधी धामनी कमलाबाई किश मृगी प्रेमचंद (जो लाहौर से यात्रा लौट आये हुए थे) मौजाना अणुल हल बाका कातसकर, जैनेन्द्रकुमार, गजमाल कुर्वेरी प्रयचन्द्र विद्यासंसार, संकरराव देव—साहित्य और कर्तव्य की बुनियाद एक से एक बड़े विमात्र बैठे थे।

संघर्षों ने अपने सामने अपने-मुझे परल अंदाज में बहना शुरू किया—अगर मैंने जा लिया है उन व्याख्यान बह जाय ता बहु अलाफ़ी टया हुआ

बोटा जा चुका है उसे आप पढ़ ही लेंगे। बाबा साहब ने कहा है कि हमारा महान्  
 देशांतियों में ऐसेबाबा का प्रचार करना है और विभिन्न विभिन्न प्रांतों में जो साहित्य  
 पैदा हो रहा है उसका प्रचार अन्य प्रांतों में करना है। इसका अर्थ यह है कि बरेलू  
 परिभाषा हमें प्रभावित करना है इसलिए अपने बरेलू समापति को मुझे यहाँ  
 बँध दिया है। मुझ माझूम नहीं है कि मुझ जिसने समापति चुन लिया। मेरा  
 साहित्यिकों में क्या स्थान हो सकता है? मुझे हिन्दी साहित्य का तो क्या गुजराती  
 साहित्य का भी अल्प ज्ञान नहीं है। कुछ सोचा मे कहा है और मैं भी मानता हूँ  
 कि मुझे गुजराती व्याकरण तक का पूरा ज्ञान नहीं है तक मैं यहाँ क्या भाषा ?  
 मुझे बाबा साहब और मुर्याजी (कन्हैयालाल मुर्या) यहाँ लाये हैं। मुर्याजी ने  
 मुझे बताया कि आप ही से यह काम हा सकेगा क्योंकि साहित्यिक तो बड़े-बड़े  
 सिद्ध-से हैं। वे अपने पित्र में मुरसिद्ध हैं। अगर वे इकट्ठे हो जायें तो सब भी  
 परें। इसलिए उनमें से किसी को नियुक्त करने से कोई काम नहीं है आपही उनको  
 एकत्रित कर सकते हैं। मैं तो 'महात्मा ही रहा। उन्होंने मान लिया कि महात्मा  
 से सब कुछ ही सकता है

लोणी का ऐसा मानना कुछ सख्त नहीं था लेकिन नियति या परिस्थिति  
 का कुछ ऐसा व्यवस्था रहा कि उन्हीं के बीच से एक ऐसी बात सामने आयी जिसने  
 कड़ाई का मूखपाठ किया—और जिससे कुछ ही महीने में भारतीय साहित्य  
 परिषद् इमेसा के लिए ठरना हो गया।

हमरा यह कि उसी रोज उसी हाल में जब विषय-निर्वाचनी की बैठक हुई तो  
 उसमें (पण्डित जवाहरलाल भी मौजूद थे) सबसे पहले बड़ी बेर तक इसी बात पर  
 चर्चा होती रही कि परिषद् की चारबाई का माध्यम कौन-सी भाषा हो। गाँधी-  
 जी ने कहा कि वह भाषा 'हिन्दी या हिन्दुस्तानी' इस नाम से ही पहचानी जाय।  
 केवल हिन्दी कहने से संसृष्ट पद्यों से मरी हुई हिन्दी का ही बोध होता है और  
 हिन्दुस्तानी से अरबी-फारसी सम्बंधाली उर्दू का बोध होता है। इसलिए 'हिन्दी  
 या हिन्दुस्तानी' इस पद का प्रयोग परिषद के माध्यम के लिए किया जाय।

गाँधीजी तो अपनी बात कहकर उठ पथ लेकिन अचानक चकता ही रहा और  
 वह अचानक विषय-निर्वाचनी तक ही सीमित न रहा अपने रोज मुझे अविधेयन में  
 भी पहुँचा। अचानक क्या का ?

प्रश्नार्थ के घण्टी में—

● हिन्दी पद से उर्दू को उतानी ही बिड़ है जितनी उर्दू से हिन्दी को है।  
 और यह जेद केवल नाम का नहीं है। हिन्दी त्रिन रूप में लिखी जा रही है उसमें  
 संसृष्ट के अर्थ बैठकल्लुक्त आते हैं। उर्दू जिस रूप में लिखी जाती है उसमें अर

बीर मरवी के पाण्डू बेटकच्छ खाते हैं। इन दोनों का बिचला रूप हिन्दुस्तानी है जिसका दावा है कि वह साधारण बोलचाल की उबाल है जिसमें किसी भाषा के पाण्डों का त्याग नहीं किया जाता अगर वह बोलचाल में आते हैं। हिन्दी को हिन्दुस्तानी चाहे उतना प्रिय न हो पर उर्दू को हिन्दुस्तानी के स्वीकार करने में कोई बाधा नहीं है क्योंकि उसे वह अपनी परिचित-सी लगती है। मगर हिन्दुस्तानी को स्वीकार किया। उर्दूवालों को हिन्दी-हिन्दुस्तानी का मतलब ममस में न माना जाय वह समझे कि हिन्दी-हिन्दुस्तानी केवल हिन्दी का ही दूसरा नाम है। ●

लिहाजा अपने राज जब यह प्रस्ताव तुले अखिबेदान में आया तो मौलवी अज्जुल हज ने बीर उर्दू एकेडमी के मुहम्मद जाहिल साहब ने जो ऐंडिकनर कांफेस क बोर्डिंग हाउस में मुंशीजी के बगल के कमरे में ठहरे हुए थे उसका बिरोध करते हुए कहा कि ● "हिन्दुस्तानी का सपना एक दरमियांनी सपना है जो न हिन्दी वालों को मायबार हीना चाहिए न उर्दूवालों को। लेकिन यह बात उसकीम नहीं की गयी। उन मौके पर मामला कुछ ऐसा भा पड़ा था कि महारानी की बात को मुजानिकन करने की किसी की हिम्मत न होती थी। लेकिन प्रेमचंद जी पड़े हुए बीर उन्होंने हिन्दुस्तानी के द्वारा भारतीय साहित्य परिवर्ण की कारवाई की जाने पर एक निहायत जोरदार तक्रार की। उर्दू के हकके में यह बात मफहूर है कि इसकी बजह से प्रेमचंद जी हिन्दी लिगनेवालों में बहुत बदनाम भी हो गये। पना नहीं यह बहूँ तक नहीं है। लेकिन यह नाम उन्होंने बहुत उल्लेखी और हिम्मत का किया था जिससे उर्दूवाले उनसे बहुत घुम थे। ●

मौलवी अज्जुल हज ने भी वैसा कि उनके हीदरबाद के दोस्त गुमान रबानी साहब ने बगलाया मायपुरवाल इस प्रसंग के बारे में नहीं पर सिखा था कि मुनी प्रेमचन्द साधिर तक हमारे साथ रहे जब कि कावेन के बहुत से बड़े बड़े लोग गोपी जी की बात के बाद तामोम ही गये।

साहब एक गौठ जो मौलवी अज्जुल हज क दिल में पड़ गयी थी वह हीनी नहीं पड़ी और उन्हींने अपने रिवाले उर्दू में लिगा —

● एक दिन वह था कि महारानी गोपी ने हिन्दुस्तानी यानी उर्दू उबाल और प्रार्थना हुम्न में अपने हल्केगान में लकीम अजमल ली को छत लिगा था बीर मात्र यह बात आ गया है कि उर्दू ता उर्दू बहूँ तनहा हिन्दुस्तानी का सपना भी लिगना और गुनना पमन नहीं करने। उन्होंने अपनी गुलतमू में एक बार नहीं बर यात्र प्रगमाया कि अगर रेडोप्युगन में तनहा हिन्दुस्तानी का सपना रगा

क्या तो उसका मतलब उर्दू समझा जायगा लेकिन उनको मेघनाथ दाशेरा के रेडिओयून में तनहा हिन्दुस्तानी का रूप रखते हुए यह उपास न बाया। बाविर इसकी क्या बजह है? कौन से ऐसे असबाब पैदा हो गये हैं जो इस ईरत-अनेज इंजनाब के बाइस हुए? शीर करने के बाद मामूम हुआ कि इस तमाम तौयूर व तबटूक जोड़-तोड़ दाब-नच का बाइस हमारे मुक्त का बहनसीय पाकिटिस है। अब तक महारमा गांधी और उनके रफका (सहकारियो) का मह तपकको (बाया) भी कि मुसलमानों से कोई तियाही समझीता हो जायगा उस बक्त तक बह हिन्दु स्तानी हिन्दुस्तानी पुकारते रहे जो पपककर सुलाने के लिए अर्जत खासी जारी थी। लेकिन जब उन्हें इसकी तबकको न रही या उम्होने एम समझीने की बटरत न समझी ता रिया (फरेम) की बादर उठार केकी और असली रत मे पकर जाने लये। बह शीक से हिन्दी का प्रचार कर। बह हिन्दी नहीं छोड़ सकते तो हम भी उर्दू नहीं छोड़ सकते। उनको धगर अपन बचीभ जपये और बसायल (बिद्याल छापनो) पर पमण्ड है तो हम भी कुछ ऐसे हेठ नहीं है। ●

जुदा के बाबाए उर्दू मौलवी अब्दुल हक साहब को लबी उन्न बी और उम्होने भी बकौतम महारमा गांधी को एक छिरका-वरस्त हिन्दू क हाको राहीर होठे देसा होया — उम्हो चीकों की हिमायत में बिगूँ मौलवी साहब मे गांधीजी का फरेब समझा बा। मगर उसको ता अभी बाबू बरस की बेर है और अभी तो मौलवी साहब के एकठा के उस तपने मे पलीता लगा ही रिया। कैसी-कैसी मुस्किमा मे यह रिम आया बा और जूय मुंशीजी का तसम जिस बटर हाथ बा — और अब जम्मीरों के उस हठीन रंपमहक को बाबाए से उकाने की तदबीर ही रही थी। ईसे छिया से रामन में अपने उस बच्चे को।

मुंशीजी मौलवी साहब को बबाब देमे बैठे लेकिन स्वर मे क्रोध नहीं है, केवल ममता की पीड़ा केवल माधना मौल छोड़ दो, मत मागे मेरे इस नई से बच्चे को —

● हमें मीठाना अब्दुल हक जैसे बपोबूढ़ बिचारशील और नीतिपतुर दुबुर्न के इकम से मे सम्म देलकर दुपस हुआ। जिस सभा में बह बैठ हुए थे उसमें हिन्दीबाकों की क्तरत थी। उर्दू के प्रतिनिधि तीन से स्यादा न थे। फिर भी अब हिन्दी-हिन्दुस्तानी और अकेले हिन्दुस्तानी पर बोट लिये गये तो हिन्दु स्तानी के पल में आधी से कुछ ही कम चर्ये जारी। अगर मेरी बाब इसती नहीं कर रही है तो धायद पन्नाह और पन्नीस का बटबाय बा। एक हिन्दी-प्रमान बससे में जहाँ उर्दू के प्रतिनिधि कुछ तीन हों पन्नाह चर्ये का हिन्दुस्तानी के पल में मिक जामा हार होमे पर भी जीत ही है। बहुत संभव है कि दूसरे बससे में

हिन्दुस्तानी का पत्र और मजबूत हो जाता। और जो हिन्दुस्तानी अभी व्यवहार में नहीं आयी उसके और ज्यादा हिमायती नहीं निकसे तो कोई ठाम्बुब नहीं। जो लोग हिन्दुस्तानी का बकायतनामा किये हुए हैं, और उनमें एक इन पत्रियों का सेवन भी है वह भी अभी तक हिन्दुस्तानी का कोई रूप नहीं पढ़ा कर सके। ●

और अंत में वही कातर स्वर —

हम मौसना साहब से प्रार्थना करते कि नीयतों पर धृबहा न करें, मुमकिन है आज जा बाठ मुस्किम नजर आ रही है वह साहब से साहब में आसन हो जाय।

जून आठे अठि गोदान की छपाई पूरी हो गयी थी। १० तारीख को मुंशीजी न उमंगकर जैनेन्द्र को छिपा — गोदान निकल गया। इस तुम्हारे पास बसा जायगा। और फिर २२ तारीख को —

आज गोदान मेज रहा है। पढ़ना और अच्छा कमे तो कही अर्जुन या बिद्याल भारत या इस में आसोचना करना। अच्छा न छोड़ो तो मुझे सिख देना आसोचना मत लिखना।

कैसा खोपड़ आदमी है! कहनी-अनकहनी सब कह जाता है।

अपन मसीहार्ई जोस में मुंशीजी ने कुछ खपाक नहीं किया लेकिन अरा सोचो तो कैसी पुत्रीपार यात्राएँ रही हैं पिछली।

घरीर (और मन भी) बहुत बका-बका सा टूटा-टूटा सा मग रहा है। तबीयत मुसमि हुई सी रहती है और पेट की हाकत ठीक नहीं है। इस तरह नहीं चलेया। अब तो गोदान भी हो गया। अब अरा बटकर आपस करो



१६ जून १९३६

वितनी मन्त्र पुन है ! खानदी पिटवी जानी है। हवा में लपटो के तमाच-से लगने हैं। सगता है शाल मुलुच जायेगी।

तीन बजे हैं। मुगीजी प्रेस के लिए काण्ड का हन्तजाम करल गहर गये हुए हैं।

लौन्से-लौन्से छ बर गये।

पत्नी ने पूछा — कहीं गये थे ?

मुगीजी ने कहा — घर बर गया था। कक छागई के लिए कामड नहीं था।

पत्नी ने कहा — मुमसे तो कह जाते भले भावनी ! इसी लू और काम में बिना कहे चर दिये।

मुगीजी बोले — मैं भाया था। तुम सी रहीं थी। जगता टीकन समसा

पत्नी ने कहा — उच बरत जाते। उच लू और काम से तो दाम ही भण्ठी थी।

मुगीजी ने कहा — यह सब भरीयों के लखरे हैं। क्या कोई काम बन रहा है ?

बिगस उरन का बरत हो गया था। पत्नी के बिन्धे से पाद निकालकर लाते हुए मुगीजी अपनी बैठक में चले गये और सी बजे छत तक काम करते रहे।

सामा काम बैठे तो मुगबिल से एक रोगी आयी होगी। बोले — मुने बिलकुल मून नहीं है।

पत्नी ने कहा — काम का पता है उसे या लीजिए

मुगीजी बोले — नहीं बी अब कुछ खाने की लवीनड नहीं होगी।

पत्नी ने आपह करत हुए कहा — परी बहुत पड़ रही है ऊपरा करता खैर, मज साए।

बोड़ी बेर बाव सिबपनी देवी उनके कमरे में पानी देने पहुँची तो देखा कि वह मसनद के सहारे बीठे कुछ लिख रहे हैं।

पत्नी को दखकर बोले — मामूम क्यों पेट में दर्द हो रहा है।

पत्नी ने पूछा — कब से ?

बोले — जब से जाना खाकर आया हूँ तभी से।

पत्नी ने बाड़ा हीरान होते हुए कहा — क्या बात है ? आपने आज कुछ खाता भी नहीं खाया फिर क्यों दर्द होने लगा ?

पत्नी अभी उसी जगह खड़ी थी कि मुंशीजी को कौ जाने लगी। पत्नी बोड़ी। उनकी पीठ और गर्दन पर हाथ फेरने लगीं फिर उनको पान और इलायची दी। पान मुँह में डालने को बो कि फिर तबारा जब कौ होने लगी तो पत्नी बबरा लगी। बोली — कौनी लबीयत है ?

मुंशीजी बोले — पेट में दर्द है। हाँ कौ भय नहीं मामूम होती।

उसी दिन उन्हें पून के दस्त आने लगे। उस दिन से उन्होंने न भरपेट खाया न मर नीद छोये

## १८ जून

गोर्ची की मृत्यु। वो रोज बाव यहाँ सबर पहुँची है।

आज कार्यालय में अगले दिन छोके समा है। मुंशीजी को नीन् नहीं आ रही है। सापी रात उठकर वह अपना भापण लिख रहे है।

दूसरे दिन मीटिंग में जाने को तैयार हुए तो पत्नी ने कहा — आप जब तो चकते नहीं माहक जा रहे है।

मुंशीजी ने कहा — पैन्ल तो जा नहीं रहा हूँ। तंगे पर जाना है।

पत्नी ने कहा — जीत पर तो चकना डतरमा है ?

मुंशीजी किमी तरह स्वन के लिए तैयार नहीं हैं। बोले — यह तो लमा ही रहता है

मीटिंग के घर लौटे और अगर चकने लगे तो बहुत बचाने पर भी उनक पैर सड़गड़ा गये। किमी तरह अगर पहुँचे और भट गये। बाड़ा मुन्ना लिये तो बाँ — भापण पचना तो दूर रहा मैं वहाँ गाड़ा भी न हो चना। एक और महापण न पड़बाया

## २५ जून वाई बने रात

मुंशीजी ने कहा — बटा पुत्र बरा पंगा गोक बो। बड़ी चर्मी हो रही है।

छोटा सड़का भाया हुआ अपनी सी के कमर में गया और बोला — अम्मा बाबूजी को कै हूँ है

अम्मा चौंक पड़ी अचानक वहाँ पहुँची और लूम की कै देखी तो चिहूर उठी 'मतलौ किसी न मेरी बेह में बिजली छलाकर घाव कर दिया हो।'

मुन्नीजी भीमे स बुरबुराये— रानी अब मैं जला

रानी ने अपने स्वामाविक वासन-स्वर में कहा— चुप रहो! तुम मुझे छोड़कर नहीं जा सकते!

मुन्नीजी ने गिरे हुए लूम की तरफ इंगारा किया और कहा— जिसके मूँह से इनका लून गिरे, क्या तुम उससे भी जीने की जागा करनी हो।

रानी ने कहा— क्या न करूँ? मति किसी का कुछ नहीं बिगाडा है।

मुन्नीजी ने मूँह फेर लिया।

उम दिन के बाद मीद एक बिरानी बीज हा मयी। रात की रात जागते पड़े रहने बीमार की रात न मोल की न जागते की

और उस बीड़ड़ बियावान सपना में जिसका कहा ओग-छार न था और साथी सब पीछ छूट गये थे और सामन एक लवा तनहा मरुत था वहाँ न तुम किसी को आवाज देत थे न को-तुमको आवाज देना था बस तुम के और वह सपना था जो तुम्हारे कानों में बज रहा था और तुम्हारी आँसों न माये रात के अँधेरे पर्ये पर एक के बा- एक लसबीरों भा रही थी और जा रही थी और तुम अपने तीन में मूँह मड़ाप अपने किसी अन्दरग सखा में बातें कर रहे न खुद अपनी नक और मुझ्जिस बिल्ली की और उम बमबती-मननी दुनिया की जिस तुमने मूठ और दया पर पनपते देखा वह खरीस मूरलें जिम्होंने इम दुनिया को बहुमुम बना रखा है एक दुनिया जो मर रही है और एक दुनिया जो पैदा होने के लिए मीस की टाकनों से मड़ रही है।

सब कुछ हा गया चुक गया अब तो बस वह अंतिम सपना बचा है महाभारत वह, जिसे तुम अपनी कान्ठी में पड़े हुए रात के उन चुप अँधेरे और सपाने में देखते रहते हो।

बिगर पत्थर की तरह सज्ज होजा जा रहा है वेद में पानी मर रहा है, बड़ा दर्द हुआ है ख-खूकट, और बड़बड़ा देवनी बज पट फूटने लगता है। सेटे नहीं रहा जाता तो उठ बैठते हो और बैठना डूबर हो जाता है तो फिर सेट जाते हो वेद बड़ड़ सेते हो, खोर से पबाने हो अगर चैत किसी करबट नहीं मिलता। तो भी बनीपत तो सिखनी ही है ताकि बाँते जा कहनी है वह बिजकही न रह पाये

जो निचोड़ है एक उल्ल के तजरवे का भिन्नमें पीडा भी है और उस पीडा का अविमान भी।

और मुनीजी अपनी उस शकलीक में भी बिस्तर छोड़कर नीचे फर्श पर जा बैठे हैं और संगरूम उठा लेते हैं जिसके नामक देवकुमार वह खुद हैं एक गामी-गरामी सच्चे ईमानदार, स्वाभिमानी और मरीय कलम —

साहित्य-सेवा के सिवा उन्हें और किसी काम में रचि न हुई और यहाँ मन कहाँ? हाँ या मिला और उनके आत्मसतोष के लिए इतना जाड़ी था। संघर्ष में उनका बिश्वास भी न था संभव है परिस्थिति ने इस बिश्वास को दुड़ किया हो

अभी छ महीना पहले जब बनारसीनाथ जी न बहुत जोर देकर उन्हें कलकत्ता बुलाया था नोगूषी का मापन मुने के लिए उस बध्न उन्होंने अपनी मजबूती बतलाते हुए और बातों के साथ-साथ यह भी सिद्धा था —

दुनिया में बड़े-बड़े दिमागवाले डेरों हैं। कौन असली बड़ा आदमी है और कौन नकली इसकी परख करने के लिए बड़ी महरी न्यायबुद्धि की जरूरत है। मैं कल्पना ही नहीं कर सकता कि कोई बड़ा आदमी बड़ा घनपति हो। जैसे ही मैं किसी आदमी को बहुत अमीर देखता हूँ उसकी तमाम कला और ज्ञान की बातों का जगा मेरे ऊपर से उतर जाता है। मैं उसे कुछ इस तरह देखने लगता हूँ कि उसने हम वर्तमान समाज-व्यवस्था के आगे घुटना टेक दिया है जो अमीरों द्वारा शरीरों के घोषण पर आधारित है। मिहाजा ऐसा कोई बड़ा माम जो कर्मों से असंपुक्त नहीं है मुझे आकर्षित नहीं करता। यह बिरुद्ध मुमकिन है कि इस दिमागी डबि के पीछे जीवन में मेरी अपनी असफलता हो। बँक में अच्छी मोटी रकम रखकर मैं भी साथ ही औरों जैसा ही हो जाता — मैं भी उस लोभ के सामने टिक न पाता। मगर मैं गुप्त हूँ कि प्रकृति और भाग्य ने मेरी सहायता की है और मुझे शरीरों के साथ डाल दिया है। इससे मुझे आध्यात्मिक शान्ति मिलती है।

माम्मान के साथ अपना निबाह होता जाय इससे ख्याल वह और कुछ न चाहते थे। साहित्य-रचिषों में जो एक बरूड़ होती है चाहे उसे सेती ही क्यों न वह ला वह उनमें भी थी। कितने ही र्दस और राजे इच्छुक थे कि वह उनके दरबार में जायें अपनी रचनाएँ मुनायें जनको भेंट करें, लेकिन देवकुमार ने आत्ममम्मान को कभी हाथ न आने दिया। कितनी ने बुलाया भी ती पर्यवार बँक टाल मर

बड़ नीतिवान सदाचारी भावमी हैं। उनका सड़का संभू अपने पिता की इन नीति और मान्यता की बातों से बेहद पित्रता है और धर्मवाद को बचाने के लिए अशक्त में उन्हें पागल घोषित करने तक के लिए तैयार है मगर देवकुमार अपनी अगह से नहीं हिस्टे।

देवकुमार कभी कानून के आस में न पड़े थे। प्रजापति और बुद्धसेठों के उन्हें बारूक घोड़े दिये मगर उन्होंने कभी कानून की शरण न ली। उनके जीवन की नीति थी — आप जसा तो जग भला और उन्होंने हमेशा इसी नीति का पालन किया था। मगर वह धर्म या इस्लाम न थे। छासकर सिद्धान्त के मामले में तो वह समझौता करना जानते ही न थे।

मगर दुनिया का रंग-रंग देखकर कभी-कभी उनका आसन डोल भी जाता है, वेतख बाल जाता है —

इन दिनों वह यही पहेली सोचते रहते थे कि संसार की कुम्बकस्था क्यों है? कर्म और संस्कार सेकर वह कहीं न पहुँच पाते थे। सर्वात्मवाद से भी उनकी मुत्पी न मुझझती थी। मगर साध विरम एकारम है तो फिर यह भेन क्यों है? क्यों एक आधमी जिम्मेगी नर बड़ी से बड़ी मेहनत करके भी भूखा मरता है, और दूसरा भावमी हाथ-पाँव न हिलाने पर भी फुलों की सेज पर सोता है। यह सर्वात्म है या धार अनात्म?

अन्तर कहीं एक आबाब है जो मुँगीनी से बराबर कहती रहती है कि यह तुम्हारी आधिरा बीमारी है इससे उठना नहीं है तुमको ताहम इस कष्ट भी जो सवाल उनको तंग कर रहे हैं वह आत्मा और परमात्मा स्वर्ग और नरक जिन्मी और मौत के बार्थनिक सवाल नहीं है समाज के न्याय और अन्याय के सवाल हैं।

बुद्धि जबाब देती — यहाँ सभी स्वाधीन हैं सभी की अपनी एकता और साधना के हिसाब से उपरति करने का बचसर है। मगर संका पूछती — सब को समान बचसर कहाँ है? बाबाग सगा हुआ है जो चाहे वहाँ से अपनी इच्छा की चीज खरीव सकता है मगर खरीदेगा तो बड़ी बिसके पास पैसे हैं? और जब सबके पास पैसे नहीं हैं तो सब का बराबर अधिकार कैसे माना जाय? इस तरह का आरममंथन उनके जीवन में कभी न हुआ था इस कष्ट उनकी दया उस भावमी की थी जो रोब मार्ग में इटें पड़ी देखता है और बचाकर निकल जाता है। रात में बिजने सोयों को ठोकर लपटी होगी किन्तों के हाथ-पैर टूटते होंगे इसका ध्यान उसे नहीं जाता। मगर एक दिन जब वह पुर रात को ठोकर

साकर अपने घुटने फोड़ देता है तो उसकी निवारण-शक्ति हूठ करने लगती है और वह उस सारे डेर को मार्ग से हटाने पर तैयार हो जाता है। देवकुमार को बही ठीकर लमी बी। कहाँ है ग्याय ? कहाँ ? एक शरीर आदमी किसी बेठ से बाँसे मोचकर सा जाता है कानून उसे सबा देता है। दूसरा अमीर आदमी दिनदहाड़े दूसरो को मूँटा है और उसे पयबी मिसवी है सम्मान मिळता है। कुछ आदमी लख-लख के हथियार बाँधकर आते हैं और निरीह दुबक मजदूरों पर आतंक बधाकर अपना गुलाम बना लेते हैं। सगान और टैक्स और महसूस और कितने ही नामसे उसे लूटना शुरू करते हैं और आप कंबा-संबा बेतन उड़ाते हैं सिकार लेसते हैं नाचते हैं रेंगरेसियाँ मनाते हैं। यही है ईस्वर का रबा हुमा ससार ? यही ग्याय है ?

और फिर शायद लुब को ही लताड़ बताया —

हाँ देवता हमेसा रहेंगे और हमेसा रहे हैं। उन्हें अब भी संसार धर्म और नीति पर चमत्ता हुमा नबर आता है। वे अपने जीवन की आहुति देकर संसार से बिदा हो जाते हैं। लेकिन उन्हें बचता क्यों कहा ? कायर कहो आत्मसेवी कहो। देवता वह है जो ग्याय को रखा कर और उसके लिए प्राण दे दे। मपर वह जानकर अनजान बनता है ता बर्म से गिरता है और अगर उसकी आँसों में वह दुःखबस्या लटकती ही नहीं तो वह बधा भी है और मूर्ख भी बचता किमी लख नहीं। और यहाँ देवता बनने की शकल भी नहीं। देवताका मे ही माय और ईस्वर और भक्ति की निष्पार्ण पैसाकर इस अनैति की अमर बनाया है। मनुष्य मे अब तक इसका अंत कर दिया होता या समाज का ही अंत कर दिया होता जो हम वसा में बिन्दा रहने से नहीं जच्छा होता। नहीं मनुष्यों में मनुष्य बनना पड़ेगा। बरिन्दों के बीच में उनसे कड़ने के लिए हथियार बाँधना पड़ेगा। उनके पंजों का सिवार बनना देवतापन नहीं जड़ता है।

जबान बन्द होने के पहले कह दो जो-जो कुछ कहना है, जो-जो कुछ देना है छा है पीना है।

7

और मुंजीजी ने उली बगीपतनामे के तीर पर उन्ही विभिन्न राजों में उन्ही दैहिक और मानसिक कष्टों के बीच महाजनी सम्यता के माया-अवगुंठन को हटाकर उसका मया रूप सागा के सामने रखा —

हम महाजनी सम्यता में सारे कामों की परख महज पैसा होती है।

इस दृष्टि में मानो आज महाजनी का ही राज्य है। मनुष्य समाज को भागी में बँट गया है। बड़ा हिस्सा ता मग्ने और रापनबाली का है और बहुत ही छोटा हिस्सा उन लोंगी का है जो अपनी शक्ति और प्रभाव में बड़ सम्प्रदाय को अपने

बग में किये हुए हैं। उन्हें इस बड़े भाग के साथ किसी तरह की हमदर्दी नहीं पार भी करियावत नहीं। उसका अस्तित्व केवल इसलिए है कि अपने मासिकों के लिए पसीना बहाये पून गिराये और एक दिन चुपचाप इस दुनिया से बिदा हो जाय

जीवन भर बीन-दुवियों का घोपितां का पदा लेकर लड़े लेकिन कभी माना नहीं कि समाज दो बगों में बँटा है। जसते-जसाते वह भी मान लिया।

२५ जुलाई ढाई बजे रात

बेहद कमजोर हो गय थे। कहते थे मैं जसता हूँ तो पैर बरनि लपते हैं। बाँयों के नीचे अँधेरा छा जाता है।

ताहम वह एक दिन नहीं बैठे। बराबर कुछ न कुछ करते रहे। ठाकत न होने पर भी वह बैठे इस बात को अपने ठई स्वीकार न करना चाहते थे और अपनी इच्छाशक्ति से अपने भाप को घसीटते रहे।

लेकिन दाीर के अपने नियम हैं और पिछली पून की कँ के ठीक एक महीने बाद भीरठीर जसी समय दुबाप उनके मुँह से उसी तरह पून गिरा। विबरनी बेबी सिजती है—

उन्हें नींद साने के लिए मैं तकने और तिर की मासिक करती थी। मैं रात को एक बजे उतना घर चहसा रही थी

तभी मुंघीजी ने कहा — अब तुम सो रहो। अब तक बीटी रहोगी।

पत्नी ने कहा — मैं तो आपकी फिक में हूँ और आप मेरी।

मुंघीजी बोसे — तुम सो जाओगी तो मैं भी सो जाऊँगा।

● मैं उसी कमरे में एक तल्ले पर सेट गयी। भाप भीरे से उठे। पाछाने जाने लय। पाछाने में बैठे ही आपको फिर कँ आ गयी। जाबाब चुनकर बीड़ी गयी। उस समय इतनी शिबिछता उनमें आ गयी थी कि वे उठ-बैठ भी नहीं पा रहे थे। फिर दुबाप कँ का सून हम घोर्नों पर तैर गया उस समय तक तीनों बच्चे भी जाय गये थे। मैं धुपू से बोली — जाकर डाक्टर को बुसा सामो। आप बोसे — लड़के को इस बकत मठ परेषान करो। डाक्टर ईस्वर नहीं। सुबह जायगा। जाकर इलम बवात और कामज सामो। अब मैं नहीं बपने का। कम से कम कागज तो दो।

मैं बोली — क्या होगा ?

— तुमको बैठने का तो ठिजाना करता जाऊँ।

मैं बोली — बबराइए नहीं। आप मच्छे हो जाएँगे।

साकर अपने घुटने फोड़ सेता है तो उसकी निवारण-शक्ति हठ करने लगती है और वह उस सारे डेर को मार्ग से हटाने पर तैयार हो जाता है। देवकुमार को बही ठोकर लगी थी। कहाँ है न्याय ? कहाँ ? एक गरीब आदमी किसी बेत से वार्ड भोजकर खा सेता है कामून उसे सजा देता है। दूसरा ममीर आदमी दिनदहाड़े दूसरों को लूता है और उस पर भी मिसरी है सम्मान मिलता है। कुछ आदमी तरह-तरह के हथियार बाँधकर आते हैं और निरीह, दुर्बल मजदूरों पर आतंक बसाकर अपना गुलाम बना लेते हैं। अगान और टैक्स और महसूस और कितने ही नामसे उसे झूठा शुक करते हैं और आप खंजा-खंजा बेतन चढ़ाते हैं। चिकान लकते हैं नापते हैं रैमरेलियाँ मनाते हैं। यही है ईश्वर का रचा हुआ संसार ? यही न्याय है ?

और फिर सामान्य लूट को ही अस्ताइ बनावी —

हाँ देवता हमेसा रहेंगे और हमेसा रहे हैं। उन्हें अब भी संसार धर्म और नीति पर चलता हुआ नजर आता है। वे अपने जीवन की आहुति देकर संसार से बिनाछो जाते हैं। लेकिन उन्हें देवता क्यों कहो ? कायर कहो आत्मसेवी कहो। देवता वह है जो न्याय की रक्षा कर और उसके लिए प्राण द दे। अगर वह जानकर अनजान बनता है तो धर्म से गिरता है, और अगर उसकी आँखों में यह दुःखबस्या छानकटी ही नहीं तो वह भवा भी है और मूर्ख भी देवता किभी तरह नहीं। और यहाँ देवता बनने की जरूरत भी नहीं। देवताओं में ही भाव्य और ईश्वर और भक्ति की मिथ्याएँ फैलाकर इस अनैति की धमर बनाया है। मनुष्य में जब तक इसका अंत कर दिया होता या समाज का ही अंत कर दिया होता जो इस दया में बिम्बा रहने से नहीं अच्छा होता। नहीं मनुष्यों में मनुष्य बनना पड़ना। हरिन्दों के बीच में उनसे लड़ने के लिए हथियार बाँधना पड़ेगा। उनके धर्मों का चिकार बनना देवतापन नहीं बढ़ता है।

जबान बन्द होने के पहले कह दो जा-जो कुछ कहना है, जो-जो कुछ देना है सहा है नीत्या है।

और मुंजीरी ने जमी बगीचतनामे क तीर पर उन्ही बिनिद्र रतां म उन्ही वैदिक और मानसिक कष्टों क बीच महाजनी सम्पत्ता के माया-अवगुल को हटाकर उसका नया रूप लोगों क साधन रना —

इस महाजनी सम्पत्ता में सारे कामों की धरत महज पीसा होनी है। इस दृष्टि में मानीं आज महाजनों का ही राज्य है। मनुष्य समाज का भागों में बँट गया है। बड़ा हिस्सा तो मरल और गपनवालों का है और बचत ही छोटा हिस्सा उन लोगों का है जो अपनी शक्ति और प्रभाव से बड़े अन्धराय को अपने



राम में किये हुए हैं। उन्हें इस बड़े माप के माप बिना तख्त की हमदर्दी नहीं पुरा भी रु-गियायत नहीं। उमना अस्मिन्व केवल इसलिए है कि अपने मासिकों के लिए पर्माना बहाये गून गिराय और एक दिन बुपबाय इस दुनिया से बिदा हो जाय

जीवन भर दीन-दुनिया का गोपितों का पण लखर लखे मरिज कमी माता नहीं कि समाज दो बगों न बेटा है। पसडे-पलाडे वह भी मान लिया।

२५ जुलाई आई बर रात

बेहद कमजोर हो गए थे। कहते थे मैं चलना हूँ तो पैर घटने लगन हैं। आँसों के नीचे धँपरा छा जाता है।

ताहम बह एक दिन नहीं बैठ। बराबर कुछ न कुछ करते रहे। तापत न होने पर भी वह जैसे इस बात को अपने तई स्वीकार न करना चाहते थे और अपनी इच्छाशक्ति न अपने माप को पसीन्ठ रहे।

लेकिन शरीर के अपने नियम हैं और पिछली खून की की के ठीक एक महीने बाद औरठीस उसी समय बुबारा नक मुँह से उसी तरह गून गिर। गिरघनी देवी सिपत्री है—

उन्हें भीद साने के लिए मैं ललबे और सिर की मासिया करती थी। मैं रात को एक बजे उनका सर महसा रही थी

उनी मुंगीजी ने कहा— अब तुम सो रहो। कब तक बैठी रहोगी।

पानी ने कहा— मैं तो मापकी छिऊ में हूँ और माप मेरी।

मुंगीजी बोले— तुम सो जाओनी तो मैं नी सो पाऊँगा।

● मैं उनी कमर में एक तख्ते पर शेट गयी। माप धीरे से उठे। पालाने जाने लय। पाखाने में बैठे ही मापको फिर डी मा गयी। आवाज सुनकर बीड़ी गयी। उस समय इतनी जिचिस्तता उनमें आ गयी थी कि वे उठ-बैठ भी नहीं पा रहे थे। फिर दुबारा डी का खून हम दोनों पर लैर गया। उस समय तक तीनों बच्चे भी जाग गये थे। मैं धुपू से बोयी— जाकर डाक्टर को बुला लाओ। माप बोले— लड़के को इस बच्चा मठ परेषाम करो। डाक्टर ईबर नहीं। मुबह आयगा। जाकर इलम त्बात और कागज सामो। अब मैं नहीं बचने का। कम से कम कागज तो दो।

मैं बोली— क्या होगा ?

— तुमको बैठने का तो ठिकाना करता जाऊँ।

मैं बोली— पबराहए नहीं। आप मण्डे हो जायें।

बोसे — उठो साओ।

मैं बोसी — जल्द चलिए।

वे मेरे मुँह की तरफ देखकर रो पड़े। •

तीन चार रोज बनारस में ही इलाक़ हुआ। एकदरे करने की बात उठी तो मामूम हुआ कि नहीं हो सकता एक ही महीन वहाँ पर है और वह भी इस वक़्त खराब है।

ससनऊ जाने के साथ ही एक रोज पहले मुँगीजी ने २८ जुलाई के अपने छत में अन्दर हुसेन रायपुरी को लिखा था —

• अब मेरा किया मुनो। मैं करीब एक माह से बीमार हूँ। मेरे में वैस्ट्रिक अस्तर की सिकायत है। मुँह से जून आ जाता है इसलिए काम कुछ नहीं करता। बवा कर रहा हूँ मगर अभी तक कोई इज़ाज़त नहीं। अगर बच गया तो बीकरीं सदी काम का रिवाजा अपने लोगों के स्यालात की इजाज़त के लिए खर निकालूंगा। इस से तो मेरा ठास्तुट टूट गया। मुफ़्त की सरमन्धी। बनियों के साथ काम करने मुझिए की जगह यह सिखा मिला कि तुमने हंस में खयादा खपा सऊ कर दिया। इसके लिए मैंने हिलोजाल से काम किया बिस्तुल अकेसा अपने वक़्त और मेहनत का जितना खून खिया इसका किसी ने सिहाब न किया। मैंने हंस उन लोगों को इस खयाल से दिया था कि वह मेरे प्रेस में छपता रहेगा और मुझे उसकी जानिब से पूना वेफ़िजी रहेगी। लेकिन अब वह दिल्ली में सस्ता साहित्य मंडल की जानिब न निकलेगा और इस तवायसे में परिपक्ष को अबाज़न पचास रुपये महीन की बचत हो जायगी। मैं भी खुश हूँ। इस जिस मिटरेबर को इजाज़त कर रहा था वह हमारा मिटरेबर नहीं है। वह तो वही मक्तिबाला महाजनी मिटरेबर है जो हिन्दी खबान में काज़ी है •

मगर खैर इस क दिल्ली जान की मौकत नहीं जायी। अगस्त में इस से खमानत मांगी गयी — पौबिन्दास के नाटक सिखान्त स्वासन्म्य को लेकर। परिपक्ष ने खमानत मरने से इन्कार किया। मुँगीजी ने खमानत भर दी और अपना पत्र उनमें बापस भ सिया। लेकिन यह सब अपने महीन की बातें हैं और अभी तो मुँगीजी अपना काम करने या तन्दीर भाजमाने या भी कहीं छपनऊ जा रहे हैं।

घरिंद टूटा हुआ है, मन भी टूटा हुआ है, और बचने की उम्मीद कम ही है मगर लाग रहते हैं बार-बार रहते हैं कि ससनऊ जाओ यहाँ बहुत बड़े-बड़े खान्दर हैं।

और मुँगीजी ससनऊ पहुँचें — बड़ा बेटा जो इलाहाबाद में भी ए फ़ाइलस

में पड़ रहा था छुट्टी लेकर घर आ गया था और मुर्दाबी के साथ लपकनठ गया।

पहले मुर्दाबी सीपे अपने पुरान दोस्त हृषाकेशर निगम के घर पहुँचे और बातों रोड लादूय रोड के उसी मकान में रहे जहाँ न जाने कितनी दिग्गम्य माम दोस्तों की सोहबत म गुजरी थी।

फिर शाम उन्ह इस हासत में अपने एक दोस्त के यहाँ गया रहना कुछ नाग बार गया और मुर्दाबी यहाँ से उठकर अर्माबाद के सूर्य होटल में पहुँच गये।

शाम हुरयोबिन्द सहाय बुलाये गये। इसकी जाँच और उसकी जाँच का सिलसिला शुरू हुआ एकदरे लिया गया — और अत में निदाल हुआ अशोकर और नियर का सक्त पड़ जाना सिरोसिध माप सिबर।

उम्माद जिसे भी ठीक होने की मर्ज बहुत भाष बड़ बुका का तबीयत भी इलाज से उमड़ चुकी थी। तो भी कुछ तो करना ही था। और भी दो-एक डाक्टरों को बिलाया गया। किन्ही दो लोगो की राय न मिच्छी थी। इलाज चल रहा था पैसा पानी की तरह बह रहा था और कमजोरी बढ़े जोर से बढ़ रही थी। रुपये जो साथ लेकर आये थे वह भी चुरक गये थे — और मुर्दाबी न ही रुपये नियम साहब से मँगाये।

एक दिन का बिक्र है बेटे ने बिचड़ी पकयी। मूंग की फली मरीजू सिचड़ी थी।

४

बेटे ने कहा — बाबूजी सिचड़ी तैयार हो गयी है।

बाबूजी ने कहा — ऐसे बिचड़ी क्या पाये। सिचड़ी के साथ तो पापड़ होता हुरी मिर्च होती अदरक होती नींबू का अचार होता तब तो बिचड़ी खाने का कुछ आनंद भी आता।

कहानीकार गंगाप्रसाद मिथ ने जो उस वक्त यहाँ मौजूद थे फौज बड़े तपाक स कहा मैं अभी सब चीजें लेकर आता हूँ और सोचों न बना करत-करते भी यहाँ से भाग चले।

करीब ही झाऊलाक के पुल पर उनका मकान था और गंगाप्रसाद बीड़े चले था रहे थे ताकि मुर्दाबी को ठण्डी सिचड़ी न खानी पड़े

एक रोड मुर्दाबी ने गया से कहा — आजकल तबीयत बढ़ी मुस्त रहती है। पिकबिक वेपर्स कही से पड़ने को मिले तो जरा तबीयत बढ़ेले।

शाम को अपने एक दोस्त के यहाँ से वह किताब लेकर गंगाप्रसाद मुर्दाबी के पास

बोके — उठी साजो।

मैं बाली — मन्दर बसिए।

वे मेरे मुँह की तरफ देखकर रो पड़े। ●

तीन चार रोब बनारस में ही इलाक़ हुआ। एकदरे कराने की बात उठी तो मामूम हुआ कि नहीं हो सकता एक ही मशीन यहाँ पर है और वह भी इस बस्त पराब है।

सतनऊ जाने के शायद दो ही एक रोब पहले मुसीबी ने २८ जुलाई के अपन खत में ब्यपार हुसत रायपुरी को लिखा था —

● अब मेरा क्लिप्सा मुनो। मैं करीब एक माह से बीमार हूँ। मेरे में गैस्ट्रिक वस्तर की मिकायत है। मुँह से खून आ जाता है इसलिये काम कुछ नहीं करता। रखा कर रहा हूँ मगर अभी तक कोई इफ़्तका नहीं। अमर बच गया तो बीसवीं सदी नाम का गिनासा अपने लोवों के खयालात की इफ़ामत के लिए खर निकारूंगा। हुंस से तो मरा तास्तुफ़ टूट गया। मुफ़्त की सरमग्नी। बनियों के छाप काम करके मुशिय की जगह यह सिखा मिला कि तुमने हुंस में खयाला खपा सफ़र कर दिया। इमने लिए मैंने रिफ़ोजान से काम किया बिस्तुकल अकेसा अपने बस्त और मेहनत का कितना नून किया इसका किसी ने लिखाब न किया। मैंने हुंस उन लोवों को इस खयाल से दिया था कि वह मेरे प्रेस में छपता रहेगा और मुझे उसकी जानिब से गुना बेकिरी रहेगी। लेकिन अब वह बिल्ली में सस्ता साहिय मंडक की जानिब से निकरगा और हम तबादले में परिपद को अंदाजन पचास रुपये महीने की बचत हो जायगी! मैं मी खुस हूँ। हस जिस सिन्दरेबर की इफ़ामत कर रहा था वह हमारा लिन्दरेबर नहीं है। वह तो वही भक्तिवासा महाजनी लिन्दरेबर है जो हिन्दू खबान में काफ़ी है ●

मगर खैर हस क दिखी जान की नीबत नहीं आयी। अगस्त में हुंस से खमानत मांगी गयी — गोबिन्दवास के नाटक 'सिद्धान्त स्वातन्त्र्य को संकर। परिपद ने खमानत मरने से इन्कार किया। मुसीबी ने खमानत मर दी और अपना पत्र उगत बापस ले लिया। लेकिन यह सब अगत महीन की बातें हैं और अभी तो मुसीबी अपना इलाक़ कराने या तरवीर आखमान आ भी कही सतनऊ था रह है।

सारीर टूटा हुआ है मन भी टूटा हुआ है और बचने की जम्मीर कम ही है मगर मांग कहते हैं बार-बार कहते हैं कि सतनऊ जायो यहाँ पहुँच बड़े-बड़े डाक्टर हैं।

और मुसीबी सतनऊ पहुँच — बड़ा बेटा जो इलाहाबाद में बी ७ फ़रवरी

में पड़ रहा था लुट्टी लेकर घर आ गया था और मुर्दाबी के साथ सख्त बन गया।

पहले मुर्दाबी सीधे अपने पुत्र दाम्ब हणामकर निगम के घर पहुँचे और दो तीन रोड लाटूय रोड के उसी मकान में रहे जहाँ न जाम किनी लिखम्य रामे रोम्बों की साहबब में गुजरी थी।

फिर घायल उन्हें इस हालत में अपने एक दोस्त के यहाँ पड़ा रहता कुछ नाम बार लगा और मुर्दाबी वहाँ से उठकर अर्माताका क सुर्या होटल में पहुँच गया।

डाक्टर हरपाबिन्द सहाय बुलाये गये। इसकी जाँच और उसकी जाँच का सिलसिला कुछ हुआ एकसरे लिया गया — और अतः म निशान हुआ जलोहर और बिगार का सख्त पड़ जाना सिरोसिध भाऊ निवर।

उम्मीद दिने थी ठीक होन की मर्ज बरत भाने बड़ चुका था तबीयत भी इलाज से उत्तम चुकी थी। तो भी कुछ तो करता ही था। और भी दो-एक डाक्टरों को लिखाया गया। किसी का लोपो की राय न मिलती थी। इलाज चल रहा था पैसा पानी की तरह बह रहा था और कमबोरी बड़े जोर से बड़ रही थी। रुपये जो साथ लेकर आने ब वह भी चुक गये थे — और मुर्दाबी ने सी रुपये निगम साहब से मँगाये।

एक दिन का डिक है, बेटे ने लिखड़ी पकायी। मूँय की पतली मणिमू लिखड़ी थी।

बेटे ने कहा — बाबूजी लिखड़ी तैयार हो गयी है।

बाबूजी ने कहा — ऐसे लिखड़ी क्या बापों! लिखड़ी के साम तो पापड़ होता ही मिर्च हाटी बदरक होती, मीमू का मजार होता सब तो लिखड़ी जान का कुछ जानें भी जाता।

कश्मीरकार संग्रामसा निध न, जो उस बरत वहाँ मौजूद के पीरत बड़े तपाज से कहा मैं अभी सब चीजें लेकर आता हूँ और लोनों के मना करत-करते भी वहाँ से भाग खड़े।

अरीब ही आऊगा क पुस पर उमक मकान था और संग्रामसाद बीड़े चले जा रहे थे ताकि मुर्दाबी को ठण्ठी लिखड़ी न खानी पड़े।

एक रोड मुर्दाबी ने पंगा से कहा — भाइकरत तबीयत बड़ी मुस्त रही है। पिक्किक पपस कहीं से पड़न का निर तो बरा तबीयत बहूत।

घायल को अपने एक दोस्त क यहाँ से यह लिखार लेकर संग्रामसा मुर्दाबी के पास

पहुँचे तो उन्होंने यनाबदी नारायणी दिखकते हुए कहा— आज मैं तुमसे बहुत नारायण हूँ। तुम कहानियाँ सिखाते हो और आज तक तुमने यह बात मुझे नहीं बतायी।

मुगीजी न बहुत आपहूँ किया तो पंचांगसाल भर जाकर अपनी महाराजिन कहानी से जाये। उस दिन को याद करके वह लिखते हैं—

●कहानी में एक स्थान पर घाटी के बीच में मनमुटाव हो जाने के कारण वह को बिदा करवाय बिना ही बरात चले गी। बरात के चले जाने पर जनबासे का चित्र कुछ ऐसा था— घामियाना उलझ चुका था। बँलों के बाँधने के पूटे भी उलझाई लिये गये थे। चारों तरफ मूँडे और मिट्टी दिखायी दे रही थी। जिस चौपाल में कुछ देर पहले बड़ी चहल-पहल थी वहाँ एक कोने में बैठा हुआ कुत्ता हाँक रहा था और बूझरी और उषारी की फसल के बारे में बात करते हुए बुद्ध और पैना ने अपनी चिन्म मुग्गा ली।

मुगीजी बड़े ठकिये के सहारे अपसंटे हुए कहानी सुन रहे थे। यह टुकड़ा सुनते ही अपनी उस हाकलत में भी उठ पीठे और मेरी पीठ ठोकते हुए बोले— बाहू, तुमने तो मेरी इलम छीन ली! क्या चित्र लीया है!

कहाँ यह किस लोकर दूसरे का दिन बढ़ाना और कहीं घुसरो की सम्पत्तता ही मच्छी है लेकिन !●

जॉटिस्ट अधुल हकीम साहब का घर बहुत छोटा मगर दिक्कत बहुत बड़ा था। एक दिन वह जबरन मुगीजी को मुर्याहाटल से अपने यहाँ उठा लाये वही उसी गली के नुक्कड़ पर जो काटूरा रोड से पट्टी है और मारवाड़ी गली को जाती है। अब मुगीजी को खयाल दिन लपनल नहीं रहना था मगर हकीम महीं माने और अपने घर उठा लाये। बिलकुल सभे भाई की तरह उनकी सेवा की कमोड तक साक किया मुझू को सुखा बैठे और गुर रात पठ भर जागते मगर बेहरे पर गिरल नहीं। लेकिन उसत क्या होजा है।

मुगीजी की हाकलत दिनोदिन चियड़ती जा रही थी। एक शाम गंगाप्रसाद मिथने के लिए पहुँचे तो मुगीजी उबास लेते थे। इधर उधर की दो-एक बातों के बाद उन्होंने शून्य की और ताकते हुए कहा— गंगाप्रसाद मुझे लपता है अब मैं न बचूंगा और मैं सोचता हूँ कि मरना ही है तो अपने बच्चों के बीच में जाकर क्या न मरूँ।

इसी इसी निकल भायी थी बेहूत बिलकुल जई जैसे पुराना नाउव भाँपे गद्दा में पैसी हुई

पत्नी ने सहाय देकर ऊपर पहुँचते हुए पूछा — कौड़ी तबीयत है ?

मुंशीजी ने बुझी हुई आवाज में कहा — ठीक है

ऊपर पहुँचकर बिस्तर पर लेट गये। बुटी लपट हीक रहे थे। थोड़ी देर बाद फेंकते हुए गले से आवाज निकली — मैं बच नहीं बचने का। मैंने सोचा कहीं मर गया तो देण भी न पाऊँगा।

१७ अगस्त

डाक्टरों ने स्यादा मुझे हुए, स्यादा हवादार मकान में रहने की सलाह दी। छयोम मे मारखेरु हृदिकचन्द्र का विमास मवन रामकटोर्य नाम धामी मिस मया जहाँ कभी जनकी भग-बूटी छनयी थी बंगुरी के बीर बन्दे थे तबसे टनकते थे पुंमरु पतकठ थ।

अमस्त की लपट छारीय थी। पानी बोरोँ से वरल रहा था। घर का सामान डोया जा रहा था। पंडित ने मये घर में जाने के लिए नहीं बिन सुम वठताया था।

मुंशीजी के कमरे में कुछ कितारों बिछटी पड़ी थीं। सब सामान अस्त-भ्यस्त था। उन्होंने एक धार जठन की कोपिच की। पत्नी को देखा तो भट रहे।

पत्नी ने पूछा — बाप यह क्या कर रहे हैं ?

बोले — कुछ नहीं। दीनों कपके कहाँ गये ?

पत्नी ने बबान किया — कहीं सामान बटैरहू ठीक कर रहे होंगे।

बोले — कितारों का बण्डल क्यों नहीं भेषवा देती ?

बीर कमरे से बाहर भाते-भाते धिबपनी देवी के कान मे एक मखिम-सी आवाज पड़ी — कोई ठीक करे या न करे, अपने को क्या।

थोड़ी देर बाद वह फिर उसी कमरे में आयीं। कुछ ही मिनट पहले पानी की बूँदें बनीं थीं। ठीमा आ गया था।

मुंशीजी बोले — पत्नी क्यों नहीं तुम ? पानी में भीम बान्छेगा नहीं तो ! (बीसे बन्धे ने टुनकते हुए माँ से कहा।)

मैं थोड़ा-सा बड़ी और सक्कर लाकर सामने रखकर बोली — जरा इसे बबान पर लगा लीबिए।

मेने कहने से उन्होंने बबान पर तो सक्कर लगाया लेकिन कुस्सा करते हुए मेरी ओर देखकर मुस्करा दिए (धिबपनी देवी)

रामकटोर्य पहुँचे तो चारपाई पहले से बिछी हुई थी — उत्तर बकित्त। मुंशीजी लेट गये तब पत्नी का ध्यान इस पर गया।

पहुँचे ता उन्होंने बनाबटी नाराजगी दिलवाते हुए कहा— आज मैं तुमसे बहुत नाराज हूँ। तुम कहानियाँ लिखते ही और आज तक तुमने यह बात मुझे नहीं बतायी।

मुंशीजी ने बहुत आग्रह किया तो गंगाप्रसाद घर जाकर अपनी महारजिद कहानी ल आये। उस दिन को याद करके वह बिलखते हैं—

●कहानी में एक स्पस पर गारी ने बीच में मनमुटाव हो जाने के कारण बहू को बिना करबाये बिना ही बरतत चम दी। बरत के चसे जाने पर जनबासे ना चिन कुछ ऐसा था— सामियाना उखड़ चुका था। बैसों के बाँधने के कूटे भी उखाड़ लिये गये थे। चारों तरफ मकड़े और मिट्टी विछायी थे रहीं थी। जिस चौपाक ने कुछ बेर पहले बड़ी चहल-पहल थी वहाँ एक कोन में बैठे हुआ कुत्ता हाँक रहा था और दूसरी ओर उपाठी की फसल के बारे में बात करते हुए बुढ़ और पैरा ने अपनी चिलम मुकना ली।

मुंशीजी बड़े तकिये के सहारे धपमेटे हुए कहानी सुन रहे थे। यह टुकड़ा सुनते ही अपनी उस हाकत में भी उठ बैठे और मेरी पीठ ठोकते हुए बोले— बाहू तुमने तो मेरी इज्जत छीन ली! क्या चिन खीचा है!

कहाँ यह किस सोलकर दूसरे का विक बढ़ाना और कहीं दूसरों की चम्पकता ही बच्छी है केकिन ।●

माटिस्ट अम्दुस हकीम साहब का घर बहुत छोटा मगर दिक्कत बहुत बड़ा था। एक दिन वह बबरक मुंशीजी को मुर्गा होटल से अपने यहाँ उठा लाय वही उसी गर्मी के मुकड़ पर जो सादूम रोड से प्युटी है और मारबाड़ी गली को जाती है। अब मुर्गाजी को प्याण दिन कप्तनक नहीं रहता था मगर हकीम नहीं माने और अपने घर उठ्य साये। बिलकुल सगे भाई की तरह उनकी सेवा की कमोड तरु साक किया घुमू को मुला बेले और लुर रत-रत घर आगते मगर बेहरे पर गिजन नहीं। केकिन उससे क्या हीता है।

मुंशीजी की हाकत दिनादिन बिगड़ती जा रही थी। एक धाम गंगाप्रसाद मिलन ने लिए पहुँचे ता मुंशीजी उवास कटे थ। इपर-उपर की दो-एक बातों के बाद उन्होंने घुस्य की ओर ताचते हुए कहा— गंगाप्रसाद मुस चगता है अब मैं न बपुंवा और मैं सोचता हूँ कि मरना ही है तो अपने बच्चों के बीच में जाकर क्या न मरूँ।

हर्दी हर्दी निरम बानी की चहल बिलकुल उँ जैसे पुपता कावज भायें गह्रा में पेंची हुई



छोटे-मोटे कपड़े कुर्तों को भी कमी न थी। रोज सवेरे, तिहार मुँह एक किछान अपने हक-बैस लेकर उसी पगडंडी से अपने उम बेतों को जाता था और दिन भर उस तपी हुई कढ़ी परती को जोलता था चास-मूछ की लिपई करता था बीज छिड़कता था—और दोपहर को मूरज जब सिर पर होता था उसकी बनिपा रस-गुड और जौ के मोटे मोटे लिट्टे लेकर पहुँच जाती थी

रोज वही पगडंडी उन्हीं कुँजों का पानी अपन बही खेत-हार

और कभी एक सूना-सा हास्य जिसकी आँखा उसके मूलेपन में है—

●होरी ने उसकी ओर मौन तरेरकर कहा—क्या समुराक जाता है जो पानो पोसाक लायी है? समुराक में कोई जवान सामी-नमहज भी तो नहीं बैठी है जिसे जाकर दिलाऊँ!

होरी के सहने साँसे पिचके हुए बेहरे पर मुस्कराहट की मृदुता समक पड़ी। बनिपा ने लज्जते हुए कहा—ऐसे ही तो बड़ सजीमे जवान हो जि सामी-समहजें तुम्हें देखकर रीस जायेगी!

होरी ने कटी हुई मिर्चों को बड़ी सावधानी से तह करके पाट पर रखते हुए कहा—तो क्या तू समसती है मैं बूढ़ा हो गया? अभी तो बाकीस भी मही हुए। मरें छाटे पर पाठे होते हैं।

जाकर सीसे में मूँह देखो। तुम जैसे मरें छाटे पर पाठे नहीं होते। इध-वीं आँखन लपाने तक को तो मिलता नहीं पाठे होये! तुम्हारी दसा देख-देखकर तो मैं और भी मुन्नी जाती हूँ कि मपवान यह बुढ़ापा कैसे कयेया। जिसके द्वार भीत माँगे।

होरी की यह क्षमिक मृदुता यपार्य की इस मौष में जैसे शुक्ल गयी। लकड़ी सँमालता हुआ बोला—छाटे तक पहुँचने की नीबठ न आने पायेगी बनिपा इसके पहुँचते ही चल देमे।●

### यम की च्छन्मयी प्रेरणा

सब को जाता है एक दिन। अमरिठ की बरिया पीकन कोई नहीं भाया है। कहीं कोई अतृप्ति नहीं है जो कुछ करना था कर चुके कहना था वह चुक। नारकीज महाजनबाद को लम्ब करके वह यापबाबी भी हो गयी जा नीतर ही भीतर हूँही को जमा रही थी।

और मुँपीजी बिकडुक धान्त निबिकार मम से घमकटोय बाप की उम नन्हीं-सी कोठरी में पड़े हुए अपने मन के आकाश में उस पुष्पी महाजनी

बामों — जरा चारपाई को ठीक करने दीजिए।

मुंशीजी ने कहा — इससे क्या होना जी। जो होना है वही होगा।

२५ अमस्त बाई बने राठ

तिबराजी बेबी सिपती हैं —

अगस्त महीने की २५ तारीख को दो बजे में जाग रही थी। उस दिन सुबह ही से बिस्किप थी। रात को आप सोये हुए थे। मैं आमोच पकी सिर दबा रही थी। सामने पड़ी थी। बार-बार उठी पर निगाह जाती। बार-बार ईश्वर से प्रार्थना करती कि ईश्वर क्या करे।

दो मा सवा दो का समय था। मुझसे बोले — रानी मुझे गर्मी मामूम हो रही है। पावद मुझे फिर लून की डी होगी। आज २५ तारीख है न?

मैंने कहा — नहीं आज २४ है।

जाप बोले — मुझे बड़ी गर्मी लग रही है। बेगो पड़ी में बाई तो नहीं बर रहे हैं।

इन्ही दिनों दीनेन्द्रजी जाये — प्रेमचंद छाट पर पड़े थे। रोग बड़ मया बा। उठ-बस न सकते थे। वह पीली पेट बड़ा था पर बेहरे पर घान्ति थी। मैं तब उनकी घाट के बराबर काड़ी-काड़ी बेर तक बैठा रहा हूँ। उनके मन के भीतर कोई-सीम कोई कड़वाहट कोई मीस उस समय करकरता मैंने नहीं देखा।

बयों करकराये मन में कुछ भी।

करकराते हैं वह मूठ थी माशमी बीला वह बेईमानियाँ जो उसने कीं वह छोटे बड़े बत्पाचार थी उसने बभी इस कभी उस महाने से अपने लम्ब-करक के उगार किये।

करकराती हैं वह सिप्याएँ जो पूरी नहीं हुईं। यहाँ तो वह सब कुछ भी मही। एक बिम्बयी मिली थी — शीनी शीनी बीनी एक चारट, जिसे कबीरदास ने जठन से बाँटकर ज्यों की त्यों पर दिया था।

फिर क्या है या करकराये ?

करकराती तो है वह देत जिम तुमने बिम्बयी के रेगिस्तानी सञ्चर में पोगे में पानी लपमझर पी लिया था और जो अब जुयायी करते वल्ल बाँतों के नीचे बा-भा जाती है।

यहाँ ता बिम्बयी गूने तैयों और बरागाहों को जानेबायी एक लंबी लीपी में-पी पागदंडी थी जिमके चारों तरफ गुले मेशान थे और राने में मीठे पानी के

छोटे-मोटे कच्चे कुम्भों की भी कमी न थी। रोज सबरे, निहार मुँह एक किसान अपने हल-बैल लेकर उसी पमडंडी से अपने उन खेतों को जाता था और दिन भर उस वणी हुई कड़ी धरती को जोतता था यास-सूस की निरवाई करता था बीच छिड़कता था — और दोपहर को सूरज जब धिर पर होता था उसकी बनिया रस-सुख और जो के मोटे मोटे सिट्टे लेकर पहुँच जाती थी

रोज वही पमडंडी उन्ही कुँबों का पानी अपने वही खेत-हार और कभी एक सूया-सा हास्य जिसकी मारिता उसके सुखेपन में है —

●होरी ने उसकी ओर आँस धरेरकर कहा — क्या समुद्रक जाना है जो पानी पोषाक लायी है? समुद्रक में कोई जवान साली-सलहज भी तो नहीं बैठी है जिसे जाकर बिगाडें।

होरी के गहरे साँसे पिचके हुए चहरे पर मुस्कणहट की मुहुता झलक पड़ी। बनिया ने लजाटे हुए कहा — ऐसे ही तो बड़े सजीले जवान हो कि साली-सलहजें तुम्हें देखकर रीस बाँयेगी।

होरी ने फटी हुई मिर्च को बड़ी सावधानी से छह करके पाट पर रखते हुए कहा — तो क्या तू समझती है मैं बूडा हो गया? अभी तो चाँदीश भी नहीं हुए। मर्द साठे पर पाठे होते हैं।

जाकर सीसे में मुँह बेसो। तुम जैसे मर्द साठे पर पाठे नहीं होते। धूप-बी आँखन लपाने तक को तो मिलता नहीं पाठे होये। तुम्हारी बसा बेस-बेककर तो मैं और भी सूबी जाती हूँ कि मगवान यह बुझापा कैसे बटेगा। जिसके डार नीज मरिने।

होरी की वह साँकिक मुहुता पचार्च की इस आँख में जैसे झुलस गयी। छकड़ी संभालता हुआ बोला — साठे तक पहुँचने की नीमत न माने पायेगी बनिया हमके पहले ही चल देये। ●

यम की खड्गमयी प्रेरणा

सब को जाना है एक दिन। जमरिठ की परिमा पीकर कोई नहीं बाया है। कही कोई अतृपि नहीं है जो कुछ करना या कर चुके कहना या कह चुके।

मारकीय महाजनवाद को लख्य करके वह धापबाची भी हो गयी जो भीतर ही भीतर हड्डी को बला रही थी।

और मुँधीवी विककुकुल घाल्य तिबिकार मन से यमकटोर बाग की उस नम्ही-धी कोठरी में पड़े हुए अपने मन के आकाश में उष पुणनी महाननी

सम्पत्ता के मूल्य का डूबना और एक नवी सम्पत्ता के पुरज का उगना देखते रहते हैं।

एक प्राकृति-नी अनिर्वायता है इसके पीछे। जो व्यवस्था समाज के प्रश्नों का उत्तर नहीं दे पाती उसका भिन्न जाना निश्चित है। कोई उसको बचा नहीं सकता।

महाजनी सम्पत्ता के पास ईर्ष्या जोर-जबरदस्ती बर्झानी झूठ, मिथ्या अभियाम-आरोप वस्थावृत्ति व्यभिचार, खोटी-भाके' आदि का कोई इलाज नहीं है। ये सारी बुराईयाँ दीकत की देण हैं, वेसे के प्रसार हैं महाजनी सम्पत्ता के इनकी सृष्टि की है। वही इनको पात्नी है और वही यह भी चाहती है कि जा वसित पीड़ित और विभित हैं वे इसे ईश्वरीय विधान समझकर अपनी स्थिति पर समुष्ट रहें

साथ बस यहाँ से वहाँ तक उनके सामने जाने की तरह साफ़ है। कहीं कोई बुझिया नहीं मोड़ नहीं सहाय नहीं दुःख नहीं साय नहीं पीस नहीं पछतावा नहीं। मन बिलकुल पक्का है — बख्ती तपायी हुई जंजर ईट की तरह।

तभी एक रात उन्होंने बेंनेत्र से कहा — बेंनेत्र लोग ऐसे समय ईश्वर को याद किया करते हैं। मुस भी याद दिलायी जाती है। पर सभी तक मुझे ईश्वर को कष्ट देने की उच्छल नहीं मामूम हुई।

धम्र हीसे-हीसे चिरता से कहे पदे के और मैं इस अत्यन्त घाल नास्तिक लाल की शक्ति पर विस्मित था। (बेंनेत्रकुमार)

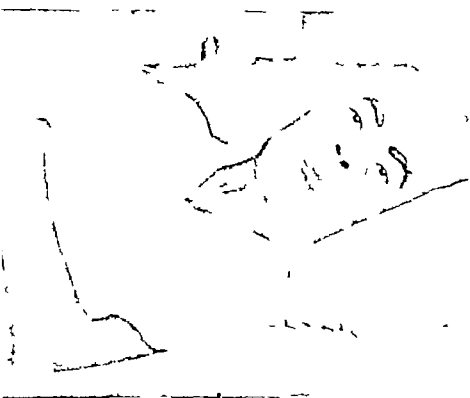
विस्मय की ऐसी कोई बात नहीं। इस नास्तिक लाल के पास अपना एक ईश्वर है त्रिमका स्मरण विषया अभितन्दन करते हुए वह कहता है —

मुझसे ये विश्व कि मसीहा मजसे भी भाव्य  
कि वे अनपवास गुणस हुए कसे भी भाव्य।

उनका हृष्य प्रघन है कि पीसूपपाणि मसीहा तघटीर उघकी और भा रहा है। उसे लागों की सासा स किनी की मुणम भा रही है।

यह पीसूपपाणि मसीहा नवी सम्पत्ता का वही गुण है, जिउके प्रति अपने हृष्य की परिप की सारी निष्ठा उंकेल्ले हुए मुंठीवी अपने इस वसीसतनामे से रहने हैं —

हाँ महाजनी सम्पत्ता और उघके गुणें अपनी शक्ति भर उघका विरोध करेवे उघके बारे में भ्रमजनक बातों का प्रचार करेवे जनसाधारण को बहुकार्येगे उनकी जाँगों में मूल तोरिने पर जा सत्य है, एक न एक दिन उघकी विजय होगी और अव्यय होगी।



अतिम बीमारी



उहाँ मन में इन गहरे विचारों का पायेय हो बहाँ यात्रा से फिर भय बैसा। जनम भर के यात्रा-नीह प्रेमचर को भानी इस अन्तिम यात्रा से तनिह भर नहीं लग रहा है।

भय हैतो उनह लिए जिन्हें छोड़कर बह जा रह हैं। मुड की छाया गहरी होती जा रही है। मारे ममार क गिम्पी और बिचारक उद्विग्न हैं जैसे हम बिकरात दैय को रोके। रामें रायों और मारी बारकुम उम दान्ति-महान्त के अन्तिहोत्र हैं। वेरिस में संस्कृति ग्या सम्मेलन हो रहा है। बसेन्स में बिस्वागि सम्मेलन हो रहा है।

जवाहरलाल नेहरू ने बसेन्स में हिन्द की आत्मा को बानी दी। भारत के गिम्पी और बिचारक भी पीडे नहीं रहे। उनकी ओर से एक योगाचार बसेन्स और वेरिस दोनों जगह भेजा गया जिस पर हमारे कुछ लोगों के साथ-साथ रबीन्द्रनाथ ठाकुर, रामानन्द बट्टोनाभ्यान मरकाल बभु प्रभुम्बरबई राय जवाहरलाल नेहरू और मृगु रीमा पर लेते हुए प्रेमचर के हृत्पात्रर ये।

सिडनी और विवेदिम बेब की किताब 'सोवियत कम्युनिजम' रबीन्द्रनाथ ठाकुर की गगियार चिठि के अंग्रेजी अनुवाद मजेज कार्ट्टिनिस्ट रेविड को की 'नयी स्वरुप' ओर ऐसी ही और भी न जाने कितनी किताबों और अन्तर्भागों की उष्मी का मिळनित्ता जो संसर और बस्टम्बवालों ने बना रखा था उसकी तीव्र नर्न्ता करन के बाद योगाचार में कहा गया था —

● महानुड की प्रेरणाया सारी पृथ्वी पर मँडल रही है। अविस्त्त तलगाही खान के बरले अस्त्र-संग्रह करके और संस्कृति के सुषोष के बरले साम्राज्य गल के प्रतामन की पकड़कर अपना सैनिकबारी रूप दिखला रही है। एक्सिदिना को पानन करने के लिए इटली ने जिन सब पद्धतियों का सहाय लिया है उनसे बुद्धि और सम्पत्ता के प्रति बिबावी सब लोगों को गहरा बरदा मगा है। बड़ी बड़ी साम्राज्यवाणी शक्तिवों की प्रनिबुद्धिता और परस्पर बिरोध संघर्ष राष्ट्रीयता-वाणी मनोबुलि को मनबाहा बड़ाहा कड़ाई के सामनों की ठेक बुद्धि — ये सब संकटमय परिस्थिति की पूर्व सूचना है। इस समय हम अपनी ओर से और करने सभी बेगबानियों की ओर स हमारे देगों के जनसाधारण के स्वर में स्वर मिलाकर कहना चाहते हैं कि हम मुड न बना करते हैं और चाहते हैं कि मुड का उम्ता छोड़ा जाय मुड में हमारा कोई भी हिठ नहीं है। किसी भी साम्राज्यवाणी मुड में भारत बर्ष के योगदान के हम ओर बिरोधी हैं क्योंकि हम जानते हैं कि आगापी मुड में सम्पत्ता का बिर्षस हो जायगा। ●

और कुछ ही अपनी मृत्यु की छाया मन पर नहीं है। एक रोज पंडित मन्व बुकारे बाजपेयी मिशन आये —

‘अपराह के प्रायः चार बजे होंगे। उनकी पत्नी शिवरानी जी उनके पास आती-जाती रहती थीं। मैं उनके सिरहाने बैठ उन्हें आस्वास्त्य दे रहा था। इसी समय हकीम साहब आ गये जो उन दिनों उनका इलाज कर रहे थे। मुझे ऐसा जान पड़ा कि प्रेमचंद जी को अब जीवन की आशा नहीं रह गयी है लेकिन हकीम साहब से उन्होंने जिस विनोद के साथ बातचीत शुरू की उसे देखकर मुझे आश्चर्य हुआ। मैंने देखा कि हकीम जी से बातें करते करते ठहाका लगाने की स्थिति आ गयी। उन्होंने हकीम जी से कुछ इस प्रकार कहा — ‘साँ साहब माफ़ की बड़ी इनायत है अब क्या देना दान कर दीजिए, अंतिम बड़ी नज़रबीन आ गयी है अब तो आप भी धाराम कीजिए और मुझे भी धाराम करने दीजिए। थोड़े दिनों के लिए इतना पक्का क्यों? और जब हकीम साहब अपनी हवा के गुन्नों का बयान करने लगे तो प्रेमचंद जी भेरी जोर देकर ठहाका मारकर हँस पड़े

पंडित रामनरेन त्रिपाठी का भी यही अनुभव रहा —

मैं एक इच्छा लेकर गया था कि यदि उनमें चलने-फिरने की शक्ति हो तो उन्हें मुम्तानपुर के जाता जहाँ की आवश्यकता उनका बहुत मुभाऊक पड़ती। पर वह तो करवट बनने से भी लाचार थे। मुझे देखकर वह मुस्कराये और पीरे से बोले — किनारे लग चुका हूँ पना नहीं अब नाब छोड़ दूँ।

और एक दोर पत्र जो त्रिपाठी जी सुन नहीं सके मगर जो शायद बही मर का त्रिम मूंगीजी इन दिनों अक्सर गुनगुनाया करते थे —

दरो दीवार वे हसरत से नज़र करत हैं,

गुन रहा अहमे बतन हम तो सकर करत हैं।

जैन की अब शायद उन्हें कोई उम्मीद न रह गई थी लेकिन यह बात कहकर त्रिमी का भी कुर्गान से क्या फ़ायदा। सिहाबा १८ सितम्बर को उन्होंने बीरेस्वर गिर को एक छाटा सा एल अपने छोटे बटे के हाथ से लिखवाया —

मैं तो अब बेहद कमजोर हो गया हूँ। उठ-बैठ भी नहीं सकता। लेकिन मर्द पट रहा है। डॉक्टर का कहना है कि पन्द्रह दिन में मर्द बिल्कुल पट जायगा। फिर भी अच्छा होना मैं थड़ा समय लगगा

और त्रिमी माता प्रेरणा से अपना आशीर्वाद भी टोक दिया जो कि बीरेस्वरसिंह बहूटे हैं उनके लिए एक नयी नींव थी।



मीठ से पत्रह दिन पहले उन्हें मिठी दयानरायन निगम को तार लेकर बुलाया —

सुबह को आखिरी मुलाकात का समीप कर न भूलेगा। वही प्रेमचंद जी को अपनी सुख-सुखेद मूरत के निहाल से हृदयों में एक ये ऐसे पीके और कमबोर हो गये थे कि मुस्किर से पहचान पड़ते थे। यैसी हुई भावें बैठे हुए गाल कटि की तरह सूखे हुए हाथ-पाँव रेशमर आँवों के सामने झंझरा छा गया। उनके न समनेवाले कहकहे बात करने की भी मुहलत न देते थे मगर अब आँसुओं का तार बँधा हुआ था।

यह अपने जाने का व्रम न था दोस्त के बिछड़ने का दर्द था —

न उठने की ताकत थी न बैठने की शक्त। सेठे ही सेठे हाथ पकड़ लिया और गले से चिमटा लिया जैसे कोई डरा हुआ बच्चा बिलक-बिलककर सीने से चिपटने की कोशिश करे। इतने कमबोर हो गये थे कि बात करने में भी शकन होती थी ताहम दम के-केकर आहिस्ता-आहिस्ता बातें करते ही रहे। मीने मना करना चाहा ठी कहन लग कि दुबारा मुलाकात की उम्मीद नहीं बना तुम्हारा कहना न टाकता

इन्ही आखिरी दिनों में निराला जी कई बार मिलने के लिए जाये और अपनी उन मुलाकातों के बारे में बहुत भरे हुए दिल से पहली अक्टूबर १९३६ को 'मारत' में लिखते हुए मुंतीजी की ये आखिरी सलकियाँ देना कीं —

● हिन्दी के सुपाठर-साहित्य के सर्षभेष्ट रत्न अन्तर्प्रान्तीय स्वाति के हिन्दी के प्रथम साहित्यिक प्रतिष्कल परिस्थितियों से निर्भीक और की तरह छड़नेवाले उपन्यास-संसार के एकछत्र-सम्पाद रचना-प्रतियोगिता में बिषय के अधिक से अधिक छिलनेवाले मनीषियों के समकक्ष आदरणीय धीमान् प्रेमचन्दजी आज महात्माधि से प्रसन्न होकर सम्पाद्यायी हो रहे हैं। कितने दुःख की बात है हिन्दी के जिन पत्रों में हम राजनीतिक नेताओं के मामूली बुझार का तापमान प्रतिदिन पड़ते रहते हैं उनमें वी प्रेमचन्दजी की हिन्दी का महान् उपकार करनेवाले प्रेमचन्दजी की अबस्था की छायाहिक खबर भी हमें पढ़ने को नहीं मिलती। दुःख नहीं यह खज्जा की बात है हिन्दी-आपियों के लिए मर जाने की बात है। उन्होंने अपने साहित्यिकों की ऐसी दया नहीं होत थी कि वे हँसते हुए जीते और आदीर्षनि बेदे हुए मरते। इसी अभिघाप के कारण हिन्दी महाराजनी होकर अपनी प्रान्तीय शक्तियों की भी दासी है।

मैं जब बाबू राजेन्द्र प्रसाद और पं जवाहरलाल नेहरू जैसे राष्ट्र के समाप्त नेताओं को देखता हूँ और साथ-साथ मुसे वी प्रेमचन्दजी की याद आती है मेरा

हृदय आनन्द और भक्ति से पूर्ण हो जाता है। मैं देखता हूँ राजनीति के सामने साहित्य का सर नहीं मुका बल्कि और ऊँचा है केवल देखनेवाले नहीं है। हिन्दी-भाषी मुझे अच्छी तरह जानते हैं। वे यह भी जानते होंगे मेरे कार्यों में उनके की आवाज कम जाती है। जिस सामना से आदमी आदमी है जिसके कारण गठा सम्मान पाते हैं मैं उसी की बाँध करता हूँ। वहाँ प्रेमचन्दजी बरिष्ठ प्रेमचन्दजी अपने अध्ययन से सिखा प्राप्त करनेवाले प्रेमचन्दजी साहित्य की सामना में यहाँ-वहाँ बटवते फिरनेवाले प्रेमचन्दजी फिर भी एकनिष्ठ होकर दिन पर दिन महीने पर महीने वर्ष पर वर्ष साधना करते रहनेवाले प्रेमचन्दजी बड़े बड़े बहुत बड़े हैं।

इस बार प्रायः साढ़े तीन महीने मैं बनारस रहा। प्रेमचन्दजी के सरस्वती प्रेस में मेरी गीतिका छप रही थी। प्रकाशक भारतीय मण्डार। एक दिन पं० बाबूराज पाठक जिनका मैं अतिथि था बोले — प्रेमचन्दजी से मिल लीजिए। उस समय प्रायः आधा जून दुपहर की कू चलती थी। प्रेमचन्दजी के नाम से मैंने चम्पना स्वीकार कर लिया। प्रेस पहुँचकर बोमबिसे पर चलकर देखा प्रेमचन्दजी बैठे हैं। मैं उनके परिवार भर से परिचित था। श्रीमती शिवरानी जी भी आयीं। मैंने प्रणाम किया। फिर एक स्नास पानी मीमा। बहुत दिनों बाद प्रेमचन्दजी को देगा था। मामूम होता था वे और दुबसे हो गये हैं। उनसे कहा। उन्होंने कहा जाँगा कहा करते हैं नहीं यह तो मेरी काठी है। कुछ देर तक साहित्यिक बातचीत हुई। फिर मैं बिदा हुआ। उस दुर्बल देह में सक्रिय और जोर पूर्ण भाषा में थे।

कुछ दिन बीत गए। प्रेमचन्दजी का मोहाम की बाँधी चर्चा हो रही थी। एक दिन मुना प्रसाद जी प्रेमचन्दजी से मिलने मये थे वे सख्त बीमार हैं। फिर मुना प्रेमचन्दजी एमरे के कारण सलनऊ गये हैं। फिर मामूम हुआ वे सलनऊ में बागम आ मये हैं। एक दिन पं० मन्त्रदुलारे जी बाबूराज के साथ उन्हें देखने गया। वे उसी कमरे में बैठे हुए थे। पर इस बार फर्श पर न वे बिछे पर्यस पर बैठे हुए थे। श्रीमती शिवरानी बैठी उनके लिए दवा तैयार कर रही थीं। उनकी लड़की अपने लड़कों को लेकर आ गयी थी एक और लड़ी थी मुझे देकर नमस्ते किया मैं प्रेमचन्दजी की बीमारी की चिन्ता में था कुछ कहा नहीं सिर्फ हाथ उठकर नमस्कार किया। वह लड़ी हँस रही थी। मेरी बुद्धि की निवाही उसके मुख पर पड़ी — उसके मुख पर मुझे शाई सी दिनी। अन्त नीच उसका अध्ययन गुण्य था लड़कों को गलते हुए मैंने न देगा होता उनका परिचय मानम कर उस दरवा न बुता होता तो पहचान न पाता कि वह लड़की है। फिर भी मैंने

प्रेमचन्दजी से पूछा। सड़की ने सड़की की चुन्नी आबाज से कहा क्या आपने मुझे पहचाना नहीं? मैंने तो आपको पहचान लिया। मैंने कहा मुझमें तो कोई परि वर्तन हुआ नहीं पर तुम पहले सड़की थी अब मैं हो गई हो। सड़की सोंप गयी। प्रेमचन्दजी चुलकर हँसे। देवी शिवरानी जी दबा लीवार करती हुई मुस्कराई।

प्रेमचन्दजी दुर्बल थे जमोदर का पूरा प्रकोप का फिर भी एक बीर की तरह बैठे हुए घातलाप करते रहे। बड़ी जिन्दादिली गुननेवालों पर उठका असर पड़ता हुआ जैसे गुननेवालों को ही वे स्वास्थ्य पहुँचा रहे हों। मैं उस विजयिनी ध्वनि को तोल रहा था जिसका गर नीचा नहीं हुआ जो हिन्दी की महाशक्ति है और रू-रूकर दुर्बल अस्थियोप प्रेमचन्दजी को वेत रहा था। बूंदरे प्रसंग पर पूछा आप समनऊ मये ये कहाँ क्या कहा डाक्टरों ने? कुछ नहीं संतोषजनक उत्तर नहीं मिला। कहा कुछ नहीं ठहरने के लिए कहा पर कुछ बिसेन्ती की शिकामत मानूम की परदेस देख भाषबासा कोई नहीं कइके को से पया था नैन तीमारदारी करे, लौट आया। बाजोपीजी से खेल आदि के लिए प्रेमचन्दजी ने कहा। कुछ देर तक वामपीत करके फिर हय लोगों ने उनसे बिदा की।

कुछ दिन और बीते। 'गीतिका' छप चुकी थी। अन्तिम दो-एक फर्म थे। मैं प्रेम गया हुआ था। प्रेमचन्दजी के बड़े सड़के मिले। प्रेम की आबन्धक बातें कइकर मैंने उनसे प्रेमचन्दजी से मिलने की इच्छा प्रकट की। उन्होंने कहा अब तो बह यहाँ नहीं रहते। मुझे उनका मुकाम बतलाया। मेरे रास्ते में ही मकान पड़ता था। मैं चला। बावल घिरे थे। चक्रे-चक्रे पानी घिरते लया। झाटा नहीं था। मींगते हुए जानक माने लगा। मकान के पास आकर अतिरथम में पड़ गया बि' कीन-मा मकान होना। फाटक बतलाया था यहाँ फाटक न विरता एक दरवाजा छिड़ दैग पडा। डरते हुए लोभा। भीतर झम्वा मैदान देला। किनारे से रास्ता गया था। मैदान के उस तरफ मकान था। कोई था नहीं जिससे पूछता। हिम्मत बामकर बड़ा। किनारे जमेसी की जाइ नहीं-कहीं अपराजिता लियनी हुई। बोंनों मिले। जमेसी के राठ के लिके कोमल फूल बूँतों के धपेडों से ब्याहुल थे। देलता हुआ एक फूल चुमा। फूल बल पर रहे से थे। उठ सिम्वा। लिये हुए उनकी दया पर बिचार करता हुआ मकान के सामने आया। दूर से दो-एक अपरीचित देविमी बेल पड़ी। एक जोड़ी छोटे जूते पडे थे। साचा ये उसी सड़की के लड़के के जूते होंगे। एक धगाळ बिक पडी हुई देख पडी। उबर पला सब तक धिबराजी जी देख पड़ी। उनसे पूछा। दीन स्वर से उन्होंने कहा साये हूँ आण। मैं गया। मेरा प्रेमचन्दजी अत्यन्त दुर्बल हो गये हैं।

वेन फूसा हुआ है। प्रेमचन्दजी न जानिं लोसीं मुझे देला। बड़ी बरन

बुट्टि। मैंने प्रणाम किया। पूछा आप कैसे हैं? दोनों बाँहों की ओर दृष्टि फेरकर उन्होंने कहा देखिए। बड़ा करण्य स्वर। अत्यन्त दुर्बल बहिं। मुझे संका हो पली। सिंह को गोभी भरपूर सग गई है। अब वह आबाज नहीं रही। मैं चुपचाप कुर्सी पर बैठ गया। कैसे संभलेगा? प्रेमचन्दजी कोक। उन्हें अपने बच्चों की चिन्ता ही रही थी। मैं भरसक अपने को संभाल रहा था। मेरे हाथ का पूल नहीं घूटकर फिर गया।

कुछ दिन और बीते। मन्दबुझारे जी के हाथ एक मीठ मैंने हंस कार्यालय को भेज दिया। बड़ी कविता लिख रहा था वह तैयार न हुई थी फिर नेत्रों के लिए कहला भेजा। मन्दबुझारे जी अपना सेज लेकर जानेवाले थे प्रेमचन्दजी को देखने के उद्देश्य से। इसके कुछ दिन बाद वाचस्पति जी पाठक और पधमाउपयन जी आचार्य के साथ कापी छोड़ने से पहले प्रेमचन्दजी के दर्शनों के लिए चला। पधमाउपयन जी गीता धर्म के संपादक हैं अभी तक प्रेमचन्दजी से व्यक्तिगत रूप से परिचित नहीं हो सके। मैपिली-मान के लिए उनकी कुछ आशा है। हम लोग एक्के से चले। रास्ते भर गुप्पजी के अमितम्बन की बात होती रही। मुन बार-बार प्रेमचन्दजी की याद आती रही। गुप्पजी को आबर की बुट्टि से देखता हूँ उसक अनेक प्रमाण वे बुझा हूँ सोच रहा था प्रेमचन्दजी को म ता ममसाप्रसार पारिलौपिक विज्ञा म कोर् अमितम्बन। वे हिन्दी साहित्य सम्मेलन के समापित भी नहीं चुने पये। मन ने कहा — तुम्हारे लिए भी यही कैतला है जिसने कैला रिया कैमा पाया। मैंने कहा मैं इमी तरह गुजसैगा। अगर कुछ काम कर सका ता नाम-या मुझे नहीं चाहिए।

अब तक प्रेमचन्दजी का मजान आ गया। हम काम एक्के स उतरकर भीतर चले। मकान के सामने पहुँचे तो दो नवायल्लुख बैठे हुए देख पड़े। पर एगे बैठे थे जैसे घर के आदमी हों। मैंने सोचा ये भय्याचार होग या रिम्तदार। सापिपों के साथ भीतर गया। सम्राटा था। बड़ी धीमी आबाज में एक आगल्लुक ने कहा बैठिये। मैं बणम उतारकर चारपाई पर बैठ गया। इपर उपर देखा पहूपायन ना कोर् न देग पड़ा। तब उम्ही महानय से कहा हम माग प्रेमचन्दजी को देखने के लिए आये हैं। नवागल्लुक ने मेरा नाम पूछा। मैंने अपना नाम बनलाया। हम समय देवी सिचरानीजी बाहर आयी। प्रेमचन्दजी बही चारपाई पर था। रानी बाँपकर परा कर गया गया था। परा हटाने लयी। मैं प्रेमचन्दजी के सामनेवाली चारपाई की आर बडा ता आगल्लुक महोदय ने कहा क्याग बातचीत मना है। मैं अपने लदन पर चन्दका बैर गया। बपते ही मेरे होग उड़ पये। प्रेमचन्दजी ने हाथ आटाए रहा — अब तो अन्तिम विरा है। ●

प्रथम  
म  
मस लत  
मिन  
बुटी  
कैसरी

वैदे  
वैद  
मस मी  
बडा म  
ई  
पा

लेख समाप्त करते हुए निराशाजी ने अपने ईश्वर से प्रार्थना की — हे ईश्वर !  
मेकल इस बर्ष !

लेकिन इस बर्ष की कौन कहे इस बिन की भी मजूरी वहाँ से नहीं मिली और  
बहु आँसु हमेशा के लिए मुँह बर्षों बिनके बारे में निराशाजी ने कभी अपने घर की  
पैसबाड़ी बोली में कहा था — भाँति कौनो ने पास आय तो यहि के पास भाय !

मीठ से पहली रात की बात है —

● मैं उनकी दरिया ने बरबर बैठा था। सबेरे सात बजे उन्हें इस दुनिया पर  
जाग मीप सेनी थी। उठी सबेरे तीन बजे मुझसे याने होती थी। चारों ओर  
सशान्त था। बमरा टोना और भँभेरा था। सब सोये पड़े थे। रात उनके मुँह  
से फुमफुसाहट में निकलकर आ जाते थे। उन्हें कान से अधिक मन से सुनना पड़ता  
था।

तभी उन्होंने अपना दाहिना हाथ मेरे सामने कर दिया। बोले — दाब दो।

हाथ पीला क्या सरेर था और पूसा हुआ था। मैं बबाने गया  
इतने में प्रमचन्द्रजी बोले — जीनेन्द्र !

बोसबर चुप मुझे देखते रह। मैंने उनके हाथ को अपने दोनों हाथों में रखा।  
उनका देखते हुए कहा — आप कुछ फिक न कीजिए बाबूजी। आप अब अच्छे  
हुए। और काम के लिए हम सब लोग हैं ही।

बहु मुझे देखते रहे देखते रहे। फिर बोले — भारत से काम नहीं चलेगा

मैंने कहना चाहा — भारत

बोले — बहुत न करो बहुत करबट सेकर आँसु मीप सीं।

घोड़ी देर में बोले — गर्मी बहुत है, पला करो।

मैं पंखा करने लगा। उन्हें गीब न आती थी तकमीक बेहद थी। पर बरहते  
न ने चुपचाप आँसु बोलकर पड़े थे।

इस-गन्तह मिनट बाद बोले — जाओ सार्थी। ●

और पत्नी स कहा — रानी तुम मेरे पास स नहीं मठ आया करो। तुम  
पास बीटी खूती हो तो मुझे डापस खूता है। नरु तुमन मास की यलनी जो  
सिला की थी बहु मुझे नहीं पनी। तुम ऐसी चीजें मुझे क्यों खिलाती हो ?

पत्नी ने कहा — डाक्टर की राय से मैंने बहु चीज आपको खिलायी है।  
डाक्टर की राय मानूँ कि आपकी ?

मुँचीजी ने हँसकर कहा — डाक्टर की तो तःसीफ नहीं है तःसीफ तो  
मुझे है !

पत्नी ने कहा — उससे आपको कुछ मुक्तमान हुआ क्या ?

मुंसीबी बोले — देखा नहीं तुमने किठनी घोर का दस्त मुझे हुआ था।

पत्नी ने कहा — इससे कायशा ही है, सब पानी निकल जायगा।

मुंसीबी ने कहा — पानी के साथ सब कुछ निकल जा रहा है रानी !

बाग़ अन्दूबर। सुबह हुई। जाड़े की सुबह। सात-साढ़े सात का बरत होगा।

मुँह धुसाने के लिए घिबराती गरम पानी लेकर आई। मुंसीबी ने दाँत मीजने के लिए धरिया मिट्टी मुँह में ली बो-एक बार मुँह बलगा और हाँठ बैठ गये। कुस्सा करने के लिए इलायत किया पर मुँह नहीं फँस सका। पत्नी ने उनको घोर मयाते देखा कुछ कहने के लिए

पाँच छल जमीन खिसक गई। काम में कोई कुछ कह गया।

बहरकर बोली — कुस्सा भी नहीं कीजिएगा क्या ?

वहाँ तो उस्ती साँस बर रही थी।

मबाब ने बेबस आँसों से रानी को देखा और वम उलझते-उलझते रकती अटकती कुर्से के भीतर से आती हुई-सी भारी सँजती आबाब में डूबते आदमी की तरह पुकारा — रानी

रानी लपकी — कि शायद मेरे हाथ से कुस्सा करना चाहते हैं। रामकिशोर ने बीज में ही पकड़ लिया — बहन अब वहाँ क्या रखा है।

समझी तब पड़ोसी। बिचारीबासे कुटने लगे।

अभी बनी। ग्यारह बजते-बजते बीस-पचीस साथ किती मुमनाम आदमी की फाज लेकर मजिबगिका की ओर गले।

रास्ते में एक राह बसते में दूसरे में पूछा — क रहस ?

दुमरे ने जबाब दिया — कोई मास्टर था।

उधर, बामपुर में रबीन्नाब ने धीम में कहा — एक छतन मिला था तुमको तुमने तो दिया।

## परिशिष्ट १

### उपन्यासों का काल-निर्देश

बनारस मन्मथि  
उर्ध्व  
विश्वान-रहस्य

८ अक्टूबर १९ ३ से १ फ़रवरी १९ ५ तक बनारस के उर्ध्व साप्ताहिक 'भाषात्रय पत्र' में क्रमशः प्रकाशित।

हम धर्मा ब हम  
सबाब

दो संस्करण हुए। पहला संस्करण बाबू महादेव प्रसाद वर्मा ने यहाँ से और दूसरा नवलक्षिणोर प्रेस से प्रकाशित हुआ। प्रकाशन की तिथि किसी पर नहीं है। इन्तयाब अली 'ताब' का नाम २९ जनवरी १९२१ के अपने छत में प्रेमचंद ने इसकी १९ की तस्वीर कहा है। कहना मुशकिल है पर हो सकता है कि यह लिखा लिखा इतने ही पहले गया हो पर इसका प्रकाशन १९ ६ में ही मानना सभ्य जान पड़ता है। इस अनुमान का आधार यह है कि इसका पहला विज्ञापन सितंबर १९ ६ के 'जमाना' में मिलता है और फिर बराबर मिलता है।

हम

'हम धर्मा ब हमसबाब' का हिन्दी रूपान्तर। जैसा कि उपरोक्त पुस्तक से स्पष्ट है उसका प्रकाशन १९ ७ में इण्डियन प्रेस से हुआ। रमानरायण नियम का नाम १७ जुलाई १९२६ के अपने छत में प्रेमचंद ने लिखा है— १९ ४ में एक हिन्दी नाविक प्रेमा लिखकर इण्डियन प्रेस से छापा करवाया। अब इस बात का यही मास्य सेना ठीक होया कि यह उपन्यास लिखा गया १९ ४ में पर छापा १९ ७ में जिसके बारे में अब कोई संदेह नहीं।

हम

संभवतः १९ ७ में बनारस मेडिकल हाल प्रेस से प्रकाशित हुआ। इस अनुमान का आधार इतना ही है कि उसकी

समालोचना अक्टूबर-नवंबर १९७७ के 'जमाना' में निकली। 'जमाना' के साथ प्रेमचंद के गहरे आत्मीय संबंधों को देखते हुए, पुस्तक के प्रकाशन का समय उससे आसपास मानना बहुत असंगत न होगा।

**बड़ी रानी**                      अप्रैल १९७७ से अगस्त १९७७ तक 'जमाना' में क्रमशः प्रकाशित।

**जलबए ईसार**              १९१२ में इण्डियन प्रेस इस्साहामाद से प्रकाशित।

**सेवासदन**  
(बाजारों हस्त)              सिन्धु पहले उर्दू में गया छपा पहले हिन्दी में। बयानरायन निगम के नाम पत्रों के आधार पर मूल उर्दू पाण्डुलिपि का लेखन-काल जनवरी १९१७ से जनवरी १९१८ तक ठहरता है। कुछ ही समय बाद उसका हिन्दी-रूप हुआ और 'सेवासदन' को प्रेस में देने के लिए प्रेमचंद ११ जून १९१८ को कहसकता पये।

पुस्तक का प्रकाशन १९१९ के मध्य में किसी महीने हुआ। उसकी पहली समालोचनाओं में पंडित पद्मसिंह शर्मा और श्री रामदास गौड़ की मिली हुई समालोचना है जो दोनों के हस्ताक्षर से ८ सितंबर १९१९ के 'स्वदेश' में निकली।

**प्रेमाधम**  
(योग्य आश्रित)              सिन्धु पहले उर्दू में गया छपा पहले हिन्दी में। मूल उर्दू पाण्डुलिपि का लेखन-काल २ मई १९१८ से २५ फरवरी १९२० तक है जो कि पाण्डुलिपि पर ही अंकित है। प्रकाशन १९२१ के पूर्वार्ध में हुआ। लेखक न मूल में हमके का नाम मोचे थे—'ताकाम और निकाम'।

**बरदान**                      'जलबए ईसार' का हिन्दी अन्तर। इसका प्रकाशन उर्दू संस्करण के लगभग नौ बरस बाद १९२१ में अय नगार, बंबई में हुआ। लेखक की ओर से प्रकाशक को लिखे गये अधिकार-पत्र पर १८ अक्टूबर १९२१ की तिथि अंकित है। मई १९२१ में प्रकाशित एक पुस्तक के पीछे उगाता विज्ञापन भी मिलता है।



रंगमूमि  
(बौगाने हस्त)

छिपा पहले उर्दू में गया छपा पहले हिल्ली में।  
मूल उर्दू पाण्डुलिपि का सेयम-काम—१ अक्टूबर १९२२  
से १ अप्रैल १९२४ तक जो कि पाण्डुलिपि पर ही अंकित  
है। इसी पाण्डुलिपि पर मुन्शी जी के अपने अक्षरों में यह भी  
टंक हुआ है—

Hindi finished dated August 12 1924

पुस्तक के प्रथम संस्करण पर अक्षर पत्रमी १९८१ छपा है  
लेकिन शिवपूजन सहाय के नाम चिट्ठी में प्रकट है कि  
पुस्तक शुरू जनवरी १९२५ में ही निकल गयी थी।

कामाकम्प  
(पर्यटन मन्त्र)

मूल पाण्डुलिपि हिन्दी में। उसको बेचने से पता चलता है  
कि आरंभ में पुस्तक के तीन नाम रहे गये थे—असाध्य  
साधना माया स्वप्न आर्तमात्र। इसका सेयम १ अप्रैल  
१९२४ को शुरू हुआ। यह तिथि पाण्डुलिपि के प्रथम  
पृष्ठ पर ही अंकित है। प्रकाशन १९२६ में हुआ।

अर्द्धकार

अनाथोलफांस के 'बायस' का भारतीय परिवेश में रूपांतर।  
रूपांतर और प्रकाशन का काम छाब-छाब चमत्ता  
रहा। 'कामाकम्प' के साथ ही १९२६ में सरस्वती प्रेस से  
प्रकाशित।

निर्मला

नवंबर १९२५ से नवंबर १९२६ तक 'बाई' में क्रमशः  
प्रकाशित।

प्रतिमा  
(बेबा)

जनवरी १९२७ से नवंबर १९२७ तक 'बाई' में क्रमशः  
प्रकाशित। 'प्रिमा' के ही कथानक को लेखक ने फिर से  
उठामा पर कथा के विकास में महत्वपूर्ण अंतर ला  
या।

१९११ के आरंभ में सरस्वती प्रेस से प्रकाशित।

एकन

कर्मसूत्रि  
(मैदाने अमस)

पाण्डुलिपि के उपरुम्भ अथ के आधार पर इसका सेसन १६ अप्रील १९३१ को आरंभ हुआ। प्रकाशन अमस १९३२ में हुआ।

गौरान  
(पद्मबाल)

पथों के आधार पर इसका सिम्नना १९३२ में ही गुरु हो गया था पर 'हंस' और 'जावरण' की अनेक कठिनाइयों और बाद को सारु भर के बर्ह-अवास के कारण इसकी गति बहुत धीमी रही। पुस्तक का प्रकाशन जन १९३६ में हुआ।

मंगलसूत्र

अपूर्व उपन्यास वा अधिकतर अंतिम बीमारी के दिनों में सिपा गया। प्रकाशन सेसक के रैहान्त के अनेक वर्ष बाद १९४८ में हुआ।

## परिशिष्ट २

### कहानियों का काल-निर्देश

क्रम	नाम कहानी	कहाँ प्रकाशित	कब प्रकाशित
१	बंभेर	बमाना	जुलाई १९१३
२	अग्निप्रभाषि	दिनांकभारत	जनवरी १९२८
३	अधिकार-चिन्ता	माधुरी	अगस्त १९२९
४	अनाथ लड़की	बमाना	जून १९१४
५	अपनी करनी	बमाना	अक्तूबर १९१४
६	अभिषाया	माधुरी	अक्तूबर १९२८
७	अमावस की रात	बमाना	मार्च १९१३
८	अमृत	उर्ध्व प्रमपञ्चीती	१९१४ से पूर्व
९	असम्प्रीता	माधुरी	अक्तूबर १९२९
१०	आश्विनी तीर्थूष	बंभेर	अगस्त १९११
११	आश्विनी मंजिल	बमाना	सितंबर १९११
१२	आश्विनी हीरा	हंस	मार्च १९३१
१३	आया-बीछा	माधुरी	दिसंबर १९२८
१४	आरम-मगीत	माधुरी	अगस्त १९२७
१५	आत्मापम	बमाना	जनवरी १९२२
१६	आदर्श विरोध		जुलाई १९२१
१७	आपबीती	माधुरी	जुलाई १९२३
१८	आभूपप	माधुरी	अगस्त १९२३
१९	आस्था	बमाना	जनवरी १९१२
२०	आधुति	हंस	नवंबर १९३३
२१	इन्द्रधनु का बून		मार्च १९२२
२२	इस्तीफ़ा	भारतेन्दु	दिसंबर १९२८
२३	ईशगाह	बाँध	अगस्त १९३३

- कमभूमि  
(मैदाने अमल) पाण्डुलिपि के उपलब्ध अद्य के आधार पर इसका संस्करण १६ अप्रैल १९३१ को आरंभ हुआ। प्रकाशन अगस्त १९३२ में हुआ।
- योदान  
(पञ्चान) पत्रों के आधार पर इसका लिखना १९३२ में ही शुरू हो गया था पर 'हंस' और 'जागरण' की अनेक कठिनाइयों और बाद को छाल भर के बंबई-प्रवास के कारण इसकी गति बहुत धीमी रही। पुस्तक का प्रकाशन जून १९३६ में हुआ।
- संपन्नसुप्त अपूर्व उपस्थास जो अधिकतर अंतिम बीमारी के दिनों में लिखा गया। प्रकाशन लेखक के देहांत के अनेक वर्ष बाद १९४८ में हुआ।

परिशिष्ट २  
कहानियों का काल-निर्देश

क्रम	नाम कहानी	कहानी प्रकाशित	काल प्रकाशित
१	अंधर	जमाना	जुलाई १९१३
२	अमितमाधि	विशालभाएठ	जनवरी १९२८
३	अपिहार-निष्ठा	माधुरी	अपस्त १९२२
४	अमाप लड़की	जमाना	जून १९१४
५	अपनी करनी	जमाना	अक्तूबर १९१४
६	अमिखाया	माधुरी	अक्तूबर १९२८
७	अमावस की रात	जमाना	मई १९१३
८	अमृत	उर्दू प्रेमपत्रीसी	१९१४ से पूर्व
९	अल्पयोद्धा	माधुरी	अक्तूबर १९२९
१०	आखिरी लोहका	अरन	अगस्त १९३१
११	आखिरी मंडिल	जमाना	दिसंबर १९११
१२	आखिरी हीमा	हृत्	मई १९३१
१३	आगा-पीछा	माधुरी	दिसंबर १९२८
१४	आत्म-अवीर	माधुरी	अपस्त १९२७
१५	आत्माटम	जमाना	जनवरी १९२
१६	आर्य विरोध		जुलाई १९२१
१७	आपबीची	माधुरी	जुलाई १९२३
१८	आभूषण	माधुरी	अपस्त १९२३
१९	आन्हा	जमाना	जनवरी १९१२
२०	आहुति	हृत्	नवंबर १९३
२१	इज्जत का धून		मई १९२०
२२	इस्तीफा	भाएठेनु	दिसंबर १९२८
२३	इतिगाह ४२	बाँव	अगस्त १९३३

क्रम	नाम कहानी	कहीं प्रकाशित	कब प्रकाशित
२४	ईदबरीय म्याय	घरस्वती	जुलाई १९१७
२५	उद्यार	बाँद	सितंबर १९२४
२६	उम्माद	भापुरी	जनवरी १९३१
२७	उपदेश	जमाना	मई १९१७
२८	ऐक्येय	भापुरी	अक्तूबर १९२७
२९	झमा	भापुरी	जून १९२४
३	बन्नाकी	भापुरी	अप्रैल १९२६
३१	कप्तान माहब	जमाना	दिसंबर १ १७
३२	कञ्ज	बामिया	१९३६
३३	कर्मों का फल	उर्दू प्रेमपरीची	१९१४ से पूर्व
३४	कबच	बिशाकभारत	दिसंबर १९२९
३५	कानूनी कुमार	भापुरी	अगस्त १९२९
३६	कामना-तब	भापुरी	अप्रैल १९२७
३७	कायर	बिशाकभारत	जनवरी १९३३
३८	कुत्छा	आपरब	जुलाई १९३२
३९	ठुमुम	बाँद	अक्तूबर १९३२
४	कंदी	हंस	जुलाई १९३३
४१	कीगल	बाँद	अगस्त १९२३
४२	क्रिस्ट मैज	जमाना	जुलाई १९३७
४३	कुबड़	भापुरी	फरवरी १९२९
४४	गुलाई कौबदार	बाँद	नवम्बर १९३४
४५	गूल गज्जर	जमाना	जुलाई १९१४
४६	शरीफ की हाय	जमाना	अक्तूबर १९११
४७	दिम्ना	हंस	अप्रैल १९३२
४८	गुन्ती डंडा	हंस	फरवरी १९२९
४९	पैगज की बटार	जमाना	जुलाई १९१५
५०	गुन्नाह		जून १९२३
५१	मृन्नीति	बाँद	अगस्त १९३५
५२	मर्मंड का पुत्रता	जमाना	अगस्त १९१६

क्रम	नाम कहानी	कहाँ प्रकाशित	कब प्रकाशित
५३	घरबमाई	माधुरी	नवंबर १९२९
५४	पासवाली	माधुरी	नवंबर १९२९
५५	भरमा		नवंबर १९२२
५६	भरकार	माधुरी	मार्च १९३२
५७	भोरी	माधुरी	सितंबर १९२५
५८	बाहु	हंस	मई १९३४
५९	जीवन का पाप	हंस	जून १९३५
६०	जुगनू की भरक	अमाना	अक्तूबर १९१६
६१	जुलस	हंस	मार्च १९३३
६२	केल	हंस	फरवरी १९३१
६३	क्योति	पीर	मई १९३३
६४	क्यालामुली	अमाना	मार्च १९१७
६५	कौली	आगरा	अगस्त १९३२
६६	ठाकुर का कुर्मा	आधरम	अगस्त १९३२
६७	बामुस का हँसी	हंस	नवंबर १९३२
६८	बिन्नी के रुपये	माधुरी	जनवरी १९२५
६९	बिमांस्ट्रेचन	प्रेमा	अप्रैल १९३१
७०	बपोरवांस	हंस	मार्च १९३१
७१	तंगिबासे की बड	अमाना	सितंबर १९२६
७२	ठाबान	हंस	सितंबर १९३१
७३	तिरिया भरितर	अमाना	जनवरी १९१३
७४	तेतर	पीर	दिसंबर १९२४
७५	त्यागी का प्रेम	मर्यादा	नवंबर १९२१
७६	वण्ड	पीर	अक्तूबर १९२५
७७	बपुनी	कहकनी	जनवरी १९२२
७८	दारोणा बी	माधुरी	अगस्त १९२८
७९	दिल की रागी	पीर	नवंबर १९३३
८०	बीशा	माधुरी	सितंबर १९२४
८१	दुनिया का सबसे अनमोल रत्न	अमाना	१९०७

क्रम	नाम कहानी	कहाँ प्रकाशित	कब प्रकाशित
८२	दुर्गा का मन्दिर	सरस्वती	दिसंबर १९१७
८३	दुष का दाम	हंस	जुलाई १९३४
८४	पुसरी घाटी	चंद्र	दिसंबर १९३१
८५	बेबी	चाँद	अप्रैल १९३५
८६	दो झर्रों	माया	जनवरी १९३३
८७	दो बहनों	मापुरी	अगस्त १९३६
८८	दो बहनों की कथा	हंस	अक्टूबर १९३१
८९	दो माई	अमाता	जनवरी १९१६
९०	दो सखियाँ	मापुरी	मई १९२८
९१	बर्मसंघट	अमाता	मई १९१३
९२	बिक्कार १	मापुरी	फरवरी १९३३
९३	बिक्कार २	चाँद	फरवरी १९२५
९४	बोला	अमाता	नवंबर १९१६
९५	नदी का नीति-निर्वाह	सरस्वती	मार्च १९२४
९६	नरक का दारोघा	उर्ध्व प्रेमपत्नीसी	१९१४ से पूर्व
९७	नरक का मार्ग	चाँद	मार्च १९२५
९८	नाग	चाँद	फरवरी १९३४
९९	नगीहनों का बफ़र	अमाता	जून १९१२
१	निमंत्रण	सरस्वती	नवंबर १९२६
१ १	निर्बन्ध	चाँद	जून १९२४
१ २	मेडर	हंस	जनवरी १९३३
१ ३	मेकी	उर्ध्व प्रेमपत्नीसी	१९१४ से पूर्व
१ ४	मैरास्य	चाँद	जुलाई १९२४
१ ५	मैरास्य-मीला	चाँद	अप्रैल १९२३
१ ६	श्याम	मापुरी	मार्च १९२९
१ ७	पंच परमेश्वर	सरस्वती	जून १९१६
१ ८	पंडित मोटराम की डायरी	आगरा	जुलाई १९३४
१ ९	पछाबा	अमाता	नवंबर १९१४
११०	पानी से पति	मापुरी	अप्रैल १ ३



क्रम	नाम कहानी	कहाँ प्रकाशित	कब प्रकाशित
१११	पर्वत-यात्रा	माधुरी	अप्रैल १९२९
११२	परीला	चाँद	जनवरी १९२३
११३	पगु से मनुष्य	—	अक्टूरी १९२२
११४	पाप का अग्निदुग्ध	अमाना	मार्च १९११
११५	पिसमहारी का कुर्मी	माधुरी	जून १९२८
११६	पुत्र प्रेम	सरस्वती	जून १९२२
११७	पूर्व-संस्कार	माधुरी	दिसंबर १९२२
११८	पुस की रात	माधुरी	मई १९३३
११९	पैपुजी	माधुरी	अक्टूबर १९३५
१२०	प्रायश्चित्त	माधुरी	जनवरी १९२९
१२१	प्रारम्भ	सरस्वती	अक्टूबर १९२१
१२२	प्रेम का उदय	—	जून १९३१
१२३	प्रेमसूत्र	हंस	अप्रैल १९२६
१२४	प्रेरणा	सरस्वती	मई १९३१
१२५	प्रत्येह	बिद्यालभारत	अप्रैल १९१८
१२६	प्रातिज्ञा	अमाना	मार्च १९२९
१२७	बड़े घर की बेटी	बिद्यालभारत	दिसंबर १९१०
१२८	बड़ बाबू	अमाना	अक्टूरी १९२७
१२९	बड़ भाई साहब	बहारिस्तान	नवंबर १९३४
१३०	बसिवाग	हंस	मई १९१८
१३१	बहिष्कार	सरस्वती	दिसंबर १९२६
१३२	बीका अमीन्दार	चाँद	अक्टूबर १९१३
१३३	बाकक	अमाना	अप्रैल १९३३
१३४	बासी भाठ में लुहा का साप्ता	हंस	अक्टूबर १९३४
१३५	भुड़ी काकी	हंस	१९२१
१३६	बेटोंवासी बिषवा	—	नवंबर १९३२
१३७	बेटी का धन	चाँद	नवंबर १९१५
१३८	बोहनी	अमाना	१९२८
१३९	बीकम	भारत	अप्रैल १९२३

क्रम	नाम कहानी	कहाँ प्रकाशित	कब प्रकाशित
१४	ब्रह्मा का स्वामि	—	मई १९२०
१४१	भाड़े का छट्टू	माधुरी	जुलाई १९२५
१४२	भूत	माधुरी	अगस्त १९२४
१४३	मन्दिर	बाँद	मई १९२७
१४४	मन्दिर और मसजिद	माधुरी	अप्रैल १ २५
१४५	मनुष्य का परम धर्म	स्वयम	मार्च १९२०
१४६	मनाकृति	हंस	मार्च १ ३४
१४७	मंथ १	माधुरी	फरवरी १९२६
१४८	मंथ २	बिद्यालभारत	मार्च १९२८
१४९	ममता	जमाना	अक्टूरी १९१२
१५	मर्यादा की बेबी	जमाना	अक्तूरी १९१७
१५१	महातीर्थ	जमाना	सितम्बर १९१७
१५२	माँ	माधुरी	जुलाई १९२९
१५३	मणि की घड़ी	माधुरी	जुलाई १९२७
१५४	माता का हृदय	बाँद	जुलाई १९२५
१५५	मिमांस	जमाना	जून १९१३
१५६	मुक्तिमग्न	माधुरी	मई १९२४
१५७	मुक्तिमार्ग	माधुरी	अप्रैल १९२४
१५८	मुक्त का मद्य	हंस	अगस्त १ ३४
१५९	मूठ	मर्यादा	अक्तूरी १९२२
१६	मैक	हंस	जून १९३
१६१	मातेराम शास्त्री	माधुरी	अक्तूरी १ २८
१६२	मृत्यु से पीछे	मुंबई जम्मीर	मिर्गबर १९२०
१६३	रक्षित सम्पादक	आगरा	मार्च १९३३
१६४	रक्ष्य	हंस	मिर्गबर १९३६
१६५	राजा हर्षीक	जमाना	अप्रैल १९११
१६६	राज्य भवन	माधुरी	अक्तूरी १०२३
१६७	राजराज	जमाना	मिर्गबर १ १२
१६८	रानी मारंपा	जमाना	मिर्गबर १ १०

क्रम	नाम कहानी	कहाँ प्रकाशित	कब प्रकाशित
१९९	घमस्तीका	भापुरी	मस्कूबर १९२६
१७०	रियामत का वीथान	हम	मई १९३४
१७१	सांठन १	भापुरी	मगस १ २६
१७२	सांठन २	भापुरी	फरवरी १९३१
१७३	काग-डाट	—	जुलाई १९२१
१७४	फायरी	हम	मस्कूबर १९३५
१७५	माल प्रीता	जमाना	जुलाई १९२१
१७६	छतर	हम	नवंबर १ ३१
१७७	सैला	संस्मरणी	जनवरी १९२६
१७८	बचपात	भापुरी	मार्च १९२४
१७९	बडा का छंवर	जमाना	नवंबर १९१८
१८०	बिहमारिय का लेगा	जमाना	जनवरी १ ११
१८१	बिचिन होली	स्वदेश	मार्च १९२१
१८२	बिनोही	भापुरी	नवंबर १९२८
१८३	बिनोर	भापुरी	नवंबर १९२४
१८४	बिमाना	—	अप्रैल १९२१
१८५	बिस्बास	बाँद	अप्रैल १९२५
१८६	बिपम समस्या	जमाना	मार्च १९२१
१८७	बिम्मूति	जमाना	फरवरी १९१५
१८८	बदना	बाँद	फरवरी १९३३
१८९	घनरंज क लिखाड़ी	भापुरी	मस्कूबर १९२४
१९०	घराब की बूबान	हम	मई १९
१९१	घारी की बजह	जमाना	मार्च १९२७
१९२	घान्ति १	प्रमवर्तीमी	१९२१ में पूर्व
१९३	घान्ति २	भारती	फरवरी १९३४
१९४	घाप (सीरे दरवेग)	हम	मगस १९३१
१९५	गिहार	जमाना	जून १९१०
१९६	गिहारी राजकुमार	जमाना	मगस १९१४
१९७	रोख मछमूर	सोबेबजन	१९ ९ से पूर

क्रम	नाम कहानी	कहाँ प्रकाशित	कब प्रकाशित
१९८	धूम्रा	चाँद	जनवरी १९२६
१९९	शोक का पुरस्कार	सोने बटन	१९ ९ से पूर्व
२	सम्बलता का बन्ध	सरस्वती	मार्च १९१६
२ १	सती	माधुरी	मार्च १९२७
२०२	धरपाग्रह	माधुरी	दिसंबर १९२३
२ ३	सद्गति	मानसरोवर	अक्टूबर १९३१
२ ४	सम्यता का रहस्य	माधुरी	मार्च १९२५
२ ५	समर यात्रा	हंस	अप्रैल १९३
२०६	सवा सेर मेहँ	चाँद	नवंबर १९२४
२०७	सांसारिक प्रेम और देशप्रेम	जमाना	अप्रैल १९ ८
२ ८	सिद्ध एक आवाज	जमाना	सितंबर १९१३
२०९	सुबान मगध	माधुरी	मई १९२७
२१	सुभाषी	माधुरी	मार्च १९३०
२११	सुहाग का घव	माधुरी	जुलाई १९२८
२१२	सैधामार्ग	स्वदेश	फरवरी १९१९
२१३	सैलानी बंदर	माधुरी	फरवरी १९२४
२१४	सीठ १	सरस्वती	दिसंबर १९१५
२१५	सीठ २	बिद्यालभारत	दिसंबर १९३१
२१६	सीभाग्य के कोड़े	—	जून १९२४
२१७	स्मृति का पुजारी	हंस	अप्रैल १९३५
२१८	स्वस्व-रत्ना	माधुरी	जुलाई १९२२
२१९	स्वर्ग की देवी	—	सितंबर १९२५
२२	स्वामिनी	बिद्यालभारत	सितंबर १९३१
२२१	हठरत अर्ली	प्रभा	जुलाई १९२३
२२२	हार की पीठ	मर्षावा	मई १९२२
२२३	हिंसा परमोत्तम	माधुरी	दिसंबर १९२६
२२४	हीनी का उपहार	माधुरी	अप्रैल १९३१

## अनुक्रमणिका

'अंगारे' ६ ९	अलवर ३७५
अंबल ४८९	अर्ली अमीर २८२
अंडमान ५३४	अली अहमद ६ ९ ६१ ६१८
अजमेर इलाहाबादी ११७ ४८५	अली इब्ने ४१
५८५	अलीगढ़ ५५५, ५८४ ५९९
'अकमीरे सुन्नत' १५	अलीपुर पद्मनाभ कर्म ९१
अकाली ३४३	अलीम हाजर ५९८
अछूत आन्दोलन ५ ६-५ *	अली मीताना धीरज १९९ २७१
अजना मिनटोन ५७४ ५८१ ५९१	२७५, २७८
अजमेर २७५	अम्बोडा ५ ९
अजीब लखनवी ५८	अम्ब ४ ७
अजय ४८९	'अम्ब अम्बार' १३१ २३४
'अजहरीक' २५६	अम्बुपी सद्गुरुगम ४८८
अजयपुर ५८५	अम्बु, अम्ब ५९०
'अजीब' १ ६	अम्बु जेम्बनाथ ४९१
'अजायबी' १८४	अम्बर २८२
अजयपुरनिम्ब ३८८, ४८९	अम्बुपीय आन्दासन २२८ २३१
अजयनिम्बान २६९	२४६ २५५, २६३ २६५ ६७
अजीक दक्षिण १६३ १९७ २ ३,	२७ २७१ २८५, २९ ३१५
२ ४ २२	अम्बुपीय (पुम्बु) माता २८५
अजयुम्मा १९२	अम्बुपी मिर्बा मुहम्मद ४ ९
अजयुम्माट, मीतबी १४५	अम्बुपीबा ९७ १६४ २ ४ २१६,
अमरीका ८२ ८८, ९६ २२ ३१८,	२२ २३
४१९, ४४७ ४८३ ५१५, ५४८,	अम्बुपी, अमीर ६२६
५६२, ५७५	अम्बुपी, अजीर १ ४
अमरीका दक्षिण ३१८	अमीर बारबुन ५१४
अमिना ४२७	आइम्बुइत ५१४
अम्बुपी २ ९, २१६, २६३	'आइना' २८३
अम्बुपी २२९, २३३	आइत मुहम्मद ५९८, ५९९,
अम्बु २६१ २७५	६२८
अम्बुपी ९१	'आत की किराती' १८१
'अम्बुन ६३	आगय २२९, २३६ ४२८, ४७
अम्बुन माई २८३ ४४५, ४६४	५४८, ६११
४६८, ४६९	आज २५७ ६३२

'आजाद' ११५ १२४ १३१ १३५  
 १२७ १५३ ३६८  
 आजादमग ५, २०९  
 आशिय ५९  
 आशिक मम्मसल ५१५  
 आदर्शवाद २९२ ५००  
 'आनन्दमठ' ८१  
 आनन्द मुन्शिराम ६ ७  
 आयरलैंड ९६  
 आर्यभाषा सम्मेलन ६२२  
 आर्य महिला विद्यालय ४३३  
 आर्यसमाज ४६ ४८ ४९; ९४ १५२  
 २७३ ३ ४ ६२२, ६२३  
 आशिकर सात्र ३७२  
 'आषाढ ए लक' ५२ ५५  
 आस्कर बाइर ४८९  
 इकवास १७८ १७९ १९९, ६१३  
 ६१९, ६२ ६२५  
 इम्पीय ९६ १६१ १९१ १९५,  
 १९६ २५८, ४४५, ४४६ ४६१  
 ४८४ ४८५, ५ ६ ५१४-५१६  
 ५६२ ५९६  
 इण्डियन एमोसिएन ८१  
 इण्डियन प्रेस ६१ १ ६ ११५  
 'इण्डियन रिब्यू' १२३  
 इण्डीर ५९५ ५ ६  
 'इवर्नल सिटी' ३८ ३८६  
 इटली ९६ ९९ ५३३ ५१५, ६६५  
 इबरन मॉग्यप्रसाद १७४  
 इलाहाबाद ५१ ५५ ६२ १ ६  
 ११ १२२ १२३ १२६ १४३  
 १६७ १४८ १५५, १७३ १७७  
 १७९ १८ १ २ ६ २३४  
 २३६ २६४ २६२ ६३ २७८  
 २८३ ३४२ ३६३ ३८४ ३८७  
 ३९५, ४२८ ४५ ४६७ ४७६  
 ४८२ ५२८ ५४२ ५४३ ५४८,  
 ५५३ ५७१-५७३ ५९५-५९८,  
 ६ ६११ ६१२ ६३६ ६२५  
 इम्मानुएल मिर्जा ५८

'इस्लाम का विप्लव' ५२४  
 इसहाक खान मुहम्मद १४४  
 ईरान २६९ ४६६  
 उग्र ४ ४८९  
 'उर्दू' ६२८  
 'उर्दू ए मुअज्जिना' १ १  
 उपाध्याय मन्मथ ३३७ ३८ ३८२,  
 ३८६ ३८८, ४२  
 उमसुन' ६ २ ६ ४  
 'आनु संहार' १५ २३६  
 एकता सम्मेलन २७८  
 एन आरु कन्वेंशन् विम ८३  
 एन्क्रेसल मन्मथ ११५  
 एशियनिय ६४५  
 'एशिया' ५७५  
 ऐशियन ४०  
 ऐन्क्रेसल ४१५, ५२५  
 'ऐना करेनिना' १७४  
 ऐयट, नटैय ५४१  
 ऐरे ५  
 ओटावा ५१५  
 ओटावा सम्मेलन ५१५  
 ओ 'आयट, माइकेल २०५  
 ओसबा' कर्नल १७५  
 ओरेंगजेब ८६ २८ ५८५  
 'ओफाल' ४८६ ५ २  
 बनारस २३६  
 कपूर बालिदास ५९८  
 कपूर्वा ४३६  
 कबीरदास २५८  
 कमला (प्रेमचन्द की बटी) १२६  
 २३९, ३ २ ३ ३ ४१२, ४३३  
 ४३६ ४३९ ४४० ४८९, ५२१  
 ५२२ ५७३  
 करामी ४६८ ४७०  
 करौली १  
 कर्जन ८७ ८९  
 कसरता ८८, ८९, ९१ १६३ १८२  
 २३ २३३ २४ २६२, २४५,  
 २४८, २८३ २८४ २८६ २९८

३४२ ३६३ ४ ५ ४२२, ४४६,  
 ६ ५, ६ ६ ६३४  
 कदम्प अनुनास्वक ५८१  
 'कङ्कनी' १८३ १८५  
 कवीस काकम ३६ ४२ ५ १ ५९८  
 'कृष्णकुंभ' ६१  
 'कृष्णवीती' २८३  
 कृष्णराजसागर ५८६  
 कापिस इण्डियन मेगलस ६२ ८१  
 ९० ९४ ९७ ९८, १२२ १५३  
 १६१ १६४ २ ५, २१६, २२७  
 २३ २५३ २६३ २६७ २६८,  
 २७५, २७८ २७९ २८८, ३२३  
 ३२४ ३४१ ३४३ ३७७ ४४५,  
 ४४६ ४४८ ४५८, ४६३ ४६५,  
 ४६८ ४७२ ४८३ ५२३ ५४२,  
 ५५७ ५८१ ६१६ ६२६ ६२८  
 कानपुर ५५, ६८ ६९ ७३ ७४ ९४  
 १ १ १०५, १ ६ १ ९, १११  
 ११६ ११७ ११९, १२६ १३  
 १३२, १३५, १३६ १३८, १४१  
 १५८, १७३ १७९, १८२ २३१  
 २३३ २४४ २४५, २४९, २६१  
 ६३ २६८ २९२ ३ १ ४ ९,  
 ४११ ४२९ ४३१ ४३३ ४७  
 ४७१ ४८८, ५२३ ५३८ ५७८,  
 ६२२  
 काबुल २५८  
 कामरेड' ११५, १५३ २०९  
 'कारवा' ४८९  
 कालबिन आकर्मण्ड ८३  
 कालिदास १५ १५१  
 कालेसकर, काका ५९६, ६२६, ६२७  
 कावेरी ५८६  
 कानीनाथ २६१ २६२ २८४ २८५  
 कास्मीर ५ ९  
 'काइजो' ४१७  
 किम्पफर्ड ९१  
 किष्कू या २१६, २७१  
 किपसिंग ५२८

विवे धीमती कमलाबाई ३२६  
 कुप्रिन ५१६ ५१८  
 कुमार बीनम ३ २ ३ ३ ३१४  
 ३६२, ३६४ ३६५, ४४८ ४४९  
 ४५ ४५२ ४५३ ४६३ ४६७  
 ४७० ४७२ ४७४ ४७७ ४८६  
 ० ५ ३ ५१० ५१७ ५१८  
 ५२२ ५२४ ५३८ ४ ५४२  
 ५५२ ५५३ ५५५, ५५६ ५७२,  
 ५७८ ५८ ५८१ ५८५, ५९  
 ५९२ ५९६-५९८ ६ ६ ६१४  
 ६२६ ६३ ६४२-४४ ६५१  
 कुमार, बीनम ४८९  
 कुरैशी मुनीर हीदर २८१  
 कुम्पहाड ११ ११२, १२३  
 कुस्तुनगुनिया १९६  
 केल विस्मियम ८७  
 केम्पुस्टर ५५  
 केवारी किशोर ३५५, ४७९ ४८  
 कलाव १५  
 'कमरी' ९१  
 काकोनाडा ३२३ ३४१  
 कोटाट २७८  
 कौमिक विस्मंमरलाप ४८९  
 काठिकारी आन्वोसन ८६ ८७ ९१  
 ९४ ९८, १६१ ४४५  
 लौडवा ५९५  
 लॉ व्यवसाय ६२८  
 लापरड १६४ २२८ २६१ २६३  
 २६५, २६९ २७४ २७५, २९६  
 लेडा १६४ २१७ २१८  
 लुधरो अमीर ५८५, ६२४  
 लपकर लॉ अणुल ४८२  
 लया ३२३  
 लहमरी जी ५ २  
 लाशी-अबिन पैक्ट ४६९  
 लाशी-अबिन मिस्म ४४५  
 लाशी कस्तूरबा ३२६  
 लापी जी ८५, ८६, ८९, ९४ १६३-  
 १६५, १९६ १९७ २ ३-२ ५

२८, २१६ २२ २२२ २२५  
 २९, २३ २३१ २४६ २५१  
 २५८, २६१ २६५, २६६, २७१  
 २७५, २७८, २८३ २९७ ३१५,  
 ३२३ ३२४ ३२७ ३३४ ३३७  
 ३४२, ४४५, ४४७ ४५३-४५७  
 ४६ ४६२ ४६७-४७ ४८२,  
 ४९२ ४९३ ५०६-५ ८, ५२५  
 ५४६, ५५७ ५९६, ५९७ ६ ४  
 ६२६ ६२७ ६२९  
 मानसबर्दी ४४१ ४९७  
 सालिष ५८, १७८  
 सार्प सर रिषई ८७  
 मिस्त्रिकाकिशोर ५७  
 'गीतिका' ६४८, ६४९  
 मुजरात १६४ ४८७ ४८८  
 मुष्ट बालमुकुन्द १५२  
 मुष्ट मगपनाथ २६६  
 मुष्ट निबप्रसाद २८६ २८८, ३८१  
 मुष्ट सिमाराम धरण ४८९  
 मुष्ट हीरालाल ४३७  
 गुरसहाय ५, ६ ७  
 गुलाब ३८५  
 गुलाम रब्बानी ६२८  
 गैरीबास्त्री ९८  
 गौणम ४९, ८२ ८३ ८५-८८, ९०  
 ९४ ९७ १६१ १६२ ६९३  
 गोपनका रामनाथ ५८३  
 गारलपुर ३२, १०१ १५४-५८,  
 १६६ १७१ १७३ १७५, १८२,  
 १९३ २ ६ २०९, २११ २१९,  
 २३४ २३६ २४६ २४९ २५६  
 २५७ २६१ २६३ २६४ ३७०  
 ३७२ ५ ५६१ ५७८  
 गौरी हलामडहीन ५८ ५९ ५०१  
 गौरी २ २, ५१६ ५६ ६२७  
 गौणमेव बाबू ६६६ ६६७ ४८१  
 ४८३ ५ ६ ५११ ५१७  
 गोविन्दराम सेठ ६३८  
 गौड़ कृष्णदेवप्रसाद ५२६

गौड़ रामदास १९३ ३५ ४१६  
 गैरबस्तन ९५  
 गौप चिन्तामणि १०६  
 गौप बारीन ९१  
 गौप रास बिहारी ९ १६४  
 गजबस्त १ १ २२३ ३५  
 गजबर्दी ध्यामसुन्दर ९  
 गटर्जी जयोक ४१५  
 गट्टोपाध्याय रामानंद ४१५, ६४५  
 गजुबेदी बनारसीदास ३५ ३५१  
 ३५९, ३६३ ४१५, ४१८ ४५९,  
 ४६० ४८८, ४८९ ५ २, ५ ९,  
 ५१६ ५२४ ५२५, ५३२ ५३८,  
 ५४ ५४३ ५८१ ६ ४६ ६,  
 ६१६ ६३४  
 गजुबेदी मालनसाल ५९५, ६२६  
 गजगुप्त ४७६, ४८६ ४८९  
 गजप्रहासन १  
 गज्जारन १६४ २१७ २१८  
 गौकी प्रफुल्ल ९१  
 गौपेकर बन्धु ८७  
 'गौरी' ३८६ ३८९, ३९ ३९५,  
 ४ ० ४१ ४९  
 गामुण्डा ५८६  
 गिन्तामणि श्री० बाई १९५, २ १  
 गितारंजनशाम २१७ २३ ३२३  
 ३२४ ३४२, ३४३  
 गिणसुभकर, गिणुगाल्सी ८४  
 गीन २७७ ४६६ ५१४-५१६  
 गीनी मुक्तिमान ५१५  
 गिम्सक्रॉ १९५, १९६  
 गुनार ३९ ४१ २१२  
 गेमोड २०२ ४१६ ४१८  
 गौरीगौरी २६५, २६६ २७ ३१५  
 गिन्ताबाड़ा ४३६  
 गजकउस्मा मौलवी ६२  
 गजनीनदाम ४८५  
 गजसपुर २७८ ४३८  
 गर्मन १६१ १०१ २१९, ४१८  
 ४६६ ५१२, ५१३ ५१५, ५ ६



जलंधर ४९१  
 जम्मियांवाला बाग २ ५, २१ २१६  
 २२८, २३४ २९६  
 जमाना ५५, ५८ ६१ ६२ ६८, ९४  
 ९८ ९९ १ ५, १११ ११५  
 १२८, १३१ १३४ १३५, १४  
 १४१ १७३ १८४ १९ २ २  
 २३२ २६५, २७३ २८ २८१  
 ३८४ ३८५, ४१७ ४७२, ६२२  
 जमींदार सम्मेलन ५४८  
 जहंगीर ५८५  
 जहीर, सज्जा ६ ७ ६ ८, ६१०  
 ६१२, ६१६ १८ ६२२  
 जार्ज पचम १६१  
 'जान क्रिस्टोफर' ५६१  
 जापान २५८, ३६३ ४१७ ४१८,  
 ४१९, ४४७ ५१४ ५१५, ५१६  
 'जापान टाइम्स' ४४७  
 जाऊर अमी काँ ५९  
 जालीन ४३६  
 जामिलपुर २ ९  
 'जामिया' ६२२  
 जिन्ना मुहम्मद अमी १६४  
 जीमीमार्क, सर ५७४  
 जीतो ३४३  
 जीत ज्ञानमचरण ४७४ ४७८, ४७७  
 ४८७ ५२४ ५३८, ५७८  
 जोग मसीहावादी ६१ ६१८  
 जोशी इलाचन्द्र ४९५, ४९६  
 जोशी हेमचन्द्र ५४३  
 जौनपुर २२९  
 जोहरी चंद्रमाल ५१६, ५१७ ५५६  
 ज्ञानमञ्ज २४४ २४५, २५७ २८६,  
 २८८, २८९ ३ ५  
 जॉर्जी १७४  
 ज्ञा अमरनाथ ३५ ६१७  
 ज्ञा संजानाय ६ ८  
 टंडन रामचन्द्र ३५१ ३५२, ३७७  
 ३८३ ५४२-५४४  
 टंडन हरिहरनाथ ६११

टासाटाप ८८ १६५, १६७ १७४  
 २ २ २१७ २२२ २३ २६१  
 ३२६, ३८ ३८३ ४१७ ४१८  
 ४९२, ५१६  
 टीकाराम लाला ५  
 टेकचर बस्ती ६२६  
 टैगोर (ठाकुर) रबीन्द्रनाथ ५८,  
 १८५, ३६२ ३६४ ३८१ ४१६,  
 ४१९, ४५२ ४९१ ५२८ ६०४  
 ६ ६, ६ ७ ६४५, ६५२  
 टोकियो ४१७  
 ट्रिफ्लैकेन ५८५  
 ठाकुर, पं० माधवायत ३९७  
 ठाकुरिन लार्डे ८३  
 डांडी यात्रा ४५४ ४५६ ४६८, ५ ८  
 डिफेन्स १ २, ४ २  
 कुमरियायज १२३ १२४  
 डबिड सो ६४५  
 'दमिस्मे होघरबा' १५५  
 'दाज' इन्तयाज अमी ५८, ६१ ६६,  
 १७ १८३ १८४ १९३ २ ६,  
 २३५-२३७ २४ २४५, २६५,  
 २९ ३ १ ३१५, ४७६ ६२६  
 टिलक बाल गंगाधर ८३ ९ ९२  
 ९४ ९६ ९८, १ १ १२२, १५३  
 १६०-१६५, १९६ १९७ २२९,  
 ४३७ ४३८  
 तुर्की २६९ २७७ ४६६, ५१५,  
 ५१६  
 तुनिश २ २, ५१६  
 तुलसीदास पोसाई ३२९, ४२१  
 ४९३ ५३७  
 त्रिपाठी रामनरेण ५४३ ५४४ ६४६  
 'त्रायस' ३५२  
 वैंकरे ३३८, ३८  
 बोरौ ८८  
 बत्त अस्विनी कुमार ९  
 बत्त बटुकेश्वर ४४५  
 बत्त रमेशचन्द्र ८७ ९  
 बत्त भूपेन्द्रनाथ ९२

वाण ११७  
वासुदेव झाडाड १८३ १८५ २४५  
३८०

'वि एलेक्' ऑफ ए नावेस' ४९१  
विष्णु १९६ २ ४ २२९, २३६,  
०७८ २७९, ३ २, ३२३ ३६५,  
४ ५, ४६५, ४७४ ४७५, ४७७-  
७९, ५४२, ५५२ ५५४ ५५५,  
५७४ ५७९, ५९८ ६ ० ६१४  
६१५, ६२३ ६२५, ६३८

दीनदयाल बाजीमुपम ४६७

दश चक्रराज ६२६

'बिबामा के गुलाम' ५२८

देवी गिबराजी (प्रेमचन्द की  
पत्नी) ११ ११४ १७ १३८,  
१४७ १४८ २११ २३५ २३८  
२४१ २४६ ४ २६४ ३५९,  
३६ ३७५, ४०८ ४१२ १४  
४२६, ४२७ ४३१ ४३४  
४३५, ४३९, ४४ ४६२, ४६३,  
४६७ ५२१ ५२२ ५७१-७३  
५८३ ५५, ६११ ६१२ ६३१  
६३ ६३७ ६३८, ६४१ ६४२  
६४६ ६४८ ६५२

देवीप्रिया मुनी ७६ ७६ ७६

देवरी ४३६ ६३७

'देव' १०३

दहगाड २३५, २३७ ३५

द्विज जलार्थन झा ४८९, ५१८

द्विपती दशमप्रसाद २१० २३८,  
०५६-५८

द्विपती ५ ममन १२३ १२६ १५१

द्विपती जाधव महावीरप्रसाद १४१

द्विपती हजारीप्रसाद ३६३ ६ ६

३ ७

पौत्र जी ११०

मन्मथ मीरनाराय ६८ ७४ १ ९,

१३६ १७६ ४११

मन्मथ भाडाडन ४५७-४५८

नगप्रदेव ६९१ ७६२

नवलकिशोर प्रेम ६१ ३६७ ४ ९,  
४११ ४१५, ४७२

नवीन बालकृष्ण गर्मा २७९

नवीम ब्याबंकर ३५०

नामर, बनार्दमराय ५५४

नागर, मरीमम ४८० ६ ६०१

नागपुर ८९, २२७ २३ २७१

६१७ ६२६

नामा ६६२ ३४६

नामक स्कूल गांग्रपुर १५४ ५६

माध्याय छायाजीकर १

नासिक ४३८

निगम मुंशी दयानारायन ४८, ५५,

५८, ६ ६१ ६८ ६९, ७२,

७४ ७९, ९६ ९८ ११२ ११३

११५, ११५ १२१ २३ १२६

१२८, १२० ३० १३४ ३८,

१४१ ४३ १४९ १५ १५२,

१५३ १५८ १६४ १७५, १७६

१७९, १८२, १९२ १०८ २ १

२१६, २२ २३२ ३६ २४०

२४४ २४५, २४८, २४९ २५६

२६१ २६२ २७३ २७४ २७८

८ २८२ २८३ २८८, २८९

२९२ २९६ ३ १ ३ ६८,

३१९, ३२१ ३२६ ३३० ३४७

३४८, ३६० ३६७ ३६८, ३७९,

४११ ४४ ४५३ ४५६ ४५७

४६२ ४७ ४७३ ४८२, ६८४

४९७ ४९८, ५३८, ५३ ५७०

५०२, ५०५, ६ ९, ६१ ६२२

६४७

निगम रावका ४९७

निगामी शबाजा हसन ०८३

निर्मल श्यांतिप्रसाद मिश्र ५७ ५३०

निराला मूर्धकान मिश्रा ४८९,

६४७ ६४८-५

नेत्रक उमा ४७६

नरक जबाहरमान २०६ २२७

२६५, २७ २७१ २७९ ३४१

३४३ ४ ५ ४ ७ ४४५, ४६  
 ४६७ ४८२, ५९ ६१६, ६२६,  
 ६२७ ६४५, ६४७  
 मेहक मोठीमाल २३ २५८ ३२३  
 ३२४ ३४२ ३४३ ४११ ४६७  
 ६३९  
 मेहक स्वकल्प रात्री ४६२ ४८२  
 मैत्रीमाल ४ ९  
 मपाल १३ २५८, ५४७  
 मोगूषी योने ३६३ ६ ६ ६३४  
 'मोषहार' ३६८  
 नीरोजी दावानाई ८२ ८७ ८९  
 पंजाब २ ५, २ ६, २४५, २७१  
 २७३ ३६८ ४४६ ४८७ ५७४  
 पटना १ २ ३५५, ४ ९, ४२१  
 ४७८, ४७९  
 पटेल बिट्ठलमार्ई ३४२  
 पट्टक बल्लभमार्ई ४८२, ६२६  
 पट्टिमाळा ३४२  
 पद्माकाळ आई सी एम ५६२  
 पंत श्रीविन्धवस्वाम ४ ७  
 पंत सुमित्रामन्थन ६ ९  
 पद्मनारायण ६५  
 'परल' ४८७  
 परलावणक ४२ ४३  
 परासर ५७९  
 पाठक बाबराय ६४८ ६५  
 पाठक डा ४३४  
 पाण्डेय पं लयनारायण ३९७  
 पास विपिनचन्द्र १९६  
 पालीवाल श्री कृष्णवत्स ३८७ ५४३  
 'पिकनिक वेपर्स' ४ ६३९  
 पेरिस २६८, ३८८, ६४५  
 पेसावर ३३४  
 पोद्दार, महावीरप्रसाद १५९ १७३  
 १८१ २३३ २३७ २३८ २४  
 २४३ २४४ २४८, २५ २५८  
 पोलीश २१९  
 पुनिया ६१२ १४ ६२५  
 पुना ८३ ८५

प्रागतिथीक मेन्त्रक संप ६ ७ ६ ८  
 ६१ ६१६, ६१७  
 'प्रताप' १२४ १५१ १५२ २७९  
 प्रमुदमार ४३४ ४३५  
 प्रसाद जयचकर ४८६, ४८९, ५ १  
 ५०२ ५५६, ६४८  
 प्रसाद मुंशी भवानी ४३६ ४३७-३९  
 प्रसाद मुबलनवर ४८९, ४९२  
 प्रसाद राजन्ध २५८ ६२६ ६४७  
 प्रसाद बामुदेव (प्रेमचंद के मामा)  
 ६ २ ३ ३ ४३५, ४३६  
 प्रेमचंद (धनपतराय नवावराय) बस  
 बेल ५ ११ बरम ११ बरपत १२,  
 १३ १७-२१ २२ २७ ३०-३२  
 घिसा १५, १६ ३२, ३३ ३५ ३८  
 ५१ ५५ १४२ १४३ १४९,  
 १५० १५६, १९८, २ ६ २२  
 २३४ २४ पहली रचना २७-३  
 पहली छापी ३३ ३५, ६७ ६९-७१  
 ७३ पहली मौकरी ३९ सरकारी  
 मौकरी ४२, ५५, ६८, १ ५, १ ६,  
 १३ १५४ १५५, १९७ २३२,  
 २४६, २४७ ४३३ पहला उप-  
 न्यास ५२-५४ ६३ ४ २ बुधरी  
 छापी ७३-७५, ७९ पहली मस्य  
 ६१ ९७ १ ५ सरकार का कोप  
 १ ५, ११०-११२, १५२ प्रेमचंद  
 नाम-ग्रहण ११२, ११३ नये नाम  
 संपहमी कहानी ११३ १७३ ५८७  
 उर्दू से हिन्दी में १५ १५२ १५९  
 सरकारी मौकरी से इस्तीफा २४८,  
 २४९ २६२ मारवाड़ी स्कूल कान  
 पुर २३२ २६१ २८५, २८६, २९१  
 ३१५ 'मर्मावा' २८६, २८८ ३१५  
 काशी विद्यापीठ २६६ २८८, ३ ५,  
 ३१६ ३२४ ३७ सरस्वती प्रेस  
 २८६, २९८, २९९, ३ ३-३१५,  
 ३२ ३२१ ३४६ ३४९ ३७९,  
 ४६२ ४९८ ४९९ ५ पंजा  
 पुस्तकमाला सप्तमक ३४९, ३८१

३०७ 'माधुरी' २८ ३५० ३५१  
 ३८९ ३९५, ३९७-४ ४ ८,  
 ४०९ ४१९, ४२१ ४३४ ४४९,  
 ४५ ४७२, ४८६ ५ ३ 'हंस'  
 ४५३ ४५४ ४६२ ४८३ ४८६,  
 ४८७ ४९२, ४९९ ५ २ ५ ३  
 ५१० ५१५, ५२४ ५२५, ५२९  
 ५३८-५४१ ५४४ ५५६ ५६२,  
 ५७५, ५७८ ५९३ ५०४ ५९६  
 ५९७ ५९९, ६१५, ६३ ६३८  
 ६५ 'जागरण' ५ ३ ५ ४  
 ५१० ५२३ ५२४ ५३० ५३८  
 ५४ ५४२, ५५२, ५५६ ५६९,  
 ५७५-५७७ 'फिल्मी दुनिया' ५५५  
 ५५६, ५६९-५७५, ५७८-५८१  
 ५९०-५९२ ५९५ बीमारी ६३२  
 ६३३ ६३७-६४४ ६४६ ६५२  
 मृत्यु ६५२

— 'आगर तुम सचिय हौ' ४६५,  
 ४६६ 'अधिकार-चिंता' २९५ २९७  
 अहंकार ३७९ आजादकथा ३५२  
 आदर्श विरोध' २५९ 'आप बीती'  
 ४२० 'आमुषण' ३८४ ३८६ ३८९  
 'आस्था' १२१ 'आके दुनिया और दुखे  
 बतल' ९९ 'आगाह' ५६१ 'अप  
 वेग' १६५ 'एक ही आबाद' १९७  
 'ऐक्येस' ४१६ 'ऊबकी १३ १४  
 'कष्ट' ६२२ 'कर्मसा (ना )  
 २८१ २८४ ३२५ ३३५ ३३७  
 ३४९, ३५ ३५१ 'कर्मभूमि' ४५६,  
 ४८४ ५१७ ६०७ 'कहलुगिजास'  
 (मनुष्यता का विकास) २७४ २७९,  
 २८१ 'कान्याकन्य' ३४८, ३५२, ३५५,  
 ३५६ ३६१ ३६५, ३६९, ३७२  
 ३७५, ३७९, ३८ ३८४ ३८६  
 ५१ 'विगता ६१ १ ५ 'गुन  
 सफर' ४९ 'गबन ४१ ४४१  
 ४४६ 'गुरमंत्र' ४ 'मोक्षान  
 ५७३ ५८१ ५९७ ६३ ६४८  
 'बामा' २०७ 'वक्ता ईगाव

(बरदान) ११९ १२१ १५  
 १५२, १६५, ४ 'जीवन का  
 घाय' ६ २६ ४ 'जीवन में  
 घुणा का स्थान' ५२९ 'जुलूस'  
 ४५६ 'टास्सटाय की कहानियाँ'  
 १५९ "डंडाघास" ४६० ४६१  
 'बपोरघास' ४२७ 'ताप' ४१६  
 'त्यागी का प्रेम' २८६ 'स्फुटी'  
 १७ "बमन की सीमा" ४८३,  
 ४८४ 'सुसाहस' २९७ 'सूच का  
 शम' ५६० ५६५-५६७ 'बीरे  
 कदीम बीरेजवीद' (पुराना जमाना  
 नया जमाना) १९० १९१ २२७  
 'नबी कानीति निर्वाह' २७९ 'नया  
 विवाह' ५६१ ५६७-५६९ 'निर्म  
 नग' ४० 'निर्मला ३९०-३९५  
 ४ ४१ 'पंचपरमेस्वर' १४९,  
 १६६ २३१ २५८ 'पत्नी से पति'  
 ४५६ 'पशु स मनुष्य' २२१ 'पूस  
 की रात' २३७ ४९८ 'प्रतिज्ञा  
 ३०५ ४१ 'प्रेमा (हमजुर्मा व  
 हमसबाब) ६ ६१ ६३ ६६,  
 १०३ 'प्रेमाधम (मोक्ष माक्रियत)  
 १८५, २ ३ २१२-२१५ २२०-  
 २२१ २२३ २२८, २३१ २३७  
 २८९ ३२ ३२१ ३२५, ३३२  
 ३४९, ३७९, ३८ ३८२ ३८५,  
 ३८७ 'बलिदान' २ ७ 'बाद  
 अन्न मार्ग' (मृत्यु के पीछे) २३३  
 २०७ 'बाळक' ५६ ५६७  
 'बागी भात में पुरा का घासा' ५५९  
 'बोप' २०७ २३३ 'बीकम' २७९,  
 २९७ 'भूत' ३९४ ३९५ 'मंगल  
 मूख ६३४-६३६ 'मंत्र' ४१७ ४१८,  
 ४३१ ४७८ 'मंदिर' ५६५ 'मंनि  
 और मसजिद' ३५७ ३५८  
 'मनुष्य का परम कर्म' २२८ २२९,  
 ४ 'मनीकृति' ५६ ५६१  
 'मर्पादा की बेटी ४१७ 'महाजगी  
 मन्मथा' ६३६ ६३७ ६४४

‘महावीर्य’ १६६ “महान वाग  
 ५ ६ “मानसिन परार्पणता”  
 ४६८ ४६९ ‘मुक्तिपत्र’ ३५८  
 ‘मुक्तिमार्ग’ ४१७ ‘मैत्र’ ४५६  
 मोटेराम शास्त्री’ ३९७ ३९८  
 ४ रंगभूमि (श्रीमाम हस्ती)  
 २७२, २८ ३ १ ३२१ ३२३  
 ३२५ ३३८ ३४२, ३४८ ३५  
 ३६४ ३७४ ३७५, ३७९ ३८२  
 ३८४ ३८५, ३८७ ४४९ ५१  
 ६०७ ‘राजा हरीश’ १२१  
 ‘रानी सारदा’ १२१ “राज्यीयता  
 और अन्तर्राज्यीयता” ५३६ “राहु  
 कणिकार’ ५३३ रानी रानी ६१  
 १ ५ ‘रामें रोसा की कला  
 ५६१ ‘लाग डोट’ २५८ ‘छाटरी  
 १८९ ‘लास क्रीडा’ २५२ २५५,  
 २५८ ‘वर्तमान आन्दोलन के रास्ते  
 में राजपट’ २६५ २७ ‘बिष्णु-  
 वित्त का लेण’ ३६१ ‘विभिन्न  
 होली २५१ २५३ विन्ही’  
 ४२२ विष्णुस’ २९२ २९३  
 ‘विष्णुस’ ३८६, ३८७ विस्मृति’  
 (मरहम) १३२, १४९ ‘वंतनाद’  
 १६६ ‘घटराज के सिखाड़ी’ २५२  
 २५५ ‘घटराज और सरदार’ ४ २  
 ‘घटराज की दुकान’ ४५६ ‘घांति’  
 ४३४ ‘दिल मखमूर’ ९७ ‘दोल  
 घाटी (जी ) १५९ ‘सधाम (ना )  
 २६७ २९२ ३१५ ३२ ३२५  
 ‘सत्याग्रह’ ४ ‘सद्युक्ति’ ५२६  
 ५२८ ‘सम्यक्ता का रहस्य’ ३५२,  
 ३५३ ‘समरसारा’ ४५६ ‘समुक्त  
 प्राय में आरम्भिक शिक्षा’ १ ६,  
 १ ७ ‘सबा सेर गेहूँ’ ३५२, ३५३  
 ‘स्वात्वरसा’ २९२, २९४ “स्वराज्य  
 के क्रायदे” २५८-२६१ ३२५  
 “साम्प्रदायिकता और संस्कृति”  
 ५३८ “साहित्यिक गुंदापत्र” ५२४  
 ‘सिनेमा और साहित्य’ ६ ०-६ २

‘सिधामार्ग’ १६५ ‘सेवायदन (बाबादे  
 हुस्त) १७९ १८२ १९२ १९३  
 २७२ ३४९, ४८६ ५१८ ५६१  
 ६ ३ ६ ८ ‘सोबबतन १ ५,  
 ११०-११२ १५२ हजरत पसी  
 २७९ ‘हजरी की गाँठवाला पंमारो  
 ६ २ ६ ३ ‘हैसो ३८४ ‘हाग  
 की जीव’ २९१ २९२ ‘हिन्दू  
 समाज के बीमस्तदुष्य ५५०-५५२  
 ‘हिता परमोषम’ ३५६ ‘हत्मी  
 की छुट्टी १९१  
 प्रेमी नामूराम ५८३ ५८६  
 प्रमी हरिदुष्ण ४८९ ५७८ ५७  
 फइके जी २८५  
 फाहपुर सीकरी ६११  
 ‘फनानए बाबाय ३५२  
 फस १६१ १९१ २६१ ३१८ ५१६  
 ५९६  
 फाम अनाजाल ३५२ ४२३ ४२४  
 फाम की राज्यकति २१९  
 फायद ५१९  
 ‘किरदीम’ १ ६  
 क्रिया गारणपुरा ५८, १७३-७६  
 १७८, १७ १८४ २८८, ३ ६  
 ३ ९ १२ ३७२, ६ ९ ६१८  
 ‘फल में काँटा’ ४ ८ ४ ९  
 कृष्णाबाय २४२, २४३  
 फ्रेट्टे निकियम ६२४  
 बकिम ८१ १६  
 बंगमम आन्दोलन ४३७  
 बगमोर ३२५, ५८५, ५८८ ५८९  
 बयास २७१ ३२ ३२४ ३४३  
 बंबई १४६ १६३ १७७ १९६ २ ४  
 २१६ ३१ ३२३ ३४२, ३६५,  
 ३६६ ४ ५, ४२१ ४४१ ४६७  
 ४७४ ५५५, ५७४ ५७९-८३  
 ५८५, ५८९ ९३ ५९७ ६ ६२५  
 बंबई टाकीज ५८१  
 बुदिलपण्ड १ ६, १ ९, ११९ १२२  
 बगदाय २६१

बनाज कमलाकाश १२६  
 बनारस १ ३-५, ४२, ५१ ८८, १२६  
 १३२ ३४ १४९, १५६ १७७ २२९,  
 २४२ ४४ २४९ २५६ २५७  
 २६१ २६३ २७७ २८१ २९२  
 ३२७ ३६७ ३७९, ३९० ३९६,  
 ४ ० ४२५, ४२७ ४२८ ४३३  
 ४३४ ४३९, ४५ ४६२ ४६३  
 ४७ ७२, ४७४ ४७८ ४९७  
 ४ ९ ५ १ ५ ७ ५ ९, ५१२  
 ५२२ ५४७ ५६२ ५७२, ५७५,  
 ५७८, ५८१ ५९ ५९१ ५९३  
 ५९५, ५९७ ५९८, ६११ ६१२,  
 ६१६, ६३८, ६४८

बोली ७४  
 बनी बियाउरीन ५७३ ५८१  
 बर्मन शाबशतकाल १३२  
 बर्मा १५३  
 बलदेवकाल ७ २८७ २८८, ३१  
 ४३९  
 बली राम उमानाथ ४९८  
 बसरा २६१  
 बसु आनन्दमाहन ८१  
 बसु नन्दकाल ६४५  
 बसु शशीन्द्रप्रसाद ९  
 बस्ती १ १२२ २४ १३ १३१ १३३  
 १३४ १३८, १४१ १४३ १४७-  
 १४९, १५४ १५८, २६३ ४३३  
 बहराहब ४२  
 बांदा १३  
 बिहार प्रान्तीय हिन्दी माहिस्य सम्मेलन  
 ६१२  
 बिहारी १५०  
 बिन्देसरी १  
 बीकानर ३४६  
 बुद्ध मुद्र १९७  
 बुग्गल पान २५६  
 बृज ४२  
 बृजनाथ १५४ १५५, १७ २ ९,  
 २११

बेकब जी ५ २  
 बेवार साहब ४११  
 बेसेष्ट ऐनी १६२-६४ १९५, १९६,  
 २ ४ ३४२, ३८७  
 बैतर्जी सुरेन्द्रनाथ ८१, १६२ १६४  
 बोधारा २६९  
 बोस ब्रह्मिण्डुमार ४२६, ४२७  
 बांस सुशीराम ९१ ९७ ९८  
 बोल्डेविरम २ २ २९ ३१८, ४६  
 ५१५  
 बजरलदास बाबू ३८५  
 बसेल ६४५  
 बहा समाज ६२२ ६२३  
 बीडले ४४१  
 बीक हौल १६८  
 भगतसिंह ४ ६ ४४५, ४६९,  
 ४७  
 भगवानधीन ४७४  
 भगवानदास २८९, ५२३  
 भट्ट ब्रहीनाथ ३९७ ५५७ ५५८  
 भट्ट हरिनन्दन ४१ ४३४ ४३९  
 भवनानी मोहन ५६९, ५७० ५७३  
 ५७४ ५७५  
 भार्गव कुमारकाल २८१ ३४९, ३८१  
 ३८६ ३८७  
 भार्गव विष्णुनरामन ३४७ ३९५,  
 ४७२ ४७३  
 भारत ४९२ ४९५, ५३ ५७५,  
 ६४७  
 'भारत सतुत' १८४  
 भारतीय माहिस्य परिवर् ५९७ ६१७  
 ६२६ ६२७ ६२८  
 भारतेन्दु, हरिचन्द्र १५ ६४१  
 भीमनाथ १४४ १४७ १५४  
 मंजूरी २६५  
 म्यार कालेज इलाहाबाद १७३  
 ६ ९  
 मसमबा ४८ १२० १२८  
 मड़बा ३ ५, ४३४  
 'महर इंदिया' ५२८

मवल इन्द्रनाथ ५८, ३ १ ३६५  
 ४०७ ५८०  
 मद्रास स्ववात्सही १०५, ३७२  
 मद्रासपुर ४३६  
 मद्रास २९८, ४०५, ४०२, ५८३ ६२५  
 मयसोई ५१०  
 मलकाना मुडि २०३  
 मलिक राजा मुसोम ९  
 महमूर (महमुदुज्जकर) ६१७  
 महपात्र सिंह काला ५  
 महावीर काल ६-८  
 महापुत्र प्रथम २१९, २६१ ४४१  
 महाकरमी सिनेटोल ५४१  
 महिका विद्यापीठ, इलाहाबाद ५५३  
 महेश प्रभाद मौतापी ४९  
 महोबा १ ९ ११४ ११९ ११७  
 १२१-२३ १२५ १२६ १२७  
 १४३ १४५, ४३३  
 'माइने रिष्णु' १२३ ४१५  
 माण्डेयु-वेम्पडई रिष्णुर्म ९८, १९५,  
 १९७ २ २ १ २१७ २९४  
 माण्डे ९२, ९३ ११२ १६१ १६२,  
 ४३८  
 माणोराम २४८-५०  
 मारवाड़ ३४६  
 मालवीय महामोहन ८२ ५९  
 मिथो-मार्क रिष्णुर्म ९३ १५२ १५३  
 मिथ, कृष्ण कुमार ९  
 मित्रा जयादेवी ४८९, ४९२  
 मिर्जापुर ४७  
 'मिर्क' या मजदूर ४७३-७५, ५८०  
 ५९०  
 मिस्त्रिन्द ४८९  
 मिश्र कृष्ण बिहारी २९८  
 मिश्र, गणपतराव ६३९, ६४  
 मिश्र ज्वालाप्रसाद ४३७  
 मिश्र प्रतापनारायण ४८९  
 मिश्र राजनारायण १११  
 मिश्र लक्ष्मीनारायण ४८९  
 मुखोपाध्याय कृष्णकुमार ४२०-४२८

मुयल्लयराय ४३१  
 मुडपठरपुर ९१  
 मुन्गी कन्हैयालाल माणिकलाल ५९७  
 ६१६ ६२६ ६२७  
 मुमनाब महमूर २ ९ २१०  
 मुलवाल २७१  
 मुसलिम शीव १६३ १६४  
 मुतोन्किनी ५१३  
 मुहम्मद (बस्तर) १०  
 मुहम्मदाबाद २ ९  
 मुहम्मद भाषी मौलाना ३१ १५३  
 १९६ २६९, २७५  
 मुहम्मद इकराम २५  
 'मिथूत' १५  
 मेडिकल हात बनारस ११ १ ५  
 मेरठ वदुयम्भ कन ४४१ ४४४ ४४५  
 मेहता फिरोजगह ८९, ९० १६१  
 १६३  
 मैकडोनल्ड रामजे ५१५  
 मैकाले ८४  
 मैडेन्डी २ ९  
 मैकमयलर ८७  
 मैडिनी ९८, ९९  
 मैमूर ५८५-८९, ६२५  
 मैमूर विश्वविद्यालय ५८७  
 मोयला २६९, २७  
 माण्डी इमरत २२७ ५८५  
 'मंग इण्डिया' ८८  
 यात्रिक मबीन ५७९  
 मामा (कृष्ण) ५१६ १८  
 मुडंग विश्वयण कालेज ६१२  
 मुनिबमिटी, उममानिया १९९, २३१  
 २३२  
 मुनिबसिदी नामपुर ६२६  
 मोमेन्द्र विद्याभूषण ८१  
 मोरोप १६१ ४४७ ४७७ ५१४ १६,  
 ५४९  
 'मौलीका रमूक' २०३ २८४  
 रत्नाकर जी ३९७  
 रमन शीव जी ५८९

गमयापुर ३३  
 गधीर ३६१  
 गधीना (गधीदजहा) ६१७ ६१८  
 रमून एजाज १६४  
 राइनसैण्ड ४१८  
 राजगुड ४७  
 राजगीपालाचारी पञ्चवर्ती ६२६  
 राजबहादुर मुंशी ३८७  
 राजर ही कावर्ती ४  
 रामाहृष्य ४२ ४३  
 रामाहृष्यन ६९२  
 रानाड ४ ९६  
 रामनिवार चौबरी ६५२  
 रामहृष्य स्वामी १  
 रामजी ८७  
 राममरोम २४४  
 'रामायण' ४९३ ५३७  
 राम समूह (बसू—मेमचंद के छोटे  
 सड़के) १७७ १७८ २६३ ३५  
 ३६ ४३४ ५ १ ५२१ ५७२  
 ५७३ ५९७  
 राम जमान ६८०  
 राम धारान ४१६ ४१८  
 राम प्रफुल्लचंद्र ६४५  
 राम मङ्गाय (प्रमथद के भाई) ७९,  
 १४४ १५६ १५७ २३३ २४०-  
 २५ २६२ २८७ ३ ५ ७ ३ ९  
 १३  
 राम लाला लाजपत ८८ ८९ २३  
 ६ ५ ४ ६  
 राम शीषण (धुसू—प्रमथद के बड़े  
 सड़क) १५६ १७२ ३/४२  
 २६३ ३५ ४१ ४३६ ५ १  
 ५७७ ५७३ ५ ७ ५ / ६३०  
 ६३८ ६६ ६४  
 रामपुरी अन्तर हुमन ६३/  
 रामा गान्गाका १५६  
 रामिण उम ली ६१४  
 राट्टभापा ५५५ ५/२-५ ६१  
 ६१५, ६२६ ६२६ ३

राट्टभापा सम्मेलन चम्पई ५८२  
 राट्टसम ५१४ ५१५  
 राष्ट्रीय आवाहन और उद्योगी पृष्ठभूमि  
 ८०-९३  
 रिबरोक्सन १८ ३८२ ८५, ३८७  
 बड़की ४३७  
 रस ८८, ९६ १९६, १९९ २ २  
 २ ८, २१८, २१९, ४६६ ५१३-  
 १६  
 स्वभा मिर्जा १९४  
 'स्वी स्कूचवुक' ६४५  
 'सुनियार चिठि' ६४५  
 सहेलसण्ड १२६ १३  
 रेण्ड और एमस्टर्ड हत्याकाण्ड ८७  
 रोम रोमी ३६५, ४९२ ५१४ ५६१  
 ६४५  
 रीकट ऐक १९७ २ ३ २०४ ३६१  
 रमनल १ १५७ १५८ १६३ १६४  
 १८८ २२ २२९, २५७, २७८,  
 २७९, २८६, ३ ९ ३१३ ३४७  
 ३४८ ३५ ३५२-५४ ३६७-  
 ६९, ३७५ ३० ३९६ ३९८,  
 ४ ४ १ ४ ६ ४१२ ४२६  
 २८ ४३३ ४३४ ४४ ४४९,  
 ४५ ४५९, ४६२ ४७२ ४७४  
 ४७८ ४७९ ४९७ ४९८ ५ २  
 ५१ ५२२ ५३९, ५४८ ५५८  
 ५६२ ५७८ ५९८ ६१६ ६२२  
 ६३८ ४ ६४८  
 सलीमपुर २९९  
 संदल ४८१ ६ ७  
 लाल अजायब ६, ८ १ २३ २४  
 ३२ ३५  
 लालकिशन ५७  
 लाल गुफ्तगारी २४२ २४३  
 लाल दगार ३०३ ४३८-३६ ५२२  
 लालपुर १४  
 लमही ५-७ ११ १३ १३२ १४४  
 २७२ २७९ २९६ ४३४ ६३९,  
 ४४ ४९७ ५९७ ६५२



साहीर १८२ १८४ २ ६ ०६८  
 २८४ ४ ५ ४ ६ ४४५ ४७४  
 ४०६ ४८ ६१६ ६२२ ६२५  
 ६२६

विदेकात्म्य ८२ ९२ ९८१ १  
 १६५  
 विदेकात्म्य ४९२  
 विदेकात्मि सम्मेलन परिषद ६४५  
 'विद्यालय मार्ग' ३६३ ४१७ ४१९  
 ४३

साहीर पहल्यत्र वेम ४४५  
 लहीली २२  
 लिफ्तन अत्राहम १०३  
 लिफ्तन साई ८८  
 मीरा अयोग्य इपीरियलिज्म ५१४  
 'लीडर' १२२ १२४ २२२ २३४ ४१६  
 लीडर प्रेस ५४ ५४१  
 मई कने २३८  
 'सिंह' ६

विद्यार्थी गणेशाकर २६८, ४७१ ५२३  
 विद्यालयकार जयचन्द्र ६२६  
 स्थिते कमीगत ४४  
 वेद विवेचिनी ६४५  
 'वैदिकी प्रेरण' ३३८ ३८०-८७ २८४  
 ३८५, ३८७

मयक मय ५४३ ५४४  
 मडबीटर ३०२  
 ललित ६११  
 सि निबन्धनात् १९२

श्याम शरीरतम ३५  
 श्याम विनोदाकर ४४७ ४४८ ५ ३  
 ५६९

'बकीक' १२३  
 बकीक मानुमाई ५४१  
 बजिस ४२४  
 बबीर हमन लडी ४६३  
 'बनम' १२३

काट इड भाई ४९२  
 एकरम भार ५८३  
 दार्मा प पपमिह १९३ ३९७ ४८५  
 ४८६ ५५७

'बनमान' २७३  
 'बन्देमातरम्' ९०  
 बर्मा बजनाहन ४०  
 बर्मा मगाबनीकरण ४८९

दार्म ४५२  
 दार्म मीनाता १ १ १ ० १५१  
 दा बमई ४८  
 दार्मनिकेता ३६२ २६३ ६ ५  
 ६ ६

बर्मा बुन्दागनलास ४८९  
 बर्मा सप्यवीरम ४८५ ६१२  
 बर्मा मीनाराम २५  
 बर्मा २९६ ६१७

दार्मिन् प्यारेलास ६८ १ ६ १११  
 ११२, १५

बाबसेपी मद्रुसारे ४९२, ४९३ ४९५,  
 ५३२, ५४३ ५४६ ६४८-५०  
 'बार जर्मन' १९८, १००

दार्म २६१  
 शास्त्री श्यामदाय ४ १  
 शास्त्री अनुराधेन ५२३  
 शास्त्री प जयश्याम ४३  
 शास्त्री प्री मी भार मर्त्यमिह ५८७  
 ५८८  
 शास्त्री पं शास्त्रिग्राम ३९७-३९८  
 ४ १

विश्वनोर्वणी १५  
 विश्वपबहान्तर २७ ३९, १३८  
 'विदुर गीर्ण' १ ४-५  
 विश्वमगाम २१०  
 विश्वन ५७४

शास्त्री प्रह्लापुर २७८  
 शिवली मोमानी १५३  
 शिवनीन्या ८६  
 शिवाजी ८६  
 शुक्ल माताश्रीम ३९७  
 शुक्ल पं रामचन्द्र ४

बुद्धि आन्दोलन ३६१  
 'बुद्धि समाचार' ३६१  
 घुमसुदमी ५४१  
 शंकराचार्य १७४ ४२४  
 घोसापुर ४६  
 यज्ञानन्द स्वामी २ ४ ३६१ ३६२  
 श्रीप्रकाश ५४३  
 श्रीवास्तव जी० पी ४८९  
 योषिय शंकरभाऊ ७४  
 सत्सना बाबुराम ६१२  
 सत्सेना मोहनभाऊ ४६३  
 सत्सेना हरप्रसाद ४९८  
 सत्यमूर्ति ५८९  
 सत्यपाक डाक्टर २१६  
 'सत्यार्थ प्रकाश' ४३७  
 सम्बरबाबू कबीराम ६१६ १९, ४४६,  
 ४४७  
 सबिया २१९  
 'समालोचक' ३८ ३८४ ३८५  
 सम्पूर्णानन्द २८६ ५४ ५४२ ५७६  
 सन्तार, रतननाथ १ ११ ४ १०४  
 ३५ ३५२-५४ ४ २  
 सरस्वती १४९, २३१ ३८ ३८३  
 ४ ५२४ ५२८, ६ २ ६ ३  
 सरस्वती प्रेस २९९ ३ ४ ५१० ५७५  
 ७८, ६४८  
 सरीला १३  
 साकर, दुर्गमिशन ६८ ४११ ५११  
 सानेपुर ७४  
 सच-धर्म-गामैसन धमरीका ८०  
 सहयस रामरत्न सिंह ३८९  
 सहाय मनपत १७५, ३७२  
 सहाय गिरधर ४१८ ५३२ ५९१  
 सहाय डाक्टर हरशक्ति ६३०  
 साहमन बनीगन ४ ५ ६ ७ ४१२  
 ४४ ४४१ ४४५  
 'सारी ५९९  
 गागर ४३४ ४३६ ५२१ ५२२ ५०५  
 गाण्धर्व वध ४४५  
 तापी ६७७

सावरमती ५ ८  
 साम्यवाद २९१ २९२ ३३८ ३४६  
 सिक्य आन्दोलन ३४२  
 सिनहा सन्धिवालय ६ ८  
 सिरानुहीला १६८  
 सिंह, राजेश्वरप्रसाद ३६९, ४१६, ४६३,  
 ४८९  
 सिंह वीरेणवर ४९ ६४६  
 सिंह, श्रीनाथ ५२४-२६ ५२८, ६ २,  
 ६०३  
 सीतारमैया पट्टाभि ८२  
 सीताराम सर ४१३  
 मुक्तदेव ४७  
 मुग्गी ११ १२  
 मुद्गर्गन ४८९  
 मुद्रकास पंडित ४७४ ५२३  
 'मुद्रा' ३८६, ४१  
 'मुबहे उम्मीद' २३३  
 मुबहृष्यम के० ५४१  
 मुमद्रा ४८९  
 'मुनेल' ४९९  
 मूरत ८९, १५३ १६१ १६३ १६४  
 सन्त आत्म कालज भागरा ६११  
 सेरिगापटम ५८६  
 'सिहर' हजयामी इब्नबाबू बर्मा ३७१  
 ३८७  
 'रीरे कोहलार' ४ ८  
 माळम ३६२, ३६४  
 'सावित्र कम्पुनियम ६४५  
 मोराल रिजार्म सीय ४८, ९४  
 सत्कृति रसा-मम्मेलन बरोम्म ६४५  
 स्टासिन ५१३  
 स्टुडमम १२४  
 'स्टारी भाऊ मीनकाश' ५२१  
 'स्ट्राइक' ४४१  
 स्पेन ४६६  
 स्पेसर २४  
 स्मर्ता प्रण २९७  
 'स्वदेव' १०३ २१९, २३८ २५७  
 २५८

स्वदेवी ब्राह्मोसम ६२ ६३ ८७ ८८	हामी ११७
४३७ ४६४	हासकेन ३८ ३८६
स्विद्वारसैण्ड २६८	हिजाब ३६९
स्वराज्य ब्राह्मोसम १५९, १६ २२	हिटसर ५१२ ५१३
२५५, २९७ ३२३ २५, ३३७	हिन्दी पुस्तक एजेंसी २५८
३७६ ४५९ ४६ ४६४ ४६५	हिन्दी प्रचार समा ५८३ ६१६
४६७ ४७१ ५५६	हिन्दी समा दिल्ली ४७७
हसस्वक्य स्वामी ४३७	हिन्दी समाज पान्तिनिकेशन ३६४
हक अगुल ६ ८ ६१ ६१८ ६२६	६ ७
६२८ ३	हिन्दी साहित्य परिषद् पटना ४७९
हक मंजूस्व १६७ १६८ २४८	हिन्दी साहित्य सम्मेलन ५५२ ५५३
हकीम बभ्रुल ४१ ६४	५९५ ६१७ ६२६ ६९
हकीम बरहान ६१ ६२ १ १ १ ४	हिन्दुस्तानी ५५५
हकिम ४४१	हिन्दुस्तानी एकेडमी ३८७ ४४१
'हजारबास्ता' ३६८	६ ८ ११
हष्टर, सर बिल्किम ८७	हिन्दुस्तानी समा ६१४ ६१५, ६२६
हष्टर कमेटी २ ५	हिन्दू-मुस्लिम एकता २७५-७७ २८
हनीफ़ ताँ मुहम्मद १७१ २१	हिरण्य ५८५, ५८७-८९
२११	हुमायूँ ३६८
इब्रीज बार्सपरी ५८५	हुसेन बराफ़्रक ५५, ४५८
'हमबर्ग' १२३ १२८, १५३ ३६८	हुसेन एबाब ६ ९
हमीरपुर ४८, १ ६ ११ १११	हुसन आकिर ६१६
१२ १२५, १३ १३५, १३८	हृषिक विद्येय नाम सन ५२१
४ १५२ ५१	हेनरी सर ५३४
हखार २३६ ४ १	हेवी मीस्कम ४१३ ५४७
हखारलाय ३५८	हीराराबाद १९९, ४९७ ५८ ६१६,
हाकिम ४७७	६२८
हाकिम १९१	हीवरी सर बकबर १९९
हार्डी ३८४ ३८६	होमबख १६२, १६३
हार्डीकर डाक्टर ३४१	हुगो बिक्टर १९२
हार्नो सायो ४१७	हुम ऐकेन आकटेकियम ८३



स्वदेशी भाष्योक्त ६२, ६३ ८७ ८८	हासी ११७
४३७ ४६४	हालकेन ३८ ३८६
स्विद्वारसंग २६८	हिजाब ३६९
स्वराज्य भाष्योक्त १५९, १६ २२	हिटरर ५१२ ५१३
२५५, २९७ ३२३ २५, ३३७	हिन्दी पुस्तक एजेंसी २५८
३७९ ४५९ ४६ ४६४ ४६५,	हिन्दी प्रचार समा ५८३ ६१६
४६७ ४७१ ५५६	हिन्दी समा विल्मी ४७७
हंसस्वक्य स्वामी ४३७	हिन्दी समाज धान्तिनिष्ठान ३६४
हक अष्टुस ६ ८ ६१ ६१८ ६२६	६ ७
६२८ ३	हिन्दी साहित्य परिषद् पटमा ४७९
हक मञ्जुस १६७ १६८, २४८	हिन्दी साहित्य सम्मेलन ५५२ ५५३
हकीम अष्टुस ४१ ६४	५९५ ६१७ ६२६ ६५
हकीम बरहम ६१ ६२ १ १ १ ४	हिन्दुस्तानी ५५५
हसिजन ४४१	हिन्दुस्तानी एकेडमी ३८७ ४४१
'हजारबाता' ३६८	६ ८ ११
हष्टर, सर बिलियम ८७	हिन्दुस्तानी समा ६१४ ६१५, ६२६
हष्टर कमेटी २०५	हिन्दु-मुस्लिम एकता २७५-७७ २८
हनीक चाँ मुहम्मद १७१ २१	हिरप्पम ५८५, ५८७-८९
२११	हुमायूँ ३६८
हनीज पार्संबरी ५८५	हुसेन अचक्रक ५५ ४५८
'हमबर्द' १२३ १२८, १५३ ३६८	हुसेन एजाब ६ ९
हमीरपुर ४८, १ ६ ११ १११	हुसेन बालिक ६१६
१२ १२५, १३ १३५, १३८	हृषिक बिसेम बाग म्म ५२१
४ १५२ ५१	हृरी सर ५३४
हखार २३६ ४ १	हुसी मैस्म ४१३ ५४७
हखारनाथ ३५८	हृपरनाद १९९, ४९७ ५८ ६१६
हखिज ४७७	६२८
हखिज १६१	हुवरी सर अकर १९९
हार्डी ३८४ ३८६	होमटक १६२, १६३
हार्डीकर, डाक्टर ३४१	हुपो बिकटर १९२
हार्नो सापो ४१७	हुम ऐमेन बाफटेबियम ८३